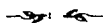


# भा० दि० जैनसंघ-ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमालाका उद्देश्य  
प्राकृत संस्कृत आदि भाषाओंमें निबद्ध वि० जैनागम,  
दर्शन, साहित्य, पुराण आदिको यथासम्भव  
हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित करना



संस्कारक  
भा० दि० जैनसंघ

ग्रन्थाह १-८

प्रतिष्ठान  
मिनेबर  
भा दि जैनसंघ  
बौध्दी मधुर

दृश्य-५० शिवमारायण उपाध्याय बी० ए०  
नवा संसार प्रेस भदौनी बाणखसी।

Sri Dig. Jain Sangha Granthamala No 1-VIII

**KASAYA-PAHUDAM**  
**VIII**  
**BANDHAK**

BY  
GUNADILARACHARYA

WITH  
CHURNI SUTRA OF YATIVRASHABHACHARYA

AND  
THE JAYADHAVALA COMMENTARY OF  
VIRASENACHARYA THLRE UPON

*EDITED BY*  
Pandit Phulachandra Siddhantashastri  
*EDITOR MAHABANDHA*  
*JOINT EDITOR DHAVALA.*

Pandit Kailashachandra Siddhantashastri

Nyayaturtha Siddhantaratra  
Pradhanadhyapak Syadvada Digambara Jain  
Vidyalyaya, Varanasi

*PUBLISHED BY*  
THE SECRETARY PUBLICATION DEPARTMENT  
THE ALL-INDIA DIGAMBAR JAIN SANGHA  
CHAURASI MATHURA

# Sri Dig Jain Sangha Granthamala

Foundation year— ]

[ —Vira Nirvan Samvat 2468

*Aim of the Series.—*

**Publication of Digambara Jain Siddhanta,  
Darsana Purana, Sahitya and other works  
in Prakrit Sanskrit etc, possibly with Hindi  
Commentary and Translation**

*DIRECTOR—*

**SRI BHARATA VARSHIYA  
DIGAMBARA JAIN SANGHA  
NO. 1 VOL. VIII**

*To be had from.—*

**THE MANAGER  
SRI DIG JAIN SANGHA,  
CHAURASI, MATHURA**

U P ( INDIA )

Printed by

**PT B N. UPADHYAYA B.A.  
Naya Sansar Press Bhadaini Varanasi**

800 Copies

Price Rs. Twelve only

## प्रकाशककी ओरसे

कसायपाहुटका आठवाँ भाग पाठकोंके वरफ्मलोंमें अर्पित है। यह भाग कुछ विलम्बसे प्रकाशित होनेका कारण गत वर्षमें इत्तन्न हुई फागजरी कठिनार्थ है। इसीके कारण उन भागके प्रकाशनमें एक वर्षका विलम्ब हो गया। इस बातकी सभायना हमने सातवें भागके अपने वक्तव्यमें व्यक्त भी कर दी थी।

किन्तु आगेके दो भागोंके लिये कागजकी व्यवस्था कर ली गई है और एक उदारदाता महोदयमें उनके प्रकाशनके लिये आवश्यक साहाय्य भी मिल गया है, अतः आशा है आगेके भाग जल्द ही प्रकाशित हो सकेंगे।

इस भागका प्रकाशन श्री भा० दि० जैन सचके अध्यक्ष दानशीर सेठ भागचन्द्र जी डोंगरगढ तथा उनकी दानशीला धर्मपत्नी श्रीमती नर्यदादाजीके द्वारा प्रयत्न द्रव्यसे हुआ है। सेठ साहबने कुण्टलपुरमें सचके अधिवेशनके अत्रसर पर इस कार्यके लिये ग्यारह हजार रुपया प्रदान किया था। इसके पश्चात् वामोरामें सचके अधिवेशन पर पुनः पाँच हजार रुपया इस कार्यके लिये प्रदान किया। इसीसे यह प्रकाशन कार्य चालू है। सेठ साहब तथा उनकी धर्मपत्नीकी जिनश्राणीके प्रति यह भक्ति तथा दानशीलता अनुकरणीय है।

सेठ साहबकी दानशीलतामें प्रेरणात्मक सहयोग देनेका श्रेय पं० फूलचन्द्र जी सिद्धान्तशास्त्रीका है। आप ही जयधरलाके सम्पादन तथा मुद्रणका उत्तरदायित्व सहालते हैं। अतः मैं सेठ साहब, सेठानी जी तथा पण्डितजीका आभार प्रवट किये बिना नहीं रह सकता।

जयधरला कार्यालय  
भदौनी, वाराणसी।  
शुभम निर्वाण दिवस-२४८७

}

कैलाशचन्द्र शास्त्री  
मंत्री साहित्य विभाग  
भा० दि० जैन सच

# भा० दि० जैन संघके साहित्य विभागके सदस्योंकी नामावली

## संरक्षक सदस्य

- |  |  |
|--|--|
| ११० ) बालवीर सेठ मंगलचन्दबी डोंगराव                                | १ ) स्व० बाला महाश्रीप्रसादबी ठेकेदार                            |
| १११ ) बालवीर साहू रश्मिप्रसादबी कलकत्ता                            | १ ) स्व० बाला रत्नलालबी मारीपुरिये                               |
| १० ) स्व श्रीमन्त सर सेठ हुजूमचन्दबी इन्दौर                        | १ ) श्री बाला श्रीमन्त परमेश्वरबी                                |
| १ ) सेठ ब्रह्मर्षि बालाबी फिरोजाबाद                                | १ ) श्रीमती मनोहरिदेवी माण्डवी बाला                              |
| १ ) सेठ नानचन्द बी हीराचन्दबी गंधी बस्मानाबाद                      | १ ) श्री बाबू प्रकाशचन्दबी जयदेवपुर                              |
| ( सहायक सदस्य )  | १ ) श्री बाला जितरमल शंकरदासबी मन्डुप                            |
| ११२ ) श्री सेठ मंगलचन्दबी मन्डुप                                   | १ ) सेठ गणेशदास आनन्दलालबी आगरा                                  |
| १ ) स्व कैश्याचन्दबी B D O. बन्दी                                  | १ ) श्री सत्यजि जैन पञ्चान गाथा                                  |
| १ ) सत्यजि जैन पञ्चान पञ्चान मन्डुप                                | १० ) सेठ सुखानन्द शंकरदासबी मुक्तान्त-बाले दिल्ली                |
| १ ) श्री सेठ क्यामलदासबी कलकत्ता                                   | १ ) श्री सेठ मंगलचन्दबी हीराचन्दबी पटना                          |
| १ ) सेठ प्रकाशचन्दबी सराणी बाला                                    | १० ) स्व श्रीमती कमलादेवीबी परमेश्वरबी साहू रामचन्द्रबी नबीबाबाद |
| [ प० सेठ पुनरीश्वरबी के सुपुत्र स्व निरंजनचन्दबी श्री स्मृति में ] | १ ) स्व० सुब्रह्मचन्द्रबी बसन्तनगर                               |
| १ ) श्री बाला रघुवीरसिंहबी बेनाबाद                                 |  |
| १ ) श्री रायसाहब बाला बन्धुवरायबी देहली                            |  |

## विषय-सूची

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
मङ्गलाचरण	१	नाम और स्थापनानित्येपको पृथक् न कहनेके कारणका निर्देश	१६
बन्धके दो अनुयोगद्वारोंकी सूचना	२	द्रव्यादि चार नित्येपोंका स्पष्टीकरण	१६
बन्धका स्वरूप	२	नित्येपार्थको स्पष्ट करनेके लिए नयविधिका निरूपण	२०
संक्रमका स्वरूप	२	कर्मद्रव्यप्रकृतिसंक्रमके विषयमें आठ प्रकारके निर्गमोंकी मीमासा	२०
संक्रमको बन्ध संज्ञा प्राप्त होनेका कारण	२	एकैकप्रकृतिसंक्रमका व्याख्यान	२६
अकर्मबन्धका स्वरूप	२	उसके विषयमें २४ अनुयोगद्वारोंकी सूचना और उनका नामनिर्देश	२६
कर्मबन्धका स्वरूप कह कर उसे संक्रम संज्ञा प्राप्त होनेके कारणका निर्देश	२	समुत्कीर्तना	२६
उक्त दोनों अधिकारोंके कहनेकी प्रतिज्ञा	३	सर्व और नोसर्वसंक्रम	२७
इस विषयमें सूत्रगाथा	३	उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टसंक्रम	२७
गाथाके पदोंका व्याख्यान	४	जघन्य और अजघन्यसंक्रम	२७
बन्ध अनुयोगद्वारकी सूचनामात्र	६	सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवसंक्रम	२८
संक्रम अनुयोगद्वार		स्वामित्व	२८
संक्रमके चार प्रकारके अवतारके निरूपणकी सूचना	६	एक जीवकी अपेक्षा काल	३४
प्रथम प्रकार उपक्रम और उसके पाँच प्रकार	७	एक जीवकी अपेक्षा अन्तर	४६
उपक्रम आदि पाँचका विशेष व्याख्यान	७	नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगप्रिचय	५२
द्वितीय प्रकार नित्येपका विचार	८	भागाभाग	५४
तृतीय प्रकार नयके आश्रयसे नित्येपकी मीमासा	८	परिमाण	५६
नित्येपार्थका विशेष विचार	११	क्षेत्र	५६
नोआगमद्रव्यसंक्रमके दो भेद और उनकी मीमासा	१२	स्पर्शन	५७
प्रकृतमें उपयोगी कर्मद्रव्यसंक्रमके चार भेद	१४	नाना जीवोंकी अपेक्षा काल	५६
प्रकृतिसंक्रमके दो भेद		नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर	६२
१ प्रकृतिसंक्रम		सन्निकर्ष	६३
प्रकृतिसंक्रमके कथनकी प्रतिज्ञा	१६	भाव	७३
इस विषयमें उपयोगी तीन गाथाएँ और उनका व्याख्यान	१६	अल्पबहुत्व	७३
उक्त गाथाओंका पदच्छेद	१८	प्रकृतिस्थानसंक्रम	
उपक्रमके पाँच प्रकार	१८	प्रकृतिस्थानसंक्रम कहने की प्रतिज्ञा	८१
चारप्रकारका नित्येप	१९	इस विषयमें सूत्र समुत्कीर्तना अर्थात् ३२ सूत्रगाथाएँ	८१

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
एक गाथाओंके विषयकी सूचना	८७	बेह और कपायमार्ग्यामें धूम्रस्वानोक्ष	
प्रकृतिस्वानसंक्रमविषयक भगुयोगाद्यापेना		निर्देश	१११
मासनिर्देश	८८	सत्कर्मस्वानोक्ष निर्देश	११३
स्वानसमुत्पत्तिर्वामें कार्यं द्रुमं एक गाथा	—	बन्धस्वानोक्ष निर्देश	११३
और इसका व्याख्यान	८९	सत्कर्मस्वानोक्ष संक्रमस्वानोक्ष विचार	११३
श्वेत प्रकृतिस्वान प्रकृतिसंक्रमस्थान है		व्यपस्थानोंमें संक्रमस्वानोक्ष विचार	११८
और श्वेत नहीं है इसका सकारण निर्देश	९१	बन्धस्वानो और सत्कर्मस्वानोक्षोंमें	
प्रकृतिस्वानप्रतिमहाप्रतिष्ठाप्रस्थान्य	११४	संक्रमस्वानोक्ष विचार	१०
किस संक्रमस्वानके श्वेत प्रतिमहस्वान		सत्कर्मस्वानोक्षोंमें बन्धस्वानो और	
हैं इस बातका निर्देश	११३	संक्रमस्वानोक्ष विचार	१०४
संक्रमस्वानोके अनुसम्बाव करनेके		बन्धस्वानोमें सत्कर्मस्वानो और	
उपायोंका निर्देश	११४	संक्रमस्वानोक्ष विचार	१०४
बाजुपूर्वी-अनुपूर्वीसंक्रमस्वानोक्ष		संक्रमस्वानोमें बन्धस्वानो और	
निर्देश	११४	सत्कर्मस्वानोक्ष विचार	१०५
श्वेतानमोहरीयके सङ्ग्रहमें मास इन्धेयले		श्वेत अनुयोगाद्यापेना दो गाथासूत्रों द्वारा	
और इसके अन्तर्गमें मास इन्धेयले		नामनिर्देश	१०६
संक्रमस्वानोका निर्देश	११५	स्वानसमुत्पत्तिर्वा	१०७
करणमक और कृष्णसम्बन्धी संक्रम		प्रकृतमें सर्वसंक्रमसे लेकर आइप्यम् संक्रम	१
रक्तोक्ष निर्देश	११५	इसके अनुयोगद्वार कर्वा सम्भव नहीं है	
मानौदारवानोंमें संक्रमस्थान व्याधिके		इसका निर्देश	१०८
अन्तर्गमें सूचना	११७	सादि अदि चारका निर्देश	१०८
शुद्धस्वानोंमें संक्रमस्थान व्याधिके ज्ञानमें		स्थापित	१०८
शुद्धा करने के आद्यविभागद्वारा संकेत	११८	एक बीजकी अपेक्षा कन्ध	१०९
गतिमार्ग्याक अन्तर्गत भेदोंमें संक्रम		एक बीजकी अपेक्षा अन्तर	११८
स्वाबोक्ष प्रमादनिर्देश	११८	नाना बीजोंकी अपेक्षा अंगविषय	११
मनुष्यमर्तियों सब संक्रमस्वाव होते हैं		प्रमादांग	११३
इसका निर्देश	११९	परिमात्र	११४
प्लेनियसि असेडी पञ्च मित्रोंमें कितने		केन्द्र	११४
संक्रमस्थान होते हैं इसका निर्देश	११७	स्पर्शन	११५
गतिमार्ग्यामें प्रकृतिस्वा १ और उदु		नाना बीजोंकी अपेक्षा कन्ध	११६
व्यपस्थानोंके जातकेकी सूचना	११९	नाना बीजोंकी अपेक्षा अन्तर	११८
सम्बन्ध और संक्रममार्ग्यामें एक		सन्निध्य	११९
विषयका विचार	११९	अन्तरगुह्य	११९
सत्कर्ममार्ग्यामें एक विषयका विचार	१२३		
बेहमार्ग्यामें कन्ध विषयका विचार	११४		
कपायमार्ग्यामें कन्ध विषयका विचार	१२०		
ज्ञानमार्ग्यामें कन्ध विषयका विचार	१२६		
भय और आहारमार्ग्यामें कन्ध	—		
विषयका विचार	११		

### शुद्धगार प्रकृति संक्रम

मुष्कारके श्वेत अनुयोगद्वारा	१२३
समुत्पत्तिर्वा	१२६
स्थापित	१२६

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
एक जीवकी अपेक्षा काल	२३०	अद्वाच्छेदके दो भेद	२६१
एक जीवकी अपेक्षा अन्तर	२३१	उत्कृष्ट अद्वाच्छेद	२६३
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	२३२	जघन्य अद्वाच्छेद	२६३
भागाभाग	२३२	सर्व अनुयोगद्वारसे लेकर अजघन्य	
परिमाण	२३३	अनुयोगद्वार तक अनुयोगद्वारोंको	
क्षेत्र	२३३	स्थितिप्रभक्तिके समान जाननेकी सूचना	२५४
स्पर्शन	२३३	सादि, अनादि, युग और अयुग अनु-	
नाना जीवोंकी अपेक्षा काल	२३४	योगद्वारोंकी प्ररूपणा	२६४
नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर	२३५	स्वामित्व के दो भेद	२६५
भाव	२३५	उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम स्वामित्व	२६५
अल्पबहुत्व	२३५	जघन्य स्थितिसंक्रम स्वामित्व	२६५
<b>पदनिक्षेप प्रकृतिसंक्रम</b>		एक जीवकी अपेक्षा कालके दो भेद	२६७
पदनिक्षेपके तीन अनुयोगद्वार	२३६	उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम काल	२६७
समुत्कीर्तना	२३६	जघन्य स्थितिसंक्रम काल	२६८
स्वामित्व	२३७	अन्तरानुगमके दो भेद	२७२
अल्पबहुत्व	२३८	उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अन्तर	२७२
<b>वृद्धि प्रकृतिसंक्रम</b>		जघन्य स्थितिसंक्रम अन्तर	२७३
वृद्धिके तरह अनुयोगद्वार	२३६	नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयके दो भेद	२७५
समुत्कीर्तना	२३६	उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम भंगविचय	२७५
स्वामित्व	२३६	जघन्य स्थितिसंक्रम भंगविचय	२७६
एक जीवकी अपेक्षा काल	२३६	भागाभागके दो भेद	२७७
एक जीवकी अपेक्षा अन्तर व शेषकी सूचना	२४०	उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम भागाभाग	२७७
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	२४०	जघन्य स्थितिसंक्रम भागाभाग	२७७
नाना जीवोंकी अपेक्षा काल	२४०	परिमाणके दो भेद	२७७
नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर	२४०	उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम परिमाण	२७७
भाव	२४०	जघन्य स्थितिसंक्रम परिमाण	२७८
अल्पबहुत्व	२४०	क्षेत्रके दो भेद	२७८
<b>स्थितिसंक्रम</b>		उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम क्षेत्र	२७८
स्थितिसंक्रमके दो भेद	२४२	जघन्य स्थितिसंक्रम क्षेत्र	२७६
स्थितिसंक्रम और स्थितिअसंक्रमकी		स्पर्शनके दो भेद	२७६
व्याख्या	२४२	उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम स्पर्शन	२७६
अपकर्षणस्थितिसंक्रमका स्वरूप	२४३	जघन्य स्थितिसंक्रम स्पर्शन	२८२
उत्कर्षणस्थितिसंक्रमका स्वरूप	२४३	नाना जीवोंकी अपेक्षा काल के दो भेद	२८४
अद्वाच्छेदकी सूचना	२६२	उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम काल	२८४
<b>मूलप्रकृतिस्थितिसंक्रम</b>		जघन्य स्थितिसंक्रम काल	२८५
मूलप्रकृतिस्थितिसंक्रमविषयक अनुयोग-		नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरके दो भेद	२८७
द्वारोंकी सूचना	२६२	उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अन्तर	२८७
		जघन्य स्थितिसंक्रम अन्तर	२८८
		भाव	२८८



विषय	पृष्ठ
अस्यबहुलके दो मेरु	२८८
स्वित्तिसंक्रम अत्राद्युत्तके दो मेरु	२८८
अत्रुत्त स्वित्तिसंक्रम अस्यबहुल	२८८
अपन्व स्वित्तिसंक्रम अत्राद्युत्त	२८९
बीज अस्यबहुलके दो मेरु	२८९
अत्रुत्त स्वित्तिसंक्रम बीज अस्यबहुल	२८९
अपन्व स्वित्तिसंक्रम बीज अस्यबहुल	२९०

### ब्रह्ममारस्वित्तिसंक्रम

गुजगात्के वेद अतुयोगाद्युत्तके सूचना	२९
समुत्तीर्तना	२९
स्वामित्व	२९१
एक बीजकी अपेक्षा अत्र	२९१
एक बीजकी अपेक्षा अन्तर	२९२
नाना बीजोंकी अपेक्षा मंगविषय	२९३
मागामाग	२९७
परिमाय	२९७
बेज-स्पर्शन	२९७
नाना बीजोंकी अपेक्षा अत्र	२९७
नाना बीजोंकी अपेक्षा अन्तर	२९७
माय	२९७
अस्यबहुल	२९७

### पदनिक्षेप स्वित्तिसंक्रम

पदनिक्षेपके तीम अतुयोगाद्युत्तके सूचना	२९८
समुत्तीर्तना	२९८
स्वामित्वके दो मेरु	२९८
अत्रुत्त	२९८
अपन्व	२९९
अस्यबहुल	२९९

### बुद्धि स्वित्तिसंक्रम

बुद्धिके वेद अतुयोगाद्युत्तके सूचना	२९९
समुत्तीर्तना	२९९
स्वामित्व	२९९
एक बीजकी अपेक्षा अत्र	३
एक बीजकी अपेक्षा अन्तर	३ २
नाना बीजोंकी अपेक्षा मंगविषयसे	
अन्तर भाव तकके अतुयोगाद्युत्तके स्वित्तिसंक्रमके समान अत्रुत्तकी सूचना	३०३

विषय	पृष्ठ
अस्यबहुल	३ ३
स्वामित्वका	३०३

### सत्प्रकृतिस्वित्तिसंक्रम

असके विषयमें २४ अतुयोगाद्युत्तके व	
मुजगात्तद्विकृती सूचना	२ ४
अत्राद्युत्तके दो मेरु	३ ४
अत्रुत्त स्वित्तिसंक्रम अत्राद्युत्त	३ ४
अपन्व स्वित्तिसंक्रम अत्राद्युत्त	३-४
सर्वादि अतुयोगाद्युत्तके स्वित्तिसंक्रमके	
समान अत्रुत्तकी सूचना	३१
स्वामित्व	३११
अत्रुत्त स्वित्तिसंक्रमस्वामित्व	३११
अपन्व स्वित्तिसंक्रम स्वामित्व	३११
एक बीजकी अपेक्षा अत्र	३२३
अत्रुत्त स्वित्तिसंक्रम अत्र	३२३
अपन्व स्वित्तिसंक्रम अत्र	३२९
एक बीजकी अपेक्षा अन्तर	३२९
अत्रुत्त स्वित्तिसंक्रम अन्तर	३३२
अपन्व स्वित्तिसंक्रम अन्तर	३३२
नाना बीजोंकी अपेक्षा मंगविषय	३३३
अत्रुत्त स्वित्तिसंक्रम मंगविषय	३३३
अपन्व स्वित्तिसंक्रम मंगविषय	३३७
मागामाग अत्रुत्तके स्वित्तिसंक्रमके	
समान अत्रुत्तकी सूचना	३३
नाना बीजोंकी अपेक्षा अत्र	३३८
अत्रुत्त स्वित्तिसंक्रम अत्र	३३८
अपन्व स्वित्तिसंक्रम अत्र	३३९
नाना बीजोंकी अपेक्षा अन्तर	३४१
अत्रुत्त स्वित्तिसंक्रम अन्तर	३४१
अपन्व स्वित्तिसंक्रम अन्तर	३४१
सन्निकर्ष	३४२
अत्रुत्त स्वित्तिसंक्रम सन्निकर्ष	३४२
अपन्व स्वित्तिसंक्रम सन्निकर्ष	३४२
माय	३४९
अस्यबहुल	३४९
अत्रुत्त स्वित्तिसंक्रम अस्यबहुल	३४९
अपन्व स्वित्तिसंक्रम अस्यबहुल	३४८

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
भुजगार स्थितिसंक्रम		ओष जघन्य स्थितिसंक्रम स्वामित्व	३६५
भुजगारसंक्रम	३५६	ओषादेश उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम स्वामित्व	३६७
अर्थपद	३६०	ओषादेश जघन्य स्थितिसंक्रम स्वामित्व	३६६
भुजगार आदि पदोंका अर्थ	३६०	अल्पवहुत्व	४००
इस विषयमें तेरह अनुयोगद्वारोंकी सूचना	३६०		
समुत्कीर्तना	३६०	वृद्धि स्थितिसंक्रम	
स्वामित्व	३६०	उसमें तीन अनुयोगद्वार	४०१
एक जीवकी अपेक्षा काल	३६२	वृष्टिका स्वरूप	४०२
एक जीवकी अपेक्षा अन्तर	३७२	अनुयोगद्वारोंके नाम और उनका स्वरूप	४०२
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	३७६	ओषसमुत्कीर्तना	४०६
भागभाग	३७८	आदेशसमुत्कीर्तना	४०६
परिमाण	३७८	प्ररूपणा	४१०
क्षेत्र और स्पर्शन	३७८	एक जीवकी अपेक्षा काल	४११
नाना जीवोंकी अपेक्षा काल	३७६	एक जीवकी अपेक्षा अन्तर	४१४
नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर	३८१	नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	४१५
भाव	३८४	भागभाग	४१६
अल्पवहुत्व	३८४	परिमाण	४१६
पदानिच्छेप स्थितिसंक्रम		क्षेत्र	४१७
उसमें तीन अनुयोगद्वार	३८८	स्पर्शन	४१८
समुत्कीर्तना	३८८	नानाजीवोंकी अपेक्षा काल	४१८
उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम समुत्कीर्तना	३८८	नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर	४१९
जघन्य स्थितिसंक्रम समुत्कीर्तना	३८८	भाव	४२०
स्वामित्व	३८६	अल्पवहुत्व	४२०
ओष उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम स्वामित्व	३८६	स्थितिसंक्रमस्थान	४२८







सिरि-जडवगमहाइरियविरइय-चुणिसुत्तममण्णिदं

सिरि-भगवंतगुणहरभडारओवइडं

क सा य पा हु डं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरियविरइया टीका

जयधवला

तस्य

वंधगो णाम छट्ठो अत्थाहियारो



पणमिय णीमंकमणो पच्चूहममुद्दसंकमे जिणचलणे ।

वंधगमहाहियार वोच्छं जरथेव सकमो लीणो ॥१॥

---

जो विघ्नरूपी समुद्रको लाघ गये हैं ऐसे जिन चरणोंको नि शक मनसे नमस्कार करके जिसमें संक्रम अधिकार लीन है ऐसे बन्धक नामक महाधिकारका व्याख्यान करता हूँ ॥१॥

⊙ बंधो ति एवस्स वे अणियोगदाराणि । त जहा—यधो च सक्रमो च ।

§ १ एदस्स सुधस्स अत्वविवरणं क्त्वामो । त जहा—बंधो ति एदस्स एदस्स एदममूत्तगाहापठिबद्धस्स अत्वपन्वणे धरिमाणे तत्थ इमाणि वे अणियोगदाराणि णादम्भाणि । काणि ताणि ति सिस्साहिप्पायमासंक्रिय बधो च संक्रमो वेति तेमि णामण्हिरेमो क्त्वा । तत्थ जम्मि अणियोगदारे क्त्वाएववभाणए पोमस-क्त्वापाण क्त्वापरिणामपात्रोगमावणावद्धिदाण जीवपदेसेहिं सइ मिच्छादिपद्यवसेण मयथा पयटि-द्विदि-अणुमाग-पदेममेयमिण्णो परवित्तइ तमणुयोगदारं बधो चि भण्णठे । तहा बंधेण स्सट्ठपमन्वस्स क्त्वास्स मिच्छतादिमेयमिण्णस्य समयाविरोहेण सहावतर मकतिलक्त्वाणो मक्रमो पयटिमक्रमादिमेयमिण्णो जय सन्तरपमणुमग्गिज्जदं तमणि-योगदार मक्रमो चि भण्णठे । एवमठाणि टोणि अणियोगदाराणि बधममहाहिपारे होति चि सुत्तथमराहो । क्यमेत्थ मकत्तस्सु बंधराववपसो चि णामकपित्त, तस्स चि बधतन्माविचादो । त जहा—दुविहो धधो अक्त्वाबधो क्त्वाबधो वेदि । तत्थाक्त्वा मयधो णाम क्त्वाएववभाणादो अक्त्वामन्ववेणावद्धिदपदसाण गहण । क्त्वाबंधो णाम क्त्वामन्ववेणावद्धिदपोमलाणमण्णपयटिमन्ववण परिणमण । त जहा—सादत्ताए मइ क्त्वामन्ववणपद्यविसमवसणासादत्ताए अदा परिणामिज्ज, अण वा क्त्वायसरुवेण

⊙ 'बन्ध' इम अयाधिकारक वो अनुयोगदार हे । यथा—बन्ध और सक्रम ।

§ १ अब इस सूत्रका अर्थ करते हैं । यथा—प्रथम मूल गायत्री कथक यह पद ध्याया है । इसके अर्थका व्याख्यान करने पर वहाँ ये दो अनुयोगदार जानने चाहिये । व ध्यान है वह शिष्यका प्रथम है । इतर मूलमें बन्ध और संक्रम इन प्रकार इनका नाम निर्दिष्ट किया है । इनमेंसे जिस अनुयोगदारी कामखर्गलाके कर्मन्व परिलभन करनेकी योग्यताके प्राप्त हुए पुरगल स्वर्धोच और प्रदेशोंके साथ मिच्छात्त आदिक विमित्तस प्रवृत्ति स्थिति, अनुमाग और प्रदेशके भेदसे पार प्रत्यक्ष सम्बन्ध बना जाता है उस अनुवागदारीको 'बन्ध' करते हैं । तथा वयसे किन्हेनि कर्मकारके प्राप्त किया है और जो मिच्छात्त आदि धनक भेदरूप हैं उसे कर्मोच पद्यशिधि रभावात्तर संक्रमखल्य संक्रमय प्रवृत्ति संक्रम आदि भदोको छिप हुए जिसमें विस्तार क साथ विचार किया जाता है उस अनुवागदारीका संक्रम करण है । इस प्रकार कथक नामक महाविद्यारमें व दो ही अनुवागदार इत हैं पर दग सूत्रका समुदायाय ह ।

संज्ञा—यहाँ पर संक्रमका कथक संज्ञा कैसे प्राप्त होती है ।

समाधान—यही आरंभ करना ठीक नहीं है क्योंकि संक्रमका भी कथमें अन्तर्भाव हो जाता है । यथा—अथकथय आर कर्मकथ एते कथक वा भद हैं । इनमें स जो कथमें वगागाकोमें से कथमें कामे निबन परमाणुभेदक मरण हाय ह पर अकर्मवच दे और कर्मरूपस निबन पुरगलकोच कथ्य वृत्ति काम करिभमना कर्मबन्ध दे । बहादरकार्ये—सात्कारयो कथको काम हुए जो कर्म अन्वर्ग करणक निबन पर अब अमाकायमे करिभमन करण है वा कथाबहुरथे

वद्धा कम्मंगा वधावलिय वौलाविय णोऋमायमस्वेण संकामिजंति तदा सो कम्मबंधो उच्चड, कम्ममस्वापरिचाणोव कम्मतरमस्वेण वज्झमाणत्तादो ।

❧ एत्थ सुत्तगाहा ।

६ २. एत्थ एदेमु' बंध-मकममणिणदेमु अणियोगहाग्गेमु बंधगे ति वीजपदम्मि णिलीणेमु सुत्तगाहा भगहियासेमपयदन्थयाग गुणहराडरियमुडाविणिग्गया अत्थि तमिदाणि वत्तडस्सामो ति वुत्त होड । त जहा—

(५) कदि पयडीओ बंधदि द्विदि-अणुभागे जहण्णमुक्कस्सं ।

संकामेड् कदिं वा गुणहीणं वा गुणविसिद्धं ॥२३॥

६ ३. एदिस्से गाहाण पुन्नामेणेण सूचिदामेगपयदन्थपरुवणाण अत्थविहागा

बंधे हुए कर्म बन्धावलिके बाद जरा नोऋपायरूपसे परिणमन करते हैं तत्र वह कर्मबन्ध फहलाता है, क्योंकि कर्मरूपताका त्याग क्रिये बिना ही ये कर्मान्तररूपसे पुनः बंधते हैं ।

विशेषार्थ—'पेज्जदोमविहत्ती' उत्यादि प्रथम मूल गायामे 'बंधगे चेष' यह पद आया है । यहाँ पर इनी पदका व्याख्यान करते हुए जूणिमूत्रकारने बन्ध और सक्रम इन दो अधिकारों के द्वारा उसके व्याख्यान करनेका निर्देश किया है । जो कर्मण उर्गणार्ण आत्मासे सम्बद्ध नहीं हैं उनका बन्धके कारणोंके मिलने पर आत्मासे बन्धको प्राप्त होना ही बन्ध है और बन्धको प्राप्त हुए कर्मोंका यथायोग्य सामग्रीके मिलने पर अन्य सजातीय प्रकृति रूपसे बदल जाना संक्रम है । इस बन्धक नामक अधिकारमें इन दोनों विषयोंका विस्तारसे वर्णन किया गया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । यद्यपि यहाँ यह शंका उठाई गई है कि बन्धक अधिकारमें बन्धका वर्णन करना ता क्रम प्राप्त है पर इसमें सक्रमका वर्णन नहीं किया जा सकता, क्यों कि संक्रम बन्धका भेद नहीं है । इसका जो समाधान किया है उसका आशय यह है कि बन्धके ही दो भेद हैं— अकर्मबन्ध और कर्मबन्ध । इनमेंसे अकर्मबन्धका दूसरा नाम बन्ध है और कर्मबन्धका दूसरा नाम संक्रम है । इस प्रकार विचार करने पर बन्ध और सक्रम इन दोनोंका बन्धक अधिकारमें समावेश हो जाता है, अतः एक बन्धक अधिकारद्वारा बन्ध और सक्रम इन दोनोंका वर्णन करना अनुचित नहीं है ।

\* इस विषय में सूत्र गाथा ।

६ २. यहाँ पर अर्थान् 'बन्धक' इस वीज पदमें अन्तर्भूत हुए बन्ध और संक्रम इन दो अनुयोगद्वारोंके विषयमें जिसमें प्रकृत अर्थका सब सार सशुद्धीत है और गुणधर आचार्यके मुखसे निकली है ऐसी एक गाथा है । यथा—

(५) यह जीव कितनी प्रकृतियोंको व कितनी स्थिति, अनुभाग और जघन्य उत्कृष्टरूप प्रदेशोंको बांधता है । तथा कितनी प्रकृति, स्थिति व अनुभागका और कितने गुणे हीन व कितने गुणे अधिक प्रदेशोंका संक्रमण करता है ॥ २३ ॥

६ ३ इस गायामे केवल पृच्छा द्वारा जो पूरे प्रकृत अर्थकी प्ररूपणा सूचित की गई है उसका

१ ता० प्रती पदेसु इति पाठ ।

पुणिसुचन्निवदा सि वदणुसारेणेव विवरण कम्सामो । स जहा—

⊗ एदीए गाहाए वषो च संकमो च सूचिवो होइ ।

१४ कुदो ? गाहापुम्बपच्छेदु जहाकमं दोण्हमेदसिमत्पाण निवदुत्तसणादो ।

एवमेदण सुणेण गाहाए समुदायत्थो परुविदो । सपहि पदच्छदमुहेभावयवत्थपरुत्तण  
कुणमाणो उवरिमपबंधमाह—

⊗ परच्छेदो ।

१५ सुगम ।

⊗ त जहा ।

१६ सुगम ।

⊗ कदि पयडीओ वषइ सि पयडिपधो ।

१७ कदि पयडीओ वषइ सि एउम्मि सुत्तपदे कचियाओ पयडीओ मोह

निजपडिबडाओ वषइ, किमेसमाहो दोण्णि तिण्णि वा इवादिपुञ्जामेत्तवानारेण सम्भो  
पयडिबधो णिसीओ सि गहेयण्णो, षट्स देमामासियमावेणावहाभादो ।

⊗ द्विदि-अणुमागे सि द्विदिषंधो अणुमागबंधो च ।

विशेष सुखासा पूर्विसुत्रोंमें किया है, इसप्रकार पूर्विसुत्रोंके अनुसार ही यहाँ व्याख्यान करते हैं । यथा—

⊗ इस गाथा द्वारा धम्म और संक्रम ये दो अधिकार सूचित किये गये हैं ।

१४ क्यों कि गाथाके पूर्वार्ध और उत्तरार्धमें क्रमसे निवदरूपसे वे दो ही अधिकार देना बाले हैं ।

इस प्रकार इस सूत्रद्वारा गाथाके समुदायबंध अन्त किया । अब परच्छेदद्वारा प्रत्येक परक अर्थका अन्त करते हुए भागोंके प्रकल्पन निर्येरा करते हैं—

⊗ अब परच्छेद करते हैं ।

१५ यह सूत्र सुगम है ।

⊗ यथा—

१६ यह सूत्र भी सुगम है ।

⊗ 'कदि पयडीयो वषदि' इस पदसे प्रकृतिबन्धको सूचित किया गया है ।

१७ गाथा सूत्रके 'कदि पयडीयो वषदि' इस पदमें मोहनीयकी किन्ती प्रकृतियोंके बाँधना है, क्या एक प्रकृतिको बाँधना है अथवा दो या तीन प्रकृतियोंको बाँधना है इत्यादि प्रश्नविपरक व्यापार द्वारा पूरा प्रकृतिबन्ध अन्तर्गत है ऐसा यहाँ स्पष्ट करना चाहिये क्योंकि यह पद विराम-सर्पकम्पसे अवस्थित है ।

⊗ 'द्विदि-अणुमागे' इस पदसे स्थितिबन्ध और अनुमागबन्धको सूचित किया गया है ।

६८. द्विदि-अणुभागे त्ति गाहापुञ्चद्वपडिवद्वे सुत्तपदे द्विदिवधो अणुभागबंधो च णिल्लीणो त्ति गहेयच्चो, मगहिदसारस्सेदस्स पज्जवद्वियपरवणाए जोणिभावेणा-वद्धानादो ।

❀ जहण्णमुक्कस्सं ति पदेसबंधो ।

६९. जहण्णमुक्कस्सं ति गाहापुञ्चद्वपडिवद्वे वीजपदे पदेमबंधो मगहियो त्ति गहेयच्च, किं जहण्णमुक्कस्सं वा पदेमगणेण वघड त्ति सुत्तत्थमबंधावलवणादो । एवमेत्तिएण पवधेण गाहापुञ्चद्वे पयटि-द्विदि-अणुभाग-पदेमबंधाण पडिवद्वत्तं परविय मपहि गाहापच्छद्वविहाणद्वमाह—

❀ संकामेदि कदिं वा त्ति पयडिसंकमो च द्विदिसंकमो च अणु-भागसंकमो च गहेयच्चो ।

६१०. कदि पयडीओ मकामेड, कदि वा द्विदि-अणुभाए मंकामेड त्ति गाहा-पुञ्चद्वदो अहियावसेणाहिमबंधादो तिण्हमेदमिमेत्थ मगहो ण विरुज्जंदे ।

❀ गुणहीणं वा गुणविसिद्धं ति पदेससंकमो सूचिच्चो ।

६११. गुणहीणं वा गुणविमिद्धं ति एदणेण वीजपदेण पदेमगकमो सूचिओ, किं गुणहीणं पदेमगं मकामेड, किं वा गुणविमिद्धमिदि सुत्तत्थमबंधावलवणादो ।

§ ८ गाथाके पूर्वार्धमें आये हुए 'द्विदि-अणुभागे' इस सूत्रपदमें स्थितिवन्ध और अनुभाग-वन्ध प्रन्तर्भूत हैं ऐसा यहाँ जानना चाहिये, क्योंकि मारभूत विषयका समग्र करनेवाला यह पद पर्यायार्थिक प्रवक्षणाके यानिरूपसे अत्रस्थित है ।

\* 'जहण्णमुक्कस्स' इस पदसे प्रदेशवन्धको सूचित किया गया है ।

§ ९ गाथाके पूर्वार्धमें आये हुए 'जहण्णमुक्कस्सं' इस वीजपदमें प्रदेशवन्ध समधीत हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि यहाँ पर प्रदेशरूपसे जघन्य या उल्लेख कितने प्रदेशोंको बंधता है' इस प्रकार सूत्रार्थके सम्बन्धका अवलम्बन लिया गया है । इस प्रकार इतने प्रवन्ध द्वारा गाथाके पूर्वार्धमें प्रकृतिवन्ध, स्थितिवन्ध, अनुभागवन्ध और प्रदेशवन्धका उल्लेख किया है, यह बतलाकर अत्र गाथाके उत्तरार्धका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

\* 'मकामेदि कदिं वा' इस पदसे प्रकृतिसंक्रम, स्थितिप्रक्रम और अनुभाग-संक्रमको ग्रहण करना चाहिए ।

§ १० कितनी प्रकृतियोंका संक्रमण करता है या कितनी स्थिति और अनुभागका संक्रमण करता है उस प्रकार यहाँ प्रकरणगुण गाथाके पूर्वार्धका सम्बन्ध हो जानेसे प्रकृति, स्थिति और अनुभाग इन तीनोंका समग्र यहाँ पर विरोधको प्राप्त नहीं होता ।

\* 'गुणहीणं वा गुणविसिद्धं' इस पदसे प्रदेशसंक्रमको सूचित किया गया है ।

§ ११. गाथामुत्रमें आये हुए 'गुणहीणं वा गुणविसिद्धं' इस वीजपदसे प्रदेशसंक्रमका सूचन होता है, क्योंकि यहाँपर 'कितने गुण हीन प्रदेशोंका संक्रमण करता है या कितने गुणों अधिक प्रदेशोंका संक्रमण करता है' इस प्रकार गाथा सूत्रके अर्थके सम्बन्धका अवलम्बन लिया गया है ।



⊙ सो पुय पयडिद्विदि-अणुभाग-पदेसयमो यहुसो पस्बियो ।

। १० मो उण गाहाय पुण्डम्मि णिलीणो पयडि-द्विदि-अणुभाग-पदसविसओ  
बधो बडुमो गयतरसु पम्बिदो सि तत्थन्न उम्बित्थरो उडुम्बो, ज एत्थ पुणो पम्बिजदे,  
पयामियपयामण फल्लविसमाणुबलमादो । तदो महावचाणुसारेणत्थ पयडि-द्विदि  
अणुभाग-पदमबधेनु विहामिय ममणेनु तदो बधो समथो होइ ।

⊙ सकमे पपदं ।

। १३ अहा उरेमो तहा भिरेमो सि पायादो बधसमधिसमणतर पत्तावसरो  
मकममहाडियागे सि जाणावणुमद सुत्तमागय । एव च पपदस्म सकमाहियारस्म  
उक्कमो णिस्सुवो णओ अणुगमो यदि चउम्बिहो अवयारो पस्बेयव्यो, अपणहा  
तदणुगमावापामावादो । तय ताव पचविहोवकमपरवणुत्तरसुत्तमोइण्ण—

⊙ चिन्तु उनमेंस प्रकृतिबन्ध स्थितिबन्ध, अनुभागपत्र और प्रदमबन्धक

पहुत पात्र प्रन्पण क्रिया गया है ।

। १२ चिन्तु गाथाके पृथार्थमें जा प्रकृतियन्ध स्थितिबन्ध अनुभागक्य और प्रदरात्थ  
अन्धमूल है तम् बन्धक्य प्रन्पणमें बहुतवार प्रकृतय क्रिया है इसलिये वस्तुव्य विस्तृत विवरण  
बडी पर देयता आदिय । यहाँ पर वस्तुव्य टिप्पण कयन नहीं करत हैं, क्योंकि प्रन्पणित हुई वस्तुके  
पुन प्रन्पण करतमें कोई विस्तर काम नहीं है । इसलिये महाबन्धके अनुसार प्रकृतिक्य,  
स्थितिबन्ध अनुभागक्य और प्रदरात्थक्य यहाँ व्याख्यान कर देनेपर क्य अनुयायाइएर समाप्त  
होता है ।

विशुधार्थ—‘यदि पयडीया’ इत्यादि गाथामें प्रकृतिबन्ध आदि पात्र प्रन्पणके बधों और  
प्रकृतिबन्ध आदि पात्र प्रन्पणके मकमोंस निरैरा क्रिया है । यद्यपि गाथाके वस्तुव्यमें प्रकृत  
स्थिति और अनुभागवत्थ रह निरैरा नहीं है पर गाथाके पृथार्थमें प पद आब हैं, अतः इनक्य  
बडी भी मकम्य कर कनम संकमदि यदि वा इस पदव्य प्रकृतिसंक्रम स्थितिसंक्रम और  
अनुभागसंक्रमक्य सूचन हो जाता है । इस प्रकार पुणिसुत्तरकरन प्रन्पणमें जा ‘अन्ध’ इस अधि  
कारमें बन्ध और संकम्य इस दानोंके अन्धकार करनस निरैरा क्रिया है सा बह इस गाथाके अनुयाय  
ही क्रिया है पर कान हो जाता है । यद्यपि इस प्रन्पणमें पात्रों प्रन्पणके मकमोंस भी निरैरा करन  
आदिय पर पर नहीं करनस आणु कृतिप्रान पर कनताया है कि इसक्य अन्धकार ककन क्रिया  
जा पुण्य है अथ यहाँ नहीं करत हैं । आशय पर है कि महाबन्ध आदिमें कनप्रन्पणस विस्तृत  
विवरण क्रिया ही है अतः यहाँ इसक्य निरैरा नहीं क्रिया गया है । तथापि महाबन्धसे यहाँपर  
इस प्रन्पणका वरा कर लेता आदिय ।

⊙ अर मकमया प्रकृण है ।

। १३ वरावक अनुसार निरैरा क्रिया जाता है इस ग्यावक अनुसार क्य प्रन्पणही  
समानिके वर अर मकम महाधिकारक्य वर्तन अरगर प्रात है पर कनानके सिव पर सूत्र  
आया है । इस प्रकार प्रन्पणान मकम अधिधारक्य उक्कम नित्त मय और अनुगम इण  
क्यने वर प्रन्पणक्य अरगाक्य कयन करता आदिय । नहीं ता वराक्य ठीक वरहम ज्ञान नहीं हो  
ताक्य । इसमें वर्तने वीच प्रन्पणक्य उक्कमक्य कयन करनक्य सिरे आणवक्य सूत्र आया है—

❁ संक्रमस्य पंचविहो उवक्कमो-आणुपुञ्ची णामं पमाणं वत्तच्चदा अत्थाहियारो चेदि ।

§ १४. पयदत्थाहियाग्मस मोटागणं वृद्धिविसयपञ्चामण्णभावो जेण कीरदे सो उवक्कमो णाम । नुण मो पंचविहो आणुपुञ्चीआदिभेएण । तत्थाणुपुञ्ची तिविहा—पुञ्जाणुपुञ्ची पच्छाणुपुञ्ची जत्थतत्थाणुपुञ्ची चेदि । तत्थ पुञ्जाणुपुञ्चीए कमायपाहुइस्म पण्हारमण्हमत्थाहियाराणं मज्झे पचमो एगो अत्थाहियारो । पच्छाणुपुञ्चीए एकारममो । जत्थतत्थाणुपुञ्चीए पटमो विट्ठिओ तट्ठिओ एवं जाव पण्हारममो वा त्ति वत्तच्चं । णाममेदस्म संक्रमो त्ति गोण्णपटं, पयडि-ट्टिदि-अणुभाग-पदेसमंक्रमसरूव-वण्णणाटो । पमाणमेत्थ अक्कर-पद-संधाय-पडिवत्ति-अणियोगदारेहि संखेज्जं, अत्थदो अणतमिदि वत्तच्चं । वत्तच्चटा एटम्म समयो । एत्थ अत्थाहियारो चउच्चिहो थप्पो, उवरि सुत्तयारेण ममुहेणेव पस्विस्ममाणत्ताटो । एवमुवक्कमो गओ ।

\* संक्रमका उपक्रम पाँच प्रकारका हैं—आनुपूर्वी, नाम, प्रमाण, वक्तव्यता और अर्थाधिकार ।

§ १४. जिसमें प्रकृत अर्थाधिकार श्रोताओंके वृद्धिप्रिय होनेके अनुकूल होता है वह उपक्रम कहलाता है । त्रिन्तु वह आनुपूर्वी आदिके भेदसे पाच प्रकारका है । उनमेंसे आनुपूर्वीके तीन भेद हैं—पूर्वानुपूर्वी, पश्चादानुपूर्वी और यत्रतत्रानुपूर्वी । उनमेंसे पूर्वानुपूर्वीकी अपेक्षा कपायप्राभृतके पन्द्रह अर्थाधिकारोंमेंसे यह पाचवा अर्थाधिकार है । पश्चादानुपूर्वीकी अपेक्षा ग्यारहवाँ अर्थाधिकार है और यत्रतत्रानुपूर्वीकी अपेक्षा पहला, दूसरा, तीसरा उसी प्रकार क्रमसे जाकर पन्द्रहवा अर्थाधिकार है ऐसा यहा कहना चाहिये । उमका संक्रम यह नाम गोण्यपद है, क्योंकि इसमें प्रकृतिसंक्रम, स्थितिसंक्रम, अनुभागसंक्रम और प्रदेशसंक्रमके स्वरूपका वर्णन किया गया है । इनका प्रमाण अक्षर, पद, सधात, प्रतिपत्ति और अनुयोगद्वारोकी अपेक्षा संख्यात है तथा अर्थकी अपेक्षा अनन्त है ऐसा यहा कहना चाहिये । वक्तव्यताके तीन भेद हैं । उनमेंसे इसकी स्वसमय वक्तव्यता है । प्रकृत अर्थाधिकारके चार भेद हैं जिनका कथन स्थगित करते हैं, क्योंकि आगे सूत्रकार स्वमुखसे ही उनका कथन करनेवाले हैं । उस प्रकार उपक्रमका कथन समाप्त हुआ ।

विशेषार्थ—उप उपसर्ग पूर्वक क्रम धातुसे उपक्रम शब्द बना है । इसका अर्थ है समीपमें जाना । उपक्रमके जो आनुपूर्वी आदि पाच भेद बतलाये हैं उनको भले प्रकारसे जान लेनेपर श्रोताको प्रकृत अधिकारका सच्चेपतः पूरा ज्ञान हो जाता है । आनुपूर्वीसे तो वह यह जान लेता है कि यह प्रारम्भसे गिननेपर कितनेवा, अन्तसे गिननेपर कितनेवा और जहा कहींसे गिननेपर कितनेवा अधिकार है । नामसे प्रकृत प्रकरणका नाम और इसका नामके दस या छह भेदोंमेंसे किसमें अन्तर्भाव होता है यह जान लेता है । प्रमाणसे प्रकृत प्रकरणके परिमाणका ज्ञान हो जाता है । वक्तव्यतासे यह व्याख्यान स्वसमय या परस्मय इनमेंसे किस अपेक्षासे किया जा रहा है यह ज्ञान हो जाता है । तथा अर्थाधिकारसे प्रकृत प्रकरणके अवान्तर अधिकारोंका ज्ञान हो जाता है । इस प्रकार जिस अधिकारका व्याख्यान करनेवाले होते हैं उसका आनुपूर्वी आदि द्वारा पूरा ज्ञान हो जाता है, इसलिये इन सबको उपक्रम कहते हैं । यहा पर सक्रम प्रकरणका वर्णन करनेवाले हैं, इसलिये आनुपूर्वी आदि द्वारा उमका उपक्रम बतलाया गया है ऐसा जानना चाहिये ।

ॐ एतत्थिक्खेवो कायव्वो ।

§ १५ एरपुहेसे सकमस्स थिक्खेवो कायव्वो होइ, अण्णहा अपपदभिरायरण-  
सुहेण पयदत्तवाणानणोवायामावादो । उच च—

अण्णगमणियारण्हं पव्वस्स पत्तञ्जालिमिर्च च ।

संसवविद्यासण्हं तत्तव्वद्वारण्हं च ॥१॥

§ १६ तदो एतत्थिक्खेवो अवपारेयव्वो थि सिद्ध ।

ॐ धामसंक्रमो ठमणसकमो वच्चसंक्रमो खेतसकमो काणसकमो  
माषसकमो वेवि ।

§ १७ ण्णमेदे उण्णिक्खेवा एतत्थि होति थि मण्डि होइ । सपहि एवेसिं  
थिक्खेवाणमत्तवक्खवण चप्प काट्ठण जयाणमवपारो साव कीरदे, जयविहागे अण्णवगए  
सदत्तवण्णिण्ययाणुववचीदो ।

ॐ वेगमो सच्चो संक्रमे इण्हइ ।

§ १८ कुवो ? इण्णपजायमयइयविसयवादो । वेदस्स सुचस्स तदुमयविस-  
यचमसिद्धं, यइस्ति न तइयमसिलभ्य वर्तते इति नैकगमो नैगमो इति वचनानावत्सिद्धो ।  
तदो सामण्णविसेसजिण्णवणा सच्चो थिक्खेवा एदस्स विसए समवति थि सिद्धं ।

० यहाँपर निक्षेप करना चाहिये ।

§ १५. अब इस स्थान पर संक्रमण निक्षेप करना चाहिये क्योंकि इसके बिना अण्ण  
अर्थात् निराकरण करके प्रकृत अर्थके ज्ञान करनेका दूसरा कोई उपाय नहीं है । क्या भी है—

अण्णक अर्थात् निवारण करण, प्रकृत अर्थात् प्रकृत्य करण अर्थात् विन्यास करना  
और तत्कार्थक निरूपण करना इन बात प्रयोगनोंकी सिद्धिके सिद्धि निक्षेप किया जाता है ॥१॥

§ १६ इस सिद्धि यहाँपर निक्षेपका अवधार करना चाहिये यह बात सिद्ध होती है ।

० नामसंक्रम, स्थापनासंक्रम, द्रव्यसंक्रम, क्षेत्रसंक्रम, कस्तसंक्रम और  
माषसंक्रम ।

§ १७ इस प्रकार ये छह निक्षेप यहाँपर होते हैं यह कस्त अर्थका तात्पर्य है । अब इन  
निक्षेपोंका निक्षेप व्याख्यान समाप्त करके पहले नबोधका अवधार करते हैं क्योंकि नयविभागको  
बाने बिना निक्षेपोंका ठीक तरहसे निर्णय नहीं किया जा सकता ।

० नैयम नय सब सामर्थ्यको स्वीकार करता है ।

§ १८. क्योंकि इसका विषय इच्छा और पर्याय दोनों हैं । यदि कहा जाय कि नैयम नय  
इच्छा और पर्याय इन दोनोंको विषय करता है यह बात नहीं सिद्ध होती, सो यह कस्त भी ठीक  
नहीं है, क्योंकि जो है वह दोका अस्तित्वनकर नहीं पाया जाय । इस अर्थके अनुसार जो एकको  
मात्र न होकर अनेक अर्थोंको प्राप्त होता है वह नैयम नय है इस निरूपणकावचनसे नैयमनयका  
इच्छा और पर्याय दोनोंको विषय करना सिद्ध होता है । इसलिये धामान्म और विसेत्थी अर्थेइ  
प्रकृत होनेवाला सब निक्षेप इसके विषय रूपसे समझ हैं यह बात सिद्ध होती है ।

### ❀ संग्रह-व्यवहारा कालसंक्रममवर्णति ।

§ १०. एत्थ संग्रह-व्यवहारा मन्वे मंक्रमे इच्छन्ति त्ति अहियारमंभवो कायच्चो, ढव्वट्टिएसु मन्वेमिं णामादीणं संभवाविहारादो । णवरि कालसंक्रममवर्णति । कुदो ? मंगहो ताव मंक्खित्तवत्थुग्गहणलक्षणो । मामण्णावेक्खणाए एको चैव कालो, ण तत्थ पुच्चावगीभावमंभवो, जेण तस्म मक्रमो होज्ज त्ति एट्ठेणाहिप्पाएण कालसंक्रममवणेड । व्यवहारणयस्स त्ति एवं चैव वत्तच्च । णवरि कालसंक्रममवणेड त्ति वुत्ते अदीढकालो सो चैव होऊण ण पुणो आगच्छड, तस्मादीढत्तादो । ण चाण्णम्मिं आगए मते अण्णस्स मंक्रमो वोत्तुं जुत्तो, अव्ववत्थावत्तीदो । तम्हा कालसंक्रममेसो णेच्छड त्ति घेत्तच्च ।

### ❀ उज्जुसुदो एदं च ठवणं च अत्रणेड ।

§ २०. छण्हं णिम्भेवाणं मज्झे उज्जुसुदो एदमणतग्परुविदं कालसंक्रमं ठवणा-  
मंक्रमं च अवणेड, सेमचत्तारि मंक्रमे इच्छड त्ति वुत्त होड । कुदो दोण्हमेदेसिमण-  
व्वुवगमो ? ण, एदस्सं विमए तद्भावमारिच्छमामण्णाणमभावेण तदुभयसंभवाणुवलभादो ।  
कथमुज्जुसुदे पज्जवट्टिए णाम-ढव्व-वेत्तमंक्रमण संभवो ? ण, उज्जुसुदवयणविच्छेद-

### ❀ संग्रहनय और व्यवहारनय कालसंक्रमको स्वीकार नहीं करते हैं ।

§ १९ यद्वापर सग्रह और व्यवहारनय सब सक्रमोंको स्वीकार करते हैं ऐसा प्रकरणके साथ सम्बन्ध कर लेना चाहिये, क्योंकि द्रव्यार्थिकनय नामादिक सक्रमोंको विषय करते हैं ऐसा माननेमें कोई विरोध नहीं आता है । किन्तु ये दोनों नय कालसंक्रमको स्वीकार नहीं करते, क्योंकि सग्रहनय तो सग्रह की गई वस्तुको ग्रहण करता है । परन्तु सामान्यकी अपेक्षा काल एक ही है । उसमें पूर्वकाल और उत्तरकाल ऐसे भेद सम्भव नहीं हैं जिससे उसका संक्रम होवे । इस प्रकार इस अभियंत्रणमें सग्रहनय कालसंक्रमको नहीं स्वीकार करता । व्यवहारनयकी अपेक्षा भी इसी प्रकार कथन करना चाहिये । किन्तु व्यवहारनय कालसंक्रमको नहीं स्वीकार करता ऐसा कहनेपर यह युक्ति देनी चाहिये कि अतीत काल उही होकर फिरसे नहीं आता है, क्योंकि वह बीत चुका है । और अन्य कालके आनेपर अन्य कालका सक्रम कहना युक्त नहीं है, अन्यथा अव्ययस्था दोष आता है । इसलिये व्यवहारनय भी कालसंक्रमको स्वीकार नहीं करता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये ।

### ❀ ऋजुसूत्रनय इसको और स्थापनासंक्रमको स्वीकार नहीं करता ।

§ २० ऋजुसूत्रनय छह सक्रमोंमेंसे इस पूर्वमें कहे गये कालसंक्रमको और स्थापना सक्रमको स्वीकार नहीं करता, शेष चार सक्रमोंको स्वीकार करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

ग्रंका—ऋजुसूत्रनय इन दोनों संक्रमोंको क्यों स्वीकार नहीं करता ?

ममाधान—नहीं, क्योंकि, तद्भावसादृश्यसामान्य ऋजुसूत्रका विषय नहीं होनेसे इन दोनोंको उसका विषय मानना सम्भव नहीं है ।

शंका—ऋजुसूत्रनयमें नाम, द्रव्य और क्षेत्र सक्रम कैसे सम्भव हैं ।

१ ता० प्रती तस्मादीह ( द ) चादो ? ण चाणु ( ण ) म्मि इति पाठः । २. ता० प्रती -मणव्वुवगमो एदस्स इति पाठः ।

का सम्मति से प्रथम पत्र विरोधाभावादी ।

⊙ सदस्त धर्म भाषो य ।

१२१ कुतो ? सुदृष्टव्यं विपणयं पदमि समन्वित्त्वे वाणमर्ममवादी । कथमत्य  
धामनिक्षेपस्त समवो ? य, सुदृष्टव्यं पदमि तदरिपत्तं [ पत्रि विरोधाभावादी ] ।

निक्षेपणयपरूषणा गया ।

समाधान—नहीं, क्योंकि वर्तमान कालके भीतर इन संकल्पों पर सुदृष्टता होनेमें कोई  
विरोध नहीं आया है ।

⊙ नामसंक्रम और भावसंक्रम ये अर्थनयके विषय हैं ।

१२२ क्योंकि शब्दनय द्वारा पर्यायविधान है इसलिये इसमें शेष निक्षेप असम्भव है ।

शुंका—इसमें नामनिक्षेप कैसे सम्भव है ?

समाधान—नहीं क्योंकि यह नय शब्दप्रधान है, इसलिये इसमें धामनिक्षेप है फल  
स्वीकार कर देनेमें कोई विरोध नहीं आया है ।

विशेषार्थ—यहाँ संक्रमणों नाम स्थापना इत्ये शेष कास और भाव इन द्वय निक्षेपोंमें  
पत्रि करके कर्मादि किन्तु निक्षेपका क्षेत्र नय विषय करण है यह कथन्य है । मुख्य नय पत्रि है—  
नेगम, संभ्र, व्यवहार, श्रुतुत्त और शम्प । जो संक्रमण भावको महत्त्व करता है वह नेगमनय है  
इत्यादि रूपसे नेगमनयके धर्मक लक्षण है । किन्तु यहाँ जो केवल इत्ये या केवल पर्यायको विषय  
न करके दोनोंको विषय करता है वह नेगमनय है । नेगमनयका फल लक्षण स्वीकार कर देनेसे  
सभी निक्षेप धर्मक विषय हो जाते हैं । इसीसे श्रुतुत्तकारने नेगमनय सब निक्षेपोंको  
स्वीकार करण है यह कथा है । यद्यपि संभ्रनय अभेदवादी है और संक्रमण दो के बिना अर्थन  
मेवके बिना बन नहीं सकता इसलिये द्वारा संभ्रनय एक भी संक्रमण विषय नहीं है । तथापि  
अभेदके सिद्धा शेष सब भेद अभेदपर्यन्त अर्थन संभ्रनयके विषय हो सकता है, इस लिये अन्त-  
संक्रमणके सिद्धा शेष सब संक्रमण संभ्रनयके विषय बतलाये हैं । अथ यहाँ वा प्रश्न होते हैं । प्रथम  
तो यह कि और भेदके समान अन्तमेव अर्थनयका विषय क्यों नहीं है और दूसरा यह कि  
भावसंक्रमण पर्यायसंक्रमण होनेके कारण यह संभ्रनयका विषय कैसे हो सकता है ? इन दोनों  
प्रश्नोंका क्रमसे समाधान यह है कि फलतः विचार है कि वस्तुमें यहाँ तक इत्यादि रूपसे भेद  
हो सकता है यहाँ तक वे दृष्टिभेदसे संभ्र और व्यवहारनयके विषय हैं और यहाँसे अन्तमेव  
कास हा आया है यहाँसे वे श्रुतुत्तके विषय होते हैं । यथा अन्तसंक्रमण अन्तमेवके बिना  
हो नहीं सकता अथ इसे संभ्रनयका विषय नहीं मान्य है । अथ भावनिक्षेप संभ्रनयका  
विषय क्यों है इसका विचार करते हैं—यद्यपि भाव और पर्याय वे एकदूसरेवाची शब्द हैं किन्तु  
इत्येके बिना केवल पर्याय नहीं वर्ण्य जाती । अतएव यह है कि पर्यायसे अन्तमेव इत्ये ही भाव  
कहा जाता है यथा इस विचारसे भावसंक्रमण भी संभ्रनयका विषय मान्य गया है । व्यवहारनय भेद-  
वादी है । पर यह भी अन्तमेवको स्वीकार नहीं करण और एक वस्तुमें संक्रमण बन नहीं सकता  
इसलिये अन्तमेव व्यवहारनयका भी विषय नहीं मान्य गया है । किन्तु शेष इत्यादि भेद व्यवहार  
नयमें बन जाते हैं यथा अन्तसंक्रमणके सिद्धा शेष सब संक्रमण व्यवहारनयके भी विषय बतलाये  
गये हैं । श्रुतुत्तनय वर्तमान पर्यायवादी है इसलिये इत्येके लिये हुए जो निक्षेप सम्भव हैं वे  
श्रुतुत्तके विषय हो सकते हैं शेष नहीं । शब्दनयके विषय नय और भावनिक्षेप हैं  
यह कथा ही है ।

इस प्रकार क्षेत्र निक्षेप किन्तु नयके विषय हैं इत्ये अन्त समाप्त हुआ ।

§ २२. मंपहि णिक्खेवत्थविहागणट्टमुयग्गिं पवधमाह—

⊗ णोआगमदो दच्चसंकमो ठवणिज्जो ।

§ २३. एत्थ णाम-ट्टवणा मकमा आगमदो दच्चमकमो च सुगमा त्ति ण पस्-  
विदा । णोआगमदच्चमकमो पुण ताव ठवणिज्जो, तस्म पयटत्तादो चहुवण्णणिज्जत्तादो  
च । एवमेद ठनिय मंपहि येत्तमंकममरूवपरूवणट्टमुत्तग्गमुत्त भणइ—

⊗ खेत्तसंकमो जहा उट्टूलोगो संकतो ।

§ २४. एत्थ 'खेत्तमकमो जहा' त्ति आमकिय 'उट्टूलोगो संकतो' त्ति तस्म  
मरूवणिद्देशे कथो । उट्टूलोगिणद्देशेण तत्थ द्वियजीवाणमिह गहणं कायच्च, अण्णहा  
उट्टूलोगस्म मकंतिविग्गेहादो । उट्टूलोगद्वियदेवेषु इहागदंसे उट्टूलोगमकमो जादो त्ति  
भावत्यो ।

⊗ कालसंकमो जहा सकतो हेमतो ।

§ २५. जो गो पुच्चमटकतो हेमतो सो पडिणियत्तिय आगदो त्ति भणिय  
होइ । कथमहकतस्म पुणगगमो त्ति णासंकणिज्ज, साग्गिच्छमामण्णावेक्खाए अडकतस्म  
वि तस्म पुणगगमण पडि विग्गेहाभावादो । अथवा वग्गियालपज्जाएणावट्टिओ जो कालो

§ २२ अथ निक्षेपके अर्थका विशेष व्याख्यान करनेके लिये आगेके प्रबन्धका निर्देश  
करते हैं—

\* नोआगमद्रव्यसंक्रमका कथन स्थगित करते हैं ।

§ २३ नाममकम, स्थापनामकम और आगमद्रव्यमकमका प्रिवेचन सुगम है, इसलिए  
यहाँ उनका कथन नहीं किया । अत्र इसके आगे नोआगमद्रव्यसंक्रमका कथन करना चाहिये  
था किन्तु यह प्रकरण प्राप्त है और उसका बहुत घर्णित करना है इसलिए उसका कथन स्थगित  
करते हैं । इस प्रकार उसे स्थगित करके अत्र क्षेत्रसक्रमके स्वरूपका निर्देश करनेके लिये आगेका  
सूत्र कहते हैं—

\* क्षेत्रसंक्रम यथा—ऊर्ध्वलोक संक्रान्त हुआ ।

§ २४ यहाँ पर क्षेत्रसक्रम जैसे ऐसी आशका करके 'उट्टूलोगो संकतो' इस पदद्वारा  
उसके स्वरूपका निर्देश किया है । सूत्रमें जो 'ऊर्ध्वलोक' पदका निर्देश किया है सो उससे ऊर्ध्व-  
लोकमें स्थित जीवोंका ग्रहण करना चाहिए, अन्यथा ऊर्ध्वलोकका सक्रमण होनेमें विरोध आता  
है । ऊर्ध्वलोकमें स्थित देवोंके यहाँ आनेपर वह ऊर्ध्वलोकका सक्रमण कहजाता है यह इस सूत्रका  
भावार्थ है ।

\* कालसंक्रम यथा—हेमन्त ऋतु संक्रान्त हुई ।

§ २५ जो हेमन्त ऋतु पहले निकल गई थी वह पुनः लौट आई, यह उक्त कथनका  
सादृश्य है ।

शंका—व्यतीत हुई हेमन्त ऋतुका फिरसे लौट आना कैसे सम्भव है ?

समाधान—ऐसी आशका करना ठीक नहीं है, क्योंकि सादृश्यसामान्यकी अपेक्षा  
अतीत हुई हेमन्त ऋतुका फिरसे आगमन माननेमें कोई विरोध नहीं आता । अथवा जो

सो त अविद्युत् हेमसत्सूत्रेण परिणद्धो सि एदस्स अर्थो वक्ष्यो । मयहि आगम-  
मावसकमद्वयवदुत्तप्याहुडजाण्यविसय सुगमचादो अकृत्विय जोआगममावसकम-  
परूपणमाह—

ॐ भावसंकमो जहा सकंत पेम्म ।

§ २६ एत्थ पेम्मस्स जीवपत्रायचादो पचमावबवएसस्स विसयधरसकसी  
भावसंकमो सि वेत्थो । प्रसिद्धभाय व्यवहारः, तथा हि वक्तारो भवन्ति सक्रान्तमस्य  
प्रेमान्यत्राणुप्पादिति ।

ॐ जो सो योआगमवो दम्बसकमो सो दुबिहो कम्मसकमो च  
णोकम्मसकमो च ।

§ २७ जो सो पुम्भं ठविदो जोआगमदम्बसकमो सो दुवियप्पो कम्म-ओकम्म  
मेएण, तदुमपवदिरिचणोआगमदम्बस्ताभुक्लमादो । तत्त्व पदमस्म वदुवण्णणिज्जचादो  
पयदादो च कम्मसुअपिय योववचम्भेव ताव ओकम्मदम्बसकमं भितरिसणुहोम  
परूपे—

ॐ षोकम्मसकमो जहा कडसंकमो ।

§ २८ कचमसकंताण कहुदम्वाणमत्थ संकमवएसो ? न, सकम्पतेजेन

काय वपाककम्मसे अवस्थित वा यह वपाककम्मसे बोद्धकर हेमन्त क्मसे परिगत हो गया,  
यह इस सूत्रका अर्थ करना चाहिए ।

जा संकमप्राप्तका ज्ञाता है और वसक वपप्राप्ते कुछ है यह आगमभावसंकमप्राप्त  
है । यहाँ यह सुगम है अतः इसका कम्म न करने काय नोआगमभावसंकमका कम्म करनेके लिये  
बागेका सूत्र करते हैं—

ॐ भावसकम पथा—प्रेम संक्रान्त हुआ ।

§ २६. यहाँ जीवपी पत्राव हेनेसे प्रेमका मावकसे निर्देरा किया है । वसका अन्य  
विषयकसे संकमका कन्त मावसंकम ह ऐसा यहाँ प्रकृत करना चाहिए । जैसे कि बोद्धो यह  
व्यवहार प्रसिद्ध है और वच्य भी ऐसा करते हैं कि इसका इससे प्रेम इत कर अन्यत्र संक्रान्त  
हो गया है ।

ॐ जो नोआगमद्रव्यसंकम है वह दो प्रकारका है—कर्मसकम और नोकर्म  
सकम ।

§ २७ या पहले नोआगमद्रव्यसंकम परिगत कर चाये हैं वह कर्म और नोकर्मके भेदसे  
दो प्रकारका ह, कर्मी कि इन दोके सिवा और नोआगमद्रव्य नहीं पाया जाता । इनमेंसे जा पहला  
कर्मजाआगमद्रव्यसंकम है वसका अर्थन बहुत है और वसका प्रकार सो है अतः कम्मका बोद्धकर  
जिससे विषयमें बोधा बरमा है उसे मोकर्मद्रव्यसंकमका ही व्याख्यानकरना करना करते हैं—

ॐ नोकर्मनोआगमद्रव्यसकम पथा—क्याप्तसकम ।

§ २८ शक्या—अथ इत्थोका संकमका तो बोध्य नहीं परंतु एक वचपी वृत्ति

१ ता मी कम्मसकमो च षोकम्मसकमो चा मी कम्मसकमो षोकम्मसकमो च इति पाठः ।

देशान्तरमिति मंत्रमगच्छव्युत्पादनात् । णईतोये अण्णत्थ वा क्त्थ वि कट्ठाणि ठविय जेणेच्छिउदपदेम गच्छंति सो कट्ठमओ मक्कमो कट्ठमंकमो ति भणिय होइ । णिदग्गिसण-  
मेत्त चेदं तेणिट्ठ-पत्थर-मट्ठिया-फलहसंकमार्डणं गहणं कायव्व, णोकम्मदच्चत्तं पडि  
विसेमाभावादो ।

लडकी रूप तो होती नहीं, फिर इन्हें यहाँ सक्रम संज्ञा कैसे दी है ?

समाधान—नहीं क्योंकि जिनमें एक देशसे दूसरे देशमें सक्रमण किया जाता है वह सक्रम है, मंत्रम शब्दकी इस न्युत्पत्तिमें उक्त कथन बन जाता है। नदी चिनारे या अन्यत्र वहाँ काष्ठानो रत्नर जिसमें उच्छिद्यत स्थानको जाते हैं यह काष्ठमय मष्टम काष्ठमंक्रम है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यह उदाहरणमात्र है इसलिये उससे अष्टकमंक्रम, पापाणसक्रम, मृत्तिकासंक्रम और फलकमक्रम उत्पादित प्रहण करना चाहिये, क्या कि ये नत्र नोकर्मद्रव्य है, इस अपेक्षा काष्ठमें इनमें कोई विशेषता नहीं है।

विशेषार्थ—पहले नामसक्रम प्रादि छह सक्रमोंका उल्लेख कर आये हैं। यहाँ पर उन्हींका अर्थ दिया गया है। उनमें से नामसक्रम, स्थापनाराक्रम, आगमद्रव्यराक्रम और आगमभावरक्रम इन्हें मरल समझ कर तृणिसूत्रकारने उनका खुलासा नहीं किया है। फिर भी यहाँ पर क्रमवार सभीका खुलासा किया जाता है। किसीका राक्रम ऐसा नाम रखना नामसक्रम है। किसी अन्य वस्तुमें 'यह राक्रम है' ऐसी स्थापना करना स्थापनासक्रम है। द्रव्यमक्रमके दो भेद हैं—आगमद्रव्यसक्रम और नोआगमद्रव्यसक्रम। जो राक्रमत्रिपयक शास्त्रना ज्ञाता हो किन्तु वर्तमानमें उसके उपयोगमें रक्षित हो वह आगमद्रव्यसक्रम है। नोआगमद्रव्यसक्रमके दो भेद हैं—कर्मनोआगमद्रव्यसक्रम और नोकर्मनोआगमद्रव्यसक्रम। कर्मनोआगमद्रव्यसक्रम राक्रमको प्राप्त होनेवाला कर्म कहलाता है। यहाँ इस अनुयोगद्वारमें इसीका प्रिस्तृत विवेचन किया जानेवाला है। नोकर्मनोआगमद्रव्यसक्रम के सहकारी कारण कहलाते हैं जिनके निमित्तसे एक देशसे दूसरे देशमें जानेमें सुगमता हो जाती है। उदाहरणार्थ लकड़ीका पुल, नौका, डोंटों, पत्थरों व फलकोंका पुल आदि। यद्यपि यहाँ सक्रम शब्दका अर्थ सक्रमण करके उसका यह नोकर्म बतलाया है पर कर्मद्रव्यसक्रमका भी इसी प्रकार नोकर्म जान लेना चाहिये। जो कर्मद्रव्यके सक्रमणमें सहकारी होगा वह कर्मद्रव्यका नोकर्म कहलायगा। उदाहरणार्थ—असाताके कर्मपरमाणुओंको सातारूप परिणामानेमें सम्पत्ति प्रादि निमित्त पड़ते हैं, इसलिये ये असाताकर्मके साताकर्मरूप राक्रमणके निमित्त कारण हैं। इसी प्रकार सर्वत्र जान लेना चाहिये। एक क्षेत्रसे दूसरे क्षेत्रमें जाना क्षेत्रसक्रम है। जैसे ऊर्ध्वलोकसे मध्यलोकमें जाना यह क्षेत्रराक्रम है। कालका एक ऋतुको छोड़कर दूसरी ऋतुरूप होना या एक कालके स्थानमें दूसरा काल आ जाने पर भी पूर्व कालका पुनरागमन मानना कालसक्रम है। जैसे वर्षाकालके बाद हेमन्त ऋतु आती है सो यह कालसक्रम है। या हेमन्त ऋतुके बाद शिशिरऋतु प्रादि व्यतीत होकर पुनः हेमन्त ऋतुका आना इत्यादि कालसक्रम है। भावसक्रमके दो भेद हैं—आगमभावसक्रम और नोआगमभावसक्रम। जो सक्रमत्रिपयक शास्त्र को जानता है और उसके उपयोगसे युक्त है वह आगमभावसक्रम है। तथा नोआगमभाव सक्रममें प्रेम आदिरूप भाव लिये गये हैं। उनका एकसे दूसरेमें सक्रमित होना यह नोआगम भावसक्रम है। इस प्रकार जो राक्रमका छह निक्षेपोंमें विभाग किया था उसका किस निक्षेपकी अपेक्षा क्या अर्थ है इसका खुलासा किया।



१२० अथ हि पयदकम्मठम्बमकमसुरूवफरुवणदुमुत्तरमुत्त मण्ड—

⊙ कम्मसकमो चउत्तिवहो । तं जहा—पयडिसकमो द्विविसकमो अणुभागसकमो पदेससकमो चेवि ।

१३० मिच्छत्तादिक्रज्जणपक्खमस्स पोग्गलक्खभस्स कम्मववपसो । तस्स सकमो कम्मचापरिचाणण सहावतरमकली । सो पुण ठन्वद्वियणयावलवणेणगतमावण्णो पक्खवद्वियणयावलवणेण चउत्पयागे होइ पयडिसकमादिमेण्ण । तस्य पयडीए पयडि अतरेसु संकमो पयडिसंकमो चि मण्णइ, अहा कोइपयडीए माणात्सि सु संकमो चि । एव ससाप पि वत्तम्ब । एमो चउत्पयारो कम्मसंकमो एत्य पयदो । तस्य वि मोहपिजकम्मसवधिणा सकमचउत्पेण पयद, अण्णेसिमेत्वाहियाराभावादो । एदणेदस्स अत्याहियारपरुवणदुवारणाणुगमो परुविदो । को अणुगमो णाम ? अनुगम्यठज्जेन प्रकृतोअधिक्खर इत्यणुगमः । प्रकृते वस्तुन्यदान्तराणाभर्याधिकाराणां निर्गमं इति यावद् । एवमदम्म सकममहाहियारस्स उवकमादीहि चउहि पयारेहि अहियारो परुविदो । सकमस्सेव संसचोइसत्त्वाहियाराण पि पुभ पुभ उवकमादिपरुवणा किण्ण परुविज्जइ ? न, एदस्म मन्झदीवयभावेण ताणं पि तस्मिद्वीए तदपरुवणादो ।

१२९. अब प्रत्यक्ष प्राप्त कर्मद्रव्यसंकमका स्वरूप वस्तुनामे के लिय आनाम सूत्र करते हैं—

⊙ कर्मनोआगमद्रव्यसकम चार प्रक्करका है । यथा—प्रकृतिसंकम स्थितिसंकम, अनुमागसंकम भीर प्रद्वसंकम ।

१३ जो पुराणद्रव्य मिथ्यात्व आदि कार्यके उत्पन्न करनेमें समर्थ हैं वह कर्म कहलाय है । इसका अर्थ कर्मोत्पन्न करनेवाला ज्ञान किं किता अथ स्वभावरूपसे संकमका करना कर्मसंकम कहलाय है । वह यद्यपि द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षसे एक प्रक्करका है तथापि पर्यायार्थिक मयकी अपेक्षासे वह मङ्गलिसंकम आदिके भेदसे चार प्रक्करका है । इनमेंसे एक प्रकृतिक सूचो प्रकृतिबोध संकम होना प्रकृतिसंकम कहलाता है । जैसे बोध प्रकृतिक मात्सरिकमें संकमका नामा प्रकृतिसंकम है । इसी प्रकार रोच संकमोंके विषयमें भी कम्म करना चाहिये । वह चार प्रक्करका कर्मसंकम यहाँ पर प्रकृत है । इसमें भी मोहनीयकर्मसम्बन्धी चार संकमोंका यहाँ प्रकृत है, क्यों कि सूचरे कर्मोंका यहाँ पर अधिक्कर यही है । इस प्रकार यहाँ पर जो इनके अर्थविशयोंका कम्म किया है सो इससे इसके अनुगमका कम्मन कर दिया गया वेला जानना चाहिये ।

संक्ष—अनुगम किस करते हैं ?

समाधान—जिससे मङ्गल अधिक्करका ज्ञान होता है उसे अनुगम करते हैं ।

इससे मङ्गल वस्तुमें अन्तर् अधिक्करोंका पूरा ज्ञान हो जाय है वह इसका तात्पर्य है । इस प्रकार इस संकम महाधिक्करका वरकम आदि चार प्रक्करसे अधिक्कर काया ।

संक्ष—जिस प्रकार संकमकी लक्ष्य आदि रूपसे प्रकृतका भी है वसी प्रक्कर रोच बोध अधिक्करोंकी भी प्रकृद् प्रकृद् लक्ष्य आदिरूपसे प्रकृतका क्यों नहीं की ?

समाधान—यही क्यों कि मण्णवीपरूपसे यहाँ इत्थम वस्तुका किया है । इससे

१. यदितु—अपविर्गम इति पाठ ।

६ ३१. मंपहि चउण्हमेदेगि मंक्रमण मज्जे पयडिसंकमम्म ताव भेदपदुप्पायणडु-  
मुत्तरमुत्तमाह—

❁ पयडिसंकमो दुविहो । तं जहा -- एगेगपयडिसंकमो पयडिड्ढाण-  
संकमो च ।

६ ३२. एत्थ मूलपयडिसंकमो णत्थि, महावदो चैव मूलपयडीणमण्णोण्ण-  
विमयसंकंतीए अभावादो । तम्हा उत्तरपयडिगंकमो चैव दुविहो मुत्ते परूविदो । तत्थे-  
गेगपयडिसंकमो णाम मिच्छत्ताडिपयडीणं पुथ पुथ णिरुभण काउण संकमगवेमणा ।  
तहा एकम्मि भमए जत्तियाणं पयडीण संकमसंभवो ताओ एक्कदो काउण संकमपरिक्खा  
पयडिड्ढाणसंकमो भण्णह; ठाणमहम्म ममुदायवाचयस्म महणादो । एट्ठमृभयप्पय  
पयडिसंकमं ताव वत्तहस्सामो ति जाणावणट्ठमुत्तरिमसुत्त भण्णह—

❁ पयडिसंकमे पयद ।

६ ३३. पयडि-ट्टिटि-अणुभाग-पदेमसंकमाण मज्जे पयडिसंकमे ताव पयदमिदि

शेष अधिहारोंकी भी यह विधि सिद्ध हो जाती है, अतः अन्यत्र उम रूपसे प्ररूपणा नहीं की है ।

विशेषार्थ—विही भी शास्त्रके प्रारम्भमें उपक्रम. निक्षेप, नय आर अनुगम इन चारका  
व्याख्यान करना आवश्यक है । इसमें उम शास्त्रमें वर्णित विषय और उमके अधिकार आदिका  
पता लग जाता है । इसी दृष्टिमें चूर्णिनूत्रकारने इन चारका अपने अवान्तर भेदोंके साथ यहाँ  
वर्णन किया है तथापि उमके जो चार अर्थाधिकार बतलाये हैं वे ही अनुगम व्यपदेशको प्राप्त  
होते हैं ऐसा यहाँ जानना चाहिये । यहा पर अन्तमें यह शका की गई है कि सक्रमके प्रारम्भमें  
जैसे इन उपक्रम आदिका वर्णन किया है उसी प्रकार अन्य पञ्जदोसविहत्ति आदि चौदह  
अधिकारोंके प्रारम्भमें इनका वर्णन क्यों नहीं किया । टीकाकारने इसका जो समाधान किया  
है उमका भाव यह है कि जैसे मध्यमें रखा हुआ दीपक आगे और पीछे सर्वत्र प्रकाश देता है  
वैसे ही यह महाधिकार मत्रके मध्यमें है अत यहा उनका उल्लेख कर देनेसे सर्वत्र वे अपने  
अपने अधिकारके नामानुरूप जान लेने चाहिए ।

६ ३१. अत्र उन चारों संक्रमोंमें आये हुये प्रकृतिसक्रमके भेद दिग्गलानेके लिये आगेका  
सूत्र कहते हैं—

\* प्रकृतिसंक्रम दो प्रकारका है । यथा—एकैकप्रकृतिसंक्रम और प्रकृतिस्थानसंक्रम ।

६ ३० यहाँ पर मूल प्रकृतिसक्रम नहीं है, क्योंकि स्वभावसे ही मूल प्रकृतियोंका परस्परमें  
सक्रम नहीं होता, इसलिये सूत्रमें उत्तरप्रकृतिसंक्रम ही दो प्रकारका बतलाया है । इनमेंसे  
मिथ्यात्व आदि प्रकृतियोंका प्रत्येक प्रत्येक सक्रमका विचार करना एकैकप्रकृतिसक्रम कहलाता  
है । तथा एक समयमें जितनी प्रकृतियोंका सक्रम सम्भव है उनको एकत्रित करके सक्रमका  
विचार करना प्रकृतिस्थानसक्रम कहलाता है, क्योंकि यहा पर समुदायवाची स्थान शब्दका  
ग्रहण किया है । इन दोनों प्रकारके प्रकृतिसक्रमको आगे बतलायेंगे इस बातका ज्ञान  
करानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

\* प्रकृतिसंक्रम प्रकृत है ।

६ ३३. संक्रमके प्रकृतिसक्रम स्थितिसंक्रम अनुभागसक्रम और प्रदेशसक्रम इन चार

भण्डि होइ । एव च पयदस्म पयदिसंक्रमस्स परूवण ह्णमाणो तस्य पडिषद्वाण गाहासुवाणमियचानहारणहुमुचसुत्तमाइ—

⊙ तस्य तिण्णि सुत्तगाहाओ इवन्ति ।

§ ३४ तस्य पयदिसंक्रमपरूवणानसरं तिण्णि सुत्तगाहाओ संगहियाससत्त्व-  
सागओ इवन्ति चि भण्डि होइ । ताओ कदमाओ चि आसंक्रिय पुञ्जसुत्तमाइ—

⊙ तं जहा ।

§ ३५ सुगम ।

संक्रम-उवक्रमविही पचविहो चउव्विहो य णिक्खेवो ।

णयविही पयत् पयदे च णिग्गमो होइ अट्टविहो ॥२४॥

§ ३६ एसा पदमा गाहा । पदीए पयदिसंक्रमस्स उवक्रमो णिक्खेवो णओ  
अणुगमो चेत्ति चउव्विहो अवयारो परूविहो, तण विणा पयदस्स परूवणोवायामावाओ ।  
एवमदिस्से गाहाए समुदायत्यो परूविहो । अवयवैत्ये पुण पुरहो सुण्णिमुत्तसंभवेणेष  
परूवइस्सामो । संपदि एत्थुरिद्धुविहणिग्गमसंस्वपन्वणविदियगाहाए अवयारो—

एकेकाए संक्रमो दुविहो संक्रमविही य पयहीए ।

संक्रमपडिग्गहविही पडिग्गहो उत्तम जहण्णो ॥२५॥

भेदोमिसे सब प्रथम प्रकृतिसंक्रम प्रकृत है वह एक सूत्रका व्यत्यय है । इस प्रकार प्रकृतप्रमाण  
प्रकृतिसंक्रमका कथन करत हुए उससे सम्बन्ध रखनेवाली गाथाकोष परिमाण निर्दिष्ट करनेके  
लिए भागका सूत्र करते हैं—

⊙ इस विषयमें तीन सूत्र गाथाए हैं ।

§ ३४ यहाँ प्रकृतिसंक्रमके कथनसे सम्बन्ध रखनेवाली तथा सब अर्थके सारका संक्षे-  
प स्वरित हुई तीन सूत्र गाथाए हैं यह एक सूत्रका व्यत्यय है । व ओगली है एसी भावका करके  
दृष्टान्त करत हैं—

⊙ यथा—

§ ३५ यह सूत्र सुगम है ।

संक्रमपरि उपक्रमविधि पाँच प्रकारकी है, निक्षेप चार प्रकारका है, नयविधि  
ती प्रकृत है और प्रकृतमें निर्गम आठ प्रकारका है ॥२४॥

§ ३६ यह पहली गाथा है । इसके द्वारा प्रकृतिसंक्रमका प्रथम निक्षेप नय और  
अनुगम यह चार प्रकारका अवतार कहा गया है क्योंकि इसके बिना प्रकृत विवरण सम्प-  
प्रशस्ते प्रतिपादन नहीं हो सकता है । इस प्रकार इस गाथाका समुदायार्थ कहा । किन्तु इसके  
प्रत्येक पदका अर्थ भाग पूर्वोक्तके सम्बन्धन ही करेंगे । अब इस गाथामें चर्चे गये आठ प्रकारके  
निर्गमके सम्बन्ध कथन करनेके लिए दूसरी गाथाका अवतार हुआ है—

प्रकृति संक्रम दो प्रकारका है—एक एक प्रकृतिका संक्रम अर्थात् एकैक  
प्रकृतिसंक्रम और प्रकृतिही संक्रमविधि अर्थात् प्रकृतिस्थानसंक्रम । तथा संक्रममें

३७. एत्थ पुत्रहे एवं पदसंबंधो कायन्वो । तं जहा—पयडीण संकमो दुविहो—  
एक्केवाण पयडीण संकमो पयटीण संकमविही चेदि । कुटो एवं ? संकमपदम्य पयडिसदस्स  
य आविचीण संबघावल्लवणादो । गाहापच्छहे सुगमो पदसंबंधो । उभयत्थ वि  
अवयवत्थो उवग्मिचुण्णिमुत्तमवद्धो त्ति तमपस्विय ममुदायत्थमेत्थ वत्तइग्गामो । तं  
जहा—एदीण गाहाण अट्टणं णिग्गमाण मज्झे पयटिसंकमो पयडिट्टाणसंकमो पयडि-  
पडिग्गहो पयडिट्टाणपडिग्गहो च मुत्तकंठ पस्विदा । एदेमि पटिवक्खा वि चत्तारि  
णिग्गामा म्चिदा चेव, मन्वेमि म्पटिवक्खत्तादो वट्ठिरेणेण विणा अण्णयपस्वणोवाया-  
भावादो च । मंघहि एत्थेव णिच्छयजणणट्टमुवग्मिगाहासुत्तावयागे—

पयडि-पयडिट्टाणसु संकमो असंकमो तथा दुविहो ।

दुविहो पडिग्गहविही दुविहो अपडिग्गहविही य ॥२६॥

§ ३८. एदीण गाहाण अट्टणह णिग्गमाणं णामणिदेसो कओ होड । एदिस्से

प्रतिग्रहविधि होती है और वह उच्चम प्रतिग्रह और जघन्य प्रतिग्रह ऐसे दो भेद  
रूप होती है ॥२६॥

§ ३७ यहा पूर्वार्धमें उस प्रकार पदोंका सम्बन्ध करना चाहिये । यथा—‘पयडीण संकमो  
दुविहो—एक्केवाण पयटीण संकमो पयटीण संकमविही च’ इसके अनुसार यह अर्थ हुआ कि  
प्रकृतिसंक्रम दो प्रकारका है—एकैकप्रकृतिरानुक्रम और प्रकृतिसंक्रमविधि अर्थात् प्रकृति-  
स्थानसंक्रम ।

शंका—गाथाके पूर्वार्धसे यह अर्थ किस प्रकार निकलता है ?

समाधान—संक्रम पद और प्रकृति शब्द उनकी आवृत्ति करके सम्बन्ध करनेसे उक्त  
अर्थ निकलता है ।

गाथाके उत्तरार्धमें पदोंका सम्बन्ध सुगम है । गाथाके पूर्वार्ध और उत्तरार्ध इन दोनों ही  
स्थलोंमें प्रत्येक पदका अर्थ आगे चूर्णिसूत्रके सम्बन्धसे कहा जायगा, इसलिये यहा उसका निर्देश  
न करके समुदायार्थको ही बतलाते हैं । यथा—उस गाथामें आठ निर्गमोंमेंसे प्रकृतिसंक्रम, प्रकृति  
स्थानसंक्रम, प्रकृतिप्रतिग्रह और प्रकृतिस्थानप्रतिग्रह इन चारका मुक्तकण्ठ होकर कथन किया है ।  
तथा इनके प्रतिपक्षभूत जो चार निर्गम हैं उनका भी इस द्वारा सूचन किया है, क्योंकि एक तो  
जितने भी पदार्थ होते हैं वे सब अपने प्रतिपक्षसहित होते हैं और दूसरे व्यतिरेकके बिना केवल  
अन्वयका कथन करना भी सम्भव नहीं है । अब इसी बातका निश्चय करनेके लिये आगेकी  
सूत्रगाथाका प्रवतार हुआ है—

प्रकृति और प्रकृतिस्थानमें संक्रम और असंक्रम ये दोनों प्रत्येक दो दो प्रकारके  
हैं । तथा प्रतिग्रहविधि भी दो प्रकारकी है और अप्रतिग्रहविधि भी दो प्रकार  
की है ॥२६॥

§ ३८ इस गाथा द्वारा आठ निर्गमोंका नामनिर्देश किया गया है । किन्तु इस गाथाके

अथपञ्चमसंविदे कृत्वापपादुदे पञ्चमसंविदे कृत्वापपादुदे येन वक्ष्यस्तामो, सुतसिद्धस्त पुत्रपदवभाप फलमावादी ।

ॐ एवाभो तिपिय गाहाभो पयदिसकमे ।

§ ३० एवमेवाभो तिपिय गाहाभो पयदिसकमे पदिसकमे होति पि मणिद होइ । एवमेवासि पयदिसकमपदिसकम गिरुविय पदिसकमहेणेदासि बकताण कुपमाभो सुतपञ्चमसंविदे मन्त्र—

ॐ एवासि गाहायं पदिसकमे ।

§ ३१ एवो एवासि गाहायं पदिसकमे काययो होदि, अथपञ्चमसंविदे पयारतरामावादी पि उचं होदि ।

ॐ नं अहा ।

§ ३२ सुगम ।

ॐ 'सकम-उपकमविही पंचविहो' सि एवस्त पयस्त अत्यो पचविहो— उपकमो आणुपुष्पी याम पमाप्य बसप्यवा अत्यादियारो वेदि ।

§ ३३ सकम-उपकमविही पंचविहो सि एवस्त पदिसकमगाहापुष्पदावपचपदस्त अत्यो को होइ पि आसकिय आणुपुष्पीआदिभेदेण पचविहो उपकमो एवस्त पदस्त

प्रत्येक पदच अर्थ भागो पदचोदक चक्र करते समय ही कृत्वापपादुदे क्योकि जो बात सुतसिद्ध हे तसच कृत्वापपादुदे कचन करनेमें कार्य काम नहीं है ।

ॐ ये तीन गाथाए प्रकृतिसंक्रमके विषयमें आई हैं ।

§ ३४ इस प्रकार ये तीन गाथाए प्रकृतिसंक्रमसे सम्बन्ध रखती हैं यह उक्त सुत्रच कल्पसे है । इस प्रकार ये तीन गाथाए प्रकृतिसंक्रमसे सम्बन्ध रखती हैं इसच कचन करके अथ पदचोदक इतका व्याख्यान करते हुए भागके सुत्रोक्त निर्वह करत हैं—

ॐ इन गाथाओंका पदचोद ।

§ ३५ अब इससे भागे इन गाथाओंका पदचोद करत चक्रिमे क्योकि अन्त प्रकारसे गाथाओंके प्रत्येक पदके अर्थका व्याख्यान करना सम्भव नहीं है यह उक्त सुत्रच कल्पसे है ।

ॐ यथा—

§ ३६ यह सुत्र सुगम है ।

ॐ 'सकम-उपकमविही पंचविहो' इस पदच अर्थ है कि उपक्रम पौष प्रकरका है—आणुपुष्पी, नाम, प्रमाण, बकम्यता और अर्थाधिकार ।

§ ३७ अथ गाथाके प्रारम्भमें जो 'सकम-उपकमविही पंचविहो' यह पद आया है सो इसच कथा कर्त है वेसी आरंभ करके आणुपुष्पी आदिके भेदसे उपक्रम पौष प्रकरका है यह इस

अथो होइ ति णिदिट्ठं । तत्थाणुपुञ्जी-णाम-पमाण-वत्तच्चदाणमत्थपस्वणा सुगमा ।  
अन्थाहियारो पुण अट्टविहो होट, उवरि तहापस्वणादो ।

❀ 'चउच्चिहो य णिक्खेवो' ति णाम दवणं वज्जं दव्वं खेत्तं कालो भावो च ।

९४३. एत्थेवमहिमं वंधो कायच्चो—'चउच्चिहो य णिक्खेवो' ति एदस्स वीजपदस्स अथो दव्वं खेत्तं कालो भावो चेदि चउच्चिहो णिक्खेवो पयडिगंकमविमओ । कुदो ? जम्हा णाम दवण वज्ज वज्जणीयमिदि । कुदो पुण दोण्हमेदेमि वज्जणं ? ण, तेमिमेत्थेव जहासंभवमतच्चभावदंमणादो सुगमात्तदो वा । तदो दोण्हमेदेमिमवणयणं काउण दव्व-खेत्त-काल-भावाण गहणं कयं । तत्थागमदो दव्वपयडिगंकमो सुगमो, अणुवजुत्तत्तप्पाट्टुडजाणयमस्सत्तादो । णोआगमदो दव्वपयडिगंकमो दृविहो—कम्म-णोक्कम्मभेएण । तन्थ णोक्कम्मदव्वपयडिगंकमो जहा संकतो णीलुप्पलगधो ति, णीलुप्पलगहावस्स गधस्स वामिज्जमाणदव्वंतरेसु संकतितंमणादो । कम्मदव्वपयडि-संकमो जहा मिच्छतादीणं मोहणिज्जपयडीण अण्णोणण समयविरोहेण संकमो । खेत्तादीण णिक्खेवाणमत्थो पुच्चं व वत्तच्चो ।

पदस अर्थ है ऐसा इस चूर्णिसूत्रमें निर्देश किया है । जो इनमेंसे आनुपूर्वी, नाम, प्रमाण और वक्तव्यता इनका अर्थ सुगम है । किन्तु जैसा कि आगे कहा जानेवाला है तदनुसार अर्थाधिकार आठ प्रकारका है ।

❀ 'चउच्चिहो य णिक्खेवो' पदका अर्थ है कि नाम और स्थापनाको छोड़कर द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव ये चार निक्षेप हैं ।

§ ४३. यहाँ पर इस प्रकार सम्बन्ध करना चाहिये कि प्रथम गायामे जो 'चउच्चिहो य णिक्खेवो' यह वीजपद है सो इसका अर्थ है कि प्रकृतिसाकमको विषय करनेवाले द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव ये चार निक्षेप हैं ।

शंका—ये चार ही क्यों हैं ?

समाधान—स्यों कि यहाँ पर नाम और स्थापना निक्षेपको छोड़ देना चाहिये ।

शंका—इन दोनोंको यहाँ क्यों छोड़ दिया है ?

समाधान—नहीं, क्यों कि इन दोनोंका इन्हीं चारोमें यथासम्भव अन्तर्भाव देखा जाता है या वे सुगम हैं, इस लिये इन दोनोंको छोड़कर द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव इनका ग्रहण किया है ।

इन द्रव्यादि चार निक्षेपोंमें आगमद्रव्यप्रकृतिसाकम सुगम है, क्यों कि, जो प्रकृतिसाकम-विषयक प्राभूतको जानता है किन्तु उसके उपयोगसे रहित है वह आगमद्रव्यप्रकृतिसाकम कहलाता है । नोआगमद्रव्यप्रकृतिसाकम कर्म और नोकर्मके भेदसे दो प्रकारका है । इनमेंसे नील कमलका गन्ध सक्रान्त हुआ यह नोकर्मद्रव्यप्रकृतिसाकमका उदाहरण है, क्यों कि जिम दूसरे द्रव्योंको नील कमलके गन्धसे वासित किया जाता है उनमें उस गन्धका सक्रमण देखा जाता है । आगममें वतलाई हुई विधिके अनुसार मोहनीयकी मिथ्यात्व आदि प्रकृतियोंका परस्परमें सक्रमण होना कर्मद्रव्य-प्रकृतिसाकम है । तथा क्षेत्र आदि निक्षेपोंका अर्थ पहलेके समान कहना चाहिये ।

ॐ 'अथर्वविधि पयद' इति पद्यं चतुः पद्यम् ।

§ ४४ अथर्वविधि पयदमिदं समस्तपद्यम्, एतत् पद्यं चतुः पद्यम्, तेषां विधापिक्वेष्वेत्यविमयविष्णुप्राणवृत्तयोः । तस्य भोगमो सम्पद्यदिसकमे इच्छद् । सगह्वरव्याहारा कालसकमभवति । एवमुज्जुसुदो वि । सद्भवयस्य मातृपिक्वेष्वो यदो वेव । एतत् द्रव्यद्विगणयत्तत्तदाय कम्मदम्पयदिसकमे पयद ।

ॐ 'पयदे च विगमो होइ अहुविहो' इति पयदिसकमो पयदिसकमो पयदिद्विष्णुसकमो पयदिद्विष्णुसकमो पयदिपद्मिगहो पयदिअपद्मिगहो पयदिद्विष्णुपद्मिगहो पयदिद्विष्णुअपद्मिगहो इति एतो विगमो अहुविहो ।

§ ४५ पयदे च विगमो होइ अहुविहो इति एतत् त्रिपद्ये पयदिसकमासकमादि भेदमिष्णो अहुविहो विगमो अतन्मूदो इति भणितं होइ । तस्य पयदिसकमो इति भणिते एतदपयदिसकमो गह्वेष्वो, पयदिद्विष्णुसकमस्स पुत्र परुषपादो । एव सेसाण पि सुधापुसारेण अत्यपरुषणा व्याख्या । संपदि अहुण्डमेदेसिं सत्पणित्तिरिसण्डुदेसमेतेण कस्तामो । ठ कथं ? पयदिसकमो अहा मिच्छत्तपयदीयं सम्मच-सम्मामिच्छत्तेसु । पयदिसकमो अहा तिस्से एव मिच्छत्तद्विष्णुमि सासणसम्मामिच्छत्तिम्पि सम्मामिच्छत्तद्विष्णुमि वा । पयदिद्विष्णु-

ॐ 'अथर्वविधि पयद' इति पद्यके अनुसारे यहाँ पर नयका व्याख्यान करना चाहिये ।

§ ४४ प्रथम गाथामें 'अथर्वविधि पयद' पद्यं चतुः पद्यम् इति तदनुसारे यहाँपर नयका कथन करना चाहिये क्योंकि इसके किंवा निष्कर्षका अर्थविषयक निर्णय नहीं हो सकता है । इत्थं, यत्र अत्र अत्र एतत् इति चार निष्कर्षमिसे प्रमाणतया सब प्रकृतिसंक्रमणोंके स्वीकार करता है । एतद् चार अर्थकारणतया अत्र संक्रमणके स्वीकार नहीं करता है । इसी प्रकार अनुसूत्रनय भी अत्र संक्रमणके स्वीकार नहीं करता है । तथा इत्यन्तपद्य एक व्यवहितेण ही विषय है । इति अथर्वविधि पयदके अर्थका कर्मद्रव्यप्रकृतिसंक्रमणक मध्ययत् ।

ॐ 'पयदे च विगमो होइ अहुविहो' इति पद्यके अनुसारे प्रकृतिसंक्रम, प्रकृति-मर्मक्रम, प्रकृतिस्थानसंक्रम, प्रकृतिस्थानअसंक्रम, प्रकृतिप्रतिग्रह, प्रकृतिअप्रतिग्रह, प्रकृतिस्थानप्रतिग्रह और प्रकृतिस्थानअप्रतिग्रह यह आठ प्रकारका निर्णय है ।

§ ४५ 'पयदे च विगमो होइ अहुविहो' इति त्रिपद्यमें प्रकृतिसंक्रम और प्रकृतिअसंक्रम अर्थात् मर्ममे आठ प्रकारका निर्णय अन्वयित् है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इनमिसे प्रकृति-संक्रमपरसंक्रमप्रकृतिसंक्रमके वक्ष्य करना चाहिये, क्योंकि प्रकृतिस्थानसंक्रमका अन्वयित् कथन किया है । इसी प्रकार सूत्रके अनुसारे यत्र निगमेके अर्थका भी कथन करना चाहिये ।

अथ इन आठोंके स्वभावतः निर्णय न्यायमात्रक करत हैं । यथा—मिष्णुत्वात् प्रकृतिः । सम्पत्यत्वात् और सम्पत्तिमिष्णुत्वात् संक्रमित्तं इति च प्रकृतिसंक्रमक व्याख्यानम् । तथा इति मिष्णुत्वात् । मिष्णुत्वात् सासाणसम्मामिच्छत्ति वा सम्पत्तिमिष्णुत्वात् । गुह्यस्थानकं इति इत्यं सम्पत्यत्वात्

संक्रमो जहा अट्टावीममतकम्मियमिच्छाडडिम्मि मत्तावीसाए । तदमंक्रमो जहा तत्थेव  
अट्टावीसाए । पयटिपडिग्गहो जहा मिच्छत्तं मिच्छाडडिम्मि संक्रमताणं मम्मत्त-यस्मा-  
मिच्छत्ताणं । को पडिग्गहो णाम ? संक्रमाहारे त्रतिभूतानेऽग्गिन्त प्रतिगृह्णातीति वा  
पडिग्गहमहउप्पायणाटो । तदपडिग्गहो जहा तत्थेय मम्मत्त-यस्मामिच्छत्ताणि । जहा  
वा दंमण-चरित्तमोहणीयपयडीणमण्णोण्णं पंकिरउण पडिग्गहत्ताभावो । पयडिड्डाण-  
पडिग्गहो जहा मिच्छाडडिम्मि वावीमपयडिसमुदायपयमेयं पयटिपडिग्गहट्टाणमिदि ।  
पयडिड्डाणअपडिग्गहो जहा मोलमाटीण ठाणाणमण्णदर्रो । एवमेवो अट्टविहो णिग्गमो  
परुविटो चुण्णिमुत्तयारेण पयदे च णिग्गमो होइ अट्टविहो ति वीजपदावलवणेण ।

और सम्यग्मिथ्यात्वमे संक्रमित नहीं होता यह प्रकृतिप्रतिक्रमका उदाहरण है । अट्टाईस  
प्रकृतियोंकी सत्तावाले मिथ्यादृष्टिके सत्ताईस प्रकृतियोंका संक्रमित होना यह प्रकृतिस्थानसंक्रमका  
उदाहरण है । तथा उन्नी मिथ्यादृष्टिके अट्टाईस प्रकृतियोंका संक्रमित नहीं होना यह प्रकृतिस्थान-  
असंक्रमका उदाहरण है । प्रकृतिप्रतिप्रकटा उदाहरण, जैसे—मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें सक्रमणको  
प्राप्त हुई सम्यन्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन दो प्रकृतियोंका मिथ्यात्वप्रकृति प्रकृतिप्रतिप्रह है ।

शंका—प्रतिप्रह किसे कहते हैं ?

समाधान—एकरूप आधारके मद्भागमें प्रतिप्रह शब्दकी व्युत्पत्तिके अनुसार सक्रमणो  
प्राप्त हुआ द्रव्य जिसमें प्रहण किया जाता है या जो प्रहण करता है उसे प्रतिप्रह कहते हैं ।

प्रकृतिअप्रतिप्रहका उदाहरण, जैसे—उन्नी मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें सम्यन्त्व और  
सम्यग्मिथ्यात्व ये दो प्रकृतियां प्रकृतिअप्रतिप्रह रूप हैं । अथवा दर्शनमोहनीय और चरित्र-  
मोहनीय ये परस्परमें प्रतिप्रहरूप नहीं हैं, इनलिये दर्शनमोहनीयकी कोई भी प्रकृति चरित्रमोहनीय  
की अपेक्षा प्रकृतिअप्रतिप्रह है और चरित्रमोहनीयकी कोई भी प्रकृति दर्शनमोहनीयकी अपेक्षा  
प्रकृतिअप्रतिप्रह है । प्रकृतिस्थानप्रतिप्रहका उदाहरण—जैसे, मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें वाईस  
प्रकृतियोंका समुदायरूप एक प्रतिप्रहस्थान है । प्रकृतिस्थानअप्रतिप्रहका उदाहरण, जैसे सालह  
आदि स्थानोंमें से कोई एक स्थान प्रकृतिस्थानअप्रतिप्रह है । इस प्रकार 'पयदे च णिग्गमो होइ  
अट्टविहो' उम वीजपदके आलम्बनमें चूर्णिसूत्रकारने यह आठ प्रकारका निर्गम कहा है ।

विशेषार्थ—पहले सक्रमका उपक्रम आदि चारके द्वारा कथन करते हुए अन्तमें  
चूर्णिसूत्रकारने संक्रमके चार अर्थाधिकार बतलाये रहे । उनमें प्रथम अर्थाधिकार प्रकृतिसंक्रम है,  
इसलिए सर्वे प्रथम इसका वर्णन क्रमप्राप्त है । उसीसे इसका पुन उपक्रम आदि चारके द्वारा  
निर्देश किया गया है । यह निर्देश केवल चूर्णिसूत्रकारने ही नहीं किया है किन्तु मूलग्रन्थकर्ताने  
भी किया है । इसके लिये तीन गाथाएँ आई हैं । प्रथम गाथामें उपक्रम, निक्षेप और निर्गम  
( अनुगम ) के भेद देकर नययोजना करनेकी सूचना की गई है तथा दूसरी और तीसरी गाथामें  
निर्गमके विषयमें विशेष खुलासा और निर्गमके अवान्तर भेदोंका नामनिर्देश किया गया है ।  
यहाँ यह प्रश्न हो सकता है कि ये गाथाएँ केवल प्रकृतिसंक्रमके विषयमें ही क्यों लागू होती हैं,  
सामान्य सक्रमके विषयमें क्यों नहीं । सो इसका यह खुलासा है कि इन गाथाओंमें स्पष्टतः  
प्रकृतिसंक्रमके अवान्तर भेदोंका ही एकमात्र निर्देश किया है । इससे ज्ञात होता है कि इन  
गाथाओंका सम्बन्ध केवल प्रकृतिसंक्रमसे ही है ।



§ ४६ एव पदमगाहाप पदच्छेदमुद्गणमत्यविवरणं कार्ण सपदि विदियगाहाप पदच्छेदकरणाङ्गमिदमाह—

ॐ 'एवोक्ताप संकमो दुबिहो सकमविही य पयडीए' सित पवस्स अत्यो कायव्यो ।

§ ४७ पयडि-पयडिङ्गाणसकमसु पडिबदस्सदस्स विदियगाहापुण्णदस्स अवयवत्यविवरणं कस्तामो पित षड्जासुचमेद ।

अब यहाँ कमसे पूर्णिसूत्र और टीकके अनुसार प्रकृतिसंक्रमके विषयमें इन लक्ष्यक व्याख्यान सुझाया करते हैं—उपक्रमके पाँच भेद हैं—आनुपूर्वी नाम प्रमाख, वच्छम्यता और अर्वाचिकार । आनुपूर्वीके तीन भेदोंमेंसे पूर्वानुपूर्वीके अनुसार प्रकृतिसंक्रम यह पदस्य भेद है । पश्चानुपूर्वीके अनुसार बोधा और पश्चतानुपूर्वीके अनुसार पदस्य वृत्तय वीत्तय य बोध भव है । नामके चर्च भेद है । इनमेंसे इसका गोप्यताम ह । प्रमाख प्रम्यन्धी अपञ्चा संख्यात और अर्वाचिके अपेक्षा अनन्त ह । वच्छम्यताके तीन भेद हैं । इनमेंसे इसमें स्वसमयवच्छम्यता है । अर्वाचिकार इसके अर्थ है जो निर्गमका कथन करते समय वच्छम्यते जायगे । उपक्रमके बाह वृत्तय भेद निम्ने ह । प्रकृतिसंक्रमका द्रव्य क्षेत्र अक्ष और मय इन चार निम्नेमि पठित करके वक्षया है । यद्यपि मूलकठनि कथन चार निम्नेवोकी सूचनामात्र की है । तबनुसार व चार निम्ने नाम, स्थापना द्रव्य और भाव मी हो सकत हैं । पर पूर्णिसूत्रकारने इन चार निम्नेवोका प्रकृतमें प्रत्य न करके द्रव्य, क्षेत्र अक्ष और मय इन चार निम्नेवोका ही प्रत्य किया ह । मान्य होय है कि संक्रममें नय चार स्थापनाकी कठनी उपयोगिता नहीं है ब्रिठनी द्रव्य अक्ष अक्ष और मयकी उपयोगिता है । इसीसे प्रकृतमें नाम और स्थापनाके कोश विद्या गया है । उदाहरणार्थ क्रिस्तीका प्रकृतिसंक्रम ऐसा नाम रखनेसे वा क्रिस्तीमें यह प्रकृतिसंक्रम है ऐसी स्थापना करनेसे प्रकृत प्रकृतिसंक्रमके समझनेमें विषय सहायता नहीं मिलती पर द्रव्याधिकके संक्रमसे यथायोग्य कर्म-प्रकृतियेके संक्रमणमें सहायता मिलती है इसलिये प्रकृतिसंक्रमकी निम्ने व्यवस्था करत हुए इन चार निम्नेवोकी यहाँ योजना की है । उदाहरणार्थ वसन्त ऋतुके बाह मीम्य ऋतु अन्तर बीच गर्मीका अधिक अनुभव करता ह, इससे जीवको गर्मीद्रव्य तीव्र वेदना होती ह, अतः ऐसे अवसर पर गर्मीय निमित्त वा कर असाध्यकी वद्व व बरीरया होने लगती ह तथा साता कर्मका असाध्य-रूप संक्रम मी होने लगता ह । इसी प्रकार सभी निम्नेवोके सम्बन्धमें यथावोम्य पठित कर लेना चाहिये । प्रकृतमें मयका इत्य ही प्रयोग ह कि इन निम्नेमि अथ निम्ने किस मयका विषय है । सो इसका विशेष सुख सा पूर्वमें कर आय है अतः यहाँ नहीं किया गया ह । अथ एत निर्गम सो प्रकृतमें यह अक्ष प्रकारका ह । विशेष सुझाया इनका स्वर्ष टीकाकारने ही किया ह इस लिये यहाँ इसका सुझाया नहीं किया जाता है । किन्तु यहाँ इत्य विशेष जानना चाहिये कि अन्वयत्र जिस अनुगम का है वही यहाँ निर्गम रूप द्वारा कहा गया है ।

§ ४८. इन प्रकार परन्देरङ्गाय प्रथम गाथाके अन्वय सुझाया करके अब दूसरी गाथाका परन्देर करनेके लिये यह आगम सूत्र कहत है—

'एवोक्ताप संकमो दुबिहो संकमविही य पयडीए' इस पदका अर्थ करना चाहिये ।

§ ४९. यह प्रतिपाद मूत्र है जिसके द्वारा यह प्रतिज्ञा की गई है कि अथ प्रकृतिसंक्रम और अन्वयसंक्रम इनसे सम्बन्ध रखनेवाले इन दूसरी गाथाके सूत्रके अन्वय विशेष सुझाया करेंगे ।

❁ 'एक्केक्काए' ति एगेगपयडिसंकमो, 'संकमो दुविहो' ति दुविहो संकमो ति भण्डिं होइ, 'संकमविही य' ति पयडिटाणसंकमो, 'पयडीए' ति पयडिसंकमो ति भणियं होइ ।

१ ४८. पयडीए संकमो दुविहो—एक्केक्काए पयडीए संकमो पयडीए संकमविही चेदि गाहापुच्चद्वम्मि एवंविहसंवघपदुप्पायणट्टमागयस्सेदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चं । तं जहा—संकमो दुविहो ति दुविहो संकमो ति भण्डिं होइ । एमो विद्विओ सुत्तावयत्रो पदम वक्खाणेयच्चो । तदो संकमो अत्रिसिद्धो ण होइ ति जाणावणट्टं पयडीए ति भण्डिं होइ ति एदेण चरिमसुत्तावयवेणाहिसंवघो कायच्चो । तदो पयडि-संकमो दुविहो ति टोण्ह सुत्तावयवाणमत्थमगहो । मंण्हि कथं दुविहत्तमिदि उत्ते 'एक्केक्काए' ति एगेगपयडिसंकमो 'संकमविही' य ति पयडिटाणसंकमो इदि पदम-तइजावयवाणमहिसंवघो । कथ पुण एक्केक्काए ति एत्तियमेत्तेण एगेगपयडिसंकमो विण्णादं सक्को ? ण, 'पयडीए संकमो' ति उत्तरेण मह मंघट्टेण तदुवलद्वीए । तथा 'संकमविही य' ति एत्थतणविहिमहस्स जहण्णुक्कम्म-त्त्वदिरित्तपयाग्वाचयस्सावलंघणादो पयडिटाणसंकमस्स गहण पडिवज्जेयच्च, एगेगपयडिविक्खाए तदणुवलभादो । तम्हा

\* 'एक्केक्काए' इस पदद्वारा एकैकप्रकृतिसंक्रम और 'संकमो दुविहो' इस पदद्वारा संक्रम दो प्रकारका है यह कहा गया है । तथा 'संकमविही य' इस पदद्वारा प्रकृतिस्थानसंक्रम और 'पयडीए' इस पदद्वारा प्रकृतिसंक्रम कहा गया है ।

§ ४८ गाथाके पूर्वार्धमें प्रकृतिसंक्रम दो प्रकारका है—एकैक वृत्तिसंक्रम और प्रकृति-संक्रमविधि इस प्रकारके सम्बन्धका बन्धन बरनेके लिये आये हुए इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । यथा—'संकमो दुविहो' इस पदद्वारा संक्रम दो प्रकारका है यह कहा गया है । यद्यपि यह गाथा सूत्रका दूसरा अर्थयत्त है तथापि इसका सर्व प्रथम व्याख्यान करना चाहिये । किन्तु यहाँ पर सामान्य संक्रम नहीं लिया गया है यह जतानेके लिये गाथा सूत्रके पूर्वार्धके अन्तमें आये हुए 'पयडीए' इस पदके साथ 'संकमो दुविहो' इस पदका सम्बन्ध करना चाहिये । इसलिये प्रकृति-संक्रम दो प्रकारका है यह गाथासूत्रके इन दोनों पदोंका समुच्चयार्थ होता है । अत्र यह प्रकृतिसंक्रम दो प्रकारका कैसे है ऐसा पृष्टनेपर गाथाके प्रथम पद 'एक्केक्काए' और तृतीय पद 'संकमविही य' इन दोनों पदोंका सम्बन्ध करके इन दोनों पदोंद्वारा क्रमसे एकैकप्रकृतिसंक्रम और प्रकृति-स्थानसंक्रम ये दो भेद बतलाये गये हैं ।

शंका—एक्केक्काए' इतनेमात्र पदसे एकैकप्रकृतिसंक्रमका ज्ञान कैसे किया जा सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि 'पयडीए संकमो' इस उत्तर पदके साथ सम्बन्ध कर लेनेसे उक्त अर्थ प्राप्त हो जाता है ।

तथा 'संकमविही य' इस पदमें आये हुए जघन्य, उत्तृष्ट और तद्व्यतिरिक्त प्रकारवाची विधि शब्दका अत्रलम्बन लेनेसे प्रकृतिस्थानसंक्रमका ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि एक एक

१ वी० सा० प्रती—पयडिसंकमो, दुविहो ति 'संकमो दुविहो' ति इति पाठ । २ ता० प्रती 'संकमविही य' इत्यत्र सत्राशय टीकासेन निर्देश कृत ।

पदेहि चतुर्हि वि पुम्बदपडिषदसुचाषयवेहि एगगपपडिसकमो पयडिङ्गाणसकमो वेदि वे णिम्मामा परुविदा ।

⊗ 'सकमपडिङ्गाहविहि' ति सकमे पयडिपडिगहो ।

§ ४० संकम सकमस्स वा पडिङ्गाहविही सकमपडिङ्गाहविहि ति एत्थ समासो पयदोए ति अहियारसंबंधो च कायम्भो । सेस सुगम ।

⊗ 'पडिङ्गो उच्चम जह्ययो' ति पयडिङ्गाणपडिङ्गाहो ।

§ ६० कुदो ? अहण्णुक्कस्सवियप्पाणमण्णत्वासमवादो । एवमेदीए विदियगाहाए एगगपपडिसकमो पयडिङ्गाणसकमो पयडिपडिङ्गाहो पयडिङ्गाणपडिङ्गाहो च सुचकठ परुविण । तप्पडिवक्ता वि चचारि णिम्मामा देसामासियमायेण छपिदा ति वेधम्भ । संपदि एदसि वेत्त अट्टण्णं णिम्मामाण कुडीकरणट्ट उदियगाहाए पदच्छेदो खीरद—

⊗ 'पयडि पयडिङ्गाणसु सकमो' ति पयडिसकमो पयडिङ्गाण सकमो च ।

प्रकृतिकी विरल्लमें च अथन्य चादि भेद नहीं है। सकमे । इस द्विजे गाथासूत्रके पूर्वार्धसे सम्बन्ध रखने-वाले इन चारों ही पदोंके द्वारा एकैकप्रकृतिसंक्रम और प्रकृतिस्वानसंक्रम ये वा निर्गम कहे गये हैं ।

विस्तार्य—गाथाका पूर्वार्ध इस प्रकार है—'एककेन्द्राय संक्रमो बुविहो—संक्रमविही च पयदीए । इसका निम्न प्रकारसे अन्वय करना चाहिए—पयदीए संक्रमो बुविहो—एककेन्द्राय पयदीए संक्रमो संक्रमविही च । इस अन्वयमें 'पयदीए संक्रमो' इन दो पदोंका जो बार अन्वय किया गया है । तदनुसार गाथाके इस पूर्वार्धका यह अर्थ हुआ कि प्रकृतिसंक्रम जो प्रकारका है—एकैकप्रकृतिसंक्रम और प्रकृतिस्वानसंक्रम । यहाँ 'संक्रमविही' इस पदका प्रकृतिस्वानसंक्रम रहना कहे लिया गया है, क्योंकि इस पदमें आवा हुआ 'विहि' शब्द प्रकारकाही है जिससे यह अर्थ प्राप्त हो जाता है यह अर्थ कथनका वास्तव्य है ।

⊗ 'संक्रमपडिङ्गाहविही' इस पदसे संक्रमके विपयमें प्रकृतिप्रतिग्रहका ग्रहण किया है ।

§ ४८ संक्रममें या संक्रमकी प्रतिप्रतिविधि संक्रमप्रतिग्रहविधि इस प्रकार पदोंपर समास करते 'पयदीए' इस पदका अधिकारका सम्बन्ध करना चाहिए । लेप कथन सुगम है ।

⊗ 'पडिङ्गाहो उच्चम जह्यणो' इस पदसे प्रकृतिस्वानप्रतिग्रहका ग्रहण किया है ।

§ ४९ क्योंकि अथन्य और अट्टण्ण के विकल्प अग्यत्र सम्भार नहीं हैं । इस प्रकार इस वृत्तकी गाथा द्वारा एकैकप्रकृतिसंक्रम प्रकृतिस्वानसंक्रम, प्रकृतिप्रतिग्रह और प्रकृतिस्वानप्रतिग्रह इन चार निर्गमोंका सुचकठ होकर कथन किया गया है । तथा इनके प्रकियफभूत चार अग्य निर्गम भी देहान्तर्गम्यारामे सूचि । क्रिय गये हैं यथा यहाँ मध्य करना चाहिए । आशय यह है कि यद्यपि इस वृत्तकी गाथा द्वारा चार निर्गमोंका ही सूचन किया है किन्तु यह गाथा देहान्तर्गम्य है, अर्थात् इससे इनके प्रतिपक्षभूत चार अग्य निर्गमोंका भी मध्य हो जाता है । अथ इन्हीं चारों निर्गमोंका एतदीकरण करनेके लिये तीनों गाथाका पदच्छेद करते हैं—

⊗ 'पयडि—पयडिङ्गाणसु संक्रमो' इस द्वारा प्रकृतिसंक्रम और प्रकृतिस्वानसंक्रम का ग्रहण किया है ।

मणुमपज्जत्तएमु मिच्छत्तस्स अमंक्रमो । अणुदिमादि जाव सच्चट्ठे त्ति सम्मत्तस्स अमंक्रमो । एव जाव अणाहारि त्ति ।

६५९. मच्च०-णोमच्चमंक्रमाणुगमेण दुविहो णिहेमो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मच्चाओ पयडीओ मंक्रामेमाणम्म मच्चसंक्रमो । तदृणं० णोमच्चमंक्रमो । एवं जाव० ।

६६०. उक्कस्से-अणुव्वस्समंक्रमाणुगमेण सत्तावीमपयडीओ मंक्रामेमाणस्स उक्कस्स-मंक्रमो । तदृणं अणुव्वस्समंक्रमो । एवं जाव० ।

६६१. जहण्ण-अजहण्णमंक्रमाणु० मच्चजहण्णियं पयडि मंक्रामेमाणस्स जहण्ण-संक्रमो । तदो उवग्गिमजहण्णमंक्रमो । का मच्चजहण्णिया पयडी णाम ? जा जहण्ण-मंखाविसेमिया । ततो उवग्गिमग्गाविसेमिया अजहण्णा णाम, पयडिविसयमंखाए

प्रियेपता है कि पंचेन्द्रियतिर्यंचश्रपर्याप्त और मनुष्यश्रपर्याप्त जीवोमे मिश्र्यात्वका संक्रम नहीं होता । तथा अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्व प्रकृतिका सक्रम नहीं होता । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—मिश्र्यात्वका सक्रम सम्यग्दृष्टि जीवके ही होता है किन्तु पंचेन्द्रियतिर्यंच लक्ष्यपर्याप्त और मनुष्यलक्ष्यपर्याप्त जीवोंके सम्यक्त्वकी प्राप्ति सम्भव नहीं, अतः इनके मिश्र्यात्वके सक्रमका निषेध प्रिया है । तथा सम्यक्त्वका सक्रम उसी मिश्र्यादृष्टिके सम्भव है जिसके उसकी सत्ता है । यतः अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं, अतः इनके सम्यक्त्वके सक्रमका निषेध किया है । शेष कथन सुगम है ।

६५९ सर्वसंक्रम और नोसर्वसंक्रमके अनुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे सब प्रकृतियोंका सक्रम करनेवाले जीवके सर्वसंक्रम होता है और इससे न्यून प्रकृतियोंका सक्रम करनेवाले जीवके नोसर्वसंक्रम होता है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

६६० उत्कृष्टसंक्रम और अनुत्कृष्टसंक्रमानुगमसे सत्ताईस प्रकृतियोंका सक्रम करनेवाले जीवके उत्कृष्टसंक्रम होता है और इससे न्यून प्रकृतियोंका संक्रम करनेवाले जीवके अनुत्कृष्टसंक्रम होता है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—अष्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाले मिश्र्यादृष्टिके मिश्र्यात्वके सिवा सब प्रकृतियों का सक्रम सम्भव है, इसलिये यह उत्कृष्टसंक्रम है । तथा इसके सिवा शेष सब अनुत्कृष्टसंक्रम है । पर यह ओघ प्ररूपणा है । आदेशसे जहाँ जैसी प्रकृतियाँ और उनका बन्ध सम्भव हो तदनुसार उत्कृष्ट अनुत्कृष्टका विचार करना चाहिये ।

६६१ जघन्यसंक्रम और अजघन्यसंक्रमानुगमकी अपेक्षा सबसे जघन्य प्रकृतिका सक्रम करनेवाले जीवके जघन्यसंक्रम होता है और इससे अधिक प्रकृतियोंका सक्रम करनेवाले जीवके अजघन्य संक्रम होता है ।

शंका—सबसे जघन्य प्रकृति इसका क्या तात्पर्य है ?

समाधान—जो जघन्य संख्यासे युक्त है वह जघन्य प्रकृति है और इससे अधिक संख्या

§ ८५ एव पयडिमकमस्त चउभ्विहावयारस्त परूबण गाहासुचावत्पभेण  
 क्कण पयदत्वोवसहारफरणहृमिदमाह—

⊙ एस सुत्तफासो ।

§ ८६ एसो गाहासुचाणमवयवत्पपरामरसो कजो पि मण्डि होइ । सपदि  
 परूविदाणमहुइ जिगमाण मज्जे एगेगपयडिपडिबद्धाणं ताव परूबण कस्तसामो पि  
 सुत्तमुत्तरं मणइ—

⊙ एगेगपयडिसंक्रमे पयप ।

§ ८७ एगेगपयडिमकमे अंतोमाषिदत्तदसकमतप्पडिमाहापडिग्गहे पयदमिदि  
 मणिद होइ । तत्थ अउवीसमणिपोगइराभि होति । उ अहा—समुच्चित्तणा सम्भवंकमो  
 मोसप्पसकमो उक्कम्मसकमो अणुक्कम्मसकमो जहम्मसकमो अजहण्णसंक्रमो सादिय-  
 संक्रमो अभादियसंक्रमो धुवसंक्रमो अपुप्पुवसकमो एगजीवेण सामिच कालो अंतर जाला-  
 जीवेहि मगविचओ मागामागो परिमाण खेच पोसभ कम्मो अतर सणियासो माषो  
 अप्यावहुअ वेदि । एत्थ ताव समुच्चित्तमादीणमेकारमहमणियोगइरापमप्यवण-  
 णिअचाणो सुत्तपारेण अपरूविदानंमुत्तरणाणुसारण परूबणं वत्तइसामो । उं अहा—

§ ८८ समुच्चित्तणाणुगमेण दुबिहो निरेसो—ओषण आदेसण य । ओषण  
 अतिथ सम्भपयडीअं सकमो । एत्थ चहुसु गदीसु । णवरि पच्चिदिपतिरिक्खअपत्त

§ ९४ इसप्रकार गाथासूत्रके आभारसे प्रकृतिसंक्रमके चार प्रकारके अन्तर्गत कथन करने  
 प्रकृत अर्थका अर्थसंसार करनेके लिये आगेका सूत्र कहत है—

⊙ यह सूत्रसर्व है ।

§ ९५ इसप्रकार यह गाथासूत्रके प्रत्येक पत्रके अर्थका स्पष्ट किया यह वचन कथनका  
 तात्पर्य है । अथ पूर्वोक्त इन अठ निर्गमोर्धसे एकैकप्रकृतिसंक्रमकी निर्गमका कथन करनेके लिये  
 आगेका सूत्र कहत है—

⊙ एकैकप्रकृतिसंक्रमका प्रकरण है ।

§ ९७ जिनमें एकैकप्रकृतिसंक्रम प्रकृतिप्रतिपद और प्रकृतिअप्रतिपद ये अन्तर्भूत हैं  
 ऐसे एकैकप्रकृतिसंक्रमका प्रकरण है यह वचन सूत्रका तात्पर्य है । सो इस विषयमें बोधीस अनु-  
 षोणहार हैं । यथा—अमुत्तकीर्तना सर्वसंक्रम मोसर्वसंक्रम अजहसंक्रम, अजुत्तकम्मसंक्रम अणु-  
 संक्रम अत्रपम्यसंक्रम सारिसंक्रम अतपिसंक्रम धुरसंक्रम आमुरसंक्रम एक बीवकी अर्थका  
 स्वाभाविक अर्थ और अन्तर तथा माना जीवोंकी अपेक्षा भ्रमणिक्रम भ्रमणायग परिमाण सत्र  
 म्यरक, वात अन्तर, समिक्रम, मार और अस्ववृत्त । इनमेंसे समुत्तकीर्तना आदि म्यरक अनु-  
 षाणहार अल्प अर्थनीय होनेसे सूत्रारके द्वारा यही कह गय हैं, अतः अन्तर्गतके अनुसार कथन  
 कथन कहत हैं । यथा—

§ ९८ समुत्तकीर्तनाणुगमकी अपेरा निर्देरा सो प्रकृतका है—ओष और आदेरा । ओषसे  
 पञ्चमीवकी सब प्रकृतिपौत्र संक्रम है । इगोअर चारों पतिपौत्र अन्तना आदिसे । किन्तु इतकी

१ आश्रमी सुत्तपरेव वत्तणम्— इति वाटा ।

मणुगअपज्जत्तएमु मिच्छत्तस्स अमंकमो । अणुदिग्गादि जाव सच्चट्ठे त्ति सम्मत्तस्स अमंकमो । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ५९. मच्च०-णोमच्चमंक्रमणुगमेण दुविहो णिहेमो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण सच्चाओ पयडीओ मकामेमाणस्स सच्चमंकमो । तदूण० णोसच्चमंकमो । एवं जाव० ।

§ ६०. उक्कस्स-अणुक्कस्समंक्रमणुगमेण मत्तावीमपयडीओ संकामेमाणस्स उक्कस्स-संकमो । तदूणं अणुक्कस्समंकमो । एवं जाव० ।

§ ६१. जहण्ण-अजहण्णमंक्रमणु० मच्चजहण्णियं पयडि मकामेमाणस्स जहण्ण-संकमो । तदो उवग्गिमजहण्णसंकमो । का मच्चजहण्णिया पयडी णाम ? जा जहण्ण-मंसाविसेमिया । ततो उवग्गिमग्गाविसेमिया अजहण्णा णाम, पयडिविसयसत्ताए

विशेषता है कि पचेन्द्रियतिर्यंचअपर्याप्त और मनुष्यअपर्याप्त जीवोंमें मिथ्यात्वका सक्रम नहीं होता । तथा अनुदिशसे लेकर सर्गार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्व प्रकृतिका सक्रम नहीं होता । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—मिथ्यात्वका सक्रम सम्यग्दृष्टि जीवके ही होता है किन्तु पचेन्द्रियतिर्यंच लक्ष्यपर्याप्त और मनुष्यलक्ष्यपर्याप्त जीवके सम्यक्त्वकी प्राप्ति सम्भव नहीं, अतः उनके मिथ्यात्वके सक्रमका निषेध किया है । तथा सम्यक्त्वका सक्रम उसी मिथ्यादृष्टिके सम्भव है जिसके उसकी सत्ता है । यतः अनुदिशसे लेकर सर्गार्थसिद्धि तकके देव सम्यग्दृष्टि ही हांते हैं, अतः इनके सम्यक्त्वके सक्रमका निषेध किया है । शेष कथन मुगम है ।

§ ५९ सर्वसक्रम और नोसर्वसक्रमके अनुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—आघनिर्देश और और आदेशनिर्देश । आघसे सब प्रकृतियोंका संक्रम करनेवाले जीवके सर्वसक्रम होता है और इससे न्यून प्रकृतियोंका सक्रम करनेवाले जीवके नोसर्वसक्रम होता है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

§ ६० उत्कृष्टसक्रम और अनुत्कृष्टमक्रमानुगमसे सत्ताईस प्रकृतियोंका सक्रम करनेवाले जीवके उत्कृष्टसक्रम होता है और इससे न्यून प्रकृतियोंका संक्रम करनेवाले जीवके अनुत्कृष्टसंक्रम होता है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाले मिथ्यादृष्टिके मिथ्यात्वके सिवा सब प्रकृतियों का सक्रम सम्भव है, इसलिये यह उत्कृष्टसक्रम है । तथा इसके सिवा शेष सब अनुत्कृष्टसक्रम हैं । पर यह ओघ प्ररूपणा है । आदेशसे जहाँ जैसी प्रकृतियों और उनका बन्ध सम्भव हो तदनुसार उत्कृष्ट अनुत्कृष्टका विचार करना चाहिये ।

§ ६१ जघन्यसक्रम और अजघन्यसक्रमानुगमकी अपेक्षा सबसे जघन्य प्रकृतिका संक्रम करनेवाले जीवके जघन्यसक्रम होता है और इससे अधिक प्रकृतियोंका सक्रम करनेवाले जीवके अजघन्य संक्रम होता है ।

शंका—सबसे जघन्य प्रकृति इसका क्या तात्पर्य है ?

समाधान—जो जघन्य संख्यासे युक्त है वह जघन्य प्रकृति है और इससे अधिक संख्या

अहण्णाअहण्णमावस्स एत्थ विवक्खिसुयत्तादो । एव जाव अणाहारि सि ।

§ ६२ सात्थिअणादिय-धुव-अनुधुवसकमाणु० इविहो पि०—ओपेण आदेसेण य । ओपण मिच्छस-सम्मत्त-सम्मामिच्छाण किं सादिओ सकमो किमणादिओ धुवो अनुधुवो वा ? सादि-अनुधुवो । सेत्तसकसाय-अवणोक्कसाय० किं सादिओ ष ? सादि० अणादि० धुव० अनुधुवमकमो वा । आदेसेण णेरइयसु सम्बपयणीअं सादि-अनुधुवो सकमो एव जाव ।

§ ६३ एवमेदिंतिं सुगमाणं पम्बणमकान्ण सामिचपरुवणहुमिदमाह—

⊙ एत्थ सामिच ।

श्री प्रकृतियाँ अन्नप-य क्लृप्त्यी ई क्योकि यहाँपर प्रकृतिविषयक संख्याकी अपेक्षासे अन्नप और अन्नपन्न्य माना गया है ।

इसीप्रकार अनाहारक मार्गसा ठक जानना चाहिय ।

§ ६२. सादि अनादि भुव और अनुभुव संख्यामानुगमकी अपेक्षा निर्देरा हो प्रकारका है—ओपनिर्देरा और आदेरा निर्देरा । ओपसे मिच्छात्त सम्बन्ध और सम्मग्मिच्छात्त इनअ संक्रम क्या सादि है क्या अनादि है क्या भुव है या क्या अनुभुव है ? सादि और अनुभुव है । सोअइ कपाय और नो मोकपायक संक्रम क्या सादि है, क्या अनादि है क्या भुव है या क्या अनुभुव है ? सादि अनादि भुव और अनुभुव चारों प्रकारका है । आदेरसे नतकियेमें सब प्रकृतिबोधे सादि और अनुभुव संक्रमे है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गसाठक जानना चाहिय ।

विद्वपार्य—सम्बन्ध और सम्मग्मिच्छात्तकी सत्ता प्राप्त होकर ही मिच्छात्त सम्बन्ध और सम्मग्मिच्छात्तक संक्रम सम्भव है । किन्तु एक ही प्रकृतियेकी सत्ता अनादि कालसे नहीं पाई जाती अतः इन तीन प्रकृतियेका संक्रम सादि और अनुभुव इस तरह हो प्रकारका बतलाया है । अब रही सोअइ कपाय और नो मोकपायक पचीस प्रकृतियाँ सो इधमें सादि अदि चारों विकल्प सम्भव है, क्यो कि इन पचीस प्रकृतियेका बिन प्रकृतियेमें संक्रम हो सकता है वदकी अब तक बन्धभ्युत्थिति नहीं हुई तब तक इनअ संक्रम अनादि है । बन्धभ्युत्थितिके बाद पुनः बन्ध क्षमपर इनअ संक्रम सादि है । तब अयम्योकी अपेक्षा भुव और अयम्योकी अपेक्षा अनुभुव भंग है । यह ता ओपसे विचार हुआ । आदेरसे विचार करने पर एक बीचकी अपेक्षा मरक गति सादि है अथ इस अपेक्षासे सभी प्रकृतियेके सादि और अनुभुव य दो भंग ही सम्भव हैं । इसी प्रकार सभी मार्गसाधोमें जहाँ ओप वा आदेरा वा अयवत्या पत्ति हा जाय वइ क्का भंगी चाहिय । वदहरणार्थ अन्नपुवर्तनमें ओप अयवत्या लगू होती है इसलिये वहाँ ओपके समान प्रकृणा जाननी चाहिय । अमम्ब मार्गसाधोमें सोअइ कपाय और नो मोकपायकी अपेक्षा अनादि और भुव व वा ही भंग सम्भव हैं । तथा यहाँ मिच्छात्तक संक्रम होता नहीं, क्यो कि इसकी सहायीय प्रकृतियाँ सम्बन्ध और सम्मग्मिच्छात्त इसके नहीं पाई जाती । अयके एक भुव भंगको ओपपर भंग मक बचन आपके समान बन जाता है । अब रही ओप मार्गसाधोँ सा धनमें सब बचन मरक गतिक सम्बन्ध है यह एक बचनक तात्पर्य है ।

§ ६३. इस प्रकार इन सुगम अनुयागशांतेय बचन व करके वृत्तिसूत्रकार स्वामित्थक बचन करनेके क्रिब यह अ गया मूव परत है—

⊙ अथ यहाँ स्वामित्थक अधिकार है ।

§ ६४. एदम्मि एगेगपयडिमंक्रमे सामित्तपरुवणमिद्राणिं करुणामो त्ति भणिटं होइ ।

❀ मिच्छत्तस्स संकामओ को होइ ?

§ ६५. मिच्छत्तम्म पयडियकमम्म सामिओ कदमे' होइ ? किं देवो पेग्डओ मिच्छाड्ढी मग्गाड्ढी वा ? इच्चेवमादिविसेमावेक्खमेद पुञ्जासुत्त ।

❀ णियमा सम्माड्ढी ।

§ ६६. कुदो ? अण्णत्थ तम्म संकमाभावादो । एदेण मग्गाड्ढी चेव संकामओ होटि ण अण्णो त्ति अण्णजोगवचन्हेदो कदो । सो वि मग्गाड्ढी तिविहो सड्यादि-भेदेण । तत्थ मग्गेसिं मग्गाड्ढीणमविसेसेण पयदमामित्ते पमत्ते विसेसपदुप्पायणट्टमाह—

❀ वेदगसग्गाड्ढी सच्चो ।

§ ६७. वेदयमग्गाड्ढी मच्चो मिच्छत्तस्स मकामओ होइ । णवरि मकमपायोग्ग-मिच्छत्तमतकम्मिओ त्ति पयग्गवसेणेत्याहिसवंधो कायच्चो, तदण्णत्थ पयदमामित्ता-संभवादो ।

❀ उवसामगो च पिरासाणो ।

§ ६८. उवमसग्गाड्ढी च मच्चो जाव णामाणं पटिवज्जट् ताव मिच्छत्तस्स

§ ६४ अत्र यहाँ एकैकप्रकृतिसंक्रमके विषयमें स्वामित्वका कथन करते हैं यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है ।

\* मिथ्यात्वका संक्रामक कौन होता है ?

६५ मिथ्यात्व प्रकृतिके संक्रमका स्वामी कौन जीव है ? क्या देव है या नारकी है, सम्यग्दृष्टि है या मिथ्यादृष्टि है । इस प्रकार इत्यादि रूपसे विशेषकी अपेक्षा रखनेवाला यह प्रच्छासूत्र है ।

\* नियमसे सम्यग्दृष्टि होता है ।

§ ६६. क्यों कि अन्यत्र मिथ्यात्वका संक्रम नहीं होता । यद्यपि इस सूत्र द्वारा सम्यग्दृष्टि ही संक्रामक होता है मिथ्यादृष्टि नहीं इस प्रकार अन्ययोगव्ययच्छेद कर दिया है तथापि वह सम्यग्दृष्टि भी ज्ञायिक आदिके भेदसे तीन प्रकारका है, इसलिये उन सब सम्यग्दृष्टियोंके सामान्यसे प्रकृत स्वामित्वका प्रसंग प्राप्त होने पर इस विषयकी विशेषताको बतलानेके लिये अगेका सूत्र कहते हैं—

\* वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें सब जीव मिथ्यात्वके संक्रामक होते हैं ।

§ ६७ वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें सब जीव मिथ्यात्वके संक्रामक होते हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि जिनके संक्रमके योग्य मिथ्यात्वका सत्त्व है वे ही उसके संक्रामक होते हैं इतना प्रकरण वश यहाँपर अर्थका सम्यग्ध कर लेना चाहिये, क्यों कि इसके सिवा अन्यत्र प्रकृत स्वामित्व सम्भव नहीं है ।

\* उपशामकोंमें भी जो सासादनको नहीं प्राप्त हुए हैं वे मिथ्यात्वके संक्रामक होते हैं ।

§ ६८ सभी उपशामसम्यग्दृष्टि जब तक सासादनको नहीं प्राप्त होते हैं तब तक मिथ्यात्वके

१ आ० प्रती कदवरो इति पाठ ।



सकामभो होइ । कथंमत्युवसतदसणमोहनिजम्मि मिच्छत्तस्स सकमसमवो चि  
प्पामकप्पि-अं, उवसतस्स वि दसणमोहनिज्वस्स सकमम्भुवगमादो । सासणगुणपरि  
वण्णस्स पुण उवमत्तदमणमोहणापस्स सहावदी थं व दसणतियस्स सकमो भत्ति चि  
पत्तन्व ।

⊗ सम्मत्तस्स सकामभो को होइ ?

§ ६९. सुगमं ।

⊗ शियमा मिच्छाद्दि सम्मत्तसतकम्मिभो ।

§ ७० एत्थ 'शियमा मिच्छाद्दि' चि एदेण सेसगुणद्वानुदासो कम्मो ।  
'सम्मत्तसतकम्मिभो' चि एदं वि तदसतकम्मियस्स परिसेवो दङ्कण्वो । सो  
पपठमकम्मस्स धामिभो होइ, एत्थ तद्विगोहादो । किंमेसो सम्मत्तसतकम्मिभो

संक्रमक होते हैं ।

दुःख—जिसने दर्रानमोहनीयका अग्राम कर लिया है उसके मिष्प्यात्वका संक्रम कैसे सम्भव है ?

समाधान—यही आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि कि जिसने दर्रानमोहनीयकी अग्रामना की है उसके भी मिष्प्यात्वका संक्रम स्वीकार किया है ।

किन्तु सासाधनसम्पत्तिको प्राप्त हुए अकेले यद्यपि दर्रानमोहनीयका अग्राम रहता है तो भी उसके स्वभावसे ही दर्रानमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंका संक्रम नहीं होता है ऐसा यहाँ प्रत्यक्ष करना चाहिए ।

विशुद्धार्थ—मर्ब प्रथम मिष्प्यात्वके संक्रमका स्वामी बतलाया गया है । ऐसा नियम है कि सम्पत्तिके ही मिष्प्यात्वका संक्रम होता है अन्यके नहीं इनप्रिय पूर्विसूत्रमें मिष्प्यात्वके संक्रमका स्वामी सम्पत्तिके बतलाया है । उसमें भी कायिकसम्पत्तिके तो मिष्प्यात्वका संक्रम ही नहीं पाया जाता है अतः उसे छोड़कर शेष सम्पत्तियोंके ही मिष्प्यात्वका संक्रम हुआ है । अतस्त यहाँ अक्षमसम्पत्ति व अग्रामसम्पत्ति जीव सिद्ध गये हैं । वेदसम्पत्तिकोमें ९८ वा १४ प्रकृतियोंकी सप्ताधन अक्षमसम्पत्ति ही मिष्प्यात्वका संक्रम करते हैं अन्य नहीं इतना विद्वान् जानना चाहिए । अग्रामसम्पत्तिकोमें भी सासाधनसम्पत्तिकोके सिवा शेष सब मिष्प्यात्वका संक्रम करते हैं । सासाधनसम्पत्तियोंके ही मिष्प्यात्वका अग्राम रहता है फिर भी अग्रामसे व दर्रानमोहनीयका संक्रम नहीं करत जमा निबन्ध है । शेष कथन सुगम है ।

⊙ सम्पत्त्वका सकामक कथन जाता है ।

§ ६६ परं मूत्रं सुगमं ह ।

⊙ नियमसे सम्पत्त्वकी सप्ताधना मिष्प्यात्ति जीव होता है ।

§ ७० यहाँ मूत्रमें शियमा मिच्छाद्दि परं ह सा इमं क्व इयं शेष गुणस्वामीणा निराश्रय कर दिया है । तब 'सम्मत्तसतकम्मिभो' इम परं इयं वा सम्पत्त्वकी सप्ताधन रहित है इमका तियेव जान लया चाहिए । उक्त अक्षरका जो मिष्प्यात्ति है वह अग्राम संक्रमका स्वामी होता है, क्योंकि उक्त सम्पत्त्वका संक्रम हममें काई शियम नहीं आता । यवा वह सम्पत्त्वकी

सञ्चावत्यासु संक्रामओ होइ कि वा अत्थि को वि विसेमो ति आमकिय तदत्थित्तपदु  
प्पायणट्टमुत्तरमुत्त भणइ—

❀ एवदि आवलियपविट्टसम्मत्तसंतकम्मियं वज्ज ।

६७१. उव्वेल्लणाए चरिमफालि पादिय ट्टिटो आवलियपविट्टसम्मत्तसंत-  
कम्मिओ णाम । त वज्जिय सेगसञ्चावत्यासु सम्मत्तमतकम्मिओ मिच्छाडट्टी तस्म  
संक्रामओ होइ ति एमो विसेसो मुत्तेणेदेण पस्विटो ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स संक्रामओ को होइ ?

§ ७२. सुगमं ।

❀ मिच्छाडट्टी उव्वेल्लमाणओ ।

६७३. एदस्म मुत्तस्सत्थो सम्मत्तसामिन्तमुत्तस्सेवं वत्तव्यो । ण केवलमेमो  
चेव मामिओ, किं तु अण्णो वि अत्थि ति जाणावणट्टमुत्तरमुत्त—

सत्तागाला मिथ्यादृष्टि जीव सब अत्रस्याओमें सम्यक्त्वका सक्रामक होता है या उममें कोई  
त्रिशेपता है इस प्रकारकी आशंका करके उम त्रिशेपताका ज्ञान करनेके लिये आगेका सूत्र  
कहते हैं—

\* किन्तु इतनी त्रिशेपता है कि जिसके सम्यक्त्वकी सत्ता आवलिमें प्रप्रिष्ट  
हो गई है वह सम्यक्त्वका संक्रामक नहीं होता ।

§ ७१ उद्वेलनाके द्वारा सम्यक्त्वकी अन्तिम फालिका पतन करके जो जीव स्थित है वह  
आवलिमें प्रप्रिष्ट हुआ सम्यक्त्वकी सत्तागाला जीव बहला । है । एमें जीवको छोड़कर शेष सब  
अपरयाओमें सम्यक्त्वकी सत्तागाला मिथ्यादृष्टि जीव उसका सक्रामक होता है । उन प्रकार उस  
सूत्र द्वारा यह त्रिशेपता कही गई है ।

विशेषार्थ—सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवके तो दर्शनमोहनीयकी तीनों  
प्रकृतियोंका सक्राम नहीं होता ऐसा स्वभाव है । सम्यग्दृष्टिके अन्य दो दर्शनमोहनीय प्रकृतियोंका  
तो यथा सम्भव सक्राम सम्भव है पर सम्यक्त्वका सक्राम वहाँ भी नहीं होता । अब रहा केवल  
मिथ्यात्व गुणस्थान सो इसमें २८ प्रकृतियोंकी सत्तागाले सब जीवोंके सम्यक्त्वका सक्राम होता  
रहता है, किन्तु जब इसकी आवलिप्रमाण सत्ता शेष रह जाती है तब इसका सक्राम होना बन्द  
हो जाता है ।

\* सम्यग्मिथ्यात्वका संक्रामक कौन होता है ?

§ ७२ यह सूत्र सुगम है ।

\* जो मिथ्यादृष्टि सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर रहा है वह सम्यग्मिथ्यात्वका  
संक्रामक होता है ।

§ ७३. जिस प्रकार सम्यक्त्वके स्वामित्वका कथन करनेवाले सूत्रका अर्थ कहा है उसी  
प्रकार इस सूत्रका अर्थ कहना चाहिये । केवल यही स्वामी है ऐसी बात नहीं है किन्तु अन्य जीव  
भी स्वामी है इस प्रकार इस बातके जतानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

⊙ सम्माहृती वा विरासयो ।

§ ७४ णम्स वि सुत्स अन्वो गुगमो, षटयमम्माहृती सन्वो उवमामत्रो गिरासाभो वि एदेण मि छत्तसामिचमुत्तेण सग्गिस्सवक्खाणघादो । ण्णत्तणविसस-पदुप्पायणद्वमुत्तग्गिसुत्त—

⊙ मोक्षाय पहमसमयसम्मामिच्छत्तसत्तकम्मिय ।

§ ७५ किम्हमसो परिवन्जिदो ? ण, सम्मामिच्छत्तमत्तुप्पायणत्तावदस्स सत्त मक्काम्माण वावरामादाने । ण च मत्तुप्पायणमक्कम्मिग्गियाणमत्तमण संमभो, विरोहादो ।

§ ७६ एव दसणमोहणीयपपद्दीणं सामिर्णं पदुप्पाइय चाग्गिचमोहपयद्दीणं सामिचमिदाग्गिं पस्सेमाणो तग्गिजवपणमद्वपदं ताव पस्सेइ, तन्न विणा तन्विसेस-

⊙ सासादन गुणस्थानको नहीं प्राप्त हुआ सम्पगृष्टि भी सम्पग्मिध्यात्वका संक्रामक होता है ।

§ ७७ इस सूत्रका भी अर्थ सुगम है, क्योंकि इस सूत्रका व्याख्यान मिध्यात्वके स्थामित्वा का कथन करनेके लिये 'वदवसग्गमाहृती सन्वो उवमामत्रो विरासाया इत्त सूत्ते सम्यन ह । अथ वही पर वा विसेपय ह इत्तन्न चत्तन करन्ते विसे जागेअ सूत्त वत्त है—

⊙ किन्तु जो सम्पग्मिध्यात्वकी सत्ता प्राप्त करनेका प्रथम समयमें स्थित है वह उसका संक्रामक नहीं होता ।

७८ शंका—एसे बीचका निषेध क्यों किया है ?

समाधान—नहीं, क्यों कि जो सम्पग्मिध्यात्वकी सत्ताका उत्पन्न करनेमें लगा हुआ है उसके लिये अत्रस्थमें संक्रमणियवक क्रिया नहीं होती ।

यदि कहा जाय कि उत्पन्न करनेके लिये संक्रमण के होनेमें क्रियाएँ एक साथ बन आवैगी सो भी बात नहीं है, क्यों कि एका होनेमें विरोध आता है ।

विशेषात्—मिध्यात्वके सम्पग्मिध्यात्वका मिध्यात्वमें और सम्पगृष्टिके सम्पग्मिध्यात्वका सम्पक्त्वमें संक्रमण होता है, इस विषयमें सम्पगृष्टि और मिध्यात्वके होनेके सम्पग्मिध्यात्वका संक्रमणक वत्तव्यता है । इसमें भी चायिकसम्पगृष्टियेके सम्पग्मिध्यात्वका उत्पन्न नहीं होनेसे वे इसके संक्रमणक नहीं होते । वेदकसम्पगृष्टियेमें २८, २९ और २३ प्रकृतियोंकी उत्पत्त्यासे ही इसके संक्रमणक होते हैं अन्य नहीं । उपरामसम्पगृष्टियेमें और तो सबके इसका संक्रमण होता है किन्तु तो २१ प्रकृतियोंकी उत्पत्त्याका बीच या जिसके सम्पग्मिध्यात्वका उत्पन्न संक्रमणके योग्य नहीं रहा है एसा २० प्रकृतियोंकी उत्पत्त्याका बीच उपरामसम्पक्त्वको प्राप्त करता है उसके उपरामसम्पक्त्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें इसका संक्रामक नहीं होता । मिध्यात्वके स्थितिमें भी जिसके सम्पग्मिध्यात्वका उत्पन्न अत्रस्थिके भीतर प्रविष्ट हो गया है वह इसका संक्रमणक नहीं होता । ऐय क्वन् सुगम है ।

७९. इस प्रकार दर्शनमोहनीयकी प्रकृतियोंके संक्रमणियवक स्थामित्वा का कथन करने के लिये चायिकमोहनीयकी प्रकृतियोंके संक्रमणियवक स्थामित्वा का कथन करते हुए सर्वप्रथम इस संक्रमणके

जाणणोवायाभावादो ।

❊ दंसणमोहणीयं चरित्तमोहणीए ण संकमह ।

९ ७७. कुदो ? भिण्णजादिचादो ।

❊ चरित्तमोहणीयं पि दंसणमोहणीए ण संकमह ।

९ ७८. एत्थ वि कारणमणत्तरपत्तियं । ण चेदंमि भिण्णजाईयत्तमसिद्ध, दंसण-  
चरित्तपडिवद्वयाण समानजाईयत्तविगेहादो । समानजाईए चैव सक्रमां होइ त्ति कुदो एण  
णियमां ? महावदो ।

❊ अणंताणुवंधी जत्तियाओ वज्झंति चरित्तमोहणीयपयडीओ तासु  
सव्वासु संकमह ।

९ ७९. कुदो ? समानजाईयत्तपडि भेदाभावादो । एदंण 'बंधं सक्रमदि' त्ति एमो  
वि णाओ जाणाविदो ।

❊ एवं सव्वाओ चरित्तमोहणीयपयडीओ ।

९ ८०. सव्वत्थ समानजाईयवज्झमाणपयडीसु सक्रमपउत्तीए विगेहाभावादो ।

कारणभूत अर्थवत्काल निर्देश करते हैं, क्योंकि उनके विना उभका विशेष ज्ञान होनेका आर कोई  
साधन नहीं है ।

✧ दर्शनमोहनीय चारित्रमोहनीयमें संक्रमण नहीं करता ।

९ ७७ क्योंकि उन दोनोंकी मित्र जाति है ।

✧ चारित्रमोहनीय भी दर्शनमोहनीयमें संक्रमण नहीं करता ।

९ ७८ यहाँ भी अनन्तर पूर्व कहा हुआ कारण कहना चाहिये । यदि कहा जाय कि ये  
मित्र जातिवाली प्रकृतियाँ हैं यह बात नहीं सिद्ध होती सो यह बात भी नहीं है, क्योंकि दर्शन  
और चारित्रसे सम्बन्ध रखनेवाली प्रकृतियोंको एक जातिना होनेसे त्रिवेद आता है ।

शुद्धा—समान जातिवाली प्रकृतिमें ही सक्रम हाता है यह नियम किस कारणसे है ?

समाधान—एकभाससे ही ऐसा नियम है ।

✧ अनन्तानुबन्धी, चरित्रमोहनीयकी जितनी प्रकृतियोंका बन्ध होता है उन  
सबमें संक्रमण करती हैं ।

९ ७९ क्योंकि समान जातिवाली होनेके प्रति उनमें कोई भेद नहीं है । इससे बन्धमें  
संक्रमण करती हैं उस न्यायका भी ध्यान हो जाता है ।

✧ इसी प्रकार चारित्रमोहनीयकी सब प्रकृतियोंके विषयमें जानना चाहिये ।

९ ८०, क्योंकि सर्वत्र बंधनेवाली समानजातीय प्रकृतियोंमें सक्रमभी प्रवृत्ति होनेसे कोई  
विरोध नहीं आता ।

विशेषार्थ—उक्त कथनका यह तात्पर्य है कि दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय ये एक  
जातिकी प्रकृतियाँ न होनेसे इनका परस्परमें सक्रम नहीं होता । हाँ चारित्रमोहनीयकी सब  
प्रकृतियोंका परस्परमें सक्रम सम्भव है फिर भी यह संक्रम बंधनेवाली समानजातीय प्रकृतियोंमें  
ही होता है इतना विशेष नियम है ।

§ ८१ मपहि एणमहुपमवलभिय सामितपरुवणहुमुधारसुच मण्ड—

⊙ ताओ पणुषीसं पि चरित्तमोहणीयपयडीओ अपणदरस्स सकमंति ।

§ ८२ ज्ञपेवमणतरुविदणाएण सज्जाईयनज्जमाणपयडिपडिग्गोहेणं पणुवास-  
चरित्तमोहणीयपयटीणं सकमसमवो तणेवाओ अण्णदरस्स सम्माइडिस्स मिन्हाइडिस्स  
वा संकमंति पि मणिद होइ ।

एवमोषण सामित समत ।

§ ८३ सपहि आदेसपरुवणहुमुधारणं वत्थस्तामो । त जहा—सामित्तापुगमण  
दुचिहो पिदेसो—ओषण आदेसण य । ओषण मिच्छतसकामओ को होइ ? अण्णदरो  
सम्माइडो । सम्मत्तस्स संकमो कस्स ? मिच्छाइडिस्स । मम्मामिच्छत्त-सोत्तसकं  
णवओक सकमो कस्स ? अण्णदरस्स सम्माइडिस्स वा मिच्छाइडिस्स वा । एव चदुसु  
वि गणीसु । णवरि पचिदियतिरिक्खअण्णत्त-मणुसअपण्णत्त-अमुदिसादि वाच सम्पडे  
पि सत्तावासंपयडीण सकमो कस्स ? अण्णदरस्स । एव वाव० ।

§ ८१ अथ इम अर्थपरुवण व्यापय स्वर एवमित्त्वञ्च क्वचन करुने सिद्धे आगेञ्च  
सुच वदत है—

⊙ चारित्रमोहनीयञ्चै य पणुषीसं प्रकृतिर्यो किञ्चि मी जीवक संकम करती है ।

§ ८२ यथा पदसं यद् व्याप वत्तस्य चावे है कि वैचनवाची सजातीय प्रबक प्रकृति  
प्रतिप्ररूप हानसं चारित्रमोहनीयञ्चै पणुषीसं प्रकृतिर्योञ्च प्रत्येक प्रकृतिये संकम सम्भव ह अत-  
ये सम्पगृह्णति वा मिध्याहृष्टि किसी मी जीवके संकम करती है यह वत्त वचनञ्च वास्तव है ।

विशेषार्थ—चारित्रमोहनीयञ्चै त्रिस समय त्रितनी प्रकृतियोंका सम्भ होया है इस समय  
इनमें सत्तामें स्थित चारित्रमोहनीयञ्चै सब प्रकृतियोंका संकम होता है । इस करण एक साथ  
चारित्रमोहनीयञ्चै सब प्रकृतियोंका संकम सम्भव ह यह सिद्ध होया है । किन्तु चारित्रमोहनीयञ्चै  
एव यथासम्भव मिध्याहृष्टि और सम्पगृह्णति दोनोंके सम्भव है इसलिये इन प्रकृतियोंके संकमके  
मिध्याहृष्टि और सम्पगृह्णति दोनों प्रकारके जीव स्वामी है देना यह सम्भवना चाहिये ।

इस प्रकार ओषसे एवमित्त्वञ्च क्वचन समाप्त हुआ ।

§ ८३ अथ आदेसपरुवण क्वचन करुने सिद्धे अण्णदरस्सो वत्तवत्त है । यथा—एवमित्त्वानु-  
गमञ्चै व्यापका निर्देश वा प्रकृतरञ्च ह—ओषनिर्देश और आदेसनिर्देश । व्यापसे मिध्याहृष्टञ्च  
संकमक भोज होया है ? कर्म मी सम्पगृह्णति मिध्याहृष्टञ्च संकमक होया है । सम्पगृह्णञ्च संकम  
किमक हाया है ? मिध्याहृष्टिके हाया है । सम्पगृह्णञ्च सोच्छ कृपाञ्च और नो मोक्षयायीञ्च  
संकम किसके होया है ? सम्पगृह्णति वा मिध्याहृष्टि किसीके मी होया है । इसी प्रकार चारों  
प्रतियोंमें अमना चाहिये । किन्तु पंचेन्द्रप्रतिपक्षपरयात मनुष्यपरयात और अनुचितसे  
कर सत्तावासिद्धि तत्क वेवेमें सत्तास प्रकृतिर्योञ्च संकम किसके हाया है ? किसी मी जीवके  
होया है । इसी प्रकार अन्तकारक मार्गोच्छलक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—ओष प्रकृतरञ्च निर्देश स्वयं चरित्तपरुवणने किञ्च ही ह त्रिसञ्च  
सुव्यसा इम पदस कर चाव है इसी प्रकार यहाँ पर मी ओष प्रकृतरञ्च सुव्यसा  
कर मन्व चाहिये । मार्गोच्छलमें मी त्रिन मार्गोच्छलमें मिध्याहृष्ट और सम्पगृह्ण य दोनों

❀ एय जीवेण कालो ।

§ ८४. सुगममेदमहियागमंभालणमुत्त ।

❀ मिच्छत्तस्स संकामथो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ८५. सुगममेदं पुच्छावकां ।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ८६ तं जहा—मिच्छाडड्ढी मम्मामिच्छाडड्ढो वा मम्मत्त घेत्तण मच्चजहण्ण-  
मंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो अण्णदग्गुण पडिवण्णो । लद्धो जहण्णेणतोमुहुत्तमेत्तो मिच्छत्त-  
मंकमकालो ।

❀ उक्कस्सेण छावड्डिसागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

§ ८७. तं जहा—उवसममम्मत्तपटममए मिच्छत्तमकमम्मामि कादृण सच्चुक्क-  
स्सियं तदद्वमणुपालिय पुणो वेदयमम्मत्त पडिवज्जिय छावड्डिसागरोवमाणि परिभमिय  
तत्थ अतोमुहुत्तावसेसे देणमोहणीयकपवणाए अच्चुड्डिमम मिच्छत्तमावलििय पवेमिय

अवस्थाएँ सम्भर हैं वहाँ तो ओष प्ररूपणा जानना चाहिये । उदाहरणार्थ चारों गतियोंमें उक्त दानों अवस्थाएँ ही सकती हैं अत वहाँ ओषप्ररूपणा नन जाती है । किन्तु इस मार्गणाके अग्रान्तर भेद मनुष्यगतिये लक्ष्यपर्याप्त मनुष्य और तिर्यञ्चगतिये लक्ष्यपर्याप्त पचेन्द्रिय तिर्यञ्च इन दो मार्गणाओमें एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है और मिथ्यात्व गुणस्थानमें मिथ्यात्व प्रकृतिका सक्रम नहीं होता ऐसा नियम है, अतः यहाँ २७ प्रकृतियोंका ही सक्रम वतलाया है । इसी प्रकार देवगतिये भी अनुदिशने लकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोके एक सम्यग्दृष्टि गुणस्थान ही होता है और सम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें सम्यक्त्व प्रकृतिना सक्रम नहीं होता ऐसा नियम है, अत यहाँ भी सम्यक्त्वके सिवा २७ प्रकृतियोंका सक्रम वतलाया है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जहाँ जो विशेषता सम्भर हां उसे ध्यानमें रखकर जहाँ जितनी प्रकृतियोंका सक्रम सम्भर हो उसका निर्देश करना चाहिये ।

\* अत्र एक जीवकी अपेक्षा कालका अधिकार है ।

§ ८४ अधिकारका निर्देश करनेकाला यह सूत्र सुगम है ।

\* मिथ्यात्वके संक्रामकका कितना काल है ?

§ ८५ यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

\* जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ८६ यथा—मिथ्यादृष्टि या सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वको ग्रहण करके और सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालतक सम्यक्त्वके साथ रह कर फिर अन्यतर गुणस्थानको प्राप्त हो गया । इस प्रकार मिथ्यात्वका जघन्य संक्रमकाल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो गया ।

\* उत्कृष्ट काल साधिक छथासठ सागर है ।

§ ८७ यथा—उपशमसम्यक्त्वके प्रथम समयमें मिथ्यात्वके संक्रमका प्रारम्भ करके और सबसे उत्कृष्ट कालतक उसका पालन करके फिर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । अनन्तर छथासठ सागर कालतक उसके साथ परिभ्रमण करके उसमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर दर्शनमोहनीयकी क्षणिकाके

सम्मामिच्छत-सम्मत्ताणि सुवेमाणस्स अतोमुद्दुत्तकल्ल छावद्धिजन्मतरे पयदमकमो ण  
 सम्मत्त तेणेत्य पुत्रमुवममम्मत्त पत्तूणं ह्दिदस्स अतोमुद्दुत्तकल्लमाणत्तूणं ह्दिदं सादिरेय-  
 छावद्धिमागरोवममत्तो पयदसंक्रमस्स कालो लद्धो, ऊणकालादो अहियकालस्स मत्तेज-  
 गुणपुत्रलमावो । क्वमद परिच्छिज्जे ? सम्मामिच्छत-सम्मत्तकल्लवणद्धादो उवसमसम्मत्त-  
 कालो भद्दुत्तो ति पुरदो मण्यमाणप्पाभद्दुत्तो । त जहा—'दसणमोहकस्सवयस्स सयल-  
 अभियद्धिअदानं तस्सेव अपुम्भकरणदा सखजगुणा, ततो अणताणुवविचित्तमो जयस्स  
 अभियद्धिअदा मत्तेजगुणा, तस्सेव अपुम्भकरणदा सखजगुणा, ततो दसणमोहसुव  
 सामेतयम्स अभियद्धिअदा सत्तेजगुणा, एदस्स येय अपुम्भकरणदा सखजगुणा, तेसेव  
 अपुम्भकरणपट्टमसमपम्मि क्खदगुणसद्विणिकखेवो विसमादिओ, तस्सुवरि उवसमसम्मत्तदा  
 सत्तेजगुणा' ति ।

द्विपे वषात हुभा एसा जा जीव मिप्पालकी क्वया करता हुभा इसका वक्ष्यनक्षिमें प्रवरा क्राते  
 सम्मगिमिप्पाल और सम्मत्तकी क्वया कर रहा है इससे क्वासठ सागरमें एक अन्तर्मुहूर्त कालक  
 प्रकृत सक्रम नहीं प्राप्त होता इसलिये वेदकसम्पत्तके प्राप्त होनेके पूर्वमें जो अन्तर्मुहूर्त उपराम  
 सम्पत्तका काल है उस कालपर इस वक्ष्यसम्पत्तके कालमें मिश्रण पर सायिक क्वासठ सागर  
 ममाद्य प्रकृत संक्रमण काल प्राप्त होता है, क्यों कि यहाँ पर क्वासठ सागरमेंसे त्रिजना काल  
 बढाया गया है इससे उपराम सम्पत्तका जोड़ा गया काल संख्यालगुणा है ।

शुद्धा—यह कैसे जाना जाता है ।

समाधान—सम्मगिमिप्पाल और सम्मत्तके क्वया कालसे उपरामसम्पत्तका काल  
 बहुत है यह सम्पत्तकाल भाग कहेजाते हैं इससे जाना जाय है कि यहाँ त्रिजना काल पगया  
 गया है इससे जो उपरामसम्पत्तका काल जोड़ा गया है, वह संख्यालगुणा है । एषा—'वरान-  
 मोहनीयकी क्वया करनवाली जीवक अनिहृत्तिकरखके पूरे कालसे क्लीके अपूर्वकरणका काल  
 संख्यालगुणा है । इससे अनन्तानुबन्धीकी विसंयोग्य करनवाली जीवके अनिहृत्तिकरखका काल  
 संख्यालगुणा है । इससे इसी विसंयोग्य जीवके अपूर्वकरणका काल संख्यालगुणा है । इससे वरान  
 मोहनीयकी उपराममा करनवाली जीवके अनिहृत्तिकरखका काल संख्यालगुणा है । इससे इसीके  
 अपूर्वकरणका काल संख्यालगुणा है । इससे इसीके अपूर्वकरणके प्रथम समर्भमें की गई गुणभेदिका  
 निकेर विशेष अधिक है । इससे उपरामसम्पत्तका काल संख्यालगुणा है । इससे जाना जाय है  
 कि वक्ष्यसम्पत्तके उत्कृष्ट कालमेंसे जो काल कम किया गया है इससे वेदकसम्पत्तके प्राप्त होनेके  
 पूर्व प्राप्त हुभा उपरामसम्पत्तका काल संख्यालगुणा है ।

विश्लेषार्थ—यहाँ मिप्पालके संक्रमणका अल्प और उत्कृष्ट काल कथया है । यह ता  
 पहले ही बतलाया जाय है कि मिप्पालका सक्रम स्यादष्टिके ही होता है इसलिये सम्मत्तका  
 जो सबसे अधिक काल है वह यहाँ मिप्पालके संक्रमण कालमें काल जानना चाहिये । यद्य-  
 सम्पत्तका अल्प काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है अतः मिप्पालके संक्रमण काल अल्प काल अन्तर्मुहूर्त  
 प्राप्त होता है । अतः ही उत्कृष्ट कालकी बात सो यद्यपि सामान्यसे सम्पत्तका उत्कृष्ट काल  
 सायिक बार पूर्वकालि अधिक क्वासठ सागर है । पर इसमें अल्पिकसम्पत्तके काल भी  
 सम्मिलित है अतः इसे छोड़कर केवल वक्ष्यसम्पत्तका काल कम उत्कृष्ट काल और उपरामसम्पत्त

❀ सम्मत्तरस संकामयो केचचिरं कालादो होदि ?

८८. सुगम ।

❀ जह्गणेण अंतोमुहुत्तं ।

८९. मन्वजह्गणमिच्छत्तकालावलयणादो ।

❀ उक्करसेण पत्तिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

९०. दीह्यरुत्तेल्लणकालग्गहणादो ।

❀ सम्मामिच्छत्तरस संकामयो केचचिरं कालादो होदि ?

९१. सुगमं ।

❀ जह्गणेण अंतोमुहुत्तं ।

९२. मन्वजह्गणमिच्छत्त-सम्मत्तगुणकालमण्णदग्गम्म ग्गहणादो ।

का उत्कृष्ट काल ही बड़ा पर लना चाहिये, क्योंकि चायिकसम्यग्दृष्टिके मित्यात्वका सक्रम नहीं होता। उसमें भी बड़ासम्यक्त्वके कालमेंसे मित्यात्वके आरंभमें प्रवेश करनेके कालसे लेकर सम्यग्मित्यात्व आरंभ सम्यक्त्वके क्षणवत्कालके कालका त्याग कर देना चाहिये। उस प्रकार जो भी काल वचना है वह अन्तर्मुहूर्त अधिक छयामठ सागर होता है, अतः मित्यात्वके सक्रमका उत्कृष्ट काल इतना बतलाया है।

\* सम्यक्त्वके सक्रमकका कितना काल है ?

§ ८८ यह सूत्र सुगम है।

\* जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ८९ क्योंकि यहाँ पर मित्यात्वके मन्वसे जघन्य कालका प्रबलम्बन लिया है।

\* उत्कृष्ट काल पत्त्यके अग्रस्यातवें भागप्रमाण है।

§ ९० क्योंकि यहाँ पर सम्यक्त्वकी उद्वेलनाके सबसे बड़ कालका ग्रहण किया है।

विशेषार्थ—सम्यक्त्व प्रकृतिना संक्रामक मित्यादृष्टि जीव होता है, अतः मिथ्यात्व गुणस्थानका जो जघन्य काल है वह सम्यक्त्वके सक्रमका जघन्य काल बतलाया है। पर उत्कृष्ट कालमें कुछ विशेषता है। वान यह है कि मित्यात्व गुणस्थानमें चिरकाल तक सम्यक्त्वकी सत्ता नहीं पाई जाती। किन्तु सम्यक्त्व प्रकृति उद्वेलना प्रकृति होनेसे उत्कृष्ट उद्वेलनाका जितना काल है उतना सम्यक्त्व प्रकृतिके सक्रमका उत्कृष्ट काल प्राप्त होता है। यतः सम्यक्त्वका उत्कृष्ट उद्वेलना काल पत्त्यके अग्रस्यातवें भागप्रमाण है अतः सम्यक्त्वका उत्कृष्ट सक्रमकाल भी उतना ही बतलाया है। किन्तु उद्वेलनाके अन्तमें जो सम्यक्त्व प्रकृति आरंभमें प्रविष्ट हो जाती है तब उसका सक्रम नहीं होता इतना विशेष जानना चाहिये। इससे सम्यक्त्वके उत्कृष्ट उद्वेलनाकालमेंसे इतना काल कम कर देना चाहिए।

\* सम्यग्मित्यात्वके सक्रामकका कितना काल है ?

§ ९१ यह सूत्र सुगम है।

\* जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ९२ क्योंकि यहाँपर मिथ्यात्व या सम्यक्त्व गुणस्थानके सबसे जघन्य कालमेंसे किसी एकका ग्रहण किया है



⊙ उक्तस्तेषु वेद्यावद्विसागरोयमाषि साविरेयाषि ।

१०३ त जहा—अणादियमिच्छाद्द्वी पद्मसम्मत्तमुत्पाद्य विदियसमए पयद  
मकमम्मादिं कद्दण तम्ह टाहमंतोमुद्दुत्तकालमिच्छिय मिच्छत्त गत्तण पल्लिदोवमामखे अ-  
भागमत्तमुत्प्रेमाणा अग्गिफालिमेत्तसम्मामिच्छत्तद्विदियत्तक्रमे सुसे सम्मत्त पडिवात्तिय  
पद्मछावद्वि ममिय तत्पत्तोमुद्दुत्तवत्तसस मिच्छत्तं पडिबण्णो पुम्भविहाणेण उत्प्रेमाणाणो  
पल्लिदो अयम्ह मागमत्तकालण सम्मत्तमुद्दणमिय विदियसावद्विमंतोमुद्दुत्तणियमपु-  
पालिय परिणामपयण मिच्छत्त गदो तीहुत्प्रेमाणाकालेगुम्भद्विज्जमाण सम्मामिच्छत्त-  
मात्तियं पयमिय अयम्हमत्तो जाओ । लहो तीहि पल्लिदोवमामखे अदिभागहि साविरेओ  
वत्तवद्विभागगेवमत्तलो मम्मामि उत्तमकामयस्म ।

⊙ सेसार्यं पि पणुवीसपयडीषं संकामयस्स तिणिए अगा ।

१०४ एव समगाइणंगव मिद्धे पणुयीमपयडोणमिदि जिहेसो जिरत्यओ पि  
णामकणि अ उदयणयात्तवदिमिम्मत्तणापुग्गाइहुमण्णय अत्तिरेगहि परुवणाण दोमा-

⊙ उत्तुट काल साधिक दा छयागठ सागर ह ।

१०५ यथा—इत्थी एक अनदि मिप्पाट्टि कीरन म्पमात्तम सम्भस्सका इयत्त करं  
दुम्हरे समयमे प्रत्त म्कमत्ता प्रारम्भ किया । अिद वहा सत्तोत्तुट अम्हमु हुत्त कालक रह कर  
मिप्पाट्टमे गया । अिद व । परुवत्त अत्तप्यात्तवै मागप्रमात्त अत्तगत्त सम्भमिम्भ्यत्तवत्तवै वद्वेत्तता  
थी । अिन्तु एता करत्त हुत्त सम्भमिम्भ्यात्तवत्त सिधित्तस्सम्भे अम्हितम अत्तिप्रमात्त छाप एत्त पर  
सम्भत्तवत्ता प्राप्त करत्त प्रथम छयागठ सागर अत्त तत्त वत्तके मात्त परिभ्रमत्त किया । अिन्तु इसमें  
अम्हमु हुत्त कालक मत्त एत्त पर मिप्पाट्टरको प्राप्त हुत्ता । आर पूर्ववित्तिये पत्तके अत्तवत्तवै  
भागप्रमात्त अत्तके हात्त सम्भमिम्भ्यात्तवत्त वद्वेत्तता करत्त सम्भत्तवत्तवै प्राप्त किया । अिद अम्ह-  
मु हुत्त काल काल काल सागर वत्तगत्त सम्भत्तवत्तवत्त पत्तन करत्ते परिणामवत्ता मिप्पाट्टवत्त गया ।  
अिद सत्तोत्तुट वद्वेत्तता अत्तके हात्त उद सत्त करत्ता हुत्ता सम्भमिम्भ्यात्तवत्त उदयात्तमित्तं प्रवेत्ता  
अत्तके अत्तवत्तवत्त हा गया । इत्त पत्ता सम्भमिम्भ्यात्तवत्त संभमकत्तवत्त उत्तुट अत्त पत्तके तील  
अत्तवत्तवत्तवै मागोव अत्तिका दा इयामत्त सागरप्रमात्त प्राप्त हुत्ता ह ।

विनेयार्थ—पम्भमिम्भ्यात्तवत्त मत्तम सम्भत्तवत्त आर मिप्पाट्ट इत्त वानो गुणस्त्वानोत्तं  
दात्त ह इयत्तिय अत्तवत्त प्राप्त करत्तवत्त विष इत्त वानो गुणस्त्वानोत्तं अिद्वी एकत्त अत्तवत्त  
नियत्त गया है । एता उत्तुट काल इत्त वान गुणस्त्वानोत्तं अत्तवत्त अत्तिय किया गया ह । काल  
पान पर रत्ता गया है कि सम्भमिम्भ्यात्तवत्त निम्भर मत्तम वत्ता रह । इत्त दिसा स कालकी  
गतता करत्त पर इत्त अत्त प्राप्त हा अत्ता ह अिद्वि अत्तवत्त निम्भर निम्भरा तीरामे किया ही ह ।

\* इत्त पत्ताम प्रवृत्तियेकि मत्तामत्त वीत्तवत्त कालवत्त अपत्ता तान मग हीन है ।

१०५ शब्द—यदी मत्तम 'मत्त परत्त परत्त वत्तवत्त ही पत्ता ह । इत्त वत्त वत्तवत्त  
वत्तवत्त परत्तवत्त वत्तवत्तवत्त वत्तवत्त हा अत्ता है इत्तवत्त 'पत्तवत्तवत्तवत्त' इत्त वत्तवत्त निम्भरा  
करत्ता निम्भर ह ।

ममाधान—ममी अत्तवत्त मदी करत्ती अत्तिय वत्तवत्त वानो मत्तवत्त अत्तवत्तवत्त

भावादे । तस्मा उत्तसेनाणं चरित्तमोहणीयपयटीण पणुवीमण्हं पि संकामयग्ग तिण्णि भग्गा कायत्ता । न जहा—अणादिओ अपज्जवग्गिदो अणादिओ सपज्जवग्गिदो सादिओ सपज्जवग्गिदो चेदि । आदिल्लदुगं सुगम, तत्थ जहण्णवृत्तमवियपाणमग्गभावादे । इयत्थ जहण्णवृत्तमकालणिहेमदुत्तमुत्तावयागे—

ॐ तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवग्गिदो जहण्णेण अंतोमुहत्तं । उक्खस्सेण उवट्टुपोग्गलपरियट्टं ।

॥ ९६. ॥ तत्थ 'जहण्णेणतोमुहत्त' इदि उत्ते अणंताणुवग्गो विमजोएदुणं मंजुत्तस्स पुणो वि मच्चजहण्णेण कालेण विमजोयणाए वावदम्म जहण्णमकमकालो घेत्तव्वो । सेनाणं पि मच्चोवग्गामणाए सेटीदो पटिवदिदम्म अंतोमुहत्तेण पुणो वि मच्चोवग्गामणाए वावदम्म जहण्णकालो वत्तव्वो । 'उवग्ग्येण उवट्टुपोग्गलपरियट्ट' इदि उत्ते पोग्गलपरियट्टकालम्मदं देमण घेत्तव्व, अट्टुपोग्गलपरियट्टम्म समीव उवट्टुपोग्गलपरियट्टमिदि गहणादो । तन्धाणनाणुवग्गीणमुक्खम्मसकमकाले मण्णमाणे अट्टुपोग्गलपरियट्टादिमग्ग पटमम्मत्तमुप्पाटय उवग्गमग्गम्मत्तकालव्वमत्तरे अणंताणुवग्गि विमजोइय पुणो तिस्से उवग्गमग्गम्मत्तद्राए च आवलियाओ अत्थि नि आग्गण पटिवण्णस्स आवलि करनेकाले शिष्य जनोका उवकार करनेके लिये अन्यत्र और व्यतिरेक रूपसे प्ररूपणा करनेमें कोई दोष नहीं आता । इसलिये पूर्वोक्त प्रकृतियोंमें जो चारित्रमाहर्तावकी पन्चीम प्रकृतियों शेष बची हैं उनके सक्रमकाल बालकी अपेक्षामें तीन भंग करने चाहिये । यथा—अनादि अन्त, अनादि-मान्त और सादि-मान्त । इनमेंमें प्रारम्भके दो भग सुगम हैं, क्योंकि उनमें जघन्य और उत्कृष्ट य भेद सम्भव नहीं है । अब जो शेष बचा तीसरा भग ह तो उसके जघन्य प्राग उत्कृष्ट कालका निर्देश करनेके लिये आगेके सूत्रका अन्तार हुआ है—

\* उनमें जो सादि-मान्त भग है उमका जघन्य काल अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

॥ ९५. ॥ सूत्रमें 'तत्थ जहण्णेणतोमुहत्त' ऐसा करने पर इससे अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना करके मयुक्त हुए जीवके फिर भी सूत्रमें जघन्य कालद्वारा विसंयोजना करने पर जो अनन्तानुबन्धियोंका जघन्य संक्रमकाल प्राप्त होता है वह लेना चाहिये । इसी प्रकार सर्वोपशामनाके बाद श्रेणिये न्युत होकर अन्तर्मुहर्तमें फिर भी सर्वोपशामनामें लगे हुए जीवके शेष प्रकृतियोंका भी जघन्य सक्रमकाल कहना चाहिये । तथा सूत्रमें 'उक्खस्सेण उट्टुपोग्गलपरियट्ट' ऐसा कहने पर उससे पुद्गलपरिवर्तनका कुछ कम आधा काल लेना चाहिये, क्योंकि अर्धपुद्गलपरिवर्तनके समीपका काल उपार्धपुद्गलपरिवर्तन काल कहलाता है ऐसा यहाँ ग्रहण किया गया है । उसमें सर्व प्रथम अनन्तानुबन्धियोंके उत्कृष्ट सक्रमकालका कथन करते हैं—जब ससारमें रहनेके लिये अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल शेष बचे तब उसके प्रथम समरमें प्रथमोपशम सम्यक्त्वको उत्पन्न कराके उपशमसम्यक्त्वके कालके भीतर अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना करावे । फिर उसी उपशमसम्यक्त्वके कालमें जब छह आवलिकाल शेष बचे तब उसे सासादनमें ले जावे और एक

यादिकंलम्सु आनी कायम्वा । सेम सुगम । एव समाण पि पयठीणं वतम्भ । गवरी  
मन्त्रोत्रमामणाए पडिवात्पडमसुमाण मकमन्सादिं फरदूण न्यूणमद्वपोग्गलपरियह  
साहेयम्भं ।

एवमाधण कालो गओ ।

‡ ०६ मपदि आदमपन्वणहुमुधारण वत्तस्सामो । त उवा—अयजावेण  
कासापुगमण दुचिदो गिरेसो—ओषण आदसण य । वत्त ओषण मिच्छत्तमकमओ  
केवपिर० ? उव अतोमुहुत्तं, उव छावट्टिमागरो सादिरयाणि । अमकमओ उव०  
अतोमुहुत्तं, उव अद्वपोग्गलपरियह दूषण । सम्मत मकमओ उव० अतोमुहुत्तं  
उव० पसिदा अमत्ते० मागो । असकामप उव अतोमु०, उव क्खवाट्टिमागरो  
सादिरियाणि । सम्माणि सकाम० उव० अतोमु०, उव वेत्तावट्टिमागरो० मादिरियाणि ।

आश्लिष्यन्ते वाक् संकमरा प्रारम्भ करव । इसके आगेअ संय कवन सुगम ह । इसी प्रकार  
सोप प्रकृतियोंकी भी उत्कृष्ट संकमराए कहना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वोपरप्रमतासे  
व्युत्पन्न होने के प्रथम समयमें संकमराए प्रारम्भ करके वसव उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्धपुद्गाए  
परिवर्तनाप्रमाए प्राप्त होना चाहिये ।

विश्वपार्ष—इष्टमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंमेंसे सम्बन्ध और सम्बन्धिमध्यत्वए सत्य  
कामादि सिद्धादष्टि शीघ्र नही पाय जाता इसलिये इन तीन प्रकृतियोंके संकमराके अपेक्षा  
अनादि अमन्त और अनादि-साम्भ य वा विकल्प बनत ही नहीं । यहाँ कवल सादि-साम्भ यहा एक  
विकल्प सम्भ्र ह । किन्तु आश्लिष्यन्तेवाकी पक्षीस प्रकृतियोंका अनादि कालसे भय्य और  
अमन्त दोनोंके सत्य पाया जाता ह । इसलिये इनकी अपेक्षा संकमराके अनादि-अमन्त अनादि  
साम्भ और सादि-साम्भ य तर्जों विकल्प बन जात हैं । अनादि अमन्त विकल्प तो अमन्तोंके ही  
होता ह क्योंकि अमन्तोंके अनादि कालसे इन पक्षीस प्रकृतियोंका संकम होता था यहा ह और  
अमन्त कालक हाथ रहेगा । किन्तु सेर वा विकल्प मन्तोंके ही होते हैं । उनमेंसे अनादि-साम्भ  
विकल्प बन मन्तोंके होता ह किन्तुने एकवार अमन्तातुपक्षीकी विसंयोगना और आश्लिष्यन्तेवा  
की संय प्रकृतियोंकी वसवप्रमता की है । अब रहा तीसरा विकल्प सो वसव लुब्धना टीकामें ही  
किया है । सुगम होनेसे वसव निर्देश पुनः यहाँ नहीं किया गया ह ।

इत प्रकार आपसे कावक कवन समाप्त हुआ ।

‡ ६१. अब आदेशक कवन करनेके लिये कण्ठारणाके वसवते हैं । पक्ष—एक शीघ्रकी  
अपेक्षा कण्ठारणासे निर्देश वा प्रकारका है—ओष निर्देश और अदेश निर्देश । उनमेंसे  
ओषकी अपेक्षा सिद्धात्त्वके संकमराकण किता काल है ? अथय कण्ठ अन्तमुहुत्त है और अद्व  
कण्ठ सायिक क्खवात्त सागर है । सिद्धात्त्वके असंकमराकण अथय कण्ठ अन्तमुहुत्त है और अद्व  
कण्ठ हूव कम अर्धपुद्गाएपरिवर्तनाप्रमाए ह । सम्बन्धके संकमराकण अथय कण्ठ अन्तमुहुत्त  
है और अद्व कण्ठ कण्ठ पन्थके असंकमराके मागप्रमाए है ? अन्तकाकण्ठ कवन कण्ठ अन्तमुहुत्त  
है और अद्व कण्ठ कण्ठ सायिक वो क्खवात्त सागरप्रमाए है । सम्बन्धिमध्यत्वके संकमराकण अथय  
कण्ठ अन्तमुहुत्त है और अद्व कण्ठ कण्ठ सायिक वो क्खवात्त सागरप्रमाए ह । असंकमराकण

अमंका० जह० एगममओ, उक्० अतोमु० । मोलसक०-णवणोक० संकाम०  
अणादिओ अपज्ज० अणादिओ मपज्ज० मादिओ मपज्ज० । जो मो सादिओ  
मपज्जमिदो तस्म इमो णिद्वेगो—जह० अतोमु०, उक्० उवट्टपोगलपरिग्यट्ट । अणंताणु०-  
अमंकाओ जह० ममगुणावलिया, विमज्जीयणाचमिफालीण तदुवलभादो । उक्०  
आवलिया मंपुण्णा, मंजुत्तपहमावलियाण तदुवलद्वीदो । सेग्गणममकामय० जह०  
एगममओ, उक्० अंतोमु०, उक्० ममसेटीण तदुवलंभादो ।

जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । सोलह कपाय और ना नोत्रपायोंके  
सकामकके कालकी अपेक्षा अनादि-अनन्त, अनादि-मान्त और सादि-मान्त ये तीन भग होते  
हैं । उनमें जो सादि-मान्त विकल्प है उसका यह निर्देश है । उसकी अपेक्षा जघन्य काल  
अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । अनन्तानुबन्धियोंके असकामकका  
जघन्य काल एक समय कम एक आवलिप्रमाण है, क्योंकि विमंथोजनाकी अन्तिम फालिके  
आश्रयमें यह काल उपलब्ध होता है । उत्कृष्ट काल पूरी एक आवलिप्रमाण है, क्योंकि अनन्तानु-  
बन्धियोंमें मनुक होनेपर प्रथम आवलिके समय यह काल उपलब्ध होता है । जो प्रकृतियोंके  
असकामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि ये दोनों काल  
उपशमश्रेणिमें पाये जाते हैं ।

विशेषार्थ—अपसे मत्र प्रकृतियोंके सकामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल कितना है  
इसका खुलासा पूर्वमें चृष्टिसूत्रोंके व्याख्यानके समय कर अये हैं उसी प्रकार यहाँ भी जान लेना  
चाहिये । यहाँ इन सब प्रकृतियोंके असकामकके जघन्य और उत्कृष्ट कालका खुलासा करते हैं—  
मिव्यात्वका मिव्यादृष्टि गुणस्थानमें सक्रम नहीं होता, अत इम गुणस्थानका जो जघन्य  
अन्तर्मुहूर्त काल है वही मिव्यात्वके असकामकका जघन्य काल प्राप्त होता है । यही कारण है कि  
यहाँ मिव्यात्वके असकामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है । तथा सादि-मान्त विकल्पकी  
अपेक्षा मिव्यादृष्टि गुणस्थानका जो उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है वही  
यहाँ मिव्यात्वके असकामकका उत्कृष्ट काल प्राप्त होता है । उसीमें मिव्यात्वके असकामकका  
उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण बतलाया है । सम्यक्त्वका सक्रम सम्यग्दृष्टिके  
नहीं होता, इसलिये सम्यग्दृष्टि गुणस्थानका जो जघन्य काल है वह सम्यक्त्वके असकामकका  
जघन्य काल प्राप्त होता है । उसीसे सम्यक्त्वके असकामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त-  
प्रमाण बतलाया है । तथा उद्वेगनाके अन्तमें प्राप्त हुआ एक समय कम एक आवलि-  
प्रमाण काल, उपशम सम्यक्त्वका अन्तर्मुहूर्त काल, वेदक सम्यक्त्वका कुछ कम छ्वासठ  
सागर काल, सम्यग्मिव्यात्व गुणस्थानका अन्तर्मुहूर्त काल और वेदकसम्यक्त्वका पूरा  
छ्वासठ सागर काल इन कालोंका जोड़ साधिक दो छ्वासठ सागर होता है इसीसे  
सम्यक्त्वके असकामकका उत्कृष्ट काल साधिक दो छ्वासठ सागर बतलाया है । यहाँ  
इतना विशेष जानना चाहिये कि जिस क्रमसे उक्त कालोंका निर्देश किया है उसी  
क्रमसे उन्ह प्राप्त कराना चाहिये । यहाँ सम्यक्त्वकी सत्ता तो है पर सक्रम नहीं होता ।  
सम्यग्मिव्यात्वका सक्रम सासादन और सम्यग्मिव्यात्व गुणस्थानमें नहीं होता । सासादनका  
जघन्य काल एक समय और सम्यग्मिव्यात्व गुणस्थानका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । इसीसे  
यहाँ सम्यग्मिव्यात्वके असकामकका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त  
बतलाया है । अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजनाके अन्तमें एक समयकम एक आवलिप्रमाण अन्तिम

१७ आत्सेण गेरुएणु मिञ्जुत्तं सक्कामं जहं अंतोमुं, उक्कं तत्तीम  
 मागरों दसूणाणि । सम्मं जहं एगसमओ, उक्कं पत्तिदों अमत्तेभागो ।  
 मम्मामिं अणत्ताणुं मक्कामं जहं एगसमओ, उक्कं तत्तीस सागरोवमाणि । पारस-  
 क्कमायं—णवणोक्कमायं सुक्कामं केवं ? जहं दसवम्मसहस्राणि, उक्कं तत्तीस  
 मागरोवमाणि । पत्तादि जाव सत्तमि ति मिच्छं मक्कामं जहं अंतोमुं उक्कं  
 मगद्धिं दसूणा । मम्म गिरओपभगो । सम्मामिं जहं एगसमओ, उक्कं सगद्धिदी ।  
 एवमणत्ताणुं चउटम्म । णवरि मत्तमाए जहं अंतोमुहुत्त । पारसक्कं—णवणोक्कं जहं  
 जहण्णद्धिदी उक्कं उट्ठस्मद्धिदी ।

अश्लिष्टे होय रहनवर इसका संकम मही हाता इसलिये अनन्तानुबन्धियोंके असंक्रमकका अपत्य  
 काय एक समयकम एक आपत्तिप्रमाण बतलाया है । तथा विंशत्यज्ञानके बाद अनन्तानुबन्धियों  
 की पुनः सत्ता प्राप्त रहनवर एक आश्चर्य कथन तक हमका संकम मही हाता इसलिये इनके  
 असंक्रामकका उत्कृष्ट बाह्य एक आपत्तिप्रमाण बतलाया है । अग्रामप्रथिमें बाह्य काय और  
 भी नाशपाय नमेम विरक्ति प्रकृतिकर उपराम जानेके द्वितीय समयमें यदि मरकर यह भी  
 वेवगतिमें बसा जाय है तो इनके असंक्रामकका एक समय काय प्राप्त हाय है । इसीसे वही इनके  
 असंक्रामकका अपत्य बाह्य एक समय बहा है । तथा इन प्रकृतिधर्म उपराम काय अन्तमु हुत है ।  
 इसीसे वही इनके असंक्रामकका उत्कृष्ट बाह्य अन्तमु हुत बतलाया है ।

१८ आरेराओ अपका नारिकेमें मिष्यात्वके संक्रामकका अपत्य बह्य अन्तमु हुत  
 है और उत्कृष्ट बाह्य काय एक तर्तिस सागर है । मध्यकरके संक्रामकका अपत्य काय एक समय  
 है और उत्कृष्ट बाह्य पत्यके अपत्यगतके भागप्रमाण है । सम्ममिष्यात्व और अनन्तानुबन्धीके  
 संक्रामकका अपत्य काय एक समय है और उत्कृष्ट बाह्य तेतीस सागर है । बाह्य काय और  
 भी नाशपायके संक्रामकका विना काय है । अपत्य काय हम हजार बप है आर उत्कृष्ट काय  
 तप्तम सागर है । परकी पृथिवीमें मरकर सातवीं पृथिवी तक प्रत्येक मरकेमें मिष्यात्वके संक्रामकका  
 अपत्य काय अन्तमु हुत है और उत्कृष्ट बाह्य काय एक अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है ।  
 मध्यकरका मंग नामान्य नारिकेमें समान है । मध्यमिष्यात्वके संक्रामकका अपत्य काय एक  
 समय है और उत्कृष्ट बाह्य अरनी अरनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । इसी प्रकार अतन्तानुबन्धी  
 अनुबन्ध संक्रामकका अपत्य और उत्कृष्ट बाह्य जानना चाहिये । किन्तु इसकी विवेचना है कि  
 सातवीं पृथिवीमें अपत्य काय अन्तमु हुत है । बाह्य काय और भी नाशपायके संक्रामकका  
 अतन्त काय अरनी अरनी अपत्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट बाह्य अपनी अपनी उत्कृष्ट  
 स्थितिप्रमाण है ।

विशारथ्य—वही मरक गति और उगडे चयत्तर भरोमें मिष्यात्व आदि प्रकृतियोंके  
 संक्रामकका विना विना काय है यह बतलाया है । मरक गतिमें उगडेशीनका अपत्य काय  
 अन्तमु हुत है और उत्कृष्ट बाह्य काय एक तर्तिस सागर है इसीसे वही मिष्यात्वके संक्रामकका  
 अपत्य काय अन्तमु हुत और उत्कृष्ट बाह्य काय एक तर्तिस सागर पटित है जाय है । इसी प्रकार  
 अतन्त पृथिवीमें अपत्य काय अन्तमु हुत और उत्कृष्ट बाह्य काय एक अरनी अरनी उत्कृष्ट स्थिति-  
 प्रमाण पटित कर जना चाहिये । वही यह प्रत्यक्ष है मरका है कि वही पृथिवीमें ता मध्यमिष्य  
 की भी मरकर उत्कृष्ट बाह्य है और वही अतन्त उगडे मरक बहा रहता है, अतन्त वही काय एक

२८. तिग्मिष्वेमु मिच्छ० संक्राम० जह० अंतोमु०, उक्० तिष्णि पलिदोवमाणि  
 देष्णाणि । सम्म० पारयभगो । सम्मामि० जह० एगममओ, उक्० तिष्णि पलिदो-  
 वमाणि पलिदोवमामंसेज्जदिभागेण माटिरेयाणि । अणताणु० चउक्कस्म जह० एग-  
 ममओ, उक्० अणतकालमंसेज्जा पोगलपरियट्ठा । वारसक०-णवणोक० जह०

नियम कैसे लागू होगा, सो उसका यह समाधान है कि यद्यपि पहली पृथिवीमें सम्यग्दृष्टि जीव मरकर उत्पन्न होता है यह बात सही है पर ऐसा जीव या तो वृत्तव्यवेदकसम्यग्दृष्टि होता है या चाक्षिकसम्यग्दृष्टि, उस लिये जब ऐसे जीवके वह मिथ्यात्वका सत्त्व ही नहीं पाया जाता तब उसके मिथ्यात्वके सक्रमकी बात ही करना व्यर्थ है । सम्यक्त्व प्रकृतिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय उद्वेलनाकी अपेक्षासे घटलाया है । अर्थान् जिसके सम्यक्त्व प्रकृतिकी उद्वेलनामें एक समय वादी है ऐसा जीव मरकर यदि नरकमें उत्पन्न होता है तो उसके नरकमें सम्यक्त्वके संक्रामकका जघन्य काल एक समय पाया जाता है । तथा नरकमें सम्यक्त्वके सक्रामकका उत्कृष्ट काल जो पल्यके अमत्यातेय भागप्रमाण घटलाया है सो यह उद्वेलनाके उत्कृष्ट कालकी अपेक्षासे घटलाया है । उसी प्रकार प्रत्येक पृथिवीमें सम्यक्त्वके संक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल घटित कर लेना चाहिए, क्योंकि पूर्वोक्त कथनसे हममें कोई विशेषता नहीं है । सामान्यसे नरकमें या प्रत्येक पृथिवीमें सम्यग्मिथ्यात्वके सक्रामकका जघन्य काल एक समय भी सम्यक्त्व प्रकृतिके समान घटित होता है । हा उत्कृष्ट कालमें कुछ विशेषता है । बात यह है कि सम्यग्मिथ्यात्वका सक्रम सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि दोनोंके होता है उमजिये नरकमें सम्यग्मिथ्यात्वके सक्रम का उत्कृष्ट काल तृतीय सागर जन जाता है । अनन्तानुबन्धीके संक्रामकका भी उत्कृष्ट काल तृतीय सागर इसी प्रकारसे घटित किया जा सकता है, क्योंकि उसका सक्रम भी सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि दोनोंके होता रहता है पर ऐसे जीवके सम्यक्त्व दशामे अनन्तानुबन्धीकी विसयोजना नहीं करानी चाहिये । अथवा केवल मिथ्यादृष्टि गुणस्थानकी अपेक्षासे घटित करनेमें भी आपत्ति नहीं है, क्योंकि कोई भी नारकी जीवनभर मिथ्यात्वके साथ रह सकता है । पर इसके सक्रामकका जघन्य काल एक समय इस प्रकार प्राप्त होता है कि जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसयोजना की है ऐसा कोई एक सम्यग्दृष्टि जीव सामादनमें गया और एक आधलिके बाद एक समयतक उसने अनन्तानुबन्धीका सक्रमण किया । फिर दूसरे समयमें मरकर वह अन्य गतिमें उत्पन्न हो गया तो इस प्रकार इसके नरकमें अनन्तानुबन्धीके संक्रामकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हो जाता है । इसी प्रकार प्रत्येक पृथिवीमें अनन्तानुबन्धीका सक्रमकी अपेक्षा जघन्य काल एक समय घटित कर लेना चाहिए । किन्तु मानने नरकमें ऐसे जीवका सासादनमें मरण नहीं होता और मिथ्यात्व अन्तर्मुहूर्त काल हुए बिना मरण नहीं होता अतः वहाँ जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त घटलाया है । प्रत्येक नरकमें इसका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है । तथा उक्त प्रकृतियोंके आंतरिक जो शेष वारह कपाय और नौ नोकपाय वचीं सो इनका सद्भाव नरकमें सर्वदा है और सर्वदा हर हालतमें इनका संक्रम होता रहता है, अतः इनका नरकगति और उसके अग्रान्तर भेदोंमें जघन्य और उत्कृष्ट जहाँ जो काल प्राप्त है वहाँ वह वन जानेसे उक्त प्रमाण कहा है ।

§ ९८ तिर्यञ्चोमें मिथ्यात्वके संक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है । सम्यक्त्वके संक्रामकके जघन्य और उत्कृष्ट कालका भंग नारकियोंके समान है । सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यका असंख्यातवा भाग अधिक तीन पल्य है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कके संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । वारह कपाय और नौ

सुरामवमाहर्ण, उक्त० अजतकालममलेन्द्रा० ।

§ ०० पचिदियतिरिक्खतियम्मि मिच्छ०-मम्म० विरिक्खोपमगो । सम्मामि०-  
अणंतापु षउट्टस्स जइ० एगसमओ उक्त तिप्पिण पत्तिदोवमाणि पुम्बकोडिपुपत्तेण-  
म्महियाणि । मारसक०-णवणोक० जइ० सुरामव अतोमुहुत्तं, उक्त० तिप्पिण पत्तिदा०  
पुम्बकोडिपुप० ।

मोक्षायवेकि संक्रामकञ्च अपन्य क्खल सुत्रमवमहणप्रमाय हे और उत्कृष्ट क्खल अनन्त क्खल हे जो असंख्यात पुद्गलपरिचर्तनप्रमाय हे ।

विशेषार्थ—तिर्यक्कोमि वेदकसम्बन्धकञ्च अपन्य क्खल अन्तमु हुत्तं और उत्कृष्ट क्खल कुत्र  
क्खम तीन पन्य हे । इसीसे क्खल मिध्यात्वके संक्रामकञ्च अपन्य क्खल अन्तमु हुत्तं और उत्कृष्ट क्खल  
कुत्र क्खम तीन पन्य बतत्रावा हे । सम्बन्धकके संक्रामकञ्च अपन्य क्खल एक समय मार उत्कृष्ट  
क्खल पस्वके असंख्यातवे ममाप्रमाय तथा सम्मगिमिध्यात्व और अनन्तानुबन्धीके संक्रामकञ्च  
अपन्य क्खल एक समय तिस प्रचर नरकमें बटित करके बतत्रा भाय हैं उसी प्रचर यहाँ भी बटित  
कर श्रेय चाहिये; क्योंकि इसस इसमें कोई अन्तर नहीं हे । अब यह तीन तिर्ये प पर्यायमें ए  
कर पस्वके असंख्यातवे ममाप्रमाय क्खल एक सम्मगिमिध्यात्वकी बट्ट क्खना करण रह्य हे मार  
उट्ट क्खनाके सम्यत् होनेके पूर्व ही मरकर तीन पन्यकी भायुगले तिर्यक्कोमि बरतल हो ग्या हे ।  
धिर क्खल सम्बन्धकके योग्य क्खलके प्राप्त होने पर सम्बन्धकके प्राप्त करके सम्मगिमिध्यात्वकी सत्ताके  
धिरसे बड़ा क्षता है और क्खल मा वा सम्मगिदृष्टि बना रह्य हे या मिध्यात्वमें जान्ने बट्ट क्खना  
इत्तक पूर्व ही पुनः सम्मगिदृष्टि हो ग्या है उसके तिर्यक् पर्यायके रहते हुए पस्वक असंख्यातवे  
ममा अथिक तीन पन्य क्खल एक सम्मगिमिध्यात्वका संक्रम देखा जाता हे । इसीसे यहाँ सम्मगि-  
मिध्यात्वके संक्रामकञ्च उत्कृष्ट क्खल बतत्रमाय क्खल हे । तिर्यक्गतिमें सदा एतक उत्कृष्ट क्खल  
अनन्त क्खल हे जो असंख्यात पुद्गलपरिचर्तनप्रमाय हे । इसीसे यहाँ अनन्तानुबन्धीचतुष्क तथा  
शेव मार क्खल और भी मोक्षायवेकि संक्रामकञ्च उत्कृष्ट क्खल इत प्रमाय क्खल हे । तथा तिर्यक्  
पर्यायमें एतक अपन्य क्खल सुत्रमवमहणप्रमाय हे । इसीसे यहाँ मार क्खल और भी  
मोक्षायवेकि संक्रामकञ्च अपन्य क्खल सुत्रमवमहणप्रमाय क्खल हे ।

§ ६६. पंचेन्द्रियतिर्यक्चक्रिक्खे मिध्यार और सम्बन्धकके संक्रामकञ्च अपन्य और  
उत्कृष्ट क्खल सामान्य तिर्ये बोके सम म हे । सम्मगिमिध्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके संक्रामक-  
ञ्च अपन्य क्खल एक समय हे और उत्कृष्ट क्खल पूर्व कोटिपूवकत्व अथिक तीन पन्य हे । मार  
क्खल और भी मोक्षायवेकि संक्रामकञ्च अपन्य क्खल सामान्य पंचेन्द्रिय तिर्ये बमें सुत्रम-  
वमहणप्रमाय मार शेव बोमें अन्तमु हुत्तप्रमाय हे और उत्कृष्ट क्खल तीनमें पूर्वकोटिपूवकत्व अथिक  
तीन पन्य हे ।

विशेषार्थ—पंचेन्द्रियतिर्यक्चक्रिक्खे उत्कृष्ट क्खल पूर्वकोटिपूवकत्व अथिक तीन पन्य  
हे इस श्रिय यहाँ सम्मगिमिध्यात्व अनन्तानुबन्धीचतुष्क मार क्खल और भी मोक्षायवेकि  
संक्रामकञ्च उत्कृष्ट क्खल बतत्रमाय क्खलाया हे । तथा सामान्य तिर्ये क्खल अपन्य क्खल सुत्रम-  
वमहणप्रमाय और शेव बो प्रचरके तिर्ये बोअ अपन्य क्खल अन्तमु हुत्तं हे । इसीसे यहाँ मार  
क्खल और भी मोक्षायवेकि संक्रामकञ्च अपन्य क्खल बतत्रमाय क्खलाया हे । शेव चरकेकि  
अरबोअ निरेश परल कर ही भावे हैं इसलिये यहाँ नहीं किवा हे ।

१००. पंचि०तिरिक्त्वाअपञ्ज०—मणुमअपञ्ज० सम्म०—सम्मामि० जह०  
एगम०, उक्० अंतोमु० । मोलमक०—णवणो० जह० खुदाभव०, उ० अंतोमु० ।

१०१. मणुमतियम्मि पचि०तिरिक्त्वाभंगो । णवणि वारमक०—णवणो०  
जह० एगममओ, उक्० मगड्ढिदी ।

१०२. देवेसु मिच्छ० जह० अंतोमु०, सम्मामि०—अणताणु०चउत्ताणं जह०  
एगस०, उक्० मच्चेमि तेत्तीमं मागरो० । सम्मत्त० णारगभगो । वारसक०—णवणो०  
णारगभगो चैव । भवणवामियप्पहृडि जाव उवरिमगेवजा त्ति मिच्छ०—सम्मामि०—  
अणताणु०चउत्ताणं य जह० अंतोमु० एगममओ, उक्० मगड्ढिदी । सम्म० णारग-

१०० पंचेन्द्रियतिर्यक् प्रपयात्त और मनुष्य प्रपयात्तको मन्व्यक्त्व और सम्मग्मिभ्यात्व-  
के संक्रामकता जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । तथा मोलह कपाय  
और ना नाकपायोके संक्रामकता जघन्य काल सुदृभप्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त-  
प्रमाण है ।

**विशेषार्थ—**उक्त दोनो मार्गणाश्रोमे मन्व्यग्दर्शनकी प्राप्ति सम्भव नहीं है, इसलिए यहाँ  
मिभ्यात्वका संक्रमन होनेसे उसका काल नहीं बतलाया है । एक जीवकी प्रपत्ता इन दोनो  
मार्गणाश्रोका जघन्य काल सुदृभप्रहणप्रमाण सार उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, इस लिये  
यहाँ सब प्रकृतियोंके संक्रामकता जघन्य काल सुदृभप्रहणप्रमाण और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त  
प्रमाण बतलाया है । किन्तु मन्व्यक्त्व और सम्मग्मिभ्यात्वके संक्रमणके जघन्य कालमें कुछ  
विशेषता है । बात यह है जिसके मन्व्यक्त्व या सम्मग्मिभ्यात्वके संक्रमणमें एक समय शेष  
रहा ऐसा जीव मर कर यदि इन मार्गणाश्रोमें उत्पन्न हो तो उसके इन मार्गणाश्रोके गृहते हुए उक्त  
प्रकृतियोंके संक्रमकता जघन्य काल एक समय भी पाया जाता है । इसीसे यहाँ पर इन दोनो  
प्रकृतियोंके संक्रमकता जघन्य काल एक समय बतलाया है ।

१०१ मनुष्यत्रिकमे सब प्रकृतियोंके संक्रामकके जघन्य और उत्कृष्ट कालका कथन  
पंचेन्द्रिय तिर्यक्के समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि बारह कपाय और ना नाकपायोके  
संक्रामकता जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी रिपतिप्रमाण है ।

**विशेषार्थ—**जो उपशामक जीव उपशामश्रेणिसे उतरते समय एक समय तक बारह कपाय  
और ना नाकपायोका संक्रम करता है और दूसरे समयमें मर कर देव हो जाता है उसके  
इनके संक्रमकता जघन्य काल एक समय पाया जाता है । इसीसे यहाँ मनुष्य त्रिकमे उक्त  
प्रकृतियोंके संक्रामकता जघन्य काल एक समय बतलाया है । शेष कथन सुगम है ।

१०० देवोंमें मिभ्यात्वके संक्रामकता जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है, सम्मग्मिभ्यात्व और  
अनन्तानुबन्धीचतुष्करके संक्रामकता जघन्य काल एक समय है तथा इन सब प्रकृतियोंके  
संक्रामकता उत्कृष्ट काल तैत्तिम सागर है । मन्व्यक्त्वका भग नारकियोंके समान है । बारह कपाय  
और ना नाकपायोका भग भी नारकियोंके समान ही है । भवनवासियोंसे लेकर उवरिम प्रवेयक  
तकके देवोंमें मिभ्यात्वके संक्रामकता जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त तथा सम्मग्मिभ्यात्व और  
अनन्तानुबन्धी चतुष्करके संक्रामकता जघन्य काल एक समय है । तथा इन सबके संक्रामकता  
उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । मन्व्यक्त्वका भग नारकियोंके समान है । तथा



मगो । शान्मक० णवणोक० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी माण्डिप्या । अणुदित्तादि जाव मज्जहु  
 ति मिच्छ०-सम्मामि -वारसक०-णवणोक० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी भाण्डिप्या । अणताणु०  
 चउदम्म बह० अतोमु०, उरु सुगुक्कस्सट्ठिदी । एव नाय० ।

⊗ एणजीवेण अतरं ।

§ १०३ सुगममेदमहियारसमालणमुत्त ।

⊗ मिच्छुत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छुत्ताथ सकामयंतर केवचिर काबावो  
 होवि ?

§ १०४ सुगम ।

⊗ जहण्णेण अतोमुहुत्त ।

§ १०५ मिच्छत्तमकामयस्स ताव उचये—एओ सम्माद्वी बहुतो दिट्ठममो  
 मिच्छत्त गतूण पुणो वि परिणामपचएण सम्मत्तगुण सन्नजहण्णेण फालेण पटिचण्णो  
 लट्ठमंतरं । णं मम्मत्तस्स वि । णवरि सन्नजहण्णसम्मत्तकालेणतरिणे ति वत्तप्यं ।  
 सम्मामिच्छत्तजहण्णसल्लो उचरि विससिक्कम पम्बिद्ध ति ण एत्थ तप्पम्बणा करदे ।

वारह काय और नी माङ्गायोके संक्रामकस्य अपम्य और उत्कृष्ट काय क्रमसे अपम्य और  
 उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त्यर्थं करना चाहिये । अनुदित्तसे लकर मर्यादसिद्धि तकके क्षेत्रों में मिच्छत्त  
 सम्मत्तमप्यतर वारह काय आ( नी माङ्गायोके संक्रामकस्य अपम्य और उत्कृष्ट काय क्रमसे  
 अपम्य और उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त्यर्थं करना चाहिये । तथा अनन्तानुवन्धी वस्तुओंके संक्रामकस्य अपम्य  
 काय अन्तमुहूर्त ए और उत्कृष्ट काय धरती धरती उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त्यर्थं है । इसी प्रकार अन्तःकरण  
 मार्गोच्छातक जानना चाहिये ।

बिभ्रुवार्थ—परम आपसे और मर्याद वि गतियोंसे क्रमस्य स्थीकरस्य कर आने हैं ।  
 इसे ध्यानमें रख कर क्षेत्रगति और उत्कृष्ट पराम्तर क्षेत्रोंमें इसे पण्डित कर बना चाहिये । मात्र  
 क्षेत्रगतियोंमें बहो जा विसरस्य है इसे ध्यानमें रख कर ही यह क्रम पण्डित करना चाहिये ।

⊗ अब एक जीवकी अपेक्षा अन्तरकर अधिकार है ।

§ ११ अपिमरस्य निर्रेण करनराजा यह सूत्र सुगम है ।

⊗ मिध्यात्व, मध्यस्त्व और सम्यग्मिध्यात्वके संक्रामकका अन्तरकास कितना है ?

§ १२ यह सूत्र सुगम है ।

⊗ अपम्य अन्तरकस्य अन्तमुहूर्त है ।

§ १३ मिध्यात्वक संक्रामकस्य अन्तरकस्य मुद्याना सर्वे प्रथम करत है—त्रिस माङ्गा-  
 मागारा अनक दा( परिषय मिलि पुम्य है एता एक मध्यगृष्टि जीव जब मिध्यात्वमें जाकर और  
 परिणामरस्य दिवस अति दरस्य काय हाय मध्यराज गुलका प्राप्त होता है तब मिध्यात्वके  
 संक्रामकस्य अपम्य अन्तरकास प्राप्त होता है । इसी प्रकार सम्यग्मिध्यात्व भी अपम्य अन्तरकास  
 प्राप्त कर बना आता है । किन्तु यह प्रथम अपम्य मध्यगृष्टिके आनेसे आन्तरिक होता है एता क्रम  
 करता चाहिये । सम्यग्मिध्यात्वके अपम्य अन्तरकास प्राप्त विसरस्वतमें करत किंवा जायगा  
 इनत्रिने करी इनका करत नहीं करत है ।

❀ उच्चस्सेण उवड्डुपोग्गलपरियट्टं ।

§ १०६. तं जहा—मिच्छत्तमं कामयस्म ताव उवदं—अणादियमिच्छाट्टी उवमम-  
सम्मत्तं घेत्तूणं छ आवलियाओ अत्थि त्ति मासणं गुण गंतणंतगिय देसणमद्रुपोग्गल-  
परियट्टं परिभमिय अतोमुहुत्तावसेसे मिच्छिदव्वए त्ति मम्मत्तगुण पडिवण्णो, लद्धमुक्क-  
स्मतं, पोग्गलपरियट्टस्य देसणद्वमेत्तमादियतेसु अंतोमुहुत्तमेत्तकालस्स वडिह्मावदंमणादो ।  
एव मम्मत्तम्म । णव्वरि देसणपमाण पलिटोवमायंसे० भागो, उवममग्गमत्त पडिवज्जिय  
मिच्छत्त गत्तूणं तेत्तियमेत्तेण कालेण विणा सम्मत्तमुव्वेत्तेल्लदुममद्वियत्तादो । एवं  
सम्मामिच्छत्तस्स वि वत्तव्व । सपहि सम्मामिच्छत्तजहण्णमं कामयंतं रगयविसेसपटुप्पायणडु-  
मुवरिमसुत्तं भणड—

❀ एव्वरि सम्मामिच्छत्तस्स संकामयतरं जहण्णेण एयसमथो

§ १०७. तं जहा—उवममग्गमाट्टी सम्मामिच्छत्तम्म संकामओ होळणं टिट्ठो  
मगद्धाए एगममयावसेमियाए मासादणमात्रं गत्तूण्यममयमतगिय पुणो वि तदणंत-  
समए संकामओ जादो, लद्धमेगममयमेत्तमंतरं । अहवा मिच्छाट्टी सम्मामिच्छत्तमुव्वेत्तेल्ल-

\* उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

§ १०६ खुलासा इस प्रकार है । उसमें भी सर्वप्रथम मिथ्यात्वके संक्रामकके उत्कृष्ट अन्तर-  
कालका खुलासा करते हैं—कोई एक अनादि मिथ्यात्वपि जीव उपशमसम्यग्त्वको प्राप्त हुआ और  
छह आवलि कालके शेष रहने पर सासादन गुणस्थानमें जाकर उसने मिथ्यात्वके संक्रमणका  
अन्तर किया । फिर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण काल तक परिश्रमण करके जब मुक्त  
होनेके लिये उसे अन्तर्मुहूर्त काल शेष बचा तब वह नम्यत्व गुणको प्राप्त हुआ । इस प्रकार उत्कृष्ट  
अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है । यह पुद्गलपरिवर्तनका कुछ कम आवा उमलिये ह, क्योंकि इसमेंसे  
प्रारम्भका एक अन्तर्मुहूर्त आर अन्तका एक अन्तर्मुहूर्त कम होता हुआ देखा जाता है । इसी  
प्रकार सम्यक्त्वके संक्रामकके उत्कृष्ट अन्तरकालको घटित करके कहना चाहिये । किन्तु यहाँ कुछ  
कमका प्रमाण पत्यका असख्यातवा भाग ह, क्योंकि उपशमसम्यग्त्वको प्राप्त करके और मिथ्यात्वमें  
जाकर तावन्मात्र अर्थात् पत्यके असख्यातवे भाग भाग कालके दिना सम्यक्त्वकी उद्वेलना  
नहीं हो सकती । इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामकका उत्कृष्ट अन्तरकाल भी कहना चाहिये ।  
अथ सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामकके जघन्य अन्तरकालविशेषका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र  
कहते हैं—

\* किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामकका जघन्य अन्तर-  
काल एक समय है ।

§ १०७ खुलासा इस प्रकार है—कोई एक उपशमसम्यग्त्वपि जीव सम्यग्मिथ्यात्वका  
संक्रमण करता हुआ स्थित है । उसने अपने सम्यक्त्वके कालमें एक समय शेष रहने पर सासादन  
गुणस्थानमें जाकर एक समय तक सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रमणका अन्तर किया और उसके अन्तर  
समयमें फिरसे उसका संक्रामक हो गया । इस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामकका जघन्य  
अन्तर एक समय प्राप्त हुआ । अथवा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करनेवाला जो मिथ्यात्वपि जीव

माणप्रो मम्मत्तादिमुहो होऊणतरकण्ण करिय मिच्छत्तपट्टमट्टिदिषरिमसमए सम्मामिच्छत्त-  
चरिमिच्छन्तणमत्तलिं पम्सत्थण मक्कामिय उवसमसम्माट्ठ्ठी पट्टमसमए सम्मामिच्छत्त-  
सत्तुप्पायणवाधारणयसमयमतसिय पुणो विदियसमए मक्कामप्रो जादो, लद्धमतर ।

⊙ अणत्ताणुपघोण सक्तामयतर केवधिर काढावो होवि ।

§ १०८ सुगम ।

⊙ अह्यणण अंतोमुहुत्त ।

§ १०९ विमज्जोपणचरिममत्तलिं पादिय अतरिदस्स पुणो सत्त्वलहुण्ण कालण  
मज्जुत्ताम वधावत्तियवत्तिवत्तमए लद्धमतर कायम्भमिदि बुध होए ।

⊙ उप्पत्सेण वेष्ठापट्टिसागरोयमाणि साविरेयाणि ।

§ ११ त उहा—पट्टमसम्मत्त पट्टण उवसमसम्मत्तकालम्भतर अणत्ताणुबंधिं  
विमज्जोपण बदयसम्मत्तं पट्टिवत्तिय पट्टमत्तावत्तिं भमिय तत्तथतोमुहुत्तावत्तस सम्मामिच्छत्तं  
पट्टिवत्तिय पुणो अतोमुहुत्तेण सम्मत्तमुवणमिय विदियजावत्तिसुपुपात्तिय योवावत्तसे  
मिच्छत्त गत्तम् लद्धमतरं होति । एत्थ पुम्भमणत्ताणुबंधिं विसज्जोपण द्विदस्स उवसम

मध्यस्थके अभिमुख्य हस्तर धार आंतरकरण करके मिथ्यात्वकी प्रथम विचित्रिणे अन्तिम समयमें  
सम्पत्तिमिथ्यात्वकी अन्तिम गुरुता काजिका परस्परसं संक्रमण करके उपरासम्पत्ति ही गया है  
वह ध्यान प्रथम समयमें सम्पत्तिमिथ्यात्वके सत्त्वक इत्यत्र करनेके द्वारा खानके कारण एक समय  
एक सम्पत्तिमिथ्यात्वके संक्रमणका अन्तर करके दूसरे समयमें फिरसे संक्रमण हो गया । इस प्रकार  
सम्पत्तिमिथ्यात्वके संक्रमणका जपम्य अन्तर एक समय प्राप्त हो जाता है ।

⊙ अनन्तानुबन्धियोक संक्रामकका अन्तर्गच्छाल कितना है ।

§ १८ पर मूय सुगम है ।

⊙ जपन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १९ अथ एक जीव है त्रिमय विमज्जोपणाधी अन्तिम काजिका पत्तन करके अनन्तानु-  
बन्धियोक संक्रमण अन्तर किया । फिर अन्तिम परस्पर अन्तर्गच्छाल अनन्तानुबन्धियोकसे संयुक्त होकर  
कायावत्तिसम्पत्ति गमाय खानके अन्तर समयमें पुन संक्रामक हो गया । इस प्रकार अनन्तानु-  
बन्धियोकसे संक्रमणका जपम्य अन्तरकाल प्राप्त करना चाहिए वह एक कथनका वास्तव्य है ।

⊙ उत्कृष्ट अन्तरकाल मापिक दो उपायप्रठ सागर है ।

§ ११ सुवामा इस प्रकार है—अथ एत्थ जप है त्रिमये पपमात्ताम सम्पत्त्वका महत्त  
करके उपरासम्पत्ति करके अन्तर अनन्तानुबन्धीकी विमज्जोपणा की । फिर बहुकसम्पत्त्वका  
प्राप्त करके प्रथम उपायप्रठ सागर काय तक परिभ्रमण किया । फिर इसके अन्तर्में अन्तर्गच्छाल काय  
काय रहन पर सम्पत्तिमिथ्यात्वका प्राप्त हुआ । फिर अनन्तानुबन्धियोकसे सम्पत्त्वका प्राप्त करके कोर वसके  
गाय दूसरे उपायप्रठ सागर काय तक रहा । फिर समयमें बाधा प्राप्त होय रहन पर मिथ्यात्वमें गया ।  
इस प्रकार अनन्तानुबन्धियोक संक्रमणका उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है । वहाँ पर मात्त्वमें  
अनन्तानुबन्धियोक विमज्जोपणा करके विमज्जोपणा जीव है या उपरासम्पत्त्वका प्राप्त होय वसका

गम्मत्तकालो पच्छिन्नमिच्छत्तजहण्णकालादो बहुओ तेण सिच्छत्तजहण्णकालमेत्तं तत्थ सोहिय सुद्धमेसेण सादरेयत्तं वत्तच्च ।

❧ सेसाणमेकवीसाण पयडीणं संकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ?

§ १११. सुगमं ।

❧ जहण्णेण पयसमञ्चो ।

§ ११२. त जहा—इगिवीमपयडीणं सकामओ उवसमसेहिमारुहिय अप्पप्पणो ठाणे सञ्चोवममं काउणेयममयमंतरिय पुणो विदियसमण काल गदो मतो देवेमुप्पण-पढममण लद्धमतर करेइ त्ति वत्तच्च ।

❧ उक्खस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ११३. तं कथं ? अणियट्ठिअट्ठाण मंखेज्जे भागे गतूण सञ्चामिमणतरपरुविद-पयडीणं मगमगट्ठाणे सञ्चोवममं काउण अमकामयभावेणतरिय अणियट्ठि०-सुहुम०-उनमंत०गुणट्ठाणाणि कमेणाणुपालिय पुणो ओटग्माणो सुहुम०गुणट्ठाणं बोलीणो

है वह अन्तमें प्राप्त हुए मिथ्यात्वके जघन्य कालमें बहुत हैं, उमलिये उपशममन्वक्त्वके पूर्वोक्त कालमेंसे मिथ्यात्वके जघन्य कालको पटाकर उपशममन्वक्त्वका जो काल शेष रहे उतना अधिक कहना चाहिये। आशय यह है कि दूरसे छयासठ सागरमेंसे यद्यपि अन्तमें प्राप्त हुए मिथ्यत्व गुणमानका जघन्य अन्तमुहूर्त काल घट जाता है पर इम छयासठ सागरमें प्रियोजनाके बाद बचे हुए उपशमसन्वक्त्वके कालके गिला देने पर वह छयासठ सागरसे कुछ अधिक हो जाता है, इम लिये यटा अनन्तानुबन्धियोंके सक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण कहा है।

\* शेष इक्कीस प्रकृतियोंके सक्रमकका अन्तरकाल कितना है ।

§ १११ यह सूत्र सुगम है ।

\* जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

§ ११० सुलासा इस प्रकार है—इक्कीस प्रकृतियोंके सक्रमक जिस जीवने उपशमश्रेणि पर चढ़ कर और अपने अपने स्थानमें उनका सर्वोपशम करके एक समय तक उनके सक्रमका अन्तर किया फिर दूरसे समयमें मर कर जो देव हुआ उसके वहा उत्पन्न होनेके पहले समयमें ही इन प्रकृतियोंके सक्रमका अन्तर प्राप्त हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। आशय यह है कि जिस समयमें जिस प्रकृतिका सर्वोपशम होता है उसके एक समय बाद यदि वह उपशम करनेवाला जीव मर कर देव हो जाता है तो उस प्रकृतिके सक्रमका एक समय अन्तर प्राप्त होता है ।

\* उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है ।

§ ११३ शंका—सो कैसे ?

समाधान—अनिवृत्तिकरणके कालके संख्यात भागोंको विता कर पहले कही गई सध प्रकृतियोंका अपने अपने स्थानमें सर्वोपशम होनेसे वे असक्रमभावको प्राप्त हो जाती हैं और इस प्रकार इनके सक्रमका अन्तर करके उसी अन्तरके साथ अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसम्पराय और उपशान्तमोह इन तीन गुणस्थानोंको क्रमसे प्राप्त कर फिर उतरते समय सूक्ष्मसम्पराय गुणस्थानको

अणियङ्किमावेजप्यप्यणो ह्याणे पुणो वि सकामओ जादो, ल्यमतरन्तोमुहुचमेर्षे । जवरि  
सोमसञ्जणस्ताणुपुण्णोसकमपारमेणतरस्तादि क्खदूण पुणो तदुवरमे ल्यमतर क्खयत्थ ।

एवमोवेजतर गयं ।

११४ सपहि दसामासियसुत्तेण क्खिदमादेसमोपाभुवादपुग्गस्सरुत्तुत्तारणमस्सिय  
परुवेमो । उ जहा अतराणुगमेण वुत्तिहो गिरेसो—ओपेण आदेसेण य । ओपेण मिच्छं-  
सम्म जह अंतोमु०, सम्मामि० जह एगसमओ, उक्क तिण्ह पि उवहुपोगत्त-  
परियह । अणतामु०घउक्कस्स जह० अतोमु०, उक्क० वेष्ठावत्तिसागरोवमाणि मादिरेयाणि ।  
पारसक०-णवणोक्क० जह० एगसमओ, उक्क० अतोमुहुच ।

११५ आदेसेण जेरुत्तय० मिच्छं-सम्म०-अणताणु चउक्कस्स जह० अतोमु०,  
सम्मामि एगसमओ, उक्क० तेष्ठावत्तिसागरो वेष्ठाणि । पारसक०-णवणोक्क०  
संक्रमजो णरिय अतर । एव सञ्जणेरहया । जवरि सगङ्गिदी वेष्ठाणा ।

किञ्च कर जब अनिष्टविकरणको प्राप्त होला है तब अपने अपने उपराम करनेके स्थानमें फिरसे  
संक्रमक हो जाता है और इस प्रकार इनका अन्तमुहुते अन्तरका प्रारंभ हो जाता है। किन्तु  
इतनी विशेषता है कि अन्तपूर्वी संक्रमके प्रारम्भमें क्षोभसंभवजनके संक्रमक अन्तरका प्रारंभ करे वा  
अन्तपूर्वी संक्रमके समाप्त होने तक वास्तु रहता है। इस प्रकार क्षोभसंभवजनके संक्रमक  
अन्तर अन्तपूर्वी संक्रमके प्रारम्भसे वसन्धी समाप्ति तक रहता जातिवै ।

इस प्रकार ओपसे अन्तरका समाप्त हुआ ।

११४ अब वेष्ठासक सूत्रके द्वारा सूचित होमनाला आदेसका आपानुयायपूर्वक  
व्यवस्थाके ध्यायसे कथन करण है। जो इस प्रकार है—अन्तराणुगमकी अपेक्षा निर्देश वा  
प्रकारका है—ओपनिर्देश और आदेशानिर्देश। इनमेंसे ओपकी अपेक्षा मिथ्यात्व और सम्पत्त्वके  
संक्रमकका अपन्य अन्तरका अन्तमुहुते है सम्पत्तिमिथ्यात्वके संक्रमकका अपन्य अन्तरका  
एक समय है। तथा तीनोंके संक्रमकका अन्त अन्तरका अन्तमुहुते पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।  
अन्तानुबन्धीचतुष्के संक्रमकका अपन्य अन्तरका अन्तमुहुते है और अन्त अन्तरका  
साधिक हो लयासठ सागर है। बारह कथाय और भी मोक्षार्थके संक्रमकका अपन्य अन्तर  
का एक समय है और अन्त अन्तरका अन्तमुहुते है।

विशेषार्थ—इस सब अन्तरकाओंका लुप्तासा श्रुतिपूर्वका व्याख्याना करत समय हीराकर  
पर्य कर भाषे है इसलिज बरसे ज्ञान ज्ञेना जातिवै ।

११५ आदेशकी श्रेया नादिविषेसि मिथ्यात्व सम्पत्तर और अनन्तानुबन्धीचतुष्के  
संक्रमकका अपन्य अन्तरका अन्तमुहुते है। सम्पत्तिमिथ्यात्वके संक्रमकका अपन्य अन्तरका  
एक समय है तथा सभीके संक्रमकका अन्त अन्तरका अन्तमुहुते कम वहीच सागर है। किन्तु पर  
बारह कथाय और भी मोक्षार्थके संक्रमकका अन्तरका मही है। इसी प्रकार सब परकीके  
नादिविषेसि अन्तरकाका कथन करना जातिवै । किन्तु इतना अन्तरका अन्तमुहुते समय सर्वत्र पुद्ग  
कम धरनी धरनी इत्तु स्वतिप्रमाण करवा जातिवै ।

§ ११६. तिरिक्सेमु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० ओघो । अणंताणु० चउक्कस्स जह० अतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिटो० देसूणाणि । वारम्मक०-णवणोक्क०<sup>१</sup> णत्थि अंतं । एव पचि० तिरिक्कसतियम्म । णवरि मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० जह० अतोमु० एवम०, उक्क० तिण्णि पलिटो० पुव्व० । पचि० तिरि० अपज्ज०-मणुमअपज्ज०-अणुत्तिसादि-जाव मव्वट्ठा त्ति सव्वपयडीणं णत्थि अतर । मणुमतियम्मि पंचिदियतिरिक्कसभंगो ।

**विशेषार्थ—**मिथ्यात्व, सन्यक्त्य, सम्यग्मिथ्यात्व आर अनन्तानुबन्धीचतुष्क इनके सक्रामकके जघन्य अन्तरकालका गुलासा जिस प्रकार श्रोत्रप्ररूपणाके सम्य चूखिन्तूत्रोरी व्याख्या करते हुए किया है उसी प्रकार यहा भी जान लेना चाहिये । तथा इन सबके सक्रामकका उत्कृष्ट अन्तरकाल नरककी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षामें उदा है जो अपनी अपनी दृष्टिमें घटित कर लेना चाहिये । उदाहरणार्थ एक ऐसा जीव हो जिसने नरकमें उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्तवाद् उपशम सम्यक्त्यको प्राप्त करके मिथ्यात्वका सक्राम किया । फिर छह आरक्षि काल शेष रहने पर वह नामादनभयको प्राप्त होकर उसका असक्रामक हुआ और फिर जीवन भर असक्रामक ही रहा । किन्तु अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर यदि वह उपशमसम्यक्त्यको प्राप्त करके फिरसे मिथ्यात्वका सक्राम करने लगता है तो नरकमें मिथ्यात्वके सक्रामका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेत सागर प्राप्त हो जाता है । जो जीव नरकमें उत्पन्न होकर एक समय तक सन्यक्त्यका उद्वेलना सक्राम करके दूसरे समयमें असक्रामक हो जाता है और फिर आयुके अन्तमें उपशम सम्यक्त्यको प्राप्त करके अतिगल्प काल द्वारा मिथ्यात्वमें जाकर सन्यक्त्यका सक्राम करने लगता है उसके सम्यक्त्यके सक्रामकका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर प्राप्त होता है । सम्यग्मिथ्यात्वके सक्रामकका उत्कृष्ट अन्तरकाल भी उसी प्रकारसे घटित करना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि उस जीवको अन्तमें सम्यक्त्य उत्पन्न कराकर उसके दूसरे समयसे ही सक्रामक कहना चाहिये, क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्वका सक्राम सम्यग्दृष्टिके भी होता है । अनन्तानुबन्धीकी अपेक्षा यदि प्रारम्भमें विमयोजना करावे और अन्तमें मिथ्यात्वमें ले जाय तो कुछ कम तेतीस सागरप्रमाण अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है । अब शेष रही वारह कपाय और नौ नोकपाय सो इनके सक्रामकका अन्तरकाल उपशमश्रेणामें ही सम्भव है और नरकमें उपशमश्रेणि होती नहीं, अतः नरकमें इनके सक्रामके अन्तरकालका निषेध किया है

§ ११६ तिर्यं चोमं मिथ्यात्व, सन्यक्त्य और सम्यग्मिथ्यात्वके सक्रामकका अन्तरकाल आचके समान है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कके सक्रामकका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पत्य है । किन्तु वारह कपाय और नौ नोकपायके सक्रामकका अन्तरकाल नहीं है । पचेन्द्रियतिर्यं-चक्रिकमें अन्तरकालका कथन इसी प्रकार जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके मिथ्यात्व और सम्यक्त्यके सक्रामकका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । सम्यग्मिथ्यात्वके सक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है । तथा इन सबके सक्रामकका उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पत्य है । पचेन्द्रियतिर्यं च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुविशसे लेकर सपर्याप्तसिद्धि तकके देय इनमें सब प्रकृतियोंके सक्रामकका अन्तरकाल नहीं है । वात यह है कि इन मार्गणाश्रमोंमें गुणस्थान नहीं बदलता, इसलिये अन्तरकाल नहीं प्राप्त होता । मनुष्यचक्रिकमें पचेन्द्रिय तिर्यं-चके समान भग है । किन्तु इतनी

णवरि वारमक०-णवणोक० अह० उक अतोमुहुच ।

§ ११७ दवेसु मिच्छ०-सम्म०-अणंतापु चउक०-सम्मामि० जह० अतोमु  
एगस , उक एकवीस सागरो० दग्णाणि । वारसक०-णवणोक० गतिथ अंतर ।  
एव भवणादि जाय उवरिमगेवञ्जा सि । णवरि सगहिदो दग्णा कायम्वा । एवं वाव० ।

⊗ यायाजीवेहि भगवियच्चो ।

§ ११८ सुगममेदमहिपारसमालणमुचं । तत्थ ताव अट्टपद परूवेमाणो सुच-  
सुचर मणह—

⊗ जेसिं पपडीण सलकम्ममत्थि तेसु पपवं ।

§ ११९ कुदो ? अकम्मएहि अम्बवहारादो । एदणहुपदण दुविहो चिरेसो  
ओघादेसमेण । तत्वोपपत्तणहुमाह—

विशेषतः इ कि इनमें बारह कथय और नौ माकययोके संकामकञ्च अपन्य और इच्छुस अन्तरास  
अन्त्यु हुते पाया जाता है । आराय यह इ कि इनमें वपरामञ्चि सन्मभ इ अतः इक ११ प्रकृतियोंके  
संक्रमञ्च अन्तरास नन जाता है ।

विशेषार्थ—तिर्यंभोमें मारम्भमें अनन्त्यानुबन्धीकी विसंबोधना करके अन्तक विसा एवे  
किन्तु अन्तमें मिच्छात्वमें पञ्च वाय । यह कम तिर्यंवातिकमें एक पर्यायमें ही बन सकता है, अतः  
तिर्यंवातिकमें अनन्त्यानुबन्धी चतुष्कके संकामकञ्च इच्छुस अन्तरास कुञ्च कम तीन पश्य कहा  
है । तत्र पंचत्रियतिर्यंवातिकमें जो मिच्छात्त्व सम्पत्त्व और साम्यमिच्छात्वके संकामकञ्च इच्छुस  
अन्तरास पूर्वोविपुञ्चत्व अधिक तीन पश्य कहा है सो यह इस इस पर्यायके इच्छुस अन्तभी  
अपेक्षासे कहा है । इसे नररुके समान यहां भी पठित कर लेना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

§ ११९. वेषां मिच्छात्त्व सम्पत्त्व और अनन्त्यानुबन्धीचतुष्कके संकामकञ्च अपन्य  
अन्तरास अन्त्यु हुते है । साम्यमिच्छात्वके संकामकञ्च अपन्य अन्तरास एक समय है और  
सकने संकामकञ्च इच्छुस अन्तरास कुञ्च कम इकतीस सागर है । किन्तु बारह कथाप आर भी  
नोकययोके संकामकञ्च अन्तरास नहीं है । इसी प्रकार अनन्त्यानुबन्धीके अन्तर वपरिम मैत्रपक  
एक शानता चाहिये । किन्तु सर्वत्र इच्छुस अन्तर करते समय कुञ्च कम अपनी अपनी इच्छुस स्विति  
कहनी चाहिये । इसी प्रकार धनाहारक म गौया एक जमाना चाहिये ।

विशेषार्थ—वेषातिकमें वपरिम मैत्रक एक ही गुणस्वाम परिवर्तन सम्भव है । इसीसे  
मिच्छात्व चादि सात प्रकृतियोंके संकामकञ्च इच्छुस अन्तरास कुञ्च कम इकतीस सागर कहा  
है । शेष कथन सुगम है ।

⊗ अथ नाना बीबीकी अपेक्षा भगविययका अधिकार है ।

§ १२० अधिपरक तिरेरा कलेवाञ्च यह सूत्र सुगम है । अथ यहाँ अर्थरुके कथानकी  
इच्छाके अगोच सूत्र कहत है—

⊗ जिन प्रकृतियोंकी सखा है वे यहाँ प्रकृत हैं ।

§ १२० क्योंकि जो कर्ममात्रसे रहित हैं वनञ्च प्रकृतमें वनबोग नहीं । इस अर्थरुके  
अनुसार अथ अर चावेराके मेवसे निर्देरा दो प्रकारक है । वनमेंसे अथकञ्च कञ्च करनेके क्रिय  
आगोच सूत्र कहत है—

❁ मिच्छत्त-सम्मत्ताणं सञ्चजीवा णियमा संकामया च असं-  
कामया च ।

§ १२०. कुटो ? मिच्छत्तस्म सकामयागंकामयाणं सम्माडडि-मिच्छाडडिण  
सञ्चकालमवट्टाणदंसणादो । एव सम्मत्तस्म वि । णवरि विवज्जायेण वत्तव्वं ।

❁ सम्मामिच्छत्त सोलसकसाय-णवणोकसायाणं च तिग्णिण भंगा  
कायञ्चा ।

§ १२१. तं जहा—सिया मञ्चे जीवा सकामया । गिया मकामया च असंकामयो  
च १ । सिया मकामया च अमकामया च २ । धुवसहिदा ३ तिग्णिण भंगा ।

एवमोघेण भंगविचित्रो ममत्तो ।

§ १२२. आदेमपरूवणड्डमुच्चारण वत्तडम्मामो । तं जहा—मणुयतियरस  
ओघभगो । णेरइएसु मिच्छ०-मम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०चउव्वस्स ओघो । वारसक०-  
णवणोक० णियमा संकामया । एव सञ्चणेग्गय-तिग्गिरस-पच्चिदियतिग्गिरसतिय-देवा

\* मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके मव जीव नियमसे मकामक और असकामक हे ।

§ १२० क्योंकि मिथ्यात्वका सक्रम करनेवाले सम्यग्दृष्टियाका और सक्रम नहीं  
करनेवाले मिथ्यादृष्टियोंका सर्वदा सद्भाव देखा जाता है । इसी प्रकार सम्यक्त्व प्रकृतियों अपेक्षा  
से भी कारणका कथन करना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ विपरीतक्रमसे उक्त  
कारणका कथन करना चाहिये ।

\* सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कपाय और नौ नोकपायोंके तीन भंग करना चाहिये ।

§ १२१ खुलासा इस प्रकार है—कदाचित् सब जीव सक्रामक हैं । कदाचित् बहुत जीव  
सक्रामक हैं और एक जीव असक्रामक है १ । कदाचित् बहुत जीव संक्रामक हैं और बहुत जीव  
असक्रामक हैं २ । यहाँ इन दो भगोंमें ध्रुव भगके मिलाने पर तीन भंग होते हैं ।

विशेषार्थ—उक्त कथनका सार यह है कि मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके सक्रामक और  
असक्रामक बहुत जीव तो सदा पाये जाते हैं । किन्तु शेष प्रकृतियोंके विषयमें तीन भंग हैं ।  
कदाचित् सब जीव सक्रामक हैं यह ध्रुव भंग है । आशय यह है कि शेष प्रकृतियोंके संक्रामकोंका  
सदा पाया जाना तो सम्भव है किन्तु असक्रामकोंके विषयमें कोई निश्चित नियम नहीं कहा जा  
सकता है । कदाचित् एक ही जीव असक्रामक नहीं होता । जब एक भी असक्रामक जीव नहीं पाया  
जाता तब उक्त ध्रुव भंग होता है । इसके अतिरिक्त शेष दो भंग स्पष्ट ही हैं ।

इस प्रकार ओघसे भंगविचय समाप्त हुआ ।

§ १२० अब आदेशका कथन करनेके लिये उच्चारणको बतलाते हैं यथा—मनुष्यत्रिकमे  
ओघके समान भंग है । अर्थात् ओघसे जो व्ययस्था बतलाई है वह मनुष्यत्रिकमे घटित हो जाती  
है । नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्करका भंग ओघके  
समान है । किन्तु वारह कपाय और नौ नोकपायोंकी अपेक्षा नियमसे सब जीव संक्रामक हैं यही  
एक भंग है वात यह है कि इन इक्कीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा असक्रामकोंका भंग उपशमश्रेणियोंमें



ज्ञान उवरिमगवज्जा सि ।

§ १२३ पविन्दियतिरिक्खजपज्ज सम्म०-सम्मामि० सिया सप्पे सकामया । सिया सकामया च असकामओ च । सिया संकमया च असकामया च । सोलसक० णवणोक्कसायाणं णियमा सकामया ।

§ १२४ मणुसज्जपज्जत्त० सम्म०-सम्मामि० संकमयासकामयाणमद्द मगा कायप्पा । सोलसक०-अवणोक्क सिया सकामओ । सिया सकामया । अणुरिसादि आब सम्बद्धा ति मिच्छ-सम्मामि०-भारसक०-णवणोक्क० भियमा सकामया । अणताणु चठसस्स ओपो । एवं आव० ।

§ १२५ सपहि मागाभाग-परिमाण-खण-पोसणाण परूवणदुमुच्चारणमवल्लेमा । ठ जहा-मागामागाणु० दुविहो णि-ओषण आदसेण य । ओषण मिच्छ संकमया सम्बजीवाण केव ? अणतमागो । असकम अर्भवमागा । सम्म सकम सम्बजीवाण क्व० ? अमस्स मागो । असकामया असखुब्बा मागा । सम्मामि०-

प्राप्त होता है । पर नरकमें उग्रामत्रेणि सम्मन नहीं इसलिये इनकी अपेक्षा यहाँ एक ही भोग बतलाया है । इसी प्रकार सब नारकी, तिर्यकत्रिक, देव और इन्द्रिय भोगवत्तकके देवोंके ज्ञानना चाहिये ।

§ १२६ पचेन्द्रियतिक्कसम्पपवत्तकमेमि सम्पत्त और सम्पत्तिप्यात्वक कदाचित् सब जीव संकमक हैं । कदाचित् बहुत जीव संकमक हैं और एक जीव असकामक है । कदाचित् बहुत जीव संकामक हैं और बहुत जीव असकामक हैं । तथा सोख्ख कपाय और मो नोक्कपायके नियमसे सब जीव संकमक हैं ।

विशेषार्थ-आरभ्य यह है कि इन जीवोंके मिच्छात्वका संकम और अमग्तमुचरणी चतुष्कम असकम तो सम्भव ही नहीं, क्योंकि यहाँ अतिरिक्तसम्पत्ति गुणस्वात् नहीं होता । अथ मिच्छात्वके सिद्ध भोग मङ्गलित्वोक्ती अपेक्षासे एक प्रकारसे भोग बतलाया है ।

§ १२७ मणुप्प अपर्याप्तमेमि सम्पत्त और सम्पत्तिप्यात्वके संकमक और असकमकके अठ भोग कहने चाहिये । तथा सोख्ख कपाय और मो नोक्कपायोंकी अपेक्षा कदाचित् एक जीव संकमक होता है आर कदाचित् अनेक जीव संकामक होते हैं वे दो भोग होते हैं । उक्त अनुदिरासे लेकर सर्वावसिद्धि तकके देव मिच्छात्व सम्पत्तिप्यात्व बाह्य कपाय और मो नोक्कपायोंके नियमसे संकमक होते हैं । तथा यहाँ अनात्तानुचरणीचतुष्कम भोग ओषके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गशा तक ज्ञानना चाहिये ।

§ १२८ अब मागामग परिमाण, क्षेत्र और स्पर्शिक कवन करनक सिव वच्चारणाना अपत्तम्बन होते हैं । यथा-मागामागानुगमकी अपत्त भिवेरा वा प्रच्छरका इ-ओवनिवेरा और आरेणनिवेरा । इनमेंसे ओषकी अपेक्षा मिच्छात्वके संकामक जीव सब जीवोंके कितने मागप्रमाय हैं ? अनन्तके मागप्रमाय हैं । असकमक जीव कितने मागप्रमाय हैं ? अनन्त चतुष्मागप्रमाय हैं । सम्बत्तके संकमक जीव सब जीवोंके कितने मागप्रमाय हैं ? असकमकके भगामप्रमाय हैं ।

संक्रामया अमंखेज्जा भागा । अमंक्रामया अमंखेज्जटिभागो । सोलसक०-णवणोक्क०-संक्रामया अणंता भागा । अमंक्रामया अणंतभागो ।

§ १२६. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्म०-संक्राम० अमंखे०भागो । अमंक्रामया अमंखेज्जा भागा । सम्मामि०-अणंताणु०४संक्राम० अमंखेज्जा भागा । अमंक्राम० अमंखे०भागो । वारसक०-णवणोक्क० णत्थि भागाभागो, संक्रामयाणमेव णिप्पडि-वत्तणमेत्थ दग्गणादो । एव सच्चणेरइय-पंचिंदियतिरिक्खत्तिय-द्वेत्ता जाव महम्मसारे त्ति ।

§ १२७. तिग्गिखेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणताणु०४ ओवं । वारसक०-णवणोक्क० णत्थि भागाभागो । पंचिंदियतिरिक्खत्तपज्ज०-मणुमपज्ज० सम्म०-सम्मामि०-संक्राम० अमंखेज्जा भागा । अमंक्राम० अमंखे०भागो । सेसपयट्ठीणं णत्थि भागाभागो ।

§ १२८. मणुस्सेसु मिच्छत्त० णारयभंगो । सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक्क० संक्रामया अमंखेज्जा भागा । अमंक्राम० अमंखे०भागो । एवं मणुसपज्ज०-मणुमिणीसु । णवरि मंखेज्जं कायच्चं ।

§ १२९. आणटाटि जाव णवगेवज्जा त्ति णारयभंगो । णवरि मिच्छ०-संक्रामया

अमंक्रामक जीव कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । असंक्रामक जीव असंख्यात भागप्रमाण हैं । सोलह कपाय और नौ नोकपायोंके संक्रामक जीव अनन्त बहुभागप्रमाण हैं । असंक्रामक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं ।

§ १२६. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके संक्रामक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । असंक्रामक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके संक्रामक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । असंक्रामक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । यहाँ वारह कपाय और नौ नोकपायोंका भागाभाग नहीं है, क्योंकि नारकमें इनके केवल संक्रामक जीव ही देखे जाते हैं । इसी प्रकार सब नारकी, पंचेन्द्रियतिर्यं चत्रिक, सामान्य देव और सहस्रार कल्प तत्रके देवोंमें जानना चाहिये ।

§ १२७. तिर्यं चोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा भागाभाग ओचके समान है । तथा यहाँ वारह कपाय और नौ नोकपायोंका भागाभाग नहीं है । पंचेन्द्रियतिर्यं चत्रिकपर्याप्त और मनुष्यपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । असंक्रामक असंख्यातवें भागप्रमाण हैं यहाँ शेष प्रकृतियोंका भागाभाग नहीं है ।

§ १२८ मनुष्योंमें मिथ्यात्वका भंग नारकियोंके समान है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कपाय और नौ नोकपायोंके संक्रामक असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । असंक्रामक असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोंके जानना चाहिये । किन्तु इनमें असंख्यातके स्थानमें सख्यातका कथन करना चाहिये ।

§ १२९ आनत कल्पके लेकर नौ प्रवेयक तकका कथन नारकियोंके समान है । किन्तु

सखजा भागा । अर्मन्ध्रमया सखे भागा । अगुरिसादि [जाव] सम्बद्धा चि अणताणु-  
 चउत्स सक्रामया असखजा भागा । असक्राम० असखे० भागो । णवरि सम्बद्धे सखञ्ज  
 क्यपर्थ । समार्ण णरिथ भागाभागो । सम्बत्थ करण सुगम । एव जाव० ।

§ १३० परिमाणानु० दुबिहो णिरेसो—ओषण आदेसण य । ओषेण मिच्छत्त०  
 सम्म०-सम्मामि० सक्रामया दम्बपमाणेण केवडिया ? असखेजा । सोल्लसक०  
 णवणोक्क० सक्रामया केरिया ? अर्णता । एवं तिरिप्पत्ता० ।

§ १३१ आदसण शेख० अट्टवीस पयडीणं संक्रामया केरिया ? अमखेजा ।  
 एव सव्यणेख्य-पदिदियतिरिक्खुविय-देवा जाव णवगेवजा चि । पच्चि०तिरि०  
 छपस०-मणुमअपज०-अगुरिसादि जाव अवाइदा चि मक्खवीसपयडीणं सक्रामया  
 केरिया ? अमखेजा । मणुम्सु मिच्छत्तम्म सक्रामया मखेजा । सेमाअमसखेजा ।  
 मणुसपज०-मणुमिणी-सुव्वदुदवेसु सव्यपयडीण संक्रामया केवडिया ? सखेजा । एव  
 जाव अणाहारि चि णेदथ्य ।

§ १३२ रुत्ताणुगमेण दुबिहो णिरेसो—ओषण आदेसण य । ओषेण मिच्छ०-  
 मम्म०-सम्मामि० मक्रामया केवडि खेत्ते ? सोगम्म असखे भागो । एवमसक्रामया ।

इतनी विवेक्य है कि यहाँ मिथ्यात्वके संशयमक संख्यात बहुभागप्रमाण हैं और असंक्रामक  
 संख्यातके भागप्रमाण हैं । अनुसिखसं शब्द सर्वाथसिद्धि तकके क्षेत्रमें अनन्यनुबन्धीयतुच्छके  
 संशयमक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । असंक्रामक जीव असंख्यातके भागप्रमाण हैं । किन्तु  
 इतनी शिक्षणा है कि सर्वाथसिद्धिमें असंख्यातके खानमें संख्यातका कथन करना चाहिये ।  
 यहाँ सार प्रकृतियोंका भागाभाग नहीं है । सर्वत्र अत्य सुगम है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गस्थ  
 तक खानना चाहिये ।

§ १३ परिमाणानुमधी अथवा निर्देश वा प्रचारक है—ओपनिर्देश और आवेद-  
 निर्देश । आपसे मिथ्यात्व सम्बन्ध और सम्मिमिथ्यात्वके संशयमक चिन्ते हैं ? असंख्यात  
 है । सखरु कणाय और मो नाउपयथेके संशयमक चिन्ते हैं ? अनन्य है । इसी प्रकार तिर्यग्योमें  
 संख्या कइती चाहिये ।

§ १३१ आवेदम नारकियोमें अट्टारम प्रकृतियोंके संशयमक जीव चिन्ते हैं ? असंख्यात  
 है । इसी प्रकार मत्र नारकी, वैवेन्द्रियविशेषाधिक और मो वैदिक तकके क्षेत्रमें खानना चाहिये ।  
 वैवेन्द्रिय निवर्ण अथवा मनुष्य अथवा और अनुसिखसं शब्द अथवाचित तकके क्षेत्रमें  
 मत्तारम प्रकृतियोंके संशयमक जीव चिन्ते हैं ? असंख्यात है । मनुष्योंमें मिथ्यात्वके संशयमक जीव  
 संख्यात है । और प्रकृतियोंके संशयमक जीव असंख्यात है । मनुष्यपर्याप्त मनुष्यी और सर्वाथसिद्धि  
 के क्षेत्रमें मत्र प्रकृतियोंके संशयमक जीव चिन्ते हैं ? संख्यात है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गका तक  
 खानना चाहिये ।

§ १३२ एतानुमधी अथवा निर्देश वा प्रचारक है—ओपनिर्देश और आवेद निर्देश ।  
 आपसे मिथ्यात्व सम्बन्ध और सम्मिमिथ्यात्वके संशयमक जीव चिन्ते क्षेत्रमें रहते हैं ? सोउक  
 अर्णत्थयें अणपमाण परमें रहते हैं । इसी प्रकार सख प्रकृतियोंके अर्णत्थयके जीव भी सारके

णवरि मिच्छ०अमंका० मच्चलोगे । सोलसक०-णवणोक०मंकांमया मच्चलोए । अमंकांम० लोगस्स अमखे०भागो । एवं तिरिक्खा० । णवरि वाग्गक०-णवणोकमायाणं अमंकांमया णत्थि । सेमगइमग्गणासु मच्चपयडीणं मंकांमया जहामंभवममंकांमया च लोयस्स अमखे०भागो । एव जाव अणाहारि त्ति णेद्व्वं ।

§ १३३. पोयणाणुगमेण दुविहो णिद्वेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०संक्रामएहि केवडिय० ? लोगस्स अमखे०भागो अट्ट चोदमभागा देसूणा । अमंकांमएहि मच्चलोओ । सम्म०-सम्मामि० सकामए० अमंकांम० लोगस्स अमखे०-भागो अट्ट चोद० मच्चलोगो वा । सोलमक०-णवणोक०मंकांम० मच्चलोगो । अमंका० लोयस्स अमखे०भागो । णवरि अणताणु०४अमंका० ? अट्ट चोद० देसूणा ।

§ १३४. आदेसेण णेग्गय० मिच्छ०मंकांम० केव० ? लोगस्स अमखे०भागो । सेमपयडीणं मंकांम० दंमणतियअमंकांम० लोयस्स अमखे०भागो छ चोदस० । अणंताणु०४अमंका० सेत्त । पढमाए सेत्तमगो । विदियादि जाव सत्तमा त्ति मिच्छ०-

अमख्यातवें भानप्रमाण क्षेत्रमे रहते हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके असंक्रामक जीव सब लोकमे रहते हैं । सोलह कपाय और नौ नोकरपायोंके संक्रामक जीव सब लोकमे रहते हैं । तथा उनके असंक्रामक जीव लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रमे रहते हैं । इसी प्रकार तिर्य चोके जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि उनमें बारह कपाय और नौ नोकरपायोंके असंक्रामक जीव नहीं हैं । इनके अतिरिक्त शेष गति मार्गणाओंमें सब प्रकृतियोंके संक्रामक और यथासम्भव असंक्रामक जीव लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रमे रहते हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

§ १३३ स्पर्शानुगमशी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोवनिर्देश और आदेशनिर्देश । श्रोवमे मिथ्यात्वके संक्रामक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असख्यातवें भागका और वस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग क्षेत्रका स्पर्श किया है । मिथ्यात्वके असंक्रामकोंने सब लोकका स्पर्श किया है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक और असंक्रामक जीवोंने लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका वसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका और सब लोकरप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । सोलह कपाय और नौ नोकरपायोंके संक्रामक जीवोंने सब लोकका स्पर्श किया है । असंक्रामकोंने लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कके असंक्रामकों ने वसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है ।

§ १३४ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वके संक्रामक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । शेष प्रकृतियोंके संक्रामकोंने और तीन दर्शनमोहनीयके असंक्रामकोंने लोकके असख्यातवें भागप्रमाण और वसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कके असंक्रामकोंका स्पर्श क्षेत्रके समान है । पहली पृथिवीमें स्पर्श क्षेत्रके समान है । दूसरीसे लेकर सातवीं तक प्रत्येकमें

१ आ०प्रतौ अणताणु०४ असखे०भागो अट्ट इति पाठ । २ आ०प्रतौ अणताणु०४ असखे० सेत्त इति पाठ ।

सकाम० लोगस्त असखे० मागो । सेसपयडीण सकाम० दसणतियअसकाम० लोग० असखे० मागो एह-वे-तिणिण-वचारि-यंच-अचोरम० इत्था । अणताणु० ४अमक० खेत ।

§ १३५ तिरिक्खेसु मिच्छ सकाम० लोयस्त असखे० मागो छ चोरस० देवणा । असकाम० सम्बलोओ । सम्म०-सम्मामि सकाम-असकाम० लोयस्त असखे० मागो सम्बलोओ वा । सोलसक०-णवणोक० संकाम० सम्बलोओ । अणताणु० ४असक० खेत ।

§ १३६ पंचिदियतिरिक्खतिप मिच्छ० संका० लोगस्त असखे० मागो छ चोरस देवणा । सेसपयडीण संकाम० दसणतियअसकाम लोयस्त असखे० मागो सम्बलोओ वा । अणताणु ४अमक खेत ।

§ १३७ पंचि तिरि-अपड० सम्म-सम्मामि० सकाम०-असकाम० सोलसक०-णवणोक संकाम लोयस्त असखे मागो सम्बलोओ वा । मिच्छ० असका० एसी' खेव मगो । एवं मणुसतिप । णवरि मिच्छ० संकाम० सोलसक०-णवणोक असका० लोयस्त

मिष्वात्त्वे संकामकर्त्ते लोके असक्यात्तर्त्तं मागप्रमाद्य क्षेत्रस्य स्यात् किंवा है । सेप प्रकृतियोंके संकामकर्त्ते चोर हीन इरानमोहनियके असकामकर्त्ते लोके असक्यात्तर्त्तं माग क्षेत्रस्य तथा इस गालीके चौरइ मगोमिस डुअ कम एक माग कुअ कम दो माग कुअ कम हीन भाग डुअ कम चार मार, डुअ कम पांच मग और कुअ कम इह मागप्रमाद्य क्षेत्रस्य स्यात् किया है । अतन्मणु-वग्भी चतुष्के असकामकर्त्तस्य स्यात् लोके समाम है ।

§ १३५ तिर्यं चोसिं मिष्वात्त्वे संकामकर्त्ते लोके असक्यात्तर्त्तं माग और वसनपडीने चौरइ मगोमिसे कुअ कम इह मागप्रमाद्य क्षेत्रस्य स्यात् किया है । असकामकर्त्ते सब लोक क्षेत्रस्य स्यात् किया है । सम्पत्त्व और सम्बमिष्वात्त्वे संकामकर्त्ते और असकामकर्त्ते लोके असक्यात्तर्त्तं माग और सब लोकप्रमाद्य क्षेत्रस्य स्यात् किया है । सोलस कयाव और नौ नोक्यावोंके संकामकर्त्ते सब लोकस्य स्यात् किया है । अतन्मणुवग्भीचतुष्के असकामकर्त्तस्य स्यात् क्षेत्रके समान है ।

§ १३६ पंचेन्द्रिय तिर्यंचत्रिकर्त्ते मिष्वात्त्वे संकामकर्त्ते लोके असक्यात्तर्त्तं माग और वसनपडीने चौरइ मगोमिसे कुअ कम इह मागप्रमाद्य क्षेत्रस्य स्यात् किया है । सेप प्रकृतियोंके संकामकर्त्ते चोर हीन इरानमोहनियके असकामकर्त्ते लोके असक्यात्तर्त्तं माग और सब लोक प्रमाद्य क्षेत्रस्य स्यात् किया है । अतन्मणुवग्भीचतुष्के असकामकर्त्तस्य स्यात् क्षेत्रके समान है ।

§ १३७ पंचत्रिय तिर्यं च अपवर्त्तकर्त्ते सम्पत्त्व और सम्बमिष्वात्त्वे संकामकर्त्ते और असकामकर्त्ते तथा सोलस कयाव और नौ नोक्यावोंके संकामकर्त्ते लोके असक्यात्तर्त्तं माग और सब लोकप्रमाद्य क्षेत्रस्य स्यात् किया है । यहां मिष्वात्त्वे असकामकर्त्तस्य भी स्यात् मंग है । अपवर्त्त मिष्वात्त्वे असकामकर्त्ते भी लोके असक्यात्तर्त्तं माग और सब लोकप्रमाद्य क्षेत्रस्य स्यात् किया है । इसी प्रकार मणुप्यत्रिकर्त्ते अगम्य चाश्रित । किन्तु इतनी विशेषता है कि मिष्वात्त्वे संकामकर्त्ते तथा सोलस कयाव और नौ नोक्यावोंके असकामकर्त्ते लोके असक्यात्तर्त्तं

अमखे० भागो ।

§ १३८. देवेषु मिच्छ० सकाम० लोयस्य अमखे० भागो अद्द चोदस० देवणा ।  
सैमपयडीणं सकाम० दसणतियअमंका० लोग० अमखे० भागो अद्द णव चोद०  
देवणा । अणताणु० ४ अमका० लोग० अमखे० भागो अद्द चोदम० देवणा । एवं भवण०-  
वाणवेतर-जोडसिएसु । णवरि सगपोमणं कायच्चं ।

§ १३९. मोहम्मिमाण० देवोघं । सणक्कुमारगदि जात्र सहस्मार ति अद्दवीम-  
पयडीण सकाम० दसणतिय-अणंताणु० ४ अमंका० लोयस्स अमखे० भागो अद्द चोद०  
देवणा । आणदादि जात्र अचुदा ति अद्दवीमं पयडीणं संकाम० दंसणतिय-अणताणु०-  
४ अमकाम० लोग० अमखे० भागो छ चोदम० देवणा । उवरि सेत्तमगो । एवं जाव० ।

❧ शाखाजीवेहि कालो ।

§ १४०. सुगममेदमहियारमंभालणसुत्त ।

❧ सब्बकम्ममाणं संकामया केवचिरं कालादो होति ?

§ १४१. एद पि सुत्त सुगम ।

भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श क्रिया है ।

§ १३८. देवोंमें मिच्छात्वके सकामकोंने लोकके असख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । शेष प्रकृतियोंके सकामकोंने और तीन दर्शनमोहनीयके अमकामकोंने लोकके अमख्यातवें भाग और त्रसनालीके चादह भागोंमेंसे कुछ कम आठ तथा कुछ कम नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कके असकामकोंने लोकके असख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग-  
प्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । इसी प्रकार भजनरानी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विज्ञेयता है कि अपना अपना स्पर्श कहना चाहिये ।

§ १३९ साधर्म और गेशान कल्पमें सामान्य देवोंके समान स्पर्श है । सनत्कुमारसे लेकर सहस्त्रार कल्प तकके देवोंमें अष्टाईस प्रकृतियोंके सकामकोंने तथा तीन दर्शनमोहनीय और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके असकामकोंने लोकके असख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । आनतसे लेकर अच्युत कल्प तकके देवोंमें अष्टाईस प्रकृतियोंके सकामकोंने तथा तीन दर्शनमोहनीय और अनन्तानुबन्धी चतुष्कके असकामकोंने लोकके असख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । अच्युत स्वर्गसे ऊपर स्पर्श क्षेत्रके समान है । इसी प्रकार अनाहारको तक जानना चाहिये ।

\* अब नाना जीवोंकी अपेक्षा कालका अधिकार है ।

§ १४० यह सूत्र सुगम है, क्योंकि इस द्वारा केवल अधिकारकी संभाल की गई है ।

\* सब कर्मोंके संक्रामक जीवोंका कितना काल है ।

§ १४१ यह सूत्र भी सुगम है ।

⊗ सम्बद्धा ।

§ १४० आणासीवे पहुष सम्बद्धमाण सक्रमयपनाहस्त सम्बद्धल षोष्णेदा-  
दंसभादो ।

§ १४१ सपदि देसामासियसुचेनेदं धृचिवांससपत्न्यणहृद्युधारण वष्यस्तामो ।  
त सदा—कालाणुगमेण दुविहो गिरेमो—ओषण आदेसेण य । ओषण अह्वावीसपयडीणं  
सकामया केवपिर० ? सम्बद्धा । मिच्छ -सम्म०असकामया सम्बद्धा । सम्मामि०  
अणंताणु घउअसक जह० एगसमओ समयूणावलिपा, उअ० पस्सिदो० असस्ते०-  
मामो । धारसक०-णवणोक अमका० अह एगस०, उअ अतोमु० । एव चदुसु गठीसु ।  
णवरि मणुमगद्विदिग्घिसेसगदीसु धारसक०-ववणोक असकामया णत्थि । अणंताणु  
असक जह० एगसमओ । मणुसत्थिए अणताणु०असक जह० एगसमओ, उअ  
अतोमुहुच । मनुमपज०-मणुसिणीसु सम्मामि०असका जह० एगसमओ, उअ  
अतोमुहुच । पविदियठिरिक्खअपज०-अणुदिसादि आब सम्बद्धा चि सत्तावासं पयहीणं  
सक क्व ? सम्बद्धा । सम्बद्धे० अणताणु०असकामया अह समयूणावलिपा,  
उअ अतोमु । मणुसअपज सम्म०-समामि०सक -असक० अह एगस०, उअ०

⊗ सर्वदा काल है

§ १४२ क्योकि माया जीवोधी अपेक्षा सब कर्मोके संक्रम कर्मवत्त जीवोकि प्रवाहक  
कमी भी विच्छेद नहीं देना थाय है ।

§ १४३ मया यह सूत्र ब्रह्मपर्यक ह अतः इत्थे सूचित होन्वासे अपेक्ष कर्मक  
करनेके द्विरे ठकारकाये कथ्यते हैं । यथा—कालाणुगमन्नी अपेक्षा निर्देशो दो प्रश्नका ह—कोप-  
निर्देशो और आदेशानिर्देशा । अ पसे अह्वांस प्रकृतिवैकि संक्रमक जीवोअ कियना काल है ?  
सब काल है । मिच्छात्व और सम्बन्धत्वके अंतर्भावक जीवोअ सब काल ह । सम्यग्मिच्छात्वके  
अंतर्भावक जीवोअ अबन्ध काल एक समय है । अन्त्यानुबन्धी चतुष्के अंतर्भावक जीवोअ  
अबन्ध काल एक समयक एक आवृत्ति है ; तथा न्न दोनोके अंतर्भावक जीवोअ उत्कृष्ट काल  
पन्थके अंतर्भावक मगप्रमाअ है । बारह कयाब और नौ नोकयायोके अंतर्भावकौअ अबन्ध  
काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तमुहुत है । इसी प्रकार चारों गतियोमें जामना चादिय ।  
किन्तु इतनी विवेकता ह कि मनुष्यगतिके सिध्द दोय गतियोमें बारह कयाब और नौ नोकयायोके  
अंतर्भावक जीव नहीं है । किन्तु इनमें जामन्तानुबन्धीचतुष्के अंतर्भावक जीवोअ अबन्ध काल  
एक समय है ; मनुष्यविकर्म अन्त्यानुबन्धीचतुष्के अंतर्भावक जीवोअ अबन्ध काल एक  
समय है और उत्कृष्ट काल अन्तमुहुत है । मनुष्यपर्याय और मनुष्यनिर्देशोमें सम्यग्मिच्छात्वके  
अंतर्भावकौअ अबन्ध काल एक समय है तथा उत्कृष्ट काल अन्तमुहुत है । पंचेभियु सिर्वाअ  
अपर्याय और अनुविरासे मकर सर्वावसिद्धि तकके दोबोमें सत्ताइस प्रकृतियोके संक्रमकौअ  
कियना काल है । सब काल है । सर्वावसिद्धिमें अन्त्यानुबन्धीचतुष्के अंतर्भावकौअ अबन्ध  
काल एक समय कन एक आवृत्ति है और उत्कृष्ट काल अन्तमुहुत है । मनुष्य अपर्यायकेमें  
सम्यक्त्व आर सम्यग्मिच्छात्वके संक्रमकौ आर अंतर्भावकौअ अबन्ध काल एक समय ह तथा

पल्लितो० अमंसे०भागो । सोलमक०-णवणोक०संकाम० जह० गुदाभव०, उक्०  
 पल्लितो० अमंसे०भागो । एवं जाव० ।

उत्कृष्ट काल पल्पके अमर्यातवे भागप्रमाण है । सोलह कपाय और नौ नोकपायोंके संकामकोंका जघन्य काल गुदाभ्रमप्रमाण है तथा उत्कृष्ट काल पल्पके अमर्यातवे भागप्रमाण है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

**विशेषार्थ—**नाना जीवोंकी अपेक्षा अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्ता और यवासम्भ्र उतका बन्ध सदा पाया जाता है अतः ओषधमें सब प्रकृतियोंके संक्रमका काल सर्वदा कहा है । किन्तु असक्रमकी अपेक्षा कुछ विशेषता है । वात यह है कि मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें मिथ्यात्वका सक्रम नहीं होता है और सम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें सम्यक्त्वका संक्रम नहीं होता है, किन्तु उन दोनों गुणस्थानकालोंमें जीव सदा पाये जाते हैं अतः मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके असक्रमकोंका काल भी सर्वदा कहा है । सम्यग्मिथ्यात्वका संक्रम सासादन और मिन गुणस्थानमें नहीं होता है, किन्तु नाना जीवोंकी अपेक्षासे भी सासादनका जघन्य काल एक समय है, अतः सम्यग्मिथ्यात्वके असंक्रमकोंका जघन्य काल एक समय रहा है । जिन्होंने अनन्तानुबन्धीकी विनियोजना की है उनके अनन्तानुबन्धीचतुष्करी विनियोजना करते समय अन्तमें एक समय कम एक आयलि काल तक अनन्तानुबन्धीका संक्रम नहीं होता । इसीसे अनन्तानुबन्धीचतुष्करीके असक्रमकोंका जघन्य काल एक समय कम एक आयलिप्रमाण कहा है । सासादन या सम्यग्मिथ्यात्वके गुणस्थानका उत्कृष्ट काल पल्पके अमर्यातवे भागप्रमाण है, इसीसे सम्यग्मिथ्यात्वके असक्रमकोंका उत्कृष्ट काल पल्पके अमर्यातवे भागप्रमाण कहा है । जिन्होंने अनन्तानुबन्धीचतुष्करी विनियोजना की है ऐसे जीव मिथ्यात्वमें या सासादनमें गये और वहाँ अनन्तानुबन्धीके सक्रमक होनेके पूर्व ही अन्य इसी प्रकारके जीव वहाँ उत्पन्न हुए । इस प्रकार ऐसे जीव वहाँ उक्त प्रकारसे यदि निरन्तर उत्पन्न होते रहे तो पल्पके अमर्यातवे भागप्रमाण काल तक ही उत्पन्न हो सफते हैं इससे प्रागे नहीं, इसीसे वहाँ अनन्तानुबन्धीचतुष्करीके असंक्रमकोंका उत्कृष्ट काल पल्पके अमर्यातवे भागप्रमाण कहा है । चारह कपायों और नौ नोकपायोंके असक्रमकोंका जघन्य काल एक समय उपशमश्रेणिकमें मरणकी अपेक्षा से और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक प्रकृतिके उत्कृष्ट उपशमकालकी अपेक्षासे कहा है । आशय यह है कि नाना जीवोंने उक्त प्रकृतियोंका उपशम किया और जिस समय जिस प्रकृतिका उपशम किया उसके दूसरे समयमें मरकर उनके देव हो जाने पर उक्त प्रकृतियोंके असक्रमका जघन्य काल एक समय प्राप्त हो जाता है । इसी प्रकार निरन्तरक्रमसे नाना जीवोंने उक्त प्रकृतियोंका यदि उपशम किया तो भी उस उपशमकालका जोड़ अन्तर्मुहूर्तसे अधिक नहीं प्राप्त होता, इसलिये उक्त प्रकृतियोंके असक्रमका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्तसे अधिक नहीं होता । निम्नलिखित कुछ अपवादोंको छोड़कर यह शोध व्यवस्था चारों गतियोंमें भी बन जाती है । अब कहाँ क्या अपवाद हैं उनका सकारण उल्लेख करते हैं—उपशमश्रेणिकी प्राप्ति मनुष्यगतिमें ही सम्भव है अतः मनुष्यगतिके सिवा शेष तीन गतियोंमें चारह कपाय और नौ नोकपायोंके असक्रमकोंका निषेध किया है । चारों गतियोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्करीके असक्रमकोंका जो जघन्य काल एक समय बतलाया है सो वह गति परिवर्तनकी अपेक्षासे बतलाया है । उदाहरणार्थ नरकगतिमें अनन्तानुबन्धीचतुष्करीके असक्रमक नाना जीव एक समय तक रहे और वे दूसरे समयमें मरकर अन्य गतिमें चले गये तो नरकगतिमें अनन्तानुबन्धीचतुष्करीके असक्रमकोंका जघन्य काल एक समय बन जाता है । इसी प्रकार शेष तीन गतियोंमें उक्त काल घटित कर लेना चाहिये । या ऐसे नाना



⊙ पाषाणीवेहि अंतर ।

§ १४४ सुगममद, अहिपारसमालम्भत्वावतादो ।

⊙ सत्त्वकम्मसकामयार्थं शक्ति अंतर ।

§ १४५. एदस्स विवरणमुच्चारणासुरेण वत्थस्सामो । व च्छा—अतराणुगमेण

जीव जो एक समयवाद् अनन्तानुबन्धीवस्तुच्छेद संकम करी देव मनुष्य वा तिर्बजोमिं उत्पन्न हुए हैं तो इनकी अपेक्षासे भी बड़ा एक समय कल्प प्राप्त हो जाता है, क्योंकि नरकगतिसे साक्षात्समाप्त उत्पन्न नहीं होता और मिथ्यात्वमें उत्पन्न सद्योजय उत्पन्नसे अन्तर्मुहूर्तसे पहिले मरना नहीं होता । अथपि सामान्य मनुष्योंकी संख्या अर्धकथाप है पर अनन्तानुबन्धीकी विसंबो-जया करनेवाले मनुष्यजिन्की संख्या संख्या ही है । ऐसे जीव यदि मिथ्यात्व और साक्षात्तमें इस क्रमसे उत्पन्न हो जिससे वहाँ अनन्तानुबन्धीवस्तुच्छेद अर्धकथामकोष परम्परे बना रहे तो ऐसे अर्धकथ जोड़ अन्तर्मुहूर्तसे अधिक नहीं हो सकता अथ एक हीन प्रकारके मनुष्योंमें अनन्तानु-बन्धीवस्तुच्छेद अर्धकथामकोष उत्पन्न अथ अन्तर्मुहूर्त कहा है । इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनिर्घोमें सम्यग्मिथ्यात्वके अर्धकथामकोष अथवा एक समय और उत्पन्न काल अन्त-र्मुहूर्त प्राप्त कर केना चाहिये क्योंकि वहाँ मानाजोबोकी अपेक्षा साक्षात्तकथ अथवा एक समय और साक्षात्त या सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्वान्तकथ उत्पन्न काल अन्तर्मुहूर्त ही प्राप्त होता है । पंचमिन्द्रिय तिर्बज अपवातकोके एक मिथ्यावृत्ति गुणस्वान्त होनेसे इनके मिथ्यात्वकथ संकम सम्भव नहीं और अनुदिशसे अथ सर्वसंविद्धि तकके देहोंमें एक अतिरतसम्पत्ति गुणस्वान्त होनेसे इनके सम्पत्तकथ संकम सम्भव नहीं, इसीसे इनके सत्त्वार्थ प्रवृत्तियोंके संकमकथ उत्पन्न किया है । सर्वसंविद्धिमें संकम्यत जीव ही होते हैं, अथ वहाँ अनन्तानुबन्धीवस्तुच्छेद अर्धकथामको-ष अथवा एक समय कथ एक अथवा और उत्पन्न काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । मनुष्य अपवात वा उत्पन्न मार्गात्त है । इसका अथवा काल उत्पन्नकथप्रमाण और उत्पन्न काल परम्परे अर्धकथामकोष भागप्रमाण है अथ वहाँ सोम्य कथाप और ती धोकथायोके संकथामकोष अथवा और उत्पन्न काल एक प्रमाण कहा है । सम्पत्तकथप्रवृत्ति और सम्पत्तमिथ्यात्वके संकथामकोष उत्पन्न कथ वा परम्परे अर्धकथामकोष भागप्रमाण ही है किन्तु अथवा कालमें इत्य विवेचना है । वाग यह है कि ऐसे माना जीव जिन्हे सम्पत्त और सम्पत्तमिथ्यात्वके संकथाममें एक समय शेष है उत्पन्नपर्याप्त मनुष्योंमें उत्पन्न हुए और फिर द्वितीयादि समयोंमें सम्पत्त और सम्प-त्तमिथ्यात्वकथ संकम करनेवाले अथवा जीव नहीं उत्पन्न हुए वा परी उत्पन्नमें उत्पन्नपर्याप्त मनुष्योंमें इन वा प्रवृत्तियोंके संकथामकोष अथवा कथ एक समय बन जाता है । इसी प्रकार इन की प्रवृत्तियोंके अथवाअथवा अथवा और उत्पन्न कथ पठित करना चाहिये । इसी प्रकार अथवाअथवा भागवातक अथवा अपनी अपनी विहायको समझकर यथासम्भव प्रवृत्तियोंके संकथामकोष और अर्धकथामको-ष कथ करना चाहिये ।

⊙ अथ नाना जीवोंकी अपवा अन्तरकालकथ अधिकार है ।

§ १४६ पर मूय सुगम दे, क्योंकि इसका अथ एक वाग अथवाअथकी संकथ करना है ।

⊙ सब कथोंके संकथामकोष अन्तरकाल नहीं है ।

§ १४७ अथ उत्पन्नकथा वाग इन सूत्रकथ विवरण करते हैं । वच—अन्तर्मुहूर्तमकी अपेक्षा

मच्चोवमकरणे । ण च मच्चपणोवमंताणं मकमगंभवो, विरोहादो । जड एवं, मिच्छत्तस्म वि तत्थ मकमो मा होउ, उवमंतत्त पडि विसेयाभावादो त्ति ? ण, दंगणतियम्मि उदयाभावो चैव उवममो त्ति गहणादो ।

§ १५१. एवं मिच्छत्तणिकंभणेण सेमपयडीणमोघेण सण्णियामं कारुण सम्मत्त-मम्माभिच्छत्तादीणमप्पण कुणमाणो उत्तरमुत्त भणड ।

❧ एव सण्णियासो कायव्वो ।

§ १५२. एवमेदीए दिमाए सेसकम्माणं पि सण्णियासो' णेटव्वो त्ति भणिटं होड ।

शंका—मिश्रित्वका संक्रामक जीव उक्त इधीस प्रकृतियोंका असंक्रामक कैसे है ?

समाधान—उक्त इधीस प्रकृतियोंका सर्वोपशम हो जानेपर वह उनका असंक्रामक होता है । यदि कहा जाय कि जिन प्रकृतियोंका सर्वोपशम हो गया है उनका भी संक्रम सम्भव है सो यह बात नहीं है, क्योंकि ऐसा माननेमें विरोध आता है ।

शंका—यदि ऐसा है तो मिश्रित्वका भी वहाँ संक्रम मत होओ। क्योंकि उपशान्तपनेकी अपेक्षा उनमें उगमें कोई विद्येयता नहीं है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंमें उनका उदयमें न आना ही उपशम है यह अर्थ लिया गया है ।

विशेषार्थ—सूत्रमें यह बतलाया है कि जो मिश्रित्वका संक्रामक है वह कदाचित् अप्रत्याख्यानपरणचतुष्क आदि २१ प्रकृतियोंका संक्रामक है और कदाचित् अराक्रामक । जब तक इन इधीस प्रकृतियोंका उपशम नहीं होता तब तक संक्रामक है और उपशम हो जानेपर अराक्रामक है । इस पर यह शंका हुई कि जो द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टि २१ प्रकृतियोंका उपशम करता है उसके दर्शनमोहनीयत्रिकका भी उपशम रहता है, अतः जेने उसके २१ प्रकृतियोंका संक्रम नहीं होता वैसे मिश्रित्वका भी संक्रम नहीं होना चाहिये, इसलिये मिश्रित्वका संक्रामक उक्त २१ प्रकृतियोंका अराक्रामक भी है यह कहना नहीं बनता है । उस शंकाका जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंका उदयमें न आना यही उनका उपशम है, अतः उनका उपशम रहते हुए भी संक्रम बन जाता है इसलिये चूणिसूत्रकारने जो यह कहा है कि 'जो मिश्रित्वका संक्रामक है वह शेष २१ प्रकृतियोंका कदाचित् संक्रामक है और कदाचित् असंक्रामक है' सो उन कथनमें कोई बाधा नहीं आती है । आशय यह है कि उपशमनाके विधानानुसार २१ प्रकृतियोंका सर्वोपशम होता है किन्तु तीन दर्शनमोहनीयका उपशम हो जाने पर भी उनका युवासम्भन संक्रम और अपनर्पण ये दोनों क्रियाएँ होती रहती हैं, अतः उक्त कथन बन जाता है ।

§ १५१ इस प्रकार मिश्रित्वको विवक्षित करके शेष प्रकृतियोंका ओघसे सन्निकर्ष बतला कर अथ सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिश्रित्व आदि प्रकृतियोंको प्रधान करके आगेका सूत्र कहते हैं ।

❧ इसी प्रकार शेष कर्मोंका सन्निकर्ष करना चाहिये ।

§ १५२. उस प्रकार इसी पद्धतिसे शेष कर्मोंके सन्निकर्षका भी कथन करना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

१ ता० प्रती -समवाचिरोहादो इति पाठ । २ आ०पती एवमेदीए सेसकम्माण इति पाठः ।  
३ ता०प्रती -कम्माण सण्णियासो इति पाठ ।

पदमसम्मज्जुप्पद्वयपदमसमए तदभावाणे । अणत्थ मन्तव्यं वि तदुबलमादो ।

⊗ सम्मत्तस्स असकामओ ।

§ १४८ कुणो ? दोण्ह पणोप्पपरिहारभावद्विदवादो । एत्थ मिच्छत्तस्स सकामओ पि अहियारसवओ कयव्वो । सुगममण्ण ।

⊗ अप्यताणुपधीय सिया कम्मसिओ सिया असकामओ । जदि कम्मसिओ सिया सकामओ सिया असकामओ ।

§ १४९ एत्थ वि पुम्ब व अहियारसवओ कयव्वो, तण मिच्छत्तमकामओ मग्गाइहो अणत्तणुवधिउत्तस्स मिया कम्मसिओ । तेम्मिभिसिओयणाए सिया अकम्ममिओ, विमवोयणाए णिस्सतीकरणस्स वि समवादो । तत्थ चह कम्मसिओ तो तमि सकम भयणिओ, आबलियपधिउत्तकम्मियम्मि तदणुवलमादो इयरत्थ वि तदुबलमादो पि सुत्तवो ।

⊗ सेसाणमेहवीसाए कम्मार्थं सिया सकामओ सिया असकामओ ।

§ १५० एत्थ वि पुम्ब व अहियारसवओ । कयमेदेसिमसकामयत्तमेउत्त व ?

समर्थं सम्पन्नित्वात्स संकम न होकर वह सम्यक् सर्वत्र पाया जाता है ।

⊗ यह सम्पत्त्यका असकामक है ।

§ १४८ क्योंकि व होतो संकम एक दूसरेके अभावमें पाव जात है । आशय यह है कि मिच्छात्तक संकम सम्मत्ति बीजके द्वारा है और सम्यक्त्वक संकम मिच्छात्ति बीजके द्वारा है, अतः इनका एक मात्र पाया जना सम्भव नहीं है । इस सूत्रमें 'मिच्छत्तस्स संकमओ' इस पदक अर्थपर अन्वय कर कर्त्तव्य चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

⊗ उसके अनन्तानुबन्धीयत्तुष्ककी कदाचित् सत्ता है और कदाचित् सत्ता नहीं है । यदि सत्ता है तो वह अनन्तानुबन्धीयत्तुष्कक कदाचित् संकामक है और कदाचित् असंकामक है ।

§ १४९ यहाँ भी पूर्ववत् अर्थपर अन्वय कर कर्त्तव्य है । सन्धि यह अर्थ हुआ कि मिच्छात्तक संकामक जो सम्मत्ति बीज है वह जब तक अनन्तानुबन्धिपयोधी निर्मयोदना नहीं हुए है तब तक वनधी सत्ताशय है और अनन्तानुबन्धिपयोधी निर्मयोदना है कर अभाव हो जानेपर वनधी सत्तासे रहित है । अब यदि सत्ताशय है तो इसके अन्वय अत्रतीय है, क्योंकि अनन्तानुबन्धिपयोधी सत्ता आबलिये मीतर प्रसिद्ध हो जानेपर वनधी संकम नहीं पाया जाता । किन्तु अन्वय पाया जाता है वह इस सूत्रक अर्थ है । वास्तव्य यह है कि एमे बीजक निर्मयोदनाकी अन्तिम पक्षिके पतनके समय एक समय कम एक अन्वयि कर तक अनन्तानुबन्धीय संकम नहीं जाता ।

⊗ यह अथ इक्षीस प्रकृतिपयोक्ष कदाचित् सकामक है और कदाचित् असंकामक है ।

§ १५० यहाँ भी पूर्ववत् अर्थपर अन्वय कर कर्त्तव्य है । सन्धि यह अर्थ हुआ कि 'मिच्छत्तस्स संकमओ' पदक अन्वय कर सेना चाहिये ।

१५५. अणंताणुबंधिकोधं संकामंतो मिच्छ० गिया संका० सिया अगंका० ।  
मम्म०-मम्मामि० गिया अत्थि सिया णत्थि । जट्टि अत्थि, सिया संकाम० गिया  
अगंका० । पण्णारसरू०-णवणोक्क० णियमा संकामओ । एवं तिण्हमणंताणुबंधि-  
कसायाणं ।

१५६. अपच्चत्तराणकोधं संकामंतो मिच्छ०-सम्म०-मम्मामि०-अणंताणु०४  
सिया अत्थि गिया णत्थि । जड अत्थि, गिया सकाम० गिया अगंका० । दस-  
कमायाण णियमा संकामओ । लोभगंजलण-णवणोक्कमायाणं सिया सकाम० सिया  
अगंका० । एवं पच्चत्तराणकोह ।

§ १५५ जो अनन्तानुबन्धी क्रोधका सकामक है वह मिश्रव्याप्तका कदाचित् सकामक है और कदाचित् असकामक है। सम्यक्त्त्व और सम्यग्मिश्रव्यात्त्व कदाचित् है और कदाचित् नहीं है। यदि है तो इनका कदाचित् सकामक है और कदाचित् असकामक है। किन्तु पन्द्रह कपाय और नौ नोकपायोंका नियमसे सकामक है। मान आदि तीन अनन्तानुबन्धियोंका दस प्रकार कथन करना चाहिये।

विशेषार्थ—अनन्तानुबन्धीका सकाम मिश्रव्याप्ति और सम्यग्दृष्टि दोनोंके सम्भव है किन्तु मिश्रव्यात्त्वका सकाम केवल सम्यग्दृष्टिके ही होता है, अतः जो अनन्तानुबन्धी क्रोधका सकामक है वह मिश्रव्यात्त्वका कदाचित् सकामक है और कदाचित् असकामक है यह कहा है। जो अनादि मिश्रव्याप्ति है या जिस मिश्रव्याप्तिने सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्रव्यात्त्वकी उद्वेलना कर दी है उसके सम्यक्त्त्व और सम्यग्मिश्रव्यात्त्व नहीं हैं शेषके हैं। तथा सामान्य और मिश्र गुणस्थानमें तो इनका मद्भाज नियमसे है। किन्तु एक तो इन दोनों गुणस्थानोंमें दर्शनमोहनीयकी प्रकृतियोंका सकाम नहीं होता और दूसरे उद्वेलनाके अन्तमें जब इनकी सत्ता आपत्तिके भीतर प्रविष्ट हो जाती है तब इनका सकाम नहीं होता, अतः 'जो अनन्तानुबन्धीका सकामक है वह सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्रव्यात्त्वका कदाचित् सकामक है और कदाचित् असकामक नहीं है' यह कहा है। यहाँ इतना विशेष और जानना चाहिये कि सम्यक्त्वका सकाम सम्यग्दृष्टि अवस्थामें नहीं होता है। शेष कथन सुगम है।

§ १५६ जो अप्रत्याख्यानावरण क्रोधका सकामक है उसके मिश्रव्यात्त्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिश्रव्यात्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्क कदाचित् है और कदाचित् नहीं है। यदि है तो इनका कदाचित् सकामक है और कदाचित् असकामक है। तथापि अप्रत्याख्यानावरण मान आदि दस कपायोंका नियमसे सकामक है। किन्तु लोभ सञ्चलन और नौ नोकपायोंका कदाचित् सकामक है और कदाचित् असकामक है। इसी प्रकार प्रत्याख्यानावरण क्रोधका सकाम करने-वाले जीवके जानना चाहिये।

विशेषार्थ—जिस जीवने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना और तीन दर्शनमोहनीयका क्षय कर दिया है उस अप्रत्याख्यानावरणक्रोधके सकामकके ये सात प्रकृतियाँ नहीं पाई जाती, शेषके पाई जाती हैं। उसमें भी सम्यक्त्त्व और सम्यग्मिश्रव्यात्त्वके सत्त्वके सम्बन्धमें और भी कई नियम हैं जिनका यथायोग्य पहले विवेचन किया ही है उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिये। इन सात प्रकृतियोंका सत्त्व रहने पर भी अप्रत्याख्यानावरण इतना सकाम होता है और अप्रत्याख्यानावरण इतना सकाम नहीं होता, अतः जो अप्रत्याख्यानावरण क्रोधका सकामक है वह इनका कदाचित् सकामक है और कदाचित् असकामक नहीं है यह कहा है। अन्तरकरण करनेके बाद

११८३ सपदि एदण सुतेण सुचिदत्वविवरणदुमुधारण वत्तरसामो । तं  
अहा—सम्मत्तस सक्कमओ मिच्छ० अमका० । सम्मामि -भारसक०-णवणोक्क० मियमा  
सक्कमओ । अणताणु षउक्कस मिया सक्कमओ मिया असक्कमओ ।

११८४ सम्मामि० सक्कामेतो मिच्छ०-सम्म० अणताणु०४ मिया अरिय मिया  
णत्वि । अह अरिय, मिया सक्का० मिया अमक्का० । भारसक०-णवणोक्क० मिया सक्का०  
मिया असक्का० ।

११९ अव इत्त सूत्रसे सुचित होनेवाले अर्थात् विचारण करनेसे सिद्ध उच्चारणको  
वतव्य है । यथा—जो सम्यक्त्वका संक्षमक है वह मिथ्यात्वका असंक्षमक है; सम्यग्मिथ्यात्व  
कारण कण्य और नो मोक्षप्रयोध संक्षमक है तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्कका कदाचिन्  
संक्षमक है और कदाचिन् असंक्षमक है ।

विशेषार्थ—सम्यक्त्वका संक्षम मिथ्यात्वमें होता है किन्तु वहाँ मिथ्यात्वका संक्षम नहीं  
होता अतः जो सम्यक्त्वका संक्षमक है वह मिथ्यात्वका असंक्षमक है यह कहा है । सम्ममि  
थ्यात्व कारण कण्य और नो माक्षप्रयोध संक्षम सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि दोनोंके हाता है,  
अतः सम्यक्त्वके संक्षमकको एक प्रवृत्तियोंका संक्षमक नियमसे वतव्यवा है । यद्यपि अनन्तानु-  
बन्धीचतुष्कका संक्षम सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि दोनोंके होता है तथापि जिसने अनन्तानुबन्धी  
चतुष्ककी विसंयोजना की है उसके मिथ्यात्वमें आनपर एक आशङ्किकत्वका इनका संक्षम नहीं  
हाता अतः सम्यक्त्वके संक्षमकको अनन्तानुबन्धीचतुष्कका कदाचिन् संक्षमक और कदाचिन्  
असंक्षमक वतव्यवा है ।

११९ जो सम्यग्मिथ्यात्वका संक्षमक है उसके मिथ्यात्व सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धी  
चतुष्कका कदाचिन् सत्त्व है और कदाचिन् सत्त्व नहीं है । यदि सत्त्व है तो वह इनका कदाचिन्  
संक्षमक है और कदाचिन् असंक्षमक है । बारह कण्य और नो मोक्षप्रयोध कदाचिन् संक्षमक  
है और कदाचिन् असंक्षमक है ।

विशेषार्थ—सम्यग्मिथ्यात्वका संक्षम करनेवाले जिसने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी  
विसंयोजना की है और जो इरान्तोद्देशनीयकी अपेक्षा करत हुए मिथ्यात्वका सब कर चुका है उसके  
अनन्तानुबन्धीचतुष्क और मिथ्यात्वका सत्त्व नहीं पया जाता । तथा जो सम्यक्त्वकी शोभनाकर  
चुका है उसके भी सम्यक्त्वकी सत्ता नहीं पाई जाती है । किन्तु इसके अतिरिक्त सम्यग्मिथ्यात्व-  
का संक्षम करनेवाले शेष सब जीवोंके उक्त प्रवृत्तियोंकी सत्ता पाई जाती है । सो यह जोह  
इत प्रवृत्तियोंका कदाचिन् संक्षमक है और कदाचिन् असंक्षमक है । मिथ्यात्वका मिथ्यात्व  
मुखस्थानमें असंक्षमक है और सम्यग्दृष्टि अपस्वामी संक्षमक है । सम्यक्त्वका सम्यग्दृष्टि अपस्वामे  
असंक्षमक है मिथ्यात्व मुखस्थानमें संक्षमक है । अनन्तानुबन्धीका दो स्वर्गोंमें असंक्षमक है ।  
शेष सब जगह संक्षमक है । एक ठा अब विसंयोजना करते हुए अनन्तानुबन्धीकी सत्ता आशङ्कि-  
प्रसिद्ध हो जाती है तब असंक्षमक है और दूसरे जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की है  
पसा अब अब मिथ्यात्वमें जाता है तब एक आशङ्किकत्व एक असंक्षमक है । इसी प्रकार बारह  
कण्य और नो माक्षप्रयोध वरराम होनेके पूर्व संक्षमक है और वरराम होने पर असंक्षमक है ।  
किन्तु श्रीमत्संख्यजनका ध्यातुर्नहीं संक्षमकके प्रारम्भ होनेपर असंक्षमक है । श्रीमत्संख्यजनसम्बन्धी  
इस विलेपताका अन्वय नहीं करी वस्तुतः न किया हो वहाँ भी इसी प्रकार जान लेना चाहिए ।

कृत्वाणक्रोधभगो । पञ्चखाणलोभं णियमा संकामेड । टग्कमाय-णवणोऋसायाणं सिया संकामओ मिया अमंकाम० । एवं पञ्चखाणलामं ।

§ १६०. क्रोधमंजलणं संकामंतो मिन्ड०-गम्म०-सम्मामि०-चारसक०-णवणोक० मिया अत्थि सिया णत्थि । जड अत्थि, मिया संका० मिया अमंका० । दोण्हं मंजलणाणं णियमा संकामओ । लोभमंजलणस्स मिया संकाम० मिया अमंका० ।

§ १६१. माणमंजलणं संकामंतो मायामंजलणस्स णियमा संकामओ । लोभ-संजल० सिया संका० सिया अमंका० । सेमं सिया अत्थि सिया णत्थि । जड अत्थि, सिया संकाम० सिया अमंका० ।

§ १६२. मायासंजलणं संकामंतो लोभसजल० सिया संका० सिया अमंका० ।

और चार अनन्तानुबन्धियोंका भंग अप्रत्याख्यानारण क्रोधके समान है। यह प्रत्याख्यानारण लोभका नियमसे सक्रामक है। तथा दस कपाय और ना नोकरायांका कदाचित् सक्रामक है और कदाचित् असक्रामक है। उन्ही प्रकार प्रत्याख्यानारण लोभका सक्रम करनेवाले जीवके विषयमें भी जानना चाहिये।

**विशेषार्थ**—अप्रत्याख्यानारण लोभ और प्रत्याख्यानारण लोभ इनका उपशम एक साथ होता है। अतः एकका सक्रामक दूसरेका सक्रामक नियमसे है यह कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ १६०. जो क्रोधसंजलनका सक्रम करता है उसके मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, चारह कपाय और ना नोकरायां इनका मत्त कदाचित् है और कदाचित् नहीं है। यदि है तो इनका कदाचित् सक्रामक है और कदाचित् असक्रामक है। किन्तु यह दो सज्वलनोंका नियमसे सक्रामक है। लोभसंजलनका कदाचित् सक्रामक है कदाचित् असक्रामक है।

**विशेषार्थ**—अपकर्षणिकी अपेक्षा क्रोधसंजलनवालेके मिथ्यात्व आदि २४ प्रकृतियोंका सत्तनाश हो जाता है यह स्पष्ट ही है। अतः क्रोधसंजलनके सक्रामकके उक्त चौबीस प्रकृतियों कदाचित् हैं और कदाचित् नहीं हैं यह बात बत जाती है। इन प्रकृतियोंका सत्त रहने पर भी यथायोग्य स्थानमें इनका सक्रम नहीं होता, अन्यत्र होता है, अतः जो सज्वलन क्रोधका सक्रामक है वह उक्त चौबीस प्रकृतियोंका कदाचित् सक्रामक है और कदाचित् असक्रामक है, यह कहा है। किन्तु इस जीवके संजलन मान और मायाका सत्तनाश या उपशम पीछेसे होता है, अतः यह इन दोनों प्रकृतियोंका निगमसे सक्रामक है। तथा लोभसंजलनका आनुपूर्वी सक्रमका प्रारम्भ होनेके पूर्वतक सक्रामक है और उसके बाद असक्रामक है।

§ १६१ जो मान संजलनका सक्रामक है वह माया संजलनका नियमसे सक्रामक है। वह लोभसंजलनका कदाचित् सक्रामक है और कदाचित् असक्रामक है। इसके शेष प्रकृतियों कदाचित् है और कदाचित् नहीं हैं। यदि हैं तो उनका कदाचित् सक्रामक है और कदाचित् असक्रामक है।

**विशेषार्थ**—मानसंजलनके सक्रामकके एक माया संजलन ही ऐसी प्रकृति बचती है जिसका वह नियमसे सक्रम करता है। शेष कथनका खुलासा पूर्ववत् जानना चाहिये।

§ १६२ जो माया संजलनका सक्रामक है वह लोभ संजलनका कदाचित् सक्रामक है

§ १५७ अपयकस्याणमाण सकामेतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणताणु०  
 षट्काणमपयकस्याणकोइमगो । सत्तकमायाण नियमा संकामओ । चत्वारिकस्ताय  
 णवणोकमायाणं सिया सकाम मिया असकाम० । एवं पयकस्याणमारु ।

§ १५८ अपयकस्याणमार्यं मकामेतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणताणु०  
 षट्काणमपयकस्याणकोइमगो । चत्वारि कसायाण नियमा सकामओ । सत्तक०-  
 णवणोक० सिया सकाम सिया असकाम । एवं पयकस्याणमाय ।

§ १५९ अपयकस्याणल्लोम सकामेतो दसणतिय-अणताणुं चिषट्काणमपय

आतुर्णी संकम आत्तु हो जामेसे लोभमर्नवहनअ संकम नहीं होता और अपत्याक्यानावरय  
 कोपका उपराम हानक पूर्व ही नो नोकपायोँअ उपराम हो जाता ह पसा निबम है, अतः अपत्या-  
 क्यानावरय कोपअ संकम आत्तु रहते हुए भी अत्त इस प्रकृतियोंका संकम होना रुक जाता है ।  
 इसीसे यहाँ पर जो अपत्याक्यानावरय कथका संकामक है वह अत्त प्रकृतियोंअ कदाचित् संकमक  
 ह और कदाचित् अरसंकमक ह यह कहा है । किंतु इसके संग अपत्याक्यानावरय गहन आदि  
 इस कयाबोका संकम अरस्तव होता रहता है क्योंकि अपत्याक्यानावरय कोपसे पहले म तो  
 इन इस प्रकृतियोंअ अभाव ही होता ह और न उपराम ही होता है । प्रत्याक्यानावरय कोपकी  
 स्थिति अपत्याक्यानावरय कोपसे मिच्छती पुसती है अतः इन दोनोंअ कथन एक समान  
 क्या है ।

§ १५७ वा अपत्याक्यानावरय मानअ संकमक है इसके सिध्यात्व सम्यक्त्व  
 सम्यग्मिध्यात्व और अमत्तानुबन्धीचतुष्कअ संग अपत्याक्यानावरय कोपके समान है । तथापि  
 वह सात कयाबोअ नियमसे संकमक है । तथा चार कयाव आर नो नोकपायोँअ कदाचित्  
 संकमक है और कदाचित् अरसंकमक है । इसी प्रकार प्रत्याक्यानावरय मानअ संकम करनेवाले  
 बीबके नियममें अमत्ता आदिये ।

विशेषार्थ—अपत्याक्यानावरय मानके पहले अपत्याक्यानावरय माया और लोभ,  
 प्रत्याक्यानावरय मान माया और लोभ तथा संवहन मान और मत्ता इन सात प्रकृतियोंअ  
 उपराम नहीं होता, अतः इन प्रकृतियोंअ यह बीब नियमसे संकमक है यह कहा है । येप कथन  
 सुगम है ।

§ १५८ जो अपत्याक्यानावरय मायाअ संकमक है इसके सिध्यात्व सम्यक्त्व  
 सम्यग्मिध्यात्व और अमत्तानुबन्धीचतुष्कअ संग अपत्याक्यानावरय कोपके समान है । तथापि  
 वह चार कयाबोअ नियमसे संकमक है । एवं सात कयाव और नो नोकपायोँअ कदाचित्  
 संकमक है और कदाचित् अरसंकमक है । इसी प्रकार प्रत्याक्यानावरय मानाअ संकम  
 करनेवाले बीबके नियममें जानना आदिये ।

विशेषार्थ—अपत्याक्यानावरय मायासे पहले अपत्याक्यानावरय लोभ प्रत्याक्यानावरय  
 माया और लोभ तथा संवहन माया इन चार प्रकृतियोंअ उपराम नहीं होता, अतः इन प्रकृतियोंअ  
 यह बीब नियमसे संकमक है यह कहा है । येप कथन सुगम है ।

१५९ वा बीब अपत्याक्यानावरय लोभअ संकम करता है इसके तीन दर्शनमोहनीन

११६५. पुरिग्वेदं संकामेतो निण्हं संजलणाणं णियमा संकामओ । लोभ-  
संजलणस्स सिया संका० सिया अमंका० । सेमं सिया अत्थि सिया णत्थि । जइ  
अत्थि, मिया संका० मिया अमंका० ।

११६६. हम्मं संकामेतो संजलणतियपुरिग्वेद-पंचणोऋसायाणं णियमा  
संकामओ । लोभसंजलणस्स मिया संकामओ० । सेमं सिया अत्थि० । जइ अत्थि सिया  
संका० सिया अमंका० । एवं पंचणोऋसायाणं पि ।

११६७. आदेसेण णेरइएमु मिच्छत्तं संकामेतो गम्मत्तस्स अमंका० ।  
सम्मामि० सिया संका० सिया अमंका० । अणंताणु०चउक्कं मिया अत्थि० । जइ  
अत्थि सिया संका० । वारमक०-णवणोक० णियमा संकामओ । गम्मत्ताणताणु०-  
चउक्क० ओघ । सम्मामिच्छत्तं संकामेतो मिच्छ० सिया संकामओ० । सम्मा०-

उसीके साथ होती है अतः नपु मरुवेदका साक्रामक स्त्रीवेदका भी नियमसे साक्रामक ठहरता है ।  
शेष कथन पूर्ववत् है ।

११६५ जो पुरुषवेदका साक्रामक है वह तीन सज्वलनोंका नियमसे साक्रामक है । लोभ-  
सज्वलनका कदाचित् साक्रामक है और कदाचित् असाक्रामक है । शेष प्रकृतिया कदाचित् हैं और  
कदाचित् नहीं हैं । यदि हैं तो उनका कदाचित् साक्रामक है और कदाचित् असाक्रामक है ।

विशेषार्थ—क्रोध आदि तीन सज्वलनोंका साक्रम पीछे तक होता रहता है इसलिये पुरुष-  
वेदके साक्रामकको इनका साक्रामक नियमसे बतलाया है । आनुपूर्वी साक्रमके चालू हो जानेके समयसे  
लोभसज्वलनका साक्रम नहीं होता किन्तु तब भी पुरुषवेदका साक्रम होता रहता है, इसलिये  
पुरुषवेदके साक्रामकके लोभसज्वलनके साक्रमके विषयमें अनियम बतलाया है । शेष कथन  
सुगम है ।

११६६ जो हास्यना साक्रामक है वह तीन सज्वलन, पुरुषवेद और पाँच नोकपायोंका  
नियमसे साक्रामक है । लोभसज्वलनका कदाचित् साक्रामक है और कदाचित् असाक्रामक है । शेष  
प्रकृतिया कदाचित् हैं और कदाचित् नहीं हैं । यदि हैं तो उनका कदाचित् साक्रामक है और कदाचित्  
असाक्रामक है । इसीप्रकार पाँच नोकपायोंके साक्रामकका आश्रय लेकर कथन करना चाहिये ।

विशेषार्थ—क्रोध आदि तीन सज्वलन और पुरुषवेदका साक्रम पीछे तक होता रहता है ।  
तथा पाँच नोकपायोंका साक्रम हास्यके साक्रमका सहचारी है । इसीसे हास्यके साक्रामकको उक्त  
प्रकृतियोंका साक्रामक नियमसे बतलाया है । लोभसज्वलनका साक्रम पूर्वमें ही रुक जाता है तब भी  
हास्यका साक्रम होता रहता है । इसीसे हास्यके साक्रामकके लोभसज्वलनके साक्रमके विषयमें  
अनियम बतलाया है । शेष कथन सुगम है ।

११६७. आदेशसे नारकियोंमें जो मिथ्यात्वका साक्रामक है । वह सम्यक्त्वका असंक्रामक  
है । सम्यग्मिथ्यात्वका कदाचित् साक्रामक है और कदाचित् असाक्रामक है । अनन्तानुबन्धी-  
चतुष्क कदाचित् हैं और कदाचित् नहीं हैं । यदि हैं तो उनका कदाचित् साक्रामक है और  
कदाचित् असाक्रामक है । वारह कपाय और नौ नोकपायोंका नियमसे साक्रामक है । सम्यक्त्व और  
अनन्तानुबन्धीचतुष्कके आश्रयसे सन्निकर्षका कथन ओघके समान है । जो सम्यग्मिथ्यात्वका  
साक्रामक है वह मिथ्यात्वका कदाचित् साक्रामक है और कदाचित् असाक्रामक है । सम्यक्त्व और



सुन मिया अरिय सिया गत्यि । जदि अरिय, सिया सक्र० सिया असक्र० ।

११६३ लोमसज्वलणं सक्रामेतो मिच्छ०-सम्म-सम्मामि०-वारसक० सिया अरिय सिया गत्यि । जदि अरिय, सिया संक्र० सिया असक्र० । तिण्ह सज्वलणाणं पवणाकमायाण ष गियमा सक्रामओ ।

११६४ इत्यिव संक्रामेतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-वारसक०-अनुसयवेद० सिया अरिय सिया गत्यि । जदि अरिय, सिया सक्र० सिया असक्र० । तिण्ह सज्वलणाण मत्तणोक्तायाणं ष गियमा सक्रामओ । लोमसज्वलणस्स सिया सक्र० मिया असक्र । एव अनुसयवेदं पि । जवरि इत्यिवेदस्स गियमा संक्रामओ ।

और कराचिन् असक्रामक है । रोप प्रकृतियाँ कराचिन् हैं और कराचिन् नहीं हैं । यदि हैं तो इनका कराचिन् संक्रामक है और कराचिन् असक्रामक है ।

विशेषार्थ—मायासंगजनके संक्रामकके लोमसज्वलण अवश्य पाया जाता है किन्तु इसका आनुपूर्वीसंक्रामक प्रारम्भ हान्तर संक्रम नहीं होता अतः यह लोमसज्वलणका कराचिन् संक्रामक है और कराचिन् असक्रामक है यह कहा है । रोप सुक्रासा पूर्ववत् जानना चाहिए ।

११६३ ओ लोमसज्वलणका संक्रामक है इसके मिध्यातर सम्यक्त्व सम्यग्मिध्यात्व और वारह कराव य प्रकृतियाँ कराचिन् हैं और कराचिन् नहीं हैं । यदि हैं तो वह इनका कराचिन् संक्रामक है और कराचिन् असक्रामक है । किन्तु तीन संगजन और नौ माकपायोंका नियमसे संक्रामक है ।

विशेषार्थ—आनुपूर्वीसंक्रम आन्तरकरका क्रमके बाद प्रारम्भ होता है किन्तु मिध्यात्व आदि पत्रह प्रकृतियोंकी परया पहले संगम है इसीसे लोमसज्वलणके संक्रामकके मिध्यातर आदि पत्रह प्रकृतियोंका कराचिन् वर और कराचिन् असक्र पठकर इनके संक्रमके नियमसे भी अनियम बतलाया है । अब यही रोप तीन संगजन और नौ माकपाय ये वारह प्रकृतियाँ छोड़कर प्रारम्भ करके आनुपूर्वी संक्रमके प्रारम्भ होनेके बाद प्राप्त होती है, अतः लोमसज्वलणके संक्रामकका इनका संक्रामक नियमसे बतलाया है ।

११६४ आ इत्यिव संक्रामक है इसके मिध्यातर सम्यक्त्व सम्यग्मिध्यात्व वारह कराव और अनुसयवेद य मातृ प्रकृतियाँ कराचिन् हैं और कराचिन् नहीं हैं । यदि हैं तो इनका कराचिन् संक्रामक है और कराचिन् असक्रामक है । किन्तु तीन संगजन और नौ माकपायोंका नियमसे संक्रामक है । तथा लोमसज्वलणका कराचिन् संक्रामक है और कराचिन् असक्रामक है । ओ अनुसयवेद संक्रामक है इनका भी इसी प्रकारसे फल करना चाहिए किन्तु यह लोमसज्वलण नियमसे संक्रामक है ।

विशेषार्थ—इसके श्रीरक्षी मरुदभ्युच्छित्तिके पूर्व ही इन मिध्यात्व आदि मातृ प्रकृतियोंकी मरुदभ्युच्छिति हो जाती है । इसीसे श्रीरक्षके संक्रामकके इनके सत्त्वक नियमसे अनियम बतलाकर संक्रमके नियमसे भी अनियम बतलाया है । किन्तु इसके संगजन आदि तीन संगजन और नौ माकपाय इनका संक्रम वीथ तक होता रहता है । इतना ही इनके प्रकृतियोंका नियमसे संक्रमक बतलाया है । अब रता लोम संगजन या आनुपूर्वी संक्रम वारह ही जानके समयमें ही इनके संक्रम हाना कर हा जाता है अतः यह लोमसज्वलणका कराचिन् संक्रामक है और कराचिन् असक्रामक है यह बतलाया है । अनुसयवेदकी श्रीरक्षी परया एक समय पूर्व या

६ १६५. पुग्मिवेदं संक्रामेतो निण्हं संजलणाणं णियमा संक्रामओ । लोभ-  
संजलणस्स सिया संक्रा० सिया अमंक्रा० । सेमं सिया अत्थि मिया णत्थि । जइ  
अत्थि, मिया संक्रा० मिया असंक्रा० ।

६ १६६. हस्सं संक्रामेतो संजलणतियपुग्मिवेद-पंचणोऋसायाणं णियमा  
संक्रामओ । लोभसंजलणस्स मिया संक्रामओ० । सेमं मिया अत्थि० । जइ अत्थि मिया  
संक्रामओ मिया अमंक्रा० । एवं पंचणोऋसायाण पि ।

६ १६७. आदेसेण णेग्गएमु मिच्छत्तं संक्रामेतो मम्मत्तस्स अमंक्रामओ ।  
सम्मामि० मिया संक्रा० मिया असंक्रा० । अणंताणु०चउक्कं मिया अत्थि० । जइ  
अत्थि मिया संक्रामओ० । वारसक०-णवणोक० णियमा मक्रामओ । सम्मत्ताणंताणु०-  
चउक्क० ओध । सम्मामिच्छत्तं मक्रामेतो मिच्छ० सिया सकामओ० । सम्मा०-

उम्मीके साय होती है अतः नपु सकवेदका सक्रामक छीवेदका भी नियमसे मक्रामक ठहरता है ।  
शेष कथन पूर्ववत् है ।

§ १६५ जो पुरुषवेदका सक्रामक है वह तीन सज्वलनोंका नियमसे सक्रामक है । लोभ-  
सज्वलनका कदाचित् सक्रामक है और कदाचित् असक्रामक है । शेष प्रकृतिया कदाचित् हे और  
कदाचित् नहीं हैं । यदि हैं तो उनका कदाचित् मक्रामक है और कदाचित् असक्रामक है ।

विशेषार्थ—क्रोध आदि तीन सज्वलनोंका सक्रम पीछे तक होता रहता है इसलिये पुरुष-  
वेदके मक्रामकरुको इनका सक्रामक नियमसे बतलाया है । आनुपूर्वी सक्रमके चालू हो जानेके समयसे  
लोभसज्वलनका सक्रम नहीं होता किन्तु तब भी पुरुषवेदका सक्रम होता रहता है, इसलिये  
पुरुषवेदके सक्रामकके लोभसज्वलनके सक्रमके विषयमें अनियम बतलाया है । शेष कथन  
सुगम ह ।

§ १६६ जो हास्यका सक्रामक है वह तीन सज्वलन, पुरुषवेद और पाँच नोकपायोंका  
नियमसे सक्रामक है । लोभसज्वलनका कदाचित् सक्रामक है और कदाचित् असक्रामक ह । शेष  
प्रकृतिया कदाचित् हैं और कदाचित् नहीं हैं । यदि हैं तो उनका कदाचित् सक्रामक ह और कदाचित्  
असक्रामक है । इसीप्रकार पाँच नोकपायोंके सक्रामकका आश्रय लेकर कथन करना चाहिये ।

विशेषार्थ—क्रोध आदि तीन सज्वलन और पुरुषवेदका सक्रम पीछे तक होता रहता है ।  
तथा पाँच नोकपायोंका सक्रम हास्यके सक्रमका सहचारी है । इसीसे हास्यके सक्रामकको उक्त  
प्रकृतियोंका सक्रामक नियमसे बतलाया है । लोभसज्वलनका सक्रम पूर्वमें ही रूढ़ जाता है तब भी  
हास्यका सक्रम होता रहता है । इसीसे हास्यके सक्रामकके लोभसज्वलनके सक्रमके विषयमें  
अनियम बतलाया है । शेष कथन सुगम है ।

§ १६७. आदेशसे नारकियोमि जो मिथ्यात्वका सक्रामक है । वह सम्यक्त्वका असंक्रामक  
है । सम्यग्मिथ्यात्वका कदाचित् सक्रामक है और कदाचित् असक्रामक है । अनन्तानुबन्धी-  
चतुष्क कदाचित् है और कदाचित् नहीं है । यदि हैं तो उनका कदाचित् सक्रामक है और  
कदाचित् असक्रामक है । वारह कपाय और नौ नोकपायोंका नियमसे सक्रामक है । सम्यक्त्व और  
अनन्तानुबन्धीचतुष्कके आश्रयसे सन्निकर्षका कथन ओषधके समान है । जो सम्यग्मिथ्यात्वका  
सक्रामक है वह मिथ्यात्वका कदाचित् सक्रामक है और कदाचित् असक्रामक है । सम्यक्त्व और

अर्णताणु०४ सिया अत्थि०, अत्थ अत्थि सिया सक्कमओ । बारसक०-णवणोक०  
 णियमा सक्क० । अपपकस्साण्णकोष मफामेतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०अणताणु०४  
 सिया अत्थि सिया णत्थि । अत्थ अत्थि सिया सक्क० सिया असंक्क० । एकारसक  
 णवणोक० णियमा मक्कमओ । एवमक्कारसक०-णवणोकसायाण । एवं पढमाए तिरिक्ख-  
 पच्चिदियतिरिक्खदुर्ग-द्वग्गदि-देवा सोहम्मादि भवगेवजा पि । विडियादि मत्तमा पि  
 एव वेव । अत्थरि अपपकस्साण्णकोषं सक्कामेतो मिच्छत्तस्स सिया सक्कम० सिया  
 अमक्कम । एव जोगिणी-भवणवासिय-वाणवेत्तर-जोत्तसिपत्तु ।

§ १६८ पंचिदियतिरिक्खअपत्त०-मणुसअपत्त सम्मत्तं संकामेतो सम्मामि०-  
 सोलसक०-णवणोकसायाण णियमा संकामओ । सम्मामिच्छत्त संकामेतो सम्मत्त  
 सिया अत्थि । अत्थि अत्थि, सिया संक्कम । सोलसक -णवणोक० णियमा संक्कमओ ।  
 अणताणु०कोष संक्कामेतो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त सिया अत्थि । अत्थि अत्थि, सिया  
 संक्कमओ । पण्णारसक०-णवणोकसायाण णियमा संकामओ । एवं पण्णारसक०  
 णवणोकसायाण ।

अनन्तानुक्कमीकत्तुक्क क्वाचित्त्तु है और क्वाचित्त्तु नहीं है । बत्ति है तो इनक्क क्वाचित्त्तु संक्कमक  
 है और क्वाचित्त्तु असंक्कमक है । बारह क्वाय और नौ नोकपायोत्थ नियमसे संक्कमक है । जो  
 अप्पसायपानाबारथ कोवक्क संक्कमक है उसके मिच्छत्त सम्बत्त सम्ममिच्छत्त और अनन्तानु  
 क्कमीकत्तुक्क क्वाचित्त्तु है और क्वाचित्त्तु नहीं है । बत्ति है तो इनक्क क्वाचित्त्तु संक्कमक है और  
 क्वाचित्त्तु असंक्कमक है । म्पारह क्वाय और नौ नोकपायोत्थ नियमसे संक्कमक है । इसीप्रकार  
 म्पारह क्वाय और नौ नोकपायोत्थ अप्पन्न लेक्क करन करना चाहिये । इसीप्रकार प्रथम प्रथिणी  
 तिर्वक्क पंचेत्थिबत्तिर्वक्कत्तु, सामन्त वेव और औपमसे लेक्क म्पे मैक्कवक्क ठक्के देवोंमें जातना  
 चाहिये । किन्तु इतनी विरोधता है कि जो अप्पसायपानाबारथ कोवक्क संक्कमक है वह मिच्छत्तक्क  
 क्वाचित्त्तु संक्कमक है और क्वाचित्त्तु असंक्कमक है । इसी प्रकार पंचेत्थिबत्तिर्वक्कयोत्तिनी मक्क-  
 वासी अन्तर और अ्योत्तिणी वेवेके जातना चाहिये ।

§ १६९ पंचत्थिय तिर्वक्क अप्पच्छत्त और मणुज्य अप्पत्तात्त ओवेत्तिं जो सम्मत्तक्का संक्कमक  
 है वह सम्ममिच्छत्त सात्त क्वाय और नौ नोकपायोत्थ नियमसे संक्कमक है । जो सम्ममिच्छत्त-  
 त्त्वत्त संक्कमक है उसके सम्मत्त क्वाचित्त्तु है और क्वाचित्त्तु नहीं है । बत्ति है तो इसक्क  
 क्वाचित्त्तु संक्कमक है और क्वाचित्त्तु असंक्कमक है । सात्त क्वाय और नौ नोकपायोत्थ  
 नियमसे संक्कमक है । अनन्तानुक्कमी कोवक्क का संक्कमक है उसके सम्मत्त और सम्ममिच्छत्त  
 क्वाचित्त्तु है और क्वाचित्त्तु नहीं है । बत्ति है तो इतना क्वाचित्त्तु संक्कमक है और क्वाचित्त्तु  
 असंक्कमक है । पम्पह क्वाय और नौ नोकपायोत्थ नियमसे संक्कमक है । इसी प्रकार पम्पह  
 क्वाय और नौ नोकपायोत्थ संक्कमकका अप्पन्न लेक्क सत्तिक्क करना चाहिये ।

विन्नेवार्थ—एक्क जो मार्गलाभेत्तिं दक्खीस म्पत्तिव्यां तो निबयसे है । किन्तु सम्मत्त  
 और सम्ममिच्छत्तक्क सत्त वाक्क भी जत्त है और नहीं भी पाया जाता है । वत्तमें म्पे वित्ते

§ १६०. मणुसतिग् ओघं । णपरि मणुमिणीसु पुरिगवेदं संकामंतो छण्णो-  
कमायाणं णियमा संकामओ । अणुद्दिमं जाव सच्चट्टा त्ति मिच्छत्त संकामंतो सम्मामिं-  
वारसकं-णवणोकं णियमा संकामओ । अणंताणुं चउकं सिया अत्थिं । जट्ठि अत्थि,  
सिया संकामओ । एव सम्मामिच्छत्तस्म । अणंताणुं कोघं मकामंतो मिच्छं-सम्मामिं-  
पण्णारमकं-णवणोकं णियमा संकामओ । एव तिण्हं कमायाणं । अपच्चक्खाणकोहं  
संकामंतो मिच्छं-सम्मामिं मिया अत्थिं । जट्ठि अत्थि, णियमा संकामओ ।  
अणताणुं ४ मिया अत्थिं । जट्ठि अत्थि, सिया संकामओ । एणारमकं-णवणो-  
कमायाणं णियमा संकामओ । एवमेकारसकं-णवणोकमायाणं । एवं जाव ।

§ १७०. भावो मच्चत्थ ओदइओ भावो ।

❁ अत्थावहुअं ।

§ १७१. अहियारमंभालणसुत्तमेदं । सुगमं ।

❁ सच्चत्थोवा सम्मत्तस्स संकामया ।

सम्यक्त्वका सत्त्व है उसके सम्यग्मिथ्यात्वका सत्त्व नियमसे है । किन्तु जिसके सम्यग्मिथ्यात्वका सत्त्व है उसके मन्वसत्त्वका सत्त्व है भी और नहीं भी है । इसी अपेक्षामे उक्त सन्निकर्ष मन्दा है ।

§ १६६ मनुप्रत्रिकमे सन्निकर्ष ओघके ममान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुप्रनिर्णयों जो पुरुषवेदका संक्रामक है वह छह नोकपायोंका नियमसे संक्रामक है । आशय यह है कि उनके टोनोंका संक्रम एक साथ होता है 'अत' उक्त व्यवस्था बन जाती है । अनुदिशसे लेकर मर्यादामिद्धितरुके देशोंमे जो मिथ्यात्वका संक्रामक है वह सम्यग्मिथ्यात्व, वारह कपाय और नौ नोकपायोंका नियमसे संक्रामक है । अनन्तानुबन्धीचतुष्क कदाचित् है और कदाचित् नहीं है । यदि है तो उनका कदाचित् संक्रामक है और कदाचित् असक्रामक है । इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामकका आश्रय लेकर सन्निकर्ष कहना चाहिये । जो अनन्तानुबन्धी क्रोधका संक्रामक है वह मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, पन्द्रह कपाय और नौ नोकपायोंका नियमसे संक्रामक है । इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीमान आदि तीन कपायोंके संक्रामकका आश्रय लेकर सन्निकर्ष कहना चाहिये । जो अप्रत्याख्यानावरण क्रोधका संक्रामक है उसके मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व कदाचित् है और कदाचित् नहीं है । यदि है तो उनका नियमसे संक्रामक है । अनन्तानुबन्धीचतुष्क कदाचित् है और कदाचित् नहीं है । यदि है तो उनका कदाचित् संक्रामक है और कदाचित् असक्रामक है । ग्यारह कपाय और नौ नोकपायोंका नियमसे संक्रामक है । इसी प्रकार ग्यारह कपाय और नौ नोकपायोंके संक्रामकका आश्रय लेकर सन्निकर्ष कहना चाहिये । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

§ १७० भावका प्रकरण है । सर्वत्र ओदधिक भाव है ।

❁ अत्र अल्पवहुत्वका अधिकार है ।

§ १७१ अधिकारका निर्देश करनेगला यह सूत्र सुगम है ।

❁ सम्यक्त्वके संक्रामक जीव सबसे थोड़े हैं ।

§ १७० कुतो ? उभ्येन्लणवावदपलिदोवमासंखजमागमचजीवरासिस्त गहणादो ।

⊙ मिच्छुत्तस्स सकामया असंखेजगुणा ।

§ १७३ कुतो ? वेदगसम्माद्दिगसिस्त पहाणमावेगेत्य गहणादो ।

⊙ सम्मामिच्छुत्तस्स संकामया विसेसाहिया ।

§ १७४ केचियमत्तेण ? सादिरयसम्मवसांक्रमयजीवमेत्तेण ।

⊙ अणत्ताणुपभीणं सकामया अणत्तगुणा ।

§ १७५ कुतो ? एरंदियरामिस्स पहाणघादो ।

⊙ अहंकासापाण सकामया विसेसाहिया ।

§ १७६ केचियमत्तेण ? चउवीस-वेवीस-वावीस-ग्गिरीससंतकम्मियजीवमत्तेण ।

⊙ सोमसज्जणेस्स सकामया विसेसाहिया ।

§ १७७ केचियमत्तेण ? वेरससकामपमेत्तेण । कुतो ? अहंकासाण्णु खीणेतु

वि जाव अंतरं ण करेद ताव सोहसंजलणस्स संक्रमत्तजादो ।

§ १७० क्योंकि उभेन्लणवे कही हुई जो पत्यके असंख्यत्वके प्रमाण एवं जीवरासि दे वह परां ही गई है ।

⊙ मिच्छात्वके सकामक जीव अमस्यावगुणे हैं ।

§ १७३ क्योंकि परां वेदकसम्बन्धियोंका प्रधानरूपने प्रमाण किया है ।

⊙ सम्मामिच्छात्वके सकामक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ १७४ अंका—चित्तने अधिक हैं ।

समाधान—सम्बन्धके संक्रमक जितने जीव हैं उतने हैं ।

⊙ अनन्तानुपभीके सकामक जीव अनन्तगुणे हैं ।

§ १७५ क्योंकि अणत्ताणुवन्निषोके संक्रमकमें अवेन्द्रिय राशिभी प्रधानका है ।

⊙ आठ क्पायोंके संक्रमक विशेष अधिक हैं ।

§ १७६ अंका—चित्तने अधिक हैं ।

समाधान—चौरीस तदम चाइम और इरंदिगप्रवृत्तिक सम्बन्धानगत जीवोंका जितना प्रमाण है उतने अधिक हैं ।

⊙ सोमसंजयनके संक्रमक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ १७७ अंका—चित्तने अधिक हैं ।

समाधान—एक पहचिषोका संबन्ध करमगत जीवोंका जितना प्रमाण है उतने अधिक हैं क्योंकि आठ क्पायोंका अथ हा जल पर भी अथ तक अन्तर मरी करता है एवं तक सोम संजयनका संबन्ध देख्य जाय है ।

⊗ णवुसयवेदस्स संकामया विसेसाहिया ।

§ १७८. कुदो ? अतरकरणे कंदं लोह्नंजलणस्म संकमाभावे वि णवुंसयवेदस्म तत्थ अंतोमुहुत्तकालं संक्रमपाओग्गत्तदमणादो । केत्तियमेत्तो विसेसो ? वारस-संकामयमेत्तो ।

⊗ इत्थिवेदस्स संकामया विसेसाहिया ।

§ १७९. कुदो ? णवुंसयवेदे ग्गीणे वि इत्थिवेदस्स अंतोमुहुत्तकाल संक्रमगंभव-दंमणादो । के०मेत्तो विसेसो ? एव्वारससंकामयजीवमेत्तो ।

⊗ छृण्णोकसायाणं संकामया विसेसाहिया ।

§ १८०. के०मेत्तेण ? दमसंकामयजीवमेत्तेण ।

⊗ पुरिसवेदस्स संकामया विसेसाहिया ।

§ १८१. छमु कम्मसिमु र्सीणेमु उवरिदुममऊण-दोआवल्लियमेत्तकालमेदस्स सक्रमगंभवेण तत्थ सच्चिदचदुंसंकामयमेत्तेण विसेसाहियत्तमेत्थ गहेयञ्ज ।

⊗ कोदसजलणस्स संकामया विसेसाहिया ।

\* नपुंसवेदके संक्रामक जीव विशेष अधिक है ।

§ १७८ क्योंकि अन्तरकरण करनेके बाद यद्यपि लोभ सञ्चलनका संक्रम नहीं होता है तथापि यहाँ अन्तर्मुहूर्त कालतक नपुंसवेदके संक्रमकी योग्यता देयी जाती है ।

शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ।

समाधान—चार प्रकृतियोंके संक्रामकोंका जितना प्रमाण है उतना है ।

\* स्त्रीवेदके संक्रामक जीव विशेष अधिक है ।

§ १७९ क्योंकि नपुंसवेदका क्षय हो जाने पर भी अन्तर्मुहूर्त काल तक स्त्रीवेदका संक्रम देया जाता है ।

शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—चार प्रकृतियोंके संक्रामक जीवोंका जितना प्रमाण है उतना है ।

\* छह नोकपायोके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ १८० शंका—कितने अधिक हैं ?

समाधान—उस प्रकृतियोंके संक्रामकोंका जितना प्रमाण है उतने अधिक हैं ।

\* पुरुषवेदके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ १८१ छह नोकपायोंका क्षय हो जानेपर दो समयकम दो आरजि काल तक पुरुषवेदका संक्रम सम्भव होनेसे उस कालके भीतर चार प्रकृतियोंके संक्रामकोंका जितना प्रमाण प्राप्त हो उतना यहाँ विशेष अधिक लेना चाहिये ।

\* क्रोधसंञ्चलनके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ १८२ क० मेचेण ? अतोद्भुत्तसंचिद्विद्विहसकामयमेचेण ।

⊗ माणसंजखणस्स संकामया बिसेसाहिया ।

§ १८३ बिसेसपमाणमेत्थ दुविहसकामयमत्त ।

⊗ मायासजखणस्स सकामया बिसेसाहिया ।

§ १८४ एहिस्से संकामयजीवमचेण ।

एवमोषो समचो ।

§ १८५. संपहि आदेसेण णिरयगईए पयदप्पाबहुजपक्खणहुसुरिमो पवधो—

⊗ णिरयगदीए सम्बत्पोषा सम्मत्तसंकामया ?

§ १८६ हुणे ? सम्मत्तमुम्भेल्लमाणमिन्जाइहिरासिस्स गहणादो ।

⊗ मिच्छत्तस्स संकामया असस्सेजगुप्पा ।

§ १८७ हुदो ? गेरुयकेदयसम्माइहुणमुवसमसम्माइहुिसहिदानमिह गहणादो ।

⊗ सम्मामिच्छत्तस्स सकामया बिसेसाहिया ।

§ १८८. क मेचेण ? सादरेयसम्मत्तसंकामयमेचेण ।

§ १८९ संक्ष—किञ्च अपिक्क है ?

समाधान—अणुहुत्तमे तीन महत्तिबोडे संक्षमकोअ जितना प्रमाण संचित हा जतन अपिक्क है ।

⊗ मानसंवल्लनके संक्रामक जीव विशेष अपिक्क है ।

§ १८९. क्योंकि दो महत्तियेकि संक्षमकोअ जितना प्रमाण है जतना वहाँ विशेष अपिक्क प्रमाण जानना जाविय ।

⊗ मायासंखल्लनके संक्रामक जीव विशेष अपिक्क है ।

§ १९० एक महत्तिके संक्षमक जीवोअ जितना प्रमाण है जतन अपिक्क है ।

इस प्रकार ओपप्रकृपादा समाप्त हुई ।

§ १९१. अब आदेरासे नरकजातिमें महत्त आहारबहुत्वका कवन करनेके तिन जागोके प्रबन्धका विवेका करते हैं—

⊗ नरकजातिमें सम्पत्त्वके संक्रामक जीव सबसे बौद्ध है ।

§ १९१. क्योंकि यहाँ सम्पत्त्वकी उद्वृत्तना करनेवासे मिथ्यादृष्टि बीषोकी रासिक्क महत्त किया है ।

⊗ मिथ्यात्वके संक्रामक जीव असंस्पातगुण है ।

§ १९२. क्योंकि यहाँ अरामसम्पत्तियेकि साथ बर्कसम्पत्तिये नाटकियोअ प्रबन्ध किया है ।

⊗ सम्पत्तिमिथ्यात्वके संक्रामक जीव विशेष अपिक्क है ।

§ १९३. संक्ष—किञ्च अपिक्क है ?

समाधान—अणुहुत्तके संक्षमक जीवमात्र अपिक्क है ।

❀ अणंताणुधंधीणं संकामया असंखेज्जगुणा ।

§ १८०. कुटो ? इगिवीम-चउवीमसंतकम्मिए मोत्तूण सेमगच्चणेग्दयरसिम्स गहणादो ।

❀ सेसाणं कम्माणं संकामया तुल्ला विसेसाहिया ।

§ १९०. इगिवीम-चउवीससंतकम्मियाणं पि एत्थ पवेसदंसणादो । एव णिरयोधो परुविदो । एवं सत्तमु पुटवीसु वत्तच्चं ।

❀ एवं देवगदीण ।

§ १९१. एट्ठम्म विवरणे कीरमाणे समणंतरपरुविदो मच्चो चैव अप्पावहुआलावो वत्तच्चो, विसेमाभावादो । भवणादि जाव महस्सारे त्ति एवं चैव वत्तच्चं । आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति मच्चत्थोवा मम्म० मंक्राम० । अणताणु०४ मक्राम० अमखे०गुणा । मिन्ड० मक्राम० विसेसा० । मम्मामि० सकाम० विसेसा० । वारगक०-णवणो० मक्राम० विसेसा० । अणुहिमादि सच्चट्ठा त्ति मच्चत्थोवा अणताणु०४ संकाम० । मिन्ड०-मम्मामि० मंक्राम० विसेसा० । वारगक०-णवणो० मंक्राम० विसे० । जेणेयं सुत्तं देमामामिय तेणेसो सच्चो वि अत्थो एत्थ णिल्लीणो त्ति दट्ठच्चो ।

\* अनन्तानुबन्धियोंके संक्रामक जीव अमरन्त्यातगुणे हैं ।

§ १८६ क्योंकि इक्कीस और चौबीस प्रकृतिक सत्त्वस्थानवाले जीवोंके सिवा शेष सब नारकराजिका यहा ग्रहण किया गया ह ।

\* शेष क्रमोंके संक्रामक जीव परस्पर बराबर हैं किन्तु अनन्तानुबन्धियोंके संक्रामकोंसे विशेष अधिक हैं ।

§ १९० क्योंकि इनमें इक्कीस और चौबीस प्रकृतिक सत्त्वस्थानवाले जीवोंका भी प्रवेश देया जाता ह । इस प्रकार सामान्यसे नारकियोंमें सम्यक्त्व आदि प्रकृतियोंके संक्रामकोंका अल्पबहुत्व कहा । उसी प्रकार सानो पृथिवियोंमें अल्पबहुत्व कहना चाहिये ।

\* इसी प्रकार देवगतिमें अल्पबहुत्व जानना चाहिये ।

§ १९१ इस सूत्रका व्याख्यान करने पर इससे पूर्वके अल्पबहुत्वालापका पूराका पूरा कथन यहाँ पर भी करना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है । भवन्वासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतक इसी प्रकार कथन करना चाहिये । आनतसे लेकर नौ प्रवेयकतकके देवोंमें सम्यक्त्वके संक्रामक जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे अनन्तानुबन्धीचतुष्कके संक्रामक जीव असत्ख्यात गुणे हैं । उनमें मि०यात्वके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं । इनसे सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं । उनसे बरह कपाय और नौ नोकपायोंके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं । अतुदिशसे लेकर सर्वार्थमिद्धि त्रकके देवोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कके संक्रामक जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे मि०यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं । इनसे बरह कपाय और नौ नोकपायोंके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं । यत 'एवं देवगदीए' यह सूत्र देशामर्षक है अतः यह पूराका पूरा अर्थ इस सूत्रमें गभित है ऐसा जानना चाहिये । अब तिर्यंचगतिमें



संपदि तिरिक्त्तगदीण अप्पावहुवप्स्वण्डमाह ।

⊗ तिरिक्त्तगदीण सम्बत्थोवा सम्मत्तस्स सकामया ।

§ १९० सुगम ।

⊗ मिक्त्तस्स सकामया असंखेज्जगुष्वा ।

§ १९१ यत्थ वि करणमोपसिद्ध ।

⊗ सम्मामिक्त्तस्स सकामया बिसेसाहिया ।

§ १९४ क्वत्थियमेघेण ? सादिरेयसम्मत्तसकामयमेघेण ।

⊗ अयताणुवपीणं सकामया अयंतगुष्वा ।

§ १९५ इदो ? किंणुतिरिक्त्तरासिस्स गहणादो ।

⊗ सेसाणं कम्मणं सकामया तुल्खा बिसेसाहिया ।

§ १९६ तिरिक्त्तरासिस्स सम्बस्स येव गहणादो ।

⊗ पंचिदियतिरिक्त्ततिप् पारयम्मो ।

§ १९७ पंचिदियतिरिक्त्त -अणुममपत्तत्तपसु सम्बत्थोवा सम्मत्तसकामया ।

सम्मामिक्त्तसकामया बिसेसाहिया । सोल्लसक -णवणोक सक्का असखे गुणा ।

सुत्ते अनुत्तेद क्वं उत्तपद ? ण, सुत्तस्स वृत्तणामेत्ते बाभारादो ।

अस्यबहुत्वका कवन करनेके श्रिय भागके सूत्र कहत हैं—

⊗ तिर्यं च गतिमें सम्यक्त्वक संक्रामक जीव सबसे चोढ़े हैं ।

§ १६१ यह सूत्र सुगम है ।

⊗ मिध्यात्वके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ १६३ असंख्यातगुणका जो कारण जोध प्रकृत्याके समस<sup>१</sup>क्या है वही यहाँ भी जानना चाहिये ।

⊗ सम्यग्मिध्यात्वके संक्रामक जीव विशेष अपिक्क हैं ।

§ १६४ संक्रा—चित्तने अपिक्क है ।

समाधान—सम्यक्त्वके संक्रामक जीवमात्र अपिक्क हैं ।

⊗ अनन्तानुबन्धियोंके संक्रामक जीव अनन्तागुणे हैं ।

§ १६५ क्योंकि यहाँ बुद्धकम तिर्यं च शरित्तर म्हाण किया है ।

⊗ शेष कर्मोंके संक्रामक जीव परस्परमें तुल्य हैं तथापि अनन्तानुबन्धियोंके संक्रामकोंसे विशेष अपिक्क हैं ।

§ १९६ क्योंकि यहाँ पूरी श्रिं च शरित्तर म्हाण किया है ।

⊗ पंचेन्द्रिय तिर्यक्त्वके अन्यबहुत्व नारकियोंके समान है ।

§ १६७ पंचेन्द्रियतिर्यं च अयथां और मनुष्य अयथां जीवोंमें सम्यक्त्वके संक्रामक जीव सबसे चोढ़े हैं । सम्यग्मिध्यात्वके संक्रामक जीव विशेष अपिक्क हैं । सोल्ल कपाय और भी नोक्कयायके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

⊗ मणुसगईए सञ्चत्थोवा मिच्छत्तस्स संकामया ।

§ १९८. सम्माइट्टिगमिपमाणत्तादो ।

⊗ सम्मत्तस्स संकामया असंखेज्जगुणा ।

§ १९९. कारणमुच्चेल्लमाणो पल्लिदोवमारसेज्जदिभागमेत्तो मिच्छाडट्टिगसी गहिदो ति ।

⊗ सम्मामिच्छत्तस्स संकामया विसेसाहिया ।

§ २००. किं कारणं ? अणंतरपम्पिदपल्लिदोवमारसे०भागमेत्तुच्चेल्लणगमी सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं मग्गिओ लब्भइ । पुणो सम्मत्ते उच्चेल्लिदो मंते सम्मामिच्छत्तं उच्चेल्लमाणो पल्लिदो०जमसे०भागमेत्तो मिच्छाडट्टिगसी मसेज्जो सम्माडट्टिगसी च सम्मामिच्छत्तम्म लब्भइ । एतेण कारणेण विसेसाहियत्तं जादं ।

⊗ अणंताणुबंधीणं संकामया असंखेज्जगुणा ।

§ २०१. कुदो ? मणुगमिच्छाडट्टिगमिस्स पहाणत्तादो ।

⊗ सेसाणं कम्माणं संकामया थोघो ।

§ २०२. कुदो ? ओघालावं पडि विसेसाभावादो । तदो ओघालावो णिग्गसेममेत्थ

शंका—यह अन्यत्रहुत्त्व सत्रमें नहीं म्ता गया है फिर यहा क्यों बतलाया जा रहा है ?

समाधान—यहाँ क्योंकि मृत्रना काम मृचनना करनामात्र है ।

\* मनुष्यगतिमें मिथ्यात्वके संक्रामक जीव सत्रसे थोड़े हैं ।

§ १९८= क्योंकि स्थूलरूपमें वे मनुष्य सम्यग्दृष्टियोंका जितना प्रमाण है उतने हैं ।

\* सम्यक्त्वके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ १९९ क्योंकि यहाँ उद्धेलना करनेवाले पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण मिथ्यादृष्टि जीवोंकी राशिवा प्रहण किया है ।

\* सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ २०० क्योंकि समनन्तर पूर्व जो पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण जीवराशि कही है वह सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व उन दोनोंके संक्रमकी अपेक्षा समान है किन्तु सम्यक्त्वकी उद्धेलना कर लेनेके बाद पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण ऐसी मिथ्यादृष्टि राशि है जो केवल सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्धेलना करती है तथा ऐसे संख्यात सम्यग्दृष्टि जीव भी हैं जो केवल सम्यग्मिथ्यात्वका साक्रम करते हैं, इस कारणसे सम्यक्त्वके साक्रमकोंसे सम्यग्मिथ्यात्वके साक्रमक मनुष्य विशेष अधिक हो जाते हैं ।

\* अनन्तानुबन्धियोंके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ २०१ क्योंकि यहाँ मनुष्य मिथ्यादृष्टिराशिकी प्रधानता है ।

\* शेष कर्मोंके संक्रामकोंका अल्पबहुत्त्व ओघके समान है ।

§ २०२ क्योंकि ओघप्ररूपणासे इसमें कोई विशेषता नहीं है, इसलिये पूरेके पूरे ओघ-

कायम्बो । एव मणुसपञ्चधा । णवरि अग्नि अमरोत्तगुण सग्नि ससेत्तगुणं कायम्ब । एवं  
चेव मणुसिणीसु वि वत्तम्ब । णवरि छण्णोक्ताप-पुरिसवेदसकामया सरिसा कायव्वा ।

एवं गहमग्गाणा समघा ।

§ २०३ सपहि सेसमग्गाणा देसामासियभावेणिदियमग्गाणावपबभूडेइदिपसु  
प्यदप्पाबहुमपरुवण कुणमाणो सुत्तमुत्तर मणह—

⊗ एइविपसु सम्बत्थोवा सम्मत्तस्स सकामया ।

§ २०४ सुगमं ।

⊗ सम्मामिच्छुत्तस्स सकामया विसेसाहिया ।

§ २०५ सम्मणुप्पेत्तणकात्तादो सम्मामिच्छुत्तुप्पेत्तणकात्तस्स विसेसाहियत्तादो ।

⊗ सेसायं कम्मयायं सकामया तुल्ला अणत्तगुया ।

§ २०६ कुदो ? एइदियरासिस्स सम्बत्सेव गहणादो । एव आव अणाहारि पि ।

एवमेगेगपपडिसंक्रमो समघो ।...

प्रकृत्याको यहाँ कर्त्तव्य आदिसे । मनुष्य पर्याप्तकेमें इसी प्रकार अस्वच्छत्व कर्त्तव्य आदिसे  
किन्तु इतनी विरोधता है कि यहाँ असंख्यात्तगुणा कहा है यहाँ संख्यात्तगुणा कर्त्तव्य आदिसे ।  
मनुष्यनिर्बोमें भी इसी प्रकार कर्त्तव्य कर्त्तव्य आदिसे, किन्तु इतनी विरोधता है कि यहाँ यह  
नोकपाय और पुरुषवर्षके संक्रामक जीव एक समान बतकाना आदिसे ।

इस प्रकार गतिमार्गव्या समाप्त हुई ।

§ १३ अब हम मार्गार्थको वैश्वमर्षकरूपसे इन्द्रिय मार्गार्थके एक मेव एकेन्द्रिबोमें  
प्रकृत्य अस्वच्छत्वक कर्त्तव्य करते हुए आलोच्य सूत्र कर्त्तव्य हैं—

⊗ एकन्द्रियोमें सम्यक्त्वक संक्रामक जीव सबसे बोड़े हैं ।

§ १४ यह सूत्र सुगम है ।

⊗ सम्यग्मिध्यात्वके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ १५. क्योंकि सम्यक्त्वके रहकना कर्त्तव्यसे सम्यग्मिध्यात्वक अद्वैतक्य कर्त्तव्य विरोध  
अधिक है ।

⊗ दोष कर्मोंके संक्रामक जीव परस्परमें तुल्य हैं, तथापि सम्यग्मिध्यात्वके  
संक्रामकोंसे अनन्तगुणे हैं ।

§ १६. क्योंकि यहाँ पर समस्त एकेन्द्रिय जीवपरित्यक्त प्रकृत्य किया है । इसी प्रकार  
अनाहारक मार्गार्थ एक जातव्य आदिसे ।

इस प्रकार एकैक्यवृत्तिसंक्रम अविचार सम्यक्त हुआ ।

❀ एत्तो पयडिद्वाणसंकमो ।

§ २०७. एत्तो उवरि पयडिद्वाणसंकमो मप्पडिक्खवो सगंतोभाविट्ठपयडिद्वाण-  
पडिग्गहापडिग्गहो पस्सुवेय्वो त्ति भणिट्ठ होइ ।

❀ तत्थ पुच्चं गमणिज्जा सुत्तसमुत्तिज्ञा ।

§ २०८. तम्मिह पयडिद्वाणसंकमे पस्सुविज्जमाणे पुच्चमेव तत्थ ताव पडिक्खद्वाणं  
गाहासुत्ताणं समुत्तिज्ञा कायन्वा त्ति वुत्तं होइ ।

❀ तं जहा ।

§ २०९. सुगममेदं गाहासुत्तावयारावेक्खं पुच्छावपं ।

अट्ठावीस चउवीस सत्तरस सोलसेव पणणरसा ।

एदे खलु मोत्तूणं सेसाणं संकमो होइ' ॥ २७ ॥

सोलसग वारसट्ठग वीसं वीसं तिगादिगधिगा य ।

एदे खलु मोत्तूणं सेसाणि पडिग्गहा होंति' ॥ २८ ॥

छव्वीस सत्तवीसा य संकमो णियम चदुसु द्वाणेषु ।

वावीस पणणरसगे एक्कारस ऊणवीसाए' ॥ २६ ॥

\* अब इससे आगे प्रकृतिस्थानसंक्रमका अधिकार है ।

§ २०७. अब इससे आगे जिसमें प्रकृतिस्थानप्रतिग्रह और प्रकृतिस्थान-अप्रतिग्रहका कथन आ जाता है ऐसे प्रकृतिस्थानसंक्रमका अपने प्रतिपक्षके साथ कथन करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

\* उसमें सर्व प्रथम गाथासूत्रोंकी समुत्कीर्तना जाननी चाहिये ।

§ २०८ इस प्रकृतिस्थानसंक्रमका कथन करते समय सर्व प्रथम प्रकृतिस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाले गाथासूत्रोंकी समुत्कीर्तना करनी चाहिये यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है ।

\* यथा—

§ २०९ गाथासूत्रोंके अग्रतारकी अपेक्षा रखनेवाला यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

अट्ठाईस, चौबीस, सत्रह, सोलह और पन्द्रह इन पाँच स्थानोंके सिवा शेष तेईस स्थानोंका संक्रम होता है ॥२७॥

सोलह, वारह, आठ, वीस और तीन अधिक आदि वीस अर्थात् तेईस, चौबीस, पच्चीस, छव्वीस, सत्ताईस और अट्ठाईस इन दस स्थानोंके सिवा शेष अठारह प्रतिग्रह-स्थान होते हैं ॥२८॥

छव्वीस और सत्ताईस संक्रमस्थानोंका वारिस, पन्द्रह, ग्यारह और उन्नीस इन चार प्रतिग्रहस्थानोंमें नियमसे संक्रम होता है । ॥२६॥

१ कर्मप्रकृति संक्रम गा० १० । २ कर्मप्रकृति संक्रम गा० ११ । ३. कर्मप्रकृति संक्रम गा० १२ ।

सत्तारसेगवीसासु संक्रमो गियम पचवीसाए ।  
 गियमा चदुसु गदीसु य गियमा दिद्वीगए तिविहे ॥३०॥  
 वावीस पणणरसगे सत्तग एक्कारसूणवीसाए ।  
 तेवीस सकमो पुण पंचसु पंचिदिणसु हवे ॥ ३१ ॥  
 चोहसग दसग सत्तग अट्टासगो च गियम वावीसा ।  
 गियमा मणुसगईए विरदे मिस्से अविरदे य ॥३२॥  
 तेरसय णवय सत्तय सत्तारस पणय एक्कवीसाए ।  
 एगाधिगाए वीसाए संक्रमो छ्वपि सम्मत्ते ॥ ३३ ॥  
 एत्तो अवसेसा संजमन्दि उवसामगे च खवगे च ।  
 वीसा य संक्रम दुगे छक्के पणए च बोद्धवा ॥ ३४ ॥

पञ्चोत्तरप्रकृतिक संक्रमस्वानक्य सत्रह और इक्कीस इन दो प्रतिग्रहस्थानोंमें नियमसे संक्रम होता है । यह संक्रमस्वान चारों गतियोंमें तथा दृष्टिगत अथात् मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि इन तीन गुणस्थानोंमें नियमसे होता है ॥३॥

तेईसप्रकृतिक संक्रमस्वानक्य बारह, पन्द्रह, सात, ग्यारह और उन्नीस इन पाँच प्रतिग्रहस्थानोंमें संक्रम होता है । यह संक्रमस्वान सभी पंचेन्द्रियोंमें ही पाया जाता है ॥३१॥

बारहसप्रकृतिक संक्रमस्वानक्य चौदह, दस, छत, और अठारह इन चार प्रतिग्रहस्थानोंमें नियमसे संक्रम होता है । यह संक्रमस्वान मनुष्यगतिक रहत हुए विरत, विरताविरत और अविरतसम्यग्दृष्टि इन तीन गुणस्थानोंमें ही पाया जाता है ॥३२॥

इक्कीसप्रकृतिक संक्रमस्वानका घेरह, नी, सात, सत्रह, पाँच और इक्कीस इन छह प्रतिग्रहस्थानोंमें संक्रम होता है । ये छहों प्रतिग्रहस्थान सम्यक्त्व अवस्थामें ही पाये जाते हैं ॥३३॥

इससे आगेके बाकीक बचे हुए बीस आदि सब संक्रमस्वान और छह आदि सब प्रतिग्रहस्थान संयमयुक्त उपपन्नभेदिणि और सपरकभेदिनिमें ही होते हैं । यथा—बीस प्रकृतिक संक्रमस्वानक्य छह और पाँच इन दो प्रतिग्रहस्थानोंमें संक्रम जानना चाहिए ॥३४॥

पंचसु च ऊणवीसा अद्वारस चदुसु होंति वोद्धव्वा ।  
 चोद्दस छसु पयडीसु य तेरसयं छक्क-पणगम्हि' ॥३५॥  
 पंच-चउक्के वारस एक्कारस पंचगे तिग चउक्के ।  
 दसगं चउक्क-पणगे णवगं च तिगम्हि वोद्धव्वा' ॥३६॥  
 अद्द दुग तिग चउक्के सत्त चउक्के तिगे च वोद्धव्वा ।  
 छक्कं दुगम्हि णियमा पच तिगे एक्कग दुगे वा' ॥३७॥  
 चत्तारि तिग चदुक्के तिगिण तिगे एक्कगे च वोद्धव्वा ।  
 दो दुसु एगाए वा एगा एगाए वोद्धव्वा' ॥३८॥

उन्नीसप्रकृतिक संक्रमस्थानका पांच प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें, अठारहप्रकृतिक संक्रमस्थानका चारप्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें, चौदहप्रकृतिक संक्रमस्थानका छह प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें और तेरहप्रकृतिक संक्रमस्थानका छह और पांच प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानोंमें संक्रम होता है ऐसा जानना चाहिये ॥३५॥

बारहप्रकृतिक संक्रमस्थानका पांच और चार प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानोंमें, ग्यारह प्रकृतिक संक्रमस्थानका पांच, तीन और चार प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानोंमें, दसप्रकृतिक संक्रमस्थानका चार और पांच प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानोंमें तथा नौप्रकृतिक संक्रमस्थानका तीनप्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें संक्रम होता है ऐसा जानना चाहिये ॥३६॥

आठप्रकृतिक संक्रमस्थानका दो, तीन और चारप्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानोंमें, सातप्रकृतिक संक्रमस्थानका चार और तीन प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानोंमें, छहप्रकृतिक संक्रमस्थानका नियमसे दोप्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें तथा पांचप्रकृतिक संक्रमस्थानका तीन, एक और दो प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानोंमें संक्रम होता है ऐसा जानना चाहिये ॥३७॥

चारप्रकृतिक संक्रमस्थानका तीन और चार प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानोंमें, तीन प्रकृतिक संक्रमस्थानका तीन और एक प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानोंमें, दोप्रकृतिक संक्रमस्थानका दो और एक प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानोंमें तथा एकप्रकृतिक संक्रमस्थानका एकप्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें संक्रम होता है ऐसा जानना चाहिये ॥३८॥

१ कर्मप्रकृति संक्रम गा० १८ । २ कर्मप्रकृति संक्रम गा० १९ । ३. कर्मप्रकृति संक्रम गा० २० । ४. कर्मप्रकृति संक्रम गा० २१ ।

अणुपुञ्जमणुपुञ्जं शीणमशीणं च दंसये मोहे ।  
 उवसामगे च स्वगे च सक्रमे मग्गणोवाया ॥३६॥  
 एकवेक्कमिह य द्वाणे पडिग्गहे संक्रमे तदुमए च ।  
 भविया वाऽभविया वा जीवा वा केसु ठाणेषु ॥३७॥  
 कटि कम्हि होंति ठाणा पंचविहे भावविधिविसेसम्हि ।  
 संक्रमपडिग्गहो वा समाणणा वाध केवचिरं ॥३८॥  
 णिरयगइ-अमर-पंचिदिएसु पंचेव संक्रमद्वयणा ।  
 सञ्जे मणुसगईए सेसेसु तिगं असणणीसु ॥३९॥  
 च्चदुर दुगं तेवीसा मिञ्छत्ते भिस्सग्गे य सम्भत्ते ।  
 वावीम पणय छक्कं विरदे मिस्से अविरदे य ॥४०॥  
 तेवीस सुक्कलेस्से छक्कं पुण तउ-पम्मलेस्सासु ।  
 पणय पुण काज्ज एणीलाए किण्हलेस्साए ॥४१॥

भानुपूर्वामक्रमस्थान, भनानुपूर्वासक्रमस्थान, दहनमोहनीयक भयस प्राप्त हुए  
 मक्रमस्थान, दर्शनमोहनीयके सपके बिना प्राप्त हुए सक्रमस्थान, उपजामकके प्राप्त  
 हुए सक्रमस्थान आर सपकक प्राप्त हुए सक्रमस्थान इस प्रकार ये सक्रमस्थानोंके  
 विषयमें गवेषणा करनेक उपाय है ॥३७॥

प्रतिग्रह, मक्रम और तदुभयरूप एक एक स्थानमेंस कितने स्थानोंमें भय्य जीव  
 होते है, कितने स्थानोंमें अमय्य जीव होत है आर कितने स्थानोंमें अन्य मार्गनाबाले  
 जाव होते है ॥४०॥

यथायोग्य पाँच प्रकारक भावोंस युक्त चाइर गुणस्थानोंमेंस किय गुणस्थानमें  
 कितने संक्रमस्थान आर कितने प्रतिग्रहस्थान हाते है। तथा किसक कितना  
 काल है ॥४१॥

नरकगति, इषगति आर पपेन्द्रिय निषधोंमें पाँच, भनुप्यगतिमें सब तथा धपमें  
 अथात् ण्दन्द्रियों आर विक्कन्त्रियोंमें तथा भमहिधोंमें कान संक्रमस्थान होत है ॥४२॥

विप्याम्बमें चार, मय्यगिमप्याम्बमें दो, मय्यकम्बमें तइम, बिरतमें चारिम,  
 बिरताबिरतमें पाँच आर अबिरतमें छह मक्रमस्थान होत है ॥४३॥

मुक्कन्तरपामें तइम पात आर पमतरपामें छह तथा कपान नील और कृष्ण  
 तरपामें पाँच मक्रमस्थान हात है ॥४४॥

अवगयवेद-एवुंसय-इत्थी-पुरिसेसु चाणुपुञ्जीए ।  
 अट्टारसयं एवयं एक्कारसयं च तेरसया ॥४५॥  
 कोहादी उवजोगे चटुसु कसाएसु चाणुपुञ्जीए ।  
 सोलस य ऊणवीसा तेवीसा चैव तेवीसा ॥४६॥  
 णाणम्हि य तेवीसा तिविहे एक्कम्हि एक्कवीसा य ।  
 अण्णाणम्हि य तिविहे पंचेव य संकमट्टाणा ॥४७॥  
 आहारय-भविएसु य तेवीसं होति संकमट्टाणा ।  
 अणाहारएसु पंच य एक्कं ट्टाणं अभविएसु ॥४८॥  
 छ्वीस सत्तवीसा तेवीसा पंचवीस वावीसा ।  
 एदे सुण्णट्टाणा अवगदवेदस्स जीवस्स ॥४९॥  
 उगुवीसट्टारसयं चोदस एक्कारसादिया सेसा ।  
 एदे सुण्णट्टाणा णवुंसए चोदसा होंति ॥५०॥  
 अट्टारस चोदसयं ट्टाणा सेसा य दसगमादीया ।  
 एदे सुण्णट्टाणा वारस इत्थीसु वोद्धव्वा ॥५१॥

अपगतवेद, नपुंसकवेद, स्त्रीवेद और पुरुषवेदमें क्रमसे अठारह, नौ ग्यारह और तेरह संक्रमस्थान होते हैं ॥४५॥

क्रोधादि चार कपायोंमें क्रमसे सोलह, उन्नीस, तेईस और तेईस संक्रमस्थान होते हैं ॥४६॥

मति आदि तीन प्रकारके ज्ञानोंमें तेईस, एक मनःपर्ययज्ञानमें इक्कीस और तीनों प्रकारके अज्ञानोंमें पाँच ही संक्रमस्थान होते हैं ॥४७॥

आहारक और भव्य जीवोंमें तेईस, अनाहारकोंमें पाँच और अभव्योंमें एक ही संक्रमस्थान होता है ॥४८॥

अपगतवेदी जीवोंमें छव्वीस, सत्ताईस, तेईस, पच्चीस और वाईस ये पाँच संक्रमस्थान नहीं होते ॥४९॥

नपुंसकवेदमें उन्नीस, अठारह, चौदह और ग्यारह आदि शेष सब स्थान अर्थात् कुल मिलाकर चौदह संक्रमस्थान नहीं होते ॥५०॥

स्त्रियोंमें अर्थात् स्त्रीवेदवाले जीवोंमें अठारह और चौदह तथा दस आदि शेष सब स्थान इस प्रकार ये वारह संक्रमस्थान नहीं होते ॥५१॥



अणुपुञ्जमणुपुञ्जं शीणमशीणं च दंसणे मोहे ।  
 उवसामगे च स्वगे च सक्रमे मग्गणोवाया ॥३६॥  
 एक्केक्कमिहिय द्वाणे पडिग्गहे संक्रमे तदुमए च ।  
 भविया वाऽभविया वा जीवा वा केसु ठाणेषु ॥४०॥  
 कदि कम्मि ह्येति ठाणा पंचविहे भावविधिविसेसमिहिय ।  
 संक्रमपडिग्गहो वा समाणणा वाध केवचिरं ॥४१॥  
 णिरयगइ-अमर-यंचिदिएसु पंचेव संक्रमद्वयणा ।  
 सल्ले मणुमगइए सेसेसु तिगं असणणीसु ॥४२॥  
 चतुर दुगं तेवीसा मिच्छत्ते मिस्सग्गे य सम्भत्ते ।  
 वावीस पणय छक्कं विरदे मिस्से अविरदे य ॥४३॥  
 तेवीस सुक्कल्लेस्से छक्कं पुण तउ-पम्मलेस्सासु ।  
 पणय पुण काऊए णीलाए किरहलेस्साए ॥४४॥

अनुपूर्वसंक्रमस्वान, अनानुपूर्वसंक्रमस्वान, दशनमोहनीयके भयस प्राप्त हुए  
 संक्रमस्वान, दर्शनमोहनीयके भयके बिना प्राप्त हुए संक्रमस्वान, उपशमकृत प्राप्त  
 हुए संक्रमस्वान और भयकके प्राप्त हुए संक्रमस्वान इस प्रकार ये संक्रमस्वानोंके  
 विषयमें गवेषणा करनेक उपाय है ॥३९॥

प्रतिग्रह, संक्रम आर तदुमपरूप एक एक स्वानमेंसे कितने स्वानोंमें मध्य जीव  
 होते हैं, कितने स्वानोंमें अमध्य जीव होते हैं और कितने स्वानोंमें अन्य मार्गजावाल  
 जीव होते हैं ॥४०॥

यथायोग्य पाँच प्रकारक भावोंसे युक्त आदर गुणस्वानोंमेंसे कितने गुणस्वानमें  
 कितने संक्रमस्वान और कितने प्रतिग्रहस्वान होते हैं । तथा कितना कितना  
 काल है ॥४१॥

नरक्यानि, देवगति और पंचेन्द्रिय तिर्यचोंमें पाँच, मनुष्यगतिमें सब तथा पक्षमें  
 अथात् एकन्द्रियों आर विकल्पत्रयोंमें तथा अमशियोंमें तीन संक्रमस्वान होत हैं ॥४२॥

मिथ्यात्वमें चार, सम्पत्तिमिथ्यात्वमें दो, सम्पत्त्वमें त्रय, विगतमें चार, स,  
 विगाविरतमें पाँच आर अविगतमें छह संक्रमस्वान होत हैं ॥४३॥

भुक्त्वस्यामें त्रय, पीत आर पचलक्ष्यामें छह तथा क्वापत नील और कृष्ण  
 लक्ष्यामें पाँच संक्रमस्वान होत हैं ॥४४॥

अवगयवेद-एवुंसय-इत्थो-पुरिसैसु चाणुपुञ्चीए ।  
 अट्टारसयं एवयं एक्कारसयं च तेरसया ॥४५॥  
 कोहादी उवजोगे चट्टुसु कसाएसु चाणुपुञ्चीए ।  
 सोलस य ऊणवीसा तेवीसा चैव तेवीसा ॥४६॥  
 णाणम्हि य तेवीसा तिविहे एक्कम्हि एक्कवीसा य ।  
 अण्णाणम्हि य तिविहे पंचेव य संकमट्टाणा ॥४७॥  
 आहारय-भविएसु य तेवीसं होंति संकमट्टाणा ।  
 अणाहारएसु पंच य एक्कं ट्टाणं अभविएसु ॥४८॥  
 छ्वीस सत्तवीसा तेवीसा पंचवीस वावीसा ।  
 एदे सुण्णट्टाणा अवगदवेदस्स जीवस्स ॥४९॥  
 उगुवीसट्टारसयं चोदस एक्कारसादिया सेसा ।  
 एदे सुण्णट्टाणा णवुंसए चोदसा होंति ॥५०॥  
 अट्टारस चोदसयं ट्टाणा सेसा य दसगमादीया ।  
 एदे सुण्णट्टाणा वारस इत्थीसु वोद्धव्वा ॥५१॥

अपगतवेद, नपुंसकवेद, स्त्रीवेद और पुरुषवेदमें क्रमसे अठारह, नौ ग्यारह और तेरह संक्रमस्थान होते हैं ॥४५॥

क्रोधादि चार कपायोंमें क्रमसे सोलह, उन्नीस, तेईस और तेईस संक्रमस्थान होते हैं ॥४६॥

मति आदि तीन प्रकारके ज्ञानोंमें तेईस, एक मनःपर्ययज्ञानमें इक्कीस और तीनों प्रकारके अज्ञानोंमें पाँच ही संक्रमस्थान होते हैं ॥४७॥

आहारक और भव्य जीवोंमें तेईस, अनाहारकोंमें पाँच और अभव्योंमें एक ही संक्रमस्थान होता है ॥४८॥

अपगतवेदी जीवोंमें छ्वीस, सत्ताईस, तेईस, पच्चीस और वाईस ये पाँच संक्रमस्थान नहीं होते ॥४९॥

नपुंसकवेदमें उन्नीस, अठारह, चौदह और ग्यारह आदि शेष सब स्थान अर्थात् कुल मिलाकर चौदह संक्रमस्थान नहीं होते ॥५०॥

स्त्रियोंमें अर्थात् स्त्रीवेदवाले जीवोंमें अठारह और चौदह तथा दस आदि शेष सब स्थान इस प्रकार ये चारह संक्रमस्थान नहीं होते ॥५१॥

चोद्धसगणवगमादी ह्वंति उवसामये च स्वगणे च ।  
 एदे सुगणद्याणा दस वि य पुरिसिस्तु वोद्धवा ॥५२॥  
 णव अट्ट सत्त छक्क पणग दुगं एक्कय च वोद्धवा ।  
 एद सुगणद्याणा पढमकसायोवजुत्तेसु ॥५३॥  
 सत्त य छक्क पणगं च एक्कयं च एणुपुब्बीए ।  
 एदे सुगणद्याणा विदियकसाओवजुत्तेसु ॥५४॥  
 दिट्ठे सुण्णासुण्णे वेदकसाएसु च ए द्वाणसु ।  
 मग्गणगवेसणाए दु संकमो आणुपुब्बीए ॥५५॥  
 कम्मंसियद्याणेषु य वधद्याणेषु सकमद्याणे ।  
 एक्केक्केण समाणय वंधेण य सकमद्याणे ॥५६॥  
 सादि य जहण्ण संकम कदिसुत्तो होइ ताव एक्केक्के ।  
 अविरहिद सातरं केवचिर कदिभाग परिमाणं ॥५७॥  
 एवं दब्बे खेत्ते काले भावे य सण्णिवादे य ।  
 संकमणयं एयविदु एया मुददेसिदमुदारं ॥५८॥

पुरुषोमें उपशामक और सपकस सम्पन्न रखनवाले र्णादह शार ना आदि शेष सप्त  
 म्यान इम प्रकार ये दस मक्रमस्यान नहीं होते ॥५२॥

प्रथम श्लोचरूपायस पुक्त जाबोमें नी, आठ, सात, छह, पाँच, दो और एक ये  
 मात सक्रमस्यान नहीं होते ॥५३॥

दूसर मानरूपायसे उपपुक्त जाबोमें क्रमसे सात, छह, पाँच चार एक ये चार  
 मक्रमस्यान नहीं होते ॥ ५४॥

इम प्रकार बेट आर रूपाय मार्गणामें कितने सक्रमस्यान हैं और कितन नहीं हैं  
 इगका विषय कर लनपर इमो प्रकार गति आदि शेष मार्गणाओंमें भी पत्रतत्रानुपूर्वीकि  
 क्रमम इनका विषय करना चाहिये ॥ ॥

माइनीयक मत्क्रमस्यानोंमें और पापस्यानोंमें संक्रमस्यानोंकर विषय करते समय  
 एक एक पापस्यान और मत्क्रमस्यानक माप आनुपूर्वीसे सक्रमस्यानोंका विषय  
 करना चाहिये ॥ ५५॥

मादि, अपन्य, अपपपहुत्त, एक आरकी अपवा काल, एक जीवकी अपेक्षा  
 अन्तर चार भागामाग तथा इमो प्रकार नाना जाबोकर अपत्ता मगविषय, द्रव्य-

६ २१०. एवमेदाओ वृत्तीम मुत्तगाहाओ पयडिड्डाणमंक्रमे पडिवद्दाओ त्ति उचं होइ । एत्थ पढमगाहाए ठाणममुषिक्तणा मगतोभावियपयडिड्डाणमंक्रममपडिवद्दा । विदियगाहाए वि पयडिड्डाणपडिग्गहो तदपडिग्गहो च पडिवद्दो । पुणो तदणंतरोवग्गिम-दसगाहाओ एदस्सेदम्म पयडिड्डाणमंक्रमम्म एत्तियाणि एत्तियाणि पडिग्गहद्दाणाणि हांति त्ति एवंविहम्म अत्यविसेमम्म सामित्तमहमयस्स परूवणट्टमोडिण्णाओ । पुणो अणुपुच्चमणणुपुच्चमिच्चेदीए तेग्गमीए गाहाए पयडिमकमद्दाणाणं दंयण-चरित्तमोहक्खव-णोवसामणादिविमयविसेमस्सिदृण मसुपत्तिक्रमपरूवणट्टमाणुपुच्चिमकमादिअट्टपदाणि सूचिदाणि । तदणंतरोवग्गिमगाहा वि संक्रमपडिग्गह-तदुभयद्दाणाणं मग्गणट्टदाए गदियादि-चोहममग्गणद्दाणाणि देमामामियभावेण सूच्चेदि । तत्तो अणंतरोवग्गिमगाहासुत्तपुच्चद्व पयदमंक्रमद्दाणाणमाधारभृदाणि गुणद्दाणाणि मच्चिदाणि, तेहि विणा सामित्तपरूवणो-वायाभावादो । पच्छिमद्वे वि सामित्ताणंतरपरूवणाजोगं कालाणिओगहारं सेमाणिओग-द्वाराणं देमामामियभावेण सूचिदमिदि घेत्तव्वं । पुणो एत्तो उवग्गिमसत्तगाहासुत्तेहि गदियादिचोहममग्गणद्दाणेसु जत्थतत्थाणुपुच्चीए संक्रमद्दाणाणं मग्गणा कीरदे । पुणो

प्रमाणानुगम, क्षेत्रानुगम, स्पर्शनानुगम, नाना जीवोंकी अपेक्षा काल, नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर, भाव और मन्निर्कष इन अनुयोगद्वारोंके आश्रयसे नयके जानकार पुरुष प्रकृतिमंक्रमविषयक उक्त गाथाओंके उदार अर्थको मूल श्रुतके अनुसार जानें ॥७७-७८॥

§ २१० इस प्रकार प्रकृतिस्थानसंक्रममे सम्बन्ध रगनेवालों ये वृत्तीम सूत्रगाथाए हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । उनमेंसे पहली गाथामें स्थानोत्तरा निर्देश किया है । उनमें वतलाया है कि कितने प्रकृतिस्थानसंक्रम हैं और कितने प्रकृतिस्थान श्रमकम हैं । दूसरी गाथामें प्रकृतिस्थान-प्रतिग्रह कितने हैं और प्रकृतिस्थानश्रमप्रतिग्रह कितने हैं यह वतलाया है । फिर इन दो गाथाओंके वादकी दस गाथाएँ इस इस प्रकृतिस्थानसंक्रमके ये ये प्रतिग्रहस्थान हांते हैं इस तरहके अर्थविशेष का कथन करनेके लिये आई हैं । साथ ही उनमें अपने अपने स्थानके स्वामीका भी निर्देश किया है । फिर अणुपुच्चमणणुपुच्च इत्यादि तेरहवीं गाथा द्वारा दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी क्षण और उपशमना आदि त्रिपयक विशेषताका आश्रय लेकर प्रकृतिसंक्रमस्थानोंके उत्पत्तिका क्रम द्विरत्नानेके लिये आनुपूर्वीसंक्रम आदि आठ स्थान सूचित किये गये हैं । फिर उससे अगली गाथा भी संक्रमस्थान, प्रतिग्रहस्थान और तदुभयस्थान इनकी गवेषणा करनेके लिये देशामर्परूपसे गति आदि चौदह मार्गस्थानोंको सूचित करती है । फिर इससे आगेकी गाथाके पूर्वार्धमें प्रकृतिसंक्रमस्थानोंके आधारभूत गुणस्थानोंका संकेत किया है, क्योंकि इनका निर्देश किये बिना स्वामित्वका कथन नहीं किया जा सकता है । फिर इसी गाथाके उत्तरार्धमें स्वामित्वके वाद कथन करने योग्य कालानुयोगद्वारोंको ग्रहण किया है जिससे कि देशामर्परूपसे शेष अनुयोगद्वारोंका सूचन होता है । फिर इससे आगेकी सात गाथाओं द्वारा गति आदि चौदह मार्गस्थानोंमें यत्रतत्रानुपूर्वीके क्रमसे संक्रमस्थानोंका विचार किया गया है । फिर भी इससे आगेकी सात गाथाएँ

वि उचरिमसत्तयाहाओ मगगाविससे अस्सिऊअ सुण्णहाणाणि पस्सेवि । किं सुण्णहाण  
 णाम ? अस्स अ संतकम्महाण ण समवद् तन्व तस्स सुण्णहाणववपसो । तदन्तरो-  
 वरिमाए पुअ गाहाए वव-संक्रम-सतकम्महाणाणमणोणसण्णियासविहाण ध्विद ।  
 अबसेसदोगाहाओ गुणहाणसंबंधेण पुअपरुविदाणमणिभोगहारणं गुणहाणविवत्तअ  
 विणा मगगणहाणसंबंधेण विसेसेपुअं पस्सवण्णुमागहाओ वि णिच्छओ कायओ ।  
 एवमेसो गाहामुत्ताअ समुदायत्थो पस्सिदो । अथयवत्पत्रिदरणं पुण पुग्दो वत्तस्सामो ।

§ २११ संपदि सुत्तसमुत्थिचणागतं तदत्यविवरणं कृणमाणा सुण्णिसुत्तवारी  
 सुत्तसमुत्थिदाणमणियोगहारणं पस्सवण्णुत्तसुत्तं मणइ—

● सुत्तसमुत्थिदाणं समस्ताप इमे अविद्योगहरा ।

§ २१२ गाहासुत्तसमुत्थिचणाअंतरमेदाणि अणियोगहारणि पपदिहाणमंक्रम-  
 विसयाणि णादव्याणि चि मणिदं होइ ।

● तं अहा ।

§ २१३ सुगमं ।

● ठाअसमुत्थिदाणा सव्वसकमो णोसव्वसंकमो ठहस्ससकमो

मार्गोपनिषेधोऽपी अपेक्षा इत्यस्यालोच्य कथनं कर्तव्यं ।

संज्ञा—इत्यस्याम किसे कथ्यते ?

समाधान—जहाँ जो सत्कर्मस्वान्त सम्भव नहीं है, वहाँ वह इत्यस्यैव कथ्यता है ।

किं इत्येते आगेकी गाथामें कथ्यस्वात्, संक्रमस्वान् और सत्कर्मस्वान् इनके परस्परों  
 समिकर्मकी विधि सूचित की गई है । अब यही श्रेय हो गाथाएँ सो व जिन अनुयोगाहाएँके  
 गुणस्वानोंके सम्बन्धसे पहले कथन कर आया है कथ्य गुणस्वानोंकी विवक्षा किये बिना मार्गोपनि-  
 षेधे सम्बन्धसे विशेष कथन करनेके श्रेय आर्य हैं ऐसा विचार्य करना चाहिये । इस प्रकार यह  
 गाथासूत्रोंके समुच्चय है जिसका कथन किया । किन्तु हमके मतके पर्याय आर्य आगे  
 करेंगे ।

§ २११. अब गाथा सूत्रोंकी समुत्थिर्वना करनेके बाद उनके आर्यके विचार्य करते हुए पूर्ण-  
 सूत्रकार ग बाह्मूत्रोंसे सूचित होनेवाले अनुयोगाहाएँके कथन करनेके किये आगेका सूत्र कथ्यते हैं—

● गाथासूत्रोंकी समुत्थिर्वना करनेके बाद ये अनुयोगहारं शातम्यं है ।

§ २१२ गाथासूत्रोंकी समुत्थिर्वना करनेके बाद प्रकृतस्वान्तसंक्रमसे सम्बन्ध रखनेवाले वे  
 अनुयोगाहारं शातम्यं हैं यह एक सूत्रकथ्य वाच्य है ।

● यथा—

§ २१३ यह सूत्र सुगमं है ।

● स्थानसमुत्थिर्वना, सर्वसक्रम, नोसर्वसक्रम, उत्कृष्ट संक्रम, अनुत्कृष्ट संक्रम,

१ आ प्रथे विसेधे पुत्र इति अत्र ।

अणुक्कससंकमो जहणसंकमो अजहणसंकमो सादियसंकमो अणादिय-  
संकमो धुवसंकमो अद्धुवसंकमो एगजीवेण सामित्तं कालो अंतरं एणा-  
जीवेहि भंगविचओ कालो अंतरं सणियासो अप्पावहुअं भुजगारो  
पदणिकखेवो वड्ढि त्ति ।

§ २१४. एत्थ द्वाणसमुच्चिन्नादीणि वट्ठिपजंताणि अणियोगद्वाराणि णाट्ठ्वाणि  
भवन्ति त्ति मुत्तत्थमंवंधो । तत्थ समुच्चिन्नादीणि अप्पावहुअपज्जवसाणाणि चउवीस-  
अणियोगद्वाराणि, भागाभाग-परिमाण-खेत्त-पोमण-भावानुगमाणमेत्थ देसामासयभावेण  
संगहियत्तादो । एवमेदाणि चउवीसमणियोगद्वाराणि सामण्णेण मुत्ते परूविदाणि ।  
एदेसु सच्च-णोमसच्च-उक्कम्माणुक्कस्म-जहण्णाजहण्णमंक्रमा मणियासो च एत्थ ण  
संभवन्ति, पयडिद्वाणमंक्रमे णिरुद्धे तेसिं संभवानुवलंभादो । तदो सेससत्तारसअणियोग-  
द्वाराणि एत्थ गहियच्चाणि । पुणो एदेहितो पुघभूदाणि भुजगारादीणि तिण्णि  
अणियोगद्वाराणि मुत्तणिहिद्वाणि घेत्तच्चाणि । संपहि एवं पस्विदसच्चाणियोगद्वारेहि  
गाहासुत्तथविहासणं कुणमाणो चुणिसुत्तयारो तत्थ ताव द्वाणसमुच्चिन्नापरूवणदु-  
सुवग्गिमपर्वंधमाह ।

❀ शाणसमुच्चिन्ना त्ति जं पदं तस्स विहासा जत्थ एया गाहा ।

जघन्यसंक्रम, अजघन्यसंक्रम, सादिसंक्रम, अनादिसंक्रम, ध्रुवसंक्रम, अध्रुवसंक्रम, एक  
जीवकी अपेक्षा स्वामित्व, काल और अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भगविचय, काल,  
अन्तर, मन्त्रिकर्ष, अल्पवहुत्व, भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि ।

§ २१४ यहाँ स्थानसमुत्कीर्तनासे लेकर वृद्धि पर्यन्त अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं यह इस  
सूत्रका अभिप्राय है । उनमेंसे समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पवहुत्व तक चौबीस अनुयोगद्वार हैं, क्योंकि  
इनमें देशामर्षकभावसे भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्थान और भावानुगमना समग्र हो जाता है ।  
इस प्रकार ये चौबीस अनुयोगद्वार सामान्यरूपसे सूत्रमें कहे गये हैं । इनमेंसे सर्वसंक्रम,  
नोसर्वसंक्रम, उत्कृष्टसंक्रम, अनुत्कृष्टसंक्रम, जघन्यसंक्रम, अजघन्यसंक्रम और सन्निकर्ष ये सात  
अनुयोगद्वार यहाँ सम्भव नहीं हैं, क्योंकि प्रकृतिस्थानसंक्रमके विचिन्तित रहते हुए उक्त अनुयोग-  
द्वारोंका पाया जाना सम्भव नहीं है । इसलिये यहाँ पर शेष सत्रह अनुयोगद्वारोंको ग्रहण करना  
चाहिये । तथा इनसे अतिरिक्त भुजगार आदि जो तीन अनुयोगद्वार हैं जो कि सूत्रनिर्दिष्ट हैं उनको  
ग्रहण करना चाहिये । अब इस प्रकार कहे गये सब अनुयोगद्वारोंके द्वारा गाथासूत्रोंके अर्थका  
विशेष व्याख्यान करनेकी इच्छासे चूर्णिसूत्रकार पहले उन अनुयोगद्वारोंमेंसे स्थानसमुत्कीर्तनाका  
कथन करनेके लिये आगेके प्रबन्धका निर्देश करते हैं—

\* अब 'स्थानसमुत्कीर्तना' पदका विशेष व्याख्यान करते हैं जिसमें एक  
गाथा निबद्ध है ।

१२१८ पुष्पुत्ताजमणियोगदत्ताणमात्सिम्भं च पठ ठविद् अणसमुच्चित्वा चि  
तम्स विहासा कारदि चि मुचन्वसबधो । तत्प य पगा गाहा पडिपदा चि ज्ञापावणह  
'अत्प प्या गाहा' पडिपदा चि भणिद् । सपहि का सा गाहा चि जासकाए इदमाह—

अट्टावीस चउवीस सत्तरस सोलसेव पराणरसा ।

एदे न्वलु मोत्तूणं सेसाणं सकमो होइ ॥२७॥

१२१९ णसा गाहा अणसमुच्चित्तणे पडिपदा चि उर्धं होइ । संपहि एदिस्से  
गाहाण अत्पविहासणहुमिदमाह—

ॐ पचमेवाणि पच द्वाणाणि मोत्तूणं सेसाणि सेवीस सकमद्वाणाणि ।

१२१७ 'पचमेदाणि' चि वपणेण गाहासुत्तपुम्बदण्डिदिङ्गाणमट्टावीसदीण  
परामरसो क्खो । तेसि संखावित्सेतावहारणह 'पंच द्वाणाणि' चि उर्धं । ताभि मोत्तूण  
समाणि सकमद्वाणाणि होति । तेसि च सखाण वित्सेसणिदारणह 'सेवीस' माहणं क्य ।  
तवो २८, २४, १७, १६, १५ एदाणि पच द्वाणाणि असकमपाथोत्तगाणि । सेसाणि  
गतावीमादीभि सेवीस सकमद्वाणाणि चि सिद्ध । सेसिमक्खणिणासो णसो २७, २६,  
२५, २३, २२, २१, २०, १९, १८, १४, १३, १२, ११, १०, ९, ८, ७, ६, ५,  
४ ३ २, १ । सपहि णसिं द्वाणाणं पयडिजिरेसकणहसुत्तपुत्ताजपारो क्खिरद—

१ १। पुरोक्त अनुयोगद्वारोके आदिमें जो 'स्वनसमुत्कीर्तना पच आया है उसका विशेष  
व्याख्यान करत है वह पठ सत्रम् प्रकरणगत अर्थ है । इस विषयमें एक गाथा आई है वह  
अतःकं क्रिये सुम्भ 'अत्प प्या गाहा पडिपदा' यह कहा है । अब वह बीसवीं गाथा है एसी  
आरोक्ष हाल पर बलव्य निर्देश करत है—

'अट्टाईस, चौबीस, सत्तर, सोलह और पन्त्रह इन पाँच स्वानोंके सिवा छप तेईस  
स्वानोंकर सकम होता है ।'

१ २। यह गाथा स्वन समुत्कीर्तन अनुयोगद्वारस सम्बन्ध रखती है वह कुछ कथनव्य  
व्यस्य है । अब इस गाथाके अर्थका विशेष व्याख्यान करनेके क्रिये आगेय सूत्र करत है—

० इस प्रकार इन पाँच स्वानोंके सिवा छप तेईस संक्रमस्थान हैं ।

१ २। बुद्धिपूर्वमें जो 'पचमेवाणि पच आया है सो इस पत्रके द्वाय गाथासूत्रके  
पुरोर्धमें बतलव्य गय आट्टाईस आदि स्वानोंय निर्देश किया है । इनकी संख्याविशेषकर निश्चय  
करनेके क्रिये 'पंच द्वाणमि' यह कहा है । उनके सिवा छप संक्रमस्थान हैं । इनकी संख्याविशेषकर  
निश्चय करनेके क्रिये 'सुम्भ' पत्रके आरंभ किया है । इसमें २८ २४ १७ और १५ य पाँच  
स्वान संक्रमके अवयव हैं आरंभ १० आदि वेम्भ संक्रमस्थान हैं यह बात सिद्ध होती है ।  
इनका अर्थविश्याम इस प्रकार है—२७ २६ २५, २२, २१ २ १९ १८ १४ १३ १२  
११ १ ६ ८ ७ ६ ५ ४ ३ और १ । अब इन स्वानोंकी प्रतीकोंका निर्देश करनेके क्रिये

❀ एतद् पयडिणिद्देसो कायन्वो ।

॥ २१८. एदेसु अणतरणिहिदुमंक्रमामंक्रमद्वानेषु एदाहि पयडीहि एदं टाणं होइ ति जाणादणमिचं पयडिणिहेमो कायन्वो ति भणिदं हाइ । तत्थ ताव अट्टावीस-पयडिद्वानस्म पयडिणिहेमो सुवोहो ति कादण तदमंक्रमपाओग्गत्ते कारणगवेमणदं पुच्छायव्वमाह —

❀ अट्टावीसं केण कारणेण या संकमद ?

॥ २१९. सुगममेदमामंकावयणं ।

❀ दंसणमोहणीय-चरित्तमोहणीयाणि एक्केकम्मि ए संकमति ।

॥ २२०. कुदो ? सहावदो चेव तेगिमण्णोण्णपडिग्गहसत्तीए अभावादो ।

❀ तदो चरित्तमोहणीयस्स जाओ पयडीओ वज्झति तत्थ पणुवीसं पि संकमति ।

२२१. ममाणजाडयत्तं पडि विमेमाभावादो । अज्झमाणियासु कि कारणं पत्थि नंक्रमो ? ण, तत्थ पाडग्गहसत्तीए अभावादो ।

❀ दंसणमोहणीयस्स उक्कस्सेण दो पयडीओ संकमति ।

प्रागका सूत्र कश्ते ह—

\* यहाँ पर प्रकृतियोंका निर्देश करना चाहिये ।

§ २१८ ये जो समनन्तरपूर्व संक्रमस्थान और अन्तमस्थान तबला आयें हैं उनमेंसे इस स्थानकी उत्तरी प्रकृतिवा होती हैं यह जतानेके लिय प्रकृतियोंका निर्देश करना चाहिये यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है । उनमें भी अट्टाईस प्रकृतिक स्थानकी प्रकृतियोंका निर्देश सुगम ह एसा मान कर वह स्थान संक्रमके अयोग्य क्यों ह इसके कारणका विचार करनेके लिये पृच्छासूत्र कहते हैं—

\* अट्टाईस प्रकृतिक स्थान किस कारणसे संक्रमित नहीं होता ।

§ २१९ यह आशक सूत्र सुगम है ।

\* क्योंकि दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय ये परस्परमें संक्रम नहीं करती ।

§ २२० क्योंकि स्वभावसे ही उनमें परस्पर प्रतिग्रहरूप शक्ति नहीं पाई जाती है ।

\* इसलिये चारित्रमोहनीयकी जितनी प्रकृतियाँ बंधती हैं उनमें पच्चीस प्रकृतियोंका ही संक्रमित होती हैं ।

§ २२१ क्योंकि एक जातिकी अपेक्षा उनमें कोई भेद नहीं है ।

शंका—नहीं बधनेवाली प्रकृतियोंमें संक्रम क्यों नहीं होता ?

ममाधान—नहीं क्योंकि उनमें प्रतिग्रहरूप शक्ति नहीं पाई जाती ।

\* तथा दर्शनमोहनीयकी अधिकसे अधिक दो प्रकृतियाँ संक्रमित होती है ।



§ २२२ किं कारण ? अज्ञातीससतकम्मियमिच्छाद्विम्मि मिच्छत्तपडिग्गोएण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तापं संकंतिदसणादो ।

● एतेषु कारणेषु अज्ञातीसाए जत्थि सक्कमो ।

§ २२३ जेप कारणेण तिण्ह दंसुणमोहपयवीणमक्कमेण सक्कमसमवो जत्थि तेप कारणेण अज्ञातीसाए संकमो जत्थि वि मणिदं होइ ।

§ २२४ एवमेविण्ण पर्वणेण अज्ञातीसपयणिग्गणास्स अस्सक्कमपाप्पोग्गत्ते कारण परुविय सपहि सत्तावीसपयडिसक्कमद्वाचस्स पयडिभिद्देसविहासणहुमिदमाइ—

● सत्तावीसाए काओ पयवीओ ।

§ २२५ सुगममेद पुच्छमसुत्तं ।

● पणुवीस चरित्तमोहणीयाओ दोयिष वसणमोहणीयाओ ।

§ २२२ क्योंकि अज्ञातस प्रकृतियोंकी सत्ताबाले मिच्छादृष्टिके मिच्छात्व प्रकृति प्रतिपत्त्य रूप रखती है वसमें सम्बन्धन तथा सम्बन्धिभ्याम् इत दो प्रकृतियोंका ही संकम पाया जाता है। तथा सम्बन्धिके भी मिच्छात्व और सम्बन्धिभ्याम्का ही संकम देखा जाता है। कारण यह है कि वर्तनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंका एक साथ संकम नहीं होया किन्तु अधिकसे अधिक दो प्रकृतियोंका ही संकम पाया जाता है।

● इस कारणसे अज्ञातस प्रकृतिक स्थानका संकम नहीं होता ।

§ २२३ यथा वर्तनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंका सुगमत्त संकम होना सम्भव नहीं है अतः अज्ञातस प्रकृतिक स्थानका संकम नहीं होता यह एक कथनका व्यत्यय है ।

विशेषार्थ—मोहनीयकी अज्ञातस प्रकृतिका मुख्यतया वर्तनमोहनीय और चारित्रमोहनीय इन दो भ्रमोंमें बंधी हुई है। इनमेंसे वर्तनमोहनीयका तीन और चारित्रमोहनीयके पञ्चीस भङ हैं। पसा नियम है कि वर्तनमोहनीयका चारित्रमोहनीयमें और चारित्रमोहनीयका वर्तनमोहनीयमें संकम नहीं होया क्योंकि इनकी एक जाति नहीं है। त्वारि त्रिस समय चारित्रमोहनीयकी कितनी प्रकृतियाँ बंधती हैं उनमें कसकी सब प्रकृतियोंका तो संकम बन जाता है किन्तु वर्तनमोहनीयकी अपेक्षा एक साथ दो प्रकृतियोंसे अधिकका संकम नहीं होता क्योंकि मिच्छात्व मुख्यस्थानमें मिच्छात्व प्रकृति प्रतिपत्त्य रूप रखती है वहाँ वसका संकम सम्भव नहीं और सम्बन्धिके सम्बन्ध प्रकृति प्रतिपत्त्य रूप रखती है वहाँ वसका संकम सम्भव नहीं है। इसीसे प्रकृतमें अज्ञातस प्रकृतिक संकमस्वाग नहीं होया यह कल्याण है ।

§ २२४ इस प्रकार इतने प्रसङ्गके द्वारा अज्ञातस प्रकृतिक स्थान संकमके अभाव है इसका कारण यह है कि सत्तावीसपयडिसक्कमका प्रकृतिक संकमस्वागकी प्रकृतियोंका विधान करनेके लिये यह सूत्र व्यत है—

● सत्तावीस प्रकृतिक स्थानकी क्वीनसी प्रकृतियाँ हैं ?

§ २२५ यह सूत्रामुत्र सुगम इ ।

● चारित्रमोहनीयकी पञ्चीस और वर्तनमोहनीयकी दो ये सत्तावीस प्रकृतियाँ हैं ।

६ २२६. मोलसकसाय-णवणोऋमायभेएण पणुवीसं चरित्तमोहणीयपयडीओ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसण्णिदाओ मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्तसण्णिदाओ वा दोष्णिण दंमण-मोहणीयपयडीओ च घेत्तूण सत्तावीमाण मरुमट्टाणमुप्पज्जटि त्ति भणिटं होइ ।

\* छव्वीसाए सम्मत्ते उव्वेल्लिदे ।

६ २२७. सत्तावीसगंक्रामयमिच्छाडड्डिणा सम्मत्ते उव्वेल्लिदे मते सेसच्छव्वीग-पयडिममुदायप्पयमेदं संकमट्टाणमुप्पज्जटि त्ति सुत्तथो । पयागंतरेणावि तप्पट्टप्पायणट्ट-मुत्तरो सुत्तावयागे—

❧ अह्वा पढमसमयसम्मत्ते उप्पाइदे ।

६ २२८. पढमसमयविसंसिदं सम्मत्तं पढमसमयसम्मत्त । तस्मि उप्पाइदे पयदसंकमट्टाणमुप्पज्जट, तत्थ सम्मामिच्छत्तम्म संक्रामाभावादो । त कथं ? छव्वीग-संतकम्मियमिच्छाडड्डिस्य पढमसम्मत्तुप्पायणमए मिच्छत्तकम्म सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-मरुवेण परिणमइ, ण तस्मि सए सम्मामिच्छत्तम्म सकमगंभवो, पुच्चमणुप्पणस्स ताथे चे उप्पज्जमाणस्स तप्परिणामविरोहादो मनुप्पायणे वावटस्स जीवस्स संक्रामण-

§ २२६ मोलह कपाय आर नो नोऋपायाके भेत्तमे चारित्रमोहनीयधी पञ्चिम प्रकृतियों तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्रित्य या मिश्रित्य और सम्यग्मिश्रित्य ये दो दर्शनमोहनीयकी प्रकृतियों मिलाकर सत्ताईस प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है ।

\* इन सत्ताईसमेंसे सम्यक्त्वकी उद्वेलना होने पर छव्वीस प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है ।

§ २२७. सत्ताईस प्रकृतियोंके संक्रामक मिश्रित्य जीवके द्वारा सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर लेने पर शेष छव्वीस प्रकृतियोंका समुदायरूप सक्रमस्थान उत्पन्न होता है यह उक्त सूत्रका अर्थ है । अथ प्रकारान्तरसे उक्त स्थानके उत्पन्न करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

\* अथवा सम्यक्त्वके उत्पन्न करनेके प्रथम समयमें छव्वीस प्रकृतिक संक्रम-स्थान होता है ।

§ २२८ सूत्रमें 'प्रथम समय' पद सम्यक्त्वका विशेषण है और 'सम्यक्त्व' विशेष्य है । इसलिये इस सूत्रका यह आशय है कि प्रथम समयसे युक्त सम्यग्दर्शनके उत्पन्न होने पर अर्थात् सम्यग्दर्शनके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें प्रकृत सक्रमस्थान उत्पन्न होता है, क्योंकि वहाँ सम्यग्मिश्रित्यका सक्रम नहीं होता ।

शंका—सो कैसे ?

समाधान—छव्वीस प्रकृतियोंकी सत्तागला जो मिश्रित्य जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्वको उत्पन्न करता है उसके प्रथमोपशम सम्यक्त्वके उत्पन्न करनेके प्रथम समयमें मिश्रित्य कर्म सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्रित्यरूपसे परिणामन करता है । इसलिये उस समय सम्यग्मिश्रित्यका संक्रम सम्भव नहीं है, क्योंकि जो प्रकृति पहले न उत्पन्न होकर उसी समय उत्पन्न हो रही है उसका उसी समय संक्रमरूप परिणामन माननेमें विरोध आता है । दूसरे जो जीव सत्ताके उत्पन्न करनेमें लगा हुआ है उसके उसी समय सक्रमकरणकी प्रवृत्ति माननेमें विरोध आता है, इसलिये

करणावावरोहो वा । तन्मा छम्बीससंतकम्मियस्त पनुवीससंकमद्वाजे सम्मचुप्पि-  
पढमसमए मिच्छत्तस्त सकमपाओग्गत्तिसिद्धीएँ छम्बीममकमद्वाजसमवो ति सिद्ध ।

⊗ पणुवीसाए सम्मत्त-सम्माभिच्छत्तहि विष्वा सेसाओ ।

‡ २२९. पनुवीसाए सकमद्वाजस्त काओ पयडीओ ति आसकिय सम्मत्त-  
सम्माभिच्छत्तेहि विष्वा सेसाओ होंति चि उच । सेम सुगम ।

⊗ चठवीसाए किं कारणं पत्थि ।

‡ २३० एत्थ सकमो चि पपरणवसेणाहिसंबंओ कयव्वो । सेसं सुगमं ।

छम्बीस प्रकृतिबोधो सत्तावातो मिष्पाट्टिके पच्छीस प्रकृतिक संक्रमस्वानकं एतत्तुप चच वर  
सम्पत्तकी करणिके प्रथम समयमें मिष्पाट्टिका संक्रमको योग्य कर सेवा है एव वस्तुके छम्बीस  
प्रकृतिक संक्रमस्वान होता है यह निश्चय हुआ ।

विशेषार्थ—यहाँ छम्बीस प्रकृतिक संक्रमस्वान दो प्रकारसे कथ्यया है । प्रथम प्रकारमें  
सोस्य कयाव नौ माकयाव तथा सम्मग्गिष्पाट्टर वे छम्बीस प्रकृतियां की हैं । यह संक्रमस्वान  
सम्पत्तकी बद्धन्तके वर मिष्पाट्टिके गुणस्वानमें प्राप्त होता है । यद्यपि यहाँ सत्तावत प्रकृतियोंकी  
मत्ता है तथापि यहाँ मिष्पाट्टरक संक्रम समग्र नहीं इसलिये संक्रमस्वान छम्बीस प्रकृतिक ही  
हवा है । दूसरे प्रकारमें मात्रह कयाव नौ नोकयाव और मिष्पाट्टर य छम्बीस प्रकृतियां की हैं ।  
यह संक्रमस्वान जो ब्रह्मोस प्रकृतियोंकी सत्तावाता जीव प्रबन्धेयत्तम सम्पत्तका प्राप्त करता है  
उसके प्रथम समयमें हाता है । यद्यपि यहाँ सत्ता बद्धान्त प्रकृतियोंकी हो जाती है तथापि यहाँ  
प्रथम समयमें सम्मग्गिष्पाट्टरक संक्रम नहीं होता इसलिये यहाँ भी ब्रह्मोस प्रकृतिक संक्रमस्वान  
होता है यह वक्त कथनका व्यत्यय है ।

⊗ पच्छीस प्रकृतिक संक्रमस्वानमें सम्पत्त और सम्मग्गिष्पाट्टके बिना शेष  
मव प्रकृतियां हैं ।

‡ २२६ पचीस प्रकृतिक संक्रमस्वानकी कौतसी प्रकृतियां हैं एही आराक करके सम्पत्त  
और सम्मग्गिष्पाट्टके बिना शेष सब प्रकृतियां हैं यह कहा है । शेष कथन सुगम है ।

विशेषार्थ—यहक यह कथन भाव है कि सत्तावत प्रकृतिक संक्रमस्वानमें आरिजमाहनीयकी  
पच्छीस तथा वरानमोहनत्वकी वा ये सत्तावत प्रकृतियां होती हैं । वनमेंसे वरानमोहनीयकी  
दो प्रकृतियां निश्चय होने पर पच्छीस प्रकृतिक संक्रमस्वान होता है । तथापि वे दो प्रकृतियां  
कौतसी हैं जो सत्तावत प्रकृतियोंमेंसे निश्चयो गई हैं । यह एक मरत है । जिसका कतर वेत हुप  
वृत्तिसूत्रमें यह कथ्यया है कि वे दो प्रकृतियां सम्पत्त और सम्मग्गिष्पाट्टर हैं । जिन्हें निश्चय  
हैने पर पच्छीस प्रकृतिक संक्रमस्वान होता है । आराव यह है कि मिष्पाट्टिके जीवके जब सम्म-  
ग्गिष्पाट्टरकी भी बद्धन्त हो जाती है एव यह पचास प्रकृतिक संक्रमस्वान प्राप्त हाता है । वा  
क्यापि मिष्पाट्टिके भी मिष्पाट्टके बिना यह संक्रमस्वान होता है ।

⊗ पचीस प्रकृतिक स्वानका किस कारणसे संक्रम नहीं होता ।

‡ २३३ इम एत्तमें प्रकट्ठवरा 'संक्रम' इत्त परक्य सम्मत्त कर जत्त वादिये । शेष  
कथन सुगम है ।

❖ अणंताणुबंधिणो सञ्चे अवणिज्जंति ।

§ २३१. जेण कारणेण अणंताणुबंधिणो सञ्चे जुगवमवणिज्जति तेण चउवीमाए पयडिद्वानसम मकमो णत्थि त्ति सुत्तत्थसंबंधो । तेमिमवमेणावणयणे चउवीमसंतकम्मं होदूण तेवीसमंकमद्वानमेवुप्पज्जदि त्ति भावत्थो ।

❖ एदेण कारणेण चउवीसाए णत्थि ।

§ २३२. एदेणाणतरपरुविदेण कारणेण चउवीमाए णत्थि मंकमो त्ति भणिटं होड ।

❖ तेवीसाए अणंताणुबंधीसु अवगदेसु ।

§ २३३. अणताणुबंधीसु विमंजोडदेसु डगिवीसकमाय-दोदंसणमोहणीयपयडीओ घेत्तूण तेवीसमंक्रमद्वानं होदि त्ति सुत्तत्थो ।

❖ वावीसाए मिच्छुत्ते खविदे सम्मामिच्छुत्ते सेसे ।

\* क्योकि मव अनन्तानुबन्धियाँ निकल जाती हैं ।

§ २३१ यत्त मव अनन्तानुबन्धियाँ युगपत् निकल जाती हैं अत चात्र स प्रकृतिक स्थानका मक्रम नहीं होता यह इम सूत्रका तात्पर्य है । उन चार अनन्तानुबन्धियोंके एक साथ निकल जाने पर चौबीस प्रकृतिक मत्कर्मस्थान होकर मंकमस्थान तेईसप्रकृतिक ही उत्पन्न होता है यह उक्त वचनका भावार्थ है ।

\* इम कारणसे चौबीस प्रकृतिक स्थानका मंकम नहीं होता ।

§ २३२ यह जो अनन्तरपूर्व कारण कह आये हैं उसमें चौबीस प्रकृतिक स्थानका संक्रम नहीं होता है यह उक्त वचनका तात्पर्य है ।

विशेषार्थ—चौबीस प्रकृतिकस्थान चार अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना होने पर ही प्राप्त होता है अन्य प्रकारसे नहीं । किन्तु इन चौबीस प्रकृतियोंमें दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियाँ भी सम्मिलित हैं, अतः चौबीस प्रकृतिक संक्रमस्थान नहीं होता यह कहा है ।

\* चार अनन्तानुबन्धियोंके अपगत होने पर तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २३३ अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना हो जाने पर इकीस कपाय और दो दर्शनमोहनीय इन प्रकृतियोंको लेकर तेईस प्रकृतिकसंक्रमस्थान होता है यह इम सूत्रका अर्थ है ।

विशेषार्थ—आशय यह है कि जब यह जीव चार अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना कर लेता है तब चौबीस प्रकृतियोंकी सत्ता और तेईस प्रकृतियोंका संक्रम होता है । यहाँ दर्शनमोहनीयकी दो प्रकृतियोंमेंसे मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये दो प्रकृतियाँ संक्रमयोग्य ली गई हैं । किन्तु ऐसे जीवके मिथ्यात्वमें जाने पर सत्ता तो अद्वैतकी ही जाती है तथापि संक्रम एक आवलि काल तक तेईसका ही होता रहता है, क्योंकि तब एक आवलि काल तक चार अनन्तानुबन्धियोंका संक्रम नहीं होता ऐसा नियम है । उस अपेक्षासे यहाँ दर्शनमोहनीयकी सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये दो प्रकृतियाँ लेनी चाहिये, क्योंकि मिथ्यात्व गुणस्थानमें मिथ्यात्वका संक्रम नहीं होता ऐसा नियम है ।

\* मिथ्यात्वका क्षय हो जाने पर और सम्यग्मिथ्यात्वके शेष रहने पर चाईस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २३४ तेन च विमंजोऽप्यनताणुपभाषउद्वेग दसुणमोहकसुवणमम्बुद्रिय मिच्छते खरिद इगिबीसकसाय-मम्मामिच्छतपयटीओ पण्णद सकमहाणमुप्यउद्वि उत होए ।

⊙ अहवा षठवीसदिसंतकम्मिपस्स आणुपुष्पीसकमे कदे जाव षसु सयवेधो अणुपसतो ।

§ २३० 'षठवीसंतकम्मिय' वयणं सेसमतकम्मियपडिसेहफल, तस्य पयद सकमहाणममभामावाधो । 'आमुपुष्पीसकम कद' चि वयणमआणुपुष्पीसकमपडिसहई, तस्स पयदविरोहिघादो । तत्त्व चि णसुसयवेद अमुबसंते वेव पयदसकमहाणमुप्यउद्वि चि जाणावणहु णसुमयवेद अणुवसंते चि भणिदं । तम्मि उबसंते पयदसकमहाणादो हेट्टिमहाणम्म ससुप्पचिदसणाणे । ओदरमाणम्म षठवीसमतकम्मियस्स इतियवेदे ओकट्टिदे जाव णसुमयवेदो अणोक्कट्टिणे ताव पयदहाणसमवो जत्थि । णवरि मो एत्थ ण विवक्खित्तो षट्ठमाणस्सेव पहाणमावेणावलवियतादो ।

§ २३४ जिसम अनस्तानुपुष्पीसकमी विसंयोजना थी है वसा जीव दरानमोहनीयकी वरणाके श्रिय उद्यत होकर जब मिथ्यावचन कय कर देता है तब इहंस कयाव और सम्मनमिथ्यात्व इन प्रकृतियोंकी वरकर यह संकमस्वान उत्पन्न होता है यह वचन कयनका तात्पर्य है ।

विशेषार्थ—यद्यपि मिथ्यात्वकी वरणक कद सत्ता वरिस प्रकृतियोंकी हाथी है तथापि सम्मनप्रकृति संकमसे कय ग्य इमसे संकम वरिस प्रकृतियोंकी ही हाथ है यह वचन कय वचनमिथ्या है ।

⊙ अबवा षासीम प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके आनुपूर्वी संकमका प्रारम्भ करने पर जब तक नपुसकवेदका उपसम नहीं होता है तब तक वरिस प्रकृतिक संकमस्वान हाता है ।

§ २३५ सुयमं वो 'षठवीसंतकम्मिय' यह वचन दिया है सो इसका कय संय संकमस्वानोका नियेय करता है क्योंकि इनके उपसममें प्रकृत संकमस्वान नहीं हो सक्ता है । सुयमं 'आणुपुष्पीसकमे कदे' यह वचन अनस्तुपूर्वी संकमका प्रतियेव करनेके श्रिये आया है क्योंकि यह प्रकृतका विरोधी है । उसमें भी नपुसकवेदका वरणम हो म पर ही प्रकृत संकमस्वान उत्पन्न होया है यह वचनके श्रिय 'षसु सयवेधे अणुपसतो' यह कया है क्योंकि नपुसकवेदका वरणम हो जाने पर प्रकृत संकमस्वानसे नीचेके स्तानकी उत्पत्ति होती जाती है । इमामनेशिये वरले समव षोबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके श्रियेवका वरणकर्य होकर जब तक नपुसकवेदका वरणकर्य नहीं होता है तब तक प्रकृत स्तान सम्मन है, किन्तु यह वरिस विवक्खित्त पायी है, क्योंकि वरणम श्रिय पर वरणमका जीव ही वरणमस्वसे वरिस वरिणकर किया गया है ।

विशेषार्थ—इमामनेशिये यह वरिस प्रकृतिकसंकमस्वान दो प्रकारसे बण्णका है । ववा—इमामनेशिये पर वरले समव षोबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जिस जीवने वरणकरक करनेके पाव आनुपूर्वी संकमका प्रारम्भ कर दिया है उसके जब तक नपुसकवेदका वरणम नहीं होया है तब तक यह वरिस प्रकृतिक संकमस्वान वरिण होया है । यद्यपि इस जीवके सत्ता इहंस कयाव और तीज दरानमोहनीय इन षोबीस प्रकृतियोंकी है तथापि इमसे सम्मन और संकम

❖ एकवीसाए खीणदंसणमोहणीयस्स अक्खवग अणुवसामगस्स ।

§ २३६. खीणदंसणमोहणीयस्स अक्खवगाणुवसामगस्स इगित्रीमगंक्रमद्विगण-  
मुप्पज्जत्ति मुत्तत्थमंघंधो खवगमुवसामगं च वज्जिययुण्णत्थ' खीणदंसणमोहणीयस्स  
पयदमंक्रमद्विगणमंघंधो त्ति भणिटं होह । किमिट्ठि खवगोवसामगपग्गिज्जणं कीरदे ? ण,  
तत्थाणुपुञ्जीसंक्रमादिवग्गेण द्वाणंतरूपत्तिदंसणादो । एत्थ खवगोवसामगववएसो  
अणियट्ठिअट्ठाए संखेज्जेसु भागेषु गंदेषु मखेज्जदिमेषु भागेषु विवग्गिसओ, तत्थेव  
खवणोवसामणवावारपत्तिदंसणादो ।

❖ चउवीसदिसंतकम्मियस्स वा एउंसयवेदे उवसति इत्थिवेदे  
अणुवसंते ।

लोभ इन दो प्रकृतियोंका संक्रम नहीं होता, अतः यहाँ चार्डस प्रकृतिविक्रमस्थान प्राप्त होता है ।  
दूसरा प्रकार यह है कि यह जीव उपशमश्रेणिसे उतरता हुआ खीवेदका अपवर्षण करनेके बाद  
जब तक नपुंसकवेदका अपरुपण नहीं करता है तब तक चार्डस प्रकृतिकसंक्रमस्थान होता है ।  
यहाँ आनुपूर्वीसंक्रमके न रहनेसे यद्यपि लोभका संक्रम तो होने लगता है पर अभी नपुंसकवेदका  
संक्रम नहीं प्रारम्भ हुआ है इसलिये चार्डस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है । इस प्रकार यद्यपि  
उपशमश्रेणिसमें चार्डस प्रकृतिक दो संक्रमस्थान होते हैं तथापि चूर्णिकारने चढते समयके एक संक्रम-  
स्थानका ही निर्देश किया है दूसरेका नहीं । दूसरेका क्यों निर्देश नहीं किया उसका कारण बतलाते  
हुए टीकामें जो कुछ लिखा है उसका भाव यह है कि उतरते समय जो चार्डस प्रकृतिक संक्रमस्थान  
प्राप्त होता है उसे प्रधान न मानकर उसका उल्लेख नहीं किया है ।

\* जिनने दर्शनमोहनीयका क्षय कर दिया है किन्तु जो क्षपक या उपशमक  
नहीं है उसके इक्कीस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

२३६ जिनने दर्शनमोहनीयका क्षय कर दिया है किन्तु जो क्षपक या उपशमक नहीं  
है उसके इक्कीस प्रकृतिक संक्रमस्थान उत्पन्न होता है यह इस सूत्रका तात्पर्य है । क्षपक या  
उपशमकको छोड़कर जिसने दर्शनमोहनीयकी क्षपणा कर दी है ऐसे जीवके अन्यत्र प्रकृत संक्रम-  
स्थान सम्भव है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

शंका—क्षपक और उपशमकका निषेध क्यों किया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि क्षपक या उपशमकके आनुपूर्वी संक्रम आदिके कारण दूसरे  
स्थानोंकी उत्पत्ति देखी जाती है ।

प्रकृतमें क्षपक और उपशमक यह सहा अनिवृत्तिकरणके कालका बहुभाग व्यतीत होकर  
एक भाग शेष रहने पर जो जीव स्थित है उनकी अपेक्षा विवक्षित है, क्योंकि क्षपणा और  
उपशमनारूप व्यापारकी प्रवृत्ति वहीं पर देखी जाती है ।

\* अथवा चौथीम प्रकृतिक सत्कर्मवाले जीवके नपुंसकवेदका उपशम होने पर  
और खीवेदका उपशम नहीं होने पर इक्कीस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

१२३७ आणुपूर्वीसंक्रमवशेण सोमम्यामक्यमगो होऊण ओ द्विजो षडवीस सतकम्मिओ उवसामओ तस्स बानीसमकमपयड्डीसु णपुमयवदे उवसति इत्थिबेदं चानु-  
वसति इगिबीससकमहुण पयारतरपडिबद्दमुप्पज्ज । जमेदं सुच देसामासियं तेण  
षडवीससतकम्मियउवससमसम्माइड्ढिस्स सासणमाव पडिबण्णाम्मस पडमावस्सियाए षडवीस-  
सतकम्मियसम्मामिच्छाइड्ढिस्स वा इगिबीससकमहुण पयारतरपडिगगहिय होइ ति  
वत्तव्व, तत्थ पयारतरपरिहारेण पयदसकमहुणसिद्धीए णिम्भाइमुबलंमादी । अओ  
वेय ओदरमाजगस्स वि षडवीससतकम्मियस्स सत्तसु कम्मसु बोक्कड्ढिबेसु आव इत्थि-  
णवुसपवेदा उवसता ताव इगिबीससतकम्महुणसमभो सुचतम्मूदो वत्ताणेयम्भो ।

१२३७ आणुपूर्वी संक्रमके चरथ सोम संग्रहणस्य संक्रम नदी चरनेच्छा जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्ताबाध्य उपरामक बीज है इसके चरथ संक्रम प्रकृतियोंमेंसे नपुंसकवेदक्य उपराम होने पर और बीजेदक्य उपराम नहीं होने पर प्रचरणन्तरसं इषीस प्रकृतिक संक्रमस्वान् इत्यम होता है । यथा यद् सूत्र वेदग्रामयं है अतः इससे यह भी सूचित होता है कि जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्ताबाध्य उपराम सम्यग्दृष्टि बीज सासादन गुणस्वान्तके प्राप्त होता है इसके परकी भावलि कण्ठके भीतर वा चौबीस प्रकृतियोंकी सत्ताबाध्य सम्यग्मिध्यादृष्टिके अग्न्य प्रकारके प्रतिष्ठाके मात्र यह इषीस प्रकृतिक संक्रमस्वान् इत्यन्त होता है, क्योंकि वहाँ पर प्रचरणन्तरक परिहार द्वारा बहुत संक्रमस्वान्तकी सिद्धि निर्वापकमते पर्यं जाती है । तथा इससे सूत्रमें अन्तर्भूत रूप इस म्यानका भी व्याख्यान करना चाहिये कि चौबीस प्रकृतियोंकी सत्ताबाध्य जो जीव उपरामभेदिते वरर र्हा है इसके स्थान मोक्षग्रहण कर्मोद्य अपकरणेण ता हा गया है किन्तु अब तक बीजेद और नपुंसकवेद उपरामत हैं तब तक इषीस प्रकृतिक संक्रमस्वान् सम्भव है ।

विशेषार्थ—यहाँ पर इषीस प्रकृतिक संक्रमस्वान् पाँच प्रकारसे बतलाया है । यथा—(१) जो चाविक सम्यग्दृष्टि बीज अब तक अग्न्य प्रकृतियोंका अग्न्य नहीं चरथ या उपरामभेदिते आणुपूर्वी संक्रमके नहीं प्राप्त होता है तबतक इषीस प्रकृतिक संक्रमस्वान् इत्यम है । (२) जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्ताबाध्य बीज उपरामभेदिते पर चरथा है इसके नपुंसकवेदक्य उपराम हो जाने पर अब तक बीजेदक्य उपराम नहीं होता तब तक इषीस प्रकृतिक संक्रमस्वान् होता है । इस स्थानमें सम्यक्त्व संभवान् सोम और नपुंसकवेदक्य संक्रम नहीं होय दोषक्य होय है । (३) चौबीस प्रकृतियोंकी सत्ता-  
बाध्य जो उपरामसम्यग्दृष्टि बीज सासादन गुणस्वान्तके प्राप्त होता है इसके एक भावलि कण्ठक इषीस प्रकृतिक संक्रमस्वान् होता है । यहाँ पर तीन वर्तनमोक्षनीय और चार अक्षय्यनुकम्पी इन सातका संक्रम नहीं होय । (४) चौबीस प्रकृतियोंकी सत्ताबाध्य जो बीज विन्न गुणस्वान्तके प्राप्त होता है इसके चौबीस प्रकृतिक संक्रमस्वान् होता है । इसके अन्तर्गतानुबन्धीयतुल्य तो हैं ही नहीं और तीन वर्तनमोक्षनीयक्य संक्रम नहीं होता है । (५) वा चौबीस प्रकृतियोंकी सत्ताबाध्य बीज उपरामभेदिते वरर र्हा है इसके और सब कर्मोंके अनुपारान्त हो जाने पर भी अब तक बीजेद और नपुंसकवेद उपरामत यते हैं तब तक इषीस प्रकृतिक संक्रमस्वान् होता है । इसके भी चार अक्षय्यनुकम्पीय तो संशय ही नहीं है और सम्यक्त्व, बीजेद तथा नपुंसकवेदक्य संक्रम नहीं होता है । इस प्रकार के पाँच प्रकारसे इषीस प्रकृतिक संक्रमस्वान् प्राप्त होते हैं । इनमेंसे प्रारम्भके दो संक्रमस्वान्तके तो पूर्वसूत्रकारने चरनं स्तरेण किया है किन्तु सोम तीन संक्रमस्वान्तोंक नहीं किया है । सो पूर्वसूत्र वेदग्रामयं होनेसे सूचित हो जाने हैं ऐसा जानना चाहिये ।

❁ वीसाण एकवीसदिसतकम्मियस्स आणुपुञ्चीसंकमे कदे जावणवुंसयवेदो अणुवसंतो ।

§ २३८. णवुंसयवेदोवसमो फिमट्टमेत्य णेच्छिज्जदे ? ण, तम्मिं उवमंते पयद-विगेहिंसंकमट्ठाणंतरुप्पत्तिदंसणादो । तदो एककारसकसाय-णवणोससायसमुदायप्पयमेदसंकमट्ठाणमिगिगीसमंतकम्मियस्सुवसामगस्स अतरकरणपटमसमयादो जाव णवुंसयवेदाणुवसमो ताव होदि त्ति मुत्तत्थसंगहो । ओदरमाणगस्स पुण णवुंसयवेदे उवमंते चेय पयदसंकमट्ठाणमंभवो त्ति एसो वि अत्थो एत्थेव मुत्ते णिलीणो त्ति वक्खणायच्चो ।

❁ चउवीसदिसंतकम्मियस्स वा आणुपुञ्चीसंकमे कदे इत्थिवेदे उवसत्ते छुसु कम्मेषु अणुवसंतेसु ।

§ २३९. चउवीसदिसंतकम्मंसियस्स वा उवसामगस्स पयदसंकमट्ठाणमुप्पज्जइत्ति संवंधो । कधंभूदस्स तस्स ? आणुपुञ्चीसंकमे कदे णवुंसयवेदोवसामणाणंतरमित्थि-

\* इकीम प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके आनुपूर्वी सक्रमका प्रारम्भ हो जाने पर जब तक नपुंसकवेदका उपशम नहीं होता तब तक वीस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २३८ शंका—यहा पर नपुंसकवेदका उपशम क्यों नहीं स्वीकार किया गया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उमका उपशम हो जाने पर प्रकृत संक्रमस्थानके विरोधी दूसरे सक्रमस्थानकी उत्पत्ति देयी जाती है, इसलिये यहा नपुंसकवेदका उपशम नहीं स्वीकार किया गया है ।

इसलिए इकीम प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक जीवके अन्तरकरण करनेके प्रथम समयसे लेकर जब तक नपुंसकवेदका उपशम नहीं होता है तब तक ग्यारह कपाय आर नी नोकरपायोंके समुदायरूप यह बीस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है यह उस सूत्रका समुच्चयार्थ है । किन्तु उपशमश्रेणिसे उतरनेवाले जीवके तो नपुंसकवेदके उपशान्त रहते हुए ही प्रकृत सक्रमस्थान सम्भव है उस प्रकार यह अर्थ भी इसी सूत्रमें गभित है यह व्याख्यान यहा करना चाहिये ।

\* अथवा चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके आनुपूर्वी संक्रमके बाद स्त्री-वेदका उपशम होकर जब तक छह नोकरपायोंका उपशम नहीं हुआ है तब तक वीस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २३९. अथवा चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक जीवके प्रकृत सक्रमस्थान उत्पन्न होता है ऐसा यहाँ सम्वन्ध करना चाहिये ।

शंका—यह चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशामक जीव कैसा होना चाहिये जब इसके प्रकृत संक्रमस्थान होता है ?

समाधान—जिसने आनुपूर्वीसंक्रम करके नपुंसकवेदका उपशम करनेके बाद स्त्रीवेदका उपशम तो कर लिया है किन्तु छह नोकरपायोंका उपशम कर रहा है उस चौबीस प्रकृतियोंकी

१ ता० प्रती ण तत्थ (त०) म्म इति पाठः । २ ता० प्रती—द्वारणतक्वत्तमदसणादो । इति पाठः ।

३. ता० प्रती—कम्मियस्स इति पाठः ।



वद् उच्यते उज्ज्वोक्तमायाणमुवसामयमावेगावद्विदम्स । तस्य दो दृशणमोहणीयपपडीहिं  
मद् पद्दाम्कमाय-मत्तणोक्तमायाण सक्रमपात्रोगाणमुवलमादो ।

ॐ पृगुण्यीसाए पृक्यीसदिसतकम्मंसियस्स पबु सयवेदे उचसते  
इत्थिवदे अणुपसत ।

§ २४० इगिनीमसतकम्मियस्सुवसामगस्स सोमाणुपुम्भीमकमवसेण समासादिद  
भीमपपडिमकमट्टापस्स कमेण अनुमपवद् उचसते पपदसकमट्टाणमुप्यउद्द पि सुचत्प-  
मर्षो । ओदग्माणग पि सुमस्मिपूणेदस्य ट्टाणस्स समवो समपानिरोहेणाणुगठम्भो,  
सुचस्सेदस्स देमामामपत्तादो ।

ॐ अट्टारसयहमेकाधीसविकम्मसियस्स इत्थिवेदे उचसते जाब सुण्णो  
कसापा अणुपसता ।

§ २४१ तस्सव इगिधामसंतकम्ममियस्स अतरकरणे कदे अनुसय-इत्थिवेदेसु

मत्तान्तर उतरणमक जीवक प्रकृत संक्रमस्थान इत्य है, क्योंकि यहाँ पर संक्रमके बोध्य दो वर्तन  
मादनायक साथ म्पारद कपाय और सत माकपाय प्रकृतियां पाइ जाती हैं ।

विश्लेषार्थ—यहाँ पर भीम प्रकृतिक संक्रमस्थान तीन प्रकारसे प्राप्त होता है जो प्रायिक  
सम्पत्कृति और एक द्वितीवाराम सम्पत्कृति । य तीनों ही संक्रमस्थान वरामनेष्टिमं होते हैं ।  
इनका विवर सुश्रुता टीकामें ही किया है अतः यहाँ नहीं करत हैं ।

० इहाम प्रकृतियोस्मि सत्तावाल जीवके नपुंसकवेदका उपग्रम होकर जब तक  
स्त्रीवेदका उपग्रम नहीं होता तब तक उर्ध्वीस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २४ त्रिम इरहीम प्रकृतियोस्मि सत्तापाल उतरणमक जीवन कामसंग्रहलनमें होनपाय  
आनुपूर्वी संक्रमक कारण भीस प्रकृतिक संक्रमस्थानको प्राप्त कर लिया है इसके क्रमसे नपुंसकवेदके  
उतरणमें दो ज्ञान पर प्रकृत संक्रमस्थान उत्पन्न होता है यह इस सूत्रमें तात्पर्य है । इसी प्रकार  
उतरामभ्रतम उतरनगान जीवकी अनेकाम भी आगमभ्रुमार इन स्थानको ज्ञान सेवा चाहिये  
बर्थाक यह सूत्र उतरणमक है ।

विश्लेषार्थ—यहाँ उर्ध्वीस प्रकृतिक संक्रमस्थान का प्रकारम बतलाया है । एक तो जो प्रायिक  
सम्पत्कृति भीम उतरामभ्रण पर चढ़ रहा है इसके नपुंसकवेदका उतराम ही ज्ञान पर प्राप्त होता है  
क्योंकि तब आगमोत्पन्न और नपुंसकवेदका संक्रम नहीं होता है अथवा होता है । दूसरे यह जीव  
जब उतरामभ्रण उतर कर लद् माकपायोंका ता अतरकर्मण कर सय द क्रियु श्रीवद् और  
नपुंसक वेद उतरणमें ही उदत्त है तब मात्र है । इनके उतरद् और नपुंसकवेदका संक्रम नहीं होय  
जगता होता है । यद्यपि दूसरा प्रकार शूलिपूत्रमें नहीं बतलाया है तथापि यह सूत्र उतरमपरक होनेसे  
इस स्थानका प्रमाण ही ज्ञान है ।

० इहाम प्रकृतियोस्मि सत्तावाल जीवक शावदका उपग्रम होकर जब तक एह  
नारणायोस्म उपग्रम नहीं होता है तब तक अट्टाग्द प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २४२ तर्मा इहाम प्रकृतियोस्मि सत्तावाल जीवके अतरकरण वरमक बाद नपुंसकवेद

उवमंतेसु जाव द्यण्णोकमाया अणुवसंता ताव पयदसंकमट्टाणमेव्वारगमकसाय-सत्तणोकमाय-पडिवद्वमुप्पज्झइ, पुच्चुत्तसंकमपयडीसु इत्थिवेदस्स वहिन्भावो । एवमिगिवीस-चउवीस-संतकम्मिण् अवलांविप उवममसेटीपाओग्गाणि संकमट्टाणाणि वीसादीणि परूविय मंपहि मत्तारसादीण तिण्हमसंकमपाओग्गाट्टाणाणमंभवे कारणणिद्वेमं कुणमाणो उवग्गिं पवंधमाह—

❀ सत्तारसण्हं केण कारणेण एत्थि संकमो ?

§ २४२. सत्तारसण्हं पयडीणं संकमपाओग्गभावेण मंभवो केण कारणेण एत्थि ति पुच्छिदं होइ ।

❀ खवगो एक्कावीसादो एक्कपहारेण अट्ठ कसाए अवणेदि ।

§ २४३. खवगो ताव एक्कावीससतकम्मट्टाणादो एक्कारेणेव अट्ठ कसाए अवणेइ । एवमवणिदे पयदट्टाणुप्पती तत्थ एत्थि ति भणिदं होइ । मंपहि एदस्सेव फुडीकट्टु-मुत्तरमुत्तमाह ।

❀ तदो अट्ठकसाएसु अवणिदेसु तेरसण्हं सकमो होइ ।

§ २४४. जेण कारणेण अट्ठकसाएसु जुगवमवणिदेसु तेरसंकमट्टाणमुप्पज्झइ तेण खवगमस्मिण्णु सत्तारसपयडिट्टाणस्स एत्थि मभवो ति मुत्तत्थमंगहो ।

और स्त्रीवेदका उपशम होकर जबतक छद्म नोऽप्यायाका उपशम नहीं होता तबतक ग्यारह कपाय और मात नोऽप्यायोने सम्बन्ध रखनेवाला प्रकृत सक्रमस्थान उत्पन्न होता है, क्योंकि यहा पर पृथोक्त उन्नीस मंत्रम प्रकृतियोंमेंसे स्त्रीवेद प्रकृति और कम हो गई है । आशय यह है कि चढते समय पीछे जो उन्नीस प्रकृतिक्रमस्थान बतला आये हैं उनमेंसे स्त्रीवेदके कम कर देने पर अठारह प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है । इस प्रकार श्कीस और चौबीस प्रकृतिक सत्त्वस्थानोंका आलम्बन लेकर उग्रमश्रेणिके योग्य नोम आदि सक्रमस्थानोंका कथन करके अब जो सत्रह आदि तीन सक्रमके अयोग्य स्थान बतलाये हैं उनका सक्रम क्यों सम्भव नहीं है इसके कारणका निर्देश करनेकी इच्छासे आगेके प्रबन्धका निर्देश करते हैं—

\* सत्रह प्रकृतियोंका किस कारणसे सक्रम नहीं होता ।

§ २४० सत्रह प्रकृतियों सक्रमके योग्य क्यों नहीं हैं यह उम सूत्रके द्वारा पूछा गया है ।

\* क्योंकि क्षपक जीव इक्कीस प्रकृतियोंमेंसे एक प्रहारके द्वारा आठ कपायोका अभाव करता है ।

§ २४३ क्षपक तो इक्कीस प्रकृतिक सत्त्वस्थानसे एक बारमें ही आठ कपायोको निकाल फेंकता है और इस प्रकार निकाल देने पर बहा प्रकृत स्थानकी उत्पत्ति नहीं होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अब इमी बातको स्पष्ट करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

\* उम लिये आठ कपायोका अभाव कर देने पर तेरहप्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २४४ यतः आठ कपायोका एक साथ अभाव कर देने पर तेरह प्रकृतिक सक्रमस्थान उत्पन्न होता है अत क्षपक जीवकी अपेक्षा सत्रह प्रकृतिकस्थान सम्भव नहीं है यह इस सूत्रका

⊗ उबसामगस्त वि एकावीसदिकम्मसियस्स सुसु कम्मोसु उबसतेसु पारसण्हं सकमो भवदि ।

§ २४५ एकवीससंतकम्मियस्सु उबसामगस्त वि पयडिहाणसंभवो जत्थि । पि सुत्तबसंबंधो । इदो ! तस्साणुपुग्गीमकमवसेण लोमस्सासंकम कादूण जनुस-इत्थिवेदे जहाकमसुवसामिय अहारससकामयमावेजावडिदस्स छु कम्मोसु उबसतेसु पारसण्हं पयडीणं संकमुवलमादो ।

⊗ अठवीसदिकम्मसियस्स सुसु कम्मोसु उबसतेसु चोरसण्हं सकमो भवदि ।

§ २४६ अठवीससंतकम्मियस्स वि उबसामगस्त पयडिहाणसंभवो जत्थि । प कायम्भा, तस्स वि तेवीससंकमहापावो जाणुपुग्गीसकमादिबसेण चावीस-इगिबीस-वीस-संकमहाणाणि उप्पाइय समवडिदस्स छु कम्मोसु उबसतेसु पुरिसवेदेण सह एकारस-कसाय-दोदंसणमोहपयडीणं संकमपाजोममावेणुपुत्तिदंसणादो ।

⊗ एदेण कारणेण सत्तारसण्हं वा सोळसण्हं वा पण्णारसण्हं वा संकमो जत्थि ।

§ २४७ एदण्णंतरपण्णविदेण कारणेण सत्तारसण्हं पयडीणं सकमो जत्थि । अहा सत्तारसण्हमेव सोळसण्हं पण्णारसण्हं च पयडीणं जत्थि वेव संकमो, त्तिपुरिस-समुपायाव हे ।

⊗ इथीस प्रकृतियोक्खी सत्तावासे उपसामकके मी छह नोक्कपायोक्का उपसम होने पर बारह प्रकृतिक संकमस्वान होता है ।

§ २४८. इथीस प्रकृतियोक्खी सत्तावासे उपसामक बीवके मी प्रकृत संकमस्वान सम्मन्न नहीं है यह इस सूत्रक वास्तव है क्योंकि आनुपूर्वी संकमके कारण लोमसंस्कन्ध संकम न करके तथा मनुसकन्द और बीवकक कम्मसे उपसाम करके अठारह प्रकृतिक संकमस्वान प्राप्त होकर स्थित हुए इस बीवके छह नोक्कपायोक्खी उपसम होनेपर बारहप्रकृतिक संकमस्वान उपसम होगा है ।

⊗ तथा चौबीस प्रकृतियोक्खी सत्तावासे उपसामक बीवके छह नोक्कपायोक्का उपसम होने पर पंद्रहप्रकृतिक संकमस्वान होता है ।

§ २४९. वा चौबीस प्रकृतियोक्खी सत्तावासे उपसामक बीव है इसके मी प्रकृत संकम सम्मन्न होगा परी आर्याक करना ठीक नहीं है, क्योंकि सर्वत्र प्रकृतिक संकमस्वानमेंसे आनुपूर्वी संकम आदिके कारण नहीं है इथीस और बीस प्रकृतिक संकमस्वानमेंके स्थान करके अवस्थित हुए इसके कम्मसे छह नोक्कपायोक्खी उपसम हो जानेपर पुनःबीवके साथ अठारह कथाय और दो वरुण-मोहमीव इन बीवह प्रकृतियोक्खी संकममावोमकम्मसे व्यपत्ति वेणी जाती है ।

⊗ इस कारणसे सत्रह सोलह और पन्द्रह प्रकृतियोक्का संकम नहीं होता ।

§ २५०. यह वा अनन्तर बारह कर भाव है इससे सत्रह प्रकृतियोक्का संकम नहीं होय है । और बिस मकर सत्रह प्रकृतियोक्का संकम नहीं होय वसीवकर सोलह और पन्द्रह

संबंधेण गवेसिज्जमाणं तेषिं संभवाणुवलंभादो ।

§ २४८. एवं पयट्थोवमंहारं काळण मंपहि चोदसमंकमट्टाणस्स पयडिणिद्देस-  
मुहेण परूवणट्टमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ चौदसएहं चउवीसदिकम्मंसियस्स छसु कम्मेषु उवसामिदेसु  
पुरिसवेदे अणुवसते ।

§ २४९. मुगममेदं सुत्तं, अणंतरादीटकारणपरूवणाए गयत्थत्तादो । ओदरमाण-  
संबंधेण वि पयट्टाणमंभवो एत्थाणुमग्गियच्चो ।

प्रकृतियोंका भी संक्रम नहीं होता है, क्योंकि तीन पुरुषो ( स्वामियों ) के सम्बन्धसे विचार करनेपर उक्त स्थानोंकी संक्रमस्थानरूपसे सम्भावना नहीं उपलब्ध होती ।

**विशेषार्थ—**यहा सत्रह, सोलह और पन्द्रह प्रकृतिक स्थानोंका संक्रम क्यों नहीं होता है यह बतलाया है जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव क्षपकश्रेणीपर चढता है उसके जत्र प्राठ कपायोंका क्षय होता है तत्र इषीससे इकदम तेरह प्रकृतिक संक्रम स्थान उत्पन्न होता है, इसलिये तो क्षपक-श्रेणियावाले जीवके ये स्थान सम्भव नहीं होनेसे इनका संक्रम नहीं बनता । उपशमश्रेणिकी अपेक्षा भी यदि इषीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशमश्रेणि पर चढता है तो पहले वह आनुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ करके २० प्रकृतिक संक्रमस्थान प्राप्त करता है । फिर नपुंसकवेदका उपशम करके १६ प्रकृतिक संक्रमस्थान प्राप्त करता है । फिर स्त्रीवेदका उपशम करके १८ प्रकृतिक संक्रमस्थान प्राप्त करता है । इसके बाद उसके एक साथ छह नोकपायोंका उपशम होनेसे बारह प्रकृतिक संक्रमस्थान प्राप्त होता है इसलिये उसके भी सत्रह, सोलह और पन्द्रह प्रकृतिक संक्रमस्थान सम्भव न होनेसे उनका संक्रम नहीं बनता है । अत्र रहा चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशमक जीव तो इसके प्रारम्भमें तो तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है, क्योंकि उसके सम्यग्त्वप्रकृतिका संक्रम नहीं होता । फिर आनुपूर्वीसंक्रमका प्रारम्भ होने पर बाईस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है । फिर नपुंसकवेद और स्त्रीवेदका उपशम होने पर क्रमसे इषीस और बीस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है । इसके बाद उसके भी छह नोकपायोंका एक साथ उपशम होनेके कारण चौदह प्रकृतिक संक्रमस्थान उत्पन्न होता है । इस प्रकार इसके भी सत्रह, सोलह और पन्द्रह प्रकृतिक संक्रमस्थान सम्भव नहीं होनेसे उनका संक्रम नहीं होता है । यही कारण है कि प्रकृतमें इन तीन संक्रमस्थानोंका निषेध किया है ।

§ २४८ इस प्रकार प्रकृत अर्थका अपसंहार करके अब चौदह संक्रमस्थानकी प्रकृतियोंके निर्देश द्वारा कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके छह नोकपायोंका उपशम होकर पुरुष वेदका उपशम नहीं होने तक चौदह प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २४९ यह सूत्र मुगम है, क्योंकि अनन्तरपूर्व कारणका कथन करते समय इसका विचार कर चुके हैं । उपशमश्रेणिके उतरनेवाले जीवके सम्बन्धसे भी यहाँ पर प्रकृत स्थानका विचार करना चाहिये ।

**विशेषार्थ—**यहाँ चौदह प्रकृतिकसंक्रमस्थान दो प्रकारसे बतलाया है । एक चढते समय और दूसरा उतरते समय । चढते समय चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जिस जीवके क्रमसे आनुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ होकर नपुंसकवेदका उपशम, स्त्रीवेदका उपशम और छह नोकपायोंका उपशम हो गया है उसके यह स्थान प्राप्त होता है । तथा उतरते समय अप्रत्याख्यानावरण क्रोध और प्रत्याख्यानावरण

⊙ तेरसण्ह षठ्ठीसप्तकम्मसिपस्स पुरिसवेदे उवसत्ते कसाएसु अणुवसत्तेसु ।

§ २६ तस्स च उवीमसत्तकम्मियस्स चोदससकामयमावेणोवड्ढिदस्स पुमुत्त-  
चोदसपयड्ढीसु पुरिसवेद उवमत्ते पयदसकमङ्गार्णमुप्यत्थ, कसायापणमणुवसमे तदुपपीय  
विरोहामावाडो । एव षठ्ठीसप्तकम्मियसवणेण तेरससंकमङ्गाण्युप्याड्य पयारतरेणोवि  
तदुप्यापणहमुत्तसुत्तमाह—

⊙ आबगस्स वा अडकसापस खविदेसु आब अणुपुष्बीसकमो ।  
§ २७ इगिषीसत्तकम्मादो अडकसापसु खविदेसु अदुसंजलण-णवणोकसायाण  
सकमपाओग्गमावेण परिप्फुडमुबलमादो । तदो चैव आब अणुपुष्बीसंकमो चि उत्ते,  
आणुपुष्बीसंकमे नादे लोमसंजलणस्स सकमपाओग्गविणासेण इणंतकल्पपिदसमादो ।

श्लेषक अणुपुष्बीस इत्यत्र अथ तत्र पुरुषवेद अणुपुष्बीस इत्यत्र तत्र तत्र यत्र स्थानं श्लेष इति । प्रथम प्रश्नार्थं लोमसंजलणके सिद्धा ग्याह कथाय पुरुषवेद और सो दर्शनमोदनीय इन औरइ प्रकृतियेक संक्रम होय रहता है । तथा दूसरे प्रश्नार्थं नाह कथाय और दो दर्शनमोदनीय इन औरइ प्रकृतियेक संक्रम हाय रहता है ।

⊙ श्रीषीस प्रकृतियोंकी सत्तावासे जीवके पुरुषवेदके उपधान्त और कथायोंके अनुपधान्त रहत हुए तेरहप्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २८ औरइ प्रकृतियेक संक्रम करनेवाले वही श्रीषीस प्रकृतिक संक्रमस्थाने जीवके पूर्वोक्त औरइ प्रकृतियेकसे पुरुषवेदके अणुपुष्बीस होने पर प्रकृत संक्रमस्थान उत्पन्न होता है, क्योंकि अथ तत्र कथायोंअ अणुपुष्बीस नहीं होता तत्र तत्र इस स्थानकी उत्पत्ति होनेमें कर्षे विरोध नहीं आता । इस प्रकार श्रीषीस प्रकृतिक संक्रमस्थानके संक्रमणसे तेरह प्रकृतिक संक्रमस्थानको उत्पन्न करनेके प्रश्नार्थसे भी इस स्थानकी उत्पन्न करनेके सिद्धे आगेका सूत्र करते हैं—

⊙ तथा अपक श्रीषक आठ कथायोंका अथ हो जाने पर अथ तत्र अनादुपूर्वी संक्रमक संज्ञाह है तत्र तत्र तेरह प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २९ अपकके अथको प्राप्त इत्यस्मिन् प्रकृतियेकसे अथ कथायोंक अथ होनेपर संक्रमके योग चार संभवान और नौ नोकथाय के तेरह प्रकृतियों स्पष्टीकरणसे नार्थ आती हैं, इनीश्रिय अथ तत्र अनादुपूर्वी संक्रम है ऐसा कहा है, क्योंकि अनादुपूर्वी संक्रमक आरम्भ होनेपर लोम संजलण संक्रमके यान्व नहीं रहन्ते दूसरे संक्रमस्थानकी उत्पत्ति देखी जाती है ।

विशेषार्थ—अर्थात् तत्र प्रकृतिक संक्रमस्थान दो प्रकारसे उत्पन्न होता है ऐसा बतलाया है—प्रथम अणुपुष्बीस अथ और दूसरा अणुपुष्बीस अथ । प्रथम स्थान तो श्रीषीस प्रकृतियेकसे अथवा जीवके पुरुषवेदक अणुपुष्बीस अथ हाय है और दूसरा स्थान आठ कथायोंक अथ होनेपर प्राप्त होता है । प्रथम प्रश्नार्थं लोम संजलणके सिद्धा ग्याह कथाय और दो दर्शनमोदनीय इन तेरह प्रकृतियेक संक्रम हाय रहता है और दूसरे प्रश्नार्थं चार संजलण और नौ नोकथाय इन तत्र प्रकृतियेक संक्रम होता रहता है ।

❀ वारसहं खवगरस आणुपुन्वीसंक्रमो आहत्तो जाव एवुंसयवेदो अक्खीणो ।

§ २५२. तस्सेव तेरगमंक्रमयस्स खवगम्म आणुपुन्वीसंक्रमो आहत्तो जाव णवुंगयवेदो अक्खीणो ताव वारसहं मरुमट्टाण होट्ति मुत्तत्थसंगहो ।

❀ एककावीसदिकम्मंसियस्स वा लुसु कम्मसेसु उवसंतसेसु पुरिसवेदे अणुवसंतै ।

§ २५३. एकवीसकम्मंसियस्स वा उवसामयस्स लुसु कम्मसेसु उवसंतसेसु त चेव संक्रमट्टाणमुप्पज्जइ, पुरिसवेदे अणुवसंतै तेण गह एव्वारमरुमायाणं परिग्गहादो । ओदरमाणगस्स डिगिवीमसंतकम्मियस्स पयदमंक्रमट्टाणमभवो वत्तच्चा, तिविहे कोहे ओकट्टिदे तद्वलंभादो । चउवीमसंतकम्मियस्स वारमयकमट्टाणमभवो णत्थि ।

\* क्षपक जीवके आनुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ होकर जब तक नपुंसकवेदका क्षय नहीं होता है तब तक वारह प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २५२ तेरह प्रकृतियोंका संक्रम करनेवाले उभी क्षपक जीवके आनुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ होकर जब तक नपुंसकवेदका क्षय नहीं होता है तब तक वारह प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है यह उक्त सूत्रका समुच्चयार्थ है ।

\* अथवा इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके छह नोकपायोंका उपशम होकर पुरुषवेदके अनुपशान्त रहते हुए वारह प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २५३ अथवा इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक जीवके छह नोकपायोंके उपशान्त हो जानेपर वही संक्रमस्थान उत्पन्न होता है, क्योंकि यद्यपि पुरुषवेदका उपशम नहीं होनेसे उसके साथ संक्रमके योग्य ग्यारह कपायोंको ग्रहण किया है । इसी प्रकार उतरनेवाले इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके प्रवृत्त संक्रमस्थानका कथन करना चाहिये, क्योंकि तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण होने पर उक्त स्थान उपलब्ध होता है । किन्तु चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके वारह प्रकृतिक संक्रमस्थान नहीं प्राप्त होता ।

**विशेषार्थ**—यद्यपि वारह प्रकृतिक संक्रमस्थान तीन प्रकारसे बतलाया है—प्रथम क्षपक श्रेणिकी अपेक्षा और अन्तके दो उपशमश्रेणिकी अपेक्षा । प्रथम स्थान तो क्षपक जीवके आनुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ होनेके बाद जब तक नपुंसकवेदका क्षय नहीं होता तब तक प्राप्त होता है । दूसरा स्थान ज्ञायिक सम्यग्दर्शित उपशामकके चढते समय छह नोकपायोंका उपशम होकर जब तक पुरुषवेदका उपशम नहीं होता तब तक प्राप्त होता है और तीसरा स्थान इसी जीवके उतरते समय तीन प्रकारके क्रोधोंके अपकर्षण होनेके समयसे लेकर जब तक पुरुषवेद उपशान्त रहता है तब तक प्राप्त होता है । प्रथम प्रकारमें चार सञ्चलन और नौ नोकपाय इन तेरह प्रकृतियोंकी सत्ता है पर मञ्चलन लोभके सिवा संक्रम वारहका होता है । दूसरे प्रकारमें सत्ता तो इक्कीस प्रकृतियोंकी है पर संक्रम सञ्चलन लोभके सिवा ग्यारह कपाय और पुरुषवेद इन वारह प्रकृतियोंका होता है । इसी तरह तीसरे प्रकारमें सत्ता तो इक्कीस प्रकृतियोंकी है पर संक्रम वारह कपायका ही होता है ।

⊙ तेरसण्ड चउपीसविकम्मसिपस्त पुरिसवेदे उबसते कसापसु  
अणुवसतेसु ।

§ २६० तस्सव चउपीससतकम्मिपस्त चोइससकामयमावेणोबद्धिदस्स पुप्पुच-  
चोरसपयवीसु पुरिसवेदे उबसते पपदसकमहाभंमुप्पत्तइ, कसायाणमणुवसमे तदुप्पचीए  
विरोहामावादी । एव चउपीससतकम्मियसक्केण तेरससकमहाभंमुप्पत्तइ पमारितरेचोवि  
तदुप्पायणहमुप्पत्तुचमाइ—

⊙ स्वयगस्स वा अइकसापस खविदेसु जाव अणोपुप्पीसकमो १ ।

§ २६१ इगिबीससतकम्मादो अइकसापसु खविदेसु चदुसजलण-णवणोकसायानं  
सकमपाओग्गमावेण परिप्फुडमुचलमादो । तदो चव आव अणोपुप्पीसकमो चि उत्तं,  
माणुपुप्पीसंकमे जाइ लोमसंजलणस्स सकमपाओग्गचविणासेण क्खानतरुप्पचिदसमादो ।

स्वयं च अपकर्ष्य होकर जब तक पुरुषनेव स्वराम्त रहता है तब तक यह स्थान होय है । प्रथम  
प्रकारमें लोमसंजलणके सिवा म्यारइ कयाय पुरुषवेइ और दो वरानमोक्षनीय इन चौरइ  
प्रकृतियोंका संक्रम होता रहता है । तथा दूसरे प्रकारमें जाइ कयाय और दो वरानमोक्षनीय इन  
चौरइ प्रकृतियोंका संक्रम होता रहता है ।

⊙ पीपीस प्रकृतियोंकी सचावाले जीवके पुरुषवेदके उपशान्त और कपायोंके  
अनुपशान्त रहते हुए तेरहप्रकृतिक संक्रमस्वान होता है ।

§ २४ चाइ प्रकृतियोंका संक्रम करनेवाले इती पीपीस प्रकृतिक संक्रमणसे जीवके  
पूर्वोक्त चौरइ प्रकृतियोंमेंसे पुरुषवेदके स्वराम्त होन पर प्रकृत संक्रमस्वान उत्पन्न होता है, क्योंकि  
जब तक कपायोंका स्वराम नहीं हाय तब तक इस स्थानमें उत्पत्ति होनेमें कोई विरोध नहीं  
थाय । इस प्रकार पीपीस प्रकृतिक संक्रमस्वानके सम्बन्धसे तद्व प्रकृतिक संक्रमस्वानके उत्पन्न  
करके प्रश्नउत्तरसे भी इस स्थानमें उत्पन्न करनेके लिये भागोका सूत्र करते हैं—

⊙ तथा अपक जीवके आठ कपायोंका चय हो जाने पर जब तक अनानुपूर्वी  
संक्रमका सद्भाव है तब तक तेरह प्रकृतिक संक्रमस्वान होता है ।

§ २५ अपकके सचाके प्राप्त इकीस प्रकृतियोंमेंसे आठ कपायोंका चय होनेपर  
संक्रमके बोध्य चार संयत्तन और नौ मोक्षवाच के तद्व प्रकृतियों स्वर्दि । कपसे चार जाती हैं,  
इमीक्षिये जब तक अनानुपूर्वी संक्रम है ऐसा कहा है, क्योंकि अनानुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ होनेपर  
लोम संयत्तन संक्रमके बोध्य नहीं रहनेसे दूसरे संक्रमस्वानकी उत्पत्ति होती जाती है ।

विशेषार्थ—प्राग्धे तद्व प्रकृतिक संक्रमस्वान दो प्रकारसे उत्पन्न होता है प्रथम, चउकया  
है—प्रथम स्वरामप्रतिधी अपका और दूसरा एकवेदिकी कयेवा । प्रथम स्थान तो पीपीस  
प्रकृतियोंकी सचावाले जीवके पुरुषवेदके स्वराम होनेपर प्रकृत रहता है और दूसरा स्थान आठ  
कपायोंका चय होनेपर प्राप्त होता है । प्रथम प्रकारमें लोम संयत्तनके सिवा म्यारइ कयाय और दो  
वरानमोक्षनीय इन तद्व प्रकृतियोंका संक्रम होता रहता है और दूसरे प्रकारमें चार संयत्तन  
और नौ कयाय इन तद्व प्रकृतियोंका संक्रम होता रहता है ।

❧ धारसण्हं खवगरस आणुपुञ्जीसंकमो' आढत्तो जाव एवुंसयवेदो अक्खीणो ।

§ २५२. तस्सेव तेरसंगकामयस्म सवगम्म आणुपुञ्जीसंकमो आढत्तो जाव णनुंसयवेदो अक्खीणो ताव वागसण्हं संकमट्ठाणं होइ त्ति मुत्तत्थगगहो ।

❧ एककावीसदिकम्मंसियस्स वा छसु कम्मेषु उवसंतेसु पुरिसवेदे अणुवसंते ।

§ २५३. एकवीसकम्मसियस्म वा उवसामयस्स छसु कम्मेषु उवसंतेसु तं चेव संकमट्ठाणमुप्पज्जइ, पुरिसवेदे अणुवसंते तेण सह एवाग्गमकमायाणं परिग्गहादो । ओदरमाणगस्स ट्ठिगीवीमगतकम्मियस्म पयदमकमट्ठाणसंभवो वत्तच्चो, तिविहे कोहे ओकट्ठिदे तदुवलभादो । चउवीमगतकम्मियस्म वाग्गमकमट्ठाणसंभवो णत्थि ।

\* क्षपक जीवके आनुपूर्वी सक्रमका प्रारम्भ होकर जब तक नपुंसकवेदका क्षय नहीं होता है तब तक वारह प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है ।

§ २५२ तेरह प्रकृतियोंका संक्रम करनेवाले उन्ही क्षपक जीवके आनुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ होकर जब तक नपुंसकवेदका क्षय नहीं होता है तब तक वारह प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है यह उक्त सूत्रका समुच्चयार्थ है ।

\* अथवा इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके छह नोकपायोंका उपगम होकर पुरुषवेदके अनुपशान्त रहते हुए वारह प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २५३ अथवा इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक जीवके छह नोकपायोंके उपशान्त हो जानेपर वही संक्रमस्थान उत्पन्न होता है, क्योंकि यहा पुरुषवेदका उपगम नहीं होनेसे उसके साथ सक्रमके योग्य ग्यारह कपायोंको ग्रहण किया है । इसी प्रकार उतरनेवाले इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके गहन सक्रमस्थानका कथन करना चाहिये, क्योंकि तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण होने पर उक्त स्थान उपलब्ध होता है । किन्तु धौनीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके वारह प्रकृतिक सक्रमस्थान नहीं प्राप्त होता ।

विशेषार्थ—यहा वारह प्रकृतिक संक्रमस्थान तीन प्रकारसे बतलाया है—प्रथम क्षपक श्रेणिकी अपेक्षा और अन्तके दो उपगमश्रेणिकी अपेक्षा । प्रथम स्थान तो क्षपक जीवके आनुपूर्वी सक्रमका प्रारम्भ होनेके बाद जब तक नपुंसकवेदका क्षय नहीं होता तब तक प्राप्त होता है । दूसरा स्थान क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशामकके चढ़ते समय छह नोकपायोंका उपगम होकर जब तक पुरुषवेद का उपशम नहीं होता तब तक प्राप्त होता है और तीसरा स्थान इसी जीवके उतरते समय तीन प्रकारके क्रोधोंके अपकर्षण होनेके समयसे लेकर जब तक पुरुषवेद उपशान्त रहता है तब तक प्राप्त होता है । प्रथम प्रकारमें चार मञ्जलन और नौ नोकपाय इन तेरह प्रकृतियोंकी सत्ता है पर मञ्जलन लोभके सिवा सक्रम वारहका होता है । दूसरे प्रकारमें सत्ता तो इक्कीस प्रकृतियोंकी है पर सक्रम सञ्जलन लोभके सिवा ग्यारह कपाय और पुरुषवेद इन वारह प्रकृतियोंका होता है । इसी तरह तीसरे प्रकारमें सत्ता तो इक्कीस प्रकृतियोंकी है पर सक्रम वारह कपायका ही होता है ।



ॐ एककारस्यै स्ववगस्त गणस्ययेदे स्वयिदे इत्थिवेदे अक्षीणे ।

§ २-४ स्ववगस्त अङ्कसायन्स्ववगवारेण तेरससकामयभाषणावद्विदस्त  
पुणो आणुपुम्बीसकमवसेण समुप्याइदवारमनकमद्वाणस्त गणुस्यवेदे परिक्लीणे एकारस  
सकमद्वाणमुप्यज्ज, तिमज्जलण-अङ्गुणोकमायाण तस्य मकमदसणादो ।

ॐ अथवा एककायीसदिकम्मसियस्त पुरिसवेदे उचसते अणुवसतेसु  
कसाएसु ।

§ २५-२. कुदो ? एकारसकमायाणं परिणुदमेन तस्यसकतिदसणादो ।

ॐ अउधीसदिकम्मसियस्त वा दुयिहे कोहे उचसते कोहसज्जणे  
अणुवसते ।

§ २६ अउधीसदिकम्मसियस्त वा णिरुदसकमद्वाणमुप्यज्ज । कुदो ? पुम्बुच  
विहाणेण तेरममकामयभावेणावद्विदस्त तस्य दुविहकोहोवसमे संति कोहसज्जणेण सह  
एकारसपयडीण सकमोबलमादो । ओत्तरमाणसवधण वि पयदसकमद्वाणसंभवो वचम्बो,  
मुचस्सेदम्म दमामासियमायेणावद्वाणादो ।

यहां तीन गण स्थान चिह्नित करने नहीं कहा है सो चिह्नित करने का मत ही ठीक  
करना चाहिए ।

ॐ एक जीवक नपुंसकवेदका मय होकर स्त्रीवेदका मय नहीं होने पर ग्यारह  
प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २५४ जिस एक जीवन भाट कपायोश्च रूप करके तरह प्रकृतिक संक्रमस्थान प्राप्त कर  
लिया है फिर आनुपूर्वीसकमक कारण वरह प्रकृतिक संक्रमस्थान में उत्पन्न कर लिया है उसके  
मनु सकमेवञ्च अब होकर ग्यारह प्रकृतिक संक्रमस्थान उत्पन्न होता है, क्योंकि यहां तीन संक्रमण  
और भाट मोठ्यायोश्च संक्रम देगा जाता है ।

ॐ अथवा इक्षीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके पुरुषवेदका उपनाम होकर  
कपायोके अनुपशान्त रहत हुए ग्यारह प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २५५ क्योंकि यहां ग्यारह कपायोश्च रूप संक्रम देगा जाता है ।

ॐ अथवा बीबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवक दो प्रकारके कौषोंका उपनाम  
होकर कोषमन्वत्सक अनुपशान्त रहत हुए ग्यारह प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २५६ अथवा बीबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवक विचित्र संक्रमस्थान उत्पन्न होता  
है, क्योंकि पूरा एक विधिसे जो तरह प्रकृतिक संक्रमणसे अस्तित्व है उसके दो प्रकारके कपायोश्च  
उपनाम है। इन पर रूप संक्रमणके साथ ग्यारह प्रकृतियोंके संक्रम उपस्थित होता है । इसी प्रकार  
उत्पन्नवाले जीवक संक्रमणसे भी प्रकृतिक संक्रमस्थान का वचन करना चाहिए क्योंकि यह सूत्र  
देवप्रमपदम्यम अस्तित्व है ।

विशुद्धार्थ—यहां ग्यारह प्रकृतिक संक्रमस्थान चार प्रकारके वचनवाले हैं । प्रथम एक  
भेदिकी वरहा और इन तीन वरहाभेदिकी वरहा । इनके अतिरिक्त कपाया मनु सपयवञ्च

❧ दसण्हं खवगरस इत्थिवेदे खीणे छसु कम्मसेसु अक्खीणेषु ।

§ २५७. दसण्ह संक्रमद्वान सवगस्य होइ चि सुत्तथमंघो । कम्हि अवत्थाए तं होइ चि उत्ते इत्थिवेदे खीणे उण्णोक्काणसु अक्खीणेषु होइ चि घेत्तव्वं, तत्थ मत्तणोक्काय-मंजलणतियस्य मंक्रमोवलभादो ।

❧ अथवा चउवीसदिकम्मंसियस्स कोधसंजलणे उवसंते सेसेसु कसाएसु अणुवसंतेसु ।

§ २५८. चउवीसदिकम्मंसियस्स दुविहं कोहमुवसामिय एक्कासपयडीणं मंक्रममामित्तेणावट्ठिदम्म कोहमंजलणोवममे जादे पयदमकमद्वानमुप्पज्जइ चि सुत्तथ-

क्षय होकर जय तक खीवदका क्षय नहीं होता तब तक यह संक्रमस्थान होता है । इसके चार संज्वलन और आठ नोकपाय इन बारह प्रकृतियोंकी सत्ता है पर सक्रम संज्वलन लोभके विना ग्यारह प्रकृतियोंका होता है । उपशमश्रेणिकी अपेक्षा प्रथम प्रकार इकास प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके उपशमश्रेणि पर चढ़ते समय प्राप्त होता है । यह स्थान पुरुषवेदेके उपशमके बाद होता है । उसमें संज्वलन लोभके विना ग्यारह कपायोंका संक्रम होता रहता है । उपशमश्रेणिकी अपेक्षा दूसरा प्रकार चौथीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीवके उपशमश्रेणि पर चढ़ते समय प्राप्त होता है । यह स्थान अत्रत्याग्यानपरण क्रोध और अत्रत्याग्यानपरण क्रोध इन दो प्रकारके क्रोधोंके उपशान्त होने पर प्राप्त होता है । उसमें अत्रत्याग्यानपरण मान, माया, लोभ ये तीन, अत्रत्याग्यानपरण मान, माया, लोभ ये तीन संज्वलन कपाय, मान, माया ये तीन और दर्शनमोहनीयकी दो इस प्रकार इन ग्यारह प्रकृतियोंका संक्रम होता रहता है । चौथा स्थान उसी जीवके उत्तरते समय संज्वलन क्रोधके उपशान्त रहते हुए प्राप्त होता है । इसके तीनों प्रकारके मान, माया और लोभ ये तीनों और दर्शनमोहनीयकी दो इन ग्यारह प्रकृतियोंका संक्रम होता है । इस प्रकार ग्यारह प्रकृतिक संक्रम-स्थानके कुल भेद चार होते हैं यह सिद्ध हुआ ।

\* क्षपक जीवके स्त्रीवेदका क्षय होकर छह नोकपायोंका क्षय नहीं होनेपर दस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २५७ दस प्रकृतिक संक्रमस्थान क्षपकके होता है यह इस सूत्रका तात्पर्य है ।

शंका—किम अत्रस्थाके होने पर वह होता है ?

समाधान—स्त्रीवेदका क्षय होकर छह नोकपायोंके अश्रीण रहते हुए वह होता है ऐसा अर्थ लेना चाहिये, क्योंकि यहाँ सात नोकपाय और तीन संज्वलनोंका संक्रम उपलब्ध होता है ।

\* अथवा चौवीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके क्रोध संज्वलनका उपशम होकर शेष कपायोंके अनुपशान्त रहते हुए दस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २५८. चौवीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जो जीव दो प्रकारके क्रोधोंका उपशम कर ग्यारह प्रकृतिक संक्रमस्थानके स्वामीरूपसे अवस्थित है उसके क्रोध संज्वलनका उपशम हो जाने पर प्रकृत संक्रमस्थान उत्पन्न होता है यह इस सूत्रका अभिप्राय है । यहाँ सूत्रमें जो 'सेसकसाएसु

सबको । एष सेसकसाएसु अणुवसतेसु चि वयणमहकसाय-दोदसजमोहपपडीण गहणहं ।

⊗ एषणह पक्काबीसविकम्मसियस्स बुविहे कोह उवसते कोहसजलणे षणुवसते ।

§ २-० इगिबीससत्तकम्मियस्स पक्कावीसपयडिसकमादो लोमाणुपुम्भी संकम काऊण कमण पवभोक्ताए उवसामिय ण्हारससंकमयमावणावडिदस्स पुम्भो बुविहे कोह उवसते पयदसकमहाणमुप्यउह, कोहसजलणेण सह विविहमाण-माया-बुविहलोम-पपडीण सकमोवर्लमादो । ओदरमाणसंबंध वि एस्य पपत्सकमहाणसंमथो यत्तम्भो, विरोहामावाणे । एस्य पपारवरसमशासकणितापरणहमुसरसुत्तमाह—

⊗ चठबीसविकम्मसियस्स खवगस्स च णत्थिय ।

अणुवसंतसु' यह बचन दिया है सो यह आठ कपाय और दो दर्शनमोहनीय इन दस प्रकृतियोंके प्रहस करनेके लिय दिया है ।

विशुधार्थ—यहाँ दस प्रकृतिक संक्रमान्ता दो प्रकारसे बतलाया है—प्रथम अणुवसंतियेकी अपेक्षा और दूसरा अणुवसंतियेकी अपेक्षा । अणुवसंतियेकी अपेक्षा जीवदक दस करके यह मोक्षपायो-का कव करत समय यह स्वान प्राप्त होया है । इस स्वानमें चार संज्ञकन और सात मोक्षपायोकी सत्ता पाइ जाती है किन्तु अणुवसंत होमके बिना दोर दसका संक्रम होया है । अणुवसंतियेकी अपेक्षा चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावात्त जीवके दूसरा संक्रमस्वान पाया जाता है । यह स्वान अणुवसंतियेकी अपेक्षा अणुवसंतियेकी अपेक्षा करनेके बाद दो मानोका अणुवसंत करके प्रारम्भ करया है जब प्राप्त होया है । इसके प्रत्ययान्तपरण मान माया और लोम ये तीन, अणुवसंतियेकी अपेक्षा मान माया और लोम ये तीन, संज्ञकन मान और माया व दो ठह दर्शनपाहनीयकी है इन दस प्रकृतियोंका संक्रम पाया जाता है ।

⊗ इककीम प्रकृतियोंकी सत्तावात्त जीवके दो प्रकारक क्रोपक उपशम हाकर क्रोपमंज्वलनक अनुपमान्त रहत हुए ना प्रकृतिक संक्रमस्वान होता है ।

§ २-१. जो अणुवसंत प्रकृतियोंकी सत्तावात्त जीव इककीम प्रकृतियोंके संक्रमक बार काममें आनुपूर्वी संक्रमके प्राप्त करके और कामसे भी मोक्षपायोका अणुवसंत करके अणुवसंतियेकी प्रकृतिक संक्रमस्वानके प्राप्त हाकर स्थित है इसके ही प्रकारके क्रोपक अणुवसंत हान पर प्रकृतिक संक्रमस्वान बतल होया है क्योंकि इसके क्रोपसंज्ञकनके सात तीन प्रकारके मान तीन प्रकारकी माया और दो प्रकारके लोम इन ती प्रकृतियोंका संक्रम अणुवसंत होया है । अणुवसंतियेकी अपेक्षा अणुवसंतियेकी अपेक्षा से अणुवसंतियेकी अपेक्षा ही पर प्रकृतिक संक्रमस्वानक बचन करना चाहिये क्योंकि इसमें कोई विरोध नहीं आता । यहां पर यह ना प्रकृतिक संक्रमस्वान प्रकृतियेकी अपेक्षा भी सम्भव है क्यं इस आशंकाके निवारण करनेके लिय आगेरा सूत्र करत है—

⊗ किन्तु चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावात्त उपशमक जीवके और अणुवसंतियेकी अपेक्षा यह स्वान नहीं आता ।

९ २६०. चउवीगदिक्रम्मसियस्स ताव पयदमंक्रमद्वानमंभवो णत्थि, कोहमंजलण-  
मुवगामिय दमण्हं मंक्रामयभावेणावट्टिदम्म्य तस्स दुविहे माणे उवसते ततो हेट्ठिम-  
द्वानुप्पत्तिदमणादो । यत्रगम्म वि इत्थिवेदकत्तण्ण दममकामयम्म छसु कम्मेषु रीणेषु  
चउण्हं मंक्रमद्वानुप्पत्तिदमणादो णत्थि पयदमंक्रमद्वानमभवो । तम्हा पुञ्जुत्तो चव  
तदुप्पत्तिपयागे णाण्णो त्ति मिद्व ।

⊙ अट्टएहं एक्कावीसदिक्रम्मसियस्स तिविहे कोहे उवसंते सेसेसु  
कसाएसु अणुवसन्तेसु ।

१ २६१. इगिवागमंतंक्रमियग्गुवगामगस्स तिविहरोहोवगमे सते सकमद्वानमेद-  
मुप्पजट, यमपंतग्गम्विदमंक्रमपयटीसु कोहमंजलणस्य वहिच्च्भावदंमणादो ।

⊙ अहवा चउवीसदिक्रम्मसियस्स दुविहे माणे उवसते माणसजलणे  
अणुवसंते ।

९ २६०. चौवीम प्रकृतियोंकी सत्तावाल जीवके प्रकृत सक्रमस्थान तो सम्भव नहीं ह,  
क्योंकि क्रोधमज्जलनका उपशम करके जो दस प्रकृतियोंका संक्रम करता हुआ स्थित है उसके दो  
प्रकारके मानका उपशम करने पर नौ प्रकृतिक संक्रमस्थानके नीचेके स्थानकी उत्पत्ति देगयी जाती  
है । इसी प्रकार स्त्रीवेदना क्षय हो जाने पर दस प्रकृतियोंका संक्रम करनेवाले चार जीवके भी छह  
नोकपायोंका क्षय हो जाने पर चार प्रकृतिक संक्रम स्थानकी उत्पत्ति देगयी जाती ह, उमलिय उनके  
प्रकृत संक्रमस्थान सम्भव नहीं है । अतः उनके उत्पत्तिका प्रकार पूर्वोक्त ही है अन्य नई यह बात  
सिद्ध होती है ।

विशेषार्थ—यदा नौ प्रकृतिक संक्रमस्थान दो प्रकारसे उत्पत्ताया है । जो दोनों ही प्रकार  
उपशमश्रेणिकी श्रपेश्रामे प्राप्त होते हैं । जब इक्कीस प्रकृतिय की सत्तावाले जीवके दो प्रकारके क्रोध  
का उपशम हो जाता है त्रिन्तु क्रोधमज्जलन अनुपशान्त रहता है तब प्रथम प्रकार प्राप्त होता है ।  
इस स्थानमे क्रोधमज्जलन, तीन मान, तीन माया और संव्वलन लोभके सिवा शेष दो लोभ इन  
नौ प्रकृतियोंका सक्रम होता है । दूसरा प्रकार उपशमश्रेणिके उतरते समय इसी इक्कीस प्रकृतियोंकी  
सत्तावाले जीवके प्राप्त होता है । किन्तु इसके सज्जलन क्रोध उपशान्त रहता है और तीन मान,  
तीन माया तथा तीन लोभ ये नौ प्रकृतियाँ अनुपशान्त होकर इनका सक्रम होता रहता है । इन  
दो प्रकारोंका छोडकर अन्य किसी प्रकारसे इस स्थानकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है । स्पष्टीकरण मूलमे  
किया ही है ।

\* इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके तीन प्रकारके क्रोधका उपशम होकर  
शेष कपायोंके अनुपशान्त रहते हुए आठ प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

९ २६१ इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक जीवके तीन प्रकारके क्रोधका उपशम होने  
पर प्रकृत सक्रमस्थान उत्पन्न होता है, क्योंकि इससे पूर्वके स्थानमें जो सक्रमरूप प्रकृतिया कही  
हैं उनमेसे क्रोधमज्जलनका वहिर्भाव देखा जाता है ।

\* अथवा चौवीम प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके दो प्रकारके मानका उपशम  
होकर मानमज्जलनके अनुपशान्त रहते हुए आठ प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २६२ फोइसजलणमुवसामिय वसण्ड सक्रमयत्तेणावडिदस्य तस्य दुबिह माणोवमम गिरुद्धमक्रमद्वानुप्पत्तिं पडि विरोहामावादो । एत्थ वि ओदरमाणसपणेण पयदसंक्रमद्वानुपरूयणा कायव्वा ।

⊙ ससण्ड अउवीसविकम्मसियस्स तिबिहे माणे उवसते सेसेसु कसापमु अणुवसतेसु ।

§ २६३ अउवीसदिकम्मसियस्से पि वयणेण इगिषीसक्रमसिमस्स खवगस्स प पत्तिसडो कओ, तस्य पयदसंक्रमद्वानुप्पत्तीए अममवादो । तदो अउवीससतक्रमियस्स तिबिह माणे उवसते तिबिहमाय-दुबिहलोह-दंसणमोहपयडीमो अत्थ पयदसंक्रमद्वानुप्पत्तइ पि अत्थम् ।

§ २६१ कोपसंयजनक्य वरामा कर ओ वस प्रकृतियोंक संक्रम करत हुए अस्तित्व है उसक वा प्रभारके मानक्य वराम होन पर प्रकृत संक्रमस्वानकी वस्तुति हानेमें कोई विरोध नहीं पाव्य है । यहां पर भी वरामभेदिते अतरेवाम जीवके संयज्यते प्रकृत संक्रमस्वानक्य अमम करन चाहिये ।

विद्युत्पार्य—यहाँ पर आठ प्रकृतिक संक्रमस्वान तीन प्रकारसे बतलाया गया है । य तीनो ही संक्रमस्वान वरामभेदिते प्राप्त होत हैं । वनमेंसे दो अद्वेवाले जीवोंके प्राप्त होत हैं और एक अतरेवाम जीवके प्राप्त होला है । अद्वेवाओंमें पहला इकसिस प्रकृतियोंकी सत्तावास जीवके और दूसरा आशीस प्रकृतियोंकी सत्तावास जीवके होला है । प्रथम स्वान तीनों अवेके अमम होन पर प्राप्त होला है । इसके तीनों मयन तीनों माया और काम संयजनके बिना दो सोम इन आठ प्रकृतियोंक संक्रम हाव्य रखा है । दूसरा स्वान दो प्रकारके मानके अतरेवाम होने पर प्राप्त होला है । इसके मान संयजन तीन माया समसंयजनके बिना दो सोम और दो अरुनमोहनीय इन आठ प्रकृतियोंक संक्रम होला रखा है । इन दो स्वामके सिवा ओ तीसरा स्वान अतरेवामके प्राप्त होला है सो वह आशीस प्रकृतियोंकी सत्तावास जीवके ही प्राप्त होला है । इसके तीन माया तीन काम और दो अरुनमोहनीय इन आठ प्रकृतियोंक संक्रम होला रखा है ।

⊙ चावस्य प्रकृतियोंकी सत्तावाल जीवक तीन प्रकारके मानका उपपन्न होकर न्य फयायोंके अनुपपन्नत रहत हुए सात प्रकृतिक संक्रमस्वान होला है ।

§ २६३ सूत्रमें 'अवीसविकम्मसियस्स' बचन आया है सो इस छाप इवीस प्रकृतियोंकी सत्ताव स अतरेवामक्य और अकक्य गियक किया है क्योंकि उसक प्रकृत संक्रमस्वानकी वस्तुति हाना अतरेवाम है । अतः आशीस प्रकृतियोंकी सत्तावास जीवके तीन प्रकारक मान अतरेवाम होने पर तीन प्रकारकी माया दो प्रकारक काम और दो अरुनमोहनीय प्रकृतियां इन आठकी अतरेवाम प्रकृत संक्रमस्वान अतरेवाम होला है एमा कामना चाहिये ।

विद्युत्पार्य—सात प्रकृतिक संक्रमस्वान एक ही प्रभारक है जिसका तीनामें ही फुल्लया किया है ।

❖ छुहमेकावीसदिकम्मंसियरस दुविहे माणे उवसंते सेसेसु कसाएसु अणुवसंतेसु ।

§ २६४. कुटो ? तथ्य माणगंजलणेण मह तिविहमाय-दुविहलोभाणं मंक्रमदंमणादो । ओयरमाणसंघेण वि पयदमंक्रमद्व्याणमेत्याणुगंतव्वं ।

❖ पंचएहमेकावीसदिकम्मंसियरस तिविहे माणे उवसंते सेसकसाएसु अणुवसंतेसु ।

§ २६५. कुटो ? तथ्य तिविहमाय-दुविहलोभाणं मंक्रमदंमणादो ।

❖ अथवा चउवीसदिकम्मंसियरस दुविहाए मायाए उवसंताए सेसेसु अणुवसंतेसु ।

§ २६६. किं कारणं ? तथ्य मायागजलणेण मह दुविहलोभ-दोदंमणमोहपयडीणं संक्रमोवलभादो ?

\* इकीम प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके दो प्रकारके मानका उपशम होकर शेष कर्पायोंके अनुपशान्त रहते हुए छह प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है ।

§ २६४ क्योंकि उस सक्रमस्थानके मान संज्वलनके साथ तीन प्रकारकी माया और दो प्रकारका लोभ इन छह प्रकृतियोंका सक्रम देखा जाता है । उतरनेवाले जीवके सम्बन्धसे भी यहा पर प्रकृत संक्रमस्थान जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—यहा पर छह प्रकृतिक सक्रमस्थान दो प्रकारसे बतलाया गया है । ये दोनों ही स्थान उकीम प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके उपशमश्रेणिके प्राप्त होते हैं । इनमेमे पहला चटनेवालेके और दूसरा उतरनेवाले जीवके होता है । चटनेवालेके तो दो प्रकारके मानका उपशम होने पर होता है । इसके मान संज्वलन, तीन माया और दो लोभ इन छह प्रकृतियोंका सक्रम होता रहता है । तथा उतरनेवालेके मान संज्वलनके उपशान्त रहते हुए ही यह स्थान होता है । इसके तीन माया और तीन लोभ इन छह प्रकृतियोंका सक्रम होने लगता है ।

\* इक्कीम प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके तीन प्रकारके मानका उपशम होकर शेष कर्पायोंके अनुपशान्त रहते हुए पांच प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २६५. क्योंकि यहा पर तीन प्रकारकी माया और दो प्रकारके लोभका सक्रम देखा जाता है ।

\* अथवा चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके दो प्रकारकी मायाका उपशम होकर शेष प्रकृतियोंके अनुपशान्त रहते हुए पांच प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है ।

§ २६६ क्योंकि यहा पर माया संज्वलनके साथ दो प्रकारके लोभ और दो दर्शनमोहनीय इन पांच प्रकृतियोंका सक्रम देखा जाता है ।

विशेषार्थ—यहा पर पांच प्रकृतिक संक्रमस्थान दो प्रकारसे बतलाया है । ये दोनों ही स्थान उपशमश्रेणिके चटते समय प्राप्त होते हैं । पहला स्थान इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावालेके होता है । इसके और सब प्रकृतियोंका तो उपशम हो जाता है किन्तु तीन माया और दो लोभ

⊗ अथ यद्वा स्वर्गस्त द्वसु कर्मसु स्त्रीषु पुरिसवेदे अकस्मीये ।

‡ २६७ स्वर्गस्त इति वेत्स्वराणां वरमुप्याद्ददसत्कमहाणस्य पुणो छणो-  
कत्रापसु स्त्रीणसु पयदसकमहाणमुप्यत्र चि मुचत्यणिष्ठजो ।

⊗ अथवा अथमीसदिकम्मसियस्त तियिहाए मायाए उपसंताए  
सेसेसु अणुपसतेसु ।

‡ २६८ तस्य दुविहलोह-दोदसणमोहपयबीण सक्रमस्य परिप्फुडमुवलमादो ।  
पत्थ वि ओदरमाणसकभणेदं सक्रमहाणमभुमगियस्य ।

⊗ तियहं स्वर्गस्त पुरिसवदे स्त्रीषे सेसेसु अकस्मीषसु ।

बच रहत है । समस्त सोमक अतुपूर्वी संक्रमके कारण संक्रम नहीं होता । दूसरा स्वान शीघ्र  
प्रकृतियोंकी सत्तावाले होता है । इसके और सत्ता परम वो हो जाता है किन्तु माया संवहन,  
वो सोम और वो वर्तनमोहनीय इन पाँच प्रकृतियोंका संक्रम होता रहता है । यहाँ भी संवहन  
सोमक संक्रम नहीं होता ।

⊗ सपकके छह नोकपायोंका साथ होकर पुरुषवेदके असीण रहते हुए चार  
प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

‡ २६७ अथर्वके अथके चार सिद्धे दम प्रकृतिक संक्रमस्थान इत्यत्र कर खिया ह वेसे  
अपक बीजके उत्पत्ति पर छह नोकपायोंका अथकम पर प्रकृत संक्रमस्थान इत्यत्र होता है पर इस  
संक्रम मात्र है ।

⊗ अथवा, शीघ्रास प्रकृतियोंकी सत्तावाल जीवक तीन प्रकारकी मायाक उपक्रम  
होकर अथ प्रकृतियोंके अनुपशान्त रहत हुए चार प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

‡ २६८ क्योंकि यहाँ पर चार प्रकारके सोम और वर्तनमोहनीयकी दो प्रकृतियाँ इन चारक  
स्थानसे संक्रम उपक्रम होता ह । यहाँ पर भी अथर्वशास्त्र जीवके संवहनसे यह संक्रमस्थान  
जान लेना चाहिये ।

विश्लेषार्थ—यहाँ पर चार प्रकृतिक संक्रमस्थान तीन प्रकारसे बतलाया है । एक अपक-  
अथिकी अथेका और दो अथर्वमनेषिकी अथेका । अथर्वमनेषिकीमें भी प्रथम अथर्वमनेषिकीके और दूसरा  
बतलानेवाले होता है । अपकनेषिकीमें पहला स्थान छह नोकपायोंका अथ होन पर प्राप्त होता है ।  
इसमें चार संवहन और एक पुरुषवेद इन पाँचकी सत्ता रहती है किन्तु संक्रम संवहन कामके  
बिना चारका होता ह । दूसरा स्वान शीघ्र प्रकृतियोंकी सत्तावाले होता है । इसमें दो सोम  
और दो वर्तनमोहनीय इन चार प्रकृतियोंका संक्रम होता रहता है । संवहन कामका संक्रम  
नहीं होता । तीसरा स्वान इच्छेस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके अथर्वमनेषिकीसे बतलते हुए तीन  
प्रकारके सोमके साथ संवहन मायाक संक्रमित करने पर होय है । यह समय इस जीवके तीन सोम  
माया संवहन पर चार प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

⊗ सपक जीवक पुरुषवेदका साथ होकर अथ प्रकृतियोंके असीण रहते हुए तीन  
प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २६६. तत्थ तिण्हं संजलणाणं संक्रमदंमणादो ।

⊗ अथवा एककावीसदिकम्मंसियस्स दुविहाए मायाए उवसंताए सेसेसु अणुवसंतेसु ।

§ २७०. तत्थ मायामजलणेण मह दोण्हं लोहाणं संक्रमदंमणादो ।

⊗ दोण्हं खवगस्स कोहे खविदे सेसेसु अक्खीणेषु ।

§ २७१. माण-मायामजलणाण दोण्हं चैव तत्थ संक्रमदमणादो ।

⊗ अथवा एककावीसदिकम्मंसियस्स तिविहाए मायाए उवसंताए सेसेसु अणुवसंतेसु ।

§ २७२. तिविहमायोवममे द्दुविहलोहम्सेव तत्थ संक्रमोवलंभादो ।

⊗ अथवा चउवीसदिकम्मंसियस्स दुविहे लोहे उवसंते ।

§ २७३. तस्म द्दुविहलोहोवममेण दोदसणमोहपयडीणं चैव संक्रमोवलंभादो ।

§ २६६ क्योंकि यहाँ पर तीन सञ्चलनोंका संक्रम देखा जाता है ।

\* अथवा इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके दो प्रकारकी मायाका उपशम होकर शेष प्रकृतियोंके अनुपशान्त रहते हुए तीन प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २७०. क्योंकि यहाँ पर माया सञ्चलनके साथ दोनों लोभोंका संक्रम देखा जाता है ।

विशेषार्थ—यहाँ पर तीन प्रकृतिक संक्रमस्थान दो प्रकारसे बतलाया है—एक क्षपकश्रेणिकी अपेक्षा और दूसरा उपशमश्रेणिकी अपेक्षा । क्षपकश्रेणिमें जो स्थान प्राप्त होता है वह पुरुषवेदके क्षय होनेपर प्राप्त होता है । यहा यद्यपि सत्ता चारों सञ्चलनोंकी है तथापि संक्रम सञ्चलन लोभके बिना शेष तीनका होता है । उपशमश्रेणिमें प्राप्त होनेवाजा स्थान इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके प्राप्त होता है । यह जीव जब दो प्रकारकी मायाका उपशम कर लेता है तब यह स्थान होता है । इसमें माया सञ्चलनका और सञ्चलन लोभके सिवा शेष दो लोभोंका संक्रम होता है ।

\* क्षपक जीवके क्रोधका क्षय होकर शेष प्रकृतियोंके अक्षीण रहते हुए दो प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २७१ क्योंकि यहापर मान और माया इन दो सञ्चलन प्रकृतियोंका ही संक्रम देखा जाता है ।

\* अथवा इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके तीन प्रकारकी मायाका उपशम होकर शेष प्रकृतियोंके अनुपशान्त रहते हुए दो प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २७२ क्योंकि यहा पर तीन प्रकारकी मायाका उपशम होने पर दो प्रकारके लोभका ही संक्रम पाया जाता है ।

\* अथवा चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके दो प्रकारके लोभका उपशम होनेपर दो प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ।

§ २७३ क्योंकि इसके दो प्रकारके लोभका उपशम होकर दर्शनमोहनीयकी दो प्रकृतियोंका



यद् दोदसणमोहपयदिसकमहाण कस्स होइ ति आर्मकाण इवमाइ—

❁ सुत्तुमसांपराइय उबसामपस्स वा उबसतकसापस्स वा ।

§ २७४ सुगम ।

❁ पकिस्से सकमो क्खवगस्स माणे क्खविदे मायाए अक्खीणाए ।

§ २७५ सुगम ।

एव ह्याणममुक्कित्ताए पयडिणिहेसो ममत्तो ।

एव पडमगाहाए अत्थो समत्तो ।

§ २७६ संपदि विटियादिगाहाणमत्थो सुगमो धि बुण्णिमुत्ते ञ पस्सिदो ।  
 वमिदाणि बचइस्सामो—‘सोलसय बारसहुप० पडिग्गाहा होति।’ एसा विटिया गाहा पयडि  
 ह्याणपडिग्गाहापडिग्गाहपरूषण पडिबद्धा । ए अहा—गाहापुण्यद्विणिद्विणाणि सोत्तसादीणि  
 अपडिग्गाहह्याणाणि णाम १६, १२, ८, २०, २३, २४, २५, २६, २७, २८। एदाणि मोत्त  
 सेसाणि वादीसादीणि एयपयडिपञ्चताणि पडिग्गाहह्याणाणि होति । तेसिमकविण्णातो

संक्रम ब्रह्मण्य होय है। यह दर्शनमोक्षनीयके अनेक दो प्रकृतिक संक्रमस्वान किसके होय है  
 पेसी आनेके होने पर यह आगेअ सूत्र कहत हैं—

❁ छद्मसम्पराय उपशामक और उपशान्तकपाय अन्विके होता है ।

§ २७७ यह सूत्र सुगम है ।

विश्लेषार्थ—यहाँ दो प्रकृतिक संक्रमस्वान तीन प्रकारसे कहाया है। इसमेंसे अन्तिय  
 संक्रमस्वानअ श्रानो सूक्ष्मसम्पराय उपशामक और उपशान्तकपाय बोल है। उप अयन  
 सुगम है ।

❁ सपक नीचके मानका सय होकर मायाक असीय रहते हुए एक प्रकृतिक  
 संक्रमस्वान होता है ।

§ २७८ यह सूत्र सुगम है ।

विश्लेषार्थ—आठम यह है कि उपशामकविमें एक प्रकृतिक संक्रमस्वान सम्भव नहीं है।  
 यह केवल उपशान्तविमें ही प्राप्त होता है जिसका निर्देश अष्टिभूमिमें किया ही है ।

इस प्रकार स्वानसमुत्पत्तिना अनुशोषणारमें प्रकृतिबोके निर्देशक कवन समाप्त हुआ ।

इस प्रकार पहली गाथाअ अर्थ समाप्त हुआ ।

§ २९. द्वितीयाणि गाथाओंका अर्थ सुगम होनेसे अष्टिभूमिमें यहाँ कहा है। उसे इस समय  
 ब्रह्मण्य हैं—‘सोलसय बारसहुप० पडिग्गाहा होति।’ यह दूसरी गाथा है जो प्रकृतिस्वानप्रतिष्ठा और  
 प्रकृतिस्वान अन्तियके कवन करनेमें प्रतिबद्ध है। यथा—गाथाके पूर्वार्थमें निर्दिष्ट क्रिये गये सोलह  
 आदि अन्तियप्रस्थान हैं—१६, १९, ८, २०, २३, २४, २५, २६, २७, और २८। इन स्वानोंके  
 सिवा केवल अन्तियसे होकर एक प्रकृति तक प्रतिष्ठास्वान हैं। इनका अर्थविश्लेष इस प्रकार है—

एयो—२२, २१, १०, १८, १७, १५, १४, १३, ११, १०, ६, ७, ६, ५, ४, ३, २, १ ।  
 संपहि एदेमि पयडिणिदेयो कीरदे । तं जहा—मिच्छत्-सोलसक० तिणहं वेदाणमेकदरं  
 हस्त-नदि अगदि-मोग टोणह जुगलाणमण्णदरं भय-दुगुञ्जाओ च एवमेदाओ वावीम-  
 पयडीओ घेत्तूण पढमं पडिगहद्वानमुप्पज्जइ, अट्टावीस-सत्तावीमाणमण्णदरसंतकम्मिय-  
 मिच्छाद्विट्ठिमि जहाकम मत्तावीस-छ्वीमपयडिद्वानसकमस्म तदाहारत्तेण पउत्ति-  
 दंमणादो । तेणेव वावीमबंधणेण मम्मत्त-मम्मामिच्छत्ताणि उव्वेन्निय मिच्छत्तपडिगह-  
 वोच्छेदे कदे इगिवीमकमायपयडिपडिवद्व विट्ठियं पडिगहद्वानमुप्पज्जइ, एत्थ वि  
 छ्वीससंतकम्ममहगटपणुवीमसंक्रमद्वानस्साहारभावदंमणादो । अहवा सासणसम्मा-  
 इट्ठिस्स मिच्छत्तं मोत्तूण सेमपयडीओ बंधमाणस्स पयदपडिगहद्वानमुप्पज्जइ, तत्थ वि  
 इगिवीसपयडिपडिगहपडिवद्वपणुवीम-इगिवीसपयडिद्वानमकमोवलंभादो ।

२२, २१, १६, १८, १७, १५, १४, १३, ११, १०, ९, ७, ६, ५, ४, ३, २, और १ । अब इन  
 स्थानोंकी प्रकृतियोंका निर्देश करते हैं—मिथ्यात्व, सोलह कपाय, तीन वेदोंमेंसे कोई एक वेद,  
 हाम्य-रति या अरति शोक इन दो युगलोमेंसे कोई एक युगल, भय और जुगुप्सा इन वाईस  
 प्रकृतियोंका प्रथम प्रतिग्रहस्थान होता है, क्योंकि अट्टाईस और सत्ताईस इनमेंसे किसी एक स्थानके  
 सत्तावाले मिथ्यादृष्टि जीवके क्रमसे सत्ताईस और छत्तीस प्रकृतिकस्थानके सक्रमके आधाररूपसे  
 उस स्थानकी प्रवृत्ति देगी जाती है । वाईस प्रकृतियोंका बन्ध करनेवाला यही जीव जब सम्यक्त्व  
 और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करके मिथ्यात्व प्रकृतिका प्रतिग्रहरूपमे विच्छेद कर देता है तब  
 कपायोंकी इकीम प्रकृतियोंमें सम्बन्ध रगनेवाला दूसरा प्रतिग्रहस्थान उत्पन्न होता है क्योंकि यह  
 स्थान भी छत्तीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले मिथ्यादृष्टि जीवके पच्चीस प्रकृतिक सक्रमस्थानका आधार  
 देना जाता है । अथवा मिथ्यात्वके सिवा शेष प्रकृतियोंका बन्ध करनेवाले सासादनसम्यग्दृष्टिके  
 प्रकृत प्रतिग्रहस्थान उत्पन्न होता है, क्योंकि यहाँ पर भी इक्कीस प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानसे सम्बन्ध  
 रगनेवाले पच्चीस प्रकृतिकसक्रमस्थानका और उष्ठीमप्रकृतिकसक्रमस्थानका सक्रम पाया जाता है ।

**विशेषार्थ—**प्रथम दूसरी गाथाके अर्थका खुलासा करते हुए प्रतिग्रहस्थान कितने हैं और  
 अप्रतिग्रहस्थान कितने हैं यह बतलाकर किस प्रतिग्रहस्थानकी कौन कौन प्रकृतियाँ हैं और उनमेंसे  
 किन प्रतिग्रहस्थानमें किस किस सक्रमस्थानका संक्रम होता है यह बतलाया जा रहा है । प्रतिग्रहका  
 अर्थ स्वीकार करना है और प्रकृतिस्थानका अर्थ प्रकृतियोंका समुदाय है । आशय यह है कि  
 जो प्रकृतियोंका समुदाय संक्रमको प्राप्त हुए कर्मोंकी स्वीकार करके अपनरूप परिणाम लेता  
 है उसे प्रतिग्रहस्थान कहते हैं । इसका दूसरा नाम पतद्ग्रहस्थान भी है सो इससे पढ़नेवाले  
 कर्मोंको जो प्रकृतियोंका समुदाय स्वीकार करता है वह पतद्ग्रहस्थान है ऐसा अर्थ लेना चाहिये ।  
 प्रकृतमें मोहनीय कमकी अपेक्षा १८ प्रतिग्रहस्थान और १० अप्रतिग्रहस्थान बतलाये हैं ।  
 ऐसा नियम है कि बंधनेवाली प्रकृतियोंमें ही सक्रम होता है और मोहनीयकी एक साथ अधिकसे  
 अधिक २२ प्रकृतियोंका ही बन्ध होता है अतः सबसे उत्कृष्ट प्रतिग्रहस्थान २२ प्रकृतिक ही हो  
 सकता है । यद्यपि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन दो प्रकृतियोंका बन्ध नहीं होता तथापि  
 ये प्रतिग्रहरूप स्वीकार की गई हैं । पर इनमें यह योग्यता सम्यग्दृष्टि जीवके सिवा अन्यत्र नहीं  
 पाई जाती ऐसा नियम है । अतः २२ प्रकृतिक स्थानसे ऊपर तो प्रतिग्रहस्थान हो ही नहीं सकते  
 यह सिद्ध होता है इसीसे २३, १४, २५, २६, २७ और २८ ये छह अप्रतिग्रहस्थान बतलाये हैं

१ २७७ असञ्जदसम्मादिङ्गिमि एगूनवीसाए पडिग्गाहड्डाणं होइ, तस्स सचारस-  
 र्धपयणीसु सम्मत्त-सम्मादिच्छताण पडिग्गाहणेण पवेसदंसणादो । एदम्मि पडिग्गाह-  
 ड्डाणम्मि पडिग्गाहसचावीस-उम्वीस-उवीससंक्रमड्डाणाणमुत्तमादो । एदण एव मिच्छन्त  
 खविय सम्मामिच्छन्तपडिग्गाह आसिद्ध अट्टारसपडिग्गाहड्डाण होइ, एत्थ वि वाणीसपयडि-  
 ड्डाणसकमोवसमादो । पुणो वि एदेण सम्मामिच्छन्त खय्य सम्मत्तपडिग्गाहे वि आसिद्धे  
 सचारस०पडिग्गाहड्डाणमुत्तमं, इगिवीसकसायपपणीजमेत्थ सकमताणमुत्तमादो ।

किन्तु इनके अतिरिक्त ० १६ १९ और ८ के बार अप्रतिग्रहस्वान और हैं, क्योंकि गुणस्थान  
 मेरसे प्रतिग्रह रूप प्रकृतियोंके बोधन पर जैसे अन्य प्रतिग्रहस्वान उत्पन्न हो जाते हैं वैसे ये बार  
 स्वान नहीं उत्पन्न होते। इसीसे इन्हें अप्रतिग्रहस्वान कथ्यवा है। इन अप्रतिग्रहस्वानोंके सिवा  
 शेष १२, ११, १६, १८, १७ १५, १४ १३ ११, १ ६, ७, ९, ५, ४, ३ २, और १ के १८  
 प्रतिग्रहस्वान हैं। इनमेंसे ११ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्वान १८ वा २० प्रकृतियोंकी सत्तावासे मिथ्याहट्टिके  
 होता है। जो १८ प्रकृतियोंकी सत्तावासा मिथ्याहट्टि है उसके ११ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्वानमें १७  
 प्रकृतियोंका संक्रम होता है। मिथ्यात्व गुणस्थानमें मिथ्यात्वप्रकृति संक्रमके अनोन्व है, अथा उसे  
 छोड़ दिया है। तथा जो २० प्रकृतियोंकी सत्तावासा है उसके भी ११ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्वानमें २१  
 प्रकृतियोंका संक्रम होता है। २१ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्वान १६ प्रकृतियोंकी सत्तावासे मिथ्याहट्टिके वा  
 १८ प्रकृतियोंकी सत्तावासे सासादनसम्बन्धहट्टिके होता है। जो १६ प्रकृतियोंकी सत्तावासा मिथ्याहट्टि  
 है उसके ११ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्वानमें २५ प्रकृतियोंका संक्रम होता है। मिथ्याहट्टिके यद्यपि अथ  
 तो २२ प्रकृतियोंकी ही होता है तथापि इसके सम्बन्ध और सम्बन्धिमिथ्यात्व इन दो प्रकृतियोंकी  
 एक बना हो जानेके बाद मिथ्यात्व प्रकृति प्रतिग्रह रूप नहीं रहती अथा २१ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्वान  
 मिथ्याहट्टिके भी बन जाता है। सासादनसम्बन्धि भीन जो प्रथमके होत हैं। प्रथम तो वे जो  
 अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना किये बिना अग्रामसम्बन्धसे व्युत्पन्न होकर सासादन गुणस्थानके  
 प्राप्त हुए हैं और दूसरे वे जो अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके बाद अग्रामसम्बन्धसे व्युत्पन्न होकर  
 सासादन गुणस्थानके प्राप्त हुए हैं। १८ प्रकृतियोंकी सत्तावासा जो अग्रामसम्बन्धि भीन सासादन  
 गुणस्थानके प्राप्त होता है उसके सासादनमें तीन बरौनमोहनीयके सिवा शेष १५ प्रकृतियोंका  
 संक्रम होता है। तथा जो अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके बाद सासादन गुणस्थानके प्राप्त होत हैं  
 उनके सासादनमें एक आबलि अथ एक अनन्तानुबन्धीव्युत्पन्ना भी संक्रम नहीं होता अथा इसके  
 एक आबलि अथ एक तीन बरौनमोहनीय और बार अनन्तानुबन्धी इन साठके सिवा इष्टिस  
 प्रकृतियोंका संक्रम होता है। इस प्रथम सासादनसम्बन्धहट्टिके २१ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्वानमें १५  
 प्रकृतियोंका वा २१ प्रकृतियोंका संक्रम होता है यह सिद्ध हुआ।

१ २७८ असंघत सम्बन्धहट्टिके वणीस प्रकृतिक प्रतिग्रहस्वान हाथ है क्योंकि इसके सत्रह  
 वर्ष प्रकृतियोंमें सम्बन्ध और सम्बन्धिमिथ्या तथा प्रतिग्रहस्वसे प्रथम वेका जाता है। इस प्रतिग्रह  
 स्वानमें सत्तारिस, वणीस और त्र्यंस प्रकृतिक संक्रमस्थानोंका संक्रम अन्वय्य होता है। और जब  
 इसी भीनके मिथ्यात्वका नाश होकर सम्बन्धिमिथ्यात्व प्रतिग्रहप्रकृति नहीं रहती तब अत्रग्रह प्रकृतिक  
 प्रतिग्रहस्वान होता है, क्योंकि इसमें भी वरिस प्रकृतिक स्वानका संक्रम अन्वय्य होता है। फिर भी  
 इस भीनके सम्बन्धिमिथ्यात्वका नाश होकर जब सम्बन्ध भी प्रतिग्रहप्रकृति नहीं रहती तब सत्रह  
 प्रकृतिक प्रतिग्रहस्वान उत्पन्न होता है, क्योंकि उसमें अथाप और नाञ्जावकी इष्टिस प्रकृतियोंका

सम्मामिच्छाद्द्विम्बि वि एदं पडिग्गहट्टाणं पणुवीग-इगिवीसमंक्रमट्टाणपटिवद्धमणुगंतव्वं ।  
 २७८. मंजदागंजदगुणट्टाणमस्मिगृण पण्णारसपडिग्गहट्टाणमुपपज्जेदं, तेरसविधं  
 वंधमाणस्य तस्स वंधपयडीसु पुच्चं व मत्तावीस-उच्चवीस-तेवीसमंक्रमट्टाणाणमाहारभावेण  
 सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तपयडीण पवेगणादो । पुणो इमेण दंसणमोहस्सवचणमच्चुद्धिय

सकम उपलब्ध होता है । यह सत्रह प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान सम्यग्मिथ्यादृष्टिके भी जानना चाहिये ।  
 किन्तु उसके उभयों पञ्चीस और उन्नीस प्रकृतिक संक्रमस्थानोंका सक्रम होता है ।

**विशेषार्थ**—अचिरतसम्यग्दृष्टिके १६, १८, और १७, प्रकृतिक तीन प्रतिग्रहस्थान होते हैं ।  
 दर्शनमोहनीयकी सत्तावाले सम्यग्दृष्टिके मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन दो प्रकृतियोंका संक्रम  
 अवश्य होता है । मिथ्यात्वका सक्रम तो सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्व इन दोनोंमें होता है किन्तु  
 सम्यग्मिथ्यात्वका संक्रम केवल सम्यक्त्वमें होता है । इस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वरूप  
 इन दो प्रतिग्रहप्रकृतियोंको बद्धा बंधनेवाली सत्रह प्रकृतियोंमें मिला देने पर १९ प्रकृतिक प्रतिग्रहरथान  
 होता है । किन्तु दर्शनमोहनीयकी क्षणणाका प्रारम्भ करके जब यह जीव मिथ्यात्वका क्षय कर देता  
 है तब सम्यग्मिथ्यात्व प्रतिग्रहप्रकृति नहीं रहती इसलिये १८ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान होता है । और  
 उन्नीस प्रकार जब यह जीव सम्यग्मिथ्यात्वका क्षय कर देता है तब सम्यक्त्व प्रतिग्रहप्रकृति नहीं  
 रहनेसे १७ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान होता है । इस प्रकार अचिरत सम्यग्दृष्टिके कुल तीन प्रतिग्रहस्थान  
 होते हैं यह बात सिद्ध हुई । अब इसके कितने सक्रमस्थान होते हैं और किन सक्रमस्थानोंका किस  
 प्रतिग्रहस्थानमें सक्रम होता है उसका विचार करते हैं—जो छत्रोस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव  
 उपशमनस्यस्त्वको प्राप्त होता है उसके प्रथम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वका संक्रम न होनेसे  
 छत्रोस प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है । और द्वितीयादि समयोंमें उसके सम्यग्मिथ्यात्वका सक्रम  
 होने लगनेसे २७ प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है । इसी प्रकार जब यह जीव अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी  
 विसर्गोन्नता करता है तब २३ प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है । ये तीनों सक्रमस्थान उन्नीस प्रकृतिक  
 प्रतिग्रहस्थानके रहते हुए सम्भव हैं, क्योंकि इन स्थानोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता  
 आवश्यक है । इसलिये उन्नीस प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें इन तीनों स्थानोंका सक्रम होता है यह बात  
 सिद्ध होती है । १८ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान मिथ्यात्वका क्षय होनेपर ही होता है और मिथ्यात्वका  
 क्षय होनेपर संक्रमस्थान २२ प्रकृतिक पाया जाता है, इसलिये १८ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें  
 २२ प्रकृतिक स्थानका सक्रम होता है यह बात सिद्ध होती है । १७ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान सम्य-  
 ग्मिथ्यात्वका क्षय होनेपर होता है और तब सक्रमस्थान इक्कीसप्रकृतिक पाया जाता है, इसलिये  
 १७ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें २१ प्रकृतिकस्थानका सक्रम होता है यह बात सिद्ध होती है । इस  
 प्रकार अचिरत सम्यग्दृष्टिके प्रतिग्रहस्थान और सक्रमस्थानोंका विचार करके अब सम्यग्मिथ्यादृष्टि-  
 के इनका विचार करते हैं—इस गुणस्थानमें दर्शनमोहकी प्रकृतियोंका संक्रम नहीं होता और बन्ध  
 सत्रह प्रकृतियोंका होता है, अतः प्रतिग्रहस्थान एक १७ प्रकृतिक ही पाया जाता है । तथापि सत्ता  
 २८ या २४ प्रकृतियोंकी होनेसे सक्रमस्थान २५ या २१ प्रकृतिक ये दो पाये जाते हैं, क्योंकि २८ या  
 २४ प्रकृतियोंमेंसे दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंके सक्रम न होनेसे मिश्रगुणस्थानमें सक्रमस्थान  
 २५ या २१ प्रकृतिक ही प्राप्त होते हैं ।

§ २७८ सयतासंयत गुणस्थानकी अपेक्षा पन्द्रह प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान उत्पन्न होता है,  
 क्योंकि तेरह प्रकृतियोंका बन्ध करनेवाले सयतासंयतके बन्धप्रकृतियोंमें पूर्ववत् २७, २६ और  
 २३ प्रकृतिक सक्रमस्थानोंके आधाररूपसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन दो प्रकृतियोंका  
 प्रवेश और हो जाता है । फिर इसके द्वारा दर्शनमोहनीयकी क्षणणाके लिये उद्यत होकर मिथ्यात्वका

मिच्छते स्वविद् सम्मामिच्छतेषु विणा चोदसपदिग्गहप्राण होदि । एदेणेष सम्मामिच्छते स्वविद् सम्मतेण विणा तेरसपदिग्गहो होइ, जहाकममेदसु बावीस-इगिबीस पयडीण संक्रमदसणादो ।

§ २७० पमचापमचाणमकारस पदिग्गहो होइ, तर्धचपयडीसु पुम्ब व सचावीस छवीस-सवीससक्रमह्राणाण पदिग्गहभावेण सम्मत्-सम्मामिच्छत्तार्ण पवेसिदपादो । एत्थेव मिच्छत्तं खइय सम्मामिच्छत्तपदिग्गहे जासिदे दसपदिग्गहो होइ । तेणेष सम्मामिच्छत्तं खइय सम्मत्तं पदिग्गहामावे कदे अचपयडिपदिग्गहप्राण होइ जहाकममेदसु बावीस-इगिबीसपयडीण संक्रमदसणादो ।

§ २८ अणुम्बकणगुणह्राणमि एकारस वा जव वा तेवीस-इगिबीससक्रमणाणामाहारमावेण पदिग्गहा होति, तत्थ पमारठासंभवादो ।

अथ कर वेम पर सम्पमिच्छात्थकं किंता चोदप्रकृतिक प्रतिप्रहस्वान कल्प्य होता है । और जब यह बीस सम्पमिच्छात्थक भी अथ कर वेत्थ ह तब तेरहप्रकृतिक प्रतिप्रहस्वान होता है, क्योंकि इन दोनों त्थानोंमें क्रमसे १२ और २१ प्रकृतियोंका संक्रम देखा जाता है ।

विशेषार्थ—जहां संवत्सरसंवत्के प्रतिप्रहस्वान और संक्रमस्वान अठारहवें हुए किस प्रतिप्रहस्वानमें किस संक्रमस्वानोंका संक्रम होय ह इस बातका निर्णय किया गया है । अचिरत-सम्पमिच्छात्थके वा संक्रमस्वान कल्प्य है वे ही संवत्सरसंवत्के होत हैं क्योंकि सच्चा और क्षुण्णकी अपेक्षासे इन दोनों गुणस्वानोंमें कोई अन्तर नहीं है । किन्तु क्षुण्णकी अपेक्षासे संवत्सरसंवत्के बार प्रकृतियाँ कम हो जाती हैं । अथ १६ १८ और १७ मेंसे ४ प्रकृतियाँ कम करने पर इसके क्रमसे १५, १४ और १३ वे तीन प्रतिप्रहस्वान प्राप्त होत हैं । अथ इनमेंसे किसमें कितनी प्रकृतियोंका संक्रम होता है सो यह सब कबन अचिरतसम्पमिच्छात्थके संक्रमस्वानोंके स्वामित्वको देखकर प्रतिप्रहस्वान कहा जायिने ।

§ १८६ प्रमत्तसंवत् और अरमत्तसंवत्के ग्यारहप्रकृतिक प्रतिप्रहस्वान होय है, क्योंकि इनकी अथप्रकृतियोंमें पूर्ववत् सत्तार्वस छवीस और त्वंस प्रकृतिक संक्रमस्वानोंका प्रतिप्रहस्वान पाया जानेके कारण इन अथप्रकृतियोंमें सम्पकत्व और सम्पमिच्छात्थ इन दो प्रकृतियोंका प्रवेश किया गया ह । अब इनके मिच्छात्थक अथ हाकर सम्पमिच्छात्थ प्रतिप्रहस्वान प्रकृति नहीं रखी तब इसप्रकृतिक प्रतिप्रहस्वान होता ह । और अब यही बीस सम्पमिच्छात्थक अथ करके सम्पकत्वका प्रतिप्रहस्वान प्रकृतिरूपसे अभाव कर देता है तब नौप्रकृतिक प्रतिप्रहस्वान हाय ह, क्योंकि इन दोनों प्रतिप्रहस्वानोंमें क्रमसे चार्वस और इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रम देखा जाता ह ।

विशेषार्थ—संवत्सरसंवत्के वैश्वेदेयसी १३ प्रकृतियोंमेंसे ४ प्रकृतियाँ कम होकर इन दो गुणस्वानोंमें ६ प्रकृतियोंका अन्व हाता है, अथ यहाँ ११ १० और ६ प्रकृतिक तीन प्रतिप्रहस्वान प्राप्त होत हैं । अथ कबन गुणम ह ।

§ १८७ अपूर्वकरण गुणस्वानमें त्वस और इक्कीस प्रकृतिके आचारमूत ग्यारह प्रकृतिक वा नौ प्रकृतिक वा दो प्रतिप्रहस्वान हात हैं क्योंकि यहाँ पर और कोई दूसरा अथ सम्पकत्व नहीं है ।

विशेषार्थ—अपूर्वकरणमें १४ प्रकृतिक वा २१ प्रकृतिक वे वा अरमत्त हाते हैं । इक्कीस यहाँ १३ प्रकृतिक वा २३ प्रकृतिक वा वा संक्रमस्वान और क्रमसे इनके आचारमूत

१ २८१. मंपहि उवगमसेटीए चउवीगमंतकम्मियमस्सिरुण पडिग्गहट्टाणाण-  
मुप्पत्ति वत्तइस्सामो । तं कवं ? चउवीमसंतकम्मियस्स उवगमसेटिं चट्ठिय अणियट्ठि  
गुणट्टाणम्मि पंचविहं वधमाणस्स सत्तपयडिपडिग्गहो होइ, तत्थ चउमंजलण-पुरिसवेद-  
सम्मत्त-मम्मामिच्छत्तसम्रहस्स तेवीस-त्रावीग-इगिवीमसंकमाणं पडिग्गहत्तदंमणादो ।  
एदेणेव णवुंस-इत्थिवेदमुवमामिय पुरिसवेदपडिग्गहवोच्छेदे कदे छप्पयडिपडिग्गहो होइ,  
चदुमंजलण दोदंसणमोहपयडीणमेत्थ वीमाए संकमस्साहारभावोवलंभादो । एत्थेव  
छण्णोकमाय-पुग्गिस्सवेदाणं जहाकममुवममेण चोदय-तेरसमंकमट्टाणाणमुवलंभादो च ।  
पुणो वि एदेण दुविहकोहोवसमं काउण कोहमजलणपडिग्गहविणारे कए पंचपयडि-  
पडिग्गहट्टाणसेव्वारमसंकमाहारभूदमुप्पज्जदि । एत्थेव कोहमंजलणोवसमस्सिरुण  
दमसंकमाहार तं चेव पडिग्गहट्टाणं होदि । तेणेव दुविहमाणमुवमामिय माणसंजलण-  
पडिग्गहवोच्छेदे कदे चउपयडिपडिग्गहदमदुपयडिसंकमाहारभूदं पडिग्गहट्टाण होइ ।  
एत्थेव माणसंजलणोवसमे कदे सत्तपयडिसंकमपडिग्गहं त चेव पडिग्गहट्टाणं होदि ।  
तेणेव दुविहमायोवसमेण मायासंजलणपडिग्गहवोच्छेदे कदे लोभसंजलण-दोदंसणमोह-  
पयडिपडिग्गहं तिण्हं पडिग्गहट्टाण पचपयडिसंकमावेकसं मायासंजलणोवसमेण चदुपयडि-

११ प्रकृतिक और ६ प्रकृतिक ये दो प्रतिग्रहस्थान बतलाये हैं। यहाँ दर्शनमोहनीयकी लपणा न होनेसे १० प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान सम्भव नहीं है।

१ २८१ अप उपशमत्रेण्णिमें चौंठीम प्रकृतिक सत्त्वस्थानकी अपेक्षा प्रतिग्रहस्थानोंकी उत्पत्ति बतलाते हैं। यथा—जो चौथीस प्रकृतियोंकी सत्तागाला उपशमत्रेणि पर चढकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें पाँच प्रकृतियोंका बन्ध करता है उसके सात प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान होता है, क्योंकि वहाँ पर चार सञ्चलन, पुरुषवेद, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन सात प्रकृतियोंके समुदायमें तेईस, धार्इस और उक्कीस प्रकृतियोंके संक्रमका प्रतिग्रहपना देखा जाता है। तथा जब यही जीव स्त्रीवेद और नपु सक्वेदका उपशम करके पुरुषवेदकी प्रतिग्रहव्युच्छित्ति कर देता है तब छह प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान होता है, क्योंकि यहापर चार सञ्चलन और दो दर्शनमोहनीय ये छह प्रकृतिया वीस प्रकृतियोंके सक्रमके आधाररूपसे उपलब्ध होती हैं। फिर जब यह जीव इन वीस प्रकृतियोंमेंसे छह नोकपाय और पुरुषवेदकी क्रमसे उपशमा देता है तब चौदह और तेरह प्रकृतिक सक्रमस्थान उपलब्ध होते हैं। फिर भी जब यह जीव दो प्रकारके क्रोधकी उपशमा देता है तब क्रोधसञ्चलन प्रतिग्रह प्रकृति न रह कर ग्यारह प्रकृतिक सक्रमस्थानका आधारभूत पाच प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान उत्पन्न होता है। फिर यहीं पर क्रोधसञ्चलनका उपशम कर लेनेपर दस प्रकृतिक सक्रमस्थानका आधारभूत वही प्रतिग्रहस्थान होता है। फिर जब यही जीव दो प्रकारके मानका उपशम करके मानसञ्चलनकी प्रतिग्रहव्युच्छित्ति कर देता है तब आठ प्रकृतिक सक्रमस्थानका आधारभूत चार प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान उत्पन्न होता है। फिर यहीं पर मानसञ्चलनका उपशम कर लेनेपर सात प्रकृतिक सक्रमस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला वही प्रतिग्रहस्थान होता है। फिर जब यही जीव दो प्रकारकी मायाका उपशम करके मायासञ्चलनकी प्रतिग्रहव्युच्छित्ति कर देता है तब पाच प्रकृतियोंके संक्रमकी अपेक्षा रखनेवाला या मायासञ्चलनका उपशम हो जानेपर चार प्रकृतियोंके सक्रमकी अपेक्षा रखनेवाला लोभसञ्चलन और दो दर्शनमोहसम्बन्धी तीन प्रकृतिक

सकमावेकस वा समुववापद । एदणव दुविहलोहमुवसामिय लोमसञ्जलणपटिमाह  
 वोञ्छे कठ मिञ्छत्त-सम्मामिञ्छत्तसकमपाओर्ग सम्मत-सम्मामिञ्छत्तपटिबटं दोण्हं  
 पयटिपटिमाहहुणमुप्यज्ज ।

§ २८२. संपदि इगिवीससंतकम्मियमस्सिऊणुवसमसदीए संमवताण पडिगाह  
 हुणाणामुप्यची पुचद । उ कव ? इगिवीससतकम्मियसस उवसमसटिं षट्ठिय अणियहि  
 गुणहुणाणम्मि पचविह वपमाणसस एहावीस-वीस-एगुणवीसपयटिसकमाहारभूदं पचपटि  
 माहहुणाणमुप्यज्ज । पुणो एडेण प्वुंस-इत्थिवेदाणमुवसम काऊण पुरिसवेदपटिमाह  
 विभासे कद ञउण्हं पटिमाहहुणमहुणसपयटिसकमपटिबटमुप्यज्ज । तेणव सच-  
 ओकसाप-दुविहकोहोवसमणवावारेण कोहसञ्जलणपटिमाहवोञ्छे कदे तिण्ह पटिमाहहुण  
 णवपयटिसकमपटिबटमुप्यज्ज । पुणो कोहसञ्जलणेण सह दुविहमाणोवसमं काऊण  
 माणसञ्जलणपटिमाहवोञ्छे कदे दोण्हं पटिमाहहुण उप्ययटिसकमपटिबटमुप्यज्ज ।  
 पुणो माणसञ्जलण-दुविहमायोवसामणेण मायासञ्जलणपटिमाहवोञ्छे कद एहिस्से  
 पटिमाहहुण तिण्ह पयटिसकमहुणपटिबटमुप्यज्ज, मायासञ्जलणेण सह दुविहलोहस  
 होहसञ्जलणम्मि तापे सकटिं सजाणे । एव खवगसस वि ५ चविहबंधगप्यहुडि उवरिम-  
 पडिगाहहुणाण समुप्यची वत्तण सहाकम तत्थ पंच-वटु-सि-दु-एकविधबंधहुणोसु

प्रतिप्रवृत्तान् उत्पन्न होता है । फिर जब वही जीव दो प्रकारके बोधक्य उपराम करके बोधसंभवजन-  
 की प्रतिप्रवृत्तियुक्ति कर देता है तब मिथ्यात्व और सम्प्रतिप्रवृत्तके संक्रमके बोध सम्भवत्व  
 और सम्प्रतिप्रवृत्तसम्बन्धी दो प्रकृतिक प्रतिप्रवृत्त स्वान् उत्पन्न होता है ।

§ २८२. जब इक्कीस प्रकृतिक सत्तास्थानकी अपेक्षा उपरामभेदिके सम्भव प्रतिप्रवृत्तानो-  
 की उत्पत्तिक विवेचन करत हैं । यथा—दो इक्कीस प्रकृतियोकी सत्ताबाधा जीव उपरामभेदियर  
 वदकर अनिदृष्टिकरव्य गुणस्थानमें पांच प्रकृतिक वद करत है वसके इक्कीस बीस और लतीस  
 प्रकृतिक संक्रमस्थानोका आधारभूत पांच प्रकृतिक प्रतिप्रवृत्तान् उत्पन्न होता है । फिर जब यह जीव  
 नपु सकवेद और स्त्रीवदका उपराम करके पुनरवेवकी प्रतिप्रवृत्तियुक्ति करता है तब अठारह  
 प्रकृतिक संक्रमस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला चार प्रकृतिक प्रतिप्रवृत्तान् उत्पन्न होता है । फिर जब  
 वही जीव सत्त मोकयव और दो प्रकारके बोधक्य उपराम करके बोधसंभवजनकी प्रतिप्रवृत्तियुक्ति  
 कर देता है तब वसके नौ प्रकृतिक संक्रमस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला तीन प्रकृतिक प्रतिप्रवृत्तान्  
 उत्पन्न होता है । फिर जब वही जीव बोधसंभवजनके साथ दो प्रकारके मानका उपराम करके मान-  
 संभवजनकी प्रतिप्रवृत्तियुक्ति कर देता है तब छह प्रकृतिक संक्रमस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला दो  
 प्रकृतिक प्रतिप्रवृत्तान् उत्पन्न होता है । फिर जब वही जीव मानसंभवजन और दो प्रकारकी  
 यावत्त उपराम करके मयासंभवजनकी प्रतिप्रवृत्तियुक्ति कर देता है तब वसके तीन प्रकृतिक  
 संक्रमस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला एक प्रकृतिक प्रतिप्रवृत्तान् उत्पन्न होता है क्योंकि तब मया  
 संभवजनके साथ दो प्रकारके बोधक्य बोधसंभवजनमें संक्रम देखा जाता है । इसीप्रकार जब  
 वहीके भी पांच प्रकारके संभवस्थानसे दोहर धारोके प्रतिप्रवृत्तानोकी उत्पत्तिक कथन करना चाहिये  
 क्योंकि वहाँ क्रमसे पांच प्रकृतिक प्रतिप्रवृत्तानमें इक्कीस तरे, बारह और म्यारह प्रकृतिक संक्रम

एकवीस-तेरस-नारसेकारसण्हं दग्-चउक्काणं तिण्हं दोण्हमेक्किस्से च संकमड्डाणस्स मंरुतिदंमणादो । एवमेदीए विदियगाहाए पढमगाहापरुविदमंकमड्डाणाणमाहारभूदाणि पडिगहड्डाणाणि सामण्णेण णिदिड्डाणि ।

स्थानोंका, चार प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें दस और चार प्रकृतिक सक्रमस्थानोंका, तीन प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें तीन प्रकृतिक सक्रमस्थानका, दो प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें दो प्रकृतिकसंक्रमस्थानका और एन प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें एक प्रकृतिक संक्रमस्थानका सक्रम देगा जाता है । इसप्रकार इस दूसरी गाथाद्वारा प्रथम गाथामें कहे गये सक्रमस्थानोंके आधारभूत प्रतिग्रहस्थानोंका सामान्य-रूपमें निर्देश किया है ।

विशेषार्थ—अब यहा गुणस्थानके क्रमसे प्रतिग्रहस्थान, सक्रमस्थान तथा उनकी प्रकृतियोंका कोष्टरुद्धारा निर्देश करते हैं—

गुणस्थान	प्रतिग्रह स्थान	प्रकृतियाँ	संक्रमस्थान	प्रकृतियाँ
मिथ्यात्व	२२ प्र०	मिथ्यात्व, मोलह कपाय, तीन वेदोंमेंसे कोई एक, दो युगलोंमेंसे एक युगल, भय और जुगुम्मा	२७ प्र०	मिथ्यात्वके विना
	२१ प्र०	मिथ्यात्वके विना पूर्वोक्त	२५ प्र०	तीन दर्शनमोहके विना
सामादन	२१ प्र०	मिथ्यात्वके विना पूर्वोक्त किन्तु नपु सकवेदका बन्ध न होनेसे दो वेदों-मेंसे कोई एक	२५ प्र०	तीन दर्शनमोहके विना
	२१ प्र०	पूर्वोक्त २१ मेंसे चार अनन्तानुबन्धीके विना किन्तु वेदमें मात्र पुरुषवेद	२५ प्र०	तीन दर्शनमोह व चार अनन्तानुबन्धीके विना
अविरत सम्य०	१९ प्र०	पूर्वोक्त १७ में सम्यक्त्व व सम्यग्मिथ्यात्व मिला देनेपर	२७	सम्यक्त्वके विना
			२६	सम्यक्त्व व सम्यग्मिथ्यात्वके विना
			२३	अनन्तानुबन्धी ४ व सम्यक्त्वके विना
	१८ प्र०	सम्यग्मिथ्यात्वके विना	२२	पूर्वोक्त ५ व मिथ्यात्व के विना
	१७ प्र०	सम्यक्त्वके विना	२१	१२ कपाय ६ नोकपाय



गुण	प्रति	प्रकृतिपाँ	संक्रमस्थान	प्रकृतिपाँ
वैराविरत	१५ म	पूर्वोक्त ११ मेंसे अमरवा- क्यानाकारण ४ के बिना	२७, २९, २३	पूर्ववत्
	१४ म	सम्बन्धिम के बिना	१५ म	पूर्ववत्
	१३ म	सम्बन्धके बिना	११ म	पूर्ववत्
अमर व अमरगत	११ म	पूर्वोक्त १३ मेंसे प्रत्याक्या- नाकारण ४ के बिना	२७ २९ व २३ म	पूर्ववत्
	१ म	सम्बन्धिभ्यात्वके बिना	१२ म	पूर्ववत्
	२ म	सम्बन्धके बिना	२१ म	पूर्ववत्
अपूर्वकारण	११ म	पूर्ववत्	२३ म	पूर्ववत्
	१ म	पूर्ववत्	२१ म	पूर्ववत्
अपराम अस्थि २४ म संस्कर्मके अपवा	७ म	चार संख्य पुरुषवत् सम्बन्ध व सम्बन्धिभ्यात्व	२३ २२ व २१ म	२३ पूर्ववत् २२ संस्कर्मके बिना २१ मपुंसकर्मके बिना
	१ म	पुरुषवत्के बिना	२ म	१३ मेंसे मपुंसकर्मके अपवा व संख्यजनकोम कम कर देने पर
			१४ म	२ मेंसे अत्र लोक्याव कम कर देने पर
			१३ म	१४ मेंसे पुरुषवत्के कम कर देने पर
	३ म	कोषसंख्यजनके बिना	११ म	१३ मेंसे वा कोषको कम कर देने पर
			१ म	११ मेंसे कोषसंख्यजन के कम कर देने पर
	४ म	मानसंख्यजनके बिना	८ म	दो मान कमकर देनेपर
			७ म	मानसंख्य कम करने पर
	३ म	माया संख्यजनके बिना	५ म	दो माया कमकर देनेपर
			४ म	मायासं कमकर देनेपर
२ म	अमर व सम्बन्ध व सम्बन्धि	१ म	विध्या व सम्बन्धि	

§ २८३. सपहि सत्तावीसादिमकमद्वाराणि परिव्राडीए इविय पादेकमेकेकमंकम-  
द्वाराणिरुंभणं काऊणेदस्स संक्रमद्वाराणस्स एत्तियाणि पडिगहद्वाराणि हांति ति  
जाणावणइमुत्तरिमदसगाहाओ । तन्थ ताव तासिमादिमगाहा छव्वीस सत्तावीसा य ।  
एदीए तदियगाहाए छव्वीस सत्तावीसमंकमद्वाराणं पडिगहद्वाराणियमो कीरदे—  
चदुसु चेव पडिगहद्वारेणमु छव्वीस-सत्तावीसाणं संक्रमो णाणत्थ इटि । एत्थ णियमसदो

गुण	प्रति०	प्रकृतिया	संक्रमयान	प्रकृतिया
उपशम श्रेणि २१ प्रकृतिक सत्कर्मकी अपेक्षा	५ प्र०	चार सञ्ज० व पुरुषवेद	२१ प्र०	१० कपाय नो कपाय
			२० प्र०	सञ्ज०लो० विना पूर्वोक्त
			१६ प्र०	नपु०वेद विना पूर्वोक्त
	४ प्र०	पुरुषवेदके विना	१८ प्र०	स्त्रीवेद विना पूर्वोक्त
			६ प्र०	सात नोकपा० दो क्रोध के विना
			२ प्र०	दो मानके विना
क्षपकश्रेणि	५ प्र०	चारसं० व पुरुषवेद	३ प्र०	दा मायाके विना
			२१ प्र०	पूर्वगत
			१३ प्र०	मध्यके आठकपाय विना
			१२ प्र०	सञ्ज०लोभ विना
	४ प्र०	चार सञ्जलन	११ प्र०	नपुमकवेद विना
१० प्र०			स्त्रीवेदके विना	
४ प्र०			छह नोकपाय विना	
३ प्र०	सञ्जलन क्रोध विना	३ प्र०	सञ्ज०क्रोध, मान व माया	
२ प्र०	सञ्जलन मान विना	२ प्र०	सञ्ज० मान व माया	
१ प्र०	सञ्जलन माया विना	१ प्र०	सञ्जलन माया	

§ २८३ अब सत्ताईस आदि संक्रमस्थानोंको क्रमसे रखकर प्रत्येक संक्रमस्थानकी अपेक्षा  
इस संक्रमस्थानके इतने प्रतिग्रहस्थान होते हैं यह बतलानेके लिये आगेकी दस गाथाएँ आई हैं ।  
उनमेंसे 'छव्वीस सत्तावीसा य' यह पहली गाथा है जो क्रमानुसार तीसरे नम्बरपर प्राप्त होती है ।  
इस तीसरी गाथामें छव्वीस प्रकृतिक और सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमस्थानोंके प्रतिग्रहस्थानोंका नियम  
करते हैं—छव्वीस प्रकृतिक और सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमस्थानोंका चार प्रतिग्रहस्थानोंमें ही संक्रम  
होता है अन्यत्र नहीं होता । इस गाथामें आया हुआ 'नियम' शब्द पंचमी विभक्तिका एकवचनान्त

पश्चिमिप्यव्ययणतो ऋदोमगमएण पडियतलोव काऊण रहस्तादसेण जिदिहो । सक्रम  
 द्वाणाजमत्य भियमो पडिग्गाहद्वाणाजमभियमो । तदो वेसु तवीसाए वि सक्रमो ण  
 विरुज्जदे । एव सचावीस-उम्बीससंक्रमहारत्तेजावहारियाणं अउण्ह पडिग्गाहद्वाणाण  
 सरुज्जणिरेश्ह गाहापच्छदो 'वावीस पण्णरसग० ।' पादेकमेदसु चसुसु, पडिग्गाहद्वाणेषु  
 उम्बीस-सचावीसाण संक्रमो होइ चि पुप होइ ।

§ २८४ तत्र ताव सचावीससतकम्मियमिच्छाद्दिग्ग्मि पणुवीसकसाय-सम्मा  
 मिच्छत्तसंक्रामयम्मि उम्बीससंक्रमस्स वावीसपडिग्गहो लम्भवे । पुणो-उम्बीससत  
 कम्मियमिच्छाद्दिग्ग्मा उजसमसम्मत्त-सज्जमासज्जमासहणपटमसमए सम्मामिच्छत्तसक्रमा-  
 मावेण उम्बीससंक्रमस्स पण्णारस पडिग्गहो होइ । तेरसविहतम्बंघपयडीसु सम्मत्त-  
 सम्मामिच्छत्तार्णं पवेसादो । तेजेव पटमसम्मत्त-सज्जमजुगवग्गाहणपटमसमयम्मि उम्बीस  
 संक्रमस्स एकारस०पडिग्गहो होइ, तत्र सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेहि सह अडुकसाय  
 पण्णोकसायाण पडिग्गाहत्तदसणादो । पुणो पटमसम्मत्तमाहणपटमसमए अडुमाणस्स  
 अरुज्जदसम्माद्दिग्ग्मि एगुणवीसपडिग्गाहद्वाणपडिग्गाहिजो उम्बीससक्रमो होइ, तदवत्पाए  
 पडिग्गाहद्वाणतरस्तासमवादो ।

है, इसलिये अन्त में होनेके मयते अन्तमें प्राप्त हुए 'त' का जोत करके और इसके स्वावमें इसके  
 का आदेश करके निर्देश किया है। यहाँ पर संक्रमस्थानोंका नियम किया गया है प्रतिप्रस्थानोंका  
 नियम नहीं किया गया है, इसलिये इन प्रतिप्रस्थानोंमें वेईस प्रकृतिक स्वावका संक्रम भी विरोधको  
 नहीं प्राप्त होता है। इस प्रकार सचावीस प्रकृतिक और उम्बीस प्रकृतिक संक्रमोंके आचारक्रमसे  
 निश्चित किये गये चार प्रतिप्रस्थानोंके स्वरूपका निर्देश करनेके लिये 'वावीस पण्णरसगो' यह  
 गाथाका अन्तर्गम्य कहा है। इन चारों प्रतिप्रस्थानोंमेंसे प्रत्येकमें उम्बीसप्रकृतिक और सचावीस  
 प्रकृतिक स्थानोंका संक्रम होय है यह अर्थ अन्तका अर्थ है।

§ २८५ अन्तमेंसे उम्बीस कथा और सग्यमिच्छात्वका संक्रम करनेको सचावीस  
 प्रकृतियोंकी सचावसे मिच्छादृष्टिके उम्बीस प्रकृतिक संक्रमस्थानका चार्ईसप्रकृतिक प्रतिप्रस्थान  
 प्राप्त होता है। फिर जो उम्बीस प्रकृतियोंकी सचावका मिच्छादृष्टि जीव अग्रमसम्बन्ध और  
 संचयमासवका एकसाव प्राप्त करता है इसके प्रथम समयमें सग्यमिच्छात्वका संक्रम नहीं होनेसे  
 उम्बीस प्रकृतिक संक्रमस्थानका पन्द्रहप्रकृतिक प्रतिप्रस्थान प्राप्त होय है क्योंकि संकल्पसंघके  
 संबन्धाली वेछ अन्तरकी प्रकृतियोंमें सम्बन्ध और सग्यमिच्छात्वका प्रतिप्रस्थानसे प्रवेश देना  
 जाता है। तथा वही उम्बीस प्रकृतियोंकी सचावका मिच्छादृष्टि जीव अग्र मसम्बन्ध और  
 समय इन दोनोंमें एक साथ प्राप्त करता है तब इसके प्रथम समयमें उम्बीस प्रकृतिक संक्रम  
 स्थानका पन्द्रह प्रकृतिक प्रतिप्रस्थान होता है, क्योंकि यहाँ पर सग्यकर और सग्यमिच्छात्वके  
 साथ चार कथा और पाँच श्लोकानों से पन्द्रह प्रतिप्रकृतियाँ देली जाती हैं। पुन प्रथम  
 सग्यत्वका प्रवृत्त करनेके प्रथम समयमें विद्यमान हुए अर्धवत्सम्बन्धके जीवके उम्बीसप्रकृतिक  
 प्रतिप्रस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला उम्बीस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है, क्योंकि अत आरम्भमें  
 इसका प्रतिप्रस्थान नहीं हो सकता है।

१ २८५. संपहि सत्तावीसाए उच्चदे—अट्टावीसमंतकम्मियमिच्छाडट्टिमि सत्तावीसमक्रमो वावीसपयडिपडिग्गहविमईकओ समुप्पजड । पुणो उवगमसम्मत्तग्गहण- विदियसमयप्पहुडि जाव अणत्ताणुवंधीणं विमंजोयणा णत्थि ताव मंजदामजद-संजद- असंजदसम्माडट्टिगुणट्टाणेसु सत्तावीसमकमस्स जहाकमं पण्णारसेवारस-एग्गूणवीस- पडिग्गहा हांति । एवं तदियगाहाए अन्यो समत्तो ।

१ २८६. सत्तारसेक्कवीसासु०—पंचवीसाए मंक्रमो कम्मि पडिग्गहट्टाणम्मि होठ त्ति आमंकिय 'सत्तारसेक्कवीसासु' त्ति उच्चं । एदेसु दोसु पडिग्गहट्टाणेसु पणुवीसाए मंक्रमो णिवट्टो त्ति उच्चं होड । एत्थ वि णियममट्टो पडिग्गहट्टाणेसु संक्रमट्टाणाव-

१ २८५. अत्र सत्ताईस प्रकृतिक सक्रमस्थानके प्रतिग्रहस्थान कहते हैं—अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाले मि०यादृष्टिके वाईस प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानका विषयभूत सत्ताईसप्रकृतिक संक्रमस्थान उत्पन्न होता है । पुन उपगमसम्भ्यत्तके ग्रहण करनेके दृमरे समयमे लेकर जब तक अनन्तानुवन्वियोंकी विसंयोजना नहीं होती है तब तक मयतामंयत, मंयत और अस्संयतसन्त्यगृष्टि गुणस्थानोंमें सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमस्थानके क्रमसे पन्द्रहप्रकृतिक, ग्यारहप्रकृतिक और उन्नीस प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान उत्पन्न होते हैं ।

विशेषार्थ—यहां पर प्रकृतिमक्रमस्थानके सिलन्विलेमें आई हुई ३२ गाथाओंमेंसे तीसरी गाथाका व्याख्यान किया गया है । इस गाथामें लेकर १२वीं गाथा तक १० गाथाओंमें किस सक्रमस्थानके कितने प्रतिग्रहस्थान हैं यह बतलाया गया है । उनमेंसे तीसरी गाथामें २७ प्रकृतिक और २६ प्रकृतिक सक्रमस्थानोंके २२, १६, १५, और ११ प्रकृतिक चार प्रतिग्रहस्थान बतलाये गये हैं सो उनका विशेष खुनामा टीकामें किया ही है । इस तीसरी गाथाके पूर्वार्धमें 'णियम' पद आया है । यह 'नियमान्' इस पंचमी विभक्तिके एक वचनका रूप है । प्राकृतके नियमानुसार आदि, मध्य और अन्तमें आये हुए वर्णों और स्वरोंका लोप हो जाता है, अत इस पदमेंसे 'त्' का लोप करके फिर छन्दोभग दोषको टालनेके लिये ह्रस्व कर दिया गया है । इसलिये 'णियम' यह 'नियमान्' का रूप जानना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है । यह नियम पद सक्रमस्थानों का नियम करता है कि उन दो सक्रमस्थानोंके ये चार ही प्रतिग्रहस्थान होते हैं अन्य नहीं, किन्तु प्रतिग्रहस्थानोंका नियम नहीं करता है । ये चार प्रतिग्रहस्थान इन दो सक्रमस्थानोंके तो होते ही हैं किन्तु इनके सिवा अन्य संक्रमस्थान भी इन प्रतिग्रहस्थानोंमें सम्भव हो सकते हैं । यथा अनन्तानुवन्धीकी विसंयोजनाके बाद जो तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थान प्राप्त होता है उसके उन्नीस, पन्द्रह और ग्यारहप्रकृतिक तीन प्रतिग्रहस्थान होते हैं । इस प्रकार गाथामें आये हुए नियम पदसे संक्रमस्थानोंका नियम किया गया है प्रतिग्रहस्थानोंका नहीं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

इस प्रकार तीसरी गाथाका अर्थ समाप्त हुआ ।

१ २८६. अत्र 'सत्तारसेक्कवीसासु' इस चाथो गाथाका व्याख्यान करते हैं—पंचवीस प्रकृतिक संक्रम किस प्रतिग्रहस्थानमें होता है ऐसी आशंका करके सत्रह प्रकृतिक और इक्कीस प्रकृतिक इन दो प्रतिग्रहस्थानोंमें होता है ऐसा कहा है । इन दो प्रतिग्रहस्थानोंमें पंचोस प्रकृतिक संक्रम निवृद्ध है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । यहाँ भी गाथामें 'नियम' शब्द आया है सो वह इस संक्रमस्थानके

इत्यभ्यस्तो पुत्र व पठियतसोवादिषिहाषेय गिद्विद्वो वदुम्बो । तत्त्व छम्बीससत  
 क्स्मियमिच्छाद्द्विस्त बाबीसविई बधमाभयस्त इगिबीसपदिग्गाहालनपो होऊन  
 पनुबीसकसायसकमो होइ । अइबा अणठाणुर्बंभी अबिसभोएदूण द्विदठबसमसम्माद्द्विस्त  
 आसाण पदिबत्रिय इगिबीसबधमाभस्त पनुबीससकमो इगिबीसपदिग्गाहपदिबदो होइ,  
 तत्व सहाबदो दसभतियस्त सकम-पदिग्गाहसचीजममाबादो । पुनो अहुबीससंतक्स्मिय-  
 मिच्छाद्द्वि-सम्माद्द्विीणमण्णदरस्त सम्मामिच्छत्तं पदिबत्रिय सचारसययडीओ  
 बंधमाणस्त पनुबीससकमो सचारसपदिग्गाहपदिग्गाहिवो होइ, एत्थ वि ईसणतियस्म  
 संकमामाबादो । एवं पदिग्गाहजात्रिसेसविसयचेणावहारियस्त पनुबीससकमहुण्यस्त  
 गइगयविसेमणिद्धारणहुमिदमाह—‘णियमा अदुसु गदीसु य’ णियमा मिच्छएय अदुसु  
 वि गईसु पनुबीससकमहुणमबहुिद वदुम्बं, अण्णदरगात्रिमियभियमामाबादो । एत्थेव  
 गुणहुणभगयसामिचविसेसणिद्धारणहुमाह—‘णियमा ‘दिद्वीगए तिविदे’ गुणहुणमादीदो  
 पदुदि तिविदे गुणहुणे मिच्छद्द्वि-सासणसम्माद्द्वि-सम्मामिच्छादिद्वि पि दिद्वि  
 विसेसणविसिद्धादो दिद्विगए पयदसकमहुणममनो णाण्णत्थ, तत्थेव तदुप्पत्तिणियम-  
 दसनादो । एदेण ‘दिद्वीगए’ विसेसणेण सज्जदामबदादीअसुवरिमगुणहुणजाणं उदासो

व ही प्रतिमहस्वान हैं यह बतलानेके लिए दिया है । तथा इस नियम शब्दके ‘ण्’ का जोय और  
 हस्व विधि पूर्ववत् जानना चाहिये । जो अक्षरीय प्रकृतियोंकी सत्तात्प्राय मिष्यादृष्टि जीव ज्ञानस  
 प्रकृति बोध कथ्य करण्य है उसके इत्थीस प्रकृतिक प्रतिमहस्वानके रहते हुए अक्षरीय प्रकृतिक संक्रमस्वान  
 होता है । अथवा अनन्त्यानुकम्बीचतुष्पक्षी विसंयोजना क्रिये बिना जो अक्षरमसम्पन्दि जीव  
 सासणन गुरास्वानके प्राप्त होकर अक्षरीय प्रकृतियोंका कथ्य करता है उसके इत्थीस प्रकृतिक  
 प्रतिमहस्वानसे सम्बन्ध रखनेवाला अक्षरीय प्रकृतिक संक्रमस्वान होता है क्योंकि यहाँपर स्वभाषसे  
 ही इरानमाह्वी हीन प्रकृतियेमें संक्रम और प्रतिमहस्व शक्तिअ अभाव है । पुनः अक्षरसं  
 प्रकृतियोंकी सत्तात्प्राय जो मिष्यादृष्टि या सम्पन्दि जीव सम्पन्मिष्यात्वकी प्राप्त होकर सत्र  
 प्रकृतियोंका कथ्य करण्य है उसके सत्रह प्रकृतिक प्रतिमहस्वानस सम्बन्ध रखनेवाला अक्षरीय प्रकृतिक  
 संक्रमस्वान होता है क्योंकि यहाँपर भी इरानमाह्वी हीन प्रकृतियोंका संक्रम नहीं होता है ।  
 इस प्रकार प्रतिमहस्वियेके विरयत्पसे निरचय किये गये अक्षरीय प्रकृतिक संक्रमरक्षणम  
 गतिसम्बन्धी विशेषताका निरचय करनेके लिये गात्रामें ‘णियमा अदुसु गदीसु य यह कहा है ।  
 आरम्भ यह है कि यह अक्षरीय प्रकृतिक संक्रमस्वान नियमसे ५१वें गतियेमें होता है ऐसा जानना  
 चाहिये क्योंकि यह असुक गतिमें ही होता है ऐसा कोई नियम नहीं है । तथा यहाँपर गुणस्वामी  
 की अपवादा वरामित्व विशेषण नियाएण करनेके लिये ‘णियमा दिद्वीगए तिविदे’ यह कहा है ।  
 यहाँ गात्रामें दृष्टि विसंयोजनेसे चाहिये हीन मिष्यादृष्टि सासणनसम्पन्दि और सम्पन्मिष्या-  
 दृष्टि गुणस्वामीका प्रवेश हुण्य है । इन हीन गुणस्वानेमें ही प्रकृत संक्रमस्वान सम्भव है  
 अथवा नहीं क्योंकि इरही हीन गुणस्वानेमें इस संक्रमस्वामकी उत्पत्ति होती जाती है । यहाँ जो  
 यह ‘दक्षिगत’ विशेषण दिया है सो इससे संवशासंयत आदि भागके गुणस्वानेका लिये यह

१ ता प्रीयदिग्गाहसहितेकविद्वेवसेवावहारिण्य वदु दीउत्तं कप्याह वेउत्तवेनदत्त वावहारिण्य  
 वदुदीउत्तं कप्याह इति पाठः ।

कओ । 'तिविह' विसेमणेण च अगंजद० गुणट्टाणस्स वहिट्ठभावो कओ । एवं चउत्थ-  
गाहाए अत्थपरूवणा समत्ता ।

§ २८७. 'वावीस पण्णरसगे०' एसा पंचमी गाहा तेवीससंकमट्टाणस्स पडिग्गहट्टाणपरूवणट्टभागया । एदिस्से अत्थविवरणं कस्सामो—तेवीसगंकमो पंचसु ट्टाणेसु होइ ति एत्थ संबंधो । तेगिं पंचमंखाविसेसियाणं पडिग्गहट्टाणाणं सरूव-  
णिट्टाण्णं 'वावीसादि' वयणं । कथमेत्थ वावीसाए तेवीसमकमोवलंभो ? ण, अणंताणुवंधी-  
विमंजोयणापुग्गसरसंजुत्तमिच्छादिट्टिपढमसमयप्पहुडि आवलियमेत्तकालमणंताणुवंधीणं संकमाभावेण तेवीसमकामयस्स तदुवलंभविरोहाभावादो । पण्णरसगे पयदमंकमट्टाण-  
संभवो मंजदामंजदम्मि दट्टव्वो, विसंजोइटाणंताणुवंधिचउक्कमंजदासंजदस्स पण्णारस-  
पडिग्गहट्टाणाधारत्तेण तेवीसमंकमट्टाणपउत्तिदंमणादो । एवं सत्तगे वि पयदमंकमट्टाण-  
संभवो जोजेयव्वो । णवरि चउवीमसंतकम्मियाणियट्टिम्मि अंतरकरणादो हेट्ठा तदुप्पत्ती  
वत्तव्वा, अणाणुपुव्वीसंकामयस्सं तस्स तदविरोहादो । एक्कारसूणवीसासु पयदजोयणा एवं

दिया है और 'त्रिपिध' इस त्रिशेषण द्वारा अत्यंतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानका निषेध कर दिया है ।

विशेषार्थ—आणय यह है कि मिथ्यादृष्टि और मासादानसम्यग्दृष्टिके २१ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें तथा सम्यग्मिथ्यादृष्टिके १७ प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें २५ प्रकृतियोंका संक्रम होता है । पंचवीस प्रकृतिक सरूपस्थानके ये दो ही प्रतिग्रहस्थान हैं अन्य नहीं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

उम प्रभार चौथी गाथाके अर्थका कथन समाप्त हुआ ।

§ २८७ 'वावीस पण्णरसगे०' यह पाचवी गाथा है जो तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थानके प्रतिग्रहस्थानोंका कथन करनेके लिये आई है । अब इस गाथाका अर्थ लिखते हैं—तेईस प्रकृतिक संक्रम पाच स्थानोंमें होता है ऐसा यहा सम्यग्बन्ध करना चाहिये । उन पाच सख्यासे विशेषताको प्राप्त हुए प्रतिग्रहस्थानोंके स्वरूपका निश्चय करनेके लिये गाथामें 'वावीस' अदि वचन दिया है ।

शंका—वाईस प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें तेईस प्रकृतिक संक्रम कैसे उपलब्ध होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अनन्तानुवन्धीकी विसयोजना पूर्वक उससे संयुक्त हुए मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयसे लेकर एक आवलि कालतक अनन्तानुवन्धियोंका संक्रम नहीं होनेसे तेईस प्रकृतियोंका संक्रम करनेवाले जीवके वाईस प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान पाये जानेमें कोई विरोध नहीं आता है ।

पन्द्रह प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें प्रकृत संक्रमस्थानका सम्भ्र संयतासंयतके जानना चाहिये, क्योंकि जिसने अनन्तानुवन्धीचतुष्ककी विसयोजना की है ऐसे संयतासंयतके पन्द्रह प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानके आधाररूपसे तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थानकी प्रवृत्ति देखी जाती है । इसी प्रकार सात प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें भी प्रकृत संक्रमस्थानको घटित कर लेना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि चौवीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले अनिवृत्तिकरणमें अन्तरकरण क्रिया करनेके पहले इसी स्थानकी उत्पत्ति कहनी चाहिये, क्योंकि जिसने आनुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ नहीं किया है उस जीवके सात

शेषं कायम्बा । पञ्चरि पञ्चापमत्तापुञ्जकरशोबसामगगुणह्याणेषु असज्जदसम्मादिङ्गिह्याणे  
 च जहाकर्म चतुमयसमवो चि पचच्च, पञ्च-सत्तारसविह्वचपयसु तेषु चतवीससतकम्मिपयसु  
 तदुमयाभारतेवीससकम्मपुपपीए गाइयचाओ । एवमेवसु पचसु पडिग्गहङ्गत्थेषु तवीस  
 सकम्मह्याणियमो चि चाणावणहुं पचम्महणमेत्थ कय । एत्थव विसेसतरपदुप्यापचहु  
 'पचिणियसु' चि कयण । तेष पचिणियसु शेषं सेवीससंखंमो गाण्णत्थे चि शेषम्बं ।  
 तत्थ चि सण्णियपचिणियसु शेषं नामण्णीसु । कुत्त एत्त ? भ्याम्पानता विधेवमतिपचेः ।

एव पचमगाहाए अत्थो समचो ।

१२८८. 'चोइसय-दसय-सत्तय' एवेषु चतुसु पडिग्गहङ्गानेषु चावीससकम्म-  
 मियमो दहुम्बो चि गाहापुण्यद्वे संखमो । कयमदसि संमवो चि उत्ते उचदं—संखद  
 सज्जदसस दसपमोइकसवणमम्भुट्ठिय भित्सेसीकयभिय्जत्तकम्मसस सम्मामिच्छओण विणा

प्रकृतिक प्रतिमहस्त्वान्ते आश्रयसे तेषं प्रकृतिक संक्रमस्त्वान्ते होनेमें कोई बाधा नहीं आती है ।  
 म्वाए प्रकृतिक और तनीस प्रकृतिक प्रतिमहस्त्वान्तेमें प्रकृत्य संक्रमस्त्वान्तेकी योग्यता इसी प्रकार  
 करनी चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि प्रमत्तसंख्य अथमत्तसंख्य और अपूर्वकय्य अथशामक  
 इन तीन गुणस्त्वान्तेमें एक असंयतसम्प्रादृष्टि गुणस्त्वान्तेमें क्रमसे वे होनी सम्भव हैं ऐसा यहाँ  
 कथन करना चाहिये, क्योंकि जो नौ और सत्रह प्रकृतियोंका बन्ध कर रहे हैं और तिनके चौबीस  
 प्रकृतियोंकी सत्ता है उनके इन दोनों प्रतिमहस्त्वान्तेमें आश्रयसे तेषं प्रकृतिक संक्रमस्त्वान्तेकी कल्पि  
 मानना सर्वथा म्यावसंगत है । इस प्रकार इन पाँच प्रतिमहस्त्वान्तेमें तेषं प्रकृतिक संक्रमस्त्वान्तेका  
 नियम है यह ज्ञानके शिखे गात्थामें 'पंच' पञ्चक प्रकृत्य किया है । तथा यहाँ पर दूसरी विशेषताका  
 कथन करनेके शिखे पचिणियसु, बचन दिया है । इससे यह तेषं प्रकृतिक संक्रमस्त्वान्ते 'पचिणियसु'के  
 ही होता है अन्यके नहीं ऐसा बर्णन प्रकृत्य करना चाहिये । इसमें भी सही पचिणियसुके ही होता है  
 अर्थात्कि नहीं होता इतना विशेष ज्ञानता चाहिये ।

शंका—यह कैसे जान्य ?

समाधान—अप्यकमानसे विशेषकर ज्ञान होय है यह नियम है । चतुसुसार प्रकृत्यमें भी  
 यह तेषं प्रकृतिक संक्रमस्त्वान्ते संक्रियेके ही होय है अर्थात्कि नहीं होता यह विशेष ज्ञान  
 ज्ञान है ।

विशेषार्थ—इन पाँचवीं गात्थामें तेषं प्रकृतिक संक्रमस्त्वान्तेका ११, १२, १३, १४ और  
 ७ प्रकृतिक पाँच प्रतिमहस्त्वान्तेमें संक्रम होय है यह कथनाया गया है । इसमें भी यह संक्रमस्त्वान्ते  
 संक्रियेके ही होता है अन्यके नहीं होय इतना विशेष ज्ञानता चाहिये ।

इस प्रकार पाँचवीं गात्थाका अर्थ समाप्त हुआ ।

१२८९. अथ 'चोइसय-दसय-सत्तय' इस छठी गात्थाका अर्थ करते हैं—चोइस, दस  
 भाग और अठारह इन चार प्रतिमहस्त्वान्तेमें चोइस प्रकृतिक संक्रमका नियम ज्ञानता चाहिये यह  
 इस गात्थाके पूर्वाशेषका अर्थ है । इनका बर्णन कैसे सम्भव है ऐसा पूछनेपर करते हैं—चरान  
 मोहनीयकी कल्पनाके शिखे ज्ञान होकर त्रिमम मिप्यात्तका अर्थ कर दिया है इस संयतसंख्यके

चोदसपडिगहो होऊण वावीससंक्रमद्वानामुप्पज्झइ । एवं सेसाणं पि वत्तव्वं, पमत्तापमत्त-  
संजदाणियद्विगुणद्वानाणविरदसम्माइड्डीसु जहाकम्मं तदुप्पत्तीदो । कथमणियद्विद्वाने  
वावीससंक्रमसंभवो त्ति णासंकणिज्जं, आणुपुव्वीसंक्रमे चउवीससंतकम्मियस्स तद-  
विरोहादो । एत्थेव गइविसयणियमावहारणद्वमिदं वयणं 'णियमा मणुसगईए' कुदो  
एस णियमो ? सेसगईसु दंसणमोहक्खएवणाए आणुपुव्वीसंक्रमस्स वा अमंभवादो ।  
एत्थेव गुणद्वानाणयसामित्तविसेसावहारणद्वमिदमाह—'विरदे मिस्से अविरदे य ।'  
संजदासंजद-संजद-असंजदसम्माइद्विगुणद्वानेसु चेवेदाणि पडिगहद्वानाणि हाँति त्ति  
भणिदं होइ ॥६॥

§ २८९. 'तेरसय णवय सत्तय०'—एत्थ एगाधिगाए वीसाए संक्रमो तेरसादिसु  
छसु पडिगहद्वानेसु होइ त्ति मुत्तत्थसंवंधो । कथमेदेसिं संभवो ? वुच्चदे—खइयसम्माइद्वि-  
संजदामंजदम्मि पयदसंक्रमद्वानस्स तेरसपडिगहसंभवो पमत्तापमत्तापुव्वकरणेसु णव-

सम्यग्मिथ्यात्वके विना चौदह प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानके साथ वाईस प्रकृतिक सक्रमस्थान उत्पन्न  
होता है । इसी प्रकार शेष प्रतिग्रहस्थानोंके विषयमें भी वचन करना चाहिये, क्योंकि क्रमसे  
प्रमत्ताप्रमत्तासयतके दस प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानके रहते हुए, अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें सात  
प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानके रहते हुए और अविरतसम्यग्दृष्टिके अठारह प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानके रहते  
हुए वाईस प्रकृतिक संक्रमस्थानकी उत्पत्ति होती है ।

शंका—अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें वाईस प्रकृतिक सक्रम कैसे सम्भव है ?

समाधान—यह आशका करना ठीक नहीं है, क्योंकि आनुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ हो  
जानेपर चौबीस प्रकृतियोंकी सत्ताजाले जीवके वाईस प्रकृतिक संक्रमस्थानके होनेमें कोई विरोध नहीं  
आता है ।

यहींपर गतिविषयक नियमका निश्चय करनेके लिये 'णियमा मणुसगईए' पद दिया है ।

शंका—यह नियम किस कारणसे किया गया है ?

समाधान—क्योंकि मनुष्यगतिके सिवा शेष गतियोंमें दर्शनमोहकी क्षणा और आनुपूर्वी-  
संक्रम सम्भव नहीं है ।

यहींपर गुणस्थानसम्बन्धी स्वामित्वविशेषका निश्चय करनेके लिये 'विरदे मिस्से अविरदे  
य' पद कहा है । इसका यह आशय है कि ये प्रतिग्रहस्थान संयतासयत, सयत और असयत-  
सम्यग्दृष्टि इन गुणस्थानोंमें ही होते हैं ।

विशेषार्थ—इस छठी गाथामें वाईस प्रकृतिक संक्रमस्थानके कौन-कौन प्रतिग्रहस्थान होते हैं  
और वे किस गतिमें तथा किस किस गुणस्थानमें होते हैं यह बतलाया है । गुणस्थानोंका उल्लेख  
गाथामें 'विरदे मिस्से अविरदे य' इस रूपमें किया है । यहाँ मिश्रसे विरताविरत लिया है, क्योंकि  
चौदह प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान विरताविरतके ही पाया जाता है ।

§ २८९. अब 'तेरसय णवय सत्तय०' इस सातवीं गाथाका अर्थ कहते हैं—इक्कीस प्रकृतियों-  
का सक्रम तेरह आदि छह प्रतिग्रह स्थानोंमें होता है यह इस गाथा सूत्रका तात्पर्य है । इनका यहाँ  
कैसे सम्भव है ? बतलाते हैं—जायिकसम्यग्दृष्टि सयतासंयतके प्रकृत संक्रमस्थानका तेरहप्रकृतिक



पयद्विपदिमाहसंभवो । असमदयसम्माहृद्भिर्वाणे अणियद्वि करणपविद्वुखवगोवसामगेषु च  
 अहाकर्म सत्तारस-पचपदिग्गहृणाणसंभवो, इगिवीससत्कम्मिणसु तेषु सद्युप्पचित्तिसेसा  
 भावादो । संतकम्मिपमस्सिऊणाणियद्विहृणाणम्मि सत्तपयद्वि पदिग्गहृणाणसंभवो, आणुपुम्बी-  
 संकम अऊण णरुंसयवेदे उवसांमिडे सत्य सत्तपदिग्गहृणाणपदिग्गहृणाणोवसकमहृणाणुव  
 लमादो । सासणसम्माहृद्भिर्मि एक्कीसपदिग्गहृणाणसंभवो वचम्बो, अणताणुमिधि  
 विसंजोयपापरिणठउवसमसम्माहृद्भिर्मि सासणगुण पदिग्गहृणे तप्पदमावसियाए तदुव  
 ल्हादिो । सपदि एदमि पदिग्गहृणाणमाचारभूदगुणहृणाणविसेसावहारणहृमिदमाह—  
 'उप्पि सम्मत्ते' इदि । एदाणि उप्पि पदिग्गहृणाणणि सम्मत्तोवलक्खिए चैव गुणहृणो  
 होति णाण्णत्थ समवति ति उच्चं होदि ।' कथ पुण सामणसम्माहृद्भिस्त सम्माहृद्भि  
 ववणसो ? ण रंसणविपस्स उदयामाव पेक्खिएण तस्स सम्माहृद्भिचोवपारादो ॥७॥

प्रतिप्रस्थान सम्भव है । प्रमत्तसंयत अथप्रमत्तसंयत और अपूर्वकरारमें प्रकृतसंकमस्त्वानका मो  
 प्रकृतिक प्रतिप्रस्थान सम्भव है । असंयतसम्पत्ति गुणस्त्वानमें तथा अनिद्वितिकरारमें प्रसिद्ध  
 रूप अथक और अरारामकके क्रमसे सत्रह प्रकृतिक और पौत्र प्रकृतिक प्रतिप्रस्थान सम्भव है ।  
 अर्वात् असंयत सम्पत्तिके सत्रह प्रकृतिक तथा अनिद्वितिकरारगुणस्त्वानवर्ती अथक और  
 अरारामकके पौत्र प्रकृतिक प्रतिप्रस्थान है, क्योंकि इक्कीस प्रकृतिकेकी सत्तावासे एक जीवके एक  
 प्रतिप्रस्थानकेकी अल्पति होनेमें कोई बाधा नहीं आती है । तथा चौबीस प्रकृतिक संकमकेकी अपेक्षा  
 अनिद्वितिकरार गुणस्त्वानमें सात प्रकृतिक प्रतिप्रस्थान सम्भव है, क्योंकि आनुपूर्वी संकमके  
 करके संपुंसकवर्का अराराम कर लेनेपर वहाँ सातप्रकृतिक प्रतिप्रस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला  
 इक्कीस प्रकृतिक संकमस्त्वान अत्यन्त होता है । इमीप्रकार इक्कीस प्रकृतिक प्रतिप्रस्थानका सम्भव  
 सासाधनसम्पत्तिके रहना चाहिये क्योंकि जिस अरारामसम्पत्तिके अतन्नातुक्कीपत्तुक्की  
 विसंबोजन्य की है वचने सासाधन गुणस्त्वानके प्राप्त इतन्पर उत्तरी प्रथम आचरितके भीतर एक  
 प्रतिप्रस्थान व संकमस्त्वान पावा जाता है । अब इन प्रतिप्रस्थानके आचारमूव गुणस्त्वान  
 विशेषोदा अथभारक करके हिये 'उप्पि सम्मत्त पर कहा है । ये वच प्रतिप्रस्थान सम्पत्त्वसद्वि  
 गुणस्त्वानमें सम्भव हैं अन्वत्र सम्भव महीं है यह इस कन्तथ तात्पर्य है ।

शंका—यहाँ सासाधनसम्पत्तिके सम्पत्तिके यह संका कैसे की है ? —

समाधान—नहीं, क्योंकि सासाधन गुणस्त्वानमें दरैनमोहनीयकी तीन प्रकृतिको  
 वदप नहीं होता यह देरन्दर अथभारसे वसे सम्पत्तिके संका की है ।

विशेषार्थ—प्रकृतिसंकमस्त्वानकी इस सातवीं गावामें इक्कीस प्रकृतिक संकमस्त्वानके  
 कितने प्रतिप्रस्थान और तीन तीन स्वामी हैं यह बतलाया है । स्वाभीक्य निर्देश करते हुए  
 गावामें केवल 'सम्मत्ते पर दिया है । जिसका अर्थ होता है कि इक्कीस प्रकृतिक संकमस्त्वानके  
 व वदो प्रतिप्रस्थान सम्पत्तिके होते हैं । तथापि इनमेंसे इक्कीस प्रकृतिक प्रतिप्रस्थानके रहते  
 हुए इक्कीस प्रकृतिक संकमस्त्वान सासाधन सम्पत्तिके भी होता है, इसलिये यह मस्त हुआ कि  
 सासाधन सम्पत्तिके सम्पत्तिके कैसे कहा जय ? टीकामें इसका यह समाधान दिया गया है कि  
 सासाधनमें तीन दरैनमोहनीयक वदप महीं होता है और इस अपेक्षासे वसे अथभारसे सम्पत्तिके  
 कहा जा सकता है । इस प्रकार वचनि इक्कीस प्रकृतिक संकमस्त्वानके रहते हुए इक्कीस प्रकृतिक  
 प्रतिप्रस्थान सम्पत्तिके बन आता है तथापि इन वच प्रतिप्रस्थानमें एक सत्रह प्रकृतिक

६ २९०. 'एत्तो अवसेमा' पयडिद्वानसंक्रमा वीसादयो पयडिद्वानपडिग्गहा च छक्क-पणगादयो मंजमन्दि मंजमोदलस्त्रिएसु चैव गुणद्वानेषु होति गाण्णत्थ, तेमिं तत्थेव णियमदमणादो । तत्थ वि खवगोवमसेठीसु चैव होति ति जाणावणद्धं 'उवसामामगे च खवगे च' इदि भणिदं । एवं मामण्णेण परूविय संपहि एदस्सेव विसेगिऊण परूवणद्धमिदमाह 'वीसा य संक्रमदुगे' । वीसाए संक्रमो दोसु चैव पडिग्गहद्वानेषु होइ । काणि ताणि दोपडिग्गहद्वानाणि ति आसंकाए 'छक्के पणगे च वोद्ववा' ति भणिद । तं कथं ? चउवीसमंतकम्मिएणुवसममेदि चडिय णवुंसय-इत्थिवेदोवममं काऊण पुग्गिवेदपडिग्गहवोच्छेदे कदे मम्मत्त-मम्मामिच्छत्त-चउसंजलण-गुण्णिदच्छप्पयडिपडिग्गहपडिक्कदो वीमपयडिसंक्रमो होइ । पुणो इगिवीसमंतकम्मिएणु-वमसेदि चडिय आणुपुव्वीमकमे कदे वीमपयडिसंक्रमो पचपयडिपडिग्गहपडिक्कदो ममुप्पज्जइ । तम्हा छक्के पणगे च वीसाए सकमो ति सिद्धं ॥८॥

प्रतिग्रहस्थान भी सम्मिजित है । यह प्रतिग्रहस्थान सम्प्रगृष्टि और सम्यग्गिग्याहृष्टि इन दोनोंके सम्भव हैं और उन दोनोंके इममे इस्कीस प्रकृतियोंका सक्रम भी सम्भव है । यद्यपि स्थिति ऐसी है तथापि गायामे या उसकी टीकामे सम्यग्गिग्याहृष्टिके इस सक्रम व प्रतिग्रहस्थानका निर्देश नहीं किया गया है । उसका निर्देश क्यों नहीं किया गया है इसके दो कारण हो सकते हैं । प्रथम तो यह कि सम्प्रत्येके ग्रहण करनेसे उसके प्रतिपक्षी भागका भी ग्रहण हो जाता है, इमलिये यद्यपि पृथक्से निर्देश नहीं किया है तथापि उसका ग्रहण हो जाता है और दूसरा यह कि गाँण समभकर उसे छोड़ दिया है । तथापि गायामे आया हुआ 'सम्मत्ते' पद देशामर्पक होनेसे उसका ग्रहण हो जाता है ।

§ २९० 'प्रव 'एत्तो अवसेसा' इस आठवीं गायिका अर्थे लिखते हैं—ये पूर्वमे जितने भी सक्रमस्थान और प्रतिग्रहस्थान कह आये हैं उनके सिवा वीम आदिक जितने सक्रमस्थान हैं और छह, पाँच आदिक जितने प्रतिग्रहस्थान हैं वे मत्र संयमसे युक्त गुणस्थानोंमे ही होते हैं । अन्यत्र नहीं होते हैं, क्योंकि उनके वहाँ होनेका नियम देखा जाता है— उसमे भी ये- क्षपकश्रेणि और उपशमश्रेणिये ही होते हैं, उसलिये इम बातके जतानेके लिये गायामे 'उवसामगे च खवगे च' पाठ कहा है । इम प्रकार सामान्यरूपसे कथन करके अब इसी बातका विशेषरूपसे कथन करनेके लिये गायामे 'वीसा य संक्रमदुगे' पाठ कहा है । इसका यह आशय है कि वीस प्रकृतिक संक्रम दो प्रतिग्रहस्थानोंमें होता है । वे दो प्रतिग्रहस्थान कौनसे हैं ऐसी आशका होने पर 'छक्के पणगे च वोद्ववा' यह पद कहा है । खुलासा इस प्रकार है—जो चौथीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव उपशमश्रेणि पर चढ़कर नपु सक्रमद और स्त्रीवेदका उपशम करके पुरुषवेदकी प्रतिग्रहव्युच्छित्ति कर देता है उसके सम्यक्त्व, सम्यग्गिग्याहृत्व और चार सम्बलन इन छह प्रकृतियोंके प्रतिग्रहरूप स्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला वीस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है । तथा इस्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जो जीव उपशमश्रेणि पर चढ़कर आनुपूर्वी सक्रमका प्रारम्भ कर देता है उसके पाँच प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला वीस प्रकृतिक सक्रमस्थान उत्पन्न होता है । अतएव छह और पाँच प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमें वीस प्रकृतियोंका सक्रम होता है यह बात सिद्ध हुई ॥८॥

१ २९१ 'पंचसु च ऊनवीसा०' एसा भवमी गाथा १९, १८, १४, १३  
 चउणहमेदेसिं सक्रमहाणाण पडिग्गाह्वाणपण्णसुमागया । उत्य ताव 'पंचसु च  
 ऊनवीसा' चि मजिदे पंचसु पयडीसु पडिग्गाहमावमावण्णसु एऊणवीसाए सक्रमो  
 होए चि पण्णव । काओ ताओ पंच पयडीओ ? पुरितवेद-वउसवउणसण्णिदाओ,  
 इगिवीसस्तकम्मियाणियड्ढिउवसामगस्स लोमासंक्रमानतरउवसामिइणुसपवेदस्स तप्यडि

विशेषार्थ—प्रकृतिसंक्रमस्वानधी इस आठवीं गाथामें जो बातें बतलाई हैं । प्रथम बात तो यह बतलाई है कि जब तक जितने संक्रमस्वान और प्रतिप्रस्वान बड़े गये हैं उनके सिवा आगे जितने भी संक्रमस्वान और प्रतिप्रस्वान बड़े जावगे वे सब उपरामभेदि और अप्रकभेदियें ही होते हैं । तथा दूसरी यह बात बतलाई गई है कि १ प्रकृतिक संक्रमस्वानका बड़ा और पांच प्रकृतिक प्रतिप्रस्वानमें संक्रम होता है अन्यत्र नहीं । किन्तु श्वेतान्तर परम्परामें प्रसिद्ध कर्मप्रकृतियें इस बीस प्रकृतिक संक्रमस्वानके प्रतिप्रस्वान हो न बतलाकर ७, ९ और १ प्रकृतिक तीन बतलाये हैं । इस मतमेवका कारण क्या है यह इस पर विचार कर लेना आवश्यक है । यह तो दोनों परम्परामें समानरूपसे स्वीकार किया है कि उपरामभेदियें अन्तरकारण किया कर लेनेके बाद दूसरे समयसे आनुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ होता है । किन्तु आनुपूर्वी संक्रमके क्रमके विषयमें दोनों परम्परामें बोझा मतभेद मिलता है । पतिवृषम आचार्य न अपनी श्रुतियें बतलाया है कि अन्तर करनेके बाद प्रथम समयसे लेकर बड़ा नोकपयोका कोषमें संक्रम होता है अन्य किसीमें संक्रम नहीं होता है । किन्तु श्वेतान्तर परम्परामें प्रसिद्ध कर्मप्रकृतिके उपरामवाकरवकी गाथा ४० की श्रुतियें लिखा है कि 'पुस्यवेद' की प्रथम स्थितिमें जो आवाजि रोव रहने पर आगात्मक विच्छेद हो जाता है किन्तु अन्तरवर्ती आवाजिमेंसे ऊपरवा होती रहती है । तथा वही समयसे लेकर बड़ा नोकपयोके इत्यका पुस्यवेदमें संक्रम नहीं होता है । इस मतमेवसे यह स्पष्ट हो जाता है कि कयाव्याप्तके अनुसार तो नपु सफ्येद और वीवेदका कारण हो जानेके बाद पुस्यवेदकी प्रतिप्रस्वुच्छिति हो जाती है किन्तु कर्मप्रकृतिके अनुसार नपु सफ्येद और लीतवका कारण हो जानेके बाद भी पुस्यवेदमें प्रतिप्रस्वुच्छिति बनी रहती है । यही कारण है कि कयाव्याप्तमें बीस प्रकृतिक संक्रमस्वानके १ प्रकृतिक और ५ प्रकृतिक वे दो प्रतिप्रस्वान बतलाये हैं और कर्मप्रकृतियें बीस प्रकृतिक संक्रमस्वानके ७, ९ और १ प्रकृतिक तीन संक्रमस्वान बतलाये हैं ।

१ २९१ 'पंचसु च ऊनवीसा' यह तीसरी गाथा १९, १८, १४ और १३ इन चार संक्रमस्वानके प्रतिप्रस्वानका कवन करनेके लिये आर्य है । यहाँ गाथामें जो 'पंचसु च ऊनवीसा' यह कहा है सो इससे प्रतिप्रस्वन पांच प्रकृतियें बनीस प्रकृतिक संक्रम होता है यह अर्थ लेना चाहिए । वे पांच प्रकृतियां कौन सी हैं ? पुस्यवेद और चार संवक्रन व पांच प्रकृतिवां हैं जो प्रकृतमें प्रतिप्रस्वन हैं क्योंकि इनकीस प्रकृतिबोधी सत्तावात् अविद्वितिकरण उपरामक जीवके दोम संवक्रनका संक्रम न होनेके बाद नपु सफ्येदका कारण हो जानपर पांच प्रकृतिक प्रतिप्रस्वानसे सम्बन्ध रखने वाजा कनीस प्रकृतिक संक्रमस्वान देखा जाता है । 'अन्तरस चहुसु' यह

१ अंतरो बुध्मपण्णरो पये व्वयाण्णए कये उहुदरि व अवरदि वदि वि । कयाव उपया सु १०१

२ पुरितवेवल फमडितिते बुवावविक्खेताए आयाओ वेड्ढिनो । अरुंतावदियतो उरीरवा पधि, तादे व्वरुं नक्कवावण्णं उंओओ वति पुरितवेदे, उंक्कवेसु उंहुमण्णि । कर्मय उरया ग्य ४० सु

वद्वेऊणवीससंक्रमद्वारोवलंभादो । 'अट्टारस चदुसु०' एसो मुत्तस्स विट्ठियावयवो अट्टारसपयडिसंक्रमस्स चदुसु पडिग्गहपयडीसु मंभवावहारणफलो, तेणेविट्ठिवेदोवसमं करिय पुरिसवेदपडिग्गहवोच्छेदे कटे चउमंजलणपयडिपडिच्चद्वे पयदमकमद्वारो-वलंभादो । 'चोदस छसु०' एदेण वि मुत्तस्स तडजावयणेण चोदसमकमद्वारोणस्स छसु पयडीसु पडिच्चद्वत्तं परूविदं, चउवीसमंतकम्मियाणियट्ठिउवयामयस्स पुरिमवेदणवक-वंघोवसामणावत्थाए चउमंजलण-दोदंमणमोहसण्णिणदछप्पयडिपडिग्गहेण पुरिसवेदे-वारमकसाय-दोदंसणमोहपयडिपडिच्चद्वचोदममकमद्वारोणवलंभादो । 'तेरसयं छक-पणगम्हि' एदेण वि चउत्थावयवेण तेरमसंक्रमद्वारोणस्स छक-पणएसु णिवघणत्तं परूविदं । तत्थ ताव मणंतपररूविदचोदममकामएण पुरिसवेदोवममे कटे तेरसपयडि-संक्रमो छप्पयडिपडिग्गहमवंघिओ समुप्पज्जइ, पुत्तुत्तपडिग्गहपयडीणं छण्हं पि तत्थ तहावद्वारोणदसणादो । एदस्स चेव कोहमंजलणपडमट्ठिदीए तिसु आवलियासु ममयूणासु सेसासु तेरससंक्रमद्वारोणं पंचपयडिपडिग्गहियमुपज्जइ । अथवा अणियट्ठिखवगेण अट्टकसाएसु खविदेसु पंचपडिग्गहद्वारोणमंघिय तेरसमकमद्वारोणमुवलंभइ ॥९॥

गायिका दूसरा पद अठारह प्रकृतिक संक्रमस्थानका चार प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानमे सक्रम होता हे यह अग्रधारण करानेके लिए दिया है, क्योंकि वही पूर्वोक्त जीव जब स्त्रीवेदका उपशम करके पुरुषवेदकी प्रतिग्रहव्युच्छित्ति कर देता है तब उसके चार संबलनरूप प्रतिग्रहस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला प्रकृत संक्रमस्थान उपलब्ध होता है । गायिके 'चोदस छसु०' इस तीसरे चरण द्वारा भी चौदह प्रकृतिक सक्रमस्थान छह प्रतिग्रह प्रकृतियोंसे प्रतिग्रह हैं यह बतलाया है, क्योंकि चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले अनिवृत्तिकरण उपशामकके पुरुषवेदके नयकवन्धकी उपशामना करते समय चार संबलन और दो दर्शनमोहनीय इन छह प्रकृतियोंके प्रतिग्रहरूपसे पुरुषवेद, ग्यारह कपाय और दो दर्शनमोहनीय प्रकृतियोंसे सम्बन्ध रखनेवाला चौदह प्रकृतिक सक्रमस्थान उपलब्ध होता है । गायिके 'तेरसयं छक-पणगम्हि' इस चौथे चरण द्वारा भी तेरह प्रकृतिक संक्रमस्थान छह और पाँच प्रतिग्रह प्रकृतियोंमें प्रतिग्रह है यह बतलाया है । यहाँपर समनन्तर पूर्व कहे गये चौदह प्रकृतियोंके सक्रमक जीवके द्वारा पुरुषवेदका उपशम कर लेने पर छह प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला तेरह प्रकृतिक सक्रमस्थान उत्पन्न होता है, क्योंकि पूर्वोक्त छह प्रतिग्रह प्रकृतियाँ इस तेरह प्रकृतिक संक्रमस्थानके समय पूर्ववत् अवस्थित देखी जाती हैं । तथा इसी जीवके जब क्रोध सबलनकी प्रथम स्थितिमे एक समय कम तीन आवली काल शेष रह जाता है तब पाच प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला तेरह प्रकृतिक संक्रमस्थान उत्पन्न होता है । अथवा अनिवृत्तिकरण गुणस्थानरती क्षणके द्वारा आठ कपायोंका क्षय कर देने पर पाच प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला तेरह प्रकृतिक सक्रमस्थान प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

**विशेषार्थ—**इस गायामें १९, १८, १४ और १३ इन चार संक्रमस्थानोंका किस किस प्रतिग्रहस्थानमें संक्रम होता है यह बतलाया है । विशेष खुलासा टीकामें किया ही है । किन्तु

§ २०२ 'पंच चउक्रे वारस०' एमा दसमगाहा १२, ११; १०, ० चउणह मेदेसि सकमहाणार्णं पदिग्गाहङ्गाणपस्वजुमागया । तस्य पन्मावपणेण वारससकमहाणसस पंच-चउक्रेसणिणदपदिग्गाहङ्गाणेसु संमवावहारण कीरदे, इगिवीससतकम्मियखवगोव सामगेसु जहाकम लोमामकम-उण्णोकासायोवसामणपरिणदेसु तहाविहममबोवलमादो । 'एकारस पचग०' एदेण च विदिपावयणेण पच-तिग-चउक्रेसणिणदेसु तिसु पदिग्गाहङ्गाणेसु एकारसपयदिसकमसस विसयावहारण कीरदे । त कच ! खवगसस णनुसयवेदे लीणे पंचपदिग्गाहङ्गाणाहारमेकारससकमहाणमुपपञ्जइ । अहवा चउवीसदिक्कम्मसिपण दुविहकोहोवसम क्खरुण क्खोहसंवलणपदिग्गाहबोच्छइ कइ तमेव सकमहाण तणेव पदिग्गाहङ्गाणण पदिग्गाहदिसुवजायदे, तस्य माण-माया-सोहसवलण-सम्मप-सम्मामिच्छचाम क्खोहसवलण-तिविहमाण-तिविहमाय-दुविहलोम-मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-समूहारदपयदसकमहाणस्ताहारमाबोवलमादो । पुणो इगिवीससतकम्मिजोवसामगण

वहाँ एक चउक्रे निर्देश कर देना आवश्यक प्रतीत होता है । वात यह है कि यहाँ अथवा प्रकृतिक संकमस्त्वान्ण चार प्रकृतिक एक प्रतिपदस्त्वान कथयया है किन्तु कर्मप्रकृतिमें १८ प्रकृतिक संकमस्त्वान्ण ५ और ४ य दो प्रतिपद स्त्वान कथयय है । ११ प्रकृतिचोकी सत्तावाले जीवके अनुपूर्वी संकमका प्रारम्भ हो देनेके बाद ननु संकमच चार स्त्रीभेदका प्रारम्भ हो जानेपर यह अथवा प्रकृतिक संकमस्त्वान होता है । तब कथाप्रामुख्यके अनुसार पुरुषवद प्रतिपद प्रकृति नहीं रहती अतः चार प्रकृतिक प्रतिपदस्त्वान ही प्राप्त होता है किन्तु कर्मप्रकृतिके अनुसार वसमें जब तक वह नोकाप्रबोध संकम होय रहय है तब तक पांच प्रकृतिक और वसके बाद चार प्रकृतिक प्रतिपदस्त्वान प्राप्त होता है । इस प्रकार मत्वभेदका यह कारण जानना चाहिये ।

§ २०२ 'पंच-चउक्रे वारस' यह दूसरी गाथा १२, ११, १ और १ इन चार संकम स्वान्तोके प्रतिपदस्त्वानोअ कथन करनेके लिये आई है । वहाँ गाथाके प्रथम चरणद्वारा वहाँ प्रकृतिक संकमस्त्वानके पांच प्रकृतिक और चार प्रकृतिक च दो प्रतिपदस्त्वान सम्भव है वह अर्थधारण किन्ना गाथा है क्योंकि जो चउक्रे अनुपूर्वी संकमका प्रारम्भ हो जानेके कारण लोमसंयमनका संकम नहीं कर रहा है वसके बाद प्रकृतिक संकमस्त्वानका पांच प्रकृतिक प्रतिपदस्त्वान कथयय होता है और इन्कीस प्रकृतिचोकी सत्तावाला जो अन्तरमक वह नोकाप्रबोध अन्तरमन कर रहा है वसके बाद प्रकृतिक संकमस्त्वानका चार प्रकृतिक प्रतिपदस्त्वान कथयय होता है । गाथाके एक-अरस पंचगे इस दूसरे चरण यह मिश्रण किया गया है कि वहाँ प्रकृतिक संकम-स्त्वानका पांच चार और तीन प्रकृतिक प्रतिपदस्त्वानोंमें संकम होता है, क्योंकि चउक्रे जीवके नृपसकमवद कच कर देने पर वहाँ प्रकृतिक संकमस्त्वानका आधारभूत पांच प्रकृतिक प्रतिपद स्त्वान कथयय होता है । अथवा चौकीस प्रकृतिचोकी सत्तावाला जो अन्तरमक जीव जो अन्तरके कोपका अन्तरम करके कोप संयमनकी प्रतिपद व्युत्पत्ति कर देय है वसके वही पूर्वोक्त प्रति-पदस्त्वानसे सम्भव रहनेका वही पूर्वोक्त संकमस्याम कथयय होता है, क्योंकि वहाँ पर कोव-संयमन, तीन अन्त तीन अन्त दो नाम मिच्छत्त और सम्भिमिच्छत्त, इनके समूह रूप प्रकृत संकमस्त्वानका आधारभूत मान संयमन अथवा संयमन, लोम संयमन सम्भवत्त और सम्भिमिच्छत्त इन पांच प्रकृतिचर प्रतिपदस्त्वान करइयय होता है । तथा इन्कीस प्रकृतिचोकी

णवणोऽग्रायोवगमे कटे तिविहकोह—माण—माया--दुविहलोहपयडिममुदायणिप्पण-  
मेफाग्गपयडिमंकमद्वणं चदुसंजलणपडिग्गहविमयं होऊण ममुप्पज्जइ । एदस्म चेव  
कोहमंजलणपडमद्विटीए तिण्हमावलियाणं समयूणाणमवसेसे दुविहं कोहं तथासंक्रामेऊण  
माणमंजलणयस्सवेण संक्रामेमाणस्स तव्वाले तिण्हं मंजलणपयडीणं पटिग्गहभावेण  
एकारसंक्रमद्वणमुप्पज्जइ । 'दसग चउक्क-पणगे'—दसपयडिसंकमो चउक्क-पणयपडिग्गह-  
द्वणविसण पटिणियदो त्ति दद्वुच्चो । तत्थ ताव चउवीसरंतकम्मिएण तिविहकोहोवसमे  
कटे तिविहमाण-माया-दुविहलोह-मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्तसण्णिददसपयडिसंकमो माण-  
माया-लोहमंजलण-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तपंचपयडिपडिग्गहद्वणाहिद्वणाणो ममुप्पज्जइ ।  
एदस्म चेव माणसंजलणपडमद्विटीए मयूणावलियत्तियमेत्तावसेसे दुविहं माणमेत्था-  
मंक्रामेऊण मायागजलणे मज्जुहमाणयस्स माया-लोहसंजलण-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-  
चउपयडिपडिग्गहावेमसो दसपयडिमंकमो होइ । अहवा खवगेण इत्थिवेदे खविदे  
दसपयडिसंकमद्वणं चउमंजलणपयडिपडिग्गहपडिवद्वमुप्पज्जइ । 'णवगं च तिगग्गि  
वोद्वच्चा' एटेण चउत्थावयवेण णवमक्रमद्वणस्स तिण्हं पयडीणं पडिग्गहभावो  
परुविदो । तं जहा—इगिवीमसंतकम्मिएण दुविहकोहोवसमे कटे कोहमंजलण-

मत्तावाला जो उपशामक जीव नौ नोकपायोका उपशम कर देता है उसके प्रतिग्रहरूप चार  
संज्वलनोंका विषयभूत तीन प्रकारका क्रोध, तीन प्रकारका मान, तीन प्रकारकी माया और दो  
प्रकारका लोभ इन प्रकृतियोंका समुदायरूप ग्यारह प्रकृतिक संक्रमस्थान उत्पन्न होता है । यही  
जीव जब क्रोध संज्वलनकी प्रथम स्थितिमें एक समय कम तीन अवलि शेष रहने पर इसमें दो  
प्रकारके क्रोधका सक्रम न करके बेल मान संज्वलनका सक्रम करता है तब तीन  
संज्वलन प्रकृतियोंके प्रतिग्रहरूपसे ग्यारह प्रकृतिक संक्रमस्थान उत्पन्न होता है । 'दसगं  
चउक्क-पणगे' यह गाथाका तीसरा चरण है । इसमें चार प्रकृतिक और पाँचप्रकृतिक  
प्रतिग्रहस्थानके विषयरूपसे दस प्रकृतिक संक्रमस्थान प्रतिनियत है यह बतलाया गया है ।  
खुलासा इस प्रकार है—जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव तीन प्रकारके  
क्रोधका उपशम कर देता है उसके तीन प्रकारका मान, तीन प्रकारकी माया, दो प्रकार  
का लोभ, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन दस प्रकृतियोंका सक्रम मान, माया और  
लोभ संज्वलन तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन पांच प्रतिग्रहरूप प्रकृतियोंके आधारसे उत्पन्न  
होता है । तथा जब यही जीव मान संज्वलनकी प्रथम स्थितिमें एक समयकम तीन अवलि कालके  
शेष रह जानेपर इसमें दो प्रकारके मानके संक्रमका अभाव करके माया संज्वलनमें संक्रम करता है  
तब मायासंज्वलन, लोभसंज्वलन, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन चार प्रतिग्रहरूप प्रकृतियोंकी  
अपेक्षा रखनेवाला दस प्रकृतिक संक्रमस्थान उत्पन्न होता है । अथवा जब क्षपक जीव स्त्रीवेदका  
क्षय कर देता है तब प्रतिग्रहरूप चार संज्वलन प्रकृतियोंसे सम्बन्ध रखनेवाला दस प्रकृतिक  
संक्रमस्थान उत्पन्न होता है । गाथाके 'एणग च तिगग्गि वोद्वच्चा' इस चौथे चरण द्वारा नौ प्रकृतिक  
संक्रमस्थानका तीन प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थान होता है यह बतलाया है । यथा—इक्कीस प्रकृतियोंकी  
सत्तावाले जिम जीवने दो प्रकारके क्रोधका उपशम कर दिया है उसके क्रोध संज्वलन, तीन प्रकारका

तिविहमाण-माया-दुविहलोहपयडिसकमो तिसु संजलणपयडीसु लम्भदे, ताहे कोह संजलणपयकयचसस सकर्म मोचूण पडिग्गहिचामाबादो ॥१०॥

१ २०३ 'अहु दुग तिग चदुक्के' एसा एकसरसमी गाथा ८, ७, ६ ७ एदेसि चउण्ह सकमहुआपाण पडिग्गहभियमपकूवणहुमागया । तत्थ पडमावयवो अहुपयडि संकमस्स दुग-तिग-चदुक्केसु पडिग्गहहुआणेसु पडिबद्धपरुवणहुमागयो । इगिबीस चउवीसमतकम्मियोवसामगेसु अहाकर्म तिबिहकोह-दुविह-माणोवसमेण परिणहेसु तिग कउकपडिग्गहहुआपयडिबद्धपडमसमयअहुपयडिसंकमहुआणसुबलम्भदे, इगिबीससतकम्मियस्स माणसजलणपडमडिदीए समपूणावस्सियतियमेचावसेसाए दुविहमाणे' तत्थासकम्मिय सजलणमायाए संसुहमाणस्स माणसंजलणपडिग्गहसपिविरहेणे' माया-सोमसंजलणाण दोणहमेव पडिग्गहभावेण अहुपयडिसंकमो लम्भइ । 'सच चदु'—सचपयडिसंकमो चदुक्के तिग च पडिणियदो बोइय्वो । चउवीससंतकम्मियस्स तिबिहमाणोवसमान्तरे चउण्ह पडिग्गहभावेण सचपयडिसंकमो लम्भदे । एदस्स वेव समपूणावस्सियतियमेच-मायासंजलणपडमडिदिबारयस्स मायासजलणपडिग्गहस्स विरामेण तिण्ह पडिग्गहच-

मात्र तीन प्रकारकी माया और दो प्रकारकी लोभ इन दो प्रकृतियोंकी तीन संस्कृतन प्रकृतियोंमें संकम उत्पन्न होता है क्योंकि तब लोभसंस्कृतनके नष्टकर्मका संकम तो हाथ है पर वसमें प्रतिप्रदानके अभाव रहता है ॥१॥

विशेषार्थ—इस वसनी गाथा छाप ११ ११ १ और ११ इन चार संकमस्थानोंके प्रतिप्रदान कठिन है । विशेष सुभासा टीकमें ही किया है ।

१ २१३ अहु दुग तिग चदुक्के यह ग्याखनी गाथा ८, ७ ६ और १ इन चार संकम स्थानोंके प्रतिप्रदानके कर्म करने किये जाई है । वसमें ही गाथाका प्रथम अरण्य आठ प्रकृतिक संकमस्थानका दो, तीन और चार प्रकृतिक प्रतिप्रदानोंसे सम्भव है यह कठिनमेके किये जाया है । इकीस प्रकृतियोंकी या चौबीस प्रकृतियोंकी सच्य रखनेवासे त्रिन वसरामक बीजेने तीन प्रकारके लोभ और दो प्रकारके मानका वसराम कर लिया है इनके प्रथम समयमें कर्मसे तीन प्रकृतिक और चार प्रकृतिक प्रतिप्रदानोंसे सम्भव रखनेवाका आठ प्रकृतिक संकमस्थान प्राप्त होता है क्योंकि जो इकीस प्रकृतियोंकी सच्यवाका बीच मान संस्कृतनकी प्रथम स्थितिमें एक समय कर्म तीन आशक्ति काइके छेप रह जाने पर दो प्रकारके मानका वसमें संकम न करके संस्कृतन मायामें संकम करता है इसके मान संस्कृतनमें प्रतिप्रदान शक्ति न रहनेके कारण मायासंस्कृतन और लोभसंस्कृतन इन दो प्रकृतियोंके प्रतिप्रदानसे आठ प्रकृतिक संकमस्थान उत्पन्न होय है । 'सच चदु' इत्यदि गन्धका वृत्त अरण्य है । इस छाप चार प्रकृतिक और तीन प्रकृतिक इन दो प्रतिप्रदानोंमें सच्य प्रकृतियोंका संकम प्रतिनिवृत अज्ञाना चाक्षिप । वया—चौबीस प्रकृतियोंकी सच्यवाका बीचके तीन प्रकारके मानका वसराम होनेके बाद चार प्रकृतियोंके प्रतिप्रदानसे सच्य प्रकृतिक संकमस्थान प्राप्त होता है । तथा इसी बीचके मायासंस्कृतनकी एक समय कर्म तीन आशक्तिप्रमाण प्रथम स्थिति छेप रहने पर माया संस्कृतनमें प्रतिप्रदान शक्ति न रहनेसे तीन प्रकृतिक

संभवो दद्व्यो । 'छस्कं दुगग्धि णियमा'—छण्हं संक्रमो णियमा दुगग्धि पडिवट्ठो धोद्व्यो, एक्कावीसदिकम्मगियम्म दुविहमाणोवसमस्सिगूण तदुवलद्वीदो । 'पंच तिगे एक्का दुगे वा'—पंचसंक्रमो तिगे दुगे एक्को वा होइ त्ति सुत्तथसंचंधो । तत्थ ताव चउवीससंतकम्मिगणं दुविहमायोवयमे कदे मायासंजलण-दुविहलोह-मिच्छत्त-सम्मा-मिच्छत्तपंचपयडिसंक्रमो लोहसंजलण-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ततिविहपडिग्गहहवेक्खो ममु-प्पज्जडि । पुणो इगिवीससंतकम्मियोवसामणेण तिविहमाणोवसमे कदे तिविहमाय-दुविहलोहमण्णिणटपंचपयडिसंक्रमो माया - लोहसंजलणदुविहपडिग्गहट्टाणावलंबणो ममुप्पज्जड । एदस्म चेव मायासंजलणपटमट्टिदीए ममयूणावलियतियमेत्तावसेसे दुविहं मायमसकामियं लोहसंजलणम्मि मनुहमाणम्म एगपयडिपडिग्गहपडिवट्ठो पंचपयडिट्टाण-संक्रमो होइ ॥११॥

६ २०४. 'चत्तारि तिग-चदुक्के०' एसा वारसमी गाहा ४, ३, २, १ चदुण्ह-मेदेसि संक्रमट्टाणाणं पडिग्गहणियमपरूवणट्टमागया । एदस्से पटमावयवो चदुपयडि-संक्रमस्स तिग-चदुक्केसु पडिवट्ठत्तं परूवेदि, रत्तगस्स छण्णोकसायपरिक्खए चदुण्हं

प्रतिग्रहस्थानका सद्भाव जानना चाहिये । 'छस्कं दुगग्धि णियमा' यह गाथाका तीसरा चरण है । इस द्वारा छह प्रकृतियोंका संक्रम नियमसे दो प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला जानना चाहिए, क्योंकि इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके दो प्रकारके मानके उपशमका आश्रय लेकर उक्त मक्रम व प्रतिग्रहस्थानकी उपलब्धि होती है । 'पंच तिगे एक्का दुगे वा' यह गाथाका चौथा चरण है । तीन, दो और एक प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानोंमें पांच प्रकृतियोंका मक्रम होता है यह इस सूत्रवचनका तात्पर्य है । उसमें सर्वप्रथम जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव दो प्रकारकी मायाका उपशम कर लेता है उसके लोभ सञ्चलन, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इस तीन प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला मायासञ्चलन, दो प्रकारका लोभ, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व यह पांच प्रकृतिक मक्रमस्थान उत्पन्न होता है । तथा इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जो उपशमक जीव तीन प्रकारके मानका उपशम कर देता है उसके माया सञ्चलन और लोभ संञ्चलन इस दो प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला तीन प्रकारकी माया और दो प्रकारका लोभ यह पाँच प्रकृतिक संक्रमस्थान उत्पन्न होता है । तथा यही जीव जब माया संञ्चलनकी प्रथम स्थितिमें एक समय कम तीन आवलि काल शेष रहने पर दो प्रकारकी मायाका माया संञ्चलनमें सक्रम न करके लोभ सञ्चलनमें संक्रम करने लगता है तब एक प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला पाँच प्रकृतिक सक्रमस्थान उत्पन्न होता है ॥ ११ ॥

**विशेषार्थ—**इस गाथामें आठ प्रकृतिक, सात प्रकृतिक, छह प्रकृतिक और पाँच प्रकृतिक इन चार सक्रमस्थानोंके कोन कोन प्रतिग्रहस्थान हैं यह बतलाया है । विशेष खुलासा टीकामें किया ही है ।

६ २१४ 'चत्तारि तिग चदुक्के०' यह बारहवीं गाथा ४, ३, २ और १ इन चार संक्रम-स्थानोंके प्रति ग्रहस्थानोंके नियमका कथन करनेके लिये आई है । इस गाथाका प्रथम चरण चार प्रकृतिक संक्रमस्थानका तीन और चार प्रकृतिक प्रतिग्रहस्थानोंसे सम्बन्ध है यह बतलाती है, क्योंकि

१ ता०प्रती मायमो (म) सकामिय, आ०प्रती मायमोसकामिय इति पाठः ।



अदुमु मरुमोवर्त्तमादो अउवीमदिक्ममियम्म त्रिविहमायोवमम अदुण्डं तिसु मरुमोव  
 स्त्रानो च । 'निष्णि निग ण्णो च षोडश्या' तत्रगस्स पुरिसवदपरिक्खणं तिण्डं  
 तिसु मरुमदमणादा इगित्रीम० उपमामगस्स दुविह-मायोवमम तिण्डमेक्किस्से पट्टिगगहत्त-  
 दमणादो च । 'दा दुमु ण्ण्ण वा' उवगस्स कोह णिन्त्तविदे इगिवीसत्तक्कम्मियस्स  
 च त्रिविह मायोवममे जाड अहाकमं दोण्ड दुमु एक्किस्स च मरुमोवर्त्तमादो अउवीसदि  
 कम्मियम्म वि दुविहलोडोवममे जाड दोण्ड दुमु संकमस्स संमवोवर्त्तमादो । 'ण्णा  
 ण्णाण बोदश्या', संकमण्णमाणे त्रिविद परिप्पुडमेव तदुवत्तमादो ॥१२॥

एक ही त्रिम अक्षरकन एह नाक्ययोऽथ अथ कर दिया है इसके पार प्रकृतियों का चार प्रकृतियों में  
 संक्रम करण्य रूप है और दूसरे चौबीस प्रकृतियों की सत्ताबान जीरके तीन प्रकार की मायाच  
 करारम हा ज्ञान पर चार प्रकृतियों का तीन प्रकृतियों में संक्रम करण्य होता है । तिण्य त्रिमे  
 एवमो च षोडश्या' यह मायाच दुसरा करण्य है । इस हाथ तीन प्रकृतिक संक्रमस्थानका तीन  
 और एक प्रकृतिक प्रतिपरम्पानमें संक्रम होता है यह वत्तया गया है क्योंकि एक तो अथक  
 जीरके पुण्यरथ्य रूप है । ज्ञान पर तीन प्रकृतियों का तीन प्रकृतियों में संक्रम देगा जाता है और  
 दूसरे इत्थीम प्रकृतियों की सत्ताबाने करण्यक जीरक वा प्रकार की स्याच्य करारम हा अनेक  
 तीन प्रकृतिक संक्रमस्थानका एक प्रकृतिक प्रतिपरम्पान देगा बाधा है । 'वा दुमु एवक्य वा'  
 यह मायाच तीसरा करण्य है । इस हाथ वा प्रकृतिक संक्रमस्थानका वा और एक प्रकृतिक  
 प्रतिपरम्पानमें संक्रम होता है यह वत्तया है, क्योंकि एक जीरक कायका मारा हा ज्ञान पर  
 दो प्रकृतियों का प्रकृतियों में और इत्थीम प्रकृतियों की सत्ताबान करण्यक जीरके तीन प्रकार की  
 मायाच करारम हा ज्ञान पर वा प्रकृतियों का एक प्रकृतियों में संक्रम करण्य होता है तथा चौबीस  
 प्रकृतियों की सत्ताबान जीरक भी वा प्रकार के स्रोमका करारम हा ज्ञान पर वा प्रकृतियों का  
 प्रकृतियों में संक्रम करण्य रूप है । एगा एगाए बोदश्या' इस हाथ एक प्रकृतिक संक्रमस्थानका  
 एक प्रकृतिक प्रतिपरम्पानमें संक्रम होता है यह वत्तया है, क्योंकि एक जीरके संशसन मानका  
 रूप हा ज्ञान पर एह रूपसे एक संक्रमस्थान और प्रतिपरम्पान करण्य होता है ॥११॥

विनोयार्थ—इस माया हाथ चार प्रकृतिय तीन प्रकृतिक, वा प्रकृतिक और एक प्रकृतिक  
 संक्रमस्थानों के तीन तीन प्रतिपरम्पान हैं इसका मुखाया क्रिया है । अथ संक्रमस्थानों और प्रतिपर  
 म्पानों की रूप । मायाओं में कही गई वितरणारा श्याम करण्य त्रिमे अथक दिया जाता है—

मत्ताभ्या	संक्रमण्य	प्रकृतिया	प्रतिपरम्पान्य	प्रकृतिया	स्वामी
३८ अ	३३ अ	मिष्यारक रिन्य मथ	२२ अ	मिष्यारक वैधनवासी ३० प्रकृतिया	३८ प्रकृतियों की मत्ताबान मिष्यार- क
१८ अ	१३ अ	मत्तयन्त्रके विना मथ	१० अ	अथारन मथ्य प्रकृतिके वैधनवासी १३ प्रकृतिया व मथ्यरथ्य और मथ्यमिष्यारक	अथारन मथ्य प्रकृतिक

सत्तास्था०	सकमस्या०	प्रकृतियों	प्रतिग्रहस्था०	प्रकृतिया	स्वामी
२८ प्र०	२७ प्र०	सम्यक्त्वके विना	१५ प्र०	अप्रत्याख्यानान्तरण ४ के विना पूर्वोक्त १९	देशचिरत
२८ प्र०	२७ प्र०	”	११ प्र०	प्रत्याख्यानान्तरण ४ के विना पूर्वोक्त १५	सयत
२७ प्र०	२६ प्र०	पश्चीम कपायध्वार सम्यग्मिथ्यात्व	२२ प्र०	मिथ्यादृष्टि के बंधनेवाली २२ प्रकृतियों	मिथ्यादृष्टि २७ प्रकृतियोंकी सत्ता वाला
२८ प्र०	२६ प्र०	सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके विना सध	१९ प्र०	पूर्वोक्त १९ प्र०	अचिरतस० के प्रथम समयमें
२८ प्र०	२६ प्र०	”	१५ प्र०	पूर्वोक्त १५ प्र०	देशनि० के प्र० समय में
२८ प्र०	२६ प्र०	”	११ प्र०	पूर्वोक्त ११ प्र०	सयतके ” ”
२६ प्र०	२५ प्र०	२५ कपाय	२१ प्र०	२१ कपाय	२२ प्र० का बन्ध करनेवाला मिथ्या दृष्टि
२८ प्र०	२५ प्र०	२५ कपाय	२० प्र०	२१ प्र० का बन्धक	सासादन सम्य०
२८ प्र०	२५ प्र०	२५ कपाय	१७ प्र०	१७ प्र० का बन्धक	सम्यग्मिथ्यादृष्टि
२८ प्र०	२३ प्र०	चार अनन्तानुबन्धी व मिथ्यात्व के विना २३ प्र०	२२ प्र०	पूर्वोक्त	एक अत्रलिकाल तक मिथ्यादृष्टि
२४ प्र०	२३ प्र०	चार अनन्तानुबन्धी व सम्यक्त्वके विना	१९ प्र०	पूर्वोक्त	विसयोजक अचिरत सम्यग्दृष्टि

संख्या	संख्या	विवरण	दिनांक	विवरण	स्थिति
२४ म	२३ म	भारत अनाथालय- कमी व सम्यक्त्व के बिना	१९ म	पूर्वोक्त	विशेषी देशविरत
२४ म	२३ म	" "	१९ म	पूर्वोक्त	विशेषी प्रमत्त, अथ अपू संवत् अनिवृत्तिकरण परतः
२४ म	२३ म	" "	७	भारत संवत्तन पुरपत्र सम्यक्त्व व सम्यग्गि	
२३ म	२३ म०	भारत अनाथालय कमी मिथ्यात्व व सम्यक्त्व के बिना	१८ म	पूर्वोक्त १९ में से सम्यग्गि मिथ्यात्व कम कर देन पर	विशेषी मिथ्यात्व की अपवाद कर ही इ पेसा अविरत सम्यग्गि
२३ म	२२ म	" "	१४ म	१८ में से अमत्या ४ के कम कर देन पर	मिथ्यात्वका अपवाद देशविरत
२३ म	२२ म	" "	१ म	१४ में से अमत्या ४ के कम कर देन पर	मिथ्यात्वका अपवाद प्रमत्त व अमत्त
२४ म	२२ म	अनाथालय ४ सम्यक्त्व व संवत् कम होयके बिना ३० म	७ म	पूर्वोक्त ७ म	अनिवृत्ति अपवाद
२८ म	२१ म	अनाथालय कमी ४ व ३ अनाथ- संश्लेषण के बिना	२१ म	पूर्वोक्त २१ म	साक्षात्कृत सम्यक् के एक आशक्ति तक
२१ म	२१ म	" "	१७ म	पूर्वोक्त १७ म	आशक्ति अविरत आशक्ति देशवि-
२१ म	२१ म	" "	१३ म	देशविरतके संके बाकी १३ म	
२१ म	२१ म	" "	९ म	भारत संवत् १ नोकियाय	प्रथम आदि तीन आशक्ति सम्यग्गि
२४ म	२१ म	अनाथालय सम्यक् त्व संवत् होय व नपु संकेतके बिना २१ म	७ म	पूर्वोक्त ७ म	अनिवृत्ति अपवाद

सत्ताम्या०	सकमम्या०	प्रकृतिया	प्रतिप्रदात्या०	प्रकृतिया	रयामी
२१ प्र०	२१ प्र०	१२ कपाय ९ नोकपाय	५ प्र०	चार सञ्चलन व पुरुषवेद	क्षयक या उपशामक के अनिवृत्ति० के प्रारंभ में
२७ प्र०	२० प्र०	४अनन्ता०, सम्य- क्त्व, सञ्च० लोभ, नपु सक वेद व स्त्रीवेदके विना ०० प्र०	६ प्र०	चार सञ्च०, सम्य० व सम्य- गिमथ्यात्व	अनिवृत्ति उपशा०
२१५०	२० प्र०	४ अनन्ता० ३ दर्शनमोह व सञ्च० लोभके विना ०० प्र०	५ प्र०	४ संञ्चलन व पुरुषवे०	"
२१ प्र०	१९ प्र०	पूर्वोक्त २० मेंसे नपु सकवेदके कम करनेपर १९ प्र०	५ प्र०	" "	" "
२१ प्र०	१८ प्र०	१९ मेंसे स्त्रीवेदके कम करने पर १८ प्र०	४ प्र०	४ सञ्चलन०	" "
२४ प्र०	१४ प्र०	पुरुषवेद, ११ कपाय, मिथ्यात्व व सम्यगिमथ्यात्व ये १४	६ प्र०	४ सञ्च०, सम्य- क्त्व व सम्य- मिथ्यात्व ये ६ प्र०	" "
२४ प्र०	१३ प्र०	पूर्वोक्त १४ मेंसे पुरुषवेद कम कर देने पर १३ प्र०	६ प्र०	" "	" "
२४ प्र०	१३ प्र०	" "	५ प्र०	मान आदि ३ सञ्च०, सम्यक्त्व व सम्यगिमथ्यात्व	" "
१३ प्र०	१३ प्र०	४ सञ्च० व ९ नोकपाय	५ प्र०	४ सञ्चलन व पुरुषवेद	अनिवृत्ति० रूपक
१३ प्र०	१२ प्र०	लोभके विना ३ सञ्च० व ९ नोक- पाय ये १२ प्र०	५ प्र०	" "	" "

संख्या	संख्या	प्रकार	प्रकार	प्रकार	प्रकार
११	११	संख्या ११ का व पुरुषों के १२	४	४ संख्या	अनिष्टि अथवा
१२	१२	संख्या १२ का संख्या व नपुंसक के बिना ८ नोकापाय ४ ११	५	२ संख्या व पुरुषों के	अनिष्टि अथवा
१३	१३	१ अथवा, १ अथवा १ माया २ अथवा, मिथ्यात्व व सम्म- मिथ्यात्व के ११	३	मान अथवा ३ संख्या, सम्मत्त्व व सम्मत्त्व व ५	अनिष्टि अथवा
१४	१४	तीन अथवा तीन माया तीन माया व दो अथवा	४	४ संख्या	आर्थिक सम्म अनिष्टि अथवा अनिष्टि
१५	१५	"	३	मान अथवा ३ संख्या	" "
१६	१६	१ मान, १ माया, १ अथवा मिथ्यात्व व सम्मत्त्व	५	मान अथवा ३ संख्या सम्मत्त्व व सम्मत्त्व	अनिष्टि अथवा
१७	१७	" "	५	माया व अथवा संख्या व दो अथवा	"
१८	१८	३ नोकापाय पुरुषों व अथवा के बिना ३ संख्या	५	चार संख्या	अथवा "
१९	१९	१ अथवा ३ अथवा ३ माया व २ अथवा	३	मान अथवा ३ संख्या	आर्थिक सम्म अनिष्टि अथवा अथवा
२०	२०	१ मान १ माया २ अथवा मिथ्यात्व व सम्मत्त्व	५	मान अथवा ३ संख्या सम्मत्त्व व सम्मत्त्व	अनिष्टि अथवा अथवा

सत्तास्था०	संक्रमस्था०	प्रकृतिया	प्रतिग्रहस्था०	प्रकृतियां	स्वामी
२१ प्र०	८ प्र०	३ मान, ३ माया व २ लोभ	३ प्र०	मान आदि ३ संज्वलन	ज्ञायिक सम्य० अनिवृत्ति० उप- शामक
२१ प्र०	८ प्र०	„ „	२ प्र०	माया व लोभ संज्वलन	„ „
२४ प्र०	७ प्र०	३ माया, ० लोभ मिथ्यात्व व सम्यग्मिथ्यात्व	४ प्र०	माया आदि २ सञ्च०, सम्यक्त्व व सम्यग्मि०	अनिवृत्ति० उपशामक
२४ प्र०	७ प्र०	„ „	३ प्र०	सञ्च० लोभ, सम्यक्त्व व सम्यग्मिथ्यात्व	„ „
२१ प्र०	६ प्र०	१ मान, ३ माया व २ लोभ	२ प्र०	माया व लोभ संज्वलन	ज्ञायिक सम्य- गृष्टि अनिवृत्ति० उपशामक
२४ प्र०	५ प्र०	१ माया, २ लोभ, मिथ्यात्व व सम्यग्मिथ्यात्व	३ प्र०	लोभसञ्च०, सम्य० व सम्यग्मि०	अनिवृत्ति० उप- शामक
२१ प्र०	५ प्र०	३ माया व २ लोभ	२ प्र०	माया व लोभ संज्वलन	ज्ञायिक सम्य० अनि० उप०
२१ प्र०	५ प्र०	„ „	१ प्र०	सञ्चलन लोभ	„ „
५ प्र०	४ प्र०	पुरुषवेद व लाभ के विना तीन संज्वलन	४ प्र०	४ संज्वलन	क्षपक अनि०
२४ प्र०	४ प्र०	२ लोभ, मिथ्यात्व व सम्यग्मिथ्यात्व	३ प्र०	१ लोभ, सम्य० व सम्यग्मिथ्यात्व	उपशम स०अनि० उपशामक
४ प्र०	३ प्र०	लोभ के विना ३ संज्वलन	३ प्र०	मान आदि ३ संज्वलन	क्षपक अनि०
२१ प्र०	३ प्र०	१ माया व २ लोभ	१ प्र०	संज्वलन लोभ	ज्ञायिक स०अनि० उपशामक
३ प्र०	२ प्र०	मान व माया संज्वलन	२ प्र०	माया व लोभ संज्वलन	क्षपक अनि०
२१ प्र०	२ प्र०	दो लोभ	१ प्र०	लोभ संज्वलन	ज्ञायिक स०अनि० उपशामक

१ २०५ एवमेतिष्व गाहासुत्तमर्षेण सकमहाणाज पद्भिर्गाह्याणिसु जियम कादृण सपदि स मग्गोवायभूदाणमत्थपदाण परूवणहुमुत्तर गाहासुत्तमोदणं—‘अणुपुञ्ज मच्चणुपुञ्ज’—पयदिहाणसकमे परूवणिन्धे पुञ्जमेव इमे सकमहाणाण मग्गोवाया अमुगतत्वा, अण्णहा ठविसयणिण्णयाणुप्यचीदो । कं ते ? अणुपुञ्ज अणणुपुञ्ज मिचादओ । तत्थाणुपुञ्जिसकमो एको, अणाणुपुञ्जिसकमो विदिओ, वसणमोहस्स खयमस्सिपूण तदिपो, तद्वत्खयमवल्लिय चठत्थो, चरिचमोहोवसामगविसए पचमो, चरिचमोहवत्खयणिमवधणो छट्ठो एवमेद् संकमहाणार्चं मग्गोवाया चादत्त्वा भवति । एदेहि पुञ्जुत्तमकमहाणाणं पद्भिर्गाह्याणाणाम्प्यची साहेयत्वा पि उत्तं होइ ।

१ २०६ एत्थाणुपुञ्जीसकमविसए सकमहाणागवसेणे वीरमाथे चठवीससत्त-  
कम्मिपोवसामगस्स ताव धावीस-इगिबीसादओ पुञ्जुत्तकमेणाणुमगिदत्त्वा । तेसिं पमाण-  
मेद्—२२, २१, २, १४, १३, ११, १०, ८, ७, ५, ४, २ । इगिबीससत्तकम्मियस्स

सत्तात्वा	संकमत्वा	प्रकृतिर्था	वतिप्रहस्य	प्रकृतिर्था	स्वामी
१ प्र	२ प्र	मिध्यात्व व सग्यमिध्यात्व	१ प्र	सग्यत्व व हस्यमिध्यात्व	सूरसर्गापराय व वपरांतमोह वपरमक
२ प्र	१ प्र	संबन्धन माया	१ प्र	संबन्धन शोभ	अथक अकिञ्चित्ति

१ २१४ इस प्रकार इतने गाहासुत्तके सम्बन्धसे संकमस्त्वानोक्त प्रतिप्रहत्वानोर्द्धे जियम करके अथ इत निबन्धन करनेके उपर्युक्त अर्थपूर्वक कथन करनेके लिये आगेका गाहासुत्त आया है—‘अणुपुञ्जमणुपुञ्ज’ प्रकृतिस्त्वानोर्द्धे संकमस्त्व कथन करते समय सर्व प्रथम संकमस्त्वानोर्द्धे अन्वेषणके ये उपाय जानना चाहिये, अन्यथा कनका समुचित निरूप नहीं किया जा सकता है ।

संज्ञा—ये अन्वेषण करनेके उपाय कौनसे हैं ?

समाधान—अणुपूर्वी और अणुपूर्वीसंकम इत्यादिक । उनमेंसे अणुपूर्वीसंकम यह प्रथम कथ्य है, अणुपूर्वीसंकम यह वृत्त उपाय है, वरूनमोहके कृत्के आभयसे प्राप्त होनेवाला वीसस उपाय है, वरूनमोहके कृत्के न होनेसे सम्बन्ध रखनेवाला चौथा उपाय है, चारित्रमोहनीय श्री उपराममाओ विपन्न करनेवाला पाँचवाँ उपाय है और चारित्रमोहकी व्यवस्थाके निमित्तसे होनेवाला छठवाँ उपाय है । इस प्रकार ये संकमस्त्वानोर्द्धे अणुसंज्ञाम करनेके उपाय जानने चाहिये । इनके द्वारा पूर्वोक्त संकमस्त्वानोर्द्धे और प्रतिप्रहत्वानोर्द्धे स्वयं प्राप्त होना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

१ २१५ अथ वहाँपर अणुपूर्वीसंकम विपन्न संकमस्त्वानोर्द्धे अन्वेषण करने पर चौबीस प्रकृतिवैधी सत्तात्वाके उपरामकके पूर्वोक्त क्रमसे २२, २१ अथवा प्रकृतिक संकमस्त्वान जानना चाहिये । इनका प्रमाण यह है—२२, २१, २, १४, १३, ११, १०, ८, ७, ५ और २ ।

वि वीसेकोणवीमपहुडयो तेणेव विहाणेणाणुगंतव्वा । तेमिं पमाणमेदं—२०, १०, १८, १२, ११, ९, ८, ६, ५, ३, २ । खवगस्स वि वारससंकमट्टाणप्पहुडि एटाणि संकमट्टाणाणि दट्टुच्चाणि—१२, ११, १०, ४, ३, २, १ । अणुणुपुञ्जीविसयाणं पि मंकमट्टाणाणमणुगमो कायव्वो । तेमिमैसा ठवणा—२७, २६, २५, २३, २२, २१, १३ । एत्थेवोदरमाणमस्सियूण मंभवताणं सकमट्टाणाणमणुमग्गणा कायव्वा, तेमिमणाणुपुञ्जिविसयाणमिह परूवणाए विरोहाभावाटो ।

२०७. संपहि 'झीणमझीणं च ढंसणे मोहे' इच्चेदमत्थपदमवलंबिये संकमट्टाणाणं मग्गणे कीरमाणे तत्थ ताव ढंसणमोहक्खयमस्सियूण इगिवीमसतकम्मियाणुपुञ्जी-मंकमट्टाणाणि चेव इगिवीमसंकमट्टाणम्भहियाणि लब्भति । एत्थेव खवगसेट्ठिपाओग्ग-मंकमट्टाणाणि वि वत्तच्चाणि, सच्चेसिमेव तेमिं ढंसणमोहक्खयपच्छाकालभावीणं तण्णिवंधणत्तमिद्धीटो । तदपरिक्खए च सत्तावीसादिसंकमट्टाणाणि इगिवीमपज्जताणि संभवति त्ति वत्तव्वं । चउवीमसंतकम्मियाणुपुञ्जीसंकमट्टाणाणि वि एत्थेव पवेसियव्वाणि ।

§ २०८. सपहि उवसामगे च खवगे च' एदमत्थपदमवलंबिय संकमट्टाणमग्गणाए चउवीस-इगिवीमसंतकम्मियोवसामग-खवगोसु जहाकमं तेवीस-इगिवीसप्पहुडिसंकम-

इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके भी उसी विधिसे २० और १९ आदि प्रकृतिक संक्रमस्थान जानना चाहिये । उनका प्रमाण यह है—२०, १६, १८, १२, ११, ६, ८, ६, ५, ३ और २ । क्षपक जीवके भी बारह प्रकृतिक संक्रमस्थानसे लेकर ये संक्रमस्थान जानना चाहिये—१०, ११, १०, ४, ३, २ और १ । उन्ही प्रकार 'अनानुपूर्वी' संक्रमस्थानोंका भी विचार करना चाहिये । उनकी स्थापना इन प्रकार है—२७, २६, २५, २३, २२ २१ और १३ । तथा यहीं पर उपशमश्रेणीसे उतरनेवाले जीवकी अपेक्षा भी जो संक्रमस्थान सम्भव हैं उनका विचार करना चाहिये, क्योंकि वे अनानुपूर्वीको प्रिय करते हैं इसलिये उनका यहाँ कथन करनेमें कोई विरोध नहीं आता है ।

§ २६७. अत्र 'झीणमझीणं च ढंसणे मोहे' इस अर्थपदकी अपेक्षा संक्रमस्थानोंका विचार करनेपर इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके जो पहले आनुपूर्वीसंक्रमस्थान कह आये हैं उनमें इक्कीस प्रकृतिक संक्रमस्थानके मिला देने पर वे सबके सब दर्शनमोहके क्षयकी अपेक्षा संक्रमस्थान प्राप्त होते हैं । तथा क्षपकश्रेणिके योग्य संक्रमस्थान भी यहीं पर कहने चाहिये, क्योंकि वे सब दर्शनमोहनीयके क्षय होनेके वाद होते हैं, इसलिये वे भी तन्निमित्तक सिद्ध होते हैं । और दर्शनमोहके क्षयके अभावमें सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमस्थानसे लेकर इक्कीस प्रकृतिक संक्रमस्थान तक छद्म होते हैं ऐसा कहना चाहिये । तथा चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके जो आनुपूर्वी संक्रमस्थान होते हैं उनका समावेश भी यहीं पर कर लेना चाहिये । अर्थात् २४ प्रकृतियों की सत्तावाले जीवके जितने संक्रमस्थान होते हैं वे भी दर्शनमोहके क्षयके अभावमें होते हैं अतः उनकी गणना भी दर्शनमोहके क्षयके अभावमें होनेवाले संक्रमस्थानोंमें हो जाती है ।

§ २६८. अत्र 'उवसामगे च खवगे च' इस अर्थपदकी अपेक्षा संक्रमस्थानोंका विचार करने पर चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशमकके और इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशमक



ह्याणाणि वचन्वाणि, खडगोवसमसेदिपाओम्नासकमह्याणां सभ्येसिमेत्वेत्रं संमवदसणादो । ओदरमाणमस्तिपूष वि उवसमसंखीए सकमह्याणाणि सूर्मति । त अहा—चउबीससत-  
कम्मिओ सुहुमोवसतगुणह्यानेसु दुविहसंक्रमगो अद्दाकखएण परिवडमाणगो अणियहि  
गुणह्याणपवेसकाले येय दुविह लोहं लोहसंखलणम्मि संक्रमेण । तदो तस्य चहुण्हं  
संक्रमो तिसु पयडीसु पडिग्गाहमाणमावण्णाणु संमवद । पुणो अहाकम विविहमाय  
विविहमाण—विविहकोह—सचणोकसाय—इत्थि—ज्जुसयवेदाणमोकहुण्णावारेण परिणदस्स  
तस्सेव अहुण्हमेकारसण्ह चोरसण्हमेकावीसाए वावीसाए तेवीसाए च सकमह्याणाणि  
उप्पजंति—४, ८, ११ १४, २१, २२, २३ । एवमिगिवीससतकम्मियस्स वि  
परिवदमाणयस्स सकमह्याणाणमुप्यची वचन्वा । ताणि च एदाणि—२, ६, ७, १२,  
१९, २०, २१, सभ्येसिमेदाणं पडिग्गाहह्याणवोपणा च जाणिय कायन्वा ॥१३॥

और अपकके क्रमसे वर्तित प्रकृतिक भावि और इक्कीस प्रकृतिक भावि संक्रमस्थान करने चाहिये,  
क्योंकि अपक और अराममेधिसे बोम्ब समी संक्रमस्थान बहोपर क्रिये गये हैं । तथा अराम-  
मेधिसे अरामेवाले बीषकी अपेक्षा भी अराममेधिमें संक्रमस्थान प्राप्त होते हैं । कदा सुखसागरय  
और अरामकयाय गुणस्वनेमें दो प्रकृतिबोम्ब संक्रम करनेवाला चौबीस प्रकृतियों की  
सचावादा को बीच इन गुणस्वानोंका क्रम समाप्त होनेसे गिरकर अविहितकरण गुणस्वानमें  
प्रवृत्त करता है इसके इस समय ही दो प्रकारके बोम्बका जोम संवजनमें संक्रम करता है,  
इसलिये वहाँ प्रतिप्रवृत्तको प्राप्त हुई तीस प्रकृतिबोम्बें चार प्रकृतिबोम्बें संक्रम होवा है । फिर  
क्रमसे जब वही बीच तीस प्रकारकी मादा तीस प्रकारका मादा, तीस प्रकारका कोष साठ  
नोकपाव स्त्रीत्व और न्यु सक्केइ इनका अवरुद्ध करता है तब वहीके वाट ग्याह, चौदह,  
इक्कीस बार्स और तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थान उत्पन्न होते हैं । पूर्वोक्त सब स्थान ब हैं—४ ८,  
११, १४ १९ २१ और २३ । इसी प्रकार जो इक्कीस प्रकृतियोंकी सचावादा बीच अराममेधिसे  
प्युत होवा है उसके भी संक्रमस्थानोंकी उत्पत्ति करनी चाहिये । वे ये हैं—२ ६ ७, १२, १९ २०  
२१ । इन सब स्थानों के प्रतिप्रवृत्तनोंकी योजना बानकर कर लेना चाहिये ॥१३॥

विशेषार्थ—१० प्रकृतिक संक्रमस्थानसे लेकर १ प्रकृतिक संक्रमस्थान तक कितन संक्रम  
स्थान हैं इनमेंसे पहले तो इस बातका विचार करना चाहिये कि इक्कीसे कितन संक्रमस्थान तो  
आनुपूर्वी क्रमसे उत्पन्न होते हैं और कितने आनुपूर्विके किता उत्पन्न होते हैं । अन्तरकरके  
पहचाह क्रमोंकी होनेवाली अरामता या अरामके अनुसार उत्पत्तकर इति क्रमको क्रिये हुए जो  
संक्रमस्थान उत्पन्न होते हैं वे आनुपूर्वी क्रमसे उत्पन्न हुए संक्रमस्थान कहलाते हैं चार कोष  
अनानुपूर्वी संक्रमस्थान कहलाते हैं । इसी प्रकार जो संक्रमस्थानों और प्रतिप्रवृत्तानेकी अभ्येपय  
करके अन्व ज्ञापयोग्य सिद्धि किता है सो उनका भी स्वल्प ज्ञान लेना चाहिये । उनके स्वल्पके  
अन्व करनेमें कोई विशेषता ब होनेसे बहोपर हमने इसका निर्देश नहीं किया है । अब वहाँ  
आनुपूर्वी और अनानुपूर्वी क्रमसे प्राप्त होनेवाले संक्रमस्थानोंका सरलरूपसे ज्ञान करानेके लिये  
कोष्ठक दिया जाता है—

१. आ०प्र०—मेवत्वं इति पाठः । २. वा प्र० तपो ति चतुर्दश, वा प्र० तपो त् चतुर्दश  
इति पाठः । ३. वा०—आ प्र० २ इति पाठः ।

१ २९०. एवमेदीए गाहाए संकमट्टाणाणं मगणोवायभूदाणि अत्थपदाणि परूविय संपहि संकम-पडिग्गह-तदुभयट्टाणाणमादेसपरूवणद्धं गट्टियादिचोदसमगण-ट्टाणाणि परूवेमाणो गाहासुत्तमुत्तरं भणड—‘एक्केक्कम्हि य ट्टाणे०’ एक्केक्कम्हि ट्टाणे संकम-पडिग्गह-तदुभयभेदमिण्णे गट्टियादिचोदसमगणट्टाणविसेसिदजीवाणं गवेसणे कीरमाणे तत्थ केसु ट्टाणेसु भवसिद्धिया जीवा होंति, केसु वा ट्टाणेसु अभवसिद्धिया जीवा होंति, सेसमगणट्टाणविसेसिदा वा जीवा केसु ट्टाणेसु होति त्ति पुच्छा कदा भवदि । एवमेदीए गाहाए भवियाभवियमगणाणं णामणिहेम कादूण सेसमगणाणं च ‘जीवा वा’ इदि एदेण सामणवयणेण संगहो कदो दट्टच्चो । एत्थ भवियाभवियजीवेसु

आनुपूर्वा			अनापनुर्वा		
२१ प्र० उपशा० संक्र० प्रति०	२८ प्र० उपशा० संक्र० प्रति०	क्षपक संक्र० प्रति०	सक० प्रति०	उपशा० श्रेणिसे गडनेगाला २४ प्र०	उपशमश्रेणिसे पडनेगाला २१ प्र०
२० ५	२२ ७	१२ ५	२७ २२, १९ १५, ११	४ ३	२ १
१९ ५	२१ ७	११ ५	२६ ॥	८ ४	६ २
१८ ८	२० ६	१० ४	२५ २१, १७	११ ५	६ ३
१२ ४	१४ ६	४ ४	२३ २२, १६ १५, ११, ७	१४ ६	१२ ४
११ ४	१३ ६	३ ३	२२ १८, १४ १०	२१ ७	१९ ५
९ ४	११ ५	२ २	२१ २१, १७ १३, ९, ५	२२ ७	२० ५
८ ३	१० ४	१ १	२३ ५	२३ ७, ११	२१ ५, ६
६ २	८ ४				
५ २	७ ४				
३ १	५ ३				
२ १	४ ३				
	२ २				

१ २९९ इस प्रकार इस गाथा द्वारा संक्रमस्थानोंके अन्वेषणके उपायभूत अर्थपदोंका कथन करके अत्र संक्रमस्थानों, प्रतिग्रहस्थानों और तदुभयस्थानोंका आदेशकी अपेक्षा कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—अत्र ‘एक्केक्कम्हि य ट्टाणे०’ इस द्वारा सक्रम, प्रतिग्रह और तदुभय-रूप भेदोंसे अनेक भेदोंको प्राप्त हुए एक एक स्थानमे गति आदि चौदह मार्गणाओंवाले जीवोंका विचार करने पर उनमेंसे किन स्थानोंमें भव्य जीव होते हैं, किन स्थानोंमें अभव्य जीव होते हैं और किन स्थानोंमें शेष मार्गणावाले जीव होते हैं यह पृच्छा की गई है । इस प्रकार इस गाथामें भव्य और अभव्य मार्गणाका नाम निर्देश करके शेष मार्गणाओंका ‘जीवा वा’ इस सामान्य वचनद्वारा संग्रह किया गया है ऐसा जानना चाहिये । इस गाथामें भव्य और अभव्य जीवोंके

अणि दृष्टानि ह्येति चि अमणिदृष कसु द्वापेसु मवियामवियजीवा ह्येति चि मणतस्माद्विष्याओ ममाणद्वाणानं सकमद्वापेसु गवेसणं कदे वि मग्गणद्वापेसु संकमद्वाणानि गधसिदाणि ह्येति चि पदेणाद्विष्याएण सहा णिहेसो कदो चि पचम्बो, इच्छा-बसेण तसिमाधाराचयमाबोववधीदो ॥१४॥

§ ३०० एवमेद्रेण गाहासुचेण परुविदमग्गणद्वाणानं सकमद्वाणानं गुणद्वापेसु वि मग्गणा कयम्बा चि ज्ञाणवणहुमुवग्गिमाहासुत्वमोद्वण्ण—‘अदि कम्मि ह्येति टाणा०’ एतथ पचविहो माववियप्यो ओदइयादिमदण तस्स विससो मिच्छद्विष्यहुदि जाव अओगिक्केवलि चि एटाणि गुणद्वाणानि, पचविहभावे अस्सियूष तसिमवद्विदचादो । तस्य कम्मि गुणद्वाणे कद् कदि सकमद्वाणानि ह्येति क्वचित्पाणि वा पदिग्गहद्वाणानि ह्येति चि एदण सुचेण पुञ्जा कदा भवदि । तस्य ताव ओदइयमावपरिणदे मिच्छद्वि गुणद्वाणे सत्तावीमादीणि चत्तारि सकमद्वाणानि ह्येति—२७, २६, २५, २३ । पदिग्गहद्वाणानि पुण दोणिण भव तस्य समवति बावोस-इगिबीसाणि मोत्तण्णेति

चित्तन स्थान हात हैं एसा न कद्कर जो चित्तन स्थानोंमें मध्य और अमध्य जीव हाते हैं’ ऐसा कहा गया है सा यद्यपि इस कथन हात मार्गस्थानोंमें सकमस्थानोंमें विचार करनेकी सूचना की गई है तथापि मार्गस्थानोंमें सकमस्थानोंमें कल्पना करनेके अविशयसे ही अतः प्रचारक निर्देश किया गया है यह अर्थ यहाँ सेना पादिये, क्योंकि इच्छावरा एतमें आचार-आपेयमात्र की वरतिन हाती है ॥१४॥

विशयार्थ—पूर्वमें जो सकमस्थानों, प्रतिपक्षस्थानों और तदुभयस्थानोंकी सूचना की गई है सा एतमेंसे मध्य अमध्य और अम्य मार्गस्थाने जीवोंके क्वीम स्थान चित्तने होत हैं इसके ज्ञान करमकी इम गाथामें सूचना की गई है । यद्यपि गाथामें यह निर्देश किया गया है कि ‘सकम प्रतिपक्ष और तदुभयस्थान एक एक स्थानमेंसे चित्त स्थानोंमें मध्य अमध्य या अम्य मार्गस्थाने जीव हात हैं इमका विचार करना चाहिय तथापि इसका आशय यह है कि मध्य अमध्य या अम्य मार्गस्थानोंमें जहाँ चित्तने स्थान सम्भर हो अम्य विचार कर सेना पादिये । एसा अविशय चित्तनेके शिष्य यद्यपि निमित्त परिवर्तन करना पड़ता है । पर एसा करनेमें काइ अपरति नहीं आती । गाथ ही इमन टीक अर्थका ज्ञान करनेमें सुगमता आती है, इसलिये अर्थ करत समय यह परिवर्तन किया गया है ।

§ ३ • इम प्रकार इम गाथामुक्त द्वारा कद् गय माग्गहास्थानों और सकमस्थानोंमें गुणस्थानोंमें की विचार करना चाहिय यह अर्थनेके शिष्य अथाका गाथामुत्र आया है—‘अदि कम्मि ह्येति टाणा इममें अधीदयिक आदिके अर्थसे पौष प्रचारक भावोंका निर्देश किया है । मिष्यात्वसे सेदर अथागिच्छवन्थे तद् ज्ञा ओदइ गुणस्थान हैं व इन्दीके भवु हैं क्योंकि वाप प्रचारक भावोंका आशय सेदर ही व अर्थस्थान हैं । एतमेंसे चित्त गुणस्थानमें चित्तने सकमस्थान और चित्तन प्रति-कदस्थान हात हैं यह इम गाथामुत्र हात पृच्छा की गई है । एतमेंसे अधीदयिक आदिके मिष्यात्व गुणस्थानमें हा मत्तपुण कदिक आदि चार सकमस्थान हात हैं—२० २६, २५, और २३ । किन्तु यहाँ प्रतिपक्षस्थान ही ही हात है क्योंकि यहाँ चार्ग आर इदम प्रकृतिक प्रतिपक्षस्थानोंके शिष्या

तत्थासभवादो । तथा विदियगुणट्ठाणे पारिणामियभावपरिणदे पणुवीसेत्तवीससंक्रम-  
ट्ठाणाणि २७, २१, इगिवीसपडिग्गहट्ठाणं च होइ २१ । एदीए दिसाए सेसगुणट्ठाणेषु  
वि पयदमग्गणा समयाविरोहेण कायव्वा । एदेण मामित्तणिहेमो वि सूचिदो दडुच्चो,  
गुणट्ठाणवदिरेणेण सामित्तसवधारिहाणमण्णोसिमणुवलद्वीदो । तदो चेव तदणंतग्परुत्तणा-  
जोग्गस्य कालाणुगमस्स सेसाणियोगद्वाराणं देसामासियभावेण परुत्तणावीजमिदमाह—  
'समाणणा वाय केवचिरं' केवचिरं कालमेक्केकस्स सक्रमट्ठाणस्स समाणणा होइ  
किमेगसमयं दो वा समए इच्चादिकालविसेसावेस्समेदं पुच्छामुत्तमिदि घेत्तच्चं ॥१७॥

१ ३०१. एवमेदाओ दो गाहाओ गुणट्ठाण-मग्गणट्ठाणेषु संक्रम-पडिग्गह-तदुभय-  
ट्ठाणपरुत्तणाए तप्पडिवद्वसामित्तादिअणियोगद्वाराण च वीजपदभूदे परुत्तिय संपहि  
मग्गणट्ठाणेषु जत्थतत्थाणुपुच्चोए संक्रमट्ठाणाणमुवगिरिमत्तगाहाहि मग्गणं कुणमाणो  
तत्थ ताव पढमगाहाए गदिमग्गणाविमए संक्रमट्ठाणाणमियत्तावहारणं कुणइ—'णिरय-  
गड-अमर-पंचिदिएसु०' एदिस्से गाहाए पुच्चद्वेण णिरय-देवगइ-पंचिदियतिरक्खेसु पंचण्हं  
संक्रमट्ठाणाणं मभवावहारण कयं दडुच्चं । काणि ताणि पंच संक्रमट्ठाणाणि ? सत्तावीस-  
छव्वीस-पणुवीस-तेवीस-इगिवीससण्णिदाणि—२७, २६, २५, २३, २१ । कत्थमेत्थ

अन्य प्रतिग्रहस्थान सम्भव नहीं हैं । तथा पारिणामिक भावरूप दूसरे गुणस्थानमें पचचीन और  
इक्षीम प्रकृतिक २५, २१ ये दो संक्रमस्थान 'आर उवीस प्रकृतिक २१ एक प्रतिग्रहस्थान होता है ।  
शेष गुणस्थानोंमें भी इसी प्रकार यथात्रिधि प्रकृत प्रियका विचार कर लेना चाहिये । इस कथनसे  
स्वामित्वका निर्देश भी सूचित हुआ जानना चाहिये, क्योंकि गुणस्थानोंके सिवा स्वामित्वके  
योग्य अन्य वस्तु नहीं पाई जाती है । फिर इसके बाद कथन करनेके योग्य कालानुयोगद्वाराका  
निर्देश करनेके लिये 'समाणणा वाय केवचिरं' यह पद कहा है जो देशामर्षकरूपसे शेष अनुयोग-  
द्वारोंको सूचित करनेके लिये वीजभूत है । एक एक संक्रमस्थानकी क्रिाने कालतक प्राप्ति होनी है ।  
क्या एक समय तक होती है या दो समय तक होती है इत्यादि रूपसे कालविशेषकी अपेक्षा  
रखनेवाला यह पृच्छासूत्र जानना चाहिये ॥१५॥

**विशेषार्थ**—इस गायामे संक्रमस्थानों और प्रतिग्रहस्थानोंके स्वामी व कालके जान लेनेकी  
तो स्पष्ट सूचना की है किन्तु शेष अनुयोगद्वारों की सूचना नहीं की है । तथापि यह सूत्र देशामर्षक  
है अतः उनका सूचन हो जाता है ।

१ ३०१ इस प्रकार गुणस्थानों और मार्गणास्थानोंमें संक्रमस्थानों, प्रतिग्रहस्थानों और  
तदुभयस्थानोंके कथनसे सम्बन्ध रखनेवाली और इन संक्रमस्थान आदिसे सम्बन्ध रखनेवाले  
स्वामित्व आदि अनुयोगद्वारोंके वीजभूत इन दो गायामर्षका कथन करके अब मार्गणास्थानोंमें  
यत्रतत्रानुपूर्वीके हिसाबसे आगेकी सात गायामर्षा द्वारा संक्रमस्थानोंका विचार करते हुए उसमें भी  
सर्व प्रथम गायामर्षा गतिमार्गणामें संक्रमस्थानोंके प्रमाणका निश्चय करते हैं—'णिरयगइ-  
अमर-पंचिदिएसु०' इस गायामर्षाके पूर्वार्धद्वारा नरकगति, देवगति और पचेन्द्रिय तिर्य चोमें पाँच  
संक्रमस्थान सम्भव हैं यह बतलाया गया है ।

**शंका**—वे पाँच संक्रमस्थान कौनसे हैं ?

**समाधान**—सत्तार्हस, छव्वीस, पचचीस, तेईस, और इक्कीस ये पाँच संक्रमस्थान हैं—  
२७, २५, २५, २३, २१ ।

पश्चिदियगगहणेन चतुर्गहसहारणेन तिरिकस्त्रापणेन पडिबन्धी ? अ, पारिसेसियण्णाएण तत्त्वं तत्पउत्तीए विरोहामावादो । किमेव पेव मणुसगर्णं वि होदि पि आसक्यण उच्चरमाह—‘सम्भे मणुसगर्णं’ मणुसगर्णं सज्जाणि वि संक्रमह्वाभाणि संभवति पि उचं होइ, सम्भेसिमेव सत्त्व समवे विरोहामावादो । एत्थ कोचफरूवणा अणुणाहिया वचन्ना । पश्चिदियतिरिक्खेसु क्य होइ पि आसक्यण इदमुच्चर—‘सेसेसु तिगं’ । सेसगहणेन एण्दिय-विगळिदियाणं गहण क्ययम्भं, तेसु सत्तावीस-अम्बीस-पणुवीस सण्णिदसंक्रमह्वाणवियमेव समवइ । एवमसण्णपश्चिदिएसु वि वचन्मं, बिसेसामावाटो ति पणुप्यायणाहुमिद वचन्—‘असज्जीसु’ । असण्णपश्चिदिएसु वि संक्रमह्वाणवियमेवाणतर-एत्थिद संभवइ पि उचं होइ । अइवा ‘सेसेसु तिगं असज्जीसु’ ति उचे सेसगहणणा-सण्णविसेसिदेण एण्दिय-विगळिदियाणमसण्णपश्चिदियाण च संगहो क्ययम्भो, तेसि सम्भेसिसण्णपडि भेदामावादो । तदो तेसु संक्रमह्वाणवियमेवाणतरपरुविदं होइ ति वचन्व । एत्थ निरयादिगर्णसु संभवतार्ण पडिगहह्वाणानं च अहागममणुगमो

शुद्ध—इम गायमें जो ‘पश्चिदिब’ परब्रह्म मर्य किया हे सो पर चारों गतियोंमें साधारण है । अर्थात् पंचेन्द्रिय चारों गतियोंके बीच होते हैं फिर उससे केवल तिर्यं चोक्ष ही ज्ञान कैसे किया गया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि पारिसेय श्यावसे तिर्यं चोक्ष ही इस पक्षी प्रवृत्ति माननेमें कोई विरोध नहीं आता है ।

क्या इसी प्रकार मनुष्य गतिमें भी संक्रमस्वाध होते हैं ? इस प्रकारकी शंकाके होनेपर इसके उत्तररूपमें ‘सम्भे मणुसगर्णं’ यह सूत्रवचन कहा है । मनुष्यगतिमें सभी संक्रमस्वाध सम्भव हैं यह इसका तात्पर्य है, क्योंकि वहाँ पर सभी संक्रमस्वान्तिक होनेमें कोई विरोध नहीं आता है । वहाँ मनुष्यगतिमें भी मरुत्य श्यावचित्तासे रक्षित पूरी कइती जाइए ।

अब पंचेन्द्रिय तिर्यं चोक्ष अतिरिक्त तिर्यं चोक्षमें कौनसे संक्रमस्वाध होते हैं ऐसी धारणा होनेपर इसके उत्तररूपमें ‘सेसेसु तिगं’ यह सूत्रवचन कहा है । वहाँ सेप परसे पंचेन्द्रिय और विकल्पेन्द्रियोंका मर्य करना चाहिये क्योंकि इनमें सत्तावीस अम्बीस और पचवीस प्रकृतिक तीन संक्रमस्वाध ही सम्भव हैं । तथा इसी प्रकार अष्टादी पंचेन्द्रियोंमें भी कवन करण्य चाहिये क्योंकि पंचेन्द्रियों और विकल्पेन्द्रियोंके कवनसे इनके कवनमें कोई विशेषता नहीं है । इस प्रकार इस बातका कवन करनेके लिये सूत्रमें ‘असज्जीसु’ वचन दिया है । अष्टादी पंचेन्द्रियोंमें भी पचवीस वदे गय तीन संक्रमस्वाध ही होते हैं यह एक कवनका तात्पर्य है । अथवा ‘सेसेसु तिगं असज्जीसु’ इस वचनमें जो ‘सेप’ परब्रह्म मर्य किया है सा इससे असादी विशेषणसे कुछ पंचेन्द्रिय विकल्पेन्द्रिय और अष्टादी पंचेन्द्रियोंका संक्य करण्य चाहिये क्योंकि अतिरिक्तकी अपेक्षा इन सभमें कोई भेद नहीं है । इसलिये इनमें व ही तीन संक्रमस्वाध होते हैं किन्तु पूर्वमें बस्तव्य कर आये हैं वेसा वहाँ ज्ञानना चाहिये । वहाँ पर अरकादि गतियोंमें मस्तिष्कस्वाधोक्त धयनि गात्रासूत्रमें कसेअ नहीं किया है तथानि भागमानुसार इनका विचार कर लेना चाहिये । तथा इसी प्रकार उरुभयस्वान्तोभ

१. आ०प्र० वचन्य । अइवा पश्चिदिब- इति पाठः । २. एव प्र० वचनं अतदियपश्चिदिएसु इति पाठः ।

कायव्वो । तदो तदुभयद्वाराणि च परुवेयव्वणि । एवं कए गइमग्गणा समप्पड । एत्थेव काइंदिय-जोग-सण्णिमग्गणाणं च मंगहो कायव्वो, सुत्तस्सेदस्स देसामासियत्तादो ॥१६॥

भी कथन कर लेना चाहिये । इस प्रकार कथन करने पर गतिमार्गणा समाप्त होती है । यहाँ पर काय, इन्द्रिय, योग और संज्ञी मार्गणाका भी संग्रह करना चाहिये क्योंकि यह सूत्र देशामर्षक है ॥१६॥

**विशेषार्थ—**इस गाथासूत्रमें चारों गतियोंमेंसे किसमें कितने संक्रमस्थान होते हैं उसका स्पष्ट उल्लेख किया है । उसमें भी तिर्यक गतिमें एकेन्द्रियोके कितने, विकलेन्द्रियोके कितने और असंज्ञियोंके कितने संक्रमस्थान होते हैं इसका भी उल्लेख किया है । इतने निर्देशसे काय, इन्द्रिय, योग और संज्ञी मार्गणामें वहाँ कितने संक्रमस्थान होते हैं इसका भी ज्ञान हो जाता है उसलिये देशामर्षक रूपसे इस सूत्रद्वारा उन मार्गणाओंका भी यहाँ संकलन करनेके लिये निर्देश किया है । तुलासा इस प्रकार है—काय मार्गणाके स्थावर और त्रस ये दो भेद हैं । इनमेंसे स्थावर एकेन्द्रिय ही होते हैं और शेष त्रस होते हैं, इनमें मनुष्य भी सम्मिलित हैं । इसलिये स्थावरोंके २८, २७ और २३ ये तीन संक्रमस्थान तथा त्रसोंके सब संक्रमस्थान प्राप्त होते हैं, क्योंकि एकेन्द्रियोंके उक्त तीन और मनुष्योंके सब संक्रमस्थान वतलाये हैं । इन्द्रिय मार्गणाके एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय आदि पाँच भेद हैं । सो गाथा सूत्रमें एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय अर्थात् द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवोंके २७, २६ और २५ ये तीन संक्रमस्थान होते हैं इसका स्पष्ट निर्देश किया ही है । अब रहे पंचेन्द्रिय सो इनमें तिर्यक पंचेन्द्रिय और शेष तीन गतियोंके सब जीव सम्मिलित हैं अत इनके भी सब संक्रमस्थान प्राप्त होते हैं । योगके स्थूल रूपसे तीन भेद हैं और मनुष्योंके ये तीनों योग सम्भव हैं अत प्रत्येक योगमें सब संक्रमस्थान सम्भव हैं यह सिद्ध होता है । यह तो हथा सामान्य विचार किन्तु योगोंके उत्तर भेदोंकी अपेक्षासे विचार करने पर मनोयोगके चारों भेदोंमें और वचन योगके चारों भेदोंमें सब संक्रमस्थान सम्भव हैं, क्योंकि इनका सत्त्व मिथ्यात्व गुणस्थानसे लेकर उपशान्तकपाय गुणस्थान तक पाया जाना सम्भव है, इसलिये इनमें सब संक्रमस्थान बन जाते हैं । अब रहे काययोगके सात भेद सो औदारिककाययोग पर्याप्त अवस्थामें मनुष्योंके भी सम्भव है और मनुष्योंके सब संक्रमस्थान वतलाये हैं इसलिये इनमें सब संक्रमस्थान बन जाते हैं । औदारिकमिश्रकाययोग प्रथम, द्वितीय और चतुर्थ गुणस्थानकी अपर्याप्त अवस्थामें मनुष्य और तिर्यकोंके ही होता है । यहाँ संयोगकेवली गुणस्थान अविवक्षित है । किन्तु ऐसी दशामें २७, २६, २५, २३ और २१ ये पाँच संक्रमस्थान सम्भव हैं शेष नहीं, इसलिये औदारिक मिश्रकाययोगमें ये पाँच संक्रमस्थान प्राप्त होते हैं । इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोगमें भी जानना चाहिये, क्योंकि इन योगोंका सम्बन्ध भी अपर्याप्त दशासे है तथा देवोंके ये ही संक्रमस्थान होते हैं अन्य नहीं । वैक्रियिक काययोग देव और नारकियोंके होता है, इसलिये देव और नारकियोंके जो भी संक्रमस्थान होते हैं वे वैक्रिय काययोगमें भी प्राप्त होते हैं । अब रहे आहारक और आहारकमिश्रकाययोग सो ये दोनों योग प्रमत्तसंयत गुणस्थानमें तो होते ही हैं साथ ही या तो वेदकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयतके होते हैं या ज्ञानिक सम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयतके होते हैं । इसलिये इनमें २७, २३, और २१ ये तीन ही संक्रमस्थान सम्भव हैं ऐसा जानना चाहिये । तथा संज्ञी मार्गणाके संज्ञी और असंज्ञी ये दो भेद हैं । सो इनमेंसे असंज्ञियोंके २७, २६ और २५ ये संक्रमस्थान होते हैं यह तो गाथामें ही वतलाया है । तथा मनुष्य संज्ञी ही होते हैं और मनुष्योंके सब संक्रमस्थान वतलाये हैं इसलिये संज्ञियोंके भी सब संक्रमस्थान सम्भव हैं यह बात सहज फलित हो जाती है । इस प्रकार इस गाथासूत्रसे काय आदि पूर्वोक्त चार गाथाओंमें वहाँ कितने संक्रमस्थान होते हैं यह कथन देशामर्षकभावसे सूचित हो जाता है यह बात सिद्ध हुई ।

१३०२ एव गङ्गामग्नयोरुत्पत्तिरिति जोग-सङ्घिष्याणुवार्द परुविय सपदि सम्मत्-सन्नममग्नयविविसेमपदुप्यायदुमुत्तरमुत्तं भण्ड—‘चदुर दुर्गं तवीसा०’ एतथ ब्रह्मसंहितासहिते कथ्यते । मिच्छते चत्वारि सक्रमद्वानाणि, मिच्छग दोष्णि, सम्मते तेषीस सक्रमद्वानाणि ह्येति । तत्र मिच्छाद्द्विम्मि सत्तावीस-सन्वीस-पञ्चवीस-संवीससङ्घिषदाणि चत्वारि सक्रमद्वानाणि ह्येति—२७, २६, २५, २३ । सम्मामिच्छा-द्विम्मि पञ्चवीस-द्विग्वीससङ्घिषदाणि दोष्णि सक्रमद्वानाणि भवति—२५, २३ । सम्म-चोवसक्त्विष्यगुणद्वाने सन्नसक्रमद्वानसमथो सुगमो । कथमेतथ पञ्चवीससक्रमद्वानममवो चि णासकृष्णञ्च अद्विषीससतकम्मियोवसमसम्माद्द्विष्णुपदसासणसम्माद्द्विष्णुमि तदुवत्तमादो । कथमेदस्स सम्माद्द्विष्णुवत्तसो चि ण पञ्चवद्वान कथ्यते, दत्तुत्तरपादो । गाहापञ्चद्वे नि सहाससंलं णायावत्संरणेण सपथो जोजेयन्तो । तथ विरद वावीस संक्रमद्वानाणि ह्येति, सन्नमोवसक्त्विष्यगुणद्वानेषु पञ्चवीससक्रमद्वान मोष्ण ससाण

वद्यपि गायत्री केवल संक्रमस्वान्तोश्च ही निर्देश किया है प्रतिपदस्वान्तोश्च और तदुमवस्वान्तोश्च निर्देश नहीं किया है तथापि संक्रमस्वान्तोश्च शान हो जाने पर प्रतिपदस्वान्तोश्च और तदुमवस्वान्तोश्च शान सदा ही कथ्य है इसलिये इनका अलगसे निर्देश नहीं किया है इतना जानना चाहिये ।

१३२ इस प्रश्न गति मार्गोष्ठा और इनके भीतर अर्द्ध दुर्ग कथ्य इन्द्रिय योग और छोटी मार्गोष्ठाओंका कथन करके यह सम्बन्ध और संयमगत विशेषणका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कथ्य है—‘चदुर दुर्गं तवीसा इत्थं कथ्ये सम्बन्ध करमा चाहिव । अत्राप यह है कि मिच्छात्तमे चार, मिच्छं हो और सम्बन्धमें तेषीस संक्रमस्वान होत है । इनमेंसे मिच्छाद्वि गुणस्वान्तमें सत्तावीस सन्वीस पञ्चवीस और तेषीस प्रकृतिक व चार संक्रमस्वान होते हैं २७ २६ २५, २३ । सम्मामिच्छाद्वि गुणस्वान्तमें पञ्चवीस और इन्द्रिय प्रकृतिक वा संक्रमस्वान होते हैं २५ २३ । तथा सम्बन्ध संहित गुणस्वान्तमें सब संक्रमस्वान सम्भव हैं सो यह कथन सुगम है ।

शब्द—सम्बन्ध संहित गुणस्वान्तमें पञ्चवीस प्रकृतिक संक्रमस्वान कैसे सम्भव है ?

समाधान—येही आशय करण ठीक नहीं है, क्योंकि अर्द्धांश प्रकृतियोंकी सत्तावीसको अत्रमसम्बन्धद्वि ओष पीछेसे सासाहससम्बन्धमें चारवीस आया है इसका पञ्चास प्रकृतिक संक्रमस्वान पाया गया है ।

शब्द—इसे सम्बन्धद्वि संख्या कैसे की गई है ?

समाधान—येही आशय करण भी ठीक नहीं है, क्योंकि इत्थं वत्तर दिवा वा पुत्र है । आशय यह है कि एक तो अत्रमसम्बन्धके अन्तमें भी सासाहस सम्बन्धकी शक्ति होती है और दूसरे इसका सासाहस गुणस्वान्तमें प्राप्त हो जाने पर भी अर्द्धमोक्षनीयका तीन प्रकृतियोंका अनुभव बना रहनेके कारण मिच्छात्त भाव प्रकट नहीं होता है इसलिये सासाहस-सम्बन्धद्विको सम्बन्धद्वि संख्या की है । गायक वत्तरवर्षों में यथासंभव मध्यमका अक्षरान्न लेकर पथों का सम्बन्ध कर लेना चाहिये । तथा—विरतके चार्वस संक्रमस्वान होते हैं क्योंकि संयमके पुत्र गुणस्वान्तमें पञ्चवीस प्रकृतिक संक्रमस्वानके सिवा रोप सभी संक्रमस्वान पाये जाते हैं ।

सन्वेगिमेव गभवोवलंभादो । एदं संजमसामण्णावेक्खाए भणिटं । संजमविसेराविवक्खाए पुण सामाडय-छेदोवट्टावणसुद्धिमंजमेसु चावीसण्हं पि संकमट्टाणाणं सभवो णाण्णत्थ । तं कथं ? परिहारसुद्धिमंजमम्मि २७, २३, २२, २१ एदाणि चत्तारि संकमट्टाणाणि भोत्तूण सेसाणि सन्वाणि वि सुण्णट्टाणाणि । सुद्धम०-जहाक्खाद०मंजमेसु वि संकमट्टाण-मेक्कं चैव गंभज्ज, चउवीगमतकम्मियमरिसयूण तत्थ दोण्हं पयडीणं संकमोवलंभादो । मिम्मग्गहणमेत्थ मंजमामंजमस्स गंगहट्ठं । तदो तम्मि पच सकमट्टाणाणि होति त्ति संवंधो । ताणि च एदाणि—२७, २६, २३, २२, २१ । अमंजमोवलक्खिए गुणट्टाणे इमाणि चैव पणुवीसन्भहियाणि संभवन्ति त्ति मुत्ते छक्कणिहेमो कथो । ताणि चेदाणि—२७, २६, २५, २३, २२, २१ ॥१७॥

§ ३०३. एवं समत्त-संजममगगणामु संकमट्टाणाणमियत्तासंभवं णिद्वारिय लेस्सा-मगगणाए तदियत्तागंभवावहारणद्धमुत्तरमुत्तं भणइ—‘तेवीम सुक्कलेस्से०’ सुक्कलेस्सापरिणदे जीवे तेवीस पि संकमट्टाणाणि भवन्ति, तत्थ तस्सभवे विरोहाभावादो । तेउ-पम्मलेस्सासु पुण सत्तावीग्गदीणमिगिवीसपज्जंताणं संभवदंसणादो छक्कणियमो—२७, २६, २५, २३, २२, २१ । ‘पणगं पुण काऊए’ काउलेस्साए पंचैव सकमट्टाणाणि होति, अणंतर-

यह कथन सामान्य संयमकी अपेक्षासे किया है । संयमविशेषोंकी अपेक्षासे तो सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसंयममे वाईस ही सक्रमस्थान सम्भव हैं किन्तु अन्य संयमोंमें ये वाईस संक्रमस्थान सम्भव नहीं हैं । जैसे परिहारसुद्धिसंयममे २७, २३, २२ और २१ इन चार संक्रमस्थानोंके सिवा शेष सब संक्रमस्थान नहीं होते । सूत्रमसम्परायसंयम और यथाख्यातसंयममे भी केवल एक संक्रमस्थान सम्भव है, क्योंकि चौबीस प्रकृतिक सत्कर्मवाले जीपकी अपेक्षा वहाँ दो प्रकृतियोंका सक्रम उपलब्ध होता है । सूत्रमे मिश्र पद संयमासयमके संग्रह करनेके लिये ग्रहण किया है, इसलिये संयमासयम गुणस्थानमें पाँच सक्रमस्थान होते हैं ऐसा सम्बन्ध करना चाहिये । वे पाँच सक्रमस्थान २७, २६, २३, २२ और २१ ये हैं । तथा असंयम सहित गुणस्थानोंमें पच्चीस प्रकृतिक संक्रमस्थानके साथ ये पूर्वोक्त पाँच ही संक्रमस्थान होते हैं, इसलिए सूत्रमें ‘छह’ पदका निर्देश किया है । वे छह संक्रमस्थान २७, २६, २५, २३, २२ और २१ ये हैं ॥१७॥

विशेषार्थ—इस गाथा द्वारा मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, सम्यग्दृष्टि, विरत, विरताविरत और अविरत जीवोंमेंसे प्रत्येकके कितने संक्रमस्थान होते हैं इसका निर्देश किया है ।

§ ३०३ इस प्रकार सम्यक्त्व मार्गणा और संयम मार्गणामे सक्रमस्थानोंके परिमाणका निर्धारण करके अब लेश्यामार्गणामें सक्रमस्थानोंके परिमाणका निश्चय करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—‘तेवीस सुक्कलेस्से०’ शुक्कलेश्यावाले जीवोंमें तेईस ही संक्रमस्थान होते हैं, क्योंकि वहाँ पर इनके होनेमें कोई विरोध नहीं आता । पीतलेश्या और पद्मलेश्यामे तो सत्ताईससे लेकर इक्कीस तक ही संक्रमस्थान देखे जानेसे छहका नियम किया है—२७, २६, २५, २३, २२ और २१ । ‘पणगं पुण काऊए’ कापोत लेश्यामें पाँच ही संक्रमस्थान होते हैं, क्योंकि पीछे जो छह संक्रमस्थान



परस्मिद्भूगणसु पात्रीसाण बरिष्मावन्मणाणे । कुटो बुण तत्त तत्त्वहिष्मावो । न,  
सुरविलेस्साविसयस्य तस्य तदण्णत्थ उचिचिरोहादो । एवं णील्लेस्साए ण्हिष्मतेस्साए  
व वत्तप, विसमाभावाणे । एवं सस्सामभावाए सकमद्वाभाणुगमो समघो ॥१८॥

१३०४ 'अथगयवेद-अनुसय०' यसा गाहा वेदमग्गणाण सकमद्वाणमियथा-  
परस्मिद्भूगणमाया । एत्थ अद्दतरसादीणमवगदवेदादीहि जहासत्तमहिंसंभो कयम्मो ।  
हृणो एद्द णम्बद् ? 'आणुपुम्बीण' इदि सुत्तवयणाणे । तत्तभावगदवेदजोवम्मि अद्दतर-  
सकमद्वाणाणि ममपंति मत्तात्रीसादीणं पंचण्ह एय सुण्णद्वाणत्तोवपसादो—२७, २६,  
२५, २३, २० । तणे यत्तापि मोत्तूण सुसात्थमवगदवेदमग्गणाण समघो पि  
तेमिमिमो णिरेसा करदे—एउवासमत्तकम्मिजोवसांमगो पुत्तिसवैणेदण्ण सत्तिमाग्गी  
अणियद्विद्वाणम्मि सामस्सासंकमगो होऊण कमण णउस-इत्थिवेद-उण्णोवसायाणमुव

वत्तत्थ क्वाय हे वत्तमेमे यारिस प्रकृतिक संक्रमस्थान कायेत क्वायामे मही पया क्वाय ।  
पंच—यारिस प्रकृतिक संक्रमस्थान कायेत क्वायामे कयो मही पावा क्वाय ।  
ममाधान—मही कयोकि कांसप्रकृतिक संक्रमस्थान तीन गुण सरवाभोके सरवाभमे  
ही होवा ह इमत्तिये वमयी अण्य सरवाभोके एत हुए प्रकृति मानन्ती तिरोप क्वाय हे ।  
इमी अथर वीजतेरया और कृष्णरुदयामे भी वत्त पाँच संक्रमस्थान दाठ हैं एसा क्वात  
क्वात वादिय कयोकि क्वातगतवरासे इन वानो सरवाभोके वत्तियपक क्वाे तिरोपय मही हे ।  
विद्युत्पार्य—एकरुदया आरम्भक अथार गुणस्थानोमे ही सम्भव हे इमत्तिय इसमे सब  
संक्रमस्थान वत्तत्थवे हैं । अथरुदया और वीजतेरया आरम्भके साथ गुणस्थानो तक ही सम्भव हे  
इत्थु इन साथ गुणस्थानोमे २० २१ २२ २३ और २४ व वत्त संक्रमस्थान ही सम्भव हे,  
इमत्तिय इन सरवाभोमे व वत्त संक्रमस्थान क्वाकव हे । अथ एही तीन करुण सरवाए सा एक तो  
वे आरम्भक अथ गुणस्थानो तक ही पाव जानी हे और दूसरे इमके सम्भवमे दर्शनमोहनीयकी  
एतत्थ सम्भव नहीं ह, इमत्तिय इन तीन सरवाभोमे १२ प्रकृतिक संक्रमस्थानके सिवा २० १६, १५,  
२३ और ११ व पाँच संक्रमस्थान क्वाकव हे ।

इम अथर सन्वायानामे संक्रमस्थानेक विचार समान हुआ ॥१८॥

१३ 'अथगयवेद-अनुसय वद् गाहा बहमागणामे संक्रमस्थानोके वत्तियपक क्वात  
क्वातके तिप क्वाे हे । यहाँ पर अथाए अरि परोप अथगयवेद अरि परोप साथ वत्तमे  
मम्बव्य क्वात वादिय ।

पंच—पर वीमे क्वात क्वाय हे ।

ममाधान—मूत्रमे क्वाय हुए 'आनुपूर्वी' इम वचको क्वाय क्वाय हे । वत्तमेमे अथार-  
वही जीवके अथार संक्रमस्थान मम्बव हे कयोकि यहाँ मत्तारम अरि पाँच स्थान मही हाव एसा  
अणमद्य वरदा हे । व पाँच 'एवस्थान व हैं—१० १६ २१ २३ और ११ । पक्क इन पाँच संक्रम  
स्थानोके सिवा दोर सब संक्रमस्थान अथारवेदमागणामे मम्बव हे अण वहाँ क्वात तिरोप  
क्वात हैं—अ वीरव मत्तियेकी मणाघाण वारवक जीव पुत्तवेरुड वत्तमे अरि वर क्वाय  
हे वर अरिनिवाह गुणस्थानमे वत्तअथर क्वाे क्वायमेवत्तके संक्रमस्थान क्वाय वर क्वाय

१. वा प्रते संक्रम ( ५ ) का प्रते संक्रमते ही क्वा ।

सामणाए परिणदो अवगटवेदत्तमुवणमिय चोदसण्हं संकामगो होइ १ । पुणो पुरिसवेद-  
णवक्कवंधमुवसामिय तेरसण्हं संकामयत्तमुवगओ २ दुविहकोहोवसामणाए एकारस-  
संकामयत्तं पडिवण्णो ३ कोहसंजलणोवसामणवावारेण दसण्हं संकामयत्तमणुपालिय ४  
दुविहमाणोवसामणाए परिणमिय अट्टण्हं संकामयभावमुवगओ ५ माणसंजलणोवसामणाए  
सत्तण्हं संकामओ होऊण ६ दुविहमायमुवसामिय पंचण्हं संकमस्स सामिओ जादो ७ ।  
पुणो मायासंजलणोवसामणाणंतरं चउण्हं संकामयत्तमुवणमिय ८ दुविहलोहोवसामणा-  
वावदो टोण्हं संकामओ जायदे ९ । एवमेदाणि णव्वंसंकमट्टाणाणि पुरिसवेदोदइल्ल-  
चउवीससंतकम्मियमस्सियुणावगयवेदट्टाणम्मि लब्भंति ।

§ ३०५. संपहि इगित्रीसमंतकम्मिओवसामगस्स पुरिसवेदोदएण सेटिं चट्ठिदस्स  
आणुपुञ्चीमंकमाणंतरमुवसामिदणवुंसय-इत्थिवेद-छण्णोकरसायस्स वारससंकमट्टाणमवगद-  
वेदपडिवट्टमुप्पज्जइ । पुणो दुविहकोह-दुविहमाण-दुविहमायापयडीणमुवसामणपज्जाएण  
परिणदस्स जहाकमं णवण्हं छण्ण तिण्हं मकमट्टाणाणि ममुप्पज्जंति । एवमेदाणि  
चत्तारि चैव संकमट्टाणाणि एत्थ लब्भंति, सेसाणं पुणरुत्तभावदंसणादो । एदाणि  
पुञ्चिल्लेहि सह मेलाविदाणि तेरस संकमट्टाणाणि होति । पुणो तस्सेव णउंगयवेदोदएण  
सेटिं चट्ठिदस्स आणुपुञ्चीमंकमाणंतरमुवसामिद-णवुंसय-इत्थिवेदस्स वेदपरिणामविरहेणाव-

क्रमसे नपु सकवेद, स्त्रीवेद और छह नोकपायोका उपशम करनेके बाद अपगतवेदी होकर चौदह  
प्रकृतियोंका संकामक होता है १ । फिर पुरुषवेदके नयकवन्धका उपशम करके तेरह प्रकृतियोंका  
सकामक होता है २ । फिर दो प्रकारके क्रोधका उपशम हो जाने पर ग्यारह प्रकृतिक संकमस्थान-  
को प्राप्त होता है ३ । फिर क्रोधसंज्वलनके उपशमन द्वारा दस प्रकृतिक संकमस्थानको प्राप्त करके ४  
दो प्रकारके मानका उपशम करके आठ प्रकृतिक संकमस्थानको प्राप्त होता है ५ । फिर मान-  
संज्वलनका उपशम हो जाने पर सात प्रकृतिक संकमस्थानको प्राप्त करके ६ अनन्तर दो प्रकारकी  
मायाको उपशमा कर पाँच प्रकृतिक संकमस्थानका स्वामी होता है ७ । फिर माया संज्वलनके  
उपशमानेके बाद चार प्रकृतिक संकमस्थानको प्राप्त करके ८ अनन्तर दो प्रकारके लाभका उपशम  
हो जाने पर दो प्रकृतियोंका संकामक होता है ९ । इस प्रकार जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला  
जीव पुरुषवेदके उदयसे उपशमश्रेणि पर चढ़ कर अपगतवेदी होता है उसके अपगतवेदस्थानमें  
ये नौ संकमस्थान प्राप्त होते हैं ।

§ ३०५. अब पुरुषवेदके उदयसे श्रेणिपर चढ़े हुए इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक  
जीवके आनुपूर्वी संकमके बाद नपुसकवेद, स्त्रीवेद और छह नोकपायोका उपशम हो जाने पर  
अपगतवेदसे सम्बन्ध रखनेवाला बारह प्रकृतिक संकमस्थान उत्पन्न होता है । फिर दो प्रकारके  
क्रोध, दो प्रकारके मान और दो प्रकारकी माया इन प्रकृतियोंके उपशमभावसे परिणत हुए जीवके  
क्रमसे नौ, छह और तीन प्रकृतिक संकमस्थान उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार यहा ये चार ही संकम-  
स्थान प्राप्त होते हैं, क्योंकि शेष संकमस्थान पुनरुक्त देखे जाते हैं । इन चारको पहलेके नौ संकम-  
स्थानोंमें मिला देनेपर तेरह संकमस्थान होते हैं । फिर जब यही नपुसकवेदके उदयसे श्रेणिपर  
चढ़कर आनुपूर्वीसंकमके बाद नपुसकवेद और स्त्रीवेदका उपशम करके वेदपरिणामसे रहित होकर

गदवेदमानसुवगपस्त सक्रमद्वारसपमडिपडिबद्धमेकक येव पुणरुचमानविरिदिसुबलम्भ, एचो उवरिमाणं पुणरुचमावर्दसणादो । एदस्त येव सेदीदो ओदरमाणपस्त बारसकसाय-सचगोकसायाणमोककड्डाणावावदस्त पयदमग्नाणिसयमेगूणवीससक्रमद्वानमपुणरुच-सुप्पन्जदे, सभेदेसि दोणं सक्रमद्वानाण पुम्बिल्लहि सइ मेल्लो कद पण्णारस सक्रम द्वाणाणि होति । एव येव ञ्जुसयवेदोदयसइगदचउवीससतकम्मियस्त वि चडणोव यरजवावदस्त दोणमपुणरुचसंक्रमद्वानाणसुप्पची वचन्वा, तस्य जहाकम पुम्बुषपेसु बीसकवीसाणमग्गदवेदसचण ससुप्पन्जवाचसुबलमादो । एदाप्य पुम्बिल्लसंक्रमद्वानाण-सुवरि पक्खेवे कदे सचारससक्रमद्वानाणि पयदविसए लद्धाणि भवंति । सुवगस्त वि पुरिस-णुसयवेदोदयसस चउकदसगप्पहुडोणि अवगदवेयसक्रमद्वानाणि पुणरुचाणि येव ससुप्पन्जमिति । अवरि सव्वपच्छिममेक्खित्से सक्रमद्वानमपुणरुचसुबलम्भद । तदो एदं सइ अद्वारससक्रमद्वानाणि अवगदवेदवीवपडिबद्धाणि भवंति ।

१३०६ सपहि ञ्जुसयवेदमग्नाणं णव सक्रमद्वानाणि होति ति विदिओ सुचावयवो । तस्य सचावीसादीणि इगिबीसपञ्जताणि च सक्रमद्वानाणि सदीदो हेहा येव णिरुदवेदोदयमि लम्भति । इगिबीससतकम्मियोवसामगस्त आणुप्पुम्बीसक्रम-मस्सियुण बीससक्रमद्वानमेत्थोवलम्भदे । पुणो ञ्जुसयवेदोदयस सेदिमासुदस्त सुवगस्त अद्वकसायकसचणेण तेरससक्रमद्वानसुबलम्भ । सस्सेवाणुप्पुम्बीसक्रमपरिणदस्त

अपगतवर्षमात्रे प्राप्त हो जाता है तब इसके मात्र अठारह मूलिक संक्रमस्थान अपुनरुच वपञ्चम होता है क्योंकि इससे अगले संक्रमस्थान पुनरुच वेस होते हैं । तथा जब यही बीस भेषिसे चतरते समय बारह कपाय और सात नोक्यायोच अपकर्षण कर लेता है तब इसके बहुत मार्ग्याच विरगयुत अपुनरुच बीस मूलिक संक्रमस्थान उत्पन्न होता है । अतः इन दो संक्रम स्थानोंके पूर्वोक्त तैर संक्रमस्थानोंमें मिश्रण पर पञ्च संक्रमस्थान होते हैं । तथा इसी प्रकार नपु सकवेदके वदके साथ बीस मूलिकोंकी सत्प्राप्त बीसके भी चहुते और चरत समय हो अपुनरुच स्थानोंकी उत्पत्ति कइनी चाडिबे क्योंकि यह पर अगसे पूर्वोक्त स्थानोंमें अपगतवेदके सगमसे बीस मूलिक और इवीस मूलिक व हो स्थान उत्पन्न होते हुए वपञ्चम होते हैं । इन स्थानोंके पूर्वोक्त संक्रमस्थानोंमें मिश्रण इन पर मूल विरपमें सच संक्रमस्थान उत्पन्न होते हैं । पुरुवर और नपु सकवेदके वदवपञ्चम चरक जोडके भी अगतवेद सम्पन्नी क्रमसे चार आदि और इस आदि संक्रमस्थान पुनरुच ही उत्पन्न होते हैं । किन्तु इतनी विरोधा है कि सबके अन्तमें एक मूलिक संक्रमस्थान अपुनरुच उत्पन्न होता है । इसलिये इसके साथ अपगतवेदी बीससे सम्पन्न रत्तमेरात्रे अठारह संक्रमस्थान होते हैं ।

१३१ जब नपु सकवेद मार्ग्यामें भी संक्रमस्थान होते हैं इस आशयके सूत्रके दूसरे चरुचम व्याख्यान करत हैं—अन भौमसे मणार्ससे लेकर इवीस तकके व संक्रमस्थान दो भेषि पर नहीं चइनेके पूर्व ही बहुत वदके उपरमें प्राप्त होत हैं । तथा इवीस मूलिकोंकी सत्प्राप्त वपञ्चम बीसके आनुपूर्वी संक्रमके आशयसे बीस मूलिक संक्रमस्थान भी यह पाया जाता है । फिर नपुमकवेदके वदवस भेषिपर चहुँ हुए चरक बीसके आठ कपायोच सब व जानेसे तैर

त्रागमसंक्रमद्वानमुपपञ्जइ । एवं पयदमग्गणाविसए णव णेव मंक्रमद्वानाणि होंति त्ति सिद्धं—२७, २६, २५, २३, २२, २१, २०, १३, १२ । सेमाणमेत्थ संभवो णत्थि ।

§ ३०७. इत्थिवेदम्मि एकारसमक्रमद्वानाणि होंति त्ति तद्वियं मुत्तावयवं-मस्सियूण संक्रमद्वानाणमेवं चैव परुवणा कायच्चा । णवरि णवुंसयवेदपड्विद्वणव-मक्रमद्वानाणमुवरि एग्गणवीसेकारससक्रमद्वानाणमहियाणमुवलंभो वत्तच्चो, इगिवीस-संतकम्मिओवसामग-उवगोसु णिरुद्ववेदोदएण णवुंसयवेदोवसामण-उवणपरिणदेसु जहाकमं तदुवलभादो । पुरिमवेदोदयम्मि तेरससंक्रमद्वानाण परुवयस्स चउत्थसुत्ता-वयवस्स वि परुवणाए एसो चैव कमो । णवरि दोण्हमपुव्वसंक्रमद्वानाणमुवलंभो एत्थ वत्तच्चो, इगिवीससतकम्मियोवसामग-उवगोसु पयदवेदोदएणित्थिवेदोवसामण-उवण-वावदेसु जहाकममद्वारस-उमसक्रमद्वानाणं एत्थ संभवोवलभादो ॥१९॥

§ ३०८. एवं वेदमग्गणाए संक्रमद्वानाणमणुगमं काऊण संपहि कसायमग्गणा-विसए तदणुगमं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—‘कोहादी उवजोगे०’ एत्थ कोहादी उवजोगे त्ति वयणेण कमायमग्गणाए मंक्रमद्वानाणं परुवणं कस्सामो त्ति पड्ज्जा

प्रकृतिक सक्रमस्थान प्राप्त होता है । तथा उसीके श्रानुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ हो जानेपर चारह प्रकृतिक संक्रमस्थान प्राप्त होता है । इस प्रकार प्रकृत मार्गणामे नो ही सक्रमस्थान होते हैं यह वात सिद्ध होती है - २७, २६ २१, २३, २२, २१, २०, १३ और १२ । शेष संक्रमस्थान यहाँपर सभर नहीं हैं ।

§ ३०७ स्त्रीवेदमें ग्यारह संक्रमस्थान होते हैं इस तीसरे सूत्र वचनके आश्रयसे सक्रम-स्थानोंका पूर्वोक्त प्रकारसे ही कथन करना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदसे सम्बन्ध रखनेवाले नौ सक्रमस्थानोंके साथ स्त्रीवेदमें उन्नीस और ग्यारह प्रकृतिक ये दो संक्रम-स्थान अधिक उपलब्ध होते हैं ऐसा कहना चाहिये, क्योंकि इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक और क्षपक जीवोंके नपुंसकवेदका उपशम और क्षय हो जानेपर विवक्षित वेदके उदयके साथ क्रमसे उक्त दोनों स्थान उपलब्ध होते हैं । पुरुषवेदके उदयमे तेरह सक्रमस्थानोंका कथन करनेवाले सूत्रके चौथे चरणकी प्ररूपणामे भी यही क्रम जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि दो नये सक्रमस्थानोंका सद्भाव यहापर कहना चाहिये, क्योंकि इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जो उपशामक या क्षपक जीव प्रकृत वेदका उदय रहते हुए रत्रीवेदकी उपशामना या क्षपणा करता है उसके यहा पर क्रमसे अठारह और दस प्रकृतिक ये दो सक्रमस्थान उपलब्ध होते हैं ॥१६॥

विशेषार्थ—इस उन्नीसवीं गाथा द्वारा वेद मार्गणाकी श्रपेक्षा विचार करते हुए श्रपगतवेद, नपुंसकवेद, स्त्रीवेद और पुरुषवेदमें कहा कितने सक्रमस्थान होते हैं इसका स्पष्ट निर्देश किया है । विशेष खुलासा टीकामें आ चुका है, इसलिये इस विषयमें और अधिक नहीं लिखा जाता है ।

§ ३०८ इस प्रकार वेदमार्गणामे सक्रमस्थानोंका विचार करके श्रव कपाय मार्गणामें उनका विचार करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—‘कोहादी उवजोगे०’ यहाँ सूत्रमें श्राये हुए ‘कोहादी उवजोगे०’ वचन द्वारा कपायमार्गणामे सक्रमस्थानोंका कथन करेंगे यह प्रतिज्ञा की गई है । इस

कया । एवं पक्ष्ण क्खण कोहादिस्स चतुस्स कसायस्स परिवाहीए सक्कमहाण्णवेसणा  
 क्खेरे । एत्थं अहासत्थपाण्णहिस्समभो कायम्भो चि जाणावण्णमाप्पुम्भीए चि उत्तं ।  
 स अहा—कोहकसायम्मि सोलस सक्कमहाणाणि होति, माणकसायोदयम्मि ऊणवीस  
 सक्कमहाणाणि मवति, ससेस्स दोस्सु वि कमाओवज्जोगेस्सु पादक्क तेवीससक्कमहाणाणि  
 मवति चि । तत्थ ताव कोहकसायम्मि सोलसण्ह सक्कमहाणाण समभो उच्चदे ।  
 त अहा—सत्तावीसादीणि इग्गिबीसपज्जताणि सक्कमहाणाणि सेट्ठोदो ह्हा अब्ब मिच्छइत्ति-  
 आदिगुण्णहाणेस्सु अहासमव्वं लम्भति । पुम्भो चउवीससत्तक्कम्मियोवसामगस्स कोह  
 कमायोदएण उवसमसद्धिं च्चिददस्स तवीस-वावीस-इग्गिबीससक्कमहाणाणि पुणरुत्ताणि  
 होदण पुणो बीस-चोदस-सुरससक्कमहाणाणि लम्भति जाण्णाणि, कोहकसायम्मि  
 गिरुद्धे एत्थो उवरिमाणमसमवादो । इग्गिबीससत्तक्कम्मियोवसामगमस्सियुण पुण एग्ग-  
 वासट्ठारस-मारसत्तारमसक्कमहाणाणि लम्भति, हेत्तिमाभं पुणरुत्ताणमसगहादो । उवरिमाण  
 च गिरुद्धकसायोदयम्मि समवामावाओ । खवगस्स वि गिरुद्धकसायोदइत्तलस दस  
 चउक्क-तियमंक्कमहाणाणि अप्पुत्तरुत्ताणि लम्भति, हेत्तिमोवरिमाण पुलुत्तण्णाएण बहिम्भाव  
 इत्थण दो । एवमेदाणि सोलम सक्कमहाणाणि कोहकसायम्मि लम्भति चि सिद्ध—

प्रकारकी मतिज्ञा करके कोषादि चार कयायोत्रे कससे संकमस्त्वानेछ विचार कए है । यहा  
 पक्षादक्य, ग्यायके अनुमार पत्रोअ संग्रन्ध करना चाडिये बह बचालेके द्विजे सूत्रमें 'अनुपूर्वी' पद  
 कया है । सुत्रासा इस प्रकार है—कोष कयायमें सोअ संकमस्त्वान होये हैं मान कयायके उव्वमें  
 कनीस संकमस्त्वान होये हैं तना सेय दो कयायोके सत्राणमें भी मत्थेकमें केस संकमस्त्वान होये हैं ।  
 यत्र सर्वप्रथम कोष कयायमें सोअ संकमस्त्वानोअ सत्राव बउत्तए है । यद्य—सत्तावसे लेकर  
 इक्कीस तक जितने भी संकमस्त्वान हैं वे जेणि चउनेइ पूर्व ही मिच्छाएट्टि आदि गुणस्त्वानोमें  
 यत्तसंग्रह पाये जाते हैं । फिर जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाअ अग्रप्रथमक बीस कोष  
 कयायके उव्वयसे उपरमसेणि पर चडा है उसके यत्तनि केस चारैस और इक्कीस प्रकृतिक तीन  
 संकमस्त्वान पुनरुत्त हांत हैं तयानि बीस चौबह और केरह वे तीन संकमस्त्वान अनुनरुत्त प्राप्त  
 होत हैं । इसके इनके अतिरिक्त अग्य संकमस्त्वान महीं प्राप्त होत क्योंकि कोष कयायके उव्वे  
 हुय इससे आगेके स्थानोअ पाया जाना सम्भव नहीं है । इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाअ अग्रप्रथमके  
 आग्रप्रथम मात्र कनीस अत्राए चारह और ग्याह प्रकृतिक चार संकमस्त्वान प्राप्त होते हैं क्योंकि  
 इनसे पूर्वके संकमस्त्वान पुनरुत्त होमसे उनका यहाँपर संघट्ट नहीं किया गया है । और ग्याह  
 प्रकृतिक संकमस्त्वानसे आगेके संकमस्त्वान विचलित कयायके उव्वमें संग्रह नहीं हैं । इसी प्रकार  
 चउके भी विचलित कयायका उव्व उव्व हुय दस चार और तीन प्रकृतिक अनुनरुत्त संकमस्त्वान  
 प्राप्त हात हैं क्योंकि पूर्वोक्त म्यायके अनुसार नीचे और ऊपरके संकमस्त्वानोअ संघट्ट न करके  
 उन्हें अज्ञात कर दिया है । अर्थात् दस प्रकृतिक संकमस्त्वानसे पूर्वके जितन संकमस्त्वान यहाँ  
 सम्भव हैं वे ता पुनरुत्त समझ कर जोड़ दिव गये हैं और तीन प्रकृतिक संकमस्त्वानसे आगेके  
 संकमस्त्वानोअ यहाँ यथा ज्ञाना सम्भव न होमसे उन्हें जोड़ दिया है । इस प्रकार कोषकयायमें

२७, २६, २५, २३, २२, २१, २०, १०, १८, १४, १३, १२, ११, १०, ४, ३ ।

§ ३०९. माणकसायोदए वि एदाणि चैव णवट्ट-दोपयडिसंकमट्टाणव्महियाणि एगूणवीसमंसाविसेसियाणि ढोंति, इगिवीसमंतकम्मियोवसामगम्मि दुविह[कोह]-कोह संजलणोवसामणपरिणदम्मि जहाकमं माणोदएण मह णवट्टपयडिसंकमट्टाणोवलंभादो । खवगस्म च कोहसजलणपरिक्खएण दोण्हं पयडीणं सकंतिदसणादो । एवं माणकसायो-दयम्मि एगूणवीसमंकमट्टाणाणि ढोंति ण सेसाणि, तेसिमेत्थ सुण्णट्टाणत्तोवएमादो । सेसकमाएसु दोसु वि पादेक्कं तेवीस संक्रमट्टाणाणि ढोंति, तेगि तत्थ संभवे विरोहा-भावादो । एत्थाकसाईसु संक्रमट्टाणमेक्कं चैव लुभदे, चउवीससंतकम्मियोवसामगस्स उवमंतकसायगुणट्टाणम्मि दोण्हं पयडीणं संक्रमोवलभादो ॥२०॥

§ ३१०. एवं कसायमग्गणं समाणिय णाणमग्गणागयविसेसपदुप्पायणट्टमुत्तर-मुत्तमाह—‘णाणम्मि य तेवीसा०’ एत्थ तिविहणाणमग्गणेण मदि-सुदोहिणाणाणं मंगहो कायव्वो, तेवीससंकमट्टाणाहाराणमण्णेसिममंभवादो’ । कथमेत्थ णवुवीस-संकमट्टाणसंभवो त्ति णामकियव्वं, सम्मामिच्छाडडिम्मि तदुवलंभमंभवादो । कथं

ये सोलह सक्रमस्थान प्राप्त होते हैं यह निम्न होता है—२७, २६, २५, २३, २२, २१, २०, १९, १८, १४, १३, १२, ११, १०, ४ और ३ ।

§ ३०९ मान कपायने उदयमे भी सोलह तो ये ही तथा नो, आठ और दो प्रकृतिक तीन और इस प्रकार कुल उन्नीस संक्रमस्थान होते हैं, क्योंकि जो द्रक्कीम प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशामक जीव दो प्रकारके क्रोध और क्रोधसञ्चलनका उपशम कर देता है उसके क्रमसे मान-कपायका उदय रहते हुए नौ प्रकृतिक और आठ प्रकृतिक ये दो संक्रमस्थान पाये जाते हैं । तथा क्षपकके क्रोधसञ्चलनका क्षय हो जानेपर दो प्रकृतिक संक्रमस्थान देखा जाता है । उस प्रकार मानकपायका उदय रहते हुए केवल उन्नीस संक्रमस्थान होते हैं शेष संक्रमस्थान नहीं होते, क्योंकि यहाँ उनका अभाव देखा जाता है ऐसा उपदेश है । शेष दो कपायोंके सञ्जावमे भी प्रत्येकमे तेईस संक्रमस्थान होते हैं, क्योंकि उनके वहाँ होनेमें कोई विरोध नहीं आता है । यहाँ पर कपाय रहित जीवोंके संक्रमस्थान एक ही उपलब्ध होता है, क्योंकि चाचीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक जीवके उपशान्तकपाय गुणस्थानमें केवल दो प्रकृतियोंका संक्रम पाया जाता है ॥२०॥

§ ३१०. इस प्रकार कपायमार्गणाका कथन समाप्त करके अब ज्ञानमार्गणा सन्वन्धी विशेषताका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—‘णाणम्मि य तेवीसा०’ इस गाथा सूत्रमे तीन प्रकारके ज्ञानका महण करनेसे मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान इन तीन ज्ञानोंका समग्र करना चाहिये, क्योंकि तेईस संक्रमस्थानोंका आधार अन्य ज्ञान नहीं हो सकते ।

शंका—इन तीन ज्ञानोंमें पचीस प्रकृतिक संक्रमस्थान कैसे सम्भव है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि सग्यग्निध्यादृष्टि गुणस्थानमें उसकी वपलब्धि होती है ।

मिम्मणाणम्म सण्णाणत्तम्माओ ? ण, अमुद्वेणयाहिप्पाएण तस्स तदत्तम्मावविगेहा-  
 भावादो । क्वमोहिणाणम्मि पडममम्मत्तगगइणपत्तमसमयल्लूप्पमरूबस्स छम्बीस  
 संक्रमणाणस्स समओ ? ण एस दोसो, दव-गेरएसु तगगइणपत्तमसमए खव तण्णाणस्स  
 मन्तोवत्तममववादो । 'एकम्मि एकवीसा य' एकम्मि मणपज्जवणाणे एकवीसित्ता-  
 वञ्जिण्णाणि सकमट्ठाणाणि होति, तत्थ पणुवीस-छम्बीसाणमत्तमवादो । 'अण्णाणम्मि  
 य तिविह पवेव य सकमट्ठाणा ।' कुट्ठो ? तत्थ सत्तावीसादीणमिगिगीसपज्जत्तसकमट्ठाणाणं  
 धावीमवहिम्मावेण पधमत्तावहारियाणं ससुबलमादो । एत्थ चत्तु-अचत्तु-ओहि  
 इत्तणिसु पुच परूवणा ण क्वा, तत्तिसोचपरूवणादो भेदामत्तादो मदि-सुदोहिणाण-  
 पम्बणाहि वेव गयत्तयादो वा । तदो तत्थ पादक्क तवीसमकमट्ठाणसंमओ  
 अणुगतथो ॥२१॥

§ ३११ एव आणमग्गण संगतोमाविददसणाणुवाद् परिसमाणिय संपहि  
 भवियाहारमग्गणासु सकमट्ठाणगवेसपहुत्तरं गाहासुचमोदण्य—'आहारय-भविणसु य०'  
 आहारमग्गणाण भवियमग्गणाए च तेषीस सकमट्ठाणाणि भवति, सम्भेसि तत्थ समवे

शुद्ध—मिष्णानञ्च सम्यग्ज्ञानं अन्तर्भाव कैसे हा सक्य ह ।

समाधान—नही क्योंकि अशुद्ध नयके अमिषायसे मिष्णानञ्च सम्यग्ज्ञानं अन्तर्भाव  
 करनेमें कोई शिरोप नहीं आता है ।

शुद्ध—प्रथम सम्प्रकरणे प्राप्त होनेके प्रथम समर्थमें प्राप्त होनेवाला प्रकृतिक  
 संक्रमस्थान अविज्ञानमें कैसे सम्भव है ?

समाधान—यह कोई शिरोप नहीं है, क्योंकि देव और नारदियोंमें प्रथम सम्यक्त्वको प्राप्त  
 करनेके प्रथम समर्थमें ही अविज्ञानकी स्वरूप प्राप्ति सम्भव है और इसीसे अविज्ञानमें प्रकृतिक  
 संक्रमस्थान बन जाता है ।

एकम्मि एकवीसा य एक मन्तपर्ययज्ञानमें इषीस संक्रमस्थान होते हैं क्योंकि इसमें  
 वहीम और दर्पणस प्रकृतिक संक्रमस्थान सम्भव नहीं है । तथा 'अण्णाणम्मि य तिविह पवेव  
 य संक्रमणाणा तीन प्रकारके कथानोंमें पांच ही संक्रमस्थान होते हैं, क्योंकि वहाँ कईसके विन्य  
 सत्कार्त्तस सेकर इषीस तक पांच ही संक्रमस्थान पाये जाते हैं । पहार चत्तुर्त्तन, अचत्तुर्त्तन  
 और अविहरत्तनमें अज्ञानमें प्रकृतिक नहीं की है, क्योंकि इनके अन्तर्में जोय अन्तर्में कोई भेद  
 नहीं क्या आता । अज्ञान मतिज्ञान कृतज्ञान और अविज्ञानकी प्रकृतिक प्राप्त ही इनमें किन्ने  
 संक्रमस्थान हल है इसका ज्ञान हो जाता है, अतएव इन तीन दर्तनोंमेंसे प्रत्यहमें सर्वस  
 संक्रमस्थान सम्भव है यह जान लेना चाहिये ।

§ ३११ इममएर ज्ञानमार्गण और जत्तमें गर्हित दर्तमार्गणाके अन्तर्में समाप्त करके  
 अब भाव्य और आहार भागमार्गणोंमें संक्रमस्थानोंका विचार करनेके लिये आगाम्य गासगूत्र करते  
 हैं—'आहारव-भविणसु य आहारमागला और मध्यमार्गणामे त्थम संक्रमस्थान हावे हैं

१ हा -का प्रथम दशुद्ध- इति वाट । २ आ गतो -अन्तर् अविज्ञानसंक्रमणापरि  
 र्त्त वाट । ३ हा गतो वत्तयादो इति वाट ।

विरोहाभावादे । 'अणाहारणसु पचेव संक्रमट्टाणाणि होंति, सत्तावीसादीणमिगिगीस-  
पज्जंताण' चेव वावीसवज्जाण तत्थ मंभवोवलंभादे । 'एयट्टाणं अभविणसु' । कुदो ?  
पणुवीससंक्रमट्टाणस्सेकस्सेव तत्थ मंभवट्टसणादे ॥२२॥

१३१२. एवमेत्तिएण पवधेण मग्गणाट्टाणेषु संक्रमट्टाणाण गवेसणं कादूण  
संपहि तेसु चेव सुण्णट्टाणपरूवणं कुणमाणो सेसमग्गणाणं देसामामयभावेण वेद-  
कसायमग्गणासु तापरूवणट्टमुवग्गिं गाहासुत्तपवंधमाह—'छव्वीस सत्तवीसा' २६, २७,  
२८, २३, २२ एवमेदाणि पंच सक्रमट्टाणाणि अवगदवेदविसए ण संभवति । तदो  
एदाणि तत्थ सुण्णट्टाणाणि त्ति घेत्तव्वणि, जत्थ जं संक्रमट्टाणमसभवड तत्थ तस्स  
सुण्णट्टाणववएसावलवणादो ॥२३॥

१३१३. 'उणुवीसट्टारसग' १०, १८, १४, ११, १०, ९, ८, ७, ६, ५, ४,  
३, २, १ एवमेदाणि चोदम सक्रमट्टाणाणि' णवुंसयवेदे सुण्णट्टाणाणि होंति त्ति  
सुत्तत्थसंगहो । सेस सुगमं ॥२४॥

१३१४. 'अट्टारस चोदसग' १८, १४, १०, ९, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २, १  
एवमेदाणि वारस संक्रमट्टाणाणि इत्थिवेदविसए सुण्णट्टाणाणि होंति त्ति भणिटं होड ।

क्योंकि इन मार्गणाओंमें स्व संक्रमस्थानोंके पाये जानेमें कोई विरोध नहीं आता । अनाहारकमें  
पाच ही संक्रमस्थान होते हैं, क्योंकि यहापर वार्सके सिवा सत्ताईससे लेकर इक्कीस पर्यन्त पाच  
संक्रमस्थान ही उपलब्ध होते हैं । तथा 'एगट्टाण अभविणसु' अभव्योंके एक संक्रमस्थान होता है,  
क्योंकि इनमें एक पचीस प्रकृतिक संक्रमस्थान ही देखा जाता है ॥२२॥

१३१२ इसप्रकार इतने कथन द्वारा मार्गणास्थानोंमें संक्रमस्थानोंका विचार करके अब  
उन्हीं मार्गणाओंमें अन्यस्थानोंका कथन करनेकी इच्छासे यत्त वेद और वपाय मार्गणा शेष  
मार्गणाओंके देशामर्षकरूपमें ग्रहण की गई हैं, अत उन्हीं मार्गणाओंमें शून्य स्थानोंका कथन  
करनेके लिये आगेका गाथासूत्र कहते हैं—'छव्वीस सत्तवीसा' अपगतवेदमें २६, २७, २५, २३  
और २२ ये पाच संक्रमस्थान सम्भव नहीं हैं, इसलिये ये वहा शून्य स्थानरूप जानने चाहिये,  
क्योंकि जहां जो संक्रमस्थान असम्भव होता है वहा उसे शून्यस्थान सजा दी गई है । आशय यह  
है कि ये पाच संक्रमस्थान वेदवाले जीवके ही पाये जाते हैं इसलिये अपगतवेदमें इनका अभाव  
बतलाया है ॥२३॥

१३१३ उणुवीसट्टारसग' १९, १८, १४, ११, १०, ९, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २ और १ इस  
प्रकार ये चौदह संक्रमस्थान नपु संक्रमस्थान हैं यह इस सूत्रका तात्पर्य है । शेष कथन  
सुगम है । आशय यह है कि नपुसंक्रमस्थानोंमें २० प्रकृतिक संक्रमस्थान तकके सब और १३ तथा १२  
प्रकृतिक ये दो इस प्रकार कुल नौ संक्रमस्थान ही पाये जाते हैं शेष नहीं, इसलिये शेषका यहा  
निषेध किया है ॥२४॥

१३१४. 'अट्टारस चोदसग' १८, १४, १०, ९, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २ और १ इस प्रकारके  
ये वारह संक्रमस्थान स्त्रीवेदमें शून्यस्थान होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । शेष कथन सुगम



सुगममणं ॥२५॥

§ ३१५. 'चोदसग जवगमादी' १४, ०, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २, १ एवमेदाणि दस संक्रमणाणि उपसामग-खगपडिबद्धाणि पुरिसवेदविसण सुण्णणाणि होंति चि गाहासुत्तवसगहो । सुगममन्यत् ॥२५॥

§ ३१६ 'णव अहु सत्त उक्क' ०, ८, ७, ६, ५, २ १ एवमदाणि सत्त संक्रमणाणि कोहकसायोवजुत्तेसु सुण्णणाणि होंति चि सुत्तयममुत्तओ ॥२७॥

§ ३१७ 'सत्तय उक्क पन्नग य' ७, ६, ५, १ एवमदाणि चत्तारि माण-कसायोवजुत्तेसु सुण्णणाणि होंति चि मणिद होइ । संसदोक्कसाणसु जत्थि एसो विचारो सम्भेसिमव संक्रमणाणं तत्यासुण्णमावदसणादो ॥२८॥

§ ३१८ एवमेदीए दिसाए सेसमग्गणासु वि सुण्णणाणवसणा कायम्भा चि पदुप्पायणहुत्तवरिमगाहासुत्तमाइ—'दिहे सुण्णामुण्णे' के-कसायमग्गणासु सुण्णा-सुण्णणाणपविमागसु पुब्बुत्तफमेण दिहे संते पुणो एदीए दिसाए गदियादिमग्गणासु वि जत्थतत्यामुपुम्बीप संक्रमणाणं सुण्णामुण्णमावगवेसणा कायम्भा चि सुत्तय-सवणो ॥२०॥

हे । आराम यह है कि जीवदमं उग्रमि प्रकृतिकस्थान तकके सब तथा १०, ११ और ११ प्रकृतिक व चीन इसप्रकार दुःख ग्याह संक्रमस्थान तक जात हैं शेष नहीं, इसलिये शेषका यहाँ निषेध किया है ॥२५॥

§ ३१४ 'चोदसग जवगमादी १४ १ ८, ७ ६ ५ ४ ३ २ और १ इस प्रकार व दस संक्रमस्थान पुरिसवेदी उपसामग और खगपडिबद्धे शान्यस्थान होत हैं यह इस गायसूत्रका समुच्च-वार्य है । शेष कवन सुगम है । आराम यह है कि पुरिसवेदमें पन्द्रह प्रकृतिक स्थान तकके सब तथा १३ १२ ११ और १ प्रकृतिक ये चार इस प्रकार दुःख १३ संक्रमस्थान होत हैं शेष नहीं इसलिये शेषका यहाँ निषेध किया है ॥२५॥

§ ३१५ 'णव अहु सत्त उक्क' ०, ८, ७ ६ ५, २ और १ इस प्रकार ये सात संक्रमस्थान का पक्कयायणल जीवमि शान्यस्थान होत हैं यह इस सूत्रका समुच्चवार्य है । आराम यह है कि शेष कपावमें १ प्रकृतिक संक्रमस्थान तकके सब तथा ४ और ३ प्रकृतिक ये दो इस प्रकार दुःख १६ संक्रमस्थान होते हैं शेष नहीं इसलिये शेषका यहाँ निषेध किया है ॥ २७ ॥

§ ३१६ सत्तय उक्क पन्नग य ७ ६ ५ और १ इस प्रकार ये चार संक्रमस्थान मान कपाववाले जीवमि शान्यस्थान होते हैं यह एक कवनका तात्पर्य है । आराम यह है कि म्यानकपावमें इन चारके सिवा शेष सब संक्रमस्थान होत हैं इसलिये यहाँ चार स्थानोंका निषेध किया है । किन्तु शेष दो कपावमें यह विचार नहीं है क्योंकि यहाँ पर सभी संक्रमस्थान अस्त्वयमानसे देख जाते हैं ॥२८॥

§ ३१७ इस प्रकार इसी पदद्विसे शेष मार्गशावर्जों में भी शून्यस्थानोंका विचार कर लेना चाहिये यह दिक्कयनेके लिये जब आगेका गायसूत्र कहते हैं—दिहे सुण्णामुण्णे वद और कपाव मार्गशामें शून्यस्थानों और अशून्यस्थानोंके विभागका पूर्वोक्त क्रमसे विचारकर लेनेके बाद फिर इसी पदद्विसे गति आदि मार्गशावर्जों में भी पदतत्रानुपूर्विके क्रमसे संक्रमस्थानोंके सहाय और असहायका विचार कर लेना चाहिये यह इस सूत्रका अन्तिमार्थ है ॥२९॥

§ ३१०. एवं गदिआदिमगणासु संकमद्वारेणु संभवगवेसणमण्णय-वदिरेगेहिं कादूण संपहि वंध-मंक्रम-संतकर्मद्वारेणुमेग-दुसंजोगकमेण णिरुंभणं कादूण सण्णियास-परुवणदुमुवरिमगाहासुत्तमाह—‘कम्मंसियद्वारेणु य०’ एसा गाहा द्वाणसमु-क्कित्तणाए ओघादेसेहि समुक्कित्तिदाणं संकमद्वारेणु पडिणियदपडिग्गहद्वारेणुपडिवद्वारेणु वंध-मंतद्वारेणु मगणाविहि परुवेदि । एदिस्से अत्थविवरणं कस्सामो । तं जहा—कम्मंसियद्वारेणुणि णाम मंतकर्मद्वारेणुणि । ताणि च मोहणीए अट्टावीस-सत्तावीस-छट्ठीस-चउवीस-तेवीस-वावीसेक्कीवीस-तेरम-वारम-एकारस-पंच-चदुक्क-ति-दु-एक्कपयडि-पडिवद्वारेणु । तेसिमेगा टवणा—२८, २७, २६, २४, २३, २२, २१, १३, १२, ११, ९, ४, ३, २, १ । वधद्वारेणुणि च वावीस-डिगिवीस-सत्तारस-तेरस-णव-पंच-चदुक्क-ति-दु-एक्कसण्णिदाणि २२, २१, १७, १३, ९, ५, ४, ३, २, १ एवमेदाणि पग्गिवाडीए ठविय पादेकमेदेसु सत्तावीमादिमकमद्वारेणु संभवगवेसणा कायव्वा त्ति गाहासुत्तपुव्वद्वे समुचयत्थो । ‘एक्केक्केण समाणय’ एवं भणिदे वंध-संतद्वारेणुसु एक्केक्केण मह ‘समाणय’ मय्यगानुपूर्व्यानयेत्यर्थः । वध-संतद्वारेणुणि पुघ० आधार-भूदाणि द्दुविय तेसु मंक्रमद्वारेणुणि णेदव्वारेणुणि त्ति भावत्थो ।

§ ३२०. तत्थ ताव मंतकर्मद्वारेणुसु मंक्रमद्वारेणु गवेसणा कीरडे । तं कथं ? मिच्छादिद्विस्स वा मग्गादिद्विस्स वा अट्टावीसमतकम्मं होऊण मत्तावीमसंकमो होइ ? ।

§ ३१९. इस प्रकार गति आदि मार्गणाश्रमों में कहीं कितने सकमस्थान सम्भ्रत हैं इसका अन्वय और व्यतिरेक द्वारा विचार करके अत्र बन्धस्थान, सक्रमस्थान और सत्कर्मस्थान इन्हें एकसंयोग और दोसंयोगके क्रममें विवक्षित करके मन्त्रिकर्षका कथन करनेके लिये आगेका गाथासूत्र कइते हैं—कम्मंसियद्वारेणु य’ स्थानममुत्कीर्तना अनुयोगद्वारमं जो सकमस्थान ओघ और आदेशमें कहे गये हैं तथा जो प्रतिनियत प्रतिप्रहस्थानोंसे सम्बन्ध रखते हैं वे बन्धस्थानों और सत्त्वस्थानोंमें कहा कितने होते हैं इस बातका कथन यह गाथा करती है । अत्र इस गाथाके अर्थका व्याख्यान करते हैं । यथा—कमांशिकस्थान यह सत्कर्मस्थानका दूसरा नाम है । वे मोहनीयकर्ममें अट्टाईस, सत्ताईस, छट्ठीस, चौवीस, तेईस, वाईस, इक्कीस, तेरह, वारह, ग्यारह, पाच, चार, तीन, दो और एक इतनी प्रकृतियोंसे प्रति द्व हैं । उनकी आकांक्षा द्वारा यह स्थापना है—२८, २७, २६, २४, २३, २२, २१, १३, १२, ११, ९, ४, ३, २ और १ । और बन्धस्थान वाईस, इक्कीस, सत्रह, तेरह, नौ, पाच, चार, तीन, दो और एक प्रकृतिक होते हैं—२०, २१, १७, १३, ९, ५, ४, ३, २ और १ । इस प्रकार इन्हें क्रमसे स्थापित करके इनमेंसे प्रत्येकमें सत्ताईस प्रकृतिक आदि सम्भव सक्रमस्थानोंका विचार करना चाहिये यह इस गाथासूत्रके पूर्वार्धका समुच्चयार्थ है । तथा गाथाके उत्तरार्धमें ‘एक्केक्केण समाणय’ ऐसा कहने पर बन्धस्थानों और सत्त्वस्थानोंमेंसे एक एकके साथ ‘समाणय’ अर्थात् भले प्रकार इस आनुपूर्वीसे बन्धस्थानों और सत्त्वस्थानोंको आधाररूपसे अलग अलग स्थापित करके उनमें संक्रमस्थानोंको जानना चाहिये यह इसका भावार्थ है ।

§ ३२०. उनमेंसे सर्वप्रथम सत्कर्मस्थानोंमें सक्रमस्थानोंका विचार करते हैं । यथा—मिध्यादृष्टि या सम्प्रदृष्टि जीवके अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्ता होकर सत्ताईस प्रकृतियोंका संक्रम

मिथ्यादृष्टिणा सम्मुखेऽन्वयवाच्येण सम्प्रसक्तं समयुजावस्थियमेतगोबुध्यावसेसे कदे  
 अद्वावीससंतैण सह उन्वीससंतकर्मो होइ २ । अद्वावा उन्वीससंतकर्मिण्येण पदमसम्भवे  
 तप्याद् अद्वावीसमतकर्ममाहारं उन्वीससंतकर्मद्वानुप्युत्तम् । अविशब्देऽर्थात्तागुनविना  
 उच्यतेसमम्मादृष्टिणा सामन्यगुणे पटिवर्णने अद्वावीससंतकर्मिण्येण सम्प्रामिच्छते वा  
 पटिवर्णने अद्वावीससंतकर्मसहस्रं पणुवीससंतकर्मद्वानुप्युत्तम् ३ । अणतागुनवी  
 विसंजोय्य सत्त्वमिच्छादृष्टिपदमावस्थियाण् तेषीसपयविसकर्मद्वानुप्युत्तम् अद्वावीससंतकर्मद्वानु-  
 पटिवर्णनमुप्युत्तम् । अद्वावा अणतागुं विसंजोयणापरिमफालि संक्षमियं समयुजावस्थिय-  
 मेतगोबुध्यावसेसे वदुमाणस्त तमेव सकर्मद्वानं तणेव सतकर्मद्वानेवादिद्विदुप्युत्तम् ४ ।  
 अणतागुं विसंजोयणापुरस्तर सासभगुणं पटिवर्णनस्त आबस्थियमचकालमद्वावीस-  
 संतकर्मण सह इगिनीमसकर्मद्वानुप्युत्तम् ५ । एवमेदाणि पच सकर्मद्वानाणि अद्वा-  
 वीससंतकर्मियस्त होति ।

१२२ सपदि सत्तावीसाय उच्यते—अद्वावीससंतकर्मियमिच्छादृष्टिणा सम्भवे  
 उन्वीससंतकर्मं भर्तुं उन्वीससंतकर्मो होइ १ । पुणो तणेव सम्प्रामिच्छत-  
 मुन्वीससंतैण समयुजावस्थियमेतगोबुध्यावसेसे कए सत्तावीससंतकर्मिण्येण सह पणुवीस-

दाय है १ । जो मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वकी वृद्धि करना कर रहा है उसके सम्बन्धकी गोपुच्छाके  
 एक समयकम एक आबस्थिप्रमाण सेव रहने पर अद्वाईस प्रकृतिक सत्त्वस्वानके साथ उन्वीस  
 प्रकृतिक संकर्मस्वान होता है २ । अथवा जो अन्वीस प्रकृतिवर्ती सत्तावासा जीव प्रथम सम्यक्त्व  
 को उत्पन्न करता है उसके प्रथम सम्यक्त्वके उत्पन्न करनेपर अद्वाईस प्रकृतिक सत्त्वमेव आचार  
 गूढ उन्वीस प्रकृतिक संकर्मस्वान उत्पन्न होता है । जिस अणतसम्यग्दृष्टिजन अनन्तानुबन्धीकी  
 विसंबोधना नहीं की है उसके साक्षात्तगुणस्वानको प्राप्त होने पर वा अद्वाईस प्रकृतिवर्तीकी  
 सत्तावासे जीवके सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होने पर अद्वाईस प्रकृतिक सत्त्वमेव साथ उन्वीस प्रकृतिक  
 संकर्मस्वान उत्पन्न होता है ३ । जो सम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धीकी विसंबोधना करके फिर  
 मिथ्यात्वमें जाकर उससे संयुक्त होता है उसके प्रथम आबस्थिमें अद्वाईस प्रकृतिक सत्त्वमेव  
 संकर्म्य रक्तनद्यात्तात्सं प्रकृतिक संकर्मस्वान उत्पन्न होता है । अथवा अनन्तानुबन्धीकी  
 विसंबोधनाकी अस्थिम पक्षिण्य संकर्म करनेके बाद एक समयकम एक आबस्थिप्रमाण  
 गोपुच्छाके सेव रहने पर वही सत्त्वमेव आचारसे नहीं संकर्मस्वान उत्पन्न होता है ४ । जो  
 अनन्तानुबन्धीकी विसंबोधनापूर्वक साक्षात्तगुणस्वानको प्राप्त होता है उसके एक आबस्थिप्रमाण  
 अणतक अद्वाईस प्रकृतिक सत्त्वमेव साथ उन्वीस प्रकृतिक संकर्मस्वान उत्पन्न होता है ५ । इस  
 प्रकार ये पांच संकर्मस्वान अद्वाइस प्रकृतिक सत्त्वमेव आचारे होते हैं ।

१२३ अथ सत्तास प्रकृतिक सत्त्वमेवसेके कितने संकर्मस्वान होत हैं वह बतलाते हैं—  
 अद्वाईस प्रकृतिवर्ती सत्तावासे मिथ्यादृष्टि जीवके सम्बन्धकी वृद्धि करना कर देने पर सत्तास  
 प्रकृतिक सत्त्वमेव साथ उन्वीस प्रकृतिक संकर्मस्वान उत्पन्न होता है १ । फिर सम्यग्मिथ्यात्वकी  
 वृद्धि करना काय हुए वही जीवके एक समयकम एक आबस्थिप्रमाण गोपुच्छाके सेव रहने पर

१ का प्रती-वाच्य इति पाठ । २. वा प्रती संक्षमय इति पाठ । ३. वा-का प्रती-  
 माण्य इति पाठ ।

संकमद्वानमुप्पज्जड २ । एवं सत्तावीससंतकम्मे णिरुद्धे दोण्णिण चेव संकमद्वानाणि होति ।

९ ३२२. मंपहि छव्वीसाए उच्चदे—अणादियमिच्छाइद्विस्स सादिछव्वीससंतकम्मियस्स वा छव्वीससंतकम्मं होऊण पणुवीमसंकमद्वानमेक्क चेव लब्भदे, तत्थ पयारंतरसंभवाभावादे ।

९ ३२३. मंपहि चउवीससंतकम्मियस्स संकमद्वानगवेसणा कीरदे—अणताणु-  
वंधिविमंजोयणापरिणदसम्माइद्विम्मि चउवीससंतकम्मं होऊण तेवीससंकमो होइ १ । पुणो  
तेणेव उवममसेदिभास्सेणंतरकरणाणंतरमाणुपुव्वीसंकमे कदे वावीससंकमो होइ २ ।  
तेणेव णवुंमयवेदोवसमे कदे इगिवीससंकमो जायदे ३ । इत्थिवेदोवसमे वीससंकमो  
होइ ४ । तस्सेव छण्णोकरायाणमुवसामणमस्सियूण चोदससंकमो होइ ५ । पुरिस-  
वेदोवसामणाए तेरमसंकमद्वानमुप्पज्जड ६ । दुविहकोहोवसमेणेकारससंकमो होइ ७ ।  
कोहसंजलणोवसममस्सियूण दसण्ह संकमो जायदे ८ । दुविहमाणोवसमेण अट्टण्हं  
संकमो होइ ९ । माणसंजलणोवसामणाए सत्तण्हं संकमो जायदे १० । दुविहमायोवसम-  
मस्सियूण पचसंकमो जायदे ११ । मायामंजलणोवसमे चउण्ह संकमो होइ १२ ।  
दुविहलोहोवसामणाए मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्तपयडीणं दोण्हं चेव संकमो जायदे १३ ।

सत्ताईस प्रकृतिक सत्कर्मके साथ पचीस प्रकृतिक संकमस्थान उत्पन्न होता है २ । इस प्रकार सत्ताईस प्रकृतिक सत्कर्मके रहते हुए दो ही संकमस्थान होते हैं ।

९ ३२२ अथ छव्वीस प्रकृतिक सत्कर्मवालेके कितने संकमस्थान होते हैं यह बतलाते हैं—  
अनादिमिथ्यादृष्टिके या लुब्धीस प्रकृतियोंकी सत्तात्राले सादि मिथ्यादृष्टिके छव्वीस प्रकृतिक  
सत्कर्मके साथ केवल एक पचीस प्रकृतिक सक्रमस्थान प्राप्त होता है, क्योंकि यहां पर आर कोई  
दूसरा प्रकार सम्भव नहीं है ।

९ ३२३ अथ चौवीस प्रकृतिक सत्कर्मवाले जं वके सक्रमस्थानोका विचार करते हैं—जिसने  
अनन्तानुवन्वीकी विसयोजना कर दी है ऐमे सम्यग्दृष्टि जीवके चौवीस प्रकृतिक सत्कर्मके साथ  
तेईस प्रकृतिक संकमस्थान होता है १ । फिर उसी जीवके उपशमश्रेणि पर चढ़कर अन्तकरणके बाद  
आनुपूर्वी सक्रमका प्रारम्भ करने पर वाईस प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है २ । फिर उसी जीवके  
नपुंसकवेदका उपशम कर लेने पर इक्कीस प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है ३ । स्त्रीवेदका उपशम  
कर लेने पर वीस प्रकृतिक संकमस्थान होता है ४ । उसीके छह नोकपायोंके उपशमका आश्रय  
लेकर चौदह प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है ५ । पुरुषवेदका उपशम हो जानेपर तेरह प्रकृतिक सक्रम-  
स्थान होता है ६ । दो प्रकारके क्राधके उपशम हो जानेसे ग्यारह प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है ७ ।  
क्रोधसंज्वलनके उपशमका आश्रय लेकर दस प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है ८ । दो प्रकारके मानका  
उपशम हो जानेसे आठ प्रकृतिक संकमस्थान होता है ९ । मानसंज्वलनका उपशम हो जाने पर  
सात प्रकृतिक सक्रमस्थान उत्पन्न होता है १० । दो प्रकारकी मायाके उपशमका आश्रय लेकर पाच  
प्रकृतिक सक्रमस्थान उत्पन्न होता है ११ । मायासंज्वलनका उपशम होने पर चार प्रकृतिक संक्र-  
स्थान होता है १२ । और दो प्रकारके लोभका उपशम होने पर मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व

एव षड्बाससतकम्ममि गिरुदे तेरससकमद्वाणाणि सन्मति । णवरि ओदरमाणमस्सियुण  
 लम्ममाणणि द्वाणाणि एत्थेव पुणरुत्तमावेण पविद्वाणि । षड्बीससंतकम्मियसम्मा-  
 मिच्छद्दुस्सि इगिबीससकमद्वाण दसणमोहक्खवगस्स मिच्छसत्तरिमफालिपदणाणतरमुव  
 लम्ममाणवावीसद्वाण च पुणरुत्तमेवे ति ण पुव परुविदाणि ।

§ ३२४ सपदि षड्बीससंतकम्मिण्ण दसणमोहक्खवगममच्छुट्टिय मिच्छते  
 खविदे तवीसमतकम्म होऊण वावीससंकमो होइ ? । तेणेव सम्मामिच्छत्त खबेतेण  
 समयुणाबलियमत्तगोमुच्छावसेसे कए तणेव संतकम्मञ्च सहिद्दुग्गिबीससकमद्वाणमुप्यत्तइ २।  
 एवं तवीसाए दोणिण पेव संकमद्वाणाणि मवति ।

§ ३२५ तस्सेव गिस्ससिदसम्मामिच्छत्तस्स वावीससतकम्मसद्दुग्गयमिगिबीस  
 सकमद्वाणमेकक चव लम्मइ, तत्थण्णसमवाणुवत्तमाणे ।

§ ३२६ सुइयसम्मामिच्छिम्मि इगिबीससतकम्ममिगिबीससकमद्वाणाणुविद्द  
 मुप्यत्तइ १ । पुणे इगिबीससतकम्मिएण उवसमसेदिमारुइय आणुपुम्बीसकमे फदे  
 वीससकमद्वाणमक्खीससतकम्माहारमुप्यत्तइ २ । उवरि आणुऊण जेद्वं । एव णीदे  
 एकवीसाए पारमसकमद्वाणाणि सन्मति १२, णवुस-इरिवेद-उण्णोक्कसाय-पुरिसवेद

इन वा प्रकृतियोंकी ही संकम होता है ११ । इस प्रकार चौबीस प्रकृतिक संकर्मके सम्भारमें तब  
 संकमस्वान् उपलब्ध होता है । यहाँ इतना विशेष और समझना चाहिये कि कपरामप्रतिषेध उत्तरनेपर  
 हीवच्य आशय मकर प्राप्त इनवाच संकमस्वान् पुनरुक्त होनेके कारण वच्य इन्हीं अन्तर्गत हो  
 गया है । तथा चौबीस प्रकृतियोंकी सत्त्व,बासे सम्भामिच्छादष्टि जीवके प्राप्त हुआ इक्कीस प्रकृतिक  
 संकमस्वान् और द्वाँनमावकी चरखा करनेवाले जीवके मिथ्या राधी अन्तिम फलिके पतनके बाद  
 प्राप्त हुआ चरख प्रकृतिक संकमस्वान् पुनरुक्त ही है इस लिये व अत्रागसे नहीं कहे हैं ।

§ ३२४ अब जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्त्वत्वात्त जीव द्वाँनमोहकी चरखा करनेके लिये  
 क्यत होता है उसने मिथ्यारथ चय हो जाने पर तबस प्रकृतिक संकर्मके साथ चरख प्रकृतिक  
 संकमस्वान् प्राप्त होता है १ । सम्भामिच्छात्तका चय करते हुए वही जीवके वसन्धी एक समय कम  
 एक आत्मविग्रमाय गोत्रुक्क कर देने पर वही तबस प्रकृतिक संकर्मके साथ इक्कीस प्रकृतिक  
 संकमस्वान् उत्पन्न होता है १ । इस प्रकार तबस प्रकृतिक संकर्मके सम्भारमें ही ही संकमस्वान्  
 होता है ।

§ ३२५ फिर वही जीव जब सम्भामिच्छात्तका चय कर देता है तब उसके चरख प्रकृतिक  
 संकर्मके साथ केवल एक इक्कीस प्रकृतिक संकमस्वान् प्राप्त होता है, क्योंकि यहाँ पर अन्य  
 हीन स्थान नहीं उपलब्ध होता है ।

§ ३२६ चाविकम्भरदष्टि जीवके इक्कीस प्रकृतिक संकमस्वान्के सम्भारण करनेवाला  
 इक्कीस प्रकृतिक संकर्मस्वान् उत्पन्न होता है १ । फिर इक्कीस प्रकृतिक संकर्मबासे जीवके कप्याय  
 मन्धिर चय कर आनुर्वा संकमञ्च पारम्भ कर देने पर वीसप्रकृतिक संकमस्वान्के आधारात्त  
 इक्कीस प्रकृतिक संकर्मस्वान् उत्पन्न होता है २ । क्योने जान कर कवन करवा चाहिये । इस प्रकार  
 कवन करने पर इक्कीस प्रकृतिक संकर्मस्वान्के चारह संकमस्वान् प्राप्त होता है १२ क्योंकि

दुविहकोह-क्रोहसंजलण-दुविहमाण-( माण ) संजलण-दुविहमाय-मायमंजलणाणमुवसमेण  
जहाकमेगूणवीसादिसंकमद्वेषाणामिगिवीससतकम्माहाणाणमुवलंभादो । पुणो स्ववेणे  
अट्टकसायखवणवावदेण समयूणावलियमेत्तगोवुच्छावसेसे कदे तेरससंकमद्वेषाणामिगिवीस-  
संतकमसंबंधेण समुवल्लभइ । एवं सच्चसमासेण तेरससंकमद्वेषाणि इगिवीससंतकम्म-  
पडिचद्वेषाणि भवन्ति १३ ।

§ ३२७, पुणो अट्टकसायमु णिल्लेविदेसु तेरसमतकम्ममंचदं तेरसपयडिमकम-  
द्वेषाणमुप्पज्जदि १ । तेणेव समाणिदंतरकरणेण आणुपुच्चीमंकमे कदे वारससंकमद्वेषाणं  
तेरससंतकम्ममहायमुप्पज्जदि २ । एवमेदाणि दोष्णि तेरससंतकम्मियस्स संकमद्वेषाणि ।

§ ३२८. एदेषेव णवंसयवेदे खविदे वारससंतकम्म होऊणेकारससंकमद्वेषाण-  
मुवल्लभदे । इत्थिवेदे खविदे एकारससंतकम्मं होऊण दससकमो ल्लभदे । छण्णो-  
कसायकपवणाणंतरं पचमतकम्म होऊण चदुण्ह सकमो जायदे । पुरिसवेदे णवकवधे  
खविदे चत्तारि संतकम्माणि होऊण तिण्ह संकमो जायदे । कोहसंजलणे खविदे तिण्णि  
संतकम्माणि दोण्ह सकमो माणमंजलणे खविदे दोष्णि मतकम्माणि एगपयडिमंकमो  
च जायदे । एवं मतकम्मद्वेषेषु संकमद्वेषाणामणुगमो कदो ।

नपुसकवेद, स्त्रीवेद, छह नोःपाय, पुरुषवेद, दो प्रकारका क्रोध, क्रोधसंजलन, दो प्रकारका  
मान मानसंजलन, दो प्रकारकी माया और मायासंजलन उन प्रकृतियोंका उग्रशम होनेसे  
क्रमसे इक्कीस प्रकृतिक सत्कर्मस्थानके आधारसे त्तीस प्रकृतिक आदि सक्रमस्थान उपलब्ध  
होते हैं । फिर आठ कपायोकी क्षयणा करनेवाले क्षयके एक समय कम एक आश्लिषमाण  
गोपुच्छाके शेष रहने पर इक्कीस प्रकृतिक सत्कर्मस्थानके सम्बन्धमें तेरह प्रकृतिक सक्रमस्थान  
उत्पन्न होता है । उन प्रकार इक्कीस प्रकृतिक सत्कर्मस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाले कुल तेरह संकम-  
स्थान होते हैं १३ ।

§ ३२७ पुन आठ कपायोंका क्षय हो जाने पर तेरह प्रकृतिक सत्कर्मसे सम्बन्ध रखनेवाला  
तेरह प्रकृतिक सक्रमस्थान उत्पन्न होता है १ । फिर इसी जीवके अन्तरकरण करनेके बाद आशुपूर्ति  
सक्रमका प्रारम्भ कर देने पर तेरह प्रकृतिक सत्कर्मसे सम्बन्ध रखनेवाला वारह प्रकृतिक संकम-  
स्थान उत्पन्न होता है । २ । इस प्रकार तेरह प्रकृतिक सत्कर्मवालेके ये दो संकमस्थान होते हैं ।

§ ३२८ पुन इसी जीवके द्वारा नपुसकवेदका क्षय कर देने पर वारह प्रकृतिक सत्कर्मके  
साथ ग्यारह प्रकृतिक संकमस्थान उपलब्ध होता है । स्त्रीवेदका क्षय कर देने पर ग्यारह प्रकृतिक  
सत्कर्म होकर दस प्रकृतिक संकमस्थान प्राप्त होता है । छह नोःपायोंका क्षय हो जाने पर पाँच  
प्रकृतिक सत्कर्म होकर चार प्रकृतिक सक्रमस्थान प्राप्त होता है । पुरुषवेदके नवकवन्धका क्षय हो  
जाने पर चार प्रकृतिक सत्कर्म होकर तीन प्रकृतिक संकमस्थान प्राप्त होता है । क्रोधसंजलनका  
क्षय हो जाने पर तीन प्रकृतिक सत्कर्मके साथ दो प्रकृतिक संकमस्थान और मानसंजलनका  
क्षय हो जाने पर दो प्रकृतिक सत्कर्मके साथ एक प्रकृतिक संकमस्थान उत्पन्न होता है । इस  
प्रकार सत्कर्मस्थानोंमें सक्रमस्थानोंका विचार किया ।

§ २२० मपदि ब्रह्मणाणेषु तदणुगमं वक्ष्येत्सामो । तं सहा—अङ्गवीसमंत  
कम्मियमिच्छद्दृष्टिम्नि बावीसपञ्चद्वारं होळण मत्तावीससकमो होइ १ । तणेव सम्मत्ते  
उम्बन्दिद उम्बीससकमो होइ, ब्रह्मणा पुण तं येव २ । सम्मामिच्छते उम्बन्दिद तणेव  
ब्रह्मणाणेण सह पणुवीससकमो होइ ३ । अणताणुषपी विमंजोएदूण मिच्छते गदस्स  
पन्मावस्सियाए बावीसपञ्चण सह तेवीससकमो होइ ४ । एवं वावीसवमहाणम्मि अचारि  
संक्रमणाणि सुद्धाणि ।

§ २२० सासणसम्माद्दृष्टिम्नि इगिनीसपञ्चद्वारं होइण पणुवीससकमहाण-  
सुप्पज्जदि १ । अणताणु विसज्जोयणापुरस्सर मासाण गुणं पडिवण्णस्स पडमावस्सियाए  
इगिनीसपञ्चद्वारमिगिनीससकमहाणादिद्विपुप्पज्जदि २ । एवमिगिनीसवमहाणम्मि  
दोण्णि चेष संक्रमणाणि होति ।

§ २२१ सम्मामिच्छाद्दृष्टिम्नि सत्तारसबभो होळण अणताणुपंपिचिमज्जोयणाविसं  
ज्जोयणावसेण इगिनीस-पञ्चवीससकमहाणाणि होति २ । अङ्गवीससकम्मियासंज्जदसम्मा-  
द्दृष्टिम्नि सत्तारसपञ्चण सह सत्तावीसपपडिद्वारसकमो होइ ३ । उवसमसम्मत्तगाइणपडम  
समयम्मि बहूमाणस्स उम्बुव उम्बीससकमहाण होइ ४ । अणताणु० विसज्जोयणमस्सिपुणं

§ २२२. अब बन्धस्त्वानेमें बनवा अनुगम करके पत्रजल है । तथा अङ्गारस प्रकृतिक  
संक्रमणस मिथ्य दृष्टिसे बर्षस प्रकृतिक बन्धस्त्वान होकर सत्तारस प्रकृतिक संक्रमण होय  
ह १ । इसी बीजके द्वारा सम्पत्त्वकी वृद्धि करना कर देन पर अङ्गवीसप्रकृतिक संक्रमण होय ह  
किन्तु बन्धस्त्वान बरी रहता ह २ । सम्पत्त्वमिथ्यात्वकी वृद्धि सदा कर देन पर बरी बन्धस्त्वानके साथ  
पञ्चस प्रकृतिक संक्रमण होय है ३ । अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके मिथ्यात्वको प्राप्त  
हुए बीजके मूल आशक्तिमें बर्षस प्रकृतिक बन्धस्त्वानके साथ तैरस प्रकृतिक संक्रमण होय  
ह ४ । इस प्रकार बर्षस प्रकृतिक बन्धस्त्वानमें बार संक्रमण प्राप्त हुए ।

§ २२३ सासादनसम्पत्त्वदि बीरके इक्षीस प्रकृतिक बन्धस्त्वान होकर पञ्चवीस प्रकृतिक  
संक्रमण उत्पन्न होय ह १ । तथा अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनपूर्वक सासादनको प्राप्त हुए  
बीजके मूल आशक्तिमें इक्षीस प्रकृतिक बन्धस्त्वानसे सम्बन्ध रखनेवाला इक्षीस प्रकृतिक  
संक्रमण उत्पन्न होय ह २ । इस प्रकार इक्षीस प्रकृतिक बन्धस्त्वानमें दो ही संक्रमण  
होते हैं ।

§ २२४ सम्पत्त्वमिथ्यादृष्टि गुणस्त्वानमें सत्रह प्रकृतिक बन्धस्त्वान होकर इक्षीस प्रकृतिक  
और बर्षस प्रकृतिक दो संक्रमण होते हैं । इतमेंसे त्रिसने पूर्वमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजन  
की है उसके इक्षीस प्रकृतिक संक्रमण होय है और त्रिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजन  
नहीं की है उसके पञ्चवीस प्रकृतिक संक्रमण होय है २ । अङ्गारस प्रकृतिको सत्तावसे  
आसंपत्त्वसम्पत्त्वदि गुणस्त्वानमें सत्रहप्रकृतिक बन्धस्त्वानके साथ सत्तारस प्रकृतिक संक्रमण  
होय है ३ । अन्तमासम्पत्त्वको मूख करके प्रथम समयमें विद्यमान बरी बीजके अङ्गवीस  
प्रकृतिक संक्रमण होय है ४ । अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनवा आश्रय करके तैरस प्रकृतिक

तेवीसमंक्रमो जायदे ५ । तेणेव इत्थिवेदे उचममिदे' मिच्छत्तक्खणमस्सियूण वावीससंक्रमो होदि ६ । तेणेव सम्मामिच्छत्ते सविदे इगिवीसमंक्रमो जायदे । एवं सच्चसमुच्चएण सत्तारमबंधद्वारणम्मि छवेव मंक्रमद्वारणाणि भवन्ति ।

§ ३३२. मज्जदामज्जदम्मि तेरसवधो होऊण सत्तावीसमंक्रमो होइ ? । तस्सेव पढमसम्मत्तविसेमिदमंजमासंजमग्गहणपढमसमयम्मि वट्टमाणस्स छव्वीसमंक्रमो होइ २ । विसजोडदाणताणु०चउक्खस्य तेवीसमंक्रमो जायदे ३ । तेणेव मिच्छत्ते सविदे वावीससंक्रमो होइ ४ । सम्मामिच्छत्ते सविदे इगिवीसमंक्रमो जायदे ५ । एवं तेरसबंधम्मि णिरुद्धे पचमंक्रमद्वारणाणि भवन्ति ।

§ ३३३. पमत्तापमत्तमज्जदेसु णवपयडिबंधद्वारण होऊण सत्तावीसमंक्रमो होइ ? । अप्पमत्तभावेणोत्तमममत्त संजमं च जुगव पडिवणणस्स पढमसमए णवबंधद्वारणेण मह छव्वीसमंक्रमो होइ २ । अणंताणु०विमंजोयणापरिणटपमत्तापमत्तसंजदाणं तेणेव वधद्वारणेणाणुविट्ठं तेवीसमंक्रमद्वारण होइ ३ । तत्थेव मिच्छत्तक्खणमस्सियूण वावीसमंक्रमद्वारणोवल्लुकी ४ । सम्मामिच्छत्तक्खणमवल्लविय इगिवीसमंक्रमद्वारणममुवल्लुकी ५ । एवं णवबंधद्वारणम्मि पचेव मंक्रमद्वारणाणि लब्धन्ति ।

संक्रमस्थान होता है ५ । मिथ्यात्वके क्षयका आश्रय करके वाईस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ६ । उसी जीवके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वका क्षय कर देनेपर इक्कीस प्रकृतिक संक्रमस्थान उत्पन्न होता है । इस प्रकार सप्त मित्ताकर सत्रह प्रकृतिक बन्धस्थानमें छह ही संक्रमस्थान होते हैं ।

§ ३३० सयतासयत गुणस्थानमें तेरहप्रकृतिक बन्धस्थान होकर सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है १ । प्रथम सम्यक्त्वके साथ संयमासंयमको प्रदण करनेके प्रथम समयमें विद्यमान उस जीवके छव्वीस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है २ । अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके स्थित हुए उसी जीवके तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ३ । उसी जीवके द्वारा मिथ्यात्वका क्षय कर देनेपर वाईस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ४ । सम्यग्मिथ्यात्वका क्षय कर देनेपर वाईसप्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ४ । सम्यग्मिथ्यात्वका क्षय कर देनेपर इक्कीस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ५ । इस प्रकार तेरह प्रकृतिक बन्धस्थानके रहते हुए पाँच संक्रमस्थान होते हैं ।

§ ३३३ प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें नौ प्रकृतिक बन्धस्थान होकर सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ? । अप्रमत्तभावके साथ उपशमसम्यक्त्व और सयमको एक साथ प्राप्त होनेवाले जीवके प्रथम समयमें नौ प्रकृतिक बन्धस्थानके साथ छव्वीस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है २ । अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनारूपसे परिणत हुए प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत जीवोंके उसी बन्धस्थानसे अनुविद्ध तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ३ । वहीं पर मिथ्यात्वके क्षयका आश्रय कर वाईस प्रकृतिक संक्रमस्थान प्राप्त होता है ४ । तथा सम्यग्मिथ्यात्वके क्षयका अवलम्बन कर इक्कीसप्रकृतिक संक्रमस्थान उपलब्ध होता है । इस प्रकार नौप्रकृतिक बन्धस्थानमें पाँच ही संक्रमस्थान उपलब्ध होते हैं ।



§ ३३४ चउवीसमतकम्मिपाणियङ्गिगुणङ्गाणम्मि पंचपयद्विषयद्व्यायेण सह तेवीससकमो होइ १ । तत्थवागुपुन्वीसकमवसण बावीससकमो होइ २ । णवुसयवेदोक्कमामणाए इगिबीससकमो ३ । इत्थिवेदोवसामणाए वीससकमो होइ ४ । पुणो इगिबीससकम्मिओवसामणेणाणुपुन्वीसकम क्कळण णवुसयवेद उवसामिदे एगुणवीस सकमो होइ ५ । तणेव इत्थिवेद उवसामिद अट्टारससकमो होइ ६ । सुवणेण अट्टकसायसुखत्तिमु सगमकमो जायद ७ । अंतरकरण करिय आगुपुन्वीसकम क्क वारससकमो होइ ८ । णवुसयवेद खविदे णट्टारममकमो जायद ९ । इत्थिवेदकसुवणाए इससकमो जायद १० । एवं पंचपयद्विषयद्व्याणम्मि दम सकमद्व्याणाणि भवंति ।

§ ३३७ मपहि चउण्ह बधद्व्याणम्मि सकमद्व्याणगवेमणा खीरद—चउवीससकम्मिओवसामणेण उण्णोक्कमायाणसुवसामणाए क्कटाए णिरुद्वयधद्व्याणेण सह चोदमसकमद्व्याणमुप्पज्ज १ । तदवत्वाए पुरिसवेदपधुतरमदसणादो । तत्थव पुरिसवेदे उवसामिद सगमकमो जायद २ । इगिवासमतकम्मिएण उण्णोक्कसाएणु उवसामिदमु वारममकमो होइ ३ । पुरिसवेदोवसम णट्टारमसकमो होइ ४ । सुवणेण उण्णोक्कसाएणु खविदमु चउण्ह मकमो होइ ५ । पुरिमवड खविद त्रिण्ह सकमो जायद ६ । एव चउविइयवगग्नि उप्पवड मकमद्व्याणाणि भवति पुरिसवेदोदण णिरुद्वे अण्णेमिमणुव-

§ ३३४ ओवम मट्ठिपोथी सत्थवाने अमिउत्तिउत्थ गुणस्वनेमे वीस मट्ठिककवत्थानके माय वाम मट्ठिक संकमस्थान हाता है १ । वही पर आनुपूर्वीसंकमक करव वारम मट्ठिक संकमस्थान हाता है २ । नपुसकवद्वय वसम हो जाने पर इक्कीस मट्ठिक संकमस्थान हाता है ३ । खीवेदव वसम हो जाने पर वीस मट्ठिक संकमस्थान हाता है ४ । तिर इक्कीस मट्ठिपोथी सत्थवाने वारमक वीरके हाथ आनुपूर्वी संकमका प्रारम्भ करनेके बाद मपु सक्कवद्वय वसम कर सेन पर वीरके मट्ठिक संकमस्थान हाता है ५ । वहीके हाथ वीरवद्वय वसम कर देने पर अट्टार मट्ठिक संकमस्थान हाता है ६ । वरके हाथ आठ कयपोथ घय कर देने पर तट्ट मट्ठिक संकमस्थान होय है ७ । अंतरकरण करनेके बाद आनुपूर्वी संकमका प्रारम्भ कर सेन पर वार मट्ठिक संकमस्थान हाता है ८ । नपु सक्कवद्वय घय कर देनेपर एव एव मट्ठिक संकमस्थान हाता है ९ । वीरवद्वय घय कर देनेपर वस मट्ठिक संकमस्थान हाता है १० । इस प्रकार वीस मट्ठिक कवत्थानमें दस संकमस्थान हात हैं ।

§ ३३२ अब वार मट्ठिक कवत्थानमें संकमस्थानोंके विचार करते हैं—ओवीस मट्ठिपोथी सत्थवाने वारमक वीरके हाथ दद माकगपोथ वरम कर सेन पर विरचित कयवामक माय वीर मट्ठिक संकमस्थान वत्थ हाता है १ । वहीके इस वारममें पुग्गवद्वय कयव अमाय वेग्य ज्ञाता है । वही पर पुग्गवद्वय वरम हो जाने पर तट्ट मट्ठिक संकमस्थान वसम हाता है २ । इवीस मट्ठिपोथी सत्थवाने वीरके हाथ दद माकगपोथ वरम कर देने पर वार मट्ठिक संकमस्थान हाता है ३ । पुग्गवद्वय वरम हो जाने पर एव एव मट्ठिक संकमस्थान हाता है ४ । वरके हाथ दद माकगपोथ घय कर देने पर वार मट्ठिक संकमस्थान हाता है ५ । पुग्गवद्वय घय कर देने पर वीस मट्ठिक संकमस्थान हाता है ६ । इस प्रकार वार मट्ठिक कवत्थानमें दस ही संकमस्थान हाते हैं । वहीके पुग्गवद्वे वरके मायामें

लंभादो । सेमवेदोदयविवक्षयाए पुण तिपुग्मिगबंधेण वीसद्वारसादिसंकमद्वानाणं संभवो अणुगंतच्चो ।

§ ३३६. मंपहि तिविहबंधद्वाने मकमद्वानाणं परूचना कीरदे—चउवीस-  
मंतकम्मिएण कोहमजलणबंधवोच्छेदे कडे सेसमजलणतियवधाहिद्वियमेकारससंकमद्वानं  
होइ १ । कोहमंजलणे उवमामिदे दममंक्रमो जायदे २ । इगिवीसमतकम्मिएण दुविह-  
कोहोवममे कडे णवण्ह मक्रमो होइ ३ । कोहमंजलणे उवसामिदे अट्टण्ह मकमो  
होइ ४ । सवगेण कोहमंजलणबंधवोच्छेदे कडे तिण्हं मंक्रमो , कोहमंजलणणवक-  
बंधमकामयम्मि तदुवलंभादो ५ । तेणेव कोहसजलणे णिमंतीकाए टोण्हं मक्रमद्वान-  
मुपपज्जदि ६ ।

§ ३३७. मंपहि दुविहवधयस्म उचदे—चउवीसमतकम्मियोवसामयेण दुविह-  
माणोवसमे कडे अट्टण्ह संक्रमद्वानमुवजायदे १ । तेणेव माणमजलणोवममे कडे  
सत्तण्हं मक्रमो जायदे २ । इगिवीसमतकम्मियोवसामयेण दुविहमाणोवसमे कडे छण्हं  
सक्रमो होइ ३ । माणमंजलणोवममे कडे पंचण्ह मंक्रमो जायदे ४ । सवगेण माण-  
मंजलणवधयोच्छेदे कडे तण्णवक्रवधमकमस्मिउण टोण्ह मंक्रमो होइ ५ । तम्मि चैव  
णिमसतीकाए एक्किस्से मक्रमो जायदे ६ । एवमेत्थ वि छण्ह संक्रमद्वानाणं मभवो  
दट्ठच्चो ।

अन्य सक्रमस्थानोका पाया जाना सम्भव नहीं हैं । किन्तु शेष बंधोके उदयकी त्रिविज्ञा होनेपर तो  
तीन पुरुषोके सम्बन्धमे जोन, अटारह आदि सक्रमस्थान सम्भव हैं उनका विचार कर लेना चाहिए ।

§ ३३६ अत्र तीन प्रकृतिक बन्धस्थानमे संक्रमस्थानोका कथन करते हैं—चौवीस  
प्रकृतियेकी सत्तावाले जीवके द्वारा क्रोमसंजलनकी बन्धव्युच्छित्ति कर देने पर शेष संजलन-  
सम्बन्धी तीन प्रकृतिक बन्धस्थानके साथ ग्यारह प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है १ । क्रोधसंजलनका  
उपशम कर देने पर दस प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है २ । इस्कीम प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके  
द्वारा दो प्रकारके क्रोधका उपशम कर देने पर नौ प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है ३ । क्रोधसंजलनका  
उपशम कर देने पर आठ प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ४ । क्षपक जीवके द्वारा क्रोधसंजलनकी  
बन्धव्युच्छित्ति कर देने पर तीन प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है, क्योंकि क्रोध संजलनके नवक  
बन्धके सक्रम करने पर उम स्थानकी उपलब्धि होती है ५ । इसी जीवके द्वारा क्रोध संजलनके  
नि सत्त्वं कर देने पर दो प्रकृतिक सक्रमस्थान उत्पन्न होता है ६ ।

§ ३३७ अत्र दो प्रकृतिक बन्धस्थानवाले जीवके संक्रमस्थान बतलाते हैं—चौवीस  
प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक जीवके द्वारा दो प्रकारके मानका उपशम कर देने पर आठ  
प्रकृतिक सक्रमस्थान उत्पन्न होता है १ । उसी जीवके द्वारा मानसंजलनका उपशम कर देने पर  
सात प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है २ । इस्कीम प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामकके द्वारा दो  
प्रकारके मानका उपशम कर देने पर छह प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ३ । मानसंजलनका उपशम  
कर देने पर पाँच प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ४ । क्षमके द्वारा मानसंजलनकी बन्धव्युच्छित्ति  
कर देने पर उनके नवकबन्धके संक्रमके आश्रयमे वा प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है ५ ।  
उसी नवकबन्धके निःसत्त्वं कर देने पर एक प्रकृतिक सक्रमस्थान होता है ६ । इस प्रकार यहाँपर

३३८ एगपयद्विषयनिहृद्धे पथ संक्रमणानि लम्बति । त अह—चतुर्विंश  
सतकर्मियोवसामगस्त दुविहमायोवसमे मायसंजलणवगवंधेण सह पचण्ड  
सक्रमो १ । मायासंजलणोवसमे चउण्ड सक्रमो २ । इगिबीससतकर्मियस्त दुविह  
मायोवसम मायामजलणवगवंधेण सह तिण्ड सक्रमो ३ । तमिह उवसामिदे दोण्ड  
सक्रमो ४ । शुबगस्त छोमसंजलणवपयस्त मायासंजलणसक्रमो एको येव लम्बदे ५ ।  
एव वपण्डापेसु सक्रमणानि परुवणा कया ।

§ ३३९. एवमेगसजोगपरुवणं क्कळण सपदि 'वधेण य सक्रमणाने' इदि सुवाव  
यवमचलंविप दुसंजोगरुवणं वचइस्सामा । तस्य ताव वव-सतण्डाणाय दुसजोगमाहार  
मूद क्कळण संक्रमणगवेमना कोरद । त अह—प्रहृवीससतकर्म वावोसवपण्डाय  
प अण्डाणसहगपमाहारमूद क्कळण पदाणि सक्रमणानि मवति २७, २६, २३ ।  
पुणो अहृवीससंतकर्ममिगिबीसवपण्डायं प सहमूदमाचारं क्कळण पपुवीस-इगिबीस  
सणिण्डाणि दोणिण संक्रमणानि लम्बति २५, २१ । त येव सतण्डायं सचारस-  
वपसहगदमस्तिळण २७ २६, २, २३ एणानि चचारि सक्रमणानि समवति ।  
तम्मि येव कर्ममिपण्डाणमि तेरस-णवविदंभण्डाजसहगपमि पादकक सचावीस

मी वद ही संक्रमस्वान सम्भव जानने चादिय ।

§ ३३८. एक प्रकृतिक बन्धस्वानके सद्वारमं पाँच संक्रमस्वान प्राप्त ह्यत है । यथा—  
वाचास प्रकृतिर्वीची सचारसो वररागमक जीवके वा प्रभरकी मायाश्च वरराग हो जाने पर  
म्यासंजलणक नरक बन्धके साथ पाँच प्रकृतिक संक्रमस्वान होण है १ । मायासंजलणके  
वरराम हो जाने पर चार प्रकृतिक संक्रमस्वान होण है २ । इक्षीस प्रकृतिर्वीची  
सचावास जीवके वा प्रभरकी मायाश्च वरराम हो जाने पर मायासंजलणक नरकबन्धके साथ  
छेन प्रकृतिक संक्रमस्वान होण है ३ । नरकबन्ध वरराम कर देने पर दो प्रकृतिक संक्रमस्वान  
होण है ४ । तथा धरक जीवके मायासंजलणक कर ह्यत हुए मायासंजलणक संक्रमरूप एक ही  
संक्रमस्वान प्राप्त ह्यत है ५ । इस प्रभर बन्धस्वानोंमें संक्रमस्वानोंमें कथन किया ।

§ ३३९. इस प्रभर परुवणोमी मंगोच्छ कथन करके अब 'बन्धव च संक्रमणानि' इस  
सूत्र बचनका अर्थसम्बन्ध देखकर दो संवागी स्थानोंमें कथन करत हैं । कर्मों में मायास्वान और  
सत्कर्मस्वान इन स्थानोंके संवागका आधारभूत मानकर संक्रमस्वानोंमें विचार करत हैं । यथा—  
अन्तम प्रकृतिक संक्रमस्वान और चारस प्रकृतिक बन्धस्वान इन स्थानोंके परस्पर संयोगको  
अधारभूत करके २७ २६ और २३ प्रकृतिक च तीन संक्रमस्वान ह्यत हैं । पुन अन्तम प्रकृतिक  
संक्रमस्वान और इक्षीस प्रकृतिक बन्धस्वान इन स्थानोंके संवागका आधारभूत करके पक्षीस  
और इक्षीस प्रकृतिक वा संक्रमस्वान प्राप्त ह्यत है २५ २१ । वही सत्कर्मस्वानक सत्रहप्रकृतिक  
बन्धस्वानके साथ प्राप्त करके २ २६ २५ और २३ प्रकृतिक च चार संक्रमस्वान सम्भव हैं ।  
तेरह चार वा प्रकृतिक बन्धस्वानोंके साथ प्राप्त हुए उही संक्रमस्वानक सद्भ्यषमें प्रत्यकर्म

छव्वीस-तेवीससण्णिदाणि तिण्णि मंकमद्वानाणि लब्धंति २७, २६, २३ । उवरिस-  
 वधद्वानेषु णिरुद्धमंतकर्मद्वानसंभवो णत्थि । एवमेदेषु कमेण एककेकमंतकर्मद्वान  
 जहासंभव मच्चवंधद्वानेषु संजोजिय तत्थ संकमद्वानाणामियत्तागंभवो मग्गणिज्जो ।  
 अधवा वंधद्वानं 'पुवं' कादूण जहासंभवमंतकर्मद्वानेषु संजोजिय तत्थ मंभवंताणं  
 सकमद्वानाण गवेसणा कायव्वा । तं कध ? अद्वानमसंतकर्मं वावीसवंधद्वानं च  
 होऊण २७, २६, २३' एदाणि तिण्णि संकमद्वानाणि भवंति । तम्मि चैव वंधद्वाने  
 मत्तावीसमंतकर्ममहगए २६, २५ एदाणि दोणि मकमद्वानाणि भवंति । छव्वीससत  
 वावीसवंधो च होऊण पणुवीसमंतकर्मद्वानमेवकं चैव लब्धइ २५ । एवं वावीसवध-  
 महगए सु संतकर्मद्वानेषु मकमद्वानपस्वणा क्रया ।

६ ३४०. मंपहि इगिवीसवंधद्वानमद्वानवीसमतकर्म च होऊण पणुवीस-इगिवीस-  
 सण्णिदाणि दोणि सत्कमद्वानाणि भवंति २५, २१ । इगिवीसवंधद्वाने णिरुद्धे णत्थि  
 अण्णो मंतकर्मवियप्पो । अद्वानमसंतं मत्तागसवधो च होऊण २७, २६, २५, २३  
 एदाणि मत्कमद्वानाणि भवति । चउवीसमंतं सत्तागमवंधो च होऊण २३, २२, २१  
 एदाणि मंकमद्वानाणि भवंति । पुणो तम्मि चैव वंधद्वाने तेवीसमतकर्मद्वानेण सह  
 गढे वावीस-इगिवीसमंकमद्वानाणि लब्धंति २२, २१ । पुणो तम्मि चैव वंधद्वाने

सत्तागम, छव्वीस और तेईस प्रकृतिक तीन सक्रमस्थान प्राप्त होते हैं २७, २६, २३, । इसके  
 आगेके वन्धस्थानोमे विवक्षित २२ प्रकृतिक सत्कर्मस्थान सम्भव नहीं हैं । इस प्रकार उस क्रमसे  
 एक एक सत्कर्मस्थानका यथासम्भव सत्र वन्धस्थानोंके साथ संयोग करके वहाँ पर सक्रमस्थानोके  
 परिमाणका विचार कर लेना चाहिये । अथवा वन्धस्थानको ध्रुव करके और उससे यथासम्भव  
 सत्कर्मस्थानोका संयोग करके वहाँपर सम्भव सक्रमस्थानोका विचार कर लेना चाहिये । यथा—  
 अद्वानम प्रकृतिक सत्कर्मस्थान और वाईस प्रकृतिक वन्धस्थान होकर २७, २६ और २३ प्रकृतिक  
 ये तीन सक्रमस्थान होते हैं । उसी वन्धस्थानके सत्ताईस प्रकृतिक सत्कर्मस्थानके साथ प्राप्त होनेपर  
 २६ और २५ प्रकृतिक ये दो सक्रमस्थान होते हैं । छव्वीस प्रकृतिक सत्कर्मस्थान और वाईस  
 प्रकृतिक वन्धस्थान होकर एक पच्चीस प्रकृतिक सक्रमस्थान प्राप्त होता है २५ । इस प्रकार वाईस  
 प्रकृतिक वन्धस्थानके साथ प्राप्त हुए सत्कर्मस्थानोंमे सक्रमस्थानोंका कथन किया ।

६ ३४० इक्कीस प्रकृतिक वन्धस्थान और अद्वानम प्रकृतिक सत्कर्मस्थान होकर पच्चीस  
 और इक्कीस प्रकृतिक दो सक्रमस्थान होते हैं २५, २१ । इक्कीस प्रकृतिक वन्धस्थानके सद्विधमे अन्य  
 सत्कर्मस्थानका विकल्प नहीं होता । अद्वानम प्रकृतिक सत्कर्मस्थान और सत्रह प्रकृतिक वन्धस्थान  
 होकर २७, २६, २५ और २३ प्रकृतिक ये चार सक्रमस्थान होते हैं । चौवीस प्रकृतिक सत्कर्मस्थान  
 और सत्रह प्रकृतिक वन्धस्थान होकर २३, २२ और २१ प्रकृतिक ये तीन सक्रमस्थान होते हैं । पुनः  
 तेईस प्रकृतिक सत्कर्मस्थानके साथ उसी वन्धस्थानके प्राप्त होने पर वाईस प्रकृतिक और इक्कीस  
 प्रकृतिक सक्रमस्थान होते हैं २२, २१ । पुनः वाईस प्रकृतिक सत्कर्मस्थानके साथ उसी वन्ध-

बाबीससतकम्ममेण सह गदे इगिवीससतकम्महाणमेकक येव होइ, तत्व पयागंतरासंमवादो । पुनो इगिवीससत सचारसबधो च होऊण इगिवीससतकम्महाणमेककं येव सम्मइ, पत्तिव अण्णो वियप्यो । एवमुपरिमबंधहाणेषु वि अहासमव संतकम्महाणविसेसिदसु पादककं सकम्महाणसमधो गबेसणिओ ।

§ ३४१ मपहि अण्णो दुसभोगपयारो उचदे । सं अहा—'बंभेण य सकम्महाणे' बंधहाणेहि सह सकम्महाणाणि समाणय । कम्मिं चि पुच्छिंहे कम्मसियहाणेषु चि अहिसबंधो कय्यम्भो । संतकम्मियहाणाणि आहारमूदाणि ठविय तेषु बंध-सकम्महाणां दुसंभोगो जेइयो चि उच होइ । एद च देसामासयं तेण बंधहाणेषु सत-सकम्महाणाण दुसभोगो समापेय्यो, सकम्महाणेषु च बंध-संतहाणाण दुसभोगो सम्ममाणुपुम्बीए जेइयो चि ।

§ ३४२ एत्थ ताव सतकम्महाणेषु बंध-सकम्महाणां दुसभोगस्त समाणा विही उचदे । सं अहा—अहुवीससतकम्ममाहारं क्कळण २२, २१, १७, १३, ९ बंधहाणाणि २७, २६, २५, २३, २१ एदाणि च सकम्महाणाणि सम्मंति । सचावीस-सतकम्मणि क्कडे २२ बंधो २६, २ संकमो च सम्मइ । उम्बीससतकम्ममि वावीस बंधो पणुवाससकमो च सम्मइ । एवमुपरिमसतकम्महाणेषु वि अहासमव बंध-सकम्म हाणां दुसंभोगो अजुगंतयो ।

स्वामके प्राप्त होने पर इष्टीस प्रकृतिक एक ही संकमस्वान होता है, क्योंकि वहाँ पर और और दूसरा प्रकार सम्भव नहीं है। पुन इष्टीस प्रकृतिक सत्कर्मस्वान और सत्रह प्रकृतिक बन्धस्वान होकर इष्टीस प्रकृतिक एक ही संकमस्वान प्राप्त होता है क्योंकि यहाँ भग्य विकल्प सम्भव नहीं है। इसी प्रकार बयासमव सरकर्मस्वानोंसे कुछ भागोंके बन्धस्वानोंमें भी अलग अलग संकम स्वानोंका विचार कर लेना चाहिये।

§ ३४१ अब अम्य प्रकारसे दो संयोगी प्रकारका कवन करते हैं। यथा—'बंभेण य सकम्महाणे' बन्धस्वानोंके साथ संकमस्वानोंको ले जाना चाहिये। वहाँ ले जाना चाहिए । सरकर्मस्वानोंमें ऐसा यहाँ सम्भव कर लेना चाहिये। अर्थात् सत्कर्मस्वानोंका अधर रूपसे स्वयंसे कर इनमें बन्धस्वानों और संकमस्वानोंके दो संयोगको धरित कर लेना चाहिये यह बात कवनका तत्पर्य है। यथा यह बचन देणमपैक है यथा बन्धस्वानोंमें सत्कर्मस्वानों और संकमस्वानोंका दो संयोग धरित कर लेना चाहिये। तथा संकमस्वानोंमें बन्धस्वानों और सत्कर्मस्वानोंका दो संयोग म्भे प्रकार आनुपूर्वीकमसे धरित कर लेना चाहिये।

§ ३४२ वहाँ सबसे प्रथम बत्कर्मस्वानोंमें बन्धस्वानों और संकमस्वानोंके दो संयोगको धरित कर लेनी विधि करते हैं। यथा—अहुवीस प्रकृतिक सरकर्मस्वानको धरित करके १२, ११, १७, १३ और ९ प्रकृतिक ये पाँच बन्धस्वान और २७, २६, २५, २३ और २१ प्रकृतिक ये पाँच संकमस्वान प्राप्त होते हैं। सचावीस प्रकृतिक सरकर्मस्वानके एते हुए ११ प्रकृतिक बन्धस्वान तथा २६ और २१ प्रकृतिक संकमस्वान प्राप्त होते हैं। अम्बीस प्रकृतिक सरकर्मस्वानके एते हुए अर्धस प्रकृतिक बन्धस्वान और पचीस प्रकृतिक संकमस्वान प्राप्त होता है। इसी प्रकार आनेके सत्कर्मस्वानोंमें भी पञ्चसम्यक बन्धस्वानों और संकमस्वानोंके दो संयोगको जान लेना चाहिये।

६ ३४३. संपहि वंधद्वारेणु सेमदुगमजोगो णिज्जदे । तं जहा—२२ वंधो होऊण २८, २७, २६ संतकम्मद्वाराणि २७, २६, २५, २३ संकमद्वाराणि च लब्धमिति । इगिवीसबंधद्वारेणुमि २८ मतकम्मं २५, २१ संकमद्वाराणि च भवंति । सत्तारसबंधद्वारेणुमि २८, २४, २३, २२, २१ संतकम्मद्वाराणि २७, २६, २५, २३, २२, २१ संकमद्वाराणि च भवंति । एवमुवरिमबंधद्वारेणु वि एककेकणिहंभणं काऊण तत्थ सेसदुगमंजोगो जहामंभवमणुमग्गणिज्जो जाव एक्किस्से बंधद्वारेणुमिदि ।

६ ३४४. संपहि संकमद्वारेणु वंध-संतद्वाराणां दुमंजोगस्साणयणकम्मो उच्चदे । तं जहा—सत्तावीसमंकमे णिरुद्धे अट्टावीससंत २२, १७, १३, ९ बंधद्वाराणि च भवंति । छत्तीससंकमद्वारेणुमि २८, २७ संतकम्मद्वाराणि २२, १७, १३, ९ बंधद्वाराणि च भवंति । पणुवीसमंकमद्वारेणुमि २८, २७, २६ संतकम्मद्वाराणि २२, २१, १७ बंधद्वाराणि च भवति । २३ संकमद्वारेणु २८, २४ संतद्वाराणि २२, १७, १३, ९, ५ बंधद्वाराणि च भवंति । एवमुवरिसंकमद्वाराणां पि पादेक्कं णिरुंभणं काऊण तत्थ संतकम्मद्वाराणि बंधद्वाराणि च दुमंजोगविसिद्धाणि णेदव्वाणि जाव एगसंक्रमद्वारेणु ति । एवं णीदे दुमंजोगपरुवणा समत्ता होइ । एमो च सच्चो अदीदगाहामुत्तपत्रयो मंक्रम-पडिग्गह-तदुभयद्वारेणुममुक्कित्तणाए सामित्तगच्छिभणीए पडिच्चद्धो,

६ ३४३ अथ बन्धस्थानोंमें शेष दो संयोगी स्थानोंका विचार करते हैं । यथा चार्हिस प्रकृतिक बन्धस्थान होकर २८, २७ और २६ प्रकृतिक तीन सत्कर्मस्थान और २७, २६, २५ और २३ प्रकृतिक चार संक्रमस्थान प्राप्त होते हैं । इक्कीस प्रकृतिक बन्धस्थानमें २८ प्रकृतिक सत्कर्मस्थान तथा २५ और २१ प्रकृतिक संक्रमस्थान होते हैं । सत्रह प्रकृतिक बन्धस्थानमें २८, २४, २३, २२ और २१ प्रकृतिक सत्कर्मस्थान और २७, २६, २५, २३, २२ और २१ प्रकृतिक संक्रमस्थान होते हैं । इसी प्रकार एक प्रकृतिक बन्धस्थानके प्राप्त होनेतक आगेके बन्धस्थानोंमेंसे भी एक एकको विवक्षित करके उसमें यथासंभव शेष दो संयोगी स्थानोंका विचार कर लेना चाहिये ।

६ ३४४ अथ सक्रमस्थानोंमें बन्धस्थानों और सत्कर्मस्थानोंके दो संयोगके लानेका क्रम कहते हैं । यथा—सत्ताईस प्रकृतिक सक्रमस्थानके सदभावमें २८ प्रकृतिक सत्कर्मस्थान और २२, १७, १३ और ९ प्रकृतिक बन्धस्थान होते हैं । छत्तीस प्रकृतिक संक्रमस्थानमें २८ और २७ प्रकृतिक सत्कर्मस्थान और २२, १७, १३ और ९ प्रकृतिक बन्धस्थान होते हैं । पच्चीस प्रकृतिक सक्रमस्थानमें २८ और २६ प्रकृतिक सत्कर्मस्थान तथा २२, २१ और १७ प्रकृतिक बन्धस्थान होते हैं । २३ प्रकृतिक सक्रमस्थानमें २८ और २४ प्रकृतिक सत्कर्मस्थान तथा २२, १७, १३, ९ और ५ प्रकृतिक बन्धस्थान होते हैं । इस प्रकार एक प्रकृतिक सक्रमस्थानके प्राप्त होने तक आगेके सब सक्रमस्थानोंमेंसे भी प्रत्येकको विवक्षित करके उसमें सत्कर्मस्थानों और बन्धस्थानोंके दो संयोगी स्थानोंका विचार कर लेना चाहिये । इस प्रकार विचार करनेपर दो संयोगी परुवणा समाप्त होती है । ३० यह सब अतीत गाथासूत्रोंका कथन स्वामित्वको सूचित करनेवाले संक्रमस्थानों,

१ ता०प्रतौ एवमुवरि सक्रमद्वारेणु इति पाठः । २. आ०प्रतौ सक्रमद्वारेणु इति पाठ ।  
३ ता०प्रतौ -गन्धरीए ? आ०प्रतौ -गन्धरीए इति पाठ ।

ओषादसहि तत्पञ्चणाण खेव णिवद्वाणमतीदम अगाहाणमुबलमादो ।

§ ३४०- संपदि अत्यतत्यामुपुञ्चाए संसाणमणियोगदागण णामणितेसकरणह  
 सुवरिमगाहास्तुवाणं टोणहमवयारा—‘सादिय जहण्ण संक्रम ’ एत्थ सादि जहण्ण-  
 माहणेण सादि अगादि धुव अहपुव-मन्व-णोमन्व-उरुम्माणुक्रम-जहण्णाजहण्णमक्रम-  
 सण्णियाणमणियोगदागणं सगहो क्खाम्भो, दसामासयमावेगेदस्सवहाणाओ । सकमग्गहण-  
 मेत्थिमणियोगदागण पयडिहाणमक्रमविसयध सधेदि । ‘कदिस्तुतो ’ एव उत्ते  
 एक्ककम्मि सकमहाणम्मि कदिगुणो जावगसी होइ ति पुच्छिउ इवइ । एदण्ण्या-  
 वहुआणिजोगहार सधिद । ‘अभिरहिद’माहणेण एयजीवेण फल्लो, ‘मातर’माहणेण वि  
 पयजीवेणतर सधिद, ‘कवचिर’ गहणेण टोणहं पि विसेमपादो । ‘कदिमाग परिमाण’  
 इधेदण भागामागस्स सगहो कायम्भो, सण्णजीवरासिस्स क्खत्त्वओ मागो क्खिं  
 संक्रमहाणार्णं सकामपजावगसिपमाण होइ ति पुच्छाए अबल्लवणाणे । ३१॥

§ ३४६ ‘एवं दग्धे खेत्ते’ अथ ‘एवं’ इत्यनेन नानाजावसंपादितो भगविसंपस्य

पठिष्यत्त्वानो और ठहुमवस्वान्तोके कपनसे सम्बन्ध रक्ता ह, क्योंकि थोप और आदेत्से इत्से  
 करन करनमें ही अतीत सब गाथाओंका व्यापार देखा जाय है ।

§ ३४८. अथ यत्रतत्रसुसुर्धके कपसे सेप अनुपयोगहारोंके नाम अतिरिक्त करनेके लिये  
 ही आगेके दो गाथासूत्र आये हैं—‘सादिय जहण्ण संक्रम इत्थं दो ‘सादि जहण्ण’ परध  
 महाय किया है तो इससे सादि अनादि धुव, अमय सब नासर्ध, इत्थं, अनुत्थं, क्वन्थ  
 अर अत्रपन्थसंक्रम संज्ञाको अनुपयोगहारोंका संघ करना चाहिये क्योंकि वेदग्रन्थोंमें  
 यह पर अवस्थित है । ‘संक्रम’ पर ये अनुपयोगहार प्रकृति संक्रमस्वातसे सम्बन्ध रखते हैं, यह  
 सूचित करता है । ‘कदिस्तुता’ ऐसा करनेपर एक एक संक्रमस्वान्तमें कितनीगुणी जीवराशि  
 होती है यह पूछा भी गई है । इससे अरन्वदुत्थ अनुपयोगहार सूचित होता है । ‘अभिरहिद’  
 परके महाय करनेसे एक जीवकी अपेक्षा काल और ‘सातर’ परके महाय करनेसे भी एक जीवकी  
 अपेक्षा अन्तर के अनुपयोगहार सूचित होते हैं क्योंकि ‘कवचिर’ परके महाय करनेसे यह  
 ‘अभिरहिद’ और ‘सातर’ इन दोनोंका विशेषण है यह सिद्ध होता है । तथा ‘कदिमाग परिमाण’  
 इसकाय भागामागका संघ करना चाहिये, क्योंकि इस परमें किन संक्रमस्वान्तोंके संख्यात्मक  
 आरपयिन्न प्रमाण सब जीवराशिका कितना माग है इस पूछाका अरन्वकन किया गया है ।

विशेषार्थ—अतएव यह है कि इस ३१ वीं गाथामें संक्रमप्रकृतिस्वान्तसे सम्बन्ध रखनवाले  
 सादि संक्रम अनादि संक्रम धुव संक्रम अमुव संक्रम सर्वसंक्रम मोसर्धसंक्रम उरुत्थसंक्रम,  
 अनुत्थसंक्रम अत्रपन्थसंक्रम अत्रपन्थसंक्रम अत्रपन्थसंक्रम एक जीवकी अपेक्षा काल एक  
 जीवका अन्तर और भागामाग इन अनुपयोगहारोंकी सूचना भी गई है । अतएव  
 इनके अनुपयोगहारोंके द्वारा प्रकृतिसंक्रमस्वान्तका वर्णन करना चाहिये यह इत्यथ अस्मिन्व है ।

§ ३४९. ‘एवं दग्धे खेत्ते’ इस गाथामें आये हुए ‘एवं’ इस पर द्वारा मान्य जीवोंसम्बन्धी

संग्रहः । 'दब्बे' इच्चेदेण सुत्तावयवेण दच्चपमाणाणुगमो । 'खेत्त'ग्गहणेण खेत्ताणुगमो च, पोसणाणुगमो च 'काल'ग्गहणेण वि कालंतराणं णाणाजीवविसयाणं संगहो कायच्चो । 'भाव'ग्गहणं भावाणिओगदारस्स संगहणफलं । एत्थाहियरणणिद्देसो तच्चिसयपरूवणाए तदाहार-भावपदुप्पायणफलो त्ति दट्ठच्चो । 'सण्णिवाद' ग्गहणं च सण्णियासाणियोगदारस्स सूचना-मेत्तफलं । 'च' सहो वि भुजगार-पदणिकखेव-वट्ठीण सप्पभेदाणं संगहाओ, तेहि विणा पयदपरूवणाए अमंप्पुणभावावत्तीदो । एवमेदेहिं अणेयणयग्गहणणिलीणाणिओगदारेहिं 'संकमणयं' पयडिमकमगाहासुत्ताणंमहिप्पायं णयविदू णयण्हू<sup>१</sup> 'णेया' णयदु 'सुददेसिटं' मूलसुत्तमंडब्भमंडरिमिदपरूवणोवायं 'उदारं' अत्थगंभीरं सुत्ताहिप्पायं णयदु । त्ति उत्तं होइ । अहवा 'सकमणय' मकमनीतत्तविधान णयविदू नयज्जः 'णेया' नयेत्प्रकागये-दित्यर्थः । एवं णीदे मकमवित्तिगाहाणमत्थो परिसमत्तो होइ ।

§ ३४७. एत्तो गाहासुत्तसूचिदाणसणियोगदारणां विहासणट्टमुच्चारणाए सह चुण्णिसुत्ताणुगमं कस्सामो । तं जहा—ट्टाणसमुक्त्तिणाए दुविहो णिद्देसो—ओघादेस-भेदेण । तत्थोवेण अत्थि २७, २६, २५, २३, २२, २१, २०, १९, १८, १४, १३, १२, ११, १०, ९, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २, १ एदेमि संकामणा । एवं

भगविचयका समह किया गया है । 'दब्बे' इस सूत्रवचनद्वारा द्रव्यप्रमाणानुगमका 'खेत्त' पदले ग्रहण करनेसे क्षेत्रानुगम और स्पर्शानुगमका तथा 'काल' पदके ग्रहण करनेसे भी नाना जीव सम्बन्धी काल और अन्तर अनुयोगद्वारोंका संग्रह करना चाहिये । सूत्रमें 'भाव' पदका ग्रहण भाव अनुयोगद्वारके समह करनेके लिये किया है । इस गाथामें जो उक्त सब पदोंका निर्देश अधिकरण-रूपसे किया है सो उस उस विषयका कथन करते समय वह अनुयोगद्वार आधार हो जाता है यह दिखलानेके लिये किया है ऐसा यहाँ जानना चाहिये । 'सण्णिवाद' पदका ग्रहण सन्निकर्ष अनुयोगद्वारको सूचित करनेके लिये किया है । सूत्रमें 'च' शब्द भी अपने भेदोंसहित भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि इन तीनोंका समह करनेके लिये आया है, क्योंकि इनके बिना प्रकृत प्ररूपणाके अधूरी रहनेकी आपत्ति आती है । इस प्रकार अनेक गहन नयोंके विषयभूत इन अनुयोगद्वारोंके द्वारा 'सकमणयं' अर्थात् प्रकृतिसकमविषयक गाथा सूत्रोंके अभिप्रायको 'णयविदू' अर्थात् नयके जानकार 'णेया' अर्थात् जानें । तात्पर्य यह है कि 'सुददेसिट' अर्थात् मूल सूत्रके सन्दर्भमें दिखलाये गये प्ररूपणाके उपायको, जो उदार अर्थात् अर्थगम्भीर है ऐसे सूत्रके अभिप्रायको जानें यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अथवा 'सकमणयं' अर्थात् सकमसे प्राप्त हुए विधानको 'णयविदू' अर्थात् नयके जानकार पुरुष 'णेया' अर्थात् प्रकाशित करें यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इस प्रकार ले जाने पर सकमविषयक वृत्तिगाथाओंका अर्थ समाप्त होता है ।

§ ३४७ अब इससे आगे गाथासूत्रोंके द्वारा सूचित होनेवाले अनुयोगद्वारोंका व्याख्यान करनेके लिये उच्चारणके साथ चूर्णिसूत्रोंका परिशीलन करते हैं । यथा—स्थान समुत्कीर्तनाकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा २७, २६, २५, २३, २२, २१, २०, १८, १८, १४, १३, १२, ११, १०, ९, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २ और १ इन स्थानोंके

१ ता०प्रतौ पयडिगाहासकमसुत्ताण- इति पाठ । २ आ०प्रतौ णयविदो णयण्हो इति पाठ ।

३ ता०प्रतौ णयविदू नयज्ञा, आ०प्रतौ णयविदो नयज्ञा इति पाठः ।



मनुस्सतिष्य । णवरी मनुस्सिणीसु चोदससकमो णत्थि । अइवा भोयरमाणमस्सिरुण  
अत्थि ।

§ ३४८. आदेशेण जेरुएणु अत्थि २७, २६, २५, २३, २१ संकामया । एव  
सम्बणेरया तिरिक्ख-पथिदियतिरिक्खत्थिय-देवा चाव णवगेवजा ति ।

§ ३४९ पथि०तिरिक्खअपज०-मणुसअपज० अत्थि २७, २६, २५ संकामया ।  
अणुरिसादि चाव सम्बहे ति अत्थि २७, २३, २१ संकामया । एवं चाव अणाहारि ति ।

§ ३५० सम्ब-णोसम्ब-उक्कस्ताणुक्कस्त अहण्णाअहण्णसंकामापमेत्व णत्थि सम्बो,

संक्रामक जीव हैं । इसी प्रकार तीन प्रकारके मनुष्योंमें आनन्द चाहिये । किन्तु इतनी विधेयता  
है कि मनुष्यत्वमें जो एक प्रकृतिक संक्रमस्थान नहीं होता है । अपना अन्तर्भाव मनुष्यत्व  
जीवके होता है ।

**विशेषार्थ—**जो ब्रह्मसे तो एक सभी स्वान्तिके संक्रामक जीव हैं । मनुष्यत्वमें सामान्य  
मनुष्य और मनुष्य पर्याय इनके एक सब संक्रमस्थान सम्भव हैं । केवल मनुष्यत्वमें केवल  
भेषि पर ब्रह्मसे समस्त १४ प्रकृतिक संक्रमस्थान नहीं होता क्योंकि जो १४ प्रकृतियोंकी सत्तावाला  
जीव ब्रह्म भेषि पर ब्रह्म है वहीके १ लोकयन्त्रोंका रूपमान होने पर १४ प्रकृतिक संक्रमस्थान  
पाया जाता है । किन्तु जीवके ब्रह्मके साथ ब्रह्मभेषि पर ब्रह्म हुए पंसे जीवके छह माहमात्र  
और पुनरावृत्ति एक साथ ब्रह्ममान होता है इसलिये इसके १४ प्रकृतिक संक्रमस्थान नहीं पाया  
जाता । ह्रीं ब्रह्मभेषिसे अन्तर्भाव समस्त सब १४ प्रकृतियोंका संक्रम होना जाता है तब मनुष्यत्वके  
१४ प्रकृतिक संक्रमस्थान अपना प्राप्त हो जाता है । इसीसे यहाँ मनुष्यत्वके ब्रह्मभेषि पर  
ब्रह्म समस्त १४ प्रकृतिक संक्रमस्थानका विशेष किता है ।

§ ३५१. आदेशसे नारकियेमें २७, २६, २३ और २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानोंके संक्रामक  
जीव हैं । इसी प्रकार सब नारकी, शिर्वर, पंचेन्द्रियशिर्वर और समस्त देवोंसे लेकर  
जो महत्त्व तकके देव इनके कर्म करना चाहिये ।

**विशेषार्थ—**इन मार्गशास्त्रोंमें वे ही संक्रमस्थान होते हैं जहाँ यहाँ इनके संक्रामक जीव  
ब्रह्मके हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि द्वितीयानि नारकिये, शिर्वरानियेमें और महत्त्विकोंमें  
ब्रह्मसे परब्रह्म ब्रह्मकी शेषियोंमें २१ प्रकृतिक संक्रमस्थान अपवाधी अपेक्षा प्रकृतिक ब्रह्मके  
अनन्तत्वब्रह्मकी विशेषताके विशेषताके साक्षात्त गुणस्थानमें एक आश्रितब्रह्म तक जानना  
चाहिये क्योंकि इन मार्गशास्त्रोंमें प्राणिक सम्प्रदायकी प्राप्ति सम्भव नहीं है । इसलिये यहाँ  
ब्रह्मभेषिब्रह्मकी ब्रह्मकी अपेक्षा २१ प्रकृतिक संक्रमस्थान नहीं प्राप्त होता यह सिद्ध होता है ।

§ ३५२ पंचेन्द्रियशिर्वर अपर्णात् और मनुष्य अपर्णात्में २७, २६ और २३ प्रकृतिक  
स्थानोंके संक्रामक जीव हैं । अनुविरासे लेकर सर्वांसिद्धि तकके देवोंमें २७, २६, और २३ प्रकृतिक  
स्थानोंके संक्रामक जीव हैं । इसी प्रकार अन्तर्भाव मार्गशास्त्र तक जानना चाहिये ।

**विशेषार्थ—**अनुविरासिकमें २१ प्रकृतियोंकी सत्तावाले २७ प्रकृतिक, २४ प्रकृतियोंकी  
सत्तावाले २३ प्रकृतिक और २१ प्रकृतियोंकी सत्तावाले २३ प्रकृतिक संक्रमस्थान होते हैं । शेष  
कर्म सुगम है ।

§ ३५३ यहाँ प्रकृतिक संक्रमस्थानमें सर्वसंक्रम जो सर्वसंक्रम अर्थात् संक्रम अनुत्तर संक्रम,

णिरुद्धेयसंक्रमट्टाणम्मि उक्कस्साणुक्कस्सादिपदभेदाणमसंभवादे ।

§ ३५१. सादि-अणादि-धुव-अद्धुवाणुगमेण दुविहो णिद्वेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण पणु० संकाम० किं सादि०४ ? सादि० अणादि० धुवा अद्धुवा वा । सेसट्टाणसंकामया सव्वे सादि-अद्धुवा । आदेसेण णेग्इय० सव्वसंकमट्टाणाणं संकामया सादि-अद्धुवा । एवं जाव्व अणाहारि त्ति ।

❀ एत्तो पदाणुमाणियं सामित्तं णेयव्वं ।

§ ३५२. एट्ठस्म सामित्तपरुवणावीजपटभूदमुत्तस्स अत्थविवरणं कस्सामो ।

जघन्य सक्रम आर अजघन्य सक्रम ये अनुरयोगद्वार सम्भव नहीं हैं, क्योंकि विवक्षित एक सक्रम-स्थानमें उत्कृष्ट, अनुकृष्ट इत्यादि भेद सम्भव नहीं हैं ।

विशेषार्थ—नात्पर्य यह है कि जिस सक्रमस्थानमें जितनी प्रकृतियाँ परिगणित की गई हैं उसमें उतनी ही प्रकृतियाँ होती हैं, इसलिये प्रकृतिसक्रमस्थानोंमें इन भेदोंका निषेध किया है ।

§ ३५१ सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ-निर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे पचीस प्रकृतिक स्थानके सक्रमक जोय क्या सादि होते हैं, क्या अनादि होते हैं, क्या ध्रुव होते हैं या क्या अध्रुव होते हैं ? सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव चारों प्रकारके होते हैं । शेष स्थानोंके संक्रामक सब जोय सादि और अध्रुव होते हैं । आदेशसे नारकियोंमें सब सक्रमस्थानोंके सक्रमक जोय सादि और अध्रुव होते हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—चात यह है कि पचीस प्रकृतिक सक्रमस्थान अनादि व सादि दोनों प्रकारके मिथ्याप्रियोंके व भव्य, और अभव्य इन दोनोंके सम्भव है, अतः यहाँ सादि आदि चारो विकल्प बन जाते हैं । किन्तु शेष स्थानोंकी यह बात नहीं है, क्योंकि वे सब स्थान कदाचित्क हैं, अतः उनमें सादि और अध्रुव ये ही दो विकल्प घटित हाते हैं । इसी प्रकार सब मार्गणाओंमें उक्त प्रकारसे सादि आदि प्ररूपणा लगा लेना चाहिये । इनका सरलतासे ज्ञान होनेके लिये कोष्ठक दे रहे हैं—

मार्गणा	२५ प्र०	शेष स्थान
मिथ्या०	सादि आदि ४	सादि व अध्रुव
अद्रुलु०	"	"
भव्य	ध्रुवके बिना ३	"
अभव्य०	अनादि व ध्रुव	×
शेष	सादि व अध्रुव	जहाँ जो सम्भव हैं वे सादि व अध्रुव

\* अब आगे आनुपूर्वी आदि अर्थपदोंके द्वारा अनुमान किये गये स्वामित्वको जानना चाहिए ।

§ ३५२ अब स्वामित्व प्ररूपणाके बीजभूत इस सूत्रका व्याख्यान करते हैं । यथा—इससे

त क्व ? एषो उचरि सामिचमवसरपत्तं णेदम्ब । क्वं णेदम्ब इदि पुच्छिदे पदाणुमाणिय पुष्पुचाणि अत्यम्ब्राणि आपुपुस्वीसकमाणीणि णिषघणं क्वदूण णेदम्बमिदि उत्तं होइ । सपदि एणेण समपिण्डत्पविबरहुसुचारण भच्छस्सामो । त उदा—सामिचाणुगमेण दुबिहो णिदेसो—ओषणादेसण । ओषण २७, २६, २३ सकमो कस्स ? अण्णदरस्स सम्माइड्हिस्स वा मिच्छाइड्हिस्स वा । २७ सकमो कस्स ? मिच्छा० सासण० सम्मामि० वा । २१ सकमो कस्स ? सासण० सम्मामिच्छाइड्हिस्स सम्मादिड्हिस्स वा । वासीस-बोसप्यइदि ज्ञाव एदिस्से संकमो कस्स ? अण्णदरस्स सम्माइड्हिस्स । एव मणुसविए । पवरि मणुसिणासु १४ सकमसामिच णतिय । अइवा ओपरमाणमस्सिपूण चउवीस-सतकम्मियोरसामियस्स सामिचं वचम्ब ।

१३-३ आदेसण णेरुय० २७, २६, २३ कस्स ? अण्णद० सम्माइड्हि० मिच्छाइड्हि० । २०, २१ कस्स ? ओष । एव पटमपुण्डि-तिरिक्ख-पधिदियतिरिक्ख २-देवगदिदेवा मोहस्मादि ज्ञाव णवणेरज्जा चि । एव विदिमादि ज्ञाव सचमि चि । णवरि इगिरीससकमो सम्माइड्हिस्स णतिय । एव ओणिणी-मवण०-बाण जोदिसिया चि । पधिदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-अगुरिसादि सव्वहा चि अप्यप्यणो

भाग स्वामिरथ अथसर प्राप्त है, इसकीए वसं जानना चाहिय । कैसे जानना चाहिय वसा पूहनर वशुमानित अथम् आतुर्ही संकम आदि अर्थपरहोके निमित्त करके जानना चाहिय यह वच कवनम वातर्ब है । अथ इससे प्राप्त हुए अथम् विवरण करनेके लिए उच्चारणाको बखत है । यथा—स्वामितानुगमकी अपेक्षा निर्देश हो प्रकारम है—ओष और आवेरा । ओषसे २७, २८ और २३ प्रकृतिक संकमस्वान किसके हात है ? अन्यतर सम्यगृष्टि और मिष्याष्टिके होत है । २७ प्रकृतिक संकमस्वान किसके होत है ? मिष्याष्टि, सासादनसम्यगृष्टि और सम्यमिष्याष्टिके हात है । २१ प्रकृतिक संकमस्वान किसके होत है ? सासादनसम्यगृष्टि, सम्यमिष्याष्टि और सम्यगृष्टिके हात है । २० और २ प्रकृतिक संकमस्थानोसे लेकर एक प्रकृतिक संकमस्वान लकके सब संकमस्वान किमके होत है ? अन्यतर सम्यगृष्टिके हात है । इसी प्रकार मनुष्यविकर्म जानना चाहिय । किन्तु इतनी विवेचना है कि मनुष्यनिर्बो १४ प्रकृतिक संकमस्वान अथ स्वामित मरी है । अथवा वरशामेकीसे उतरनेवाप जीवकी अपेक्षा ओषीस प्रकृतियोंकी सत्त्वबल अथप्रमक एवोवहीक १४ प्रकृतिक संकमस्वानम स्वामिरथ कहना चाहिय ।

१३३ आदेसण णेरुय० २७, २६ और २३ प्रकृतिक संकमस्वान किसके हाते है ? अन्यतर सम्यगृष्टि और मिष्याष्टिके हात है । २७ और २१ प्रकृतिक संकमस्वान किसके हात है ? इनम स्वामित आतर्ब समान है । इसी प्रकार प्रथम पृथिवीके आरम्भ, तिसव पंचेन्द्रिय त्रिव्य पंचन्द्रिय त्रिव्य वषात देवगतिमें मामात्र हैन और सौवर्म अथसे लेकर भी प्रियेवक तक देवोंमें जानना चाहिय । इसी प्रकार हमरे नरकम लेकर सातों नरक तकके आरम्भमें जानना चाहिय । किन्तु इतनी विवेचना है कि इन आरम्भमें सम्यगृष्टिके इषीस प्रकृतिक संकम स्तान मरी हाता । इसी प्रकार पंचन्द्रिय त्रिव्य योनिनी, मरनचली, अन्तर और अन्तरी देवोंमें जानना चाहिय । पंचन्द्रिय त्रिव्य अथवा मनुष्य अथवा आर अन्तरीयसे लेकर सप्तर्षिदि तक देवोंमें अथन अथन संकमस्वान किसके हाते है ? अन्यतरके हात है । इसी प्रकार

तिण्णि द्वाणाणि कस्स ? अण्णदरस्स । एवं जाव ।

६ ३५४. एवं सामित्तं समाणिय संपहि कालाणियोगहारपरुवणद्वमुत्तरसुत्ताव-  
यारो कीरदे—

❀ एयजीवेण कालो ।

६ ३५५. सामित्तपरुवणाणंतरमेयजीवविमओ कालो परुवेयव्वो त्ति पडजासुत्तमेदं ।

❀ सत्तवीसाए संकामओ केवचिरं कालादो होइ ?

६ ३५६. पुन्छामुत्तमेद सुगमं ।

❀ जहरणेण अतोमुहुत्तं ।

६ ३५७. एमो जहण्णकालो मिच्छाडडिस्स पणुवीसगंकामयस्स उवसमसम्मत्तं  
घेत्तूण विट्ठियसमयप्पहुडि सत्तावीससकामयभावेण जहण्णमतोमुहुत्तमेत्तकालमच्छिय  
पुणो उवसमसम्मत्तकालअंतरे चैय अणंताणुवंधी विमजोडय तेवीससंकामयत्तेण  
परिणयस्स समुवल्लभदे । अथवा सम्ममिच्छाडडिस्स सम्मत्तं मिच्छत्त वा गत्तूण तत्थ  
सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो परिणामपच्चएण सम्मामिच्छत्तमुवगयस्स एसो  
कालो गहियव्वो । सपहि तदुक्कस्सकालपरुवणद्वमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ उक्कस्सेण वेत्थावट्टिसागरोवमाणि सादिरेयाणि तिपलिदोवमस्सं

अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिय ।

६ ३५४ इस प्रकार स्वामित्वको समाप्त करके अब कालानुयोगद्वारका कथन करनेके लिए  
आगेके सूत्रोंका अवतार करते हैं—

\* एक जीवकी अपेक्षा कालका अधिकार है ।

६ ३५५ स्वामित्वविषयक प्ररूपणाके बाद एक जीवविषयक कालका कथन करना चाहिये  
इस प्रकार यह प्रतिज्ञासूत्र है ।

\* सत्ताईस प्रकृतिक संक्रामकका कितना काल है ?

६ ३५६ यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

\* जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है ।

६ ३५७ जो पच्चीस प्रकृतियोंका संक्रम करनेवाला मिथ्यादृष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वको  
प्राप्त करके दूसरे समयसे लेकर सत्ताईस प्रकृतियोंका सक्रम करता हुआ जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालतक  
वहाँ रहकर पुनः उपशमसम्यक्त्वके कालके भीतर ही अनन्तानुबन्धीकी विसयोजना करके तेईस  
प्रकृतिक संक्रमस्थानको प्राप्त होजाता है उसके सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमस्थानका यह जघन्य काल  
प्राप्त होता है । अथवा जो सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्व या मिथ्यात्वको प्राप्त होकर और वहाँ  
सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालतक रहकर फिर परिणामवशा सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानको प्राप्त होता  
है उसके यह जघन्य काल ग्रहण करना चाहिए । अब इस सक्रमस्थानके उत्कृष्ट कालका कथन करनेके  
लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

\* उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागसे अधिक दो छयासठ सागर-

१ आ०—त्री०प्रत्यो पलिदोवमस्स, ता०प्रतौ [ ति ] पलिदोवमस्स इति पाठ ।

असंख्येज्जविभागेषा ।

§ ३५८ तं ब्रह्म—एगो अजादियमिच्छाद्गृही उवसमसम्मत्तं पडिबन्धिय सत्तावीससकामधो होठ्ठण मिच्छत्तं गदो पस्सिदोवमासखेज्जमागमेत्तकालमुप्पेत्तणा वावारेणच्छिय अविजहुसंक्रमपाशोगसम्मत्तसत्तकम्मोत्तं सम्मत्त पडिबण्णो पटमजावद्धि परिममिय तदवसाणे मिच्छत्तं गंतूण पुम्भं व पस्सिदोवमासखेज्जमागमेत्तकालसम्मत्तमुप्पेत्तणावावदो तहुप्पेत्तणपरिमत्तस्सिए सह सम्मत्तमुवगमो । विदियजावद्धि परिममणं काठ्ठण तप्पजवसाणे मिच्छत्तं गत्ता । पुणो धि दीहुप्पेत्तणकालेण सम्मत्तमुप्पेत्तिय छम्पीससकामधो जादो । एवं तीहि पस्सिदोवमासखेज्जविभागहि सादिरेयवेत्तावद्धि सागरोवममेत्तो सत्तावीससकामसकालो लद्धो । सपहि छम्पीससकामयत्तहण्णुत्तसकाल-परुत्तणहुत्तुत्तसुत्तमोत्तण्णो—

⊗ छम्पीससकामधो केवचिरं काळापो होइ ?

§ ३५९. सुगमं ।

⊗ जयप्पेय एगसम्मत्तो ।

३६० तं ब्रह्म—जिम्मतसकम्मियमिच्छाद्गृहीत्तस पद्दमसम्मत्तमाहणपद्दमसमयम्मि छम्पीससकामयमावत्तुवगयत्तस पुणा विदियसमए सम्मामिच्छत्तं संकामेमाणत्तस

काल प्रमाण है ।

§ ३५८ ब्रह्मसा इस प्रकार है—कोई एक अनादि मिथ्यादृष्टि बीच कपाम सम्बन्धको प्राप्त करने और सत्तावीस प्रकृतियोंका संक्रमण होकर मिच्छात्तरमें गया । फिर पचके असंख्यातमें मगप्रमाद्य अशक्त श्रेयनाम्निकामें जगा रहा और सम्बन्धसत्कार्मके संक्रमणकी बोधस्थापना गारा होनेके पूर्व ही सम्बन्धको प्राप्त होगया । फिर प्रथम ज्ञासत्त सागर अशक्त परिभ्रमण करने अन्तमें मिथ्यात्वमें गया और पश्चात्के समान पचके असंख्यातमें मागप्रमाद्य अशक्त सम्बन्धकी श्रेयसा करता रहा । किन्तु वसन्धी श्रेयनाम्निक अन्तिम पक्षिके साथ ही सम्बन्धको प्राप्त होगया । फिर दूसरे ज्ञासत्त सागर अशक्त परिभ्रमण करने वसन्धी अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । फिर सबसे बड़े श्रेयनाम्निकके द्वारा सम्बन्धकी श्रेयना करने छम्पीस प्रकृतियोंका संक्रमण होगया । इस प्रकार सत्तावीस प्रकृतियोंके संक्रमणका उत्कृष्ट अर्थ वसन्धी तीन असंख्यातमें मागसे अधिक हो ज्ञासत्त माग प्राप्त हुआ । अब छम्पीस प्रकृतियोंके संक्रमणके अन्त्य और उत्कृष्ट अर्थका कर्म करनेके श्रेय भागेश्वर प्राप्त करते हैं—

⊗ छम्पीस प्रकृतिक संकामकक्य कितना काल है ?

§ ३५९. एव सूत्र सुगमं है ।

⊗ अफन्य काल एक समय है ।

§ ३६० ब्रह्मसा इस प्रकार है—सम्बन्ध और सम्बन्धितकारकी सत्तासे रहित जो मिथ्यादृष्टि बीच प्रथम सम्बन्धको प्राप्त करने इसके प्रथम समयमें ज्ञानेश्वर प्रकृतिक संक्रम-

सत्तावीससंकमो होइ ति छव्वीसमक्रमजहणणकालो एयसमयमेत्तो लब्भदे । अहवा जो मिच्छत्तपढमट्टिदीए दुचरिमसमयम्मि सम्मत्तमुव्वेल्लिय एगसमयछव्वीसमकामओ होऊण से काले सम्मत्तं पडिवज्जिय सत्तावीससंकमओ जादो तस्स छव्वीससंकमकालो जहणणओ एयसमयमेत्तो लब्भइ ति वत्तव्वं ।

❧ उक्कसेण पल्लिदोवमस्स अस्संखेज्जदिभागो ।

§ ३६१. तं कथं ? अट्टावीमसंतऋम्मियमिच्छाडडिस्स सम्मत्तमुव्वेल्लियुण पुणो सम्मामिच्छत्तमुव्वेल्लेमाणस्स भव्वो चेव तदुव्वेल्लणकालो छव्वीससंकामयस्स उक्कस्सकालो होइ । सो च पल्लिदोवमासंखेज्जदिभागमेत्तो । णवरि सम्मामिच्छत्तमुव्वेल्लणकालो समयहिओ छव्वीसमकामयस्स उक्कस्सकालो वत्तव्वो, तदुव्वेल्लणचरिमणालि मिच्छत्तपढमट्टिदिचरिमसमए मऋम्मिय सम्मत्तं पडिवण्णम्मि तदुवलभादो । संपहि पणुवीससंकामयकालपरूवणट्टमुत्तरसुत्तं भणइ—

❧ पणुवीसाए संकामए तिण्णि भंगो ।

§ ३६२. तं जहा—अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवमिदो सादिओ सपज्जवमिदो चेदि पणुवीसाए संकामयस्स तिण्णि भंगो ! तत्थाभव्वजीवस्स पढमो भंगो । भव्वजीवस्स सम्मत्तुप्पायणाए विदिओ भंगो । तस्सेव हेट्ठा परिवदिदस्स तदिओ

स्थानको प्राप्त होगया । पुनः दूसरे समयमें सम्यग्मिथ्यात्वका संक्रामक होकर सत्ताईस प्रकृतिक सक्रमस्थानको प्राप्त हुआ उसके छव्वीस प्रकृतिक सक्रमस्थानका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है । अथवा जो जीव मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिके उपान्त्य समयमें सम्यक्त्वकी उद्वेलना करके एक समय तक छव्वीस प्रकृतिक सक्रमस्थानका स्वामी होकर उसके बाद दूसरे समयमें सम्यक्त्वको प्राप्त होकर सत्ताईस प्रकृतियोंका संक्रामक हुआ उसके छव्वीस प्रकृतिक सक्रमस्थानका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है ऐसा यहाँ कहना चाहिए ।

\* उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ३६१ खुलासा इस प्रकार है—अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जो मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वकी उद्वेलना करके पुनः सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर रहा है उसके सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनामें जितना काल लगता है वह सभी काल छव्वीस प्रकृतिक संक्रामकका उत्कृष्ट काल होता है जो कि पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वके उक्त उद्वेलना कालकी एक समय अधिक करके छव्वीस प्रकृतिक संक्रामकका उत्कृष्टकाल कहना चाहिये, क्योंकि जो जीव मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिके अन्तिम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना की अन्तिम फालिका संक्रम करके सम्यक्त्वको प्राप्त होता है उसके उक्त उत्कृष्ट काल प्राप्त होता है । अब पच्चीस प्रकृतियोंके संक्रामकके कालका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

\* पच्चीस प्रकृतिक संक्रामकके तीन भङ्ग हैं ।

§ ३६२ यथा—अनादि-अनन्त, अनादि-साम्त और सादि-सान्त । इस प्रकार पच्चीस प्रकृतिक संक्रामक जीवकी अपेक्षा तीन भङ्ग हैं । उनमेंसे अभव्य जीवके पहला भङ्ग होता है । भव्य जीवके सम्यक्त्वके उत्पन्न करनेपर दूसरा भङ्ग होता है और उसी जीवके सम्यक्त्वसे च्युत होनेपर तीसरा भंग होता है । यहाँ तीसरे भगमें जघन्य और उत्कृष्ट विकल्प सम्भव होनेसे उसका निर्णय करनेके

मंगो । एत्थ तदियमंगो अहण्णुक्कम्मवियप्पममवादो तच्चिण्णयपरूपपण्डुत्तरसुत्त—

⊙ तत्थ जो सो सादिच्चो सपकावसिवो अहण्णेण एगसमओ ।  
उक्कस्सेण उचङ्खुपोग्गलपरियट्ठु ।

§ ३६३ एत्थ ताव अहण्णकालपरूवणा कीरदे—जो उक्खीससकामयमिच्छाईही सम्मामिच्छत्तमुत्तेमणो उवसमसम्मचाहिमुदो होऊण मिच्छत्तपहमट्ठिदीए इत्तरिम-  
समयम्मि सम्मामिच्छत्तनरिमक्कलिं मिच्छत्तसरूबेण सकामिय पुणो चरिमसमयम्मि  
पमुवीसत्तसकामगो होऊण से क्खले पुणो वि उक्खीससकामओ वादो तस्स सद्धो पपद  
अहण्णकालो । अइया अट्ठावीसत्तसकम्मियउवसमसम्मआइही सत्तावीसत्तकामओ  
उवसमसम्मचट्ठाए एगसमओ अथि ति सासणमावं पडिवण्णो पमुवीसत्तकामयमावेणैग-  
समयमच्छिय पुणो विदियसमण मिच्छत्तमुवणमिय सत्तावीसत्तकामओ वादो । अपवा  
अट्ठावीसत्तसकम्मिय उवसमसम्मआइही सगट्ठाए समयाहिपाबलियमेत्तसेसाए सासणमावं  
पडिवण्णो अणंताउपघीणं पंपावत्तियं षोत्ताभिय एगसमय पमुवीसत्तकामओ वादो  
उदणंत्तरसमए मिच्छत्त पडिवत्तिय सत्तावीसत्तकामओ वादो सद्धो सुपुत्तअहण्णकालो ।  
उक्कस्सेणुचङ्खुपोग्गलपरियट्ठु परूवणा कीरदे । त अइया—अट्ठपोग्गलपरियट्ठुदिसमए  
सम्मत्तं पडिवत्तिय तरय अहण्णमंतोसुत्तमुत्तच्छिय मिच्छत्तं गत्तण सम्बल्लं सम्मत्त-

दिय अणोअ सूत्त कइते हैं—

⊙ उनमेंसे जो सादि-सान्त मग है उसका जपन्य काल एक समय कीर उत्कृष्ट  
काल उपार्धपुत्रगलपरिवर्तनप्रमाण है ।

§ ३६३ यहाँ सब प्रथम जपन्य काल का जपन करते हैं—इक्कीस प्रकृतियोंके संक्रमक  
त्रिस मिच्छादष्टि जोवन सम्यग्मिच्छात्तकी उक्त कथ्य करते हुए अणमसम्बल्लके अग्निमुक्क होकर  
मिच्छात्तकी प्रथम स्थितिके द्विचरम समयमें सम्यग्मिच्छात्तकी अन्तिम अक्षिअ मिच्छात्तकमसे  
संक्रमण किया । पुनः अन्तिम समयमें पक्कीस प्रकृतियोंका संक्रमक होकर उत्तरन्तर समयमें  
किरसे इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रमक हो गया । इसके प्रकृत जपन्य काल प्राप्त हुआ । अथवा  
अट्ठास प्रकृतियोंकी सत्तायका जो अणम सम्पट्टि कीव सत्ताईस प्रकृतियोंका संक्रमण करते  
हुए अणमसम्बल्लके कालमें एक समय शेष रहने पर सासादनमालको प्राप्त होकर एक समय तक  
पक्कीस प्रकृतियोंका संक्रमक रहा । पुनः दूसरे समयमें मिच्छात्तको प्राप्त होकर सत्ताईस प्रकृतियोंका  
संक्रमक हो गया इसके पक्कीस प्रकृतिक संक्रमस्वान्तज जपन्य काल एक समय प्राप्त हुआ ।  
अथवा पक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तायका जो अणम सम्पट्टि कीव अणमे कालमें एक समय अधिक  
एक आरमि शेष रहने पर सासादनमालको प्राप्त हुआ । पुनः अणमसम्बल्लपरिवर्तनके अन्यात्तिको  
पिणाकर एक समय तक पक्कीस प्रकृतियोंका संक्रमक हो गया और उत्तरन्तर समयमें मिच्छात्तको  
प्राप्त होकर सत्ताईस प्रकृतियोंका संक्रमक हो गया इसके सूत्राल जपन्य काल प्राप्त हुआ । अथ  
पक्कीस प्रकृतिक संक्रमकके अणमपुत्रगलपरिवर्तनप्रमाण उक्त काल का जपन करते हैं ।  
यथा—कथ एक कीर अथपुत्रगलपरिवर्तन कालके प्रथम समयमें सम्बल्लको प्राप्त हुआ और  
यहाँ सबसे जपन्य अन्तर्मुदुत्त काल तक रहकर मिच्छात्तमें गया । पुनः यहाँ सम्बल्ल और

सम्मामिच्छत्ताणि उच्चेल्लिय पणुवीससंक्रामओ जादो । पुणो उवट्टुपोगलपरियइं परिभमिय अंतोमुहुत्तावसेसे संसारं सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स ताधे पणुवीससंक्रामो णस्सदि त्ति पयदुक्कस्सकालो लट्ठो । संपहि तेवीससंक्रामणस्स जहण्णुकस्सकालणिहालणइमुत्तं पवंधमाह—

❀ तेवीसाए संक्रामओ केवचिरं कालादो होइ ।

§ ३६४. सुगमं

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं, एयसमओ वा ।

§ ३६५. एत्थ ताव अंतोमुहुत्तपरूवणा कीरदे । तं जहा—उवममसम्माइट्ठी अणंताणु० विमंजोइय तेवीससंक्रामओ जादो । तदो जहण्णमंतोमुहुत्तकालमिच्छिय उवसमसम्मत्तद्वाए छावलियावसेसाए सासणगुणं पडिवज्जिय इगिवीससंक्रामओ जादो तस्स लट्ठो तेवीससंक्रामजहण्णकालो अंतोमुहुत्तमेत्तो । संपहि एयसमयपरूवणा कीरदे । तं जहा—एगो चउवीससंतकम्मिओ उवसमसम्माइट्ठी समयूणावलियमेत्तावसेसाए उवमममसम्मत्तद्वाए सासणमसम्मत्तं पडिवण्णो इगिवीससंक्रामओ जादो । क्रमेण मिच्छत्तमुवगओ एगममयं तेवीससंक्रामओ होदण तदणंतरसमयम्मि अणंताणुवधिसंक्रामणावसेण सत्तावीससंक्रामओ जादो लट्ठो एयसमयमेत्तो पयदजहण्णकालो ।

सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वंलना करके पच्चीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । पुनः उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण काल तक परिभ्रमण करके जव संसारमें रहनेका काल अन्तर्मुहूर्त शेष रह गया तब सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ उसके उस समय पच्चीस प्रकृतिक संक्रमस्थान नष्ट हो जाता है, इमलिये उस जीवके प्रकृत उत्कृष्ट काल प्राप्त हुआ । अब तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थानके जघन्य और उत्कृष्ट कालका विचार करनेके लिये आगेकी सूत्ररचनाका निर्देश करते हैं—

\* तेईस प्रकृतिक संक्रामकका कितना काल है ?

§ ३६४ यह सूत्र सुगम है ।

\* जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त या एक समय है ।

§ ३६५ यहाँ सर्व प्रथम अन्तर्मुहूर्तकालका कथन करते हैं । यथा—कोई एक उपशामसम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुवन्धियोंकी विसयोजना करके तेईस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । अनन्तर जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक वहाँ रहा और उपशामसम्यक्त्वके कालमें छह आबलि शेष रहने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त होकर इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया उसके तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हुआ । अब जघन्य काल एक समयका कथन करते हैं । यथा—कोई एक चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशामसम्यग्दृष्टि जीव उपशामसम्यक्त्वके कालमें एक समय कम एक आबलि शेष रहने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त होकर इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया पुनः क्रमसे मिथ्यात्वमें जाकर और एक समय तक तेईस प्रकृतियोंका संक्रामक होकर तदनन्तर समयमें अनन्तानुवन्धियोंका संक्रम होने लगनेके कारण सत्ताईस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया उसके प्रकृत जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ ।



⊙ उक्तस्तेषु छावद्विसागरोषमाणि सादिरेयाणि ।

§ ३६६ त जहा—एषो मिच्छाद्दुही पदमसम्मत्त पडिवज्जिय उषसमसम्मत्त-  
कालम्मतरे षेय अणतापुर्वाधिचउत्तक विसजोदिय अतोमुद्दुचकाल तेवीससकममणुपालिम  
वेदयसम्मत्तपुवणमिय छावद्विसागरोषमाणि परिममिय तद्वसाणे दसणमोइहभलवपाए  
परिणमिदो मिच्छत्त खविय बावीससकमओ जादो । तदो पुम्बिन्सेणुषसमसम्मत्तकाल-  
म्मतरमाविणा अतोमुद्दुचेण मिच्छत्तपरिममल्लिपदजादो उषरिमकद्दरजिज्जपरिमसमय-  
पज्जंत्तोमुद्दुचणेण सादिरेयाणि छावद्विसागरोषमाणि तेवीससकममयस्स उक्तस्सकालो होइ ।

⊙ बावीसाए बीसाए एग्णबीसाए अट्टारसयह तेरसपहं बारसणहं  
एकारसयहं दसयहं अट्टणहं सत्तणहं पचणहं चठणहं तिणहं दोणहं पि काखो  
अहणणेण एयसमओ, उक्तस्सेष अतोमुद्दुत्त ।

§ ३६७ बावीसाए ताव उक्त्वे—एषो षठवीससतकम्मिओ उषसमसेदि चडिय  
अंतकरणांतरमाणुपुष्पीसंकमेण परिणदो एयसमय बावीससकमगो होइण विदिय  
समए काल काठण देवेमुवज्जिय तेवीससकमओ जादो । एषो बावीसाए अहणणकालो ।

⊙ उत्कृष्ट काल साधिक ज्यासठ सागर ई ।

§ ३६६. सुप्रसा इस प्रकार है—कोई एक मिष्याद्वि जीव प्रथम सम्पत्त्वको प्राप्त  
करके अथवा सम्पत्त्वके अभावके भीतर ही अन्ततानुबन्धीचतुष्कली विसंबोधना करके अन्तर्मुहूर्त  
काल तक अंतप्रकृतिक संक्रामस्वानको प्राप्त हुआ । पुनः वेदक सम्पत्त्वको प्राप्त होकर और  
ज्यासठ सागर काल तक परिभ्रमण करके इसके अन्तर्मे देवैरमोहतीत्यधी उपवाके क्रिये ललत  
हो मिष्यात्वका क्षय करके बार्हस प्रकृतियेका संक्रामक हो गया । इस प्रकार इस बीचके जो  
पूर्वोक्त अथवा सम्पत्त्वके अभावके भीतर अंतः प्रकृतिक संक्रामस्वानका अन्तर्मुहूर्त काल प्राप्त हुआ  
है उसमेंसे मिष्यात्वकी अन्तिम चक्षिके पतन समयसे लेकर इत्युक्त्येवैदके अन्तिम समय  
तकका त्रितया काळ है इसे वया देमे पर जो क्षेय काल बचता है उससे अधिक ज्यासठ सागर  
काल अंतः प्रकृतिक संक्रामकका उत्कृष्ट काल होता है ।

⊙ बार्हस, बीस उभीस, अट्टारह, तेरह, बारह, न्यारह, दस आठ, सात, पाँच,  
चार तीन आर दो प्रकृतिक संक्रामकका अपन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट  
काल अन्तर्मुहूर्त ई ।

§ ३६७. सर्वे प्रथम बारस प्रकृतियेके संक्रामकके कालका कथन करते हैं—कोई एक  
बीस प्रकृतियेकी सत्तापका जीव अथवा अस्ति पर जहा और अन्तरकराके बाव आनुपूर्वी  
संक्रमने परिणत होकर एक समय तक बार्हस प्रकृतियेका संक्रामक हुआ । पुनः दूसरे समयमें  
मरकर और देवैरमोहता होकर अंतः प्रकृतियेका संक्रामक हो गया । इस प्रकार यह बार्हस  
प्रकृतिक संक्रामस्वानका अपन्य काल है । जब इस स्थानका अन्तर्मुहूर्त प्रमाण जो अहृष्ट काल  
है इसका दृष्टान्त देत हैं—कदा एक अरिमिमाहकी क्षया करन्वाका जीव मिष्यात्वका क्षय करके

१ वा -वा प्रत्येः अनुवाकीर्णकमओ इति पाठः ।

२ वा प्रत्ये एवमथा ( ए ) इति पाठः ।

उक्खसेणंतोमुहुत्तपरूवणाए णिदरिसणं—एगो ढंसणमोहक्खवओ मिच्छत्तं राविय सम्मामिच्छत्तरवणद्वाए वावीससंकामओ जादो जाव चरिमफालिपदणसमओ त्ति एसो च कालो अतोमुहुत्तमेत्तो ।

§ ३६८. संपहि वीसाए उच्चडे । तं जहा—तत्थ जहण्णेणेगसमओ त्ति उत्ते एक्को इगिवीससंकामओ उवसमसेट्ठि चट्ठिय लोभस्सासंकामगो होदूण एयसमयं वीसमंक्रमणुपालिय तदणंतरसमयम्मि कालं कारुण देवेमुववज्जिय इगिवीससंकामओ जादो । लद्धो एयसमओ । उक्खसेणंतोमुहुत्तमिदि उत्ते एक्को इगिवीससंतकम्मिओ णवुंसयवेदोदएण उवसमसेट्ठि चट्ठिय अंतरकरणं कादूणाणुपुव्वीसंकमवसेण वीसाए संकामओ जादो । तदो तस्स णवुंसयवेदोवमणकालो सव्वो चेय पयदुक्कस्सकालो होइ ।

§ ३६९. संपहि एगूणवीसमंकमट्टाणस्स जहण्णुव्वस्सकालणिण्णय कस्सामो । तं जहा—इगिवीससंतकम्मिओ उवसमसेटीमारूढो अंतरकरणं समाणिय णउंसयवेद-मुवमामिऊण ऊणवोमाए संकामओ जादो । विट्ठियसमए कालगओ देवेमुववण्णो इगिवीससंकामओ जादो तस्स लद्धो एगममओ । तस्सेव णवुंसयवेदमुवमामिय इत्थि-वेदोवसामणावावदस्स तदुवसामणकालो सव्वो चेय पयदुक्कस्सकालो होइ त्ति वत्तव्वं ।

सम्यग्निमध्याह्नका क्षय होनेके कालमें अन्तिम फालिके पतनके समय तक घाइस प्रकृतिक संक्रम-स्थानका स्वामी रहा उसके यह काल अन्तर्मुहूर्त होता है । इसीसे वाईस प्रकृतिक संक्रमस्थानका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है ।

§ ३६८ अथ वीस प्रकृतिक संक्रमस्थानके कालका विचार करते हैं । यथा—उसमें भी जो जघन्य काल एक समय कहा है उसका खुलासा करते हैं—कोई एक इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रामक जीव उपशमश्रेणि पर चढ़कर और लोभका असक्रामक होकर एक समय तक वीस प्रकृतियोंके संक्रमको प्राप्त हुआ । पुन तदनन्तर समयमें मरा और देव होकर इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । इस प्रकार वीस प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य काल एक समय प्राप्त हो गया । अथ जो उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है उसका खुलासा करते हैं—कोई एक इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव नपुंसकवेदके उद्यसे उपशमश्रेणि पर चढ़ा । पुन अन्तरकरण करके आनुपूर्वी संक्रमके घशसे वह वीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । अनन्तर उसके नपुंसकवेदके उपशम करनेका जितना काल है वह सब प्रकृत स्थानका उत्कृष्ट काल है ।

§ ३६९. अथ उन्नीस प्रकृतिक संक्रमस्थानके जघन्य और उत्कृष्ट कालका निर्णय करते हैं । यथा—कोई एक इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव उपशमश्रेणि पर चढ़ा । फिर अन्तरकरण करके और नपुंसकवेदका उपशम करके उन्नीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । तथा दूसरे समयमें मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ और इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । इस प्रकार इसके उन्नीस प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ । तथा वही जीव जब नपुंसकवेदका उपशम करके स्त्रीवेदका उपशम करने लगता है तब स्त्रीवेदके उपशम करनेमें जितना काल लगता है वह सब प्रकृत स्थानका उत्कृष्ट काल होता है ऐसा यहाँ कहना चाहिये ।

॥ ३७० ॥ सपदि अद्वारससंक्रमणान्तस जहणुःस्तकालपरूपणा क्षीरदे । त जहा—  
इगिबीससतकम्मिओवसामओ णनुसप-इत्थिवेदुसुवतामिय एयसमपमद्वारससकमओ  
होठण तदणतरसमए फाल कादूण देवेसुववक्रिय इगिबीससकामओ जादो लद्धो  
पयदसकमहाणजहणणकालो । तस्सेव जाव छण्णोकसाया अणुवसता ताव तदुवसामण-  
कालो सन्वो भेय पयदुस्तकालो होइ ।

॥ ३७१ ॥ सपदि संरससकमहाणस जहणुःस्तकालपरूपणा क्षीरदे—अउबीस-  
सतकम्मिओवसामओ जहाकर्म णवणोकसाए उवसामिय एयसमप संरससकामओ जादो ।  
तदणतरसमए कालं क्खण्ण तेवाससकामओ जादो तस्स पयदजहणणकालो होइ ।  
सुवगो अट्टकसाए सुविय जाव आणुपुम्बीसंक्रमं पाइवेइ ताव पयदुस्तकालो पेतन्वो ।

॥ ३७२ ॥ सपदि वारससकमहाणजहणुःस्तकालपरूपणा क्षीरदे । त जहा—  
इगिबीससतकम्मिओवसामओ अहाकमसुवसामिदद्वणोकसाओ एयसमपवारससकामओ  
जादो । विदियसमए फाल कादूण देवेसुववण्णो इगिबीससकामओ जादो । लद्धो  
एगसमओ । उक्तसंणवोसुहुचमेत्तकालपरूपणोदाहरणं—एगो सज्जो धारित्तमोहकत्ववणाए  
अम्भुद्धिदो आपुपुम्बीसकमे कादूण तदो जाव णनुसपवेद ण खवेइ ताव विवक्खिय  
सकमहाणुस्तकालो होइ ।

॥ ३७० ॥ अथ अत्राह प्रकृतिक संक्रमस्वान्तकं अथन्य और उत्कृष्ट काव्य कथन करते हैं ।  
पद्य—ओ इक्षीस प्रकृतियोषी सत्पापात्ता वपरमक जीव मयु सकमद और क्षीवक्य वपरम  
करके एक समयके सिधे अत्राह प्रकृतियोषी संक्रमक हो कर तदनन्तर समयमें मर कर और  
देवमें वरम हा कर इक्षीस प्रकृतियोषी संक्रमक हो गया उसके प्रकृत स्वभावक अथन्य काल  
एक समय प्राप्त हुआ । तथा इसीके अन्तक वह नोक्यायोषी वपरम नहीं हुआ वह एक वपरममें  
अगमपाया कितना भी काह इ वह प्रकृत स्वानक उत्कृष्ट काव्य होता है ।

॥ ३७१ ॥ अथ तेज प्रकृतिक संक्रमस्वान्तके अथन्य और उत्कृष्ट काव्य कथन करते हैं—  
ओबीस प्रकृतियोषी सत्पापात्ता ओ वपरमक जीव क्रमसे नौ नोक्यायोषी वपरम करके एक  
समयके सिधे तेज प्रकृतियोषी संक्रमक हुआ और तदनन्तर समयमें मरकर लईस प्रकृतियोषी  
संक्रमक हुआ इसके प्रकृत स्वानक अथन्य काल प्राप्त होता है । तथा ओ वपरक जीव आठ  
क्यायोषी क्षय करके जब एक आनुपूर्वी संक्रमक मारम्भ नहीं करता है तब एक प्रकृत स्वानक  
उत्कृष्ट काव्य प्रद्वय करना चाहिये ।

॥ ३७२ ॥ अथ वाए प्रकृतिक संक्रमस्वान्तकं अथन्य और उत्कृष्ट काव्य कथन करते हैं ।  
पद्य—ओ इक्षीस प्रकृतियोषी सत्पापात्ता वपरमक जीव क्रमसे आठ क्यायोषी वपरम करके  
एक समयके सिधे वाए प्रकृतियोषी संक्रमक हो गया और दूसरे समयमें मर कर तथा देव  
होकर इक्षीस प्रकृतियोषी संक्रमक हो गया इसके एक स्वानक अथन्य काल एक समय प्राप्त  
हुआ । अथ इस स्वानक उत्कृष्ट काव्य को अन्तर्गृह्य कहा है इसका वद्वाराय वह है—कैसे एक  
संयत जीव चारित्र्योद्गीतीयकी वरमके सिधे वपत् होकर और आनुपूर्वी संक्रमको करके अन्तः  
अथ एक मयु सकमदक क्षय नहीं करता है तब एक विवक्षित संक्रमस्वानक उत्कृष्ट काव्य होता है ।

१ ३७३. संपहि एयारससंकामयजहण्णुक्कस्सकालपरूवणा कीरदे । तं जहा—  
इगिवीससंतकम्मिओ उवसामओ जहाकममुवसामिदणवणोकसाओ एयसमयमेकारस-  
संकामओ होऊण तदणंतरममए कालं कादूण देवो जादो तम्मस लद्धो एयसमयमेत्तो  
पयदसंकमट्टाणजहण्णकालो । खवगो णवुंसयवेदं सवेदूण जावित्थिवेदं ण सवेड ताव  
पयदुक्कस्सकालो होइ ।

१ ३७४. संपहि दससंकमट्टाणपडिवद्धजहण्णुक्कस्सकालपरूवणा कीरदे । तं  
जहा—चउवीससंतकम्मिओवसामिओ तिविहकीहोवसामणाए परिणटो एयसमयं दस-  
संकामओ जादो, विदियममए देवेसुववज्जिय तेवीससंकामओ संजादो, लद्धो पयद-  
संकमट्टाणजहण्णकालो । उक्कस्सकालो पुण खवगस्म छण्णोकसायखवणद्वामेत्तो वेत्तव्वो ।

१ ३७५. अट्टमकमट्टाणजहण्णुक्कस्सकालविहामणं कस्सामो । त जहा—चउवीस-  
यत्तकम्मिओवसामओ दुविहमाणमुवसामिय एयसमयमट्टमंकामओ होदण विदियसमए  
कालगदो देवेमुखवणो लद्धो पयदजहण्णकालो । उक्कस्सकालपरूवणाणिदरिसण—  
एगो इगिवीसयत्तकम्मिओवसामगो कमेण णवणोकसाए तिविह च कोहमुवसामिय  
अट्टमंकामओ जादो । तत्थंतोमुहुत्तमच्छिऊण दुविहमाणोवसामणाए छण्ह मंकामओ  
जाओ, लद्धो णिरुद्धसंकमट्टाणुक्कस्सकालो दुविहमाणोवसामणद्वामेत्तो ।

१ ३७३ अथ ग्यारह प्रकृतियोंके सक्रामकके जघन्य और उत्कृष्ट कालका कथन करते हैं ।  
यथा—जो इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशामक जीव क्रमसे नौ नोकपायोंका उपशाम करके  
एक समयके लिये ग्यारह प्रकृतियोंका सक्रामक हो कर तदनन्तर समयमें मर कर देव हो जाता  
है उसके प्रकृत सक्रमस्थानका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है । तथा जो चपक जीव नपु सक  
वेदका क्षय करके जब तक स्त्रीवेदका क्षय नहीं करता है तततक प्रकृत स्थानका उत्कृष्ट काल होता है ।

१ ३७४ अथ दस प्रकृतिक सक्रमस्थानके जघन्य और उत्कृष्ट कालका कथन करते हैं ।  
यथा—जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशामक जीव तीन प्रकारके क्रोधके उपशाम भावसे  
परिणत होकर एक समयके लिये दस प्रकृतियोंका सक्रामक हुआ और दूसरे समयमें देवोंमें  
उत्पन्न होकर तेईस प्रकृतियोंका सक्रामक हुआ उसके प्रकृत सक्रमस्थानका जघन्य काल प्राप्त होता  
है । तथा चपक जीवके छह नोकपायोंकी क्षपणामे जितना काल लगे उतना इस स्थानका उत्कृष्ट  
काल लेना चाहिये ।

१ ३७५ अथ आठ प्रकृतिक सक्रमस्थानके जघन्य और उत्कृष्ट कालका व्याख्यान करते हैं ।  
यथा—जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशामक जीव दो प्रकारके मानका उपशाम करके  
एक समयके लिये आठ प्रकृतियोंका सक्रामक हो कर और दूसरे समयमें मर कर देवोंमें उत्पन्न  
हुआ उसके प्रकृत स्थानका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है । अथ जो अन्तर्मुहूर्त प्रमाण  
उत्कृष्ट काल कहा है उसका दृष्टान्त देते हैं—जो इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशामक जीव  
क्रमसे नौ नोकपाय और तीन प्रकारके क्रोधका उपशाम करके आठ प्रकृतियोंका सक्रामक हो गया  
है । फिर वहाँ अन्तर्मुहूर्त काल तक रह कर जो दो प्रकारके मानका उपशाम हो जाने पर छह  
प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया है उसके दो प्रकारके मानके उपशाम करनेमें जितना काल लगता है  
तत्प्रमाण विवक्षित संक्रमस्थानका उत्कृष्ट काल प्राप्त होता है ।

§ ३७६ सपदि सप्तसंक्रमणयज्ञहण्युक्तस्तकालगिण्यविहाणं वचस्तसामो—  
अहण्यकालो ताव षठवीससतकम्मिभोवसामयस्त तिविहमाभोवसामणाण परिणदस्त  
बिदियसमए वेव कालं फादूण दवेसुववण्णस्त सम्मद । उक्तस्तकालो पुण तस्तव  
दुविहमाभोवसामणाए वावदस्त आव तदणुवसमो चि ताव अतोमुदुत्तमसो सम्मदे ।

§ ३७७ सपदि पंचसंक्रमणयज्ञहण्युक्तस्तकालपरूवणा करिदे । त अहा—तेणेव  
सप्तसंक्रमणयज्ञ दुविहमाभोवसामणाए कदाए एयसमय पचसकामओ होदूण बिदिय  
समए भवकसएण देवो आदो तस्त पचदअहण्यकालो होइ । उक्तस्तकालो पुण  
इगिवीससतकम्मिभोवसामगस्त तिविहमाभोवसमणपरिणदस्त आव दुविहमायाणुसमो  
ताव होइ ।

§ ३७८ षट्ठण्ह संकामयस्त अहण्युक्तस्तकालपरूवणा करिदे । तत्व ताव  
अहण्यकालपरूवणोदाहरणं—षठवीससतकम्मिभोवसामगो मायासअलणयुवसामिय  
षठण्ह संकामआ आदो, तत्थेयसमपमच्छिय बिदियसमए जीविददाकसएण देवो आदो  
तस्त पचदअहण्यकालो होइ । उक्तस्तकालो वि तस्तेव मरणपरिणामविरहियस्त  
मायासअलणोवसमप्यदुवि आव दुविहलोहाणुवसमो चि ताव अतोमुदुत्तमेवो होइ ।

§ ३७९ तिण्ह संकामयस्त अहण्युक्तस्तकालपरूवणा करिदे । त अहा—

§ ३७६ अथ सप्त प्रकृतिक संकामकके अण्य और वत्तु कालके निर्णय करनेकी विधि  
कहाते हैं—जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावादा अण्यकाल जीव तीन प्रकारके मानक अण्य  
कालके और दूसरे समयमें मर कर देवोंमें उत्पन्न हुआ है उसके प्रकृत स्वानक अण्य काल प्राप्त होता  
है । तथा इसी जीवके दो प्रकारकी मायाक अण्यकाल करते हुए जब तक जनक अण्य नहीं होता  
है तब तक एक स्वानक अण्यकाल प्राप्त होता है ।

§ ३७७ अथ पाँच प्रकृतिक संकामकके अण्य और वत्तु कालक कथन करते हैं ।  
यथा—वही सप्त प्रकृतियोंका संकामक जीव दो प्रकारकी मायाक अण्यकाल करते एक समयके लिए  
पाँच प्रकृतियोंका संकामक हो गया । फिर दूसरे समयमें आनुष्य क्य हो जानेसे वेच हो गया ।  
इस प्रकार इस जीवके प्रकृत स्वानक अण्य काल प्राप्त होता है । तथा इसीस प्रकृतियोंकी  
सत्तावादा जो अण्यकाल जीव तीन प्रकारकी मायाक अण्यकाल कर रहा है उसके जब तक दो  
प्रकारकी मायाक अण्यकाल नहीं हुआ है तब तक प्रकृत स्वानक अण्य काल होता है ।

§ ३७८ अथ चार प्रकृतिक संकामक जीवके अण्य और वत्तु कालक कथन करते हैं ।  
इसमें भी सर्व प्रथम अण्य कालक अण्यकाल देत हैं—जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावादा अण्य  
कालक जीव मात्रा संकामक अण्यकाल करते चार प्रकृतियोंका संकामक हो गया और वही एक  
समय तक रहकर दूसरे समयमें आनुष्य क्य हो जानेसे वेच हो गया है उसके प्रकृत स्वानक  
अण्य काल प्राप्त होता है । तथा मरणके परियामसे रहित इसी जीवके मात्रा संकामक अण्यकाल  
होकर जब तक दो प्रकारके अण्यकाल नहीं होता तब तक एक अण्यकाल करनेमें जो अण्यकाल  
काल लगाता है वह प्रकृत स्वानक अण्य काल होता है ।

§ ३७९ अथ तीन प्रकृतिक संकामक जीवके अण्य और वत्तु कालक कथन करते हैं ।

इगित्रीससंतकम्मिओवमामिओ दुविहमायोवगामणाए परिणतो तिण्हं संकामओ जादो । विदियममए देवेसुववण्णो तस्म लद्धो पयदजहण्णकालो । उकस्सकालो पुण चरित्त-  
मोहक्खवयस्स कोहमंजलणस्खवण्णकालो मच्चो चैय होइ ।

§ ३८०. संपहि दोण्हं संकामयस्स जहण्णुकस्सकालपरिक्खा कीरदे । तं जहा—  
चउवीसमंतकम्मिओवसामओ आणुपुव्वीसंकमादिपरिवाडीए दुविहलोहमुवसामिय मिच्छत्त-  
सम्मामिच्छत्ताणमेयममयं संकामओ होऊण विदियसमए भवक्खएण देवभावमुवणओ  
तस्स णिरुद्धजहण्णकालो होइ । तस्सेव दुविहलोहोवममप्पहुडि' जाव ओयरमाण-  
सुहुममांपराइयचरिमसमओ त्ति ताव पयदुकस्सकालो होइ ।

§ ३८१. संपहि इगिवीमसंकामयजहण्णुकस्सकालपदुप्पायणद्धं सुत्तमाह—

❀ एकवीसाए संकामओ केवचिरं कालादो होइ ?

§ ३८२. सुगमं ।

❀ जहण्णेणेयसमओ ।

§ ३८३. तं कथं ? चउवीसमंतकम्मियउव'सामयस्स णवुंसयवेदोवसामणावसेण  
लद्धप्पसस्वस्स पयदमंकमट्टाणस्स मरणवसेण विदियसमए विणासो जादो, लद्धो

यथा—जो इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशामक जीव दो प्रकारकी मायाके उपशम भावसे परिणत होकर तीन प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया है और दूसरे समयमें मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ है उसके प्रकृत स्थानका जघन्य काल प्राप्त होता है । तथा चारित्रमोहनीयकी क्षण करानेवाले जीवके क्रोधसज्वलनकी क्षणका जितना काल है वह सब प्रकृत स्थानका उत्कृष्ट काल होता है ।

§ ३८० अथ दो प्रकृतिक संक्रामकके जघन्य और उत्कृष्ट कालका विचार करते हैं ।  
यथा—जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशामक जीव आनुपूर्वी संक्रम आदि परिपाटीके अनु-  
सार दो प्रकारके लोभका उपशम करके मिथ्यात्व और सन्ध्यात्मिथ्यात्वका एक समयके लिये संक्राम-  
क होता है और दूसरे समयमें आयुका क्षय हो जानेके कारण देवभावको प्राप्त हो जाता है उसके  
प्रकृत स्थानका जघन्य काल होता है । तथा उसी जीवके दो प्रकारके लोभका उपशम होनेके समयसे  
लेकर उतरते समय सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानके अन्तिम समय तक जितना काल होता है वह सब  
प्रकृत स्थानका उत्कृष्ट काल होता है ।

§ ३८१. अथ इक्कीस प्रकृतियोंके संक्रामक जीवके जघन्य और उत्कृष्ट कालका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

\* इक्कीस प्रकृतिक संक्रामकका कितना काल है ?

§ ३८२. यह सूत्र सुगम है ।

\* जघन्य काल एक समय है ।

§ ३८३ खुलासा इस प्रकार है—जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशामक जीव नपुंसकवेदका उपशम हो जानेके कारण इस संक्रमस्थानको प्राप्त हुआ है और मर जानेके कारण

१ ता०—आ०प्रत्यो दुविहकोहोवसमप्पहुडि इति पाठः ।

२ ता०प्रतौ—कम्मिओ (य) उव,—आ०प्रतौ—कम्मिओ उव— इति पाठ ।

एगसमञ्जो । अतर्षीससंतकम्मियउवसमसम्माइडिस्स वि एगसमय सासन्नुणपडिबपिबसेण पयइअहण्णकालसंसंमवो वचन्वो ।

⊗ उहस्सेष तेत्तीससागरोवभाषि साविरेयापि ।

§ ३८४ सं अहा—देशेणैरुपाणमण्णदरपञ्चायदस्त अतर्षीससंतकम्मियस्त गम्मादिअहवस्साणमतोमुहुत्तम्महियाणमुवरि सम्बलहुं दसणमोहक्खवणाए परिणमिय इगिणीसमकम पारमिय देसणपुण्यकोटिं सवमभाषेण विहरिय कालं काट्ठण विजयाविस्सु समरुणतेत्तीससागरोवममेत्तदेवायुगमणुपास्सिय तत्तो अत्रय पुण्यकोटाटगमणुस्तपजाएण परिणमिय सम्बअहण्णत्तोमुहुत्तावसेसे सिन्निद्धवए अथयसेवीमारोहणेणहुकसायक्खवणाए तेरससकामयभावमुवणयस्त दोअत्तोमुहुत्तम्महियहुवस्सपरिहीणवि'पुण्यकोटीहि साविरेय तेत्तीससागरोवममेत्तुक्खस्सफलोवसन्ही अदा ।

⊗ चोरसयहं अथयहं छुण्ह पि काळो जहण्णेथेयसमञ्जो ।

§ ३८५ तस्य चोरससंकामयस्त अहण्णकालपक्खणोदाहरण—एद्धो अतर्षीस-संतकम्मिओवसामिओ अहुणोक्साए उवसामिय एयसमयचोरससंकामञ्जो अदो । विवियसमए भवक्खएण देवेसु उप्पण्णो, लद्धो पयइअहण्णकालो । णवण्हं सकममयस्त

जिसके दूसरे समयमें प्रकृत संकामस्नानका विमारा हो गया है उसके इस संकामस्नानका अवन्य काल एक समय प्राप्त होता है । इसी प्रकार जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाक्य उपरामसम्बन्धित बीस एक समयके क्रिये सासारण गुणस्नानको प्राप्त होता है उसके भी प्रकृत स्नानका अवन्य काल एक समय कबना चाहिये ।

⊗ उत्कृष्ट काल साधिक तेत्तीस सागर है ।

§ ३८६ सुखासा इस प्रकार है—जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाक्य बीस देव या नरक पर्यायसे आकर तथा गर्भसे लेकर आठ वर्ष और अन्तर्मुहूर्तके बाद अतिशीघ्र वरानमोहकी क्षणका करने इन्कीस प्रकृतियोंका संकामक हो गया है । फिर कुछ कम पूर्वकोटि काज तक संकामके साथ विहार करके जो मग और निजवाचिकमें एक समय कम तेत्तीस सागर काज तक देव पर्यायके साथ रहा है । फिर वहाँसे मनुत होकर जिसने एक पूर्वकोटि आयुके साथ मनुष्य पर्यायको प्राप्त किया है । फिर वहाँ अब सिद्ध होनेके क्रिये सबसे अवन्य अन्तर्मुहूर्त काज होय रहा तब जिसने कणक-मेयी पर अङ्कुर और आठ कणयोंका ध्यय करके तेरा प्रकृतिक संकामस्नानको प्राप्त कर लिया है उसके प्रकृत संकामस्नानका उत्कृष्ट काज जो अन्तर्मुहूर्त और आठ वर्ष कम तथा दो पूर्वकोटि अधिक तेत्तीस सागर प्राप्त होय है ।

⊗ चादह, नौ और छह प्रकृतियोंके संकामकाल भी अवन्य काल एक समय है ।

§ ३८७. इसमेंसे चौरह प्रकृतिक संकामकके अवन्य कालका काल करनेके क्रिये बहवहरण देते हैं—जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाक्य उपरामक बीस आठ नौ कणयोंका उपराम करने एक समयके क्रिये चौरह प्रकृतियोंका उपरामक हो गया है और दूसरे समयमें आयुका कव हो जानेसे देवमें उत्पन्न हुआ है उसके प्रकृत स्नानका अवन्य काज एक समय प्राप्त होता है । अथ नौ प्रक-

१ वा प्रती -हीवा पि, आ प्रती -हीये वि इति पाठः ।

उक्क० तेत्तीस सागरो० अंतोमुहुत्तूणाणि । २१ संका० जह० एयस०, उक्क० सागरो-  
वमाणि देखूणाणि । एवं पढमाए । णवरि उक्क० सगाड्ढिदी । विदियादि जाव सत्तमा  
त्ति एवं चेव । णवरि सगाड्ढिदी वत्तव्वा । २१ संका० जह० एयस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं ।

संक्रामकका काल ओघके समान ह । तेईस प्रकृतिक संक्रामकका जघन्य काल एक समय हें और  
उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्तकम तेतीस सागर है । तथा इक्कीस प्रकृतिक संक्रामकका जघन्य काल एक  
समय ह और उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागर है । इसी प्रकार प्रथम पृथिवीमे कहना चाहिये ।  
किन्तु इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण कहना चाहिये । दूसरी पृथिवीसे लेकर  
सातवीं पृथिवी तक कालका कथन इसी प्रकार करना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहा पर  
उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण कहना चाहिये । तथा इन पृथिवियोंमें इक्कीस प्रकृतिक  
संक्रामकका जघन्य काल एक समय हें और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त हें ।

**विशेषार्थ**—अन्य गतिका जो जीव सम्यक्त्वकी उद्वेलनामे एक समय शेष रहने पर मर  
कर नरकमे उत्पन्न हुआ है उसके नरकमे २७ प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य काल एक समय प्राप्त  
होता है । यह २७ प्रकृतिक संक्रमस्थानकी जघन्य काल विषयक ओघ प्ररूपणा प्रथमादि सातों नरकोंमे  
घटित हो जाती है । तथा जो सातवें नरकका नारकी जीव जीवनके प्रारम्भमें व अन्तमे २८ प्रकृतियोंकी  
सत्तावाला मिथ्यादृष्टि रहता है और मध्यमें पूरे काल तक अतन्तानुबन्धीकी विसंयोजना  
किये बिना वेदकसम्यग्दृष्टि हो जाता है उसके २७ प्रकृतियोंके संक्रामकका उत्कृष्ट काल ३३ सागर  
प्राप्त होता है । आशय यह है कि ऐसे जीवन भर २८ प्रकृतियोंकी सत्तावाला बनाये रखनेके  
साथ सासादन और मिश्र गुणस्थानमें नहीं ले जाना चाहिये । तब जाकर २७ प्रकृतिक संक्रमस्थान-  
का यह उत्कृष्ट काल प्राप्त होता है । सातवें नरकमे यह उत्कृष्ट काल इसी प्रकार घटित करना  
चाहिये । किन्तु शेष नरकोंमे इस कालको अपनी अपनी आयु प्रमाण कहना चाहिये । इतनी  
विशेषता है कि छठे नरक तकके जीवोंको अन्तमे मिथ्यात्वमे ले जानेका कोई कारण नहीं है,  
क्योंकि वहा तकके नारकियोंका सम्यग्दर्शनके रहते हुए भी मरण होता है । २५ प्रकृतियोंके  
संक्रामकका जघन्य काल एक समय जिस प्रकार ओघ प्ररूपणामे घटित कर आये हैं उसी प्रकार  
यहाँ भी घटित कर लेना चाहिये । तथा सामान्यसे नारकीकी उत्कृष्ट आयु तेतीस सागर होती है  
अतः इस स्थानका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर कहा है । प्रथमादि नरकोंमें भी इस स्थानके जघन्य  
और उत्कृष्ट कालको इसी प्रकार प्राप्त कर लेना चाहिये । केवल उत्कृष्ट काल अपनी अपनी आयु-  
प्रमाण कहना चाहिये । छठीस प्रकृतिक संक्रमस्थानके जघन्य और उत्कृष्ट कालका जो क्रम ओघसे  
मतलाया है वह क्रम यहाँ नरकमे भी सामान्यसे या प्रत्येक नरकमे बन जाता है, इसलिये यहाँ इस  
स्थानका काल ओघके समान होता है यह निर्देश किया है । तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य  
काल एक समय जिस प्रकार ओघसे घटित कर आये हैं उसी प्रकार यहा नरकमें भी घटित कर  
लेना चाहिये । किन्तु उत्कृष्ट कालमें कुछ विशेषता है । वात यह है कि सामान्यसे नरकायु तेतीस  
सागरसे अधिक नहीं होती, अतः तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थानका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कम तेतीस  
सागर और प्रत्येक नरककी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त कम अपनी अपनी उत्कृष्ट आयुप्रमाण प्राप्त होता  
है । २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य काल एक समय सासादन गुणस्थानकी अपेक्षासे और  
उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागर ज्ञायिकसम्यग्दर्शनकी अपेक्षासे प्राप्त होता है, अतः सामान्यसे  
नरकमे व प्रथम नरकमें यह कथन इसी प्रकारसे बन जाता है । किन्तु द्वितीयादि नरकोंमें ज्ञायिक  
सम्यग्दृष्टि नहीं पैदा होते, अतः वहाँ उत्कृष्ट काल मिश्र गुणस्थानकी अपेक्षासे घटित करना  
चाहिये । इसीसे द्वितीयादि नरकोंमें २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है ।



१ २८७ त अहा—अधीससत्कम्मिजोवसामयस्स सम्भोवसमं फाट्ठण हेहा औपरमाणस्स वारसकसायाणमोफुत्थाय वावदस्स चाव सत्तणोफसायाणमणोफुत्था ताव चोत्तससकमयस्स उक्कस्सकल्लो होइ । एव छण्हं । जवण्ह पि वत्तव्वं । पत्तरि इगिवीससत्कम्मिजोवसामयस्स सम्भोवसामणादो पडिच्चदिदस्स अहाकमं तिविहमाय-  
माणाणमोफुत्थणपरिणदावत्त्वाय परूयेयव्वं । संपहि एक्किस्से संकमहाणस्स अहण्णुक्कस्स-  
फालाभिरुवण्णुसुत्तरसुत्त मण्ह—

⊗ एक्किस्से सत्तामधो केवचिरं कात्थावो होइ ?

१ २८८ सुगमं ।

⊗ जहण्णुक्कस्सेय धत्तोमुत्त ।

१ २८९ खवपस्स माणसबलणमखवणाण एयसंकायत्तमुवययस्स मायासबलण-  
क्खवणकल्लो अवोयुत्तमेचो एक्किस्से सत्तामयकल्लो होइ । सो च कोहमाणोदएण  
चदिदस्स जहण्णो मायोदएण चदिदस्स उक्कस्सो होदि चि वेत्तव्वो ।

१ २९० एवमोयेण सम्बसंकमहाणमं कात्तपरूवण फाट्ठण संपहि आदेस-  
परूवण्णुसुत्तारण वत्तस्सामो । त अहा—आदेसेण वेत्तय सत्तावीस-यचवीससंकायमाणं  
अह एयसमज्जो, उक्कस्सेण तेचीस सागरोवमाणि । २६ ओषं । २३ अह० एगस०,

१ २९० सुकसा इस प्रकार है—सर्वोपरम करने के लिये नीचे उतारनेवाले चौबीस प्रकृतियों-  
की सत्तावाले अणुपरमक बीजके बाह्य कणायोंके अपकमयमें व्यग्रुत रहते हुए जब एक सत्त  
नोफुत्थायोंका अपकर्मण मही होता तब एक बसके चौदह प्रकृतिक संकमस्त्वानक उत्कृष्ट काल होया  
ह । तब इसी प्रकार अह और भी प्रकृतिक संकमकके उत्कृष्ट कालका भी कथन कजा चाहिये ।  
किन्तु इतनी निशेपण है कि जो इन्हीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला अणुपरमक बीज सर्वोपरममात्से  
प्युत हो रहा है उसके क्रमसे तीन प्रकारकी मात्रा और तीन प्रकारके मात्रक अपकर्मण करने पर  
प्रकृत स्थानोंके उत्कृष्ट कालका कथन करजा चाहिये । अब एक प्रकृतिक संकमस्त्वानके अपन्य और  
उत्कृष्ट कालका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

⊗ एक प्रकृतिक संकामकका कितना काल है ?

१ २९१ यह सूत्र सुगम है ।

⊗ अपन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्गृह्य है ।

१ २९१ जो अणु जीव मात्र संकमस्त्वानक जब करनेके बाह्य एक प्रकृतिक संकामक हो गया  
है उसके मात्रा संकमस्त्वानके कथन करनेमें जो अन्तर्गृह्य काल जगता है वह एक प्रकृतिक संकामकका  
काल है । किन्तु वह अणु और मात्राके अणुसे अणुके लिये पर चढ़े हुए बीजके अपन्यकर्म होया है  
और मात्राके अणुसे चढ़े हुए बीजके उत्कृष्टकर्म होया है ऐसा अर्थ प्रकृतिक कथन करना चाहिये ।

१ २९ इस प्रकार औपसे सब संकमस्त्वानोंके कालका कथन करने जब आदेशक कथन  
करनेके लिये अणुपरमको कथनते हैं । यथा—आदेशके आरम्भमें सत्ताईस और पचवीस प्रकृतिक  
संकामकका अपन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेचीस सागर है । अन्हीस प्रकृतिक

१ ता अतो २० एवि चटः ।

उक्क० तेत्तीसं सागरो० अंतोमुहुत्तूणाणि । २१ संका० जह० एयस०, उक्क० सागरो-  
वमाणि देवूणाणि । एव पढमाए । णवरि उक्क० सगाड्ढिदी । विट्ठियादि जाव सत्तमा  
त्ति एवं चेव । णवरि सगाड्ढिदी वत्तन्वा । २१ संका० जह० एयस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं ।

संक्रामकका काल ओघके समान है । तेईस प्रकृतिक संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और  
उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्तकम तेतीस सागर है । तथा इक्कीस प्रकृतिक संक्रामकका जघन्य काल एक  
समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागर है । इसी प्रकार प्रथम पृथिवीमें कहना चाहिये ।  
किन्तु इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण कहना चाहिये । दूसरी पृथिवीसे लेकर  
सातवीं पृथिवी तक कालका कथन इसी प्रकार करना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहा पर  
उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण कहना चाहिये । तथा इन पृथिवियोंमें इक्कीस प्रकृतिक  
संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

**विशेषार्थ—**अन्य गतिका जो जीव सम्यक्त्वकी उद्वेलनामे एक समय शेष रहने पर मर

कर नरकमें उत्पन्न हुआ है उसके नरकमे २७ प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य काल एक समय प्राप्त  
होता है । यह २७ प्रकृतिक संक्रमस्थानकी जघन्य काल विषयक ओघ प्ररूपणा प्रथमादि सातों नरकोंमें  
घटित हो जाती है । तथा जो सातों नरकका नारकी जीव जीवनके प्रारम्भमें व अन्तमें २८ प्रकृतियोंकी  
सत्तावाला मिथ्यादृष्टि रहता है और मध्यमे पूरे काल तक अनन्तानुबन्धीकी विसयोजना  
क्रिये बिना वेदकसम्यग्दृष्टि हो जाता है उसके २७ प्रकृतियोंके संक्रामकका उत्कृष्ट काल ३३ सागर  
प्राप्त होता है । आशय यह है कि ऐसे जीवकी जीवन भर २८ प्रकृतियोंकी सत्तावाला बनाये रखनेके  
साथ सासादन और मिश्र गुणस्थानमे नहीं ले जाना चाहिये । तब जाकर २७ प्रकृतिक संक्रमस्थान-  
का यह उत्कृष्ट काल प्राप्त हाता है । सातवें नरकमे यह उत्कृष्ट काल इसी प्रकार घटित करना  
चाहिये । किन्तु शेष नरकोंमें इस कालका अपनी अपनी आयु प्रमाण कहना चाहिये । इतनी  
विशेषता है कि छोटे नरक तकके जीवोंको अन्तमे मिथ्यात्वमें ले जानेका कोई कारण नहीं है,  
क्योंकि वहा तकके नारकियोंका सम्यग्दर्शनके रहते हुए भी मरण होता है । २५ प्रकृतियोंके  
संक्रामकका जघन्य काल एक समय जिस प्रकार ओघ प्ररूपणामे घटित कर आये हैं उसी प्रकार  
यहाँ भी घटित कर लेना चाहिये । तथा सामान्यसे नारकीकी उत्कृष्ट आयु तेतीस सागर होती है  
अतः ३३ स्थानका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर कहा है । प्रथमादि नरकोंमें भी इस स्थानके जघन्य  
और उत्कृष्ट कालको इसी प्रकार प्राप्त कर लेना चाहिये । केवल उत्कृष्ट काल अपनी अपनी आयु-  
प्रमाण कहना चाहिये । छठवीं प्रकृतिक संक्रमस्थानके जघन्य और उत्कृष्ट कालका जो क्रम ओघसे  
घटलाया है वह क्रम यहाँ नरकमे भी सामान्यसे या प्रत्येक नरकमें बन जाता है, इसलिये यहाँ इस  
स्थानका काल ओघके समान होता है यह निर्देश किया है । तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य  
काल एक समय जिस प्रकार ओघसे घटित कर आये हैं उसी प्रकार यहा नरकमें भी घटित कर  
लेना चाहिये । किन्तु उत्कृष्ट कालमे कुछ विशेषता है । बात यह है कि सामान्यसे नरकायु तेतीस  
सागरसे अधिक नहीं होती, अतः तेईस प्रकृतिक संक्रमस्थानका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कम तेतीस  
सागर और प्रत्येक नरककी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त कम अपनी अपनी उत्कृष्ट आयुप्रमाण प्राप्त होता  
है । २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य काल एक समय सासादन गुणस्थानकी अपेक्षासे और  
उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागर त्रायिकसम्यग्दर्शनकी अपेक्षासे प्राप्त होता है, अतः सामान्यसे  
नरकमें व प्रथम नरकमें यह कथन इसी प्रकारसे बन जाता है । किन्तु द्वितीयादि नरकोंमें त्रायिक  
सम्यग्दृष्टि नहीं पैदा होते, अतः वहाँ उत्कृष्ट काल मिश्र गुणस्थानकी अपेक्षासे घटित करना  
चाहिये । इसीसे द्वितीयादि नरकोंमें २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है ।

§ ३०१ तिरिक्केसु २७ संक्र० अह० एयस०, उक्क० तिण्णि पत्तिदोवमाणि पत्तिदोवमस्त असंखेन्द्रविभागेण सादियेयाणि । २६ संक्र० ओपमंगो । २५ संक्र० अह० एयस०, उक्क० अचंतकालमसखेन्द्रा पोगालपरियहा । २३ संक्र० अह० एयस०, उक्क० तिण्णि पत्तिदोवमाणि देसजाणि । २१ संक्र० अह० एयस०, उक्क० तिण्णि पत्तिदो० । एव पंचिदियतिरिक्खतिय ३ । णवरि २७, २५ संक्र० अह० एयस०, उक्क० तिण्णि पत्तिदोवमाणि पुब्बकोट्टिपुचचेणम्महियाणि । ओणिणीसु २१ संक्र० अह० एयस० उक्क० अतोसुहुत्त । पंचिदियतिरिक्खअपन्न०-अजुसअपन्न० २७, २६, २५ संक्र० अह० एयस०, उक्क० अतोसुहुत्त ।

§ ३०२ मणुसत्तिए २७, २५, २३ पंचिदियतिरिक्खमंगो । २१ संक्र० अह०

§ ३६१ तिर्यञ्चोमें १० प्रकृतिक संक्रमकक्य अथम्य काल एक समय है और अकृत्य काल पत्यके असंख्यात्तर्वा मंगो अथिक तीन पश्य है । १६ प्रकृतिक संक्रमकक्य काल अथम्य के समान है । २६ प्रकृतिक संक्रमकक्य अथम्य काल एक समय है और अकृत्य काल अनन्त काल है जो कि असंख्यात्त पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । २१ प्रकृतिक संक्रमकक्य अथम्य काल एक समय है और अकृत्य काल कुछ कम तीन पश्य है । तथा ११ प्रकृतिक संक्रमकक्य अथम्य काल एक समय है और अकृत्य काल तीन पश्य है । इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विवेचना है कि इनमें १० और १५ प्रकृतिक संक्रमकक्य अथम्य काल एक समय है और अकृत्य काल पर्यवेष्टि पूषक्य अथिक तीन पश्य है । योनिनी तिर्यञ्चोमें २१ प्रकृतिक संक्रमकक्य अथम्य काल एक समय है और अकृत्य काल अणुसु हुत्त है । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अथम्य और मनुष्य अथम्यत्रिकमें १० १६ और २५ प्रकृतिक संक्रमकक्य अथम्य काल एक समय है और अकृत्य काल अणुसु हुत्त है ।

विशेषार्थ—यहां त्रिक्रमगतिमें और उसके अन्तर्गत मेहोमें सम्मत् संक्रमस्थानोंअ काल बतलाया गया है जो वहां सम्मत् स्थानोंके अथम्य कालअ कृत्यसा बिंदु प्रकार नरकगतिमें कर आये हैं वही प्रकार वहां पर भी कर देना चाहिये । अब यही अकृत्य कालकी बात सो उसका कृत्यसा करते हैं—केवल एक एक प्रकृतियोंकी सत्तायत्ना सिध्दायति तिर्यञ्च है जिसे मन्मथ और सम्मत्प्रकारकी ब्रह्मज्ञान करते हुए पत्यक्य असंख्यात्तर्वा माग काल हो गया है । फिर यह तीन तीन पत्यकी आसुवाले तिर्यञ्चोमें अथम्य हुआ और वहां इनकी ब्रह्मज्ञानको पूरा करनेके पूर्व ही वह सम्मत्प्रति हो गया और अन्त उक्त सम्मत्प्रति बना रहा तो इस प्रकार तिर्यञ्चोमें २० प्रकृतिक संक्रमस्थानअ अकृत्य काल पत्यक्य असंख्यात्तर्वा मंग अथिक तीन पश्य बन जाता है । सादि एतत् विकल्पकी अपेक्षा तिर्यञ्चगतिमें निरन्तर रहनअ काल अनन्त काल है । इसीसे पचीस प्रकृतिक संक्रमस्थानअ अकृत्य काल एक प्रमाण बतलाया है । तिर्यञ्चोमें अन्तस्थानुवर्गीकी त्रिसंवात्रमास मुक्त बंधक सम्मत्प्रकारअ अकृत्य काल कुछ कम तीन पश्य प्राप्त होता है । इसीसे यहाँ २३ प्रकृतिक संक्रमस्थानअ अकृत्य काल एक प्रमाण कहा है । तथा तिर्यञ्चोमें चाविकसम्पत्प्रति भी वैसा होते हैं इसलिये त्रिक्रमगतिमें २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानअ अकृत्य काल तीन पश्य बना है । शेष कथन सुगम है ।

§ ३६९ मनुष्यत्रिकमें १० १६ और २१ प्रकृतिक संक्रमकक्य काल पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोके

एयसमओ, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पुच्चकोडितिभागेण सादिरेयाणि । मणुसिणीसु पुच्चकोडी देवणा । सेसमोघं । णवरि मणुस्सिणी० १४ सका० णत्थि । १२ जहण्णुकस्सेण अंतोमुहुत्तं । अथवा दोण्हं पि ओयरमाणस्स जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं ।

१ ३०.३. देवेषु २७, २३, २१ संका० जह० एयसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । २६ संका० ओघभंगो । २५ जह० एयसमओ, उक्क० एककत्तीसं सागरोवमाणि । एवं भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति । णवरि सगट्ठिदी । अण्णं च भवण०-वाण०-जोडसि० २१ जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु० । अणुदिसादि जाव सच्चट्ठा त्ति २७, २३ जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० सगट्ठिदी । २१ जह० जहण्णुद्विदी, उक्क० उक्कस्मट्ठिदी । णवरि सच्चट्ठे जहण्णुकस्सभेदो णत्थि । एवं जाव० ।

समान ह । २१ प्रकृतिक संक्रामकका जघन्य काल एक समय ह और उत्कृष्ट काल एक पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पत्य है । किन्तु मनुष्यनियोंमें २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानका उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है । शेष कथन श्रौचके समान हैं । किन्तु इतनी विशेषता ह कि मनुष्यनियोंमें १४ प्रकृतिक संक्रमस्थान नहीं है और १२ प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अथवा उपशमश्रेणिसे उतरनेवाले मनुष्यनी जीवकी अपेक्षा दोनों ही स्थानोंका जघन्य काल एक समय ह और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

**विशेषार्थ—**एक पूर्वकोटिकी आयुवाले जिस मनुष्यने त्रिभागमें आयुका वन्ध करके जायिक सम्यग्दर्शन उपार्जित किया ह और फिर मरकर जो तीन पत्यकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ है उसके इतने काल तक मनुष्योंमें २१ प्रकृतिक संक्रमस्थान देखा जाता है अतः मनुष्योंमें २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानका उत्कृष्ट काल एक पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पत्य कहा है । किन्तु यह अथवा मनुष्यनियोंके नहीं बन सकती, क्योंकि स्त्रीवेदियोंमें सम्यग्दृष्टि जीव मरकर नहीं उत्पन्न होता है, इसलिये मनुष्यनियोंमें २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानका उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटि कहा है । मनुष्यनीके उपशमश्रेणिमें चढते समय १२ प्रकृतिक संक्रमस्थान नहीं प्राप्त होता किन्तु क्षपणश्रेणिमें ही प्राप्त होता है, इसलिए मनुष्यनीमें १२ प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । किन्तु उसके उपशमश्रेणिसे उतरते समय १२ और १४ प्रकृतिक दोनों संक्रमस्थान बन जाते हैं और इन स्थानोंका उपशमश्रेणिमें जघन्य काल एक समय तथा उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, अत यहाँ भी इनका उक्त प्रमाण काल कहा है । शेष कथन सुगम है ।

१ ३६३ देवोंमें २७, २३ और २१ प्रकृतिक संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । २६ प्रकृतिक संक्रामकका भंग ओघके समान है । २५ प्रकृतिक संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल इकतीस सागर है । इसी प्रकार भवनवासियोंमें लेकर नौ श्रेणिक तकके देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति कदनी चाहिये । दूसरे भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें २१ प्रकृतिक संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें २७ और २३ प्रकृतिक संक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है । २१ प्रकृतिक संक्रामकका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें अपनी स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट भेद नहीं है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

⊙ एतो एयजीवेण अतरं ।

‡ ३०४ एतो उवरि अहावसरपचमेयजीवेणतरं मणिस्सामो चि पद्दसासुचमेद ।

⊙ सत्तावीस-सुम्बीस-तेवीस-इगिबीससकामगतं केयचिर काळापो होवि ? अहण्णेष एयसमओ, उक्कस्सेण उवहुपोगगणपरियट्ट ।

‡ ३०५. उ अहा—सत्तावीसाए अह० एयसमओ चि पद्दस्स अत्थ मण्णमाणे

एओ सत्तावीससकामओ उवसमसम्माइड्डी सगद्दाए एयसमओ अत्थि चि सासणगुणं पडिबत्थिय एयसमय पणुवीस सकमेणतरिय पुणो मिच्छाइड्ढिभावेण सत्तावीससकामओ आदो, लद्धं पयइअइण्णंतरं । अहणा सत्तावीससकामओ मिच्छाइड्ढो समत्तमुम्भेत्तमाओ

विशेषार्थ—गुणस्वान्त्य परिवर्तन शीघ्रं प्रेयेयक एक ही सम्भव है और वही एक सिध्दाहति जीव मरकर उत्पन्न होता है, इसलिये पहले प्रकृतिक संक्रमणका अन्तःकाल ३१ सागर कहा है । मरनवासी आदि तीन प्रकारके श्रेणियों कायिक सम्पत्तिअ उत्पन्न होना सम्भव नहीं है, इसलिये इनमें मिय गुणस्वान्त्यकी अपेक्षा २१ प्रकृतिक संक्रमणका अन्तःकाल अन्तर्मुहूर्त कहा है । वा २८ प्रकृतियोंकी सत्ताकाय सम्पत्तिअ जीव अनुविरा आदिमें उत्पन्न हुआ है और अन्तर्मुहूर्तमें जिसका अन्तानुबन्धीकी किंसवाइमा कर ही है उसके २० प्रकृतिक संक्रमणका अन्तःकाल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है । इसी प्रकार जिसका आयुमें अन्तर्मुहूर्त काय सेप रखन पर अन्तानुबन्धीकी विमयोचना की है उसके छह प्रकृतिक संक्रमणका अन्तःकाल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है । यहाँ यद्यपि मरनत्रिकमें भी २२ प्रकृतिक संक्रमणका अन्तःकाल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण ब्रह्माणा है पर वह काय अन्तर्मुहूर्त का अन्तःकाल कायिक कर्मादि इन श्रेणियों सम्पत्तिअकी अन्तःकाल सम्भव नहीं है । तथा अन्य प्रकारसे सत्त २१ प्रकृतिक संक्रमणका यहाँ काय नहीं सकता है । सेप काल सुगम है ।

⊙ अब इससे आगे एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अधिकार है ।

‡ ३१४ अब इस अज्ञानुपयोगकारक बाद अन्तरप्राप्त एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका काल करते हैं इस प्रकार यह प्रविष्टा सूत्र है । अर्थात् इस सूत्रद्वारा एक जीवकी अपेक्षा अन्तरके कालकी प्रविष्टा की गई है ।

⊙ सत्ताईस, छम्बीस, तेईस और इक्कीस प्रकृतिक संक्रमणका कितना अन्तर काल है ? अल्प अन्तर काल एक समय है और उच्छ्रुत अन्तर काल उपार्थपुद्गल-परिवर्तनप्रमाण है ।

‡ ३१५. सुत्रात्ता इस प्रकार है—सर्वप्रथम सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमणका अल्प अन्तर काल एक समय है इसका अर्थ करते हैं—किसी एक सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमणका अल्पसम्पत्तिअ जीवने अल्पसम्पत्तिअके अन्तर्में एक समय सेप रखने पर सासाहन गुणस्वान्त्यकी प्राप्त होकर और एक समय एक पक्षीस प्रकृतियोंका संक्रमण करके एक समयके लिये सत्ताईस प्रकृतियोंके संक्रमण अन्तर किया । फिर वह सिध्दाहति होकर सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमणका हो गया । इस प्रकार प्रकृत स्वान्त्यका अल्प अन्तरकाय एक समय प्राप्त हो गया । अर्थात् किसी एक सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमणका सिध्दाहति जीवने सम्पत्तिअकी अज्ञानता करते हुए सम्पत्तिअके अस्मिन्नुल हो कर अन्तरकाय

सम्मत्ताहिमुहो होऊणंतरं करिय मिच्छत्तपटगद्धिदिदुचरिमसमए सत्तावीससंक्रामयभावेण सम्मत्तचरिमफालि मिच्छत्तस्सुवरि संक्रामिय तदो चरिमसमयम्मि छव्वीससंक्रमेणंतरिय सम्मत्तं पडिवण्णपटमसमयम्मि पुणो वि सत्तावीससंक्रामयभावेण परिणदो तस्स लद्धमंतरं । उक्क० उवह्वपोग्गलपरियट्टपरुवणो कीरदे । तं कथं ? एगो अणादियमिच्छाड्ढी अद्धपोग्गलपरियट्टस्सादिसमये उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय सच्चलहुं मिच्छत्तं गंतूण सच्चजहण्णुव्वेल्लणकालेण सम्मत्तमुव्वेल्लिय सत्तावीसाए अंतरमुप्पाइय देसूणमद्धपोग्गलपरियट्टं परियट्टिय सच्चजहण्णंतोमुहुत्तावसेसे मिज्झिदच्चए त्ति उवसमसम्मत्तं पडिवण्णो तस्स विदियसमए सत्तावीसं संक्रामेमाणस्स लद्धमंतरं होइ ।

§ ३९६. संपहि छव्वीसाए जहण्णेयमयमंतरपरुवणा कीरदे । तं जहा—उव्वेल्लिदसम्मत्तसंतकम्मो छव्वीससंक्रामो उवसमसम्मत्ताहिमुहो होदूण मिच्छत्तपटमद्विदिदुचरिमसमए सम्माभिच्छत्तचरिमफालिं मिच्छत्तरुव्वेण संक्रामिय तदणंतरसमए वि पणुवीससंक्रमेणंतरिय उवसमसम्मत्तं पडिवण्णपटममयम्मि पुणो छव्वीमसंक्रामो जादो, लद्धमेगमयमेत्तं जहण्णंतरं । उक्कस्संतरं पुण अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए

क्रिया की । अनन्तर मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिके उपान्त्य समयमें सत्ताईस प्रकृतियोंका संक्रम करते हुए सम्यक्त्वकी अन्तिम फालिना मिथ्यात्वमे सक्रम किया । फिर अन्तिम समयमें उसने छव्वीस प्रकृतियोंके सक्रम द्वारा एक समयके लिये सत्ताईस प्रकृतियोंके संक्रमका अन्तर किया । फिर सम्यक्त्वको प्राप्त करके उसके प्रथम समयमें वह फिरसे सत्ताईस प्रकृतिक सक्रमक हो गया । उस प्रकार इसके सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमका जपन्य अन्तर काल एक समय प्राप्त हुआ । अब उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण उत्कृष्ट अन्तरका कथन करते हैं । यथा—किसी एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीवने अर्धपुद्गलपरिवर्तनके प्रथम समयमें ही उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त कर, अतिशीघ्र मिथ्यात्वमें जाकर, सबसे जघन्य उद्वेलन कालके द्वारा सम्यक्त्वकी उद्वेलना कारके सत्ताईस प्रकृतिक सक्रमका अन्तर उत्पन्न किया । फिर वह कुछ कम अर्ध पुद्गल परिवर्तन काल तक परिभ्रमण करता रहा और जब सिद्ध होनेके लिये सबसे जघन्य अन्तमुहूर्त काल शेष रहा तब वह उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हो गया और उसके दूसरे समयमें वह सत्ताईस प्रकृतियोंका संक्रम करने लगा । इस प्रकार प्रकृत स्थानका उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त हो गया ।

§ ३९६ अब छव्वीस प्रकृतिक सक्रमस्थानके जघन्य अन्तर एक समयका कथन करते हैं । यथा—जिसने सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर दी है ऐसे किसी एक छव्वीस प्रकृतियोंका सक्रमण करनेवाले जीवने सम्यक्त्वके अभिमुख होकर मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिके द्विचरम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको मिथ्यात्वरूपसे सक्रमित किया । फिर तदनन्तर समयमें अर्थात् मिथ्यात्व गुणस्थानके अन्तिम समयमें पच्चीस प्रकृतियोंके संक्रमण द्वारा एक समयके लिये छव्वीस प्रकृतियोंके संक्रमणका अन्तर करके उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त किया और उसको प्राप्त करनेके प्रथम समयमें वह फिरसे छव्वीस प्रकृतियोंका संक्रमण करने लगा । इस प्रकार छव्वीस प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो जाता है । अब उत्कृष्ट अन्तर कालका खुलासा करते हैं—किसी एक जीवने अर्धपुद्गलपरिवर्तनके प्रथम समयमें ही उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त

⊗ एतो एयजीवेय अंतरं ।

‡ ३९४ एतो उषरि अहायसरपचमेयजीवेणतर मणिस्वामो पि पञ्जासुचमद ।

⊗ सचाबीस-छम्बीस-तेवीस-इगिबीससकामगतर केवधिर काळावो होवि ? जहयणेष एयसमओ, ठकस्सेण उबहुपोग्गळपरियट्ट ।

‡ ३९५. त अहा—सचावीसाए अह० एयसमओ पि एदस्स अस्से मण्णमाणे

एओ सचाबीससकामओ उवसमसम्माइही सगद्दाए एयसमओ अरिष पि सासणगुण पडिबन्निय एयसमय पणुवीस सक्रमेअंतरिय पुणो मिच्छाइड्डिमावेण सचाबीससकामओ जादो, सद्द पयदवहण्णतरं । अहवा सचावीससकामओ मिच्छाइड्डि समचमुब्बेत्तलमाणो

**विश्लेषार्थ—**गुणस्थानअ परिवर्तन मोर्से मैवेयक एक ही सम्भव है और यही एक सिध्दादृष्टि जीव मरकर उत्पन्न होता है, इसलिये पचोस प्रकृतिक संक्रमस्थानअ अहस अत्र ३१ सागर कहा है । मवनवासी आदि तीन प्रकारके देवोंमें जातिक सम्बन्धदृष्टिअ उत्पन्न होना सम्भव नहीं है, इसलिये इनमें मिम गुणस्थानकी अपेक्षा २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानअ अहस अत्र अन्तर्मुहूर्त कहा है । जो २८ प्रकृतियोंकी सत्ताअत्र सम्बन्धदृष्टि जीव अनुदिश आदिमें उत्पन्न हुआ है और अन्तर्मुहूर्तमें जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर दी है उसके २० प्रकृतिक संक्रमस्थान अत्र अपन्य अत्र अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है । इसी प्रकार जिसने आयुमें अन्तर्मुहूर्त अत्र श्रेय रखने पर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की है उसके लैस प्रकृतिक संक्रमस्थानअ अपन्य अत्र अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है । यहाँ यद्यपि मरतत्रिकमें भी २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानअ अहस अत्र अपनी-अपनी स्थितिप्रमाणा अत्राया है पर यह अत्र अन्तर्मुहूर्त कम जानना चाहिये क्योंकि इन देवोंमें सम्बन्धदृष्टिकी वरति सम्भव नहीं है । तथा अन्य प्रकारसे सत्त २१ प्रकृतिक संक्रमस्थान यहाँ कम नहीं सकता है । शेष अत्र सुगम है ।

⊗ अब इससे आगे एक नीचकी अपेक्षा अन्तरका अधिकार है ।

‡ ३९४ अब इस अश्रयुयोगद्वारेके बाद अत्रमप्राप्त एक नीचकी अपेक्षा अन्तरका अत्रन करते हैं इस प्रकार यह प्रथिज्ञा सूत्र है । अर्थात् इस सूत्रद्वारा एक नीचकी अपेक्षा अन्तरके करनेकी प्रथिज्ञा की गई है ।

⊗ सचाईस छम्बीस, तेईस और इक्कीस प्रकृतिक सक्रामकका कितना अन्तर काळ है ? अपन्य अन्तर काळ एक समय है और ठकट्ट अन्तर काळ उपार्धपुग्गळ-परिवर्तनप्रमाण है ।

‡ ३९५. सुहाया इत प्रकर है—सर्वे एयम सचाईस प्रकृतिक संक्रमकअ अपन्य अन्तर अत्र एक समय ह इसअ अत्र करते हैं—किन्ती एक सचाईस प्रकृतिक संक्रमक वररमसम्बन्धदृष्टि जीवने वररमसम्बन्धकके काळमें एक समय श्रेय रखने पर सासावन गुणस्थानओ प्राप्त होकर और एक समय तक पचवीस प्रकृतियोंका संक्रम करके एक समयके लिये सचाईस प्रकृतियोंके संक्रमअ अन्तर किया । फिर वह सिध्दादृष्टि होकर सचाईस प्रकृतिक संक्रमक हो गया । इस प्रकार मकूट स्थानअ अपन्य अन्तरअत्र एक समय प्राप्त हो गया । अत्रा किन्ती एक सचाईस प्रकृतिक संक्रमक सिध्दादृष्टि जीवने सम्बन्धअ अत्रेकना कए हए सम्बन्धकके अमिमुए हो कर अन्तरअत्र

सम्मत्ताहिमुहो होऊणंतरं करिय मिच्छत्तपढमट्टिदिदुचरिमसमए सत्तावीससंक्रामयभावेण मम्मत्तचरिमफालि मिच्छत्तस्सुवरि संक्रामिय तदो चरिमसमयम्मि छव्वीससंक्रमेणंतरिय सम्मत्तं पडिवण्णपढमसमयम्मि पुणो वि सत्तावीससंक्रामयभावेण परिणदो तस्स लद्धमंतरं । उक्क० उवड्डुपोग्गलपरियट्टपरूवणो कीरदे । तं कथं ? एगो अणादियमिच्छाडड्डी अट्टपोग्गलपरियट्टस्सादिसमये उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय सच्चलहुं मिच्छत्तं गंतूण सच्च-जहण्णुव्वेल्लणफालेण सम्मत्तमुव्वेल्लिय सत्तावीसाए अंतरमुप्पाडय देसूणमट्टपोग्गल-परियट्टं परियट्टिय सच्चजहण्णंतोमुहुत्तावसेसे सिज्झिदव्वए त्ति उवसमसम्मत्तं पडिवण्णो तस्म विदियसमए सत्तावीसं संक्रामेमाणस्स लद्धमंतरं होड ।

१ ३९६. मंपहि छव्वीसाए जहण्णेणयममयमंतरपरूवणा कीरदे । तं जहा—उव्वेल्लिदसम्मत्तसंतंक्रम्मो छव्वीससंक्रामयो उवयमसम्मत्ताहिमुहो होदूण मिच्छत्तपढम-ट्टिदिदुचरिमसमए सम्मामिच्छत्तचरिमफालिं मिच्छत्तरूवेण संक्रामिय तदणंतरसमए वि पणुवीससंक्रमेणंतरिय उवसमसम्मत्तं पडिवण्णपढमसमयम्मि पुणो छव्वीससंक्रामयो जादो, लद्धमेगममयमेत्त जहण्णंतरं । उक्कस्संतरं पुण अट्टपोग्गलपरियट्टादिसमए

क्रिया की। अनन्तर मिथ्यात्वकी प्रथम ग्यतिके उपान्त्य समयमें सत्ताईस प्रकृतियोंका सक्रम करते हुए सम्यक्त्वकी अन्तिम फालिका मिथ्यात्वमें सक्रम किया। फिर अन्तिम समयमें उसने छव्वीस प्रकृतियोंके सक्रम द्वारा एक समयके लिये सत्ताईस प्रकृतियोंके संक्रमका अन्तर किया। फिर सन्यस्त्वको प्राप्त करके उसके प्रथम समयमें वह फिरसे सत्ताईस प्रकृतिक सक्रमक हो गया। इस प्रकार उमके सत्ताईस प्रकृतिक संक्रमका जघन्य अन्तर काल एक समय प्राप्त हुआ। अब उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण उत्कृष्ट अन्तरका कथन करते हैं। यथा—किसी एक अनादि मिथ्या-दृष्टि जीवने अर्धपुद्गलपरिवर्तनके प्रथम समयमें ही उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त कर, अतिशीघ्र मिथ्यात्वमें जाकर, सबसे जघन्य उद्वेलन कालके द्वारा सम्यक्त्वकी उद्वेलना करके सत्ताईस प्रकृतिक सक्रमका अन्तर उत्पन्न किया। फिर वह कुछ कम अर्ध पुद्गल परिवर्तन काल तक परिभ्रमण करता रहा और जब सिद्ध होनेके लिये सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहा तब वह उपशम-सम्यक्त्वको प्राप्त हो गया और उसके दूसरे समयमें वह सत्ताईस प्रकृतियोंका सक्रम करने लगा। इस प्रकार प्रकृत स्थानका उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त हो गया।

१ ३९६ अब छव्वीस प्रकृतिक सक्रमस्थानके जघन्य अन्तर एक समयका कथन करते हैं। यथा—जिसने सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर दी है ऐसे किसी एक छव्वीस प्रकृतियोंका संक्रमण करनेवाले जीवने सम्यक्त्वके अभिमुख होकर मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिके द्विचरम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको मिथ्यात्वरूपसे सक्रमित किया। फिर तदनन्तर समयमें अर्थात् मिथ्यात्व गुणस्थानके अन्तिम समयमें पचचीस प्रकृतियोंके संक्रमण द्वारा एक समयके लिये छव्वीस प्रकृतियोंके संक्रमणका अन्तर करके उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त किया और उसको प्राप्त करनेके प्रथम समयमें वह फिरसे छव्वीस प्रकृतियोंका सक्रमण करने लगा। इस प्रकार छव्वीस प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो जाता है। अब उत्कृष्ट अन्तर कालका खुलासा करते हैं—किसी एक जीवने अर्धपुद्गलपरिवर्तनके प्रथम समयमें ही उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त



उवसमसम्मत्त पडिवज्जिय सम्बलहु मिच्छत्त गत्तण सम्बलहण्णुव्वेज्जणकालण सम्मत्त सुव्वेदिय उव्वीससंक्रमओ होरूण सम्बलहुएण कालेण सम्मामिच्छत्तसुव्वेदिय पणुवीससकमणत्तरिय पोगालपरियहुइ देव्वर्षं परिम्ममिय अतोसुहुत्तावसेसे ससारे उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय उव्वीस सक्कमेमाणस्त सट्ठमंत्तर होइ ।

§ ३०७ ठवीसाय अहण्णेणेयंसमयमेत्तरे मपप्पमाणे चउवीससत्तकम्मिओवसम-  
सम्माइही तेवीससकामओ तद्दद्याय एयसमओ अत्ति पि सासजभाव गंतूण इगिबीस-  
सकमेणत्तरिय विदियसमए मिच्छत्तगमणेण तेवीससकामओ जादो, सट्ठमत्तरं होइ ।  
अइवा तेवीससकामओ उवसमसेट्ठिमाइहिय अंतरक्कणपरिसमत्तिसमत्तरेमेवाणुपुव्वी-  
सकममाइविय एयसमए बापीससकमेणत्तरिय विदियसमए देवेसुबवण्णा तेवीससकामओ  
जादो, सट्ठ जइहणमत्तरमेपसमयमेत्तं । सक्कसेणुव्वुपोगालपरियहुत्तरपरुत्तण कस्सामो ।  
अइपोगालपरियहुत्तदिसमए सम्मत्त पडिवज्जिय उवसमसम्मत्तकालसम्मत्तरे वेप अर्पत्ताणु-  
अउत्तं विसवोइय तेवीससकमस्तादिं क्कळण उवसमसम्मत्तद्वाय छापलियमेत्तावसेसाय  
आसाणं पडिवण्णो इगिबीससकमेणत्तरिय पुणो मिच्छत्तं गत्तण उव्वुपोगालपरियहुत्तमेत्त-

किंवा । फिर अतिरिक्त मिच्छत्तमें जाकर और सबसे अधिक बड़ ज्ञान कालके द्वारा सम्यक्त्व-  
की बड़ेना करके वह इव्वीस प्रकृतियोंके संक्रमक हो गया । फिर अति स्वल्प कालके द्वारा  
सम्यग्निमत्तत्वकी बड़ेना करके पणुवीस प्रकृतियोंके संक्रमण द्वारा इव्वीस प्रकृतियोंके संक्रमण  
अन्तर किया । फिर वह इव्व कर्म अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल एक परिष्मज करता रहा और जब  
संसारमें रहनेका काल अन्ततः हुतें होय रहा तब वह उपराम सम्यक्त्वको प्राप्त होकर एक समयके सिधे  
इव्वीस प्रकृतियोंके संक्रमक हो गया । इस प्रकार प्रकृत स्वानका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हो जाय है ।

§ ३१०. अब तैत्ति प्रकृतिके संक्रमस्वानके उपरम अन्तर एक समयका काल करते हैं—  
जो वीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपराम सम्बन्धि बीच तैत्ति प्रकृतियोंके संक्रम कर रहा है  
हसने उपराम सम्बन्धके क्रममें एक समय होय रहने पर साक्षात्त गुणस्वानको प्राप्त होकर  
इव्वीस प्रकृतियोंके संक्रमणद्वारा एक समयके सिधे तैत्ति प्रकृतियोंके संक्रमण अन्तर किया ।  
फिर दूसरे समयमें विच्छात्वमें कसे जानेसे वह फिरसे तैत्ति प्रकृतियोंके संक्रमक हो गया । इस  
प्रकार प्रकृत स्वानका उपरम अन्तर एक समय प्राप्त हो जाय है । अथवा कोई एक तैत्ति प्रकृतियोंके  
संक्रमण करनेवाला बीच उपरामप्रेशि पर चढ़ा और अन्तरकरवाही समाप्तिके बाद ही अणुपुद्गल  
संक्रमण प्रारम्भ करके एक समयके सिधे हसने तैत्ति प्रकृतियोंके संक्रमण द्वारा तैत्ति प्रकृतियोंके  
संक्रमण अन्तर किया । फिर दूसरे समयमें वह वेदोंमें उत्पन्न होकर तैत्ति प्रकृतियोंके संक्रमक  
हो गया । इस प्रकार प्रकृत स्वानका उपरम अन्तर एक समय प्राप्त हो जाय है । अब इस स्वानके  
अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण उत्कृष्ट अन्तरका काल करते हैं—फिर एक हीने अर्धपुद्गल-  
परिवर्तन कालके प्रथम समयमें सम्यक्त्वको प्राप्त करके और उपराम सम्बन्धके कालके मीतर ही  
अन्ततःपुनः वीस प्रकृतियोंके विसर्गना करके तैत्ति प्रकृतियोंके संक्रमण प्रारम्भ किया । फिर उपराम  
सम्बन्धके कालमें वह आरम्भ होय रहने पर वह साक्षात्त गुणस्वानको प्राप्त हुआ और इव्वीस  
प्रकृतियोंके संक्रमण द्वारा तैत्ति प्रकृतियोंके संक्रमण अन्तर करके वह विच्छात्वमें गया । फिर वह

कालमाविद्धकुलालचक्रं च परिभमिय सव्वजहण्णंतोमुहुत्तावसेसे संसारे उवसमसम्मत्तं घेतूण वेदगभाव पडिवज्जिय सव्वगसेडिमागेहण्णं अणंताणु० विसंजोडय तेवीससंकामओ जादो, लद्धमुक्कस्मंतरं होट ।

१ ३०.८. इगिवीसाए जहण्णेणयसमओ उच्चदे—एगो इगिवीससंतकम्मिओ उवसमसेडि चडिय अंतगकरणपरिसमत्तीए लोहासंकमवसेणेयसमयं वीससंकमेणंतरिय कालगदो देवो होऊणिगिवीमगं कामओ जादो, लद्धं पयदजहण्णंतरं । संपहि उक्कस्मंतरं उच्चदे । एगो अणादियमिच्छाइट्ठी अद्धपोग्गलपरियट्टादिममए पढमसम्मत्तं पडिवज्जिय त्कालअंतरे चेष अणताणु० चउक्कं विसंजोडय उवसमसम्मत्तद्वाए छावलियमेत्तावसेसाए सामादणभावमागादिय इगिवीससंकामयभावेणावलियमेत्तकालं गालिय तदणंतरसमए पणुवीसगंरुमेणतरिय तदो मिच्छत्तेणट्टपोग्गलपरियट्टमेत्तकालं परियट्टिय सव्वजहण्णंतो-मुहुत्तमेत्तावसेसे मिज्झिदव्वए दसणमोहं सविय इगिवीससंकामओ जादो, लद्धमिगिवीस-संकामयस्स देसणट्टपोग्गलपरियट्टमेत्तमुक्कस्मंतरं । एवमेदेसि चउण्ह संकमट्टाणाणं जहण्णुक्कस्सतरविसयणिण्णयं कालण संपहि पणुवीससंकमट्टाणस्य तदुभयणिरूवणट्ट-मुवरिममुत्तं भणइ—

धुमाये गये कुम्हारके चक्केके समान कुत्र कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण काल तक परिभ्रमण करता रहा और तब संसारमे रहनेका सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल शेष बचा तब वह उपशम मन्यक्त्वका प्राप्त हुआ और वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त करके क्रमसे क्षपकश्रेणि पर चढ़नेके लिये अनन्तानुप धीकी विमंयोजना करके तेईम प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । इस प्रकार तेईस प्रकृतिक सक्रमस्थानका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हो जाता है ।

§ ३६८ अथ इक्कीस प्रकृतिक संक्रमस्थानके जघन्य अन्तर एक समयका कथन करते हैं—एक इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तागाला जीव उपशमश्रेणि पर चढ़ा और उसने अन्तरकरणकी समाप्ति होनेपर लोभका सक्रम न होनेसे एक समयके लिये बीस प्रकृतियोंके सक्रमणद्वारा इक्कीस प्रकृतियोंके सक्रमका अन्तर किया । फिर वह मरा और देव होकर इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । इस प्रकार प्रकृत स्थानका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो जाता है । अथ उ कृष्ट अन्तरका कथन करते हैं—एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीवने अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कालके प्रथम समयमें उपशमसम्यक्त्व प्राप्त करके उसी कालके भीतर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना की । फिर उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलि शेष रहने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त होकर एक आवलि काल तक इक्कीस प्रकृतियोंका सक्रमण करता रहा । फिर तदनन्तर समयमें पच्चीस प्रकृतियोंके सक्रमद्वारा इक्कीस प्रकृतियोंके संक्रमका अन्तर किया । फिर मिथ्यात्वके साथ कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल तक परिभ्रमण किया और जब सिद्ध होनेके लिये सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहा तब दर्शनमोहनीयका क्षय करके इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । इस प्रकार इक्कीस प्रकृतियोंके संक्रामकका कुछकम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त होजाता है । इस प्रकार इन चार सक्रमस्थानोंके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर कालका निर्णय करके अब पच्चीस प्रकृतिक सक्रमस्थानके उक्त दोनों अन्तर कालोंका निर्णय करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

१ ता०प्रती —करण परिसमत्तीए इति पाठ । २. आ०प्रती —मैत्तमिस्सतर इति पाठ ।

उपसमसम्मच पडिबलिय सम्बलहु मिच्छत्तं गत्थ सम्बलहण्णुष्सेत्तम्वल्लेण सम्मच सुम्बेत्थिय उम्बीससंक्रमओ होट्ठण सम्बलहुपण क्खत्तेण सम्मामिच्छत्तमुल्लेत्थिय पणुनोससंक्रमेणतरिय पोग्गलपरियङ्गद इत्थण परिम्मिय अतोसुहुधानसेसे संसारे उपसमसम्मत्तं पडिबलिय उम्बीसं संक्रमेमाणस्स लद्धमत्तरं होइ ।

§ ३०७ तेवीसाए अहण्णेणेयंसमयमेत्तरे मण्णमाणे अउवीससंतकम्मिजोवसम-  
सम्माइह्वी तेवीससक्रमओ तद्दाए पयसमओ अत्थि पि सासभमात्तं गंतूण इग्गीस-  
सक्रमेणतरिय विदियसमए मिच्छत्तगमणेण तेवीससक्रमओ आदो, लद्धमत्तरं होइ ।  
अइवा तेवीससक्रमओ उपसमसेट्टिमाइहिय अतरकरणपरिसमपिसमण्णत्तरेवाणुपुम्बी-  
सक्रममाइविय पयसमए धावीससक्रमेणतरिय विदियसमए देवेसुववण्णो तेवीससंक्रमओ  
आदो, लद्ध अहण्णमत्तरमेयसमयमेत्तं । उक्खसेणुबहुपोग्गलपरियङ्गतरपरूवणं कस्सामो ।  
अद्धपोग्गलपरियङ्गदिसमए सम्मत्तं पडिबलिय उपसमसम्मचक्खल्लम्भत्तरे वेय अर्भताणु-  
चउक्क विसजोइय तेवीससक्रमस्तादिं क्खत्तेण उपसमसम्मचद्धाए छाबलियमेत्तावसंसाए  
आसाणं पडिबण्णो इग्गीससक्रमेणतरिय पुष्पो मिच्छत्तं गंतूण उवहुपोग्गलपरियङ्गमेप-

किया । फिर अठिठिप्र मिच्छत्तमें जाकर और सबसे अपन्य रह सन कालके द्वारा सम्यक्त्व-  
की बडेइना करके वह इन्दीस प्रकृतियोंका संक्रमक हो गया । फिर अठि स्वल्प कालके द्वारा  
सम्बन्धिमिच्छत्तरी बडेइना करके पम्बीस प्रकृतियोंके संक्रमण द्वारा इन्दीस प्रकृतियोंके संक्रमणका  
अन्तर किया । फिर वह कुछ कम अर्धपुरुषपरिवर्तन काळ तक परिभ्रमण करता रहा और जब  
संसारमें रहनेका काल अन्तहु हुते होय रहा तब वह अपना सम्यक्त्वको प्राप्त हाकर एक समयके शिष्य  
इन्दीस प्रकृतियोंका संक्रमक हो गया । इस प्रकार प्रकृत स्वानका बहुरूप अन्तर प्राप्त हो जाता है ।

§ ३१०. अब लेईस प्रकृतिक संक्रमस्वानके अपन्य अन्तर एक समयका कवन करते हैं—  
जो बीस प्रकृतियोंकी सत्त्वबाल्य काल सम्पत्ति थीव लेईस प्रकृतियोंका संक्रम कर रहा है  
उसमें अपना सम्यक्त्वके काळमें एक समय होय रहने वर छासावन गुणस्वानको प्राप्त होकर  
इन्दीस प्रकृतियोंके संक्रमणद्वारा एक समयके शिष्य लेईस प्रकृतियोंके संक्रमका अन्तर किया ।  
फिर दूसरे समयमें मिच्छत्तमें जले जानेसे वह फिरसे लेईस प्रकृतियोंका संक्रमक हो गया । इस  
प्रकार प्रकृत स्वानका अपन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो जाता है । अबका कोई एक लेईस प्रकृतियोंका  
संक्रमण करनेवाला थीव अणुमत्तवि वर अद्वा और अन्तरकरणकी समाप्तिके बाद ही आनुपूर्वी  
संक्रमका प्रारम्भ करके एक समयके शिष्य उसने लेईस प्रकृतियोंके संक्रमण द्वारा लेईस प्रकृतियोंके  
संक्रमना अन्तर किया । फिर दूसरे समयमें वह देवोंमें उत्पन्न हाकर लेईस प्रकृतियोंका संक्रमक  
हो गया । इस प्रकार प्रकृत स्वानका अपन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो जाता है । अब इस स्वानके  
अर्धपुरुषपरिवर्तनद्वारा बहुरूप अन्तरका कवन करते हैं—किसी एक बीसने अर्धपुरुष-  
परिवर्तन कालके प्रथम समयमें सम्यक्त्वको प्राप्त करके और काल सम्पत्तके कालके मोक्ष ही  
अन्तस्तुइन्दी आनुपूर्वी विसंबोवना करके लेईस प्रकृतियोंके संक्रमका प्रारम्भ किया । फिर अपना  
सम्यक्त्वके काळमें वह आत्ति होय रहने वर वह छासावन गुणस्वानको प्राप्त हुआ और इन्दीस  
प्रकृतियोंके संक्रम द्वारा लेईस प्रकृतियोंके संक्रमका अन्तर करके वह मिच्छत्तमें गया । फिर वह

कालमाविद्धकुलालचक्रं च परिभमिय सव्वजहण्णंतोमुहुत्तावसेसे गंसारे उवसमसम्मत्तं घेत्तूण वेदगभावं पडिवजिय खवगसेडिमारोहणट्ठं अणताणु० विसंजोइय तेवीससंकामओ जादो, लद्धमुक्कस्मंतर होइ ।

§ ३०.८. इगिवीसाए जहण्णेणयसमओ उच्चदे—एगो इगिवीससंतकम्मिओ उवसमसेडि चट्टिय अंतकरणपरिसमत्तीए लोहासंकमवसेणयसमयं वीससंकमेणंतरिय कालगदो देवो होऊणिगिवीससंकामओ जादो, लद्धं पयटजहण्णंतरं । संपहि उक्कस्संतरं उच्चदे । एगो अणादियमिच्छाइड्डी अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए पदमसम्मत्तं पडिवजिय तत्कालम्भंतरं चय अणताणु०चउक्क विसजोइय उवसमसम्मत्तद्वाए छावलियमेत्तावसेसाए यामादणभावमासादिय इगिवीससंकामयभावेणावलियमेत्तकालं गालिय तदणंतरसमए पणुवीससंक्रमेणतरिय तदो मिच्छत्तेणद्धपोग्गलपरियट्टमेत्तकालं परियट्टिय सव्वजहण्णंतो-मुहुत्तमेत्तावसेसे सिज्झिदव्वए दंसणमोह खविय इगिवीससंकामओ जादो, लद्धमिगिवीस-संकामयस्म देसूणद्धपोग्गलपरियट्टमेत्तमुक्कस्मंतरं । एवमेदेसिं चउण्हं संकमट्टाणाणं जहण्णुक्कस्मतरविसयणिण्णयं काऊण संपहि पणुवीससंकमट्टाणस्स तदुभयणिस्सव्वणद्ध-मुवरिमसुत्तं भणइ—

धुमाये गये इग्गहारके चक्केके ममान कुञ्ज कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण काल तक परिभ्रमण करता रहा और जब मसारमें रहनेका सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल शेष बचा तब वह उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ और वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त करके कमसे क्षयकश्रेणि पर चढ़नेके लिये अनन्तानुवन्धीकी विसंयोजना करके तेईस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । इस प्रकार तेईस प्रकृतिक सक्रमस्थानका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हो जाता है ।

§ ३६८ अत्र इक्कीस प्रकृतिक सक्रमस्थानके जघन्य अन्तर एक समयका कथन करते हैं—एक इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तागला जीव उपशमश्रेणि पर चढ़ा और उसने अन्तरकरणकी समाप्ति होनेपर लोभना सक्रम न होनेसे एक समयके लिये वीस प्रकृतियोंके सक्रमणद्वारा इक्कीस प्रकृतियोंके सक्रमका अन्तर किया । फिर वह मरा और देव होकर इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । इस प्रकार प्रकृत स्थानका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो जाता है । अत्र उ कृष्ट अन्तरका कथन करते हैं—एक अनादि मिथ्यादृष्ट जीवने अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कालके प्रथम समयमें उपशमसम्यक्त्व प्राप्त करके उनी कालके भीतर अनन्तानुवन्धीचतुष्ककी विसंयोजना की । फिर उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलि शेष रहने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त होकर एक आवलि काल तक इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रमण करता रहा । फिर तदनन्तर समयमें पच्चीस प्रकृतियोंके संक्रमद्वारा इक्कीस प्रकृतियोंके संक्रमका अन्तर किया । फिर मिथ्यात्वके साथ कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल तक परिभ्रमण किया और जब सिद्ध होनेके लिये सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहा तब दर्शनमोहनीयका क्षय करके इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । इस प्रकार इक्कीस प्रकृतियोंके सक्रामकका कुछकम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त होजाता है । इस प्रकार इन चार संक्रमस्थानोंके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर कालका निर्णय करके अत्र पच्चीस प्रकृतिक सक्रमस्थानके उक्त दोनों अन्तर कालोंका निर्णय करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

१ ता०प्रतौ—करण परिसमत्तीए इति पाठ । २. आ०प्रतौ—मेत्तमिस्सतर इति पाठ ।

⊗ पशुबीससकामयतर केबधिर काळावो होइ ?

§ ३९० सुगम ।

⊗ जह्यणेय अतोमुहत्त, ठक्कसेय वेद्धानडिसागरोवमाथि साविरेयाथि ।

§ ४० एर्य साव जहणंतर पुचदे । त अहा—एओ सम्मामिच्छद्दी

पशुबीससकामयतरेणावडिओ परिणामपचएण सम्मत्त मिच्छत्तं वा परिणमिय उत्त  
सम्बजहणंतोमुहत्तमेचफालं सचावीससकमणतरिय पुचो सम्मामिच्छत्तमुबणमिय  
पशुबीससकामओ जाओ, लद्धमतर । सपहि ठक्कसतरपरूवण कस्सामो—अण्णवरो  
मिच्छद्दी पशुबीससकामओ उवसमसम्मत्त पडिबजिय अविबक्खियसकमहाणेणतरिय  
पुचो मिच्छत्तं गत्तण सम्बुद्धसेपुम्बेद्वणकालेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तमुम्बेद्वमाणो  
उवसमसम्मत्ताहिमुहो होइण अंतरकरणं करिय मिच्छत्तपदमडिदिचरिममए सम्मा-  
मिच्छत्तपरिमफालिं सक्कामिय तद्धंतरसमए सम्मत्त पडिबजिय पदमहावडिं परिममिय  
तदवसाणे मिच्छत्तं गत्तण पल्लिवोवमाससेज्जमागमेचकाल सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तण-  
मुम्बेद्वणवावारेणच्छिय तवो पयदाविरोहेण सम्मत्तं धत्तण विदियछावडिमपुपालिय  
तदवसाणे पुचो वि मिच्छत्तं गत्तण दीहुम्बेद्वणकालेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तानि

⊗ पशुस प्रकृतिक सकामकका किटना अन्तरकास है ?

§ ३९१ यह सूत्र सुगम है ।

⊗ अपन्य अन्तरकाल अन्तर्हूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक दो जपासठ सागर है ।

§ ४० अब वहाँ सबे प्रथम अपन्य अन्तरकासना कथन करते हैं । यथा—पशुस प्रकृतियोंका

संक्रम करनेवाला कोई एक सम्यग्मिच्छादृष्टि शील परिणमकरा सम्पत्त्वको वा मिच्छात्वको प्राप्त  
हुया और वहाँ बसने सबसे अपन्य अन्तमु हुवे अकालक सचाईस प्रकृतियोंके संक्रम द्वारा पशुस  
प्रकृतियोंके संक्रमका अन्तर किया । फिर वह सम्यग्मिच्छात्वको प्राप्त होकर पशुस प्रकृतियोंका  
संक्रमक हो गया । इस प्रकार पशुस प्रकृतिक संक्रमस्वानता अपन्य अन्तर प्राप्त हो जाता है ।  
अब उत्कृष्ट अन्तरकासना कथन करते हैं—किन्ती एक पशुस प्रकृतियोंके संक्रमक मिच्छादृष्टि शीलमे  
एकरासम्पत्त्वको प्राप्त करके अविबद्धित संक्रमस्वानता द्वारा प्रकृत संक्रमस्वानता अन्तर किया ।  
फिर वह मिच्छात्वमें जाकर सबसे कृष्टत बहोवना अन्तके द्वारा सम्पत्त्व और सम्मामिच्छात्वकी  
वद्वाना करता हुआ अन्तमे सम्पत्त्वका अस्तिमुक्त हुआ । फिर अन्तरकरणके करके मिच्छात्वकी  
प्रथम स्थितिसे अन्त समयमें सम्यग्मिच्छात्वकी अस्तिम अद्विज्य संक्रमण करके तदन्तर समयमें  
सम्पत्त्वको प्राप्त हुआ । फिर प्रथम जपासठ सागर काज तक परिणमण करके इसके अन्तमें  
मिच्छात्वको प्राप्त हुआ । फिर पन्धके आसंख्यामें आगममात्र काज तक सम्पत्त्व और सम्म-  
मिच्छात्वकी वद्वाना करते हुए जिससे प्रकृतमें विरोध न पड़े इस ईगसे सम्पत्त्वको प्राप्त हुआ ।  
फिर दूसरे जपासठ सागर काज तक सम्पत्त्वका प्राप्त करके इसके अन्तमें फिरसे मिच्छात्वमें  
गया और वहाँ सबसे हीरे वह अन्तकाजके द्वारा सम्पत्त्व और सम्मामिच्छात्वकी वद्वाना करके

उन्वेल्लिऊण पणुवीससंक्रामओ जादो, लद्धं तीहि पलिदोवमासंखेजभागोहि सादिरेय-  
वेळावट्टिसागरोवममेत्तं पणुवीमसंक्रामयस्स उक्कस्मंतं । संपहि वावीसादिमंकमट्टाणाण-  
मंतरपरूवणण्डुमुत्तरमुत्त भणड—

❀ वावीस-वीस-चोदस-तेरस-एक्कारस-दस-अट्ट-सत्त-पंच-चदु-दोणिण-  
संक्रामयंतं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४०१. सुगमं ।

❀ जहएणेण अंतोमुहत्तं, उक्कस्सेण उचडुपोग्गलपरियट्टं ।

§ ४०२. वावीसाए ताव जहण्णंतरपरूवणा कीरदे—एको चउवीससंतकम्मिओव-  
सामओ लोभासंकमवसेण वावीसाए संक्रामओ होदूण पुणो णनुंसयवेदमुवसामिय  
अंतरिदो उवरिं चट्टिय पुणो हेट्ठा ओदरिय इत्थिवेदोक्कट्टाणाणंतरं वावीससंक्रामओ  
जादो, लद्धमंतरं जहण्णेणतोमुहत्तमेत्तं । एवं वीसाए । णवरि इगिवीससंतकम्मियस्स  
वत्तन्व । चोदममकामयस्स वि एवं चेव । णवरि चउवीससंतकम्मियस्स छण्णोक्कसायोव-  
सामणाए चोदममकमस्सादि कादूण पुरिमवेदोवसामणाए अंतरिदस्स पुणो हेट्ठा ओदरिय  
तिविहकीहोक्कट्टाणाणंतरं लद्धमंतरं कायव्वं । एवं तेरसमकामयस्स । णवरि पुरिसवेदोव-

पचीम प्रकृतियोंका सक्रामक हो गया । इस प्रकार पचीम प्रकृतियोंके सक्रामकका उत्कृष्ट अन्तर  
पल्यके तीन असख्यातये भागोंसे अधिक दो छत्रासठ सागर प्राप्त होता है । अब वाईस आदि  
संक्रमस्थानोंके अन्तरका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

\* वाईस, वीम, चाँदह, तेरह, ग्यारह, दस, आठ, सात, पाँच, चार और दो  
प्रकृतिक सक्रामकका कितना अन्तरकाल है ?

§ ४०१ यह सूत्र सुगम है ।

\* जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तन  
प्रमाण है ।

§ ४०२ अत्र सर्वप्रथम वाईस प्रकृतिक सक्रामस्थानके जघन्य अन्तरका कथन करते हैं—  
एक चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशामक जीव] लोभका सक्राम न होनेके कारण वाईस  
प्रकृतियोंका सक्रामक हो गया । फिर जिसने नपुंसकवेदका उपशाम करके वाईस प्रकृतियोंके सक्रामका  
अन्तर किया । फिर उपर चढकर और उतरकर स्त्रीवेदके अपकर्षणके बाद जो वाईस प्रकृतियोंका  
सक्रामक हो गया उसके वाईस प्रकृतियोंके संक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है ।  
वीस प्रकृतिक सक्रामकका जघन्य अन्तर भी इसी प्रकार प्राप्त होता है । किन्तु यह अन्तर इक्कीस  
प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवके कहना चाहिये । चौदह प्रकृतिक सक्रामकका जघन्य अन्तर भी इसी  
प्रकार प्राप्त होता है । किन्तु जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव छह नोकषायोंके उपशाम द्वारा  
चौदह प्रकृतियोंके सक्रामका प्रारम्भ करके फिर पुरुषवेदके उपशाम द्वारा उसका अन्तर करता है  
उसके उपशामश्रेणिसे नीचे उतरने पर तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण होनेके बाद यह अन्तर प्राप्त  
करना चाहिये । इसी प्रकार तेरह प्रकृतिक सक्रामकका भी जघन्य अन्तर प्राप्त होता है । किन्तु

१. आ० प्रतौ -मुहत्त इति पाठ ।

सामणाए सद्दप्यसत्त्वस्त पयदसकमङ्गणस्त दुविहकोहोवसामणाए अंतरपारमो वचध्वो ।  
 तयो हेडा ओदरिय पुणो वि सम्बलहुं चडिय पुरिसवेद उवसामिद लद्धमतर कायम्ब ।  
 एसो केव क्णो एकारससकमस्त वि । णवरि दुविहकोहोवसामणाए सद्दप्यसत्त्वस्तेदस्त  
 कोहसज्जणोवसामणाणतरमतरिदस्त पुणो ओदरमाभावयाए तिविहमाणोकङ्गणेण  
 लद्धमतर कायम्ब । एवं दससकमयस्त वि । णवरि कोहसज्जणोवसामणाए सद्दप्यलाहस्तेदस्त  
 दुविहमाणोवसामणेभतर कादूणुवरि चडिय पुणो हेडा ओदरिय पुणो वि सम्बलहुसुवरि  
 चडिदस्त कोहसज्जणोवसामणाणतर लद्धमतर कायम्ब । एवमहुण्ड सकमयस्त ।  
 णवरि दुविहमाणोवसामणाए समुबलद्धसकमस्तेदस्त माणसज्जणोवसामणेणतरस्सार्दि  
 क्कदूण पुणो ओदरमाणस्त तिविहमायोक्कङ्गणाए अंतरपरिसमची कायम्बा । एवं  
 सचसकामयस्त वि वचध्वं । णवरि माणसज्जणोवसामणाणतरसुवसद्दसत्त्वस्तेदस्त  
 दुविहमायोवसामणाए अतरपरिम क्कदूणुवरि चडिय हेडा ओदरिय पुणो वि सम्बलहु  
 सुवरि चडिदस्त समुरेसे लद्धमतरं कायम्ब । एव केव पचसकामयसङ्गणतरपरुवणा  
 वि । णवरि दुविहमायोवसामणाणतरसुवसादसत्त्वस्तेदस्त मायासज्जणोवसामणाणतर  
 मंतरिदस्त समयाविरोहेण लद्धमतरं कायम्ब । एव केव चउयई संकामयस्त वि वचध्वं ।

पुरुषवैश्व क्यराम हो ज्ञान पर विसने ठेरू प्रकृतिक संकमस्वान प्राप्त कर क्रिया ई बसके दो  
 प्रकारके कोषक्य कराम हो ज्ञाने पर प्रकृत संकमस्वानके अन्तरके प्रारम्भ होनेक्य कथन करना  
 चाहिये । फिर इस कोषके नीचे बतारकर और अतिरिक्त क्रिये बड़कर पुरुषवैश्व कराम कर  
 लेनेपर प्रकृत स्वानक्य अन्तर प्राप्त करना चाहिये । म्यारू प्रकृतिक संकमस्वानके अन्तरक्य मी  
 इसी क्रमसे कथन करना चाहिये । किन्तु दो प्रकारके कोषक्य कराम होने पर इस स्वानके प्राप्त  
 करके फिर कोष संकमस्वानक्य कराम होनेके बाद इस स्वानक्य अन्तर प्राप्त करे । फिर करामकेसिसे  
 बतये समय तीन प्रकारके मानक्य अयकर्मण करके इस स्वानक्य अन्तर प्राप्त करना चाहिये ।  
 [ इस प्रकृतिक संकमस्वानक्य अन्तर मी इसी प्रकार होय है । किन्तु कोष संकमस्वानक्य कराम होने  
 पर इस स्वानके प्राप्त करके फिर दो प्रकारके मानक्य कराम होनेके बाद इस स्वानक्य अन्तर  
 प्राप्त करे । फिर ऊपर बड़कर और नीचे बतारकर क्रिये अतिरिक्त ऊपर चड़े और कोषसंकमस्वानक्य  
 कराम करके अन्तर प्राप्त करे । इसी प्रकार साठ प्रकृतियोंके संकमस्वानक्य मी अन्तर प्राप्त होय  
 है । किन्तु दो प्रकारके मानक्य कराम हो ज्ञान पर इस स्वानको प्राप्त करके मानसंकमस्वानक्य  
 कराम करकेके बाद अन्तरक्य प्रारम्भ क्रिया । फिर बतये समय तीन प्रकारके मायाक्य अयकर्मण  
 करके अन्तरक्य समाप्ति की । इसी प्रकार सात प्रकृतियोंके संकमस्वानक्य अन्तरक्य कथन करना  
 चाहिये । किन्तु मानसंकमस्वानक्य कराम हो जाने पर इस स्वानके प्राप्त करके फिर दो प्रकारके  
 मायाक्य कराम हो ज्ञान पर अन्तरक्य प्रारम्भ क्रिया । फिर ऊपर बड़कर और नीचे बतारकर  
 क्रिये अतिरिक्त ऊपर चड़े और अपने स्वानमें पहुँचकर अन्तर प्राप्त करे । पाँच प्रकृतियोंके  
 संकमस्वानक्य अयक्य अन्तरक्य कथन मी इसी प्रकार करना चाहिये । किन्तु दो प्रकारके मायाक्य  
 कराम होनेके बाद इस स्वानके प्राप्त करके फिर माया संकमस्वानक्य कराम इनके बाद इस  
 स्वानक्य अन्तर करे और पञ्चाविधि विवक्षित स्वान पर अन्तर अन्तरके प्राप्त करे । इसी प्रकार  
 चार प्रकृतियोंके संकमस्वानक्य मी अन्तर करना चाहिये । किन्तु माया संकमस्वानक्य कराम हो जाने

णवरि मायासजलणोवसामणांतरमासादिदमरूवस्सेदम्म दुविहलोहोवसामणाए  
अंतरस्सादिं कादूण पुणो ओदरमाणावत्थाए अणियद्विपडमसमए लद्धमंतरं कायव्वं ।  
एवं दोण्हं मकामयस्स । णवरि इगिवीससंतकम्मियमंवंधेण सव्वजहण्णंतोमुहुत्तमेत्त-  
मतरमणुगतव्वं । एवं जहण्णंतरपरूवणा कदा ।

§ ४०३. संपहि उक्कस्संतरे मण्णमाणे तत्थ ताव वावीसाए उच्चदे । तं जहा—  
एकौ अणादियमिच्छाइड्डी अट्टपोग्गलपरियट्टादिसमए पडमसम्मत्तमुप्पाइय वेदगसम्मत्तं  
पडिवज्जिय अणंताणुवधिविसंजोयणापुरस्सरं दंसणतियमुवसामिय सव्वलहुमुवसमसेटि-  
मारूढो । पुणो ओदरमाणो इत्थिवेदोक्कट्टाणाणतरं वावीससंक्रमट्टाणास्सादिं कादूण  
अंतरिदो देख्खणट्टपोग्गलपरियट्टमेत्तकालं परिभमिळण तदो अतोमुहुत्तावसेसे सिज्झिदव्वए  
त्ति सम्मत्तुप्पायणपुरस्सरं दंगणमोहक्खएवणं पट्टविय मिच्छत्तचरिमफालीपदणाणंतरं  
वावीममंकामओ जादो, लद्धमंतरं होड । एवं वीसादिसेससंक्रमट्टाणाणं पि उक्कस्संतरं  
परूवेयव्वं । णवरि सव्वेसिमुवसमसेट्ठीए चटमाणोदरमाणावत्थासु जहामंभवमादिं  
कादूणंतरिदस्स पुणो उवसमसेटिमारेहणेण लद्धमंतरं कायव्व । तेरसेक्कारस-दस-चदु-  
दोण्णिमंकमट्टाणाण च खवगसेट्ठीए लद्धमंतरं कायव्वमिदि । संपहि एकस्से संक्रमट्टाणस्स  
अंतगभावपदुप्पायणट्टमुत्तरसुत्तमाह—

पर इस स्थानको प्राप्त करके फिर दो प्रकारके लाभका उपशम हा जाने पर अन्तरका प्रारम्भ करे  
और फिर उपशमश्रेणिसे उतरते समय अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमे अन्तरको प्राप्त करना  
चाहिये । उनी प्रकार दो प्रकृतियोंके सक्रामकका अन्तर प्राप्त होता है । किन्तु इकोस प्रकृतियोंकी  
सत्तावाले जीवके सम्वन्धसे इसका अन्तर सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्तप्रमाण जानना चाहिये । इस  
प्रकार जघन्य अन्तरका कथन समाप्त हुआ ।

§ ४०३. अब उत्कृष्ट अन्तरका कथन करते हैं । उसमे भी सर्वप्रथम वाईस प्रकृतिक  
संक्रमस्थानका अन्तर कहते हैं । यथा—एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीवने अर्धपुद्गलपरिवर्तनके  
प्रथम समयमे प्रथम सम्यक्त्वको प्राप्त करके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त किया । फिर अनन्तानुबन्धीकी  
विसयोजनापूर्वक तीन दर्शनमोहनीयका उपशम करके अतिशीघ्र उपशमश्रेणि पर चढा । फिर  
वहाँसे उतरते समय स्त्रीवेदका अपवर्षण करके वाईस प्रकृतिक सक्रमस्थानका प्रारम्भ किया और  
उसका अन्तर करके कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन कालतक परिभ्रमण करता रहा । फिर सिद्ध होनेमे  
अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर सम्यक्त्वकी उत्पत्तिपूर्वक दर्शनमोहनीयकी क्षणका प्रारम्भ करके  
मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिके पतनके बाद वाईस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । इस प्रकार  
वाईस प्रकृतिक सक्रमस्थानका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हो जाता है । इसी प्रकार वीस प्रकृतिक आदि शेष  
संक्रमस्थानोंके उत्कृष्ट अन्तरका भी कथन करना चाहिये । किन्तु उपशमश्रेणि पर चढने या उतरनेकी  
अवस्थामें सभी स्थानोंको यथासम्भव प्राप्त करके अन्तरका प्रारम्भ करे और फिर अन्तमे उपशमश्रेणि  
पर आरोहण करके अन्तर ले आवे । तथा तेरह, ग्यारह, दस, चार और दो प्रकृतिक सक्रमस्थानोंका  
क्षपकश्रेणिमें उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त करना चाहिये । अब एक प्रकृतिक सक्रमस्थानके अन्तरका कथन  
करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—



⊗ एकिकस्ते सकामयस्त पत्यि अतरं ।

§ ४०४ कुतो ! स्वयसहिमि छद्मपसस्त्वचादो । संपदि उचसससकमहाणा-  
मतरपस्वप ह्यणमाणो मुचमुपर मण्य—

⊗ सेसायं सकामयाप्यमंतरं केवचिर काळावो होइ ?

§ ४०५ सुगमं ।

⊗ अहयपेण अंतोमुहुत्त, उचकस्तेय तेत्तीसं सागरोवभायि सादिरेयायि ।

§ ४०६ एत्थ सेसगाहणेणूवीसद्धारस-भारस-णव-उ-तिगसण्णिदाणमिगिरीस  
संतकम्मियसवचिसकमहाणाणं गहयं कायम्भं । एवेसिं च अहणुक्कसंतरपस्वणमेवेण  
सुचेण कीरदे । त अहा—इगिवीससतकम्मियोवसामगो उवसमसेदीए अतरकरणसमपि-  
समअतरमंवाणुपुमिसकममाइविय तदो णवुसयवेदोवसामणाए एयुणवीससकममो  
होदूण इरियवेदोवसामणाकरणेणतरस्तादिं कादूण पुणो तत्थेव छद्मपसस्त्वस्त अद्धारस-  
सकमस्त उण्णोकसायोवसामभाए अंतरमुप्यादिय तम्मि चेव बारससकममाइविय पुणो  
पुरिसवेदोवसमेअतरायिय तदो दुविइकोहोवसामणाअंतरं छद्मपसस्त्वस्त अवणइ सकम-  
हाणस्त कोइसअल्लोवसामणाणतरमतरं पारमिय पुणो तत्थ दुविइमाणोवसामणाए

⊗ एक प्रकृतिक संकामकका अन्तरकाल नहीं है ।

§ ४४ क्योंकि इस स्वानधी प्राप्ति अथकमेवमिं होती है । अथ पहले जिन संकामस्वानो-  
का अन्तर काल माने हैं उनके सिवा कचे हुए संकामस्वानोंके अन्तरकाल कवन काल हुए आगेअ  
सूत्र करते हैं—

⊗ शेष स्थानोंके संकामककका कितना अन्तरकाल है ?

§ ४४ यह सूत्र सुगम है ।

⊗ अथन्य अन्तरकाल अन्तर्हृत् है आर उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तेवीस  
सागर है ।

§ ४४ इस सूत्रमें जो 'शेष' पद प्रकृत किया है सो इससे इन्हींस प्रकृतिक संकामके  
सम्बन्ध रखनवाले जमीस अथरह, धारह, नी अह और तीस प्रकृतिक संकामस्वानोंअ प्रकृत करता  
बाहिये । इस सूत्र द्वारा इन स्थानोंके अथन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल कवन किया गया है । सुत्रासा  
इस प्रकार है—जो इन्हींस प्रकृतियोंकी सत्प्रताला अथरमक बीच अथरमअथिमें अन्तरकालकी  
समाप्तिके बाद ही आमुपूरी संकामक प्रारम्भ करता है । फिर मनु संकामक अथरम कालेनेर  
जमीस प्रकृतियोंअ संकामक हो जाता है और कोवअ अथरम करके प्रकृत स्थानके अन्तरका प्रारम्भ  
करता है । फिर वहीं पर अथरह प्रकृतिक संकामस्वानमें प्राप्त करके अह जोइयायोंकी अथरामत  
द्वारा इस स्थानके अन्तरकाल प्रारम्भ करता है । फिर वहींर बाद प्रकृतिक संकामस्वानको प्राप्त  
करके पुनवेदकी अथरमनाद्वारा इस स्थानअ अन्तर करता है । फिर ही मथरके कोवअ अथरम  
करके बाद तीसप्रकृतिक संकामस्वानको प्राप्त करके अथरमअ अथरके अथरमद्वारा इस स्थानके  
अन्तरकाल प्रारम्भ करता है । फिर वहींर ही मथरके मानअ अथरम हो जाने पर अथप्रकृतिक

लद्धप्पलाहस्स छण्ह संकमस्स माणसंजलणोवसामणविहाणेणंतरमाढविय तत्तो दुविह-  
मायोवसामणाए तिण्हं संकममाढविय मायासंजलणोवसामणाए तदंतरस्मादिं कादृण  
उवरिं चडिय पुणो हेट्ठा ओयरमाणो तिविहमाय-तिविहमाण-तिविहकोह-सत्तणोकसायो-  
कट्टणाणंतरं जहाकमं छण्हं णवण्हं वारसण्हं एगूणवीसाए च संकमट्टाणाणमंतरं  
समाणेइ । सेसाणं पुण हेट्ठा ओयरिय पुणो वि मव्वलहुमुवरिं चडिऊण सगसगविसए  
अंतरं समाणेइ । एदं जहण्णंतरं ।

§ ४०७. उक्कस्मंतरपरूवणमिदाणि कस्सामो—देव-णेरइयाणमण्णदरो चउवीस-  
संतकम्मिओ वेदगमम्माइट्ठी पुव्वकोडाउअमणुस्सेसुप्पज्जिय गव्भादिअट्टवस्साणमुवरि  
सव्वलहुं विमुट्ठो होऊण मंजमं पडिवज्जिय दंसणमोहणीयं खविय उवसमसेटिमारुढो  
तिण्हमट्टारसण्हं चढमाणो चेव अंतरमुप्पाडय छण्ह णवण्हं वारमण्हमेगूणवीसाए च  
ओयरमाणो अंतरमुप्पाडय समोइण्णो देख्खणपुव्वज्जोडिमेत्तकालं संजममणुपालिय कालं  
कादृण तेत्तीगंमारोवमाउएसु देवेसुववण्णो । कमेण तत्तो चुदो सत्तो पुव्वकोडाउअ-  
मणुस्सेसुप्पण्णो अंतोमुहुत्तावसेसे उवसमसेटिमारुहिय जहाकमं सव्वेसिमंतरं समाणेदि ।  
णवरि वारमण्हं तिण्ह च संकमट्टाणस्स खवगसेटीए लद्धमंतरं कायच्चं ।

एवमोघेण सव्वमंकमट्टाणाणमंतरपरूवणा कया ।

सकमस्थानको प्राप्त करके मानसज्वलनके उपशमद्वारा इम स्थानके अन्तरका प्रारम्भ करता है ।  
फिर दो प्रकारकी मायावा उपशम हो जाने पर तीन सकमस्थानको प्राप्त करता है । फिर उपर चढ  
कर और नीचे उतरकर तीन प्रकारकी माया, तीन प्रकारका मान, तीन प्रकारका क्रोध और सात  
नोकपाय इनका अपकर्षण करने पर क्रमसे छद्म, नौ, वारह और उन्नीस प्रकृतिक संक्रमस्थानोंके  
अन्तरको प्राप्त कर लेता है । तथा नीचे उतर कर और फिरसे अतिशीघ्र उपशमश्रेणि पर चढकर  
शेष स्थानोंका भी अपने अपने स्थानमे अन्तर प्राप्त कर लेता है । यह जयन्य अन्तर है ।

§ ४०७ अथ इस समय दृष्ट अन्तरका कथन करते हैं—देव और नारकियोंमेंसे कोई  
एक चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला वेदक सम्यग्दृष्टि जीव पूर्व कोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें  
उत्पन्न हुआ । फिर गर्भसे लेकर आठ वर्ष हो जाने पर अतिशीघ्र विशुद्ध होकर सयमको प्राप्त हुआ ।  
फिर दर्शनमोहनीयका क्षय करके उपशमश्रेणि पर चढा । इस प्रकार उपशमश्रेणि पर चढते हुए  
तीन और अठारह प्रकृतिक संक्रमस्थानका अन्तर उत्पन्न करके तथा छद्म, नौ, वारह और उन्नीस  
प्रकृतिक संक्रमस्थानका उतरते समय अन्तर उत्पन्न करके क्रमसे यह जीव अप्रमत्त व प्रमत्तसयत  
हो गया । फिर कुछ कम पूर्व कोटि काल तक संयमका पालन करके मरा और तेतीस सागरकी  
आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हो गया । फिर क्रमसे वहाँसे च्युत होकर पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें  
उत्पन्न हुआ । फिर अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर उपशमश्रेणिपर चढकर क्रमसे सब स्थानोंका अन्तर  
प्राप्त करता है । किन्तु इतनी विशेषता है कि वारह और तीन प्रकृतिक सकमस्थानका अन्तर  
क्षपकश्रेणिमें प्राप्त करना चाहिये ।

इस प्रकार ओघसे सब सकमस्थानोंके अन्तरका कथन किया ।

§ ४०८ षण्णिमादसफरुणहृत्सुन्धारण वचस्सामो । त अहा—आदेशेण  
णिरयगइय् नेरयसु २७, २६, २३ संक्रा० अतर क्व० ? अह० एगसमओ, उक्क०  
तेचोस सागरोबमाणि देहणाणि । एव २५, २१ । णवरि अह० अतोसुहुण । एवं  
सम्बणेरय्य० । णवरि सगह्विदी देहणा ।

§ ४०९ तिरिक्खेसु २७, २६, २३ सकामयंतरमोषं । एव २१ । णवरि अह०  
अतोसु० । २० अह० अतो०, उक्क० तिण्णि पळिदोबमाणि सादिरयाणि । एवं पंचिदि०-  
तिरिक्खतिप० ३ । णवरि सगह्विदी । पंचिदियतिरिक्खअपळ -अणुसअपळ -अणुरिसादि  
आव सम्बहे पि तिण्ह ह्वाणार्णं णत्थि अतर ।

§ ४०८ अथ आदेशस्य क्वचन करनेके लिये उच्चारणाको कथ्यते है । यथा—आदेशसे  
नरकागतिमें नारकियोमें २७ २६ और २३ प्रकृतिक स्थानोंके संक्रमकक्य अन्तरकक्य कियना है ।  
अथग्य अन्तर एक समय है और उक्क अन्तर कुछ कम ठेकीस सागर है । इसी प्रकार २१ और  
२२ प्रकृतियेके संक्रामकोका अन्तरकक्य जानना चाहिये । किन्तु इन स्थानोंके संक्रमककोका  
अथग्य अन्तर अन्तर्मुहुर्त है । इसी प्रकार सब नारकियोमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता  
है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कइनी चाहिये ।

विशेषार्थ—यहाँ सर्वत्र २० प्रकृतिक आदि संक्रमस्थानोंका अथग्य अन्तर एक समय  
ओपके समान पठित कर लेना चाहिये । किन्तु २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानके अथग्य अन्तरमें  
ओपसे कुछ विशेषता है । बात यह है कि नरकागतिमें अपराधमन्त्रिण प्राप्त होना सम्भव नहीं है  
इसलिये यहाँ २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानका अथग्य अन्तर एक समय नहीं प्राप्त होकर अन्तर्मुहुर्त  
प्राप्त होता है जो अन्तर्मुहुर्तके भीतर दो बार अनन्तशुक्लबीषी विसंयोजनापूर्वक मिला गुणस्थान  
प्राप्त करनेसे पठित होता है । शेष क्वचन सुगम है ।

§ ४०९ तिर्यक्कोमें २७, २६ और २३ प्रकृतियोंके संक्रमकक्य अन्तरकक्य ओपक समान  
है । इसी प्रकार २१ प्रकृतियोंके संक्रमकक्य अन्तरकक्य जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता  
है कि इस स्थानका अथग्य अन्तर अन्तर्मुहुर्त है । तथा २१ प्रकृतियोंके संक्रमकक्य अथग्य अन्तर  
अन्तर्मुहुर्त है और उक्क अन्तर साधिक तीन पत्थ है । इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यक्कक्यमें जानना  
चाहिये । किन्तु अपनी-अपनी स्थिति कइनी चाहिये । पंचेन्द्रिय तिर्यक्क अथग्य अन्तर  
और अणुरिससे लेकर सर्वांसिद्धि तकके क्षेत्रोंमें तीन स्थानोंका अन्तर नहीं है ।

विशेषार्थ—तिर्यक्कोमें २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानका अथग्य अन्तर नरकागतिके समान प्राप्त  
होता है इसलिये इसका ओपके समान निर्देश न करके अलगसे विधान किया है, क्योंकि  
तिर्यक्कगतिमें भी अपराधमन्त्रिणी प्राप्ति सम्भव न होनेसे यहाँ २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानका अथग्य  
अन्तर एक समय पठित नहीं हो सकता है । जो २१ प्रकृतियोंकी सत्पायाका तिर्यक्क बीष २५  
प्रकृतियोंका संक्रमका कर रहा है उसने अपराधमन्त्रकको प्राप्त करके २८ प्रकृतियोंकी सत्पाया  
की । फिर वह सम्पत्तिमध्यात्ककी बहू कना होनेके पूर्व ही तीन पत्थकी आयुवासे तिर्यक्कोमें  
बत्तन हुआ और यहाँ यथासम्भव अतिरीम सम्पत्तिमध्यात्कके संक्रमके अन्तिम समयमें  
अपराध सम्पत्तपूर्वक वेदकसम्बत्तको प्राप्त हुआ । फिर पत्थका असंख्यत्तर्त  
मगप्रमाया अह २१ने पर वह मिध्यात्कमें गया और अन्तर्मुहुर्त अह शेष २१ने पर वह

§ ४१०. मणुमतियस्म ओघो । णवरि जम्मि अद्रुपोग्गलपरियट्टं तम्मि पुच्चकोडिपुघत्तं । जम्मि तेत्तीमं सागरोवमाणि तम्मि पुच्चकोडी देसूणा । णवरि सत्तावीम-छव्वीस-पणुवीस-तेवीस-इग्गिवीमरंका० पंचिदियतिरिक्खभंगो ।

§ ४११. देवाणं णारयभंगो । णवरि एकत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि । एवं

पुनः उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । फिर जीवनके अन्तिम समयमें यह सासादनमें जाकर पचीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया । इस प्रकार पचीस प्रकृतिक सक्रामकका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तीन पत्य प्राप्त होता है । यहाँ साधिकसे कितना काल लिया गया है इसका कहीं उल्लेख नहीं मिलता, इसलिये यहाँ हमने उसका निर्देश नहीं किया है । तथापि वह पत्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण होना चाहिये । पंचेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्त आदिमें विवक्षित संक्रमस्थानकी प्राप्ति दो बार सम्भव नहीं है, इसलिये यहाँ सम्भव सक्रमस्थानोंके अन्तरका निषेध किया है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४१०. मनुष्यत्रिकमे अन्तर ओघके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि जहाँ अर्धपुद्गलपरिवर्तनकालप्रमाण अन्तरकाल कहा है वहाँ पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण अन्तरकाल कहना चाहिये । और जहाँ तेतीस सागरप्रमाण अन्तरकाल कहा है वहाँ पर कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण अन्तरकाल कहना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि सत्ताईस, छव्वीस, पचीस, तेईम और इक्कीस प्रकृतियोंके सक्रामकोंका अन्तर पंचेन्द्रियतिर्यञ्चोंके समान है ।

विशेषार्थ—मनुष्य गतिमें सभी संक्रमस्थान सम्भव है । उनमेंसे यहाँ २२, २०, १४,

१३, ११, १०, ८, ७, ५ और २ प्रकृतिक सक्रमस्थानोंका जघन्य अन्तर तो ओघके समान बन जाता है । किन्तु उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण नहीं प्राप्त होता, क्योंकि मनुष्यकी कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पत्य है । इसलिये मनुष्योंमें इन स्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण ही प्राप्त होता है, क्योंकि उक्त संक्रमस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल उपशमश्रेणिकी अपेक्षासे ही घटित किया जा सकता है । इसलिए ऐसे जीवको उत्तम भोगभूमिके मनुष्योंमें उत्तरान्न कराना ठीक नहीं है । इसीसे मूलमें यह कहा है कि जिन स्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है उनका वह अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण कहना चाहिये । इसी प्रकार यद्यपि मनुष्योंमें १६, १८, १२, ९, ६ और ३ इन सक्रमस्थानोंका जघन्य अन्तर भी ओघके समान बन जाता है । तथापि उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण ही प्राप्त होता है, क्योंकि उक्त सक्रमस्थान या तो ज्ञायिकसम्यग्दृष्टिके उपशमश्रेणिके पाये जाते हैं या इनमेंसे कुछ स्थान क्षपकश्रेणिके भी पाये जाते हैं । इसलिये एक पर्यायमें ही दो बार श्रेणिपर चढ़ाकर इन स्थानोंका यथाविधि अन्तर प्राप्त करना चाहिये । विधिक निदेश पहले ही किया जा चुका है । इसीसे मूलमें यह कहा है कि जिन स्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर कहा है उनका वह अन्तर कुछ कम पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण कहना चाहिये । अब रहे २७, २६, २५, २३ और २१ प्रकृतिक संक्रमस्थान सो इनका अन्तर पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान मनुष्योंमें भी बन जाता है, अतः मनुष्योंमें इनके इन स्थानोंके अन्तरकालको पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान जाननेकी सूचना की है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४११ देवोंका भग नारकियोंके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि नारकियोंमें जहाँ कुछ कम तेतीस सागर उत्कृष्ट अन्तर कहा है वहाँ इनमें कुछ कम इक्कीस सागर उत्कृष्ट

व्यवस्थासद्विरे कथावस्तु

मन्त्रादि जाय उवग्मिगवजा सि । मवरि मुगहिदा इव्या । एवं ज्ञमः ।

① षाण्णाजीयेऽङ्गि भगविषमो ।

। ४१२ अहियारसंमासजमुक्तोद् मुगम । एव्य कृत्वाकृत्वा

मोहणं—

② जेसिं पयडीमो अरिय तेसु पयप ।

। ४१३ कुदो ? अङ्गमहि धम्मवहाराओ ।

③ सम्पजीया सत्ताबीसाय दुग्वीसाय पणुयोसाय तेवीसत्त पद्वीक

। ४१४ एव्य सम्पजीयमाइयमदिस्से क्कणार भाणाबीनक्तिपवसुपणक

गणापीतादिग्गइजांमपरमंफमद्वाम्मुदासत्तुं । पियममाइयकपियमकुदसत्तुं पणु

गंकाययाणं सज्जकालमत्थियत्तजाणावणपत्तं । तदो एदसि पक्कइ मक्कपुक्कय तत्त

गीया गणकाममत्थि सि मण्णइ होइ ।

अकार क्कणा आदिब । इती पक्कर भयमवासिबोसे केकर उत्तिम शिबेक कजे देसें ज्ञ

पादिब । किणु रावेम क्क क्क अपनी स्थिति कइती आदिबे । इती प्रकार मनपणव एवंत

आता आदिबे ।

विश्वार्थ—देवीयं नो अमुपिवासे केकर सर्वांसिदि कजे देवेसं क्कय एव की

पाणा अणा दे ववेो क वठो पर वा भी संकमएवान पाये जाले हैं अन्य एक सर्वांसिं हो ज्ञ

का ॥ गणान पदो दे । इतीये रागान्य देवीसं क्कय अक्कर क्कय क्कय क्कय इत्थि सत्ताक

मनमला दे, नपां क्कय अक्करवाक नो पक्कयक ही वाया जाले है और क्कती क्कय सि

इतीये वाताइ ही दे । अंज फलम सुगम है ।

④ अण माना जीबोकी अपेक्षा भंगविषयका अधिकार है ।

। ४१५ अधिचारथ सिरेय क्कजेकाक बइ त्थम सुगम है । अण इती विपक्के कर्ताक

अण क्कजेके जिने जागेक एव जाया है—

⑤ भिमके प्रकृष्टियोका एव्य है उनका यहाँ अधिकार है ।

। ४१६ पवीकि क्कमेरिठ जीबोसे म्माअव कती है ।

⑥ राव जीव मन्नासिं छन्वीस पण्णीस तेरेंथ और इक्कीस इन पाँच सुक्क-

इथानांमिं निगमसे संक्रामक है ।

। ४१७ बइ मक्कएवा माण्य जीवमिपयक है यह पित्तजानेके जिने इय सुक्के 'एव्य की।

विना है । अमिवाका विषय अके प्रकृत संकमएकनोअ सर्वांसि क्कयिणव एव्य है इत क्कय

एव्य व (जोके जिने निबम वरक्य अण विचर है । इयजिने इय पाँच संकमएकनोके संक्रामक

और रावेदा पाये जाले हैं यह इय सुक्कय एव्य है ।

❀ सेसेसु अठारससु संक्रमणेषु भजियन्वा ।

६ ४१५. कुटो ? तेसिमद्ववभावित्तदंमणाडो । एत्थ भंगपमाणमेदं—३८७४-२०४८९ । एवमोघो समत्तो ।

❀ शेष अठारह संक्रमस्थानोंमें जीव भजनीय है ।

६ ४१५. क्योंकि इन स्थानोंका अधुवपना देगा जाता है । यहाँ पर भंगोंका प्रमाण ३८५४२०४८६ है ।

विशेषार्थ—मोहनीय कर्मके २७ प्रकृतिक आदि जां तेईस सक्रमस्थान हैं जिनमेंसे २७, २६, २५, २३ और २१ सक्रमस्थानवाले बहुतसे जीव ससारमें सर्वदा पाये जाते हैं, अत ये पाचो ध्रुवस्थान हैं । तथा शेष स्थानोंकी अपेक्षा यदि हुए तो वभी एक और वभी अनेक जीव होते हैं, इसलिये वे अध्रुवस्थान हैं । अत इन सत्र स्थानोंके ध्रुव भगके साथ एक संयोगी आदि कुल भंगोंके प्राप्त करने पर वे सत्र ३८७४२०४८६ होते हैं । यथा—

१ ध्रुव भंग जो २७, २६, २५, २३ और २१ संक्रमस्थानोंकी अपेक्षासे प्राप्त होता है

२ वार्डस सक्रमस्थानके भंग

३ ध्रुवभग सहित २२ संक्रमस्थानके भंग

३ × २ = ६ वीस सक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी भग

३ × ३ = ९ ध्रुवभग सहित २२ व २० सक्रमस्थानके सत्र भग

६ × २ = १२ उनीम संक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सत्र भंग

६ × ३ = १८ ध्रुवभग सहित २३, २० व १६ सक्रमस्थानके सत्र भग

२७ × २ = ५४ अठारह सक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सत्र भंग

२७ × ३ = ८१ ध्रुवभग सहित २२, २०, १६ व १२ संक्रमस्थानके सत्र भग

८१ × २ = १६२ चौदह सक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सत्र भंग

८१ × ३ = २४३ ध्रुवभग सहित २२ से १४ तकके पूर्वोक्त सक्रमस्थानोंके सत्र भंग

२४३ × २ = ४८६ तेरह संक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सत्र भग

२४३ × ३ = ७२९ ध्रुवभग सहित २२ से १३ तकके पूर्वोक्त सक्रमस्थानोंके सत्र भंग

७२९ × ३ = १४५८ बारह संक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी भग

७२९ × ३ = २१८७ ध्रुवभग सहित पूर्वोक्त २२ से १२ संक्रमस्थान तकके सत्र भंग

२१८७ × २ = ४३७४ ग्यारह सक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सत्र भग

२१८७ × ३ = ६५६१ ध्रुवभग सहित पूर्वोक्त २२ से ११ सक्रमस्थान तकके सत्र भंग

६५६१ × २ = १३१२२ दस सक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सत्र भंग

६५६१ × ३ = १९६८३ ध्रुवभग सहित पूर्वोक्त २२ से १० संक्रमस्थान तकके सत्र भंग

§ २१६ सपदि आदसपरुवणहुमुधारण वचरस्तामो । आदेसेण जेरुयपसु पक्कणह  
 ङ्गामार्मं सक्कं । गिपमा अतिव । एव पढमपुडवि-तिरिक्खउ-देवा सोहम्मादि चाव

१६८२ × २ = ३३६४४ नौसंक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सब मंग  
 १६८२ × ३ = ५०४६६ भ्रुवमंग सहित पूर्वोक्त २२ से ६ संक्रमस्थान तकके  
 सब मंग

४६ ४६ × २ = ९१८ ६८ अष्ट संक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सब मंग  
 ४६ ४६ × ३ = १०६१४० भ्रुवमंग सहित पूर्वोक्त २२ से ८ संक्रमस्थान तकके  
 सब मंग

१००१४० × २ = २००२८० सात संक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सब मंग  
 १००१४० × ३ = ३००४२० भ्रुवमंग सहित पूर्वोक्त २२ से ७ संक्रमस्थान तकके  
 सब मंग

३३१४४१ × २ = ६६२८८२ छह संक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सब मंग  
 ३३१४४१ × ३ = ९९४२६२३ भ्रुवमंग सहित पूर्वोक्त २२ से ६ संक्रमस्थान तकके  
 सब मंग

१५४४३५४ × २ = ३०८८७०८ पाँच संक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सब मंग  
 १५४४३५४ × ३ = ४६३३०६२ भ्रुवमंग सहित पूर्वोक्त २२ से ५ संक्रमस्थान तकके  
 सब मंग

४८२६६६ × २ = ९६५३३२ चार संक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सब मंग  
 ४८२६६६ × ३ = १४४७९९८ भ्रुव मंगसहित पूर्वोक्त २२से ४ संक्रमस्थान तककेसब मंग  
 १४४७९९८ × २ = २८९५९९६ तीन संक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सब मंग

१४४७९९८ × ३ = ४३४३९९६ भ्रुव मंगसहित पूर्वोक्त २२ से ३ संक्रमस्थान तकके  
 सब मंग

४३०४६०२१ × २ = ८६०९२०४ दो संक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सब मंग  
 ४३०४६०२१ × ३ = १२९१३८०३ भ्रुव मंगसहित पूर्वोक्त २२ से २ संक्रमस्थान तकके  
 सब मंग

१२९१३८०३ × २ = २५८२७६०६ एक संक्रमस्थानके प्रत्येक व संयोगी सब मंग  
 १२९१३८०३ × ३ = ३८७७१४०६ भ्रुव मंगसहित पूर्वोक्त २२से १ संक्रमस्थान तकके सब मंग

ब्रह्मना—२१ संक्रमस्थानको प्रथम मानकर वे उत्तरोत्तर मंग जाय गये हैं । अत आगे  
 वा २० आदि एक एक संक्रमस्थानके मंग बतहाये गये हैं इनमें वस वस स्थानके प्रत्येक मंग और  
 वस स्थान तकके सब स्थानोंके त्रिसंयोगी आदि मंग सम्मिलित हैं । वे मंग विवक्षित स्थानसे  
 पीछेके सब स्थानोंके मंगोंको वस गुणा करने पर उत्पन्न होते हैं । तथा इन मंगोंमें पीछे पीछेके  
 स्थानोंके मंग मित्रा हैने पर वहाँ तकके सब मंग होते हैं । ये मंग विवक्षित स्थानसे पीछेके सब  
 स्थानोंके मंगोंको तीनसे गुणा करने पर उत्पन्न हाय हैं । परचावानुपूर्वी वा पत्रतानुपूर्वीके क्रमसे  
 मी व मंग जाय वा सफ्त हैं ।

इस प्रकार शेष प्रहस्य समाप्त हुई ।

§ ४१६ अब आधेरुअ कथन करनेके लिए बन्धवारणको बतयात हैं । आधेरुअसे  
 नाटकियोंमें बाँच संक्रमस्थानोंके संज्ञामक बाँच नियमसे हैं । इसी प्रकार प्रथम प्रसिद्धी, तिर्षकत्रिक,  
 द्वैज और सीधमें कल्पसे सत्र नौ प्रियेक तकके देवोंमें जानना चाहिए । इसी दृष्टिकोसे शेष

णवगेवज्जा त्ति । विदियादि जाव सत्तमा त्ति एवं चेव । णवग्गि इग्गिवीससंक्रामया भयणिज्जा । भंगा ३ । एवं जोणिणि०-भवण०-वाण०-जोदिसिएसु । पंचिदियतिरिक्ख-अपज्ज० तिण्णिण्णि द्वाणाणि णियमा अत्थि । मणुसतिये ओघभंगो । मणुसअपज्ज० सच्चपद-संक्रामया भयणिज्जा । तत्थ भंगा २६ । अणुदिसादि जाव सच्चट्टा त्ति २७, २३, २१ संक्रामया णियमा अत्थि । एवं जाव ।

§ ४१७. एत्थ ताव भागाभाग-परिमाण-खेत्त-फोसणाणं देसामासयमुत्तेणेदेण द्दुच्चिदाणमुच्चारणाणुगमं कस्सामो । तं जहा—भागाभाग० दुविहो णिदेसो—ओघेण आदेसेण यं । ओघेण पणुवीससंक्रामया सच्चजीवाणमणंता भागा । सेससच्चपदसंक्रामया अणतिमभागो । एवं तिरिक्खेसु । आदेसेण शेग्इय० २५ संका० असखेज्जा भागा । सेसमग्खे०भागो । एव सच्चणेग्इय-सच्चपच्चिदियतिरिक्ख-मणुग्ग-मणुसअपज्ज०-देवा जाव सहस्सार त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणी० २५, पय० सका० सखेज्जा भागा । सेसं०

सातवीं पृथिवी तक भी इसी प्रकार जानना चाहिये । किन्तु यहाँ इक्कीस प्रकृतियोंके जीव भजनीय हैं, अत ध्रुव भगके साथ तीन भग होते हैं । इसी प्रकार योनिनीतिर्यंच, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिये । पचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें तं न स्थानवाले जीव नियमसे हैं । मनुष्यत्रिकमे ओघके समान भग हैं । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब सम्भव पदोंके संक्रामक जीव भजनीय हैं । यहाँ भग २६ होते हैं । अनुदिशासे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें २७, २३ और २१ प्रकृतिक सक्रमस्थ नवाले जीव नियमसे हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकी, योनिनी तिर्यंच, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें २१ प्रकृतिक सक्रमस्थानके एक और नाना जीवोंकी अपेक्षा दो भग होते हैं तथा इनमें शेष स्थानोंकी अपेक्षा एक ध्रुव भग मिला देनेपर तीन भग हो जाते हैं । लब्धपर्याप्त मनुष्योंमें २७, २६ और २५ ये तीन संक्रमस्थान होते हैं जो कि भजनीय हैं, अतः इनके २६ भंग प्राप्त होते हैं । शेष कथन सुगम है । तीन स्थानोंके ध्रुवभगको छोड़कर शेष २६ भग किस प्रकार आते हैं इसका ज्ञान पूर्वमें कही गई सट्टिपे ही हो जाता है ।

§ ४१७ यत्त 'शाणाजीवेहि भंगत्रिचओ' यह सूत्र देशामर्पक है, अतः इससे सूचित होनेवाले भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र और स्पर्शन इन अनुयोगद्वारोंकी उच्चारणाका अनुगम करते हैं । यथा—भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा पच्चीस प्रकृतियोंके संक्रामक जीव सब जीवोंके अनन्त बहुभागप्रमाण हैं और शेष सब पदोंके सक्रामक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं । इसी प्रकार तिर्यंचोंमें भागाभाग जानना चाहिये । आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें २५ प्रकृतियोंके संक्रामक जीव असख्यात बहु-भागप्रमाण हैं । तथा शेष पदोंके सक्रामक जीव असख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब पचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, देव और सहस्वार स्वर्ग तकके देवोंमें भागाभाग जानना चाहिये । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोंमें २५ प्रकृतियोंके संक्रामक जीव सख्यात बहुभागप्रमाण हैं । तथा शेष पदोंके सक्रामक जीव सख्यातवें भागप्रमाण हैं । आन्त

१ ता०प्रती ओघादेसभेदेण इति पाठ । अत्रेऽपि ब्राहुल्येन ता०प्रती एवमेव पाठ ।

२ आ०प्रती तिरिक्खमणुसअपज्ज० इति पाठ ।



सखे०मागो । आपदादि जाव पक्वोवजा पि २६ सखा० असखे०मागो । २७ सखेजा मागा । सेस सखे०मागो । अणुदिसादि जाव सम्बद्धा पि २७ सखेजा मागा । सेस सखे०मागो । एवं जाव० ।

§ ४१८ परिमाणानु० दु० गिरेसो—ओषण आदेशेण य । ओषण २७, २६, २३ २१ सखा० केचिया ? असखेजा । २५ सखा० के० ? अणोता । सेस० सखा० सखेजा । आदेशेण ओषण० सम्बद्धसखा० असखेजा । एव सम्बद्धोदय०-सम्बन्धिदिय तिरिक्खा-मणुसपत्र०-देवा जाव अवराइद पि । एव तिरिक्खा० । पक्वि २५ सखा अणोता । मणुसैसु २७, २६ २५ सखा० असखेजा । सेससखा सखेजा । मणुसपत्र०-मणुसिणीसु सम्बद्धसखा० सखेजा । एवं सम्बद्धे । एव जाव ।

§ ४१९ खेषानु० दुविहो गि०—ओषण आदेशेण य । ओषेण पणुसिसंघ० केवडि खेषे ? सम्बद्धो गे । सेससंघ० सोग० असखे मागे । एव तिरिक्खा० । सेसमगापासु सम्बद्धसखा० सोग असखे माग । एवं जाव० ।

कस्यसे लेखर सो प्रवक्क तकके देवमें १६ प्रकृतियोंके संक्रमक जीव असंख्यातके मागप्रमाण हैं । २० प्रकृतियोंके संक्रमक जीव संख्यात बहुमागप्रमाण हैं । तथा सोय स्वान्तके संक्रमक जीव संख्यातके मागप्रमाण हैं । अनुविरासे लेखर सर्वावसिद्धि तकके देवमें २० प्रकृतियोंके संक्रमक जीव संख्यात बहुमागप्रमाण हैं । तथा सोय स्वान्तके संक्रमक जीव संख्यातके मागप्रमाण हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्ग्या तक जानना चाहिये ।

§ ४२० परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्वेरा दो प्रकारका है—ओष और आदेश । ओषकी अपेक्षा २७ २६ २१ और २१ प्रकृतियोंके संक्रमक जीव कितन हैं ? असंख्यात हैं । २५ प्रकृतियोंके संक्रमक जीव कितन हैं ? अनन्त हैं । सेस संक्रमस्वान्तके संक्रमक जीव कितन हैं ? संख्यात हैं । आदेशकी अपेक्षा मातृकियोंमें सब पक्षोंके संक्रमक जीव असंख्यात हैं । इसी प्रकार सब पक्षकी सब पक्षेन्द्रिय त्रियत्र मनुष्य अथवा सामान्य देव तथा आपराजित कस्य तकके देवोंमें जानना चाहिये । इसी प्रकार त्रियत्रोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विद्यम्य ह कि इनमें २५ प्रकृतियोंके संक्रमक जीव अनन्त हैं । मणुसोंमें २ १६ और १५ प्रकृतियोंके संक्रमक जीव असंख्यात हैं । तथा सोय पक्षोंके संक्रमक जीव संख्यात हैं । मनुष्यपक्षों और मनुष्यत्रियोंमें सब पक्षोंके संक्रमक जीव संख्यात हैं । इसी प्रकार सर्वावसिद्धिमें जानना चाहिये । इसी प्रकार अनाहारक मार्ग्यातक जानना चाहिये ।

§ ४२१ अनाहारक मार्ग्यातक निर्वेरा दो प्रकारका है—जावनिर्वेरा और आदेशनिर्वेरा । आपकी अपेक्षा पक्षीय प्रकृतियोंके संक्रमक जीव कितने प्रकारके हैं । सब ओरमें रखे हैं । तथा मय पक्षोंके संक्रमक जीव हाइके असंख्यातके मागप्रमाण जम्में रखे हैं । इसी प्रकार त्रियत्रोंमें जानना चाहिये । सेस मार्ग्यातके सब पक्षोंके संक्रमक जीव हाइके असंख्यातके माग प्रमाण जम्में रखे हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्ग्या तक जानना चाहिये ।

§ ४२०. पोसणाणु० दुविहो णिदेसो—ओवेण आदेसेण य । ओवेण २७, २५ संका० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो अट्टचोदस० सच्चलोगो वा । २५ संका० सच्चलोगो । २३, २१ लोग० असंखे०भागो अट्टचोदस० । सेमं खेत्तभंगो ।

§ ४२१. आदेसेण पेसह्य० २७, २६, २५ संका० लोग० असंखे०भागो छचोदस० देसूणा । २३, २१ संका० खेत्तं । विदियादि जाव सत्तमा त्ति एवं चेय । णवरि सगपोसणं । पढमाए खेत्तभंगो ।

§ ४२२. निरिक्खेमु २७, २६ संका० लोग० असंखे०भागो सच्चलोगो वा । २५ संका० खेत्तं । २३ लोग० असंखे०भागो छचोदस० । २१ लोग० असंखे०भागो पंचचोदस०भागो वा देसूणा । पचिदियतिरिक्खतिपय० २७, २६, २५ संका० लोग० असंखे०भागो सच्चलोगो वा । सेम तिरिक्खोष । पंच०तिरि०अपज्ज०-मणुम०अपज्ज०

विशेषार्थ—यद्यपि ऐमी कई मार्गणाए हैं जिनमें २५ प्रकृतियोंके संक्रमकोंका क्षेत्र सब लोक प्राप्त होता है । तथापि यहा केवल तिर्यञ्चोंका ही निर्देश किया है सो इसका कारण यह है कि यहाँ सर्वत्र मुख्यतया चार गतियोंकी अपेक्षासे ही अनुयोगद्वारोंका वर्णन किया जा रहा है । और चार गतियोंमें तिर्यञ्चगतिके जीव ही एते हैं जिनका क्षेत्र सब लोक है । उसीसे यहाँ तिर्यञ्चोंमें ही श्रेयके समान पचवीस प्रकृतिक संक्रमस्थानवाने जीवोंका क्षेत्र बतलाया है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४२०. स्पर्शानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोतनिर्देश और आदेशनिर्देश । श्रेयकी अपेक्षा २७ और २६ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका और सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । २५ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंने सब लोकका स्पर्शन किया है । २३ और २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका व त्रसनालीके चौदह भागोंमें से कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तथा शेष पदोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।

§ ४२१. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें २७, २६ और २५ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा २३ और २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक इसी प्रकार जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि अपना अपना स्पर्शन कठना चाहिये । पहिली पृथिवीमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।

§ ४२० तिर्यञ्चोंमें २७ और २६ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । २५ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । २३ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छहभागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम पाँच भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें २७, २६ और २५ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष स्थानोंका स्पर्शन सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । पचेन्द्रिय

तिग्णिपदेहि सोग० असंखे० मागो सम्बलोगो वा । मणुसतिए २७, २६ २५ सक्र० पचिदियतिरिक्खमंगो । सेस खेच ।

§ ४२३ दबेसु २७, २६, २५ सक्रा० सोग० असंखे० मागो अहु-णवधोरस० देवणा । २३, २१ सक्रा० सोग० असंखे० मागो अहुधोरस० देवणा । एव सोहन्मीसाणे । एवं मवण०-वा०-ओदिसि० । णवरि सगफोसर्णं क्षयम्ब । सणकुमारदि जाव सहस्तर प्ति सम्बपदसंक्र० सोग० असंखे० मागो अहुधोरस० देवणा । भाणदादि जाव अबुदा प्ति सम्बपदेहि सोग० असंखे० मागो उचोरस० देवणा । उवरि खेचमगो । एवं जाव० ।

§ ४२४ संपहि जाभाजीवसबंधिकालपरुवणहमुवरिमं पुणिणसुचमाह—

⊗ णाणाजीवेहि काको ।

§ ४२५ अहियारसंमालणसुचमेद सुगम ।

⊗ पंचणह हाणावां संकामपा संख्यदा ।

§ ४२६ एत्थ पचणह हाणाजमिदि वयणेण सत्तावीस-उम्भीस-पणुवीस-

तिर्यञ्च अपर्वात्त और मनुष्य अपर्वात्तमें हीन परवाते जीवोंने जो कहे असंख्यातमें मागप्रमाण क्षेत्रका और सब श्लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । मनुष्यत्रिकमें २७, २६ और २५ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंका स्पर्शन पंचेतित्रय तिर्यञ्चके समान है । तथा दोष पक्षोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।

§ ४२३ वेधोंमें २७ २६ और २५ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंने जो कहे असंख्यातमें मागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके बौरह मागोंमेंसे कुछ कम घाठ व कुछ कम मौ मागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । २३ और २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानवाले जीवोंने जो कहे असंख्यातमें मागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके बौरह मागोंमेंसे कुछ कम घाठ मागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार सौबर्म व पेरपन कस्यमें जनना चाहिये । तथा इसी प्रकार भवतवासी, व्यन्तर और व्योतिष्क वेधोंमें करना चाहिये । किन्तु सर्वत्र अपना अपना स्पर्शन करना चाहिये । सनत्कुमार कस्यसे क्षेत्र सहकार कस्य तक सब पक्षोंके संक्रमक वेधोंने जो कहे असंख्यातमें मागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके बौरह मागोंमेंसे कुछ कम घाठ मागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । जानतसे लंकर अक्षुत तक सब पक्षोंके संक्रमक वेधोंने जो कहे असंख्यातमें मागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके बौरह मागोंमेंसे कुछ कम घाट मागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इससे भागोंके वेधोंमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मागोंवातक जानना चाहिये ।

§ ४२४ अब नाना जीरसम्बन्धी अक्षय कपन करनेके द्विमे भागोच वृत्तिसूत्र कहते हैं—

⊗ अय माना जीवोंकी अपेक्षा कादाका अधिकार है ।

§ ४२५ अधिकारकी संज्ञा करनवाक्य यह सूत्र सुगम है ।

⊗ पाँच संक्रमस्थानोंके जीव सदा पाये जाते हैं ।

§ ४२६ इस सूत्रमें जो 'पंचणह हाणावां' बचन दिया है सो इससे सणार्स, उम्भीस, वकीस,

तेवीस-उगिवीससंकमट्टाणाणं गहणं कायञ्चं । तेसि संकामया सञ्चकालं होंति त्ति भणिदं होइ । संपहि सेमपदाणं कालणिद्वारणइमुत्तरसुत्तावयारो—

❀ सेसाणं ट्टाणाणं संकामया जहणणेण एगसमओ, उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ४२७. एत्थ सेमगहणेण वावीसादीणं संकमट्टाणाणं गहणं कायञ्चं । तेसिं जहणकालो एयममयेत्तो, उवसमसेदिम्मि विवक्खियसंकमट्टाणसंकामयत्तेणेय-समयं परिणटाणं केत्तियाणं पि जीवाणं विदियसमए मरणपरिणामेण तदुवलंभादो । उक्कस्सकालो अंतोमुहुत्तं, तेमिं चैव विवक्खियसंकमट्टाणसंकामयोवसामयाणमुवरि<sup>३</sup> चटंताणमण्णेहि चटणोवयरणवावदेहि अणुसंधिदसंताणाणमविच्छेदकालस्स समालंघणादो । णवरि तेरस-वारस-एकारस-दस-चदु-त्तिण्ण-दोण्णिणमंकामयाणं खवगोवसामगे अस्सिउण उक्कस्सकालपरूवणा कायव्वा । एत्थतणसेसगहणेण एक्किस्से वि संकमट्टाणस्स गहणाहप्पमंगे तण्णिणायरणदुवारेण तत्थतणविसेसपदुप्पायणइमुवरिसुत्तमोइण्ण—

❀ णवरि एक्किस्से संकामया जहणणुक्कस्सेणतोमुहुत्तं ।

तेईस और इक्कीस सक्रमस्थानोंका ग्रहण करना चाहिए । उनके संक्रामक जीव सर्वदा होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अब शेष पदोंके कालका निर्धारण करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

\* शेष स्थानोंके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ४२७ यहाँ पर शेष पदके ग्रहण करनेसे चाईस आदि सक्रमस्थानोंका ग्रहण करना चाहिए । उनका जघन्य काल एक समयमात्र है, क्योंकि उपशमश्रेणिमे विवक्षित संक्रमस्थानके संक्रमरूपसे एक समय तक परिणत हुए कितने ही जीवोंका दूसरे समयमें मरण हो जानेसे उक्त काल उपलब्ध होता है । उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है, क्योंकि विवक्षित संक्रमस्थानोंके संक्रामकभावसे उपशमश्रेणिपर चढ़नेवाले उन्हीं जीवोंका उपशमश्रेणिपर चढ़नेवाले अन्य जीवोंके साथ प्राप्त हुई परम्पराका विच्छेद नहीं होनेरूप कालका अवलम्बन लिया गया है । किन्तु इतनी विशेषता है कि तेरह, चारह, ग्यारह, दस, चार, तीन और दो स्थानोंके सक्रामकोंका क्षपक और उपशामक जीवोंके आश्रयसे उत्कृष्ट कालका कथन करना चाहिए । यहाँ पर सूत्रमें 'शेष' पदके ग्रहण करनेसे एक प्रकृतिक संक्रमस्थानका भी ग्रहण प्राप्त होने पर उसके निराकरण द्वारा उक्त स्थानसम्बन्धी विशेषताका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र अवतरित हुआ है—

\* किन्तु इतनी विशेषता है कि एक प्रकृतिक स्थानके संक्रामकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

१ ता०प्रतौ एगसमय इति पाठः । २ आ०प्रतौ तेसिं च इति पाठः । ३ ता०प्रतौ —सामयाण-मुवरि इति पाठः ।

१ ४२८. एतत्पुत्रस्ते सकामयाज नृहण्यकालो क्रोह-भाणानमण्णत्वेदएण  
चन्द्रिदार्धं मायासकामयाजमण्णसुसधिदसताणाणमंतोमुदुत्तमेचो होइ । उहस्सकालो पुण  
मापानकामयाजमण्णसुसधिदपवाहार्धं होइ चि वत्तम् । एवमोपो समचो ।

१ ४२० आदेशेण शेरइय० सम्बपदसकाम० सम्बद्धा । एव पदमपुत्रवि-तिरिक्त-  
पंविदियतिरिक्तदुग्-यर्थि०तिरि०अपञ्ज०-देवगदिदेवा सोहम्मादि जाव सम्बद्धसिद्धि  
चि । विदियादि जाव सत्तमा चि एवं वेव । णवरि २१ सकाम० नृह० एयसमजो,  
उह० पल्लो० असत्ते०भागो । एव जोगिणी-मवण०-बाण जोदिसिया चि । मणुसतिए  
ओषमगो । मणुमअपज० सम्बपदाण नृह० एयसमजो, उह० पल्लो० असत्ते०भागो ।  
एव जाव० ।

ॐ शायाजीवेहि अतरं ।

४२ सुगमं ।

ॐ बाबीसाए तेरसपहं बारसपहं एकारसपह वसपह चतुपहं लिपहं  
वोपहमेहिस्ते एदेसिं षषपहं ठाणाणमंतर केवचिर कालावो होरि ?

१ ४२१ सुगम ।

ॐ अह्ययोष एयसमजो, उहकस्सेय ह्ममासा ।

१ ४२८ यहाँ पर एक प्रकृतिक संकामकर्मों का अथवा ब्रह्म जोष और मानमें से अन्तर  
प्रकृतिक रूपसे बने हुए तथा माया प्रकृतिक संकाम करनेवाले जीवोंके प्राप्त हुए प्रवाहकी अपेक्षा  
किये बिना अन्तर्गत होता है । परन्तु ब्रह्म का अविच्छिन्न प्रवाहकी विवक्षासे माया प्रकृतिक  
संकाम करनेवाले जीवोंके बहना चाहिये । इस प्रकार जोष प्रत्यक्ष समाप्त हुई ।

१ ४२९ आदेशसे शरदियोंमें सब पदोंके संकामक जीवोंका प्रवाह सर्वथा है । इसी प्रकार  
चन्द्रिणी प्रथिनी, सामान्य तिर्यञ्ज, परमेष्ठिय तिर्यञ्ज, परमेश्वर तिर्यञ्ज अथवा, देवगतिमें  
सामान्य देव और सौम्य कल्पसे लेकर सर्वांसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिये । इसी  
प्रथिनीसे लेकर सातवीं प्रथिनी तकके शरदियोंमें इसी प्रकार जानना चाहिये । विष्णु इतनी  
विशेषता है कि २१ प्रकृतियोंके संकामकर्मोंका अथवा ब्रह्म एक समय है और ब्रह्म का प्रत्यक्ष  
असंख्यातमें भागप्रमाण है । इसी प्रकार चन्द्रिणी तिर्यञ्ज भवनवासी अन्तर और श्रोत्रिणी  
देवोंमें जानना चाहिये । मनुष्यिकमें जोषके समाप्त मात्र है । मनुष्य अथवा शरदियोंमें सब पदोंके  
संकामकर्मोंका अथवा ब्रह्म एक समय है और ब्रह्म का प्रत्यक्ष असंख्यातमें भागप्रमाण है ।  
इसी प्रकार अन्तर्गत मार्ग तक जानना चाहिये ।

ॐ अथ नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरकालका अचिन्त है ।

१ ४१ ब्रह्म सुगम है ।

ॐ बाबीसा, तेरह, बारह, ग्यारह, दस चार, तीन, दो भीर एक प्रकृतिक इन  
नी स्थानोंके संकामकर्मोंका अन्तरकाल कितना है ?

१ ४२१ ब्रह्म सुगम है ।

ॐ अथ अन्तर एक समय है आर उहस अंतर ए महोना है ।

१४३२. वावीसाए ताव जहण्णेण्यसमओ, उक्क० छम्मासमेत्तमंतरं होइ, दग्गणमोहक्खवणपट्टवणाए णाणाजीवावेक्खजहण्णुकस्संतराणं तेत्तियमेत्तपरिमाणामुव-  
लभादो । एवं तेरसादीणं पि वत्तच्चं, खवयसेदीए लद्धसरूवाणमेदेसिं णाणाजीवावेक्खाए  
जहण्णुकस्संतराणं तप्पमाणाणमुवलद्वीदो । एत्थ चोदओ भणइ—खेदं घडदे, एकारसण्हं  
चउण्हं च सादिरेयवस्समेत्तुकस्सतरदसणादो । तं जहा—एकारसण्हं ताव पुरिसवेदोदएण  
खवयसेदिमारूढस्स आणुपुव्वीमंकमाणंतरं णवुंसयवेदक्खवणाए परिणदस्स णाणाजीव-  
समूहस्स एकारसगंकमो होइ । पुणो इत्थिवेदक्खवणाए अंतरिय छम्मासमंतरमणुपालिय  
तदवसाणे णवुंसयवेदोदए सेदिमारूढस्स णवुंसय-इत्थिवेदा अकमेण खीयति त्ति एकारस-  
मंकमाणुप्पत्तीए दग्गण्हं संकमो समुप्पज्जइ । तदो एत्थ वि छम्मासमंतरं लब्भइ । पुणो  
इत्थिवेदोदएण चडिदस्स णवुंसयवेदे खीणे पच्छा अंतोमुहुत्तेणित्थिवेदो खीयदि त्ति  
तत्थेकारसमंकमस्स लद्धमंतर होइ । तदो एकारससंकामयस्स वासं सादिरेयमुक्कस्संतरं  
लब्भइ । पुरिसवेदोदएण खवगसेदिं चडिदस्स छण्णोकमायक्खवणाणंतरं चउण्हं  
मकामयस्सादिं कादूण तदो पुरिसवेदं खविय छम्मासमंतरगिय इत्थिवेदोदएण चडिदस्स  
सत्तणोकसाया जुगवं परिवखीयंति चदुण्णमणुप्पत्तीए पुणो वि छम्मासमेत्तमंतरं

१४३२ वईस प्रकृतिक सकमस्थानका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर  
छ महीना है, क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षणकी प्रस्थापनामे नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य  
और उत्कृष्ट अन्तर उक्त प्रमाण पाया जाता है । इसी प्रकार तेरह प्रकृतिक आदि सकमस्थानोंका  
भी अन्तरकाज कइना चाडिग, क्योंकि क्षणकश्रेणिमे प्राप्त हुए इन स्थानोंका नाना जीवोंकी  
अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर तत्प्रमाण उपलब्ध होता है ।

शंका—यहाँ पर शंकाकार कइता है कि यह कथन नहीं बनता, क्योंकि ग्यारह और चार  
प्रकृतिक स्थानोंका साधिक एक वर्षप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर देखा जाता है । यथा—पुरुषवेदके उदयसे  
क्षपकश्रेणिर चढे हुए तथा आनुपूर्वी सक्रमके बाद नपुंसकवेदकी क्षपणा करनेवाले नाना  
जीवसमूहके ग्यारह प्रकृतिक संक्रमस्थान होता है । पुन स्त्रीवेदकी क्षपणाका अन्तर देकर और छ.  
माह तक अन्तरका पालनकर उसके अन्तमे नपुंसकवेदके उदयसे श्रेणिर चढे हुए जीवके स्त्रीवेद  
और नपुंसकवेदका युगपत् क्षय होता है, इसलिए ग्यारह प्रकृतिक सक्रमस्थानकी उत्पत्ति न होकर दस  
प्रकृतिक सक्रमस्थान उत्पन्न होता है । इसलिये यहाँ पर भी छह माहप्रमाण अन्तर पाया जाता  
है । फिर स्त्रीवेदके उदयसे क्षपकश्रेणिर चढे हुए नाना जीवोंके नपुंसकवेदका क्षय हो जानेपर  
अन्तर्मुहूर्तके बाद स्त्रीवेदका क्षय होता है, इसलिये यहाँ पर ग्यारह प्रकृतिक संक्रमस्थानका अन्तर  
प्राप्त हो जाता है । अतः ग्यारह प्रकृतिक सक्रमस्थानका उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष प्राप्त होता  
है । तथा जो नाना जीव पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणिर चढे हैं उनके छह नोकपार्योंका क्षय  
होने पर चार प्रकृतिक सक्रमस्थानका प्रारम्भ होता है । फिर पुरुषवेदका क्षय करके और छह माहका  
अन्तर प्राप्त करके स्त्रीवेदके उदयसे क्षपकश्रेणिर चढने पर सात नोकपार्योंका एक साथ क्षय होता  
है । यहाँ पर चार प्रकृतिक संक्रमस्थानकी उत्पत्ति नहीं होनेसे फिर भी छह माहप्रमाण अन्तर

होइ । एव णवुंसयकेदोदण चडिदस्स वि णाणाजीवसमूहस्स छम्मासतरसमुप्यची वचम्भा । पुणो पुरिसकेदोदण चडिदस्स त्थमतरं होइ चि चउण्ह पि वास मादिरयं उक्कस्सतर-  
मावेण लम्भइ । तदो एवेसिं छम्मासमेचतरपरुबयं सुचमिद ण सुचमिदि ? ण पुरिस  
केदोदणक्खवयस्स सुचे विवविखयचादो । णवुंसय-इत्थिवकेदोदणक्खवयाण किमइमविक्खा  
कया ? ण, बहुलमप्यसत्तयकेदोदण खवयसेदिसमारोहणसमवामावपहुप्पायणइ सुचे  
वदविक्खाकरपादो ।

१ ४३३ संपहि उचसेसाणमइवमविसकमइपाणमंतरगवेसणइइवरिमसुचावयारो-

⊗ सेसार्थं वचणं सकमहायाणमतर केवचिर काळावो होइ ?

१ ४३४ सुपम ।

⊗ जहपणेष पयसओ , उक्कस्सेण सत्तेजापि वस्सापि ।

१ ४३५ एत्थ सेसगाहणेण २०, १९, १८, १४, ९, ८, ७, ६, ५, एदसिं

संकमहाणार्णं सगहो कायमो । चवग्गाहणेण वि उवरिमसुचे मग्गिस्समाणपुवमाविस-  
सकमहाणनुदासो दइम्वो । एवेसिं च उवसमसेदिसवणीज चइ० पयसमओ, उक्क

मात्र ही माता है । इसी प्रकार जो नान्य जीव न्यु सञ्जैवके बन्वसे क्वचमेधि पर चवठ हैं इनकी  
अपेक्षा भी वह माइप्रमाण अन्तरकी अस्तित्व रहनी चाहिये । फिर पुरयवेदके बन्वसे अरकमेधि  
पर चवठ पर अन्तर मात्र होय है । इस प्रकार चार मृत्तिक संकमस्थानका भी बरहट अन्तर  
सापिक एक वर्ष प्राप्त होय है, इसलिये इन दोनों स्वार्थोंके वह माइप्रमाण बरहट अन्तरवा कवन  
करनाता यह सूत्र पुत्र नहीं है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सूत्रमें पुरयवेदकी क्वथा करनेवाले नान्य जीव विवक्षित हैं,  
इसलिये इस अपेक्षासे एक स्वार्थोंका बरहट अन्तर वह माइप्रमाण ही प्राप्त होगा है ।

संज्ञा—यहां पर न्यु सञ्जैव और जीवेदके बन्वसे क्वचमेधि पर चवठे हुए जीवोंकी  
अविवक्षा क्यों की गई है ?

समाधान—नहीं क्योंकि अतिक्रम अग्रस्त वेदके बन्वसे क्वचमेधिपर चवठे सम्भव  
नहीं है इस बातका कवन करनेके लिये सूत्रमें एक जीवोंकी अविवक्षा की गई है ।

१ ४३६ एव एक संकमस्थानोसे वो सेप चधुव संकमस्थान वणे हैं इनके अन्तरकालका  
विचार करमः लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

⊗ अथ नो संकमस्थानोक्क अन्तरकालं कियना ई ?

१ ४३७ पर सूत्र सुगम है ।

⊗ अपन्य अन्तरकाल एक्क समप ई और उक्कट अन्तरकाल सस्पात चर्ष ई ।

१ ४३८ इस सूत्रमें 'सेप' पदके महत्त्व करनेसे १ १६ १८ १४ ८, = ७ ६, और ५  
इन संकमस्थानोंका संख्या करना चाहिये । तथा 'अप' पदके महत्त्व करनेसे अगल सूत्रमें जो प्रथ  
मवचो अथ ह्य संकमस्थान ८६ जाननाले हैं इनका मिराकरण हो जाता है एसा वहां जानना  
चाहिये । अरामत्रैविधम्बकी इन स्वार्थोंका अपन्य अन्तरकाल एक समप है और उक्कट अन्तर

वासुपुधत्तमेत्तमंतरं होड, तदागेहणविरहकालस्स तेत्तियमेत्तस्स णिन्वाहमुवलद्धीदो । सुत्ते मंखेज्जवस्सग्गहणेण वामपुधत्तमेत्तकालविसेमपडिवत्ती । कुदो ? अविरुद्धाडरियवक्खाणादो ।

❧ जेसिमचिरहिदकालो तेसिं णत्थि अंतरं ।

§ ४३६. सुगममेदं सुत्त ।

एवमोघो समत्तो ।

§ ४३७. आदेसेण णेरइयमच्चपदाणं णत्थि अंतरं, णिरंतरं । एवं पढमपुढवि-तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खर-पंचि०तिग्गि०अपज्ज०-देवगट्टिदेवा सोहम्मादि जाव सच्चट्टा त्ति । विदियादि सत्तमा त्ति एवं चेव । णवरि २१ जह० एयसमओ, उक्क० पल्लिदो० असंसे०-भागो । एवं जोणिणी-भवण०-त्राण०-जोदिसि० । मणुसत्ति एओघं । णवरि मणुसिणी० वासुपुधत्तं । मणुसअपज्ज० सच्चपदमका० जह० एयसमओ, उक्क० पल्लिदो० असंसे०-भागो । एवं जाव० ।

❧ सणियासो णत्थि ।

§ ४३८. कुदो ? एकम्मि मंक्रमट्टाणे णिरुट्ठे सेससंक्रमट्टाणाणं तत्थासंभवादो ।

§ ४३९. भावो सच्चत्थ ओट्टओ भावो ।

काल वर्षपृथक्त्व है, क्योंकि उपशमश्रेणिका विरहकाल निर्वाधरीतित्से इतना हा पाया जाता है । अर्थात् अधिकसे अधिक इतने कालतक जीव उपशमश्रेणिपर नहीं चढ़ते हैं । सूत्रमें जो 'सखेज्जवस्स' पदका ग्रहण किया है सो इससे वर्षपृथक्त्वप्रमाण कालविशेषका ज्ञान होता है, क्योंकि अन्य आचार्योंने उपशमश्रेणिका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व ही बतलाया है, अतः यह व्याख्यान उसके अतिरुद्ध है ।

\* जिनका विरहकाल नहीं पाया जाता उन स्थानोंका अन्तर नहीं है ।

§ ४३६ यह सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ ४३७ आदेशकी अत्रा नारकियोंमें सब पदोंका अन्तर नहीं है, वे वहाँ निरन्तर पाये जाते हैं । इसी प्रकार प्रथम पृथिवीके नारकी, तिर्यञ्च, पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चद्विक, पंचेन्द्रिय तिर्य व अपर्याप्त, देवगतिमें देव और सौधर्म करसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिये । दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवीतक भी इसी प्रकार जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ पर २१ प्रकृतिक संक्रमस्थानका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार योनिनी तिर्यञ्च, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिपी देवोंमें जानना चाहिये । मनुष्यत्रिकमें अन्तर ओघके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यनीके वर्षपृथक्त्व अन्तर कहना चाहिये । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पदोंके संक्रामकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

संक्रमस्थानोंका सन्निकर्ष नहीं है ।

§ ४३८ क्योंकि एक संक्रमस्थानके रहते हुए वहाँ पर शेष संक्रमस्थानोंका पाया जाना सम्भव नहीं है ।

§ ४३९ भाव सर्वत्र औदधिक है ।



ॐ अप्यायहुर्म ।

§ ४४० एषो पचत्वसरमप्यायहुअ फल्लइस्सामो धि पज्जासुत्तमद ।

ॐ सम्पत्स्योवा पबण्ह संकामया ।

§ ४४१ कुदो णदसिं भोवत्त बम्बद ? भोवत्तलसत्थित्तादो । त क्वं ?

इगिबीससत्तकम्मिओ उवसमसेहं चडिय दुविह कोहं कोहसजलणकिराणसत्तेण सह उवमामिय तण्णवकषममुवसामेतो समऊणदोआवत्थियमेत्तकाल णवण्हं संघमओ होर । तदो भोवत्तलसत्थित्तादो भोवत्तमेदेसिं सिद्धं ।

ॐ सुण्ह संकामया तत्तिया भेष ।

§ ४४२ कुदा ? माणमजलणणइकषभोवसामणाय रेणदाणमिगिबीससत्तकम्मिओव-

सामयाण समऊणदोआवत्थियमेत्तकालसत्थिदाणमिहाबलंबजादो । एदेसिं च दोण्ह रासीअ सरिसत्तं चइमाणरासिं पहाणं काइण मजिद, जोवरमाणरासिस्स विवकसा-  
मावादो । तन्दि विवत्थिय उवत्तकामएदितो णवत्तकामयाअमद्दाविससेण विसमाहियत्त दंसणादो ।

ॐ भोवत्तपह संकामया सत्तेज्जगुणा ।

§ ४४३ इदं वि एदे वि समऊणदोआवत्थियमेत्तकालसत्थिदा तो वि मत्तेज्जगुणप-

० अब अल्पबहुत्वका अधिकार है ।

§ ४४ अब इससे आगे अरसत् मात अस्वत्पुत्रयो बतथाते हैं । इत प्रकार यह प्रतिबन्ध है ।

० नी प्रकृतियोंके सक्रामक जीव सबसे थोड़े हैं ।

§ ४४१ सूक्ष्म—इनकी अस्वत्ता कैसे जानी जाती है ?

समाधान—क्योंकि इनका अस्वत्तात्मै संनय इत्य है । अथा—एकहीस प्रकृतियोंकी सत्तागत्य जीव अररामभेदितर अद् अर कोष संवत्तनके प्राचीन सत्तात्तै स्मित सत्कर्मके साथ हो प्रकारके कोषअ अरराम करके उसके नवकत्तवत्त अरराम कत्तय हुवा एक समवकम हो अथत्ति अत्तनक नो प्रकृतियोंका संकामक होता है, इसलिये थोड़े अत्तवै संनय होनेसे ये जीव थोड़े हात हैं यह अण सिद्ध हुई ।

० उनसे यह प्रकृतियोंके सक्रामक जीव उत्पन्न ही हैं ।

§ ४४० क्योंकि आ इवत्थिन प्रकृतियोंकी सत्तागत्य अररामक जीव माण संवत्तनके नवत्तवत्त अरराम अर रद्द हैं आ कि एक समव कम हा अत्तत्ति काकके भेत्तर संचित होने हैं अत्तय पहां अत्तत्तवत्त सिद्धा गया है । किन्तु इन वानों परित्थियोंकी समत्तता अररामभेदितर अत्तनगत्ती परित्थी मत्तानशसे कही गई है क्योंकि यहाँ अररामभेदितसे अत्तनेत्तत्ती परित्थी विवत्तय नदी है । यदि अत्तनगत्ते जीवोंकी मत्तानशसे विचार किया जाय है तो यह प्रकृतियोंके संकामकेसे नो प्रकृतियोंके संकामकेसे अधिक काल हातके अत्तय व चित्तेर अधिक हेतु अत्त है ।

० उनसे भीअह प्रकृतियोंके सक्रामक जीव सम्प्यात्तगुणे हैं ।

§ ४४३ यत्ति य भी एक समव कम हा अत्तत्तिमात्त अत्तके भोत्तर संचित होत हैं

मेदेमिं ण विरुज्जदे, इगिवीससंतकम्मिओवसामएहितो चउवीससंतकम्मिओवसामयाणं संखेज्जगुणत्तदंमणादो ।

❀ पंचएहं संकामया संखेज्जगुणा ।

§ ४४४. कुदो ? इगिवीस-चउवीससंतकम्मिओवसामयाणमंतोमुहुत्तसमयुण-दोआवलियसचिदाणमिहोवलंभादो ।

❀ अट्टएहं संकामया विसेसाहिया ।

§ ४४५. कि कारण ? इगिवीससंतकम्मियोवगामयस्स दुविहमायोवसामण-कालादो दुविहमाणोवसामणद्वाए विसेसाहियत्तदंसणादो चउवीससंतकम्मिओवसामण-समरुणदोआवलिसंचयस्स उहयत्त समाणत्तदंसणादो च ।

❀ अट्टारसएहं संकामया विसेसाहिया ।

§ ४४६. एत्थ वि कारणं माणोवसामणद्वादो विसेसाहियकोहोवसामणद्वादो वि छण्णोऋमाओवसामणकालस्स विसेसाहियत्तं दट्टव्वं ।

❀ एगूणचीसाए संकामया विसेसाहिया ।

§ ४४७. एत्थ वि कारणमित्थिवेदोवसामणाकालस्स छण्णोऋमाओवसामणद्वादो विसेसाहियत्तमणुगतव्व ।

तो भी ये सख्यातगुणे होते हैं यह बात प्रिरोधको नहीं प्राप्त होती, क्योंकि प्रकृतमें 'इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक जीवोंसे चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक जीव सख्यातगुणे देखे जाते हैं ।

\* उनसे पाँच प्रकृतियोंके संक्रामक जीव सख्यातगुणे हैं ।

§ ४४४ क्योंकि, अन्तर्मुहूर्त कालमें संचित हुए इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक जीवोंका और एक समयकमें दो आवलि कालमें संचित हुए चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक जीवोंका यहाँपर ग्रहण किया है ।

\* उनसे आठ प्रकृतियोंके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ ४४५ क्योंकि इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामक जीवोंके दो प्रकारकी मायाके उपशामन कालसे दो प्रकारके मानका उपशामन काल विशेष अधिक देखा जाता है । तथा चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशामकोंके एक समय कम दो आवलि कालके भीतर होनेवाला संचय उभयत्र समान देखा जाता है ।

\* उनसे अठारह प्रकृतियोंके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ ४४६ यहाँ विशेष अधिकका कारण यह है कि मानके उपशामन कालसे विशेष अधिक जो क्रोधका उपशामन काल है उससे भी छह नोकपायोंका उपशामन काल विशेष अधिक देखा जाता है ।

\* उनसे उन्नीस प्रकृतियोंके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ ४४७ यहाँ भी छह नोकपायोंके उपशामन कालसे खीवेदका उपशामन काल विशेष अधिक होता है यह कारण जानना चाहिये ।

⊗ चउपहं सकामया सखेज्जगुया ।

१४४८ हृदो ! संगतोमाविदुषदुसकामयखवयदुविहलोहसकामयचउवीससत-  
कम्मिओवसामपरासिस्स पहाणचोवलमादो । तदो अइ वि पुम्बिन्लसचयकालादो  
एत्वतणसचयकालो विसेसहोणो गो वि चउवीससंतकम्मिपरासिमाहप्पादो संखेज्जगुजो  
पि सिद्धं ।

⊗ सत्तण्ह सकामया विसेसाहिया ।

१४४९. चउवीससंतकम्मिओवसामपदुविहलोहोवसामणकालादो विसेसाहिय  
दुविहमायोवसामणकालसपिदधादो ।

⊗ धीसाए सकामया विसेसाहिया ।

१४० अइ वि दोणहमेदसिं चउवीससंतकम्मिया सकामया गो वि सत्तसकामप  
कालादो बीससंकामयकालस्स उण्णोक्कसायोवसामणहपदिबहस्स विसेसाहियए-  
मसिस्सकण तथो एदेसिं विसेसाहियत्तमविरुद्धं ।

⊗ एदिस्से सकामया सखेज्जगुया ।

१४०१ हृदो ! मायासंकामयखवपरासिस्स अतोसुदुचकससंपिदस्स  
विबक्खियत्तादो ।

⊙ उनसे चार प्रकृतियोंके संक्रामक जीव संस्पातगुणे हैं ।

१४४८ क्योंकि यहाँ पर चार प्रकृतियोंके संक्रामक रूपके जीवोंके साथ दो प्रकारके लोभका  
संक्रमण करनेवाले चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपरग्रहक जीवोंकी प्रधानता स्वीकार की गई है ।  
इसलिए यद्यपि पूर्वोक्त स्वानके संभवकालसे इस स्वानके संभव काल विशेष हीन होता है तो भी  
चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाली शक्तिकी प्रधानतासे पूर्वोक्त शक्तिसे यह शक्ति संक्रामकगुणी है यह  
बत सिद्ध है ।

⊙ उनसे सात प्रकृतियोंके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

१४४९ क्योंकि जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपरग्रहक जीव दो प्रकारके लोभका  
उपग्रहक रूपके हैं इनके दो प्रकारके लोभके उपग्रह करने विशेष अधिक जो दो प्रकारकी मायाका  
उपग्रहक रूपके हैं उनमें संचित हुए जीव यहाँ पर लिखे गये हैं ।

⊙ उनसे बीस प्रकृतियोंके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

१४४९ यद्यपि ४ और २ इन दोनों स्वानोंके संक्रामक जीव चौबीस प्रकृतियोंकी  
सत्तावाले हैं तो भी सात प्रकृतियोंके संक्रामकके करनेसे बीस प्रकृतियोंके संक्रामकका रूप  
कर मोक्षवालोंके उपग्रहमनाकरके सम्बन्ध रखनाका होनेके कारण विशेष अधिक होता है इसलिये  
सात प्रकृतियोंके संक्रामक जीवोंसे बीस प्रकृतियोंके संक्रामक जीव विशेष अधिक होते हैं यह बात  
अविरुद्ध है ।

⊙ उनसे एक प्रकृतिके संक्रामक जीव संस्पातगुणे हैं ।

१४४९ क्योंकि मायाकी संक्रामक जो शरकरशि अन्तर्गुणके रूपके मीटर संचित होती  
है वह यहाँ विवक्षित है ।

❀ दोण्हं संकामया विसेसाहिया ।

§ ४५२. एक्किस्से सकमणकालादो दोण्ह संकामयकालस्स विसेसाहियत्तोव-  
लद्वीदो ।

❀ दसएहं संकामया विसेसाहिया ।

§ ४५३. माणमजलणखवणद्धादो विसेसाहियच्छण्णोकसायकखवणद्धाए लद्व-  
मचयत्तादो ।

❀ एक्कारसएहं संकामया विसेसाहिया ।

§ ४५४. छण्णोकसायकखवणद्धादो मादिरेयडत्थिवेदकखवणद्धामंचयस्स संगहादो ।

❀ वारसएहं संकामया विसेसाहिया ।

§ ४५५. तत्तो विसेसाहियणवुमयवेदकखवणद्धाए संकलिटमस्सत्तादो<sup>१</sup> ।

❀ तिण्हं संकामया संखेज्जगुणा ।

§ ४५६. अस्सकण्णकणकिट्टीकरण-कोहकिट्टीवेदगकालपडिवद्धाए तिण्हं संका-  
मणद्धाए णवुंमयवेदकखवणकालादो<sup>२</sup> किचृणत्तिगुणमेत्ताए मंकलिटमस्सत्तादो ।

❀ तेरसएहं संकामया संखेज्जगुणा ।

\* उनसे दो प्रकृतियोंके संक्रामक जीव विशेष अधिक है ।

§ ४५२ क्योंकि एक प्रकृतिके संक्रमकालसे दो प्रकृतियोंका संक्रमकाल विशेष अधिक उपलब्ध होता है ।

\* उनसे दस प्रकृतियोंके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ ४५३ क्योंकि मानसंज्वलनके क्षणकालसे जो विशेष अधिक छह नोकपायोंका क्षण काल है । उसमें इनका संचय प्राप्त होता है ।

\* उनसे ग्यारह प्रकृतियोंके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ ४५४ क्योंकि छह नोकपायोंके क्षणकालसे साधक स्त्रीवेदके क्षणकालमें सचित हुए जीवोंका यहाँ सप्रह किया गया है ।

\* उनसे वारह प्रकृतियोंके संक्रामक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ ४५५. क्योंकि स्त्रीवेदके क्षणकालसे विशेष अधिक नपुंसकवेदके क्षणकालमें इनका संचय होता है ।

\* उनसे तीन प्रकृतियोंके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ४५६. क्योंकि जो तीन प्रकृतियोंका संक्रमकाल है वह अश्वकर्णकरणकाल, कृष्टीकरण काल और क्रोधकृष्टिवेदककाल इन तीनोंसे सम्बद्ध है जो कि नपुंसकवेदके क्षणकालसे कुछ कम तिगुना है, अतः इसमें सचित हुए जीव संख्यातगुणे होते हैं ।

\* उनसे तेरह प्रकृतियोंके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं ।

१ ता० आ०प्रत्यो सगलिटसरूवत्तादो इति पाठ । २ आ०प्रतौ -वेदे कखवणकालादो इति पाठः ।

१ ४७७ अठ्ठमापसु खविदेसु जावाणुपुष्पीसंक्रमो णाद्विज्जं ताव पुम्बिन्ना-  
कासादो सखेज्जगुणअलम्मि संविदधादो ।

⊗ बायीससकामया संखेज्जगुणा ।

१ ४७८ दसणमोहकखणगो मिच्छत्तं खविय जाव सम्मामिच्छत्तं ण खवेइ ताव  
पुम्बिन्नादो सखेज्जगुणमूदम्मि फालेण पदेसिं संविदसरूवाणमुत्तमानो ।

⊗ छम्बीसाए सकामया असखेज्जगुणा ।

१ ४७९ कुटो ? सम्मत्तमुत्प्रेस्सिय सम्मामिच्छत्तमुत्प्रेस्समाणस्स कासो पल्लिदो-  
मासखेज्जमागमेवो । तत्त्व सपिडजीवरासिस्स पल्लिदो असखे० मागमत्तस्स पदम-  
सम्मत्तगाहणपदमसमयवद्दुमाणजीवेहि सह गहणादो ।

⊗ एह्वीसाए सकामया असखेज्जगुणा ।

१ ४८० कुटो ? वेसागरोवमकाएत्तुचिदखइयसम्माइहिरासिस्स पहाणमावेण  
इह गणादो । को गुणगो ? आवसिं० अमत्ते मागो ।

⊗ तेयीसाए सकामया असखेज्जगुणा ।

१ ४८१ कुटो ? छावडुसागरोवमकाएत्तुत्तसविदधादो । खइ एवं सखेज्जगुण

१ ४८० क्योंकि अठ कययोका जय होने पर जब तक आनुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ नहीं  
हिया जाता है तब तक पूर्वोक्त स्थानके काष्ठसे यह अन्न संख्यातगुण्य हो जाता है, इसलिये इस  
अन्नमें संचित हुए जीव भी संख्यातगुण्य होते हैं ।

⊗ उनसे बाइस प्रकृतियोंके संक्रामक जीव उत्पत्तागुणे हैं ।

१ ४८१ क्योंकि जो इर्टनमोहनीयता चरक जीव मिथ्यात्वका जय करके जब तक  
सम्पत्तिमत्त्वका जय नहीं करता है तब तक पूर्वोक्त स्थानके काष्ठसे इस स्थानका अन्न संख्यात-  
गुण्य होता है, इसलिये इस अन्न द्वारा जो इन जीवोंका संवय होता है वह संख्यातगुणा अन्नका  
होता है ।

⊗ उनसे छम्बीस प्रकृतियोंके संक्रामक जीव उत्पत्तागुणे हैं ।

१ ४८२ क्योंकि सम्पत्तकी हठप्रता करके सम्पत्तिमत्त्वकी हठप्रता करलवाले जीवका  
अन्न पत्तके अंतस्मात्तमें अगममात्र है, इसलिये इस अन्नके भीतर पत्तकी अंतस्मात्तमें अगममात्र  
जीवराशिका संवय पाया जाता है कसरा नहीं पर प्रथम सम्पत्तको महश करके इसके प्रथम  
समयमें विद्यमान जीवराशिके मात्र महश किया है ।

⊗ उनसे इट्टीस प्रकृतियोंके संक्रामक जीव अत्युत्पत्तागुणे हैं ।

१ ४८३ क्योंकि यहाँ पर वा सागर काकके भीतर संचित हुई अत्युत्पत्तसम्पत्ति राशिका  
स्थानम्पसे महश किया है । गुणधर क्या है ? गुणधर काकजिका असंख्यातको माग है ।

⊗ उनसे तईस प्रकृतियोंके संक्रामक जीव अत्युत्पत्तागुणे हैं ।

१ ४८४ क्योंकि इनका अन्तर्गत सागर काकके भीतर संवय होता है ।

पसज्जदे, कालगुणयारस्स तहाभावोवलंभादो त्ति ? ण एस दोसो, उवकममाणजीव-  
पाहम्मेण असंखेज्जगुणत्तसिद्धीदो । तं जहा—खडयसम्माइट्ठीणमेयसमयसंचओ संखेज्ज-  
जीवमेत्तो । चउवीससंतकम्मिया पुण उक्खस्सेण पल्लिदो० असंखे०भागमेत्ता एयसमए  
उवकमता लब्भंति । तम्हा तेहितो एदेसिमसंखे०गुणत्तमविरुद्धमिदि । एत्थ वि  
गुणयारो पल्लिदो० अमंखे०भागमेत्तो ।

❀ सत्तावीसाए संकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ४६२. एत्थ वि गुणगारपमाणभावलि० अमंखे०भागमेत्तं । कुदो ? अट्टावीस-  
सतकम्मियमम्माइट्ठि-मिच्छाइट्ठीणंमिह ग्गहणादो ।

❀ पणुवीससंकामया अप्पंतगुणा ।

§ ४६३. किच्चणमव्वजीवरासिस्स पणुवीससंकामयत्तेण विवक्खियत्तादो ।

एवमोघाणुगमो समत्तो ।

§ ४६४. एत्तो आदेसपरूवणं देगामासियसुत्तमूचिदं वत्तइस्सामो । तं जहा—  
आदेसेण णेग्गय० मव्वत्थोवा २६ सक्का० । २१ सक्का० अमंखे०गुणा । २३ सक्का०

शंका—यदि ऐसा ह तो पूर्वाक्त राशिमे यह राशि सख्यातगुणी प्राप्त हाती ह, क्योंकि  
कालगुणकार एतना उपलब्ध होता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि उवकममाण जीवोंकी प्रधानतासे पूर्वोक्त राशिसे  
यह राशि असंख्यातगुणी सिद्ध होती है । खुलासा इस प्रकार है—एक समयमे क्षायिकसम्यग्दृष्टियों-  
का सचय संख्यात ही होता है किन्तु चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीव तो एक समयमें पत्यके  
असख्यातवें भागप्रमाण होते हुए पाये जाते हैं, इसलिए उनसे ये जीव असख्यातगुणे होते हैं इस  
वातमें कोई विरोध नहीं आता है । यहाँ पर गुणकारका प्रमाण भी पत्यके असंख्यातवें भाग-  
प्रमाण है ।

\* उनसे सत्ताईस प्रकृतियोंके संक्रामक जीव असख्यातगुणे हैं ।

§ ४६२ यहाँ पर भी गुणकारका प्रमाण आवलिके असख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि  
अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाले सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवोंका यहाँ पर ग्रहण किया है ।

\* उनसे पचीस प्रकृतियोंके संक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं ।

§ ४६३ क्योंकि कुछ कम सब जीवराशि पचीस प्रकृतियोंकी संक्रामकरूपसे विवक्षित है ।

इस प्रकार ओघानुगम समाप्त हुआ ।

§ ४६४. अब आगे देशामर्षक सूत्रसे सूचित होनेवाले आदेशका कथन करते हैं । यथा—  
आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमे २६ प्रकृतियोंके संक्रामक जीव सबसे थोड़े हैं । उनसे २१ प्रकृतियोंके  
संक्रामक जीव असख्यातगुणे हैं । उनसे २३ प्रकृतियोंके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे

असखजगुणा । २७ संक्रम० असखे०गुणा । २८ सका असखेगुणा० । एष पदमार  
पश्चिदियतिरिक्तदुग [ देवा ] सोहम्मादि जाव सहस्रार ति । त्रिदिपादि जाव सचमा  
ति सम्बत्योवा २१ सका० । २६ संका० असखे०गुणा । ठवरि गिरओषो । एष  
ओणिणी-मवण०-वाण०-त्रोदिसिया ति ।

§ ४६५. तिरिक्खाणं पारयमगो । णवरि २७ संक्र० अणठगुणा । पत्ति  
तिरिक्खअपअज्ज-मणुअपज्ज० सम्बत्योवा २६ सका । २७ सका० असखे०गुणा ।  
२५ सक्र० असखे गुणा ।

§ ४६६ मणुस्साणमोषो । णवरि २२ सक्रमयाणमुवरि २१ सक्रम० सखे०-  
गुणा । २३ संक्र० सखे०गुणा । २६ सक्र० असखे०गुणा । २७ सक्र असखे०गुणा ।  
२० संका० असखे०गुणा । एव पज्जपप्पु । णवरि सम्बत्थ सखेज०गुणं कायम्ब । एषं  
मणुसिणीमु । णवरि १४ सका० णत्थि, ओयरमाणविक्खामावादो ।

§ ४६७ आणदादि जाव णवगेवजा ति सम्बत्योवा २६ सक्र । २५ संका  
असखे०गुणा । २१ संका० सखे०गुणा । २३ सक्र सखे०गुणा । २७ सक्र० सखे०-

२० प्रकृतियोंके संख्यामक बीज असंख्यातगुण्ये हैं । उनसे २१ प्रकृतियोंके संख्यामक बीज असंख्यात-  
गुण्य हैं । इसी प्रकार प्रथम पृथिवीके नारकी पंचेन्द्रिय त्रैलोक्यिक, सामान्य देव और सौषर्ष  
कल्पसे उत्पन्न सहस्रार कल्पलकके देवोंमें ज्ञानना आदिव । दूसरी पृथिवीसे उत्पन्न सातवीं पृथिवी  
लकके नारकीयोंमें २१ प्रकृतियोंके संख्यामक बीज सप्त षोडशे हैं । उनसे २६ प्रकृतियोंके संख्यामक  
बीज असंख्यातगुण्ये हैं । इससे आगेका अल्पबहुल सामान्य नारकीयोंके समान है । इसी  
प्रकार त्रैलोक्य योनिनी मन्वन्तासी अण्डर और अ्योतिषी देवोंमें ज्ञानना आदिवे ।

§ ४६८ त्रिपक्षोंमें अल्पबहुल नारकीयोंके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें  
२१ प्रकृतियोंके संख्यामक बीज असंख्यातगुण्य हैं । पंचेन्द्रिय त्रैलोक्य अर्थात्क और मनुष्य अर्थात्क्योंमें  
२६ प्रकृतियोंके संख्यामक बीज सप्त षोडशे हैं । उनसे २० प्रकृतियोंके संख्यामक बीज असंख्यातगुण्य  
हैं । उनसे १९ प्रकृतियोंके संख्यामक बीज असंख्यातगुण्य हैं ।

§ ४६९. मनुष्योंमें अल्पबहुल अ्योपके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें  
२२ प्रकृतियोंके संख्यामकोंके आगे २१ प्रकृतियोंके संख्यामक बीज असंख्यातगुण्ये हैं । उनसे २३  
प्रकृतियोंके संख्यामक बीज संख्यातगुण्य हैं । उनसे २१ प्रकृतियोंके संख्यामक बीज असंख्यातगुण्ये हैं ।  
उनसे २० प्रकृतियोंके संख्यामक बीज असंख्यातगुण्ये हैं । उनसे २१ प्रकृतियोंके संख्यामक बीज  
असंख्यातगुण्य हैं । इमीयत्तर पर्याप्त मनुष्योंमें ज्ञानना आदिव । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें  
सर्वत्र संख्यातगुणा करता आदिव । इसी प्रकार मनुष्यनिषोंमें अल्पबहुल ज्ञानना आदिव । किन्तु  
इतनी विशेषता है कि मनुष्यनिषोंमें २४ प्रकृतियोंके संख्यामक बीज नहीं हैं, क्योंकि यहाँ पर  
अपरामप्रशित उत्तरजवादी मनुष्यनिषोंकी विरह्य नहीं की है ।

§ ४७० आगत कल्पसे उत्पन्न सौषर्षक लकके देवोंमें २६ प्रकृतियोंके संख्यामक बीज  
सप्त षोडशे हैं । उनसे २१ प्रकृतियोंके संख्यामक बीज असंख्यातगुण्य हैं । उनसे १९ प्रकृतियोंके  
संख्यामक बीज संख्यातगुण्य हैं । उनसे २३ प्रकृतियोंके संख्यामक बीज संख्यातगुण्य हैं । उनसे २०

गुणा । अणुदिसादि जाव सच्चद्धा त्ति सच्चत्थोवा २१ मंका० । २३ मंकायया सखे०-  
गुणा । २७ सका० मंखेजगुणा । एवं जाव० ।

एवमप्पावहुअं समत्तं ।

§ ४६८. एत्थ भुजगार-पदणिकखेव-वृद्धिमंकाया च कायव्वा, मुत्तघ्घचिदत्तादो ।  
तं जहा—भुजगारे तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्वाराणि—समुक्त्तिणादि जाव अप्पा-  
वहुए त्ति । समुक्त्तिणाए दुविहो णिद्देमो—ओघेणादेसेण य । ओघेण अत्थि भुज०-  
अप्प०-अवट्ठि०-अवत्तसंक्रामया । एवं मणुम०३ । आदेसेण रोइय० एवं चेव । णवरि  
अवत्तच्चपदं णत्थि । एवं मच्चणिरय०-सच्चतिरिक्ख-सच्चदेवा त्ति । णवरि पचिं०-  
तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-अणुदिसादि जाव सच्चद्धा त्ति अत्थि अप्प०-अवट्ठि०-  
सकामया । एव जाव० ।

§ ४६९. साम्मित्ताणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण भुज०-  
अप्पदर०-अवट्ठि०-सकमो कस्स ? अण्णदरस्स सम्मादिट्ठि० मिच्छादिट्ठिस्स वा ।  
अवत्त० कस्स ? असंक्रामओ होऊण परिवदमाणयस्स इगिबीमसंतकम्मिओवसंतकसायस्स  
पढममयदेवस्स वा । एव मणुसत्तिए । णवरि पढमसमयदेवस्से त्ति ण वत्तव्वं ।

प्रकृतियोंके संक्रामक जीव सख्यातगुणे हैं । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें २१  
प्रकृतियोंके संक्रामक जीव सबपे जोड़े हैं । उनसे २३ प्रकृतियोंके संक्रामक जीव सख्यातगुणे हैं । उनसे  
२७ प्रकृतियोंके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिये ।

उम प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

§ ४६८. यहाँ पर भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धिसंक्रम इनका कथन करना चाहिए, क्योंकि  
इनकी सूत्रमें सूचना की गई है । यथा—उनमेंसे भुजगार अनुयोगद्वारामें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्प-  
बहुत्व तक तेरह अनुयोगद्वार होते हैं । उनमेंसे समुत्कीर्तनाकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—  
ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघकी अपेक्षा भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अप्रक्तव्य  
संक्रमस्थानोंके संक्रामक जीव हैं । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिये । आदेशकी अपेक्षा  
ना(कियोंमें इसी प्रकार जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं  
होता । इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च और सब देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी  
विशेषता है कि पचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि  
तकके देवोंमें अल्पतर और अप्रस्थित संक्रमस्थानोंके संक्रामक जीव हैं । इसी प्रकार अनाहारक  
मार्गणा तक जानना चाहिये ।

§ ४६९. स्वामित्वाणुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेश  
निर्देश । ओघसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थितरूप संक्रम किसके होता है ? किसी सम्यग्दृष्टि  
या मिथ्यादृष्टिमें होता है । अवक्तव्यसंक्रम किसके होता है ? इक्कीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला  
जो असंक्रामक उपशान्तकपाय जीव उपशमश्रेणिसे न्युत हो रहा है उसके होता है । या इक्कीस  
प्रकृतियोंकी सत्तावाला जो असंक्रामक उपशान्तकपाय जीव मरकर देवोंमें उत्पन्न होता है, प्रथम  
समयवर्ती उस देवके होता है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता



आदसेण णेरुयं सुज्जं-अप्यदं अवह्ति ओपमगो । एवं सम्बणेरुयं-सम्बतिरिक्त-  
सम्बदेवा षि । णवरि पचिं-तिरिं-अपज्जं-मणुसअपज्जं-अणुरिस्तादि जाव सम्बहे  
षि अप्यदं अवह्ति कस्स ? अण्णदं । एवं जावं ।

१ ४७० फल्लानुगमण दुविहो णिरेसो—ओपेण आदसेण य । ओपेण सुज्जं-  
सक्कां वेवपिरं ? जह एगसमओ, उह्ठं वेसमया । अप्यदरं-अवच जहण्णुह्ठं  
एगसमओ । अवह्ति-सक्का तिण्णिण मगा । तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स  
सहं एगसमओ उह्ठं उवह्ठुपोमगलपरियह्ठा । आदसेण णेरुयं सुज्जं-अप्यदं  
ओपं । अवह्तिं जहं एगसमओ, उह्ठं उचोस सागरोवमाणि । एवं सम्बणेरुयं-  
सम्बतिरिक्तं-सम्बदेवे षि । णवरि अवह्तिदस्स सगह्ठिदी वत्तन्वा । पचिं-तिरिक्त  
अपज्जं-मणुसअपज्जं अप्यदं जहं उह्ठं एगसमओ । अवह्तिं जहं एगसमओ,  
उह्ठं अंतोमुहुत्तं । अणुरिसादि जाव सम्बह्ठा षि अप्यदं ओपमगो । अवह्तिं जहं  
अंतोमुहुत्तं उह्ठं सगह्ठिदी । मणुसं-३ पचिंदियतिरिक्तमगो । णवरि अवचं सहं  
उह्ठं एगसमओ । एव जाव ।

है कि यहाँ पर प्रथम समयवर्षी देवके मही करना चाहिये । आदेशसे मारकियेमें मुझगार,  
अस्पतर और अवस्थितरूप संक्रमणका मंग आपके समान है । इसीप्रकार सब नारकी सब त्रियष  
और सब देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रियतिरिक्तमगपर्वी मनुष्य  
अपयान और अमुदिरासे लेकर सर्वावस्थिति तकके देवोंमें अस्पतर और अवस्थितसंक्रमण किसके  
होता है ? अस्पतरके होता है । इसी प्रकार अनन्तारक मार्गका तक जानना चाहिये ।

१ ४८० अथर्वानुगमणी अपयान निर्वेशा वो प्रकथय हे—ओप और आदेश । ओपसे  
मुझगार पदके संक्रमणकर्म चिन्ता काह है ? अवश्व काल एक समय है और वृष्ट काल वा  
समय है । अस्पतर और अवस्थितपदोंके संज्ञानकर्म अपयान और वृष्ट काल एक समय है ।  
अवस्थित संक्रमणानोंके संक्रमणके तीन मंग हैं । इनमेमे वा सादि-सान्त मंग है वचअ अपयान  
काह एक समय है और वृष्ट काह कर्षणपुत्राणरिक्तनप्रमाय है । आदेशकी अपेक्षा मारकियेमें  
मुझगार और अस्पतर पदोंका मंग आपके समान है । अवस्थित पदके संक्रमणकर्म अपयान काह  
एक समय है और वृष्ट काल वेणीस सागर है । इसी प्रकार सब नारकी सब त्रियष और सब  
देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वत्र अवस्थित संक्रमणानका वृष्ट काल  
अपनी-अननी स्थितिप्रमाय करता चाहिये । पंचेन्द्रियत्रियष अपयान और मनुष्य अपयान-३केमें  
अस्पतर पदके संक्रमणकर्म अपयान और वृष्ट काल एक समय है । अस्थित पदके संक्रमणकर्म  
अपयान काह एक समय है और वृष्ट काल अन्तमुहुत्त है । अमुदिरासे लेकर सर्वावस्थिति तकके  
देवोंमें अस्पतर पदका मंग ओपके समान है । अवस्थितपदके संक्रमणकर्म अपयान काह अन्तमुहुत्त  
है और वृष्ट काल अपनी-अननी स्थितिप्रमाय है । मनुष्यत्रियष पंचेन्द्रिय त्रियषके समान मंग  
है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अवस्थितपदका अपयान और वृष्ट काल एक समय है । इसी  
प्रकार अनन्तारक मार्गका तक जानना चाहिये ।

६ ४७१. अंतराणु० दुविहो णिहोभो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण भुज० जह० एगसमओ, अप्प० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० दोण्हं पि उवह्वपोग्गलपरिग्यइं । अवड्ढि० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्त । अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो-वमाणि देसूणदोपुच्चकोडीहि सादिरेयाणि । आदेसेण णेग्गइय० भुज०-अप्पद० जह० एगसमओ अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीम सागरो० देसूणाणि । अवड्ढि० जह० एगसमओ, उक्क० तिण्णिण समया, पढमट्ठिदिदुचरिमिसमए सम्मामि०चरिमफालिं संकामिय सम्मत्तं पडिचण्णम्मि तदुवलभादो । एवं सच्चणेरइय० । णवरि सगड्ढिदी० । तिरिक्खाण० णारयभंगो । णवरि उक्क० उवह्वपोग्गलपरिग्यइं । पंचिदियतिरिक्खातिय ३ णारग-भंगो । णवरि उक्क० सगड्ढिदी । पंचिदियतिरिक्खाअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-अणुहिसादि जाव सच्चड्ढा त्ति अप्पदर० णत्थि अतर । अवड्ढि० जह० उक्क० एगसमओ । मणुस-तिए ३ भुज०-अप्पद० पंचि०तिरिक्खाभंगो । अवड्ढि० ओघो । अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० पुच्चकोडी देसूणा । देवाण णारयभंगो । णवरि उक्क० एकत्तीसं सागरो० देसूणाणि । भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति एवं चेव । णवरि सगड्ढिदी देसूणा ।

§ ४७१ अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे भुजगार पदके सक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है । अल्पतर पदके सक्रामकका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । तथा इन दोनोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । अवस्थित पदके सक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदके सक्रामकका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो पूर्वकोटि अधिक तेतीस सागर है । आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें भुजगार और अल्पतर पदके सक्रामकका जघन्य अन्तरकाल क्रमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है । तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है । अवस्थित पदके सक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल तीन समय हैं, क्योंकि जो जीव प्रथम स्थितिके द्विचरम समयमें सम्यगिभ्यात्वकी अन्तिम फालिका संक्रम करके सम्यक्त्वको प्राप्त होता है उसके अवस्थितपदका यह उत्कृष्ट अन्तर काल पाया जाता है । इसी प्रकार सब नारकी जीवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिये । तिर्यञ्चोंमें अन्तरका कथन नारकियोंके समान करना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें अन्तरका कथन नारकियोंके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है । पंचेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अल्पतरपदके सक्रामकका अन्तरकाल नहीं है । अवस्थितपदके सक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है । मनुष्यत्रिकमें भुजगार और अल्पतरपदका अन्तर पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है । अवस्थितपदका अन्तर ओघके समान है । अवस्थितपदके सक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटिप्रमाण है । देवोंमें अन्तरका कथन नारकियोंके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है । भवनवासियोंसे लेकर नौ प्रवेयक तकके देवोंमें इसी प्रकार है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वत्र कुछ कम अपनी स्थिति कहनी चाहिये । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा

एवं जाव० ।

§ ४७२ णाणाञ्जावेहि मगविचयाणुगमेण दुविहो गिरेसो—ओषण आदेसेण य । ओषेण अर्धङ्गि० सध्र णियमा अत्वि । सेसपदसक्य० मयणिजा । मंगा २७ । एवं चदुगदासु । णवरि मणुसगदीदो अण्णत्थ णव मंगा वचम्भा । णवरि पंथि० तिरि०अपञ्च०-अणुरिसादि जाव सम्बद्धा चि अर्धङ्गि० णियमा अत्वि । सिया एदे च अप्पदरगा च १ । सिया एदे च अप्पदरगा च २ । धुवसहिदा ३मगा तिण्णि । मणुस-अपञ्च० अप्पदर-अवङ्गिदाणमहु मगा । एव जाव० ।

§ ४७३ मागामागामु० दुविहो गिरेसो—ओषण आदेसेण य । ओषेण अर्ध-अपञ्च०-अवच०-सक्य० मयञ्जी फव० ? अणतमागो । अर्धङ्गि सव्यञ्जीव० अणता मागा । एव तिरिक्खेसु । णवरि अवच णत्वि । आदेसेण गेरुय० अर्धङ्गि०-सक्य असखत्ता भागा । सेसमसखे०-मागो । एवं सम्बणेरुय-सम्बपथि०-तिरिक्ख-मणुस मणुसअपञ्च-देवा जाव अवरजिदा चि । मणुसपञ्च-मणुसिणोसु सम्बहेसु अर्धङ्गि० मखेजा मागा । सेसु संखेजदिमागो । एव जाव० ।

तत्र अथवा आहिय ।

§ ४७२ माना जीवसम्बन्धी मंगविचयाणुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओष निर्देश और आदेशनिर्देश । ओषकी अपेक्षा अवस्थित पहले संक्षमक जीव नियमसे हैं । ओष पहले संक्षमक जीव भङ्गनीच हैं । मंग २७ होय हैं । इसी प्रकार चाते गतिधर्मि जानना चाहिये । किन्तु इतनी विराम्य है कि मनुष्यगतिके सिवा अन्य गतिधर्मि ६ मंग करने चाहिये । किन्तु पंचेन्द्रिय विराम्य अपर्याप्तकर्मि और अनुविरासे कर सर्वावसिद्धि तकके हेतुमि अवस्थित पर्याप्त जीव निवमस हैं । कदाचित् अवस्थित पर्याप्त अनेक जीव हैं और अत्यन्त पर्याप्त एक जीव है १ । कदाचित् अवस्थित पर्याप्त अनेक जीव हैं और अत्यन्त पर्याप्त अनेक जीव हैं २ । इस प्रकार मंग मंगके साथ ही मंग हैं । मनुष्य अपर्याप्तकर्मि अत्यन्त और अवस्थित पर्याप्त अथ मंग होय हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्ग्यातक जानना चाहिये ।

§ ४७३ मागामागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओषनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओषकी अपेक्षा मुजगाद, अत्यन्त और अवच्छेद पर्याप्त संक्षमक जीव सब जीवोंके कितने माग-प्रमास्य हैं ? अत्यन्त मंगप्रमास्य हैं । अवस्थित पहले संक्षमक जीव सब जीवोंके अत्यन्त बहुमंग-प्रमास्य हैं । इसी प्रकार तिर्यङ्गोमि जानना चाहिये । किन्तु इतनी विराम्य है कि तिर्यङ्गोमि अवच्छेदक नहीं है । आदेशकी अपेक्षा नापथिधर्मि अवस्थितपहले संक्षमक जीव अपर्याप्त बहुमागप्रमास्य हैं । राय पहले संक्षमक जीव असंख्यातने मंगप्रमास्य हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब पंचेन्द्रिय तिर्यङ्ग मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त सामान्य देव और अपर्याप्त तकके हेतुमि जानना चाहिये । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यही और सर्वावसिद्धिके हेतुमि अवस्थित पर्याप्त जीव संख्यात बहुमाग प्रमास्य हैं । ओष पर्याप्त जीव संख्यातने मंगप्रमास्य हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्ग्या तक जानना चाहिये ।

१ का मनी चि । मनुष्यप्रमास्य मनुष्यप्रमास्य मनुष्यहीनु इति चण ।

१ ४७४. परिमाणाणु० दुविहो णिद्वेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण भुज०-  
अप्प०संक्रा० अमंखेज्जा । अवट्ठि० अणता । अवत्त० मंखेज्जा । एवं तिरिक्खा० । णवरि  
अवत्त० णत्थि । आदेसेण णेरइय० सच्चपदसंका० असंखेज्जा । एवं सच्चणेरइय-सच्चपंचि०-  
तिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवा जाव अवरज्जिदा त्ति । मणुसेसु भुज०-अवत्त० संखेज्जा ।  
सेमा अमंखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सच्चद्वेसु सच्चपदमंका० संखेज्जा । एवं जाव० ।

१ ४७५. खेत्ताणु० दुविहो णिद्वेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण अवट्ठि०-  
मंका० सच्चलोगे । सेससका० लोगस्स अमखे०भागे । एवं तिरिक्खा० । सेमसच्च-  
मग्गणासु सच्चपदसंका० लोग० असंखे०भागे । एवं जाव ।

१ ४७६. पोसणाणु० दुविहो णिद्वेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण भुज०संक्रा०  
केव० पोसिदं ? लोग० अमखे०भागो अट्ठ-नारहचोदम० देखणा । अप्पद० अट्ठचोद०  
देखणा सच्चलोगो वा । अवट्ठि० सच्चलोगो । अवत्त० लोग० अमंखे०भागो । आदेसेण  
णेरइय० भुज० लोग० अमंखे०भागो पंचचोदम० देखणा । अप्पद०-अवट्ठि० लोग०

१ ४७४. परिणामानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश ।  
ओघकी अपेक्षा भुजगार और अल्पतर पदके सक्रामक जीव असंख्यात हैं । अवस्थित पदके  
सक्रामक जीव अनन्त हैं । अवक्तव्य पदके सक्रामक जीव संख्यात हैं । इसी प्रकार तिर्यञ्चोमें  
जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्य पद नहीं है । आदेशकी अपेक्षा  
नारकियोंमें सब पदोंके सक्रामक जीव असंख्यात हैं । उमी प्रकार सब नारकी, सब पंचेन्द्रिय  
तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और अपराजित त्रिमान तकके देवोंमें जानना चाहिये ।  
मनुष्योंमें भुजगार और अपरक्तव्य पदके सक्रामक जीव संख्यात हैं । शेष पदोंके सक्रामक जीव  
असंख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब पदोंके सक्रामक जीव  
संख्यात हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

१ ४७५. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश ।  
ओघकी अपेक्षा अवस्थितपदके सक्रामक जीव सब लोकमें रहते हैं और शेष पदोंके सक्रामक जीव  
लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रमें रहते हैं । इसी प्रकार तिर्यञ्चोमें जानना चाहिये । शेष सब  
मार्गणाओंमें सब पदोंके सक्रामक जीव लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रमें रहते हैं । इसी प्रकार  
अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिये ।

१ ४७६. स्पर्शानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश ।  
ओघकी अपेक्षा भुजगार पदके सक्रामक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें  
भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भाग-  
प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अल्पतर पदके सक्रामक जीवोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ  
कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका और सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवस्थितपदके  
सक्रामक जीवोंने सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके सक्रामक जीवोंने  
लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें  
भुजगार पदके सक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके  
चौदह भागोंमेंसे कुछ कम पाँच भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अल्पतर और अवस्थित  
पदके सक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागों-

अमंस्त्रे० मागो सचोत्स० देष्टना । पदमाए खेचं । विदियादि जाव सचमा पि एवं खेच ।  
 णवरि सगपोसण कायम्बं । सचमीए सुअ खेच । तिरिक्खेसु सुअ० लोग० असंस्त्रे०  
 मागो सचनोरस० देष्टना । अप्पद० लोगस्स असंस्त्रे० मागो सम्बलोगो वा । अचट्ठि०  
 खेच । पंचिदियतिरिक्खतियश् सुअ० तिरिक्खोपो । अप्पद०-अचट्ठि० लोग० असंस्त्रे०  
 मागो सम्बलोगो वा । एवं मणुसतियश् । णवरि अचत्त ओपमगो । पचि० तिरि०-  
 अप्पद०-मणुसअपज्ज० अप्पद०-अचट्ठि० पंचिदियतिरिक्खमगो । सम्बपदपरिणददेवेहि  
 अट्ठ-अचोत्स० । एव मवणादि जाव अञ्जुदा पि । णवरि सगपोसणं । उवरि खेचं ।  
 एव जाव ।

। ४७७ कालाणु० बुद्धिहो णिदेसो—ओपेण भादेसेण य । ओपेण सुअ०  
 अप्पद० जह एग०, उक्क० जावलि० असंस्त्रे मागो । अचट्ठि० सम्बद्धा । अचत्त० जह०  
 एयममओ उक्क० सत्तेज्जा समया । एव सम्बणेरइय-सम्बतिरिक्ख-सम्बदेवा पि ।  
 णवरि अचत्त० अरिच । पचिं तिरिं अपज्ज० अणुरिसादि जाव अवराद्धिदा पि सुअ०  
 णत्वि । मणुसेसु सुअ० जह एगसमओ उक्क संस्त्रेज्जा समया । सेसमोप

मेंसे कुछ कम यह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । पहिली धूमिलीमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।  
 दूसरीसे लेकर सातवीं धूमिली तक स्पर्शन इसी प्रकार है । किन्तु सर्वत्र अपने अपने स्पर्शनका कवन  
 करना चाहिये । सातवीं धूमिलीमें मुञ्जगारपदका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । तिस्रहोमें मुञ्जगारपदका  
 तीनों लोकके अस्तक्यातमें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम सात  
 भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अस्वतर पदकासे तीनों लोकके अस्तक्यातमें भाग और सब  
 लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अचत्तित पदका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें  
 मुञ्जगारपदका स्पर्शन सामान्य तिर्यञ्चके समान है । अस्वतर और अचत्तित पदकासे तीनों लोकके  
 अस्तक्यातमें भागप्रमाण क्षेत्रका और सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार मनुष्य-  
 त्रिकमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विरोध है कि अचत्तित पदका स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।  
 पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तमें अस्वतर और अचत्तित पदकासे मंग पंचेन्द्रिय  
 तिर्यञ्चके समान है । सब पक्षोंसे परिप्लव हुए देवोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ  
 भागप्रमाण और कुछ कम नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार अन्वयसिद्धोंसे  
 लेकर अचत्तित कस्यतकके देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विरोध है कि अन्वय-अन्वय स्पर्शन  
 करना चाहिये । इससे आगेके देवोंमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गाया तक  
 जानना चाहिये ।

§ ४७७. काकानुगमधी अवेसा निरैरा वा मच्छरका ह—ओपनिरैरा और भावेरानिरैरा ।  
 आपसी ओपेण मुञ्जगार और अस्वतर पदका अपम्य काज एक समय है और बहूज काज आपसीके  
 अस्तक्यातमें भागप्रमाण है । अचत्तित पदका काज सबका है । अचत्तित पदका अपम्य काज एक  
 समय है और कण्डू काज संक्यात समय है । इसी प्रकार सब नारकी सब तिर्यञ्च और सब  
 देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विरोध है कि इतनी अचत्तित पद नहीं है । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च  
 अन्वयसिद्धोंमें और अणुरिसा क्षेत्र अपर्याप्त तकके देवोंमें मुञ्जगार पद नहीं है । मनुष्यमें  
 मुञ्जगार पदका अपम्य काज एक समय है और कण्डू काज संक्यात समय है । सेव पक्षोंका काज

भंगो । एवं मणुसपज्ज०—मणुसिणीसु । णवरि अप्पद० उक्क० संखेज्जा समया । मणुस-  
अपज्ज० अप्पद० ओघं । अवट्ठि० जह० एयसमओ, उक्क० पल्लिदो० अमंखे० भागो ।  
सव्वट्ठे अप्पद० जह० एयसमओ, उक्क० संखेज्जा समया । अवट्ठि० ओघमगो ।  
एवं जाव० ।

§ ४७८. अंतराणु० दुविहो णिदेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण भुज०-  
अप्पद० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ता सादिरेया । अवट्ठि० णत्थि अंतरं ।  
अवत्त० जह० एयसमओ, उक्क० वामपुधत्तं । एवं मणुसतिए ३ । एवं सव्वणेरडय०-  
मव्वतिरिक्खि०-सव्वदेवा त्ति । णवरि अवत्त० णत्थि । पचि०तिरिक्खिअपज्ज० भुज०  
णत्थि । मणुसअपज्ज० अप्पद०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० पल्लिदो० अमंखे० भागो ।  
अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति अप्पद० जह० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं पल्लिदो०  
अमंखे० भागो । अवट्ठि० णत्थि अतरं । एवं जाव० ।

§ ४७९. भावो सव्वत्थ ओढइयो भावो ।

§ ४८०. अप्पावहुआणु० दुविहो णिदेसो—ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण

ओघके समान हैं । इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त आर मनुष्यांशोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि अल्पतर पदका उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अल्पतर पदका काल ओघके समान है । अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्पके असंख्यातवें भागप्रमाण है । सर्वार्थसिद्धिमें अल्पतर पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अत्रिथत पदका काल ओघके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिये ।

§ ४७८ अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघकी अपेक्षा भुजगार और अल्पतरपदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चात्रीस दिनरात है । अत्रिथतपदका अन्तरकाल नहीं है । अवक्तव्यपदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिये । इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यंच और सब देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अत्रक्तव्यपद नहीं है । पचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें भुजगारपद नहीं है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अल्पतर और अवस्थितपदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्पके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अनुदिशासे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अल्पतरपदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनुदिशासे अत्राजितक वर्षपृथक्त्व और सर्वार्थसिद्धिमें पल्पके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अवस्थितपदका अन्तर नहीं है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

§ ४७९ भाव सर्वत्र औदयिक है ।

§ ४८० अल्पबहुतानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेश-  
निर्देश । ओघकी अपेक्षा अवक्तव्यपदके सकामक जीव सबसे थोड़े हैं । उनसे अल्पतरपदके

सम्प्रत्योवा अक्षत्० सक्ष० । अप्प० संक्ष० असत्ते० गुणा । सुख० संक्ष० विसेमा० । अत्रि०  
 अर्णतगुणा । आदेसेण चोरय० सम्प्रत्योवा अप्पद० संक्ष० । सुख० विसे० । अत्रि०  
 असंत्ते० गुणा । एवं सम्प्रणोरय० र्षि० तिरिक्खतिप३-देवा जाव पवगेवत्ता चि ।  
 एव तिरिक्खत्तेसु । पवरि अत्रि० अणतगुणा । पंथिदियतिरिक्खअपज्ज मणुसअपज्ज०  
 अनुदिसादि जाव अवरज्जिदा चि अप्पदरसक्ष० पोवा । अत्रि० असत्ते गुणा । एव  
 सम्प्रद्वे । पवरि सत्तेअगुण कायम्ब । मणुत्तेसु सम्प्रत्योवा अवत्त० । सुख० सत्ते० गुणा ।  
 अप्पद० असत्ते गुणा । अत्रि० असत्ते० गुणा । एव मणुसपन्न०-मणुसिणीसु ।  
 पवरि सत्तेअगुण कायम्ब । एव जाव० ।

एव सुजगारो समचो ।

§ ४८१ पदनिष्पत्तेषु चि तिण्णि अणियोगद्वाराणि—समुच्चिचणा सामिचमणा-  
 चहुग सि । समुच्चिचणा दुविहा—अहण्णा उक्कस्ता च । उक्कस्से पयद । दुविहो पिदेसो—  
 ओपण आदसेण य । ओपेण अत्यि उक्क० ष्टी हाणी अक्कहारं च । एव चहुगदीसु ।  
 पवरि पथि० तिरि० अपज्ज०-मणुसअपज्ज०-अनुदिसादि जाव सम्प्रद्वे चि उक्क० ष्टी

संक्षमक जीव असंख्यातगुण्ये हैं । इनसे मुञ्जगारपदके संक्षमक जीव विशेष अधिक है । इनसे  
 अक्षत्तपदके संक्षमक जीव अनन्तगुण्ये हैं । आवेरणी अपेक्ष्य मारत्तियेनि अस्त्वत्पदके  
 संक्षमक जीव सबस बाड़े हैं । इनसे मुञ्जगारपदके संक्षमक जीव विशेष अधिक हैं । इनसे  
 अक्षत्तपदके संक्षमक जीव असंख्यातगुण्ये हैं । इसी प्रकार सब मारणी पंचेत्त्रिय तिर्यचत्तिक,  
 देव और मी पवेयक तकके देवेनि जानना चाहिये । इसी प्रकार तिर्यज्जोनि जानना चाहिये । किन्तु  
 इतनी विस्तारता है कि इनमें अक्षत्तपदके जीव अनन्तगुण्ये हैं । पंचेत्त्रिय तिर्यज्ज अपरास मनुष्य  
 अरवाय और अनुदिससे लेकर अरपञ्चि वक्क देवेनि अस्त्वत्पदके संक्षमक जीव सबस बाड़े  
 हैं । इनसे अक्षत्तपदके संक्षमक जीव अक्षत्तगुण्ये हैं । इसी प्रकार सर्वावेसिद्धिमें जानना  
 चाहिये । किन्तु इतना विस्तारता है कि इनमें संक्षमकगुण्ये करना चाहिये । मनुष्योंमें अक्षत्त  
 पदके संक्षमक जीव सबसे बाड़े हैं । इनसे मुञ्जगारपदके संक्षमक जीव संक्षमगुण्ये हैं ।  
 इनसे अस्त्वत्पदके संक्षमक जीव असंख्यातगुण्ये हैं । इनसे अक्षत्तपदके संक्षमक जीव  
 असंख्यातगुण्ये हैं । इसी प्रकार मनुष्य परास और मनुष्यनिर्भोमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी  
 विस्तारता है कि इनमें सर्वावे असंख्यातगुण्ये के स्थानमें संक्षमगुण्ये करना चाहिये । इसी प्रकार  
 अनाहारक मागण्य तक जानना चाहिये ।

इस प्रकार मुञ्जकार अनुबन्धाद्वार समान हुआ ।

§ ४८२ पदनिष्पत्तेषु चि अनुयागद्वार हैं—समुत्कीर्तना एवमित्थ और अस्त्वत्तुत्त ।  
 समुत्कीर्तन्य चो प्रशारणी है—अपण्य और अट्टट । इत्तुत्तका प्रशारण है । इसकी अपेक्षा निर्देत चो  
 प्रशारण है—अप चार आवेरा । ओपकी अपेक्षा अट्टट इत्ति, इत्ति और अररवान है । इसी  
 प्रकार चार्प गणियेनि जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि पंचेत्त्रिय तिर्यज्ज अपपामक,  
 मनुष्य अरपातक और अनुदिससे लेकर सर्वावेसिद्धि तकके देवेनि इत्तुत्त इत्ति नहीं है । इसी प्रकार

णत्थि । एवं जाव० । एवं जहण्णं पि णेटव्वं ।

§ ४८२. सामित्तं दुविहं जहण्णुक्कस्सभेदेण । उक्क० पयदं । दुविहो णिहेमो—  
ओघेण आदेसेण य । ओघेण उक्क० वट्ठी कस्स ? अण्णदरस्स जो उवसामगो मिच्छत्त-  
सम्मामिच्छत्ताणि संकामेमाणओ देवो जादो तस्स तेवीसं पयडीओ संकामेमाणस्स  
उक्क० वट्ठी । तस्सेव से काले उक्कस्समवट्ठाणं । उक्क० हाणी कस्स ? जो खवओ अट्ठ-  
कसाए खवेदि तस्स उक्क० हाणी । आदेसेण णेरइय० उक्क० वट्ठी कस्स ? अण्णदरस्स  
जो इगिवीम संकामेमाणो मत्तावीसं संकामगो जादो तस्स उक्क० वट्ठी । तस्सेव से  
काले उक्कस्समवट्ठाणं । उक्क० हाणी कस्स ? जो सत्तावीमं संकामेमाणो अणंताणु०-  
चउक्क विमंजोएदि तस्स उक्क० हाणी । एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-देवा जाव  
णवगेवज्जा त्ति । णवरि पंचि०तिरिक्खअपज्ज० उक्क० हाणी कस्स ? जो सत्तावीस-  
संकामगो छवीमसकामगो जादो तस्स उक्कस्सिमा हाणी । तस्सेव से काले उक्कस्स-  
मवट्ठाणं । एवं मणुसअपज्ज० । मणुसतिए उक्क० वट्ठी कस्स ? जो चउवीससंतकम्मिओ  
उवसमसेट्ठीदो ओयरमाणो चोइससंकामणादो इगिवीमसंकामगो जादो तस्स उक्क०  
वट्ठी । हाणी ओघभगो । एत्थेव उक्कस्समवट्ठाण । अणुदिसाटि जाव सव्वट्ठे त्ति उक्क०  
हाणी कस्स ? जेण सत्तावीसं संकामेमाणेण अणंताणुवधिचउक्कं विमंजोइदं तस्स उक्क०

अनाहारक मार्गणा तरु जानना चाहिये । इसी प्रकार जघन्यका भी कथन करना चाहिये ।

§ ४८२ स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी  
अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघकी अपेक्षा उत्कृष्ट वृद्धि  
किसके होती है ? जो उपशामक जीव मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका संक्रम करता हुआ देव हो  
गया है उसके तेईस प्रकृतियोंका संक्रम करते हुए उत्कृष्ट वृद्धि होती है । तथा उसीके तदनन्तर  
समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है । उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो क्षणिक आठ कर्पायोंका क्षय  
करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती है । आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ?  
जो इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रम करनेवाला जीव सत्ताईस प्रकृतियोंका संक्रामक हो गया है उसके  
उत्कृष्ट वृद्धि होती है । तथा उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है । उत्कृष्ट हानि किसके  
होती है ? सत्ताईस प्रकृतियोंका संक्रामक जो जीव अनन्तानुबन्धीचतुष्करी विसयोजना करता है  
उसके उत्कृष्ट हानि होती है । इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यश्च, देव और नौ प्रवेयक तकके  
देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि पचेन्द्रिय तिर्यश्च अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट हानि  
किसके होती है ? जो सत्ताईस प्रकृतियोंका संक्रामक जीव छत्रोस प्रकृतियोंका संक्रामक हो जाता  
है उसके उत्कृष्ट हानि होती है । तथा उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है । इसी  
प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिये । मनुष्यत्रिकामे उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो  
चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव उपशामश्रेणिसे उतरते समय चौदह प्रकृतियोंके संक्रमके बाद  
इक्कीस प्रकृतियोंका संक्रामक हो जाता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है । ह निका कथन ओघके  
समान है । तथा यहीं पर उत्कृष्ट अवस्थान होता है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें  
उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? सत्ताईस प्रकृतियोंका संक्रम करनेवाले जिस जीवने अनन्तानुबन्धी



हाणी । तस्त्व स कस्त उक्कस्समवहाणं । एव जाव० ।

§ ४८३ जह० पयद । दुविहो भिरेसो—ओपेण आदेसेण य । ओपच जह० वहु। कस्त ? जो छम्वीससकामजो सम्मच पडिवण्णो तस्स जहणिया वहु। जह० हाणी कस्त ? अण्णदरस्स जेण सत्तावीमसकामगेण सम्मचमुम्भेद्विद तस्स जह० हाणी । अण्णदरत्यावहाण । एव चदुसु वि गदीसु । णवरि पविदियतिरिक्खअपञ्ज०-मणुम अपञ्जच-मणुदिसादि जाव सम्भुहे वि जह० हाणी अवहाण च उक्कस्समंगो । एव जाव ।

§ ४८४ अप्यादहुम दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयद । दुविहो भिरेसो—आपण आदेसेण य । तस्य ओपेण सम्भत्थोवा उक्क० हाणी ८ । वहु। अवहाण च दो वि सरिसाभि ससेन्नप्रगुणाणि २१ । आदेसेण णेरुय्य सम्भत्थोवा उक्क हाणी ४ । वहु। अवहाणं च दो वि सरिसाणि विसेसाहियाणि ६ । एव सम्भणेरुय्य-सम्भतिरिक्ख-सम्भत्था ति । णवरि पवि तिग्गिक्खअपञ्ज०-अणुदिसादि जाव सम्भुहा चि उक्क० हाणा अवहाण च दो वि सरिसाणि । मणुसतिपसु सम्भत्थोवा उक्क० वहु। ७ । उक्क हाणी अवहाण च दो वि सरिसाभि विसेसाहियाणि ८ । एव जाव० ।

चतुष्पत्ती विसंवाजन किया है इसके उत्पन्न हानि होती है । तथा वहीके उत्पन्नतर समयमें उत्पन्न अवस्थान होता है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गका एक जानना चाहिये ।

§ ४८३ अपत्यस्य प्रकरणम् । निर्देष्टव्यं—ओष और आदेरा । अ वही अपेक्ष प्रथम वृद्धि किसके जाती है ? जो वहीस मरुत्तियेय संक्रमक बीज सम्भक्तको प्राप्त हुआ है उसके अपत्य वृद्धि होती है । अपत्य हानि किसके होती है ? सत्ताईस मरुत्तियेय संक्रमक जिस जीवन सम्भक्तराखी श्रेष्ठता की है उसके अपत्य हानि जाती है । तथा किसी एकके अवस्थान होता है । इसी प्रकार चायें गतिबोधमें जानना चाहिये । किन्तु इसीमें विसंगत है कि पंचत्रिंशत्तिरिक्ख अपत्यात् मणुपव अपत्यात् आर अणुदिरसत् सेकर सर्वावसिद्धि उसके देवेमें प्रथम हानि और अवस्थानअ मंग अन्ते उत्पन्नक सम्मान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गका एक जानना चाहिये ।

§ ४८४ अप्यादहुय वा प्रकारम्—प्रथम और उत्पन्न । उत्पन्न प्रकरण है । वहीके अपत्या निर्देष्टव्यं वा प्रकरणम्—आप और आदेरा । आपकी अपेक्ष उत्पन्न हानि सबसे बोधी है ८ । उत्पन्न वृद्धि और अवस्थान य दोनों समान होते हुए संकषाश्रुता हैं २१ । आदेराकी अपेक्ष नार्त्तियेयमें उत्पन्न हानि सबसे बोधी है ४ । वृद्धि और अवस्थान य दोनों समान होते हुए विद्येय अर्थिक हैं ६ । इसी प्रकार सब नारत्ती सब तियद्य और सब देवेमें जानना चाहिये । किन्तु इनका निश्चय है कि पंचत्रिंशत्तिरिक्ख अपत्यात्तियेय और अणुदिरसत् सेकर सर्वावसिद्धि उसके देवेमें उत्पन्न हानि और अवस्थान य दोनों समान हैं । मणुप्यत्रिकेमें उत्पन्न वृद्धि सबसे बोधी है ७ । उत्पन्न हानि और अवस्थान य दोनों समान होते हुए विद्येय अर्थिक हैं ८ । इसी प्रकार अनाहारक मार्गका एक जानना चाहिये ।

§ ४८५. जहणए पयदं । दुविहो णिडेमो—ओघेण आदेसेण य । तत्थोघेण जह० वट्टी हाणी अवट्ठाण च तिण्णि वि सरिसाणि १ । एवं चदुसु गदीसु । णवरि पंचिदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुमअपज्ज०-अणुदिसादि जाव सव्वट्ठे त्ति उक्क०भंगो । एवं० जाव० ।

एवं पदणिकखेवो समत्तो ।

§ ४८६. वट्टिमंकमे तत्थ इमाणि तेरस अणियोगदागणि—समुक्चित्तणा जाव अप्पावहुए त्ति । तत्थ समुक्चित्तणाणु० दुविहो णिडेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण अत्थि मंखेज्जभागवट्टी हाणी मंखे०गुणवट्टी हाणी अवट्ठा० अवत्तव्वं च । एवं मणुसतिए । सेमं भुजगारभंगो ।

§ ४८७. सामित्तं भुजगारभंगो । णवरि मंखेज्जगुणवट्टी हाणी कस्म ? अण्णदरस्म सम्माडडिस्स । एवं मणुसतिए २ । सेसं भुजगारभंगो ।

§ ४८८. कालो भुजगारभंगो । णवरि मंखेज्जगुणवट्टी जह० एयसमओ, उक्क० वे समया । मंखेज्जगुणहाणी जह० उक्क० एगममओ । मणुस्स०३ मंखे०गु णवट्टी हाणी जह० उक्क० एयममओ । सेमं भुजगारभंगो ।

§ ४८५. जघन्यता प्रकरण ह । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघकी अपेक्षा जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान ये तीनों ही समान हैं १ । इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि पचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिशसे लेकर सर्वायत्तिद्धि तकके देवोंमें उत्कृष्टके समान भङ्ग है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिये ।

इस प्रकार पदनिक्षेप समाप्त हुआ ।

§ ४८६. अब वृद्धिसकमका अधिकार है । उसमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पवहुत्व तक ये तेरह अनुयोगद्वार होते हैं । उनमेंसे समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ-निर्देश और आदेशनिर्देश । ओघकी अपेक्षा संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि, अवस्थान और अवक्तव्य ये पद हैं । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिये । शेष कथन भुजगारके समान है ।

§ ४८७. स्वामित्वका भग भुजगारके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यात-गुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि किसके होती है ? किसी सम्यग्दृष्टिके होती है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिये । शेष भंग भुजगारके समान है ।

§ ४८८. कालका भग भुजगारके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यात-गुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है । संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । मनुष्यत्रिकमें संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । शेष भंग भुजगारके समान है ।

§ ४८०. अतराणु दुविहो णिहेमो—ओषेण आदेसेण य । ओषेण सस्त्रे-  
गुणवङ्गि-हाणिप्रतर अह० एयस० अतोसु , उरु० उरुपोन्मालपरियङ् । सेस सुज-  
भगो । णवरि मणुस०३ संस्त्रे गुणवङ्गि-हाणीणं अह० अतोसुइय, उरु० पुष्य  
कोटिपुचर्त्त ।

§ ४००. पाणाजी भंगविषओ भागामागो परिमाण स्त्रे पोसण च सुज-  
भगो । णवरि संस्त्रे-गुणवङ्गि-हाणिगयविसेसो सञ्चत्य आणियव्यो ।

§ ४०१. फालो सुज०भगो । णवरि गुणवङ्गी हाणी अह० एयसमओ, उरु  
सस्त्रेजा समया ।

§ ४०२. अतर सुज भंगो । णवरि संस्त्रे-गुणवङ्गी अह० एयसमओ, उरु०  
वासपुचर्त्त । संस्त्रे गुणहाणी अह एयसमओ, उरु० उम्मास । एवं मणुसविय ।  
णवरि मणुसिणी० सस्त्रे-गुणहाणी उरु० वासपुचर्त्त ।

§ ४०३. माओ सञ्चत्य ओदङ्गओ० ।

§ ४०४. अप्पावङ्गुआणु० दुविहो णि०—ओषेण आदेसेण य । ओषेण सञ्चत्योवा  
अवच सका । सस्त्रे गुणवङ्गिसका मस्त्रे गुणा । संस्त्रे-गुणहाणिमका० सस्त्रे गुणा ।

§ ४०६. अन्तराणुगमकी अपका मिरेरा वा प्रकरका इ—ओष और आदेरा । ओषकी  
अपका संख्यातगुणवङ्गिअ अपन्य अन्तर एक समय है और संख्यातगुणवङ्गिअ अपन्य अन्तर  
अन्तर्मुद्रुर्त्त है । तथा दोनोंअ बल्क अन्तर अपार्थपुत्राकाररिर्त्तनप्रमास्य इ । रोप मङ्ग मुङ्गारके  
समान है । किन्तु इतनी विराट्ता है कि मनुष्यत्रिकर्मे संख्यातगुणवङ्गि और संख्यातगुणवङ्गिअ  
अपन्य अन्तर अन्तर्मुद्रुर्त्त इ और अह्य अन्तर पूर्वकोटिपुचर्त्तप्रमास्य इ ।

§ ४०६. नाना जीवोकी अपेका भंगविषय, परिमास्य क्षेत्र और त्पर्यन्त इतका कवन  
मुङ्गारके समान है । किन्तु इतनी विरोक्ता है कि संख्यातगुणवङ्गि और संख्यातगुणवङ्गिअ  
विरोक्ताके सर्वत्र जान केना चाहिये ।

§ ४०९. अजना मंग मुङ्गारके समान है । किन्तु इतनी विराट्ता है कि गुणवङ्गि और  
गुणवङ्गिअ अपन्य काल एक समय है और बरुष्ट काल संख्यात समय है ।

§ ४०९. अन्तरका भंग मुङ्गारके समान है । किन्तु इतनी विराट्ता है कि संख्यात-  
गुणवङ्गिअ अपन्य अन्तर एक समय है और बल्क अन्तर अपार्थकत्वप्रमास्य है । संख्यातगुण-  
वङ्गिअ अपन्य अन्तर एक समय है और बल्क अन्तर अह महीना है । इनी प्रकर मनुष्यत्रिकर्मे  
जानना चाहिये । किन्तु इतनी विराट्ता है कि मनुष्यत्रिकर्मे संख्यातगुणवङ्गिअ बल्क अन्तर  
अपार्थकत्व है ।

§ ४०९. अथ सत्र ओदयिक है ।

§ ४०९. अप्पावङ्गुआणुगमकी अपेका मिरेरा वा प्रकरका इ—ओष और आदेरा । ओषकी  
अपका अपार्थकत्वके संख्यातकी मन्त्रे वाङ्गे है । इनसे संख्यातगुणवङ्गिअके संख्यातकी और  
संख्यातगुणवङ्गिअके संख्यातकी और संख्यातगुणवङ्गिअके संख्यातकी हैं । इनसे संख्यात

संसे० भागहाणि० असंसे० गुणा । संसे० भागवट्टि० विसे० । अण्वट्टि० अणंतगुणा । मणुस्सेसु  
 सव्वत्थोवा अवत्त० । संसे० गुणवट्टि० संसे० गुणा । संसे० गुणहाणि० संसे० गुणा ।  
 संसे० भागवट्टि० संसे० गुणा । संसे० ज्ञभागहाणि० असंसे० गुणा । अवट्टि० अमंसे० गुणा ।  
 एवं मणुमपज्ज०-मणुसिणी० । णवरि मसेज्जगुणं कायव्वं । सेससव्वमग्गणासु  
 भुजगारभंगो ।

एव वट्टी ममत्ता । तदो पयडिड्ढाणसंकमो समत्तो ।

एवं पयडिमंकमो ममत्तो ।



भागहानिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यातभागवट्टिके संक्रामक जीव विशेष  
 अधिक हैं । उनसे अस्थितपदके संक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं । मनुष्योंमें अण्वत्तपदके संक्रामक  
 जीव सबसे थोड़े हैं । उनसे संख्यातगुणवट्टिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यात-  
 गुणहानिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यातभागवट्टिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे  
 हैं । उनसे संख्यातभागहानिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे अस्थितपदके संक्रामक  
 जीव असंख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनिर्धोमि जानना चाहिये । किन्तु  
 इतनी विवेकता है कि असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिये । शेष सब मार्गणाओंमें  
 भुजगारके समान भग है ।

इसप्रकार वट्टिके समाप्त होनेपर प्रकृतिसंक्रमस्थान समाप्त हुआ ।

इसप्रकार प्रकृतिसंक्रम समाप्त हुआ ।



## द्विदिसंक्रमो अत्याहियारो

तस्य णिवेदिय परिसुद्धमावहसुमंत्रलिं विणिंदस्स ।

ठिदिसंक्रमाहियारं जहाडिद वण्णइस्सामो ॥ १ ॥

⊗ द्विदिसंक्रमो दुबिहो—मूलपपयडिदिसंक्रमो उत्तरपपयडिदिसंक्रमो च ।

§ ४०५. एषो द्विदिसंक्रमो पपयडिसंक्रमाणंतरपरूषणाबोग्गो पचावसरो । सो च दुबिहो मूलपपयडिदिसंक्रमभेदण । एतथ मूलपपयडीए भोइणीयसण्णिटाए वा द्विदी तिस्से संक्रमो मूलपपयडिदिसंक्रमो उचचइ । एवमपपयडिदिसंक्रमो च वचव्वो । एवं दुबिहवमावण्णस्स द्विदिसंक्रमस्स परूषणाहुत्तपरपदं मण्ण—

⊗ तत्थ अहुपव—जा द्विदी ओकडिद्विदि वा उचडिद्विदि वा अपपयपयडिं संक्रामिक्काइ पा सो द्विदिसंक्रमो । सेसो द्विदिअसंक्रमो ।

§ ४०६ एतथ मूलपपयडिदिसंक्रमो ओकडिद्विदिसंक्रमसेण संक्रमो । उत्तरपपयडिदिसंक्रमो पुन ओकडिद्विदिसंक्रमपरपयडिसंक्रमीहि संक्रमो दहुव्वो । एदेणोक्कवादाओ जिस्से द्विदीए

### स्थितिसंक्रम अर्थाधिकार

इस विनियमके अतिनिर्णय भ्यक्तरी मुमुमोकी अंशलि अर्थस्य करके पचस्सित्त्विदिसंक्रम अविचारण वचन चहैगा ॥ १ ॥

⊗ स्थितिसंक्रम दो प्रकारका है—मूलप्रकृतिस्थितिसंक्रम और उत्तरप्रकृतिस्थितिसंक्रम ।

§ ४६७ अब इस प्रकृतिसंक्रम अनुयोगकारके बाद स्थितिसंक्रमका कथन अपसर प्राप्त है । मूलप्रकृतिस्थितिसंक्रम और उत्तरप्रकृतिस्थितिसंक्रमके भेदसे यह दो प्रकारका है । इनमेंसे माहनीय नामक मूल प्रकृतिकी या स्थिति है इसके संक्रमको मूलप्रकृतिस्थितिसंक्रम कहते हैं । इसी प्रकार उत्तरप्रकृतिस्थितिसंक्रम कहना आदिय । इस प्रकार दो तरहके स्थितिसंक्रमका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहत है—

⊗ स्थितिसंक्रमके विषयमें यह अर्थपद है—ओ स्थिति अपचरिंत, उत्तररिंत और अन्य प्रकृतिरूपसे संक्रमित होती है वह स्थितिसंक्रम है और येव स्थिति-असंक्रम है ।

§ ४६९ यहाँ पर मूलप्रकृतिकी स्थितिअ अपचराल और उत्तरप्रकृतिके अपचराल संक्रम होय है । किन्तु उत्तरप्रकृतिस्थितिअ अपचराल, उत्तररिंत और परप्रकृतिसंक्रमके अपचराल संक्रम जानना

Sun	Mon	Tue	Wed	Thu	Fri	S
	1	2	3	4	5	6
7	8	9	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30	31			

friday 22

पुच्छदं  
विहाणं  
हेप्पाय-

हुज्जह ?  
पुच्छा

क्खेवो,

क्खवदि ।  
णिक्खेद-  
दिक नही  
निरूपण

saturday 23

ह ?  
का निक्षेप  
दद्यावलिके  
धम उदया-  
र शिष्यके

अपकर्षण

स सूत्रद्वारा  
है—

\* उदय समयसे लेकर आवलिके तीसरे भाग तक उस अस्थातका निक्षेप होता है और आवलिका शेष दो बटे तीन भाग अतिस्थापनारूप रहता है ।

§. ४६६ खुलासा इस प्रकार है—उस स्थितिका अपकर्षण करके उदय समयसे लेकर आवलिके तीसरे भाग तक उसका निक्षेप करता है और आवलिके दो बटे तीन भागप्रमाण ऊपर के हिस्सेको अतिस्थापनारूपसे स्थापित करता है । इसलिए आवलिका तीसरा भाग उस अपकर्षित

विसम्भो । आबलियवे-तिमागा च अञ्छावणा चि मण्णा । कयमावल्याए क्वजुम्म सखाए तिमागो वेणु सकिञ्जद ? ण, रूप्ण क्कळ्ळ थिहागीकरणादो । तम्हा समयुणा-बलियवे-तिमागा अञ्छावणा । समयुणावसियतिमागो रुवाहिओ गिक्सेवो चि गिच्छओ कायण्वो ।

§ ५०० सपदि एदम्मि विसए पवेसणिसेगकमजाणावण्हसुचरसुचमोइणं—

⊙ उदए पदुअ पवेसगं विज्जइ । तेष पर यिसेसहोणं जाव आबलियतिमागो ति ।

§ ५०१ सुगममे सुत्तं । एवमुदयावसियवाहिगणतरट्टिवीए ओकडुणाविदिं परुविय पुणो उदणंतरोत्तरिमट्टिदिओकडुणाए णाणसममव पदुप्पाएदुसुचरसुच मण्ण—

⊙ तवो जा चिदिया द्विदी तिस्से वि तत्तिगो चेष गिक्सेवो । अइच्छावणा समयुत्तरा ।

§ ५०२ तवो पुव्वणिरुद्धट्टिदीदो अणतरा जा ट्टिदी उदयावसियवाहिरिदियट्टिदि चि उच्च होइ । तिस्से वि तत्तिआ चेष गिक्सेवो होइ, तत्त्व णाम्माभावत्तो । अच्छावणा

स्वनिष्ठ निषेधक विषय है और आबलिष्ठ हो बटे तीन भग्न अस्तिस्वापना है ऐसा यहाँ कहा गया है ।

शंका—आबलिष्ठी परिगणना कृत्युगमसंख्यामें की गई है इसलिये इसका तीसरा भाग कैसे मध्य किंवा बा सफा है ?

समाधान—यही क्योंकि आबलिष्ठीमें एक समय कम करके इसका तीसरा भाग किंवा है । इसलिये एक समय कम आबलिष्ठी हो बटे तीन भागप्रमाण अस्तिस्वपना है और एक समय कम आबलिष्ठी तीसरा भग्न एक अर्थिक करने पर निषेध है ऐसा यहाँ निरवच्य करना चाहिये ।

§ ५ अथ इस विषयमें प्रवेशके निषेधके कमअद्यान कण्ठके लिय आगेका सूत्र कथं है—

⊙ उदयमं पदुत्तस प्रद्वय दिसे जातं है । उससे आगे आबलिष्ठी तीसरा भाग प्राप्त होने तक बिन्दुपदीन बिन्दुपदीन प्रद्वय दिसे जातं है ।

§ ५ १ यह सूत्र सुगम है । इस प्रकार उदयावलिष्ठी के अन्तर समीपवर्ती स्विच्छिन्नी अथउपगमिच्छिन्न कथन करके अथ इस स्थितिसे अन्तर उत्तरिम समयवर्ती स्थितिसे अपकर्षणमें जो नान्यत्र सम्भव है इसका कथन करनेके लिय आगेका सूत्र कथं है—

⊙ इस स्थितिक बाद जो दूसरी स्थिति है उसका भी उतना ही निषेध होता है । किन्तु अस्तिस्वापना एक समय अधिक होती है ।

§ ५ २ यह सूत्र निरवच्य स्थितिसे जा अन्तर समयवर्ती स्थिति है अथवा उदयावलिष्ठी के अन्तर या द्वितीय समयवर्ती स्थिति है इसका भी उतना ही निषेध होता है क्योंकि इसमें कोई भद

पुण समयुत्तग होइ । उदयावलियवाहिरद्विदीए वि एदिस्से अइच्छावणाभावेण पवेसदंमणादो ।

❧ एवमहच्छावणा समुत्तरा । णिकखेवो तत्तिगो चैव उदयावलिय वाहिरादो आवलियतिभागंतिमद्विदि त्ति ।

१ ५०३. एवमवद्विदेण णिकखेवेण समयुत्तराए च अवद्विदाइच्छावणाए ताव णेटच्चं जाव उदयावलियवाहिरादो जहण्णणिकखेवमेत्तद्विदीओ अइच्छावणाभावेण पइट्ठाओ त्ति । तइत्थीए द्विदीए आइच्छावणा संपुण्णिया आवलिया णिकखेवो जहण्णओ चैव । कइत्थओ वुण सो द्विदिविसेसो ? उदयावलियवाहिरादो आवलियतिभागंतिमो । एत्थावलियतिभागगहणेण समयुणावलियतिभागो समयुत्तरो धेत्तव्वो । तदतिमगहणेण च तदणतरुवरिमद्विदिविसेसो गहेयव्वो । तम्हा उदयावलियवाहिरादो जहण्णणिकखेवमेत्तीओ द्विदीओ उल्लघिय द्विदाए द्विदीए मपुण्णावलियमेत्ती अइच्छावणा होइ त्ति सुत्तस्स भावत्थो । संपहि एत्तो उवरि अवद्विदाए अइच्छावणाए णिकखेवो चैव वद्वदि त्ति परूवेदुमुत्तरसुत्तमाह—

नहीं है । किन्तु अतिस्थापना एक समय अधिक होती है, क्योंकि उदयावलिके बाहरकी स्थितिमें भी इसका अतिस्थापनारूपसे प्रवेश देया जाता है ।

❧ इम प्रकार अतिस्थापना एक एक समय अधिक होती जाती है और निक्षेप उदयावलिके बाहर आवलिके तीसरे भागकी अन्तिम स्थिति तककी स्थितियोंके प्राप्त होने तक उतना ही रहता है ।

१ ५०३ इस प्रकार अतिस्थापनामे उदयावलिके बाहरसे जघन्य निक्षेपप्रमाण स्थितियोंके प्रविष्ट होने तक निक्षेपको अवस्थितरूपसे ले जाना चाहिये और अतिस्थापनाको उत्तरोत्तर एक एक समय अधिकके क्रमसे अनग्रस्थितरूपसे ले जाना चाहिये । फिर वहाँ जो स्थिति प्राप्त होती है उसकी अतिस्थापना पूरी एक आपलिप्रमाण होती है और निक्षेप जघन्य ही रहता है ।

शंका—जिस स्थिति विशेषके प्राप्त होनेपर अतिस्थापना पूरी एक आपलिप्रमाण होती है वह स्थिति विशेष किस स्थानमे प्राप्त होता है ।

समाधान—उदयावलिके बाहर आवलिके तीसरे भागका जो अन्तिम समय है वहाँ वह स्थिति विशेष प्राप्त होता है ।

यहाँ सूत्रमें जो 'आवलियतिभाग' पदका ग्रहण किया है सो इससे एक समय कम आवलिका एक समय अधिक त्रिभाग लेना चाहिये । और सूत्रमें जो 'तदंतिम' पदका ग्रहण किया है सो इससे तदनन्तर उपरिम स्थिति विशेषका ग्रहण करना चाहिए । अत उदयावलिके बाहर जघन्य निक्षेपप्रमाण स्थितियोंको उल्लघन करके जो स्थिति स्थित है उसके प्राप्त होने तक पूरी एक आपलिप्रमाण अतिस्थापना होती है यह इस सूत्रका भाषार्थ है । अब इससे आगे अतिस्थापना तो अग्रस्थित रहती है किन्तु निक्षेप ही बढ़ता है इस बातका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—



ॐ तेष पर गिकक्षेयो बहू । अहञ्छावणा आवलिया चैव ।

१५ ४ ततो पर गिकक्षेयो बहू, अहञ्छावणा आवलिया चैव ।  
 नाबुद्धसगिकक्षेयो ताव बहू ए विरोहामावदो । अहञ्छावणा आवलिया चैव, भिन्नाभाद  
 पञ्चभाए सतपयद्विस्स पञ्चचादो । सपदि जहण्णगिकक्षेवो समयुत्तरादिक्मेण  
 क्वत्तियसुवर्णि षड्दिग्भावत्तियमेचो होइ सि पुच्छिद् उच्चद्—उद्यसमयप्पुद्धि  
 समयाहियदोआवलियमेचसुवर्णि चैत्तूण तदित्थसमयावद्विद्विदीए अहञ्छावणा गिकक्षेवो  
 च आवलियमेचो होइ । तप्पजंताथ च सञ्चासिमुदयावलियवाहिरद्विदीपमुदयावलिय  
 म्मतर च पदसगिकक्षेवो सि तदोक्कण्णा असंखेजलोगपडिमागीया । त क्वं ?  
 विवक्खिद्विदिपदेसमागोक्कड्ढकण्णमागहारगुणिदासंखेजलोगमागहारेण सत्तिय तत्थेय  
 त्थं चैत्तूण एत्थोवद्विदि । तदो विसेसहाणं जा उदयावलियपरिमसमजो सि । एस  
 कमो चासिमुदयावलियगम्मे चैव पदसगिकक्षेवो तासि द्विदीण पञ्चिदो । एचो उवर्णि  
 णाणत्वं चत्थस्सामो । त जहा—तदर्णतरोवरिमद्विदि दिवज्जुगुणहाणिगुण्णिकड्ढकण्ण  
 मागहारण सत्तिय तत्थेयसत्तमेचमत्थोक्कण्णद्वय होइ । पुत्थो पदमत्तंखेजलोगेहि मागं  
 चत्थोपमागमुदयावलियम्मतर देतो उटए बहूअं देदि । ततो विसेसहाण । एव ताव जाव

ॐ उभसे आगे निष्प बहता है और अतिंस्यापना एक आवलिप्रमाण ही रहती है ।

१५ ४ फिर वसस आग निशेर बहता है, क्योंकि अहञ्छ निशेरके प्राप्त होने तक अपञ्च निशेरस आगे एक एक समय अधिकके क्रमसे निकले ही बुद्धि जानेमें कोई विरोध नहीं आता है । किन्तु अतिस्वापना एक आवलि ही रहती है क्योंकि निर्वाणत प्ररूपस्थाने सत्त्वप्रकृति पर्याप्त है । अपञ्च निष्प एक एक समय बहुत कुछ किन्तु समय आगे जाकर वह एक आवलिप्रमाण होता है उसा पृथक् पर कहत है—उद्य समयसे लेकर एक समय अधिक हो आबिहरिमास्य द्ध न आगे जाकर वही अन्तिम समयमें जो स्थिति अवस्थित है वससके प्राप्त होना अतिस्वापना और निशेर के दोनों ही एक आवलिप्रमाण होत है । वही तत्क वदवाचनिके बाहर जितनी भी स्थितियाँ हैं इन सब स्थितियोंके प्रवेशोंरा वदवाचनिके भीतर ही निशेर होता है । तथा इन स्थितियोंका अपञ्चमय अर्धकानाशोऽपमास्य प्रतिभागके क्रमसे होता है । वह कैसे—विचक्षित स्थितिके क्रम परमाणुओंमें अर्धकर्म-उत्कर्षण मागहारसे गुणित अर्धकपाल शोऽपमास्य मागहारअथ माग देने पर जो एक माग कल्प आते उसका वही अर्धवर्तन होता है । इनमें भी वदय समयमें जा प्रथम प्राप्त होता है वससे वदयवर्षिक अन्तिम समय तक निशेर हीन विरोध हीन इव्य प्राप्त होता है । किन्तु यह कल्प जिन स्थितियोंका इव्य वदवाचनिक भीतर ही निहित होता है वही स्थितियोंके सम्बन्धमें क्या है । अब इससे आगे सामान्यका वगम्यत है । यथा—उत्कर्षण आगे की स्थितिमें उद्गु गृह्यहानिसे गुणित अर्धकर्मका वदयम मागहारना माग देने पर जो एक मागप्रमाण इव्य कल्प आता है उटना वही अर्धकर्मको प्राप्त हुआ इव्य होता है । पुनः इनमें अर्धकपाल शोऽप माग देने पर जो एक मागप्रमाण इव्य प्राप्त होता है वही वदवाचनिक भीतर निहित करता हुआ वदय समयमें बहुत देखा है । वससे आगे

१ ता -या प्रथो तव वदयिस्सवो इति पाठः । २. द्या-या प्रथो-त्थो इति पाठः ।

उदयावलियचरिममभओ त्ति । पुणो तदणंतरोवरिमाए एक्किस्से उदयावलियवाहिरद्विदीए पुव्वोक्कद्विददव्वस्सासखेज्जे भागे णिक्खिणवदि, तत्तो उवरि अइच्छावणाविसए णिक्खेव-संभवाभावादो । एसा परूवणा उदयादो समयाहियदोआवलियमेत्तमुल्लंधिय परदोवद्विदाए द्विदीए कदा । संपहि उदयादो पहुडि दुसमयाहियदोआवलियमेत्तमुल्लंधिय परदो अवद्विदाए वि द्विदीए एसो चैव क्कमो । णवरि तिस्से द्विदीए ओक्कृणादव्वस्स असखेज्ज-लोगपडिभागियन्नागमुदयावलियन्भंतरे पुव्वं व णिक्खिणविय सेसासंखेज्जे भागे घेत्तूणुदयावलियवाहिराणंतरद्विदीए वहुअं णिक्खिणवदि तदणंतरोवरिमद्विदीए तत्तो विसेसहीण सव्वमेव णिक्खिणवदि । सव्वत्थ विसेसहाणिभागहारो पल्लिदोवमासखेज्ज-भागमेत्तो । एवमेगुत्तरकमेण णिक्खेवं वहाविय उवरिमद्विदीणं पि परूवणा एवं चैव अणुगंतव्वा । सव्वत्थ वि ओक्कद्विदद्विदिं मोत्तूण तदणतरहेडिमद्विदिपहुडि आवलियमेत्ता अइच्छावणा घेत्तव्वा । भागहारविसेमो च सव्वत्थ णायव्वो, सव्वासिं द्विदीणमोक्कृण-भागहारस्स सरिसत्ताणुवलंभादो । एवं ताव णेदव्वं जाव उक्कस्सओ णिक्खेवो त्ति । तस्स पमाणाणुगममुवरि कस्सामो । एवं णिच्चाघादेणोक्कृणाए अत्थपदपरूवणा कया । को णिच्चाघादो णाम ? द्विदिसखंडयघादस्साभावो ।

६७७. मपहि वाघादविसयाइच्छावणाए परूवणद्विमिदमाह—

उदयावलिके अन्तिम समयके प्राप्त होने तक विशेषहीन विशेषहीन द्रव्य देता है । फिर इससे आगेकी उदयावलिके बाहरकी एक स्थितिमें पूर्वमें अपकर्षित हुए द्रव्यके असख्यात बहुभागका निक्षेप करता है, क्योंकि इससे आगेकी स्थितियाँ अतिस्थापनासम्बन्धी हैं अतः उनमें निक्षेप नहीं हो सकता । यह प्ररूपणा उदय समयसे लेकर एक समय अधिक दो आवलियोंको उल्लंघन करके आगे जो स्थिति अवस्थित है उसकी अपेक्षासे की है । अब उदय समयसे लेकर दो समय अधिक दो आवलिप्रमाण स्थितियोंको उल्लंघन करके इससे आगे जो स्थिति स्थित है उसकी अपेक्षासे भी यही क्रम जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि उस स्थितिका जो अपकर्षण द्रव्य है उसमें असख्यात लोकका भाग देकर जो एक भाग आवे उसे उदयावलिके भीतर पहलेके समान निक्षेप करके शेष असंख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्यको ग्रहण करके उसमेंसे उदयावलिके बाहर प्रथम स्थितिमें बहुत द्रव्यको निक्षेप करता है और उससे अनन्तरवर्ती आगेकी स्थितिमें विशेषहीन सब द्रव्यका निक्षेप करता है । यहाँ सर्वत्र विशेषहानिका भागहार पल्यका असख्यातवा भागप्रमाण जानना चाहिये । इस प्रकार उत्तरोत्तर एक एक निक्षेपको बढ़ाकर आगेकी स्थितियोंका कथन भी इसी प्रकार जानना चाहिये । मात्र सर्वत्र अपकर्षित स्थितिको छोड़कर उससे नीचे अनन्तरवर्ती स्थितिसे लेकर एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना ग्रहण करनी चाहिये । तथा भागहार-विशेषको भी सर्वत्र जान लेना चाहिये, क्योंकि सब स्थितियोंका अपकर्षण भागहार एक समान नहीं पाया जाता । इस प्रकार उत्कृष्ट निक्षेपके प्राप्त होने तक कथन करना चाहिये । उत्कृष्ट निक्षेपके प्रमाणका विचार आगे करेंगे । इस प्रकार निर्व्याघातरूपसे अपकर्षणके अर्थपदका कथन किया ।

शंका—निर्व्याघात किसे कहते हैं ?

समाधान—स्थितिकाण्डकघातका अभाव निर्व्याघात कहलाता है ।

§ ५०५ अब व्याघातविषयक अतिस्थापनाका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

ॐ वाधादेण अहच्छ्रावणा एवा, जेणावलिषा अविरिषा होइ ।

§ ८०६ वाधादविसया एका अहच्छ्रावणा समवह, जेणावलिषा अविरिषा छम्भ । तिस्से पमाणणिण्णयमिवाणि कस्सामो चि पइण्णाचकमेद ।

ॐ तं जहा ।

§ ८०७ सुगममेद पुच्छावर्ह ।

ॐ द्विविधार्थं करेत्येण स्यादयमागाह्य ।

§ ४०८. अण द्विविधाद करेत्येण द्विविद्विद्वयमागाह्य । तस्य वाधादेणुद्विस्तिया अहच्छ्रावणा आवलिषादिरिषा होइ चि सुत्तयमवंचो । अइ वि सवत्तयेव द्विविद्विद्वय आवलिषादिरिषा अहच्छ्रावणा छम्भ तो वि उक्कस्सद्विद्विद्वयस्तेव गइणमिह कापय्यं, एसा उक्कस्सिया अहच्छ्रावणा वाधादे चि उवसहारवकदसणादो । त पुण उक्कस्सय द्विविद्विद्वय कवडिय ? ज्ञानदिया उक्कस्सिया कम्मद्विदी अंतोकोडाकोठोण उणिया वचियमेधसुक्कस्सय द्विविद्विद्वय । किमेदम्मि द्विविद्विद्वय भागाह्ये पढमसमयप्पुद्वि सवत्तयव उक्कस्सिया अहच्छ्रावणा होइ आहो अत्थि को विससो चि आसंकिय विसेस-संभवपुप्पायणहुसुव्वरिमो मुचोवण्णासो—

ॐ व्याघातकी अपला एक अतिस्थापना होती है, कारण कि वह एक आवलिसे अतिरिक्त होती है ।

§ २ १ व्याघात विषयक एक अतिस्थापना सम्भव है, कारण कि वह एक आवलिसे अतिरिक्त मात्र होती है । अब इसके प्रमाणात्क निरूपण करते हैं इस प्रकार यह प्रतिक्रापावय है ।

ॐ यथा—

§ ८०९ यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

ॐ स्थितिश्च पाठ करते हुए जिसन स्थितिक्रान्तकको ग्रहण किया है ।

§ १ ८ जिसन स्थितिश्च पाठ करते हुए स्थितिक्रान्तकको ग्रहण किया है उसके व्याघातकी अपवा बहूह अतिस्थापना एक आवलिसे अधिक होती है यह इस सूत्रका तात्पर्य है । यद्यपि सर्वत्र ही स्थितिश्च पाठ होत समय एक आवलिसे अधिक अतिस्थापना मात्र होती है तो भी यहाँ वर उक्त स्थितिक्रान्तक ही ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि यह बहूह अतिस्थापना व्याघातके समव होती है इन प्रकार यह वस्तुकार वाक्य देख्य जाय है ।

उक्त—यह बहूह स्थितिक्रान्तक किटना है ।

सुमाधान—जितनी बहूह कर्मन्विति है वसमें अन्त्यकोडाकोठीके कम कर देने पर जो न्विति श्रेय रह वतना बहूह स्थितिक्रान्तक होता है ।

क्या इन स्थितिक्रान्तक ग्रहण करने पर प्रथम समयसे लेकर साधन ही बहूह अतिस्थापना होती है या इनमें कम विद्यमान है इस प्रकारकी व्याख्या करने इसमें जो विशेष सम्भव है हमका ध्यान करने के लिए ध्यायके सूत्रका ध्यान करते हैं—

❀ तत्थ जं पढमसमए उक्कीरदि पदेसगं तस्स पदेसग्गस्स आवल्लियाए अहच्छावणा ।

§ ५००. तत्थ तम्मि द्विदिसंखंडए पारद्वे अंतोमुहुत्तमेत्ती उक्कीरणद्वा होइ तत्तिय-  
मेत्ताओ च द्विदिसंखंडयफालीओ पडिसमयघादणपडिच्चद्वाओ । तत्थ पढमसमए ज  
पदेसग्गमुक्कीरिज्जइ तस्स अहच्छावणा आवल्लियाए परिच्छिण्णपमाणा भवदि । अज्ज वि  
सच्चामि खंडयभावेण गहिदाणं द्विदीणं सुण्णत्ताभावेण वाघादाभावो । तदो  
णिन्वाघादविसया चैव परूवणा एत्थ वि कायच्चा ।

❀ एवं जाव दुचरिमसमयअणुक्किण्णखंडगं ति ।

§ ५१०. एवं ताव पेदव्य जाव दुचरिमसमयाणुक्किण्णयं द्विदिसंखंडयं ति उचं  
होइ । चरिमसमए पुण पाणत्तमत्थि ति पदुप्पायिदुमुवग्गिओ सुत्तविण्णासो—

❀ चरिमसमए जा खंडयस्स अग्गद्विदी तिरस्से अहच्छावणा खंडयं  
समयूणं ।

§ ५११. उक्कस्मद्विदिसंखंडयघादचरिममए जा सा खंडयस्स अग्गद्विदी तिरस्से  
अहच्छावणा समयूणखंडयमेत्ती होइ । कुदो ? तम्मि मए द्विदिसंखंडयंतब्भाविणीणं  
सच्चासिमेव द्विदीणं वाघादेण हेट्ठा घादणदंमणादो । तम्हा एदिस्से द्विदीए ममयूणुकस्स-  
खंडयमेत्ती अहच्छावणा होइ ति सिद्धं । कुदो समयूणत्तं ? अग्गद्विदीए श्लोकद्विज्ज-

\* वहाँ जो प्रदेशाग्र प्रथम समयमें उत्कीर्ण होता है उस प्रदेशाग्रकी अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण होती है ।

- § ५०६. वहाँ उस स्थितिकाण्डकका प्रारम्भ करने पर उत्कीर्ण काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है और प्रति समय होनेवाले घातसे सम्बन्ध रखनेवाली स्थितिकाण्डककी फालियाँ भी उतनी ही होती हैं । उससे प्रथम समयमें जो प्रदेशाग्र उत्कीर्ण होता है उसकी अतिस्थापना एक आवलि-  
प्रमाण होती है, क्योंकि काण्डकरूपसे ग्रहण की गई इन सब स्थितियोंका अभी अभाव नहीं होनेसे इनका व्याघात नहीं होता, इसलिए यहाँ पर भी निर्व्याघातविषयक प्ररूपणा करनी चाहिये ।

\* इस प्रकार अनुत्कीर्ण स्थितिकाण्डकके द्विचरम समयके प्राप्त होने तक जानना चाहिए ।

§ ५१०. इस प्रकार द्विचरम समयवर्ती अनुत्कीर्ण स्थितिकाण्डकके प्राप्त होने तक जानना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है । किन्तु अन्तिम समयमें कुछ भेद है इसलिये उसका कथन करनेके लिये आगेके सूत्रका निश्चय करते हैं—

\* अन्तिम समयमें काण्डककी जो अग्रस्थिति है उसकी अतिस्थापना एक समय कम काण्डकप्रमाण होती है ।

§ ५११. उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकघातके अन्तिम समयमें जो काण्डककी अग्रस्थिति होती है उसकी अतिस्थापना एक समयकम काण्डकप्रमाण होती है, क्योंकि उस अन्तिम समयमें स्थिति-  
काण्डकके भीतर आई हुई सभी स्थितियोंका व्याघातके कारण घात देखा जाता है, इसलिये इस

⊗ वाधादेण अर्धच्छावणा एका, जेषावलिप्या अदिरिचा होइ ।

१५६ वाधादविमया एका अर्धच्छावणा समवद्, जेषावलिप्या अदिरिचा  
लम्पद् । तिस्र पमाणणिणयमिदापि कस्सामो चि पइण्णावकमेदं ।

⊗ तं जहा ।

१५०७ सुगममेद पुण्णवर्द्ध ।

⊗ द्विविधावं करेतैय कावयमागाइदं ।

१५०८ जेण द्विविधाद करेतैय द्विदिसवयमागाइद । एस्स वाधावेणुक्कस्सिया  
अर्धच्छावणा आबलिप्यादिरिचा होइ चि सुप्तत्पसबंधो । अइ वि सन्वत्वेव द्विदिसवय  
आबलिप्यादिरिचा अर्धच्छावणा लम्पद् तो वि उक्कस्सद्विदिसवयस्सव गहणमिह कायन्वं,  
एसा उक्कस्सिया अर्धच्छावणा वाधादे चि उवर्संहारवकदसणादो । त पुण उक्कस्सप  
द्विदिसवयं केवडिय ? चावदिया उक्कस्सिया कम्मद्विदी अंतोकोडाकोडोण उजिया  
तथियमेणमुत्तस्सय द्विदिसवयं । किमेदम्मि द्विदिसवय आगाइदे पढमसमयप्पहुकि  
मन्वत्थव उक्कस्सिया अर्धच्छावणा होइ आहो अत्थि को बिसेसो चि आसंकिप बिसेस-  
संभवपुत्तुपायणइसुवरिमो सुषोवणासो—

⊗ व्यापाठकी अपेक्षा एक अतिस्थापना होती है, कारण कि वह एक आबलिसे  
अतिरिक्त होती है ।

१५६ वाधाद विपक पठ अतिस्थापना सम्भव है, कारण कि वह एक आबलिसे अतिरिक्त  
मात्र होती है । अब उसके प्रमाणका निरूपण करते हैं इस प्रकार वह प्रमाणवाचक है ।

⊗ यथा—

१५०७ यह पृथ्वासुत्र सुगम है ।

⊗ स्थितिका घात करते हुए त्रिमने स्थितिकाण्डकको ग्रहण किया है ।

१५८ त्रिमने स्थितिका घात करते हुए स्थितिकाण्डकको ग्रहण किया है इसके व्यापाठ-  
की अपेक्षा अर्ध अतिस्थापना एक आबलिसे अधिक होती है यह इस सूत्रका तात्पर्य है । यद्यपि  
सर्वत्र ही स्थितिका घात होत समव एक आबलिसे अधिक अतिस्थापना मात्र होती है तो भी  
यहाँ पर अर्ध स्थितिकाण्डक ही ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि यह अर्ध अतिस्थापना  
व्यापाठके समव होती है इन प्रकार यह वासंहार वाच्य वेत्त ज्ञान है ।

शंका—यह अर्ध स्थितिकाण्डक कितना है ?

समाधान—त्रिमने अर्ध अतिस्थापना है इसमें अर्ध अतिस्थापनाको केवल कर देन पर जो  
स्थिति रोप रहे वतना अर्ध स्थितिकाण्डक होता है ।

क्या इस स्थितिकाण्डकके ग्रहण करने पर प्रथम समयमें सेकर सर्वत्र ही अर्ध अति-  
स्थापना होती है या इसमें कोई विशेषता है इस प्रकारकी धारणा करके इसमें भी विशेष सम्भव  
है अर्ध अतिस्थापना करने के लिए अर्धके सूत्रका अर्थग्रहण करना है—

❀ तत्थ जं पढमसमए उक्कीरदि पदेसग्गं तस्स पदेसग्गस्स आवलियाए अइच्छावणा ।

§ ५०९. तत्थ तम्मि द्विदिसंखण्डे पाग्गे अंतोमुहुत्तमेत्ती उक्कीरणद्धा होइ तत्तिय-  
मेत्ताओ च द्विदिसंखण्डफालीओ पडिसमयघाटणपडिवद्धाओ । तत्थ पढमसमए ज  
पदेसग्गमुक्कीरिज्जइ तस्स अइच्छावणा आवलियाए परिच्छिण्णपमाणा भवदि । अज्ज वि  
सञ्चाग्गि संखण्डभावेण गहिटाणं द्विदीणं सुण्णत्ताभावेण वाघाटाभावादे । तदो  
णिन्वाघाटविसया चैव परूवणा एत्थ वि कायव्वा ।

❀ एवं जाव दुचरिमसमयअणुक्किण्णखंडं ति ।

§ ५१०. एवं ताव जेदव्वं जाव दुचरिमसमयाणुक्किण्णयं द्विदिसंखंडं ति उच्च  
होइ । चरिमसमए पुण णाणत्तमत्थि ति पदुप्पायिदुमुवरिगो सुत्तविण्णासो—

❀ चरिमसमए जा खंडयस्स अग्गद्विदी तिस्से अइच्छावणा खंडयं  
समयूणं ।

§ ५११. उक्कस्मद्विदिसंखण्डघाटचरिमसमए जा सा खंडयस्स अग्गद्विदी तिस्से  
अइच्छावणा समयूणखंडयमेत्ती होइ । कुदो ? तम्मि समए द्विदिसंखण्डतत्तभाविणीणं  
सञ्चासिमेव द्विदीणं वाघादेण हेट्ठा घाटणदंमणादे । तम्हा एदिस्से द्विदीए समयूणुक्कस्स-  
खंडयमेत्ती अइच्छावणा होइ ति सिद्धं । कुदो समयूणत्त ? अग्गद्विदीए ओक्कद्विज्ज-

\* वहाँ जो प्रदेशाग्र प्रथम समयमें उत्कीर्ण होता है उस प्रदेशाग्रकी अतिस्थापना  
एक आवलिप्रमाण होती है ।

§ ५०९. वहाँ उस स्थितिकाण्डकका प्रारम्भ करने पर उत्कीरण काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण  
होता है और प्रति समय होनेवाले घातसे सम्बन्ध रखनेवाली स्थितिकाण्डककी फालियाँ भी उतनी  
ही होती हैं । उसमेंसे प्रथम समयमें जो प्रदेशाग्र उत्कीर्ण होता है उसकी अतिस्थापना एक आवलि-  
प्रमाण होती है, क्योंकि काण्डकरूपसे ग्रहण की गई इन सब स्थितियोंका अभी अभाव नहीं होनेसे  
इनका व्याघात नहीं होता, इसलिए वहाँ पर भी निर्व्याघातविषयक प्ररूपणा करनी चाहिये ।

\* इस प्रकार अनुत्कीर्ण स्थितिकाण्डकके द्विचरम समयके प्राप्त होने तक जानना  
चाहिए ।

§ ५१०. इस प्रकार द्विचरम समयवर्ती अनुत्कीर्ण स्थितिकाण्डकके प्राप्त होने तक जानना  
चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है । किन्तु अन्तिम समयमें कुछ भेद है इसलिये उसका कथन  
करनेके लिये आगेके सूत्रका निक्षेप करते हैं—

\* अन्तिम समयमें काण्डककी जो अग्रस्थिति है उसकी अतिस्थापना एक समय  
कम काण्डकप्रमाण होती है ।

§ ५११. उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकघातके अन्तिम समयमें जो काण्डककी अग्रस्थिति होती है  
उसकी अतिस्थापना एक समयकम काण्डकप्रमाण होती है, क्योंकि उस अन्तिम समयमें स्थिति-  
काण्डकके भीतर आई हुई सभी स्थितियोंका व्याघातके कारण घात देखा जाता है, इसलिये इस

माणीए अह्जावजावहिम्मावदसणादो ।

⊙ एसा उच्छस्सिया अह्ण्णावया वाधादे ।

§ ५१२ एसा अणतरपरुविदा समयुणुद्धस्सहिदिसंखयमेची उच्छस्साह्ण्णावया वापादे हिदिसखयविसए येव होइ, आणजत्थे पि उच होइ ।

स्वितिकी एक समयकम उत्कृष्ट अणुद्धक्यमात्र अतिस्वापना होती है यह सिद्ध हुआ ।

प्रश्न—इस अतिस्वापनाको एक समय कम क्यों कहा ?

समाधान—क्योंकि अपकर्षको प्राप्त होनेवाली अमस्विति अतिस्वपनासे बहिर्भूत होती जाती है ।

⊙ यह उत्कृष्ट अतिस्वापना व्यापातके होनेपर होती है ।

§ ५१० यह जो पहले एक समयकम उत्कृष्ट स्वितिक्यप्रमात्र उत्कृष्ट अतिस्वापना नहीं है वह स्वितिक्यप्रकल्पिक व्यापातके होनेपर ही होती है, अन्यत्र नहीं होती यह एक अमनात्र व्यत्यय है ।

विशेषार्थ—यहाँ स्वितिसंक्रमके विषयमें विचार करते हुए सर्व प्रथम स्वितिक्यप्रकर्षके

स्वरूपका निर्देश किया गया है । स्वितिके घटनेको स्वितिक्यप्रकर्ष कहते हैं । यह स्विति अपकर्षक अम्यापात और व्यापातके भेदसे दो प्रकारका है । स्वितिक्यप्रकृत पातके बिना जो स्विति घटती है वह अम्यापातविषयक स्वितिक्यप्रकर्ष है और स्वितिक्यप्रकृतपातके द्वारा इसके अन्तिम समयमें जो स्विति घटती है वह व्यापातविषयक स्वितिक्यप्रकर्ष है । स्विति उत्कीर्यकालक वरानि अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है तथापि यह व्यापातविषयक स्विति अपकर्षक घटके अन्तिम समयमें ही प्राप्त होय है, क्योंकि स्वितिक्यप्रकृतप्रमात्र ही सम्पूर्ण स्वितिक्य पात अन्तिम समयमें ही देखा जाता है । अतएव स्वितिक्यप्रकृतके उत्कीर्यकालके अन्तिम समयके सिवा शेष सब समयमें जो अपकर्षक होता है उसे अम्यापातविषयक स्वितिक्यप्रकर्षकालका कहिये । अब इन दोनों व्यवस्थायोंमें होनेवाले स्वितिक्यप्रकर्षमें निश्चय और अतिस्वापनाका प्रमाण कहाते हैं । अल्पित या अपरचित इन्द्रकी प्रकृत करनेके योग्य जिन स्वितियोंमें अल्पित या अपरचित इन्द्रका पतन होता है इनकी निश्चय संज्ञा है । तथा अल्पित और अपरचितको प्राप्त होनेवाली स्वितियों और निश्चयके मध्यमें स्थित जिन स्वितियोंमें अल्पित या अपरचित इन्द्रका निश्चय नहीं होता है उन स्वितियोंकी अतिस्वापना संज्ञा है । अम्यापात विषयक अपकर्षके समक अल्पित निश्चय एक समय कम अल्पित एक समय अधिक प्रमाण प्रमाण है । यह निश्चय व्यापकसिद्धे परित्तन प्रथम समयवर्ती स्वितिक्य अपकर्ष होने पर प्राप्त होता है । अल्पित निश्चय एक समय अधिक दो व्यापकसिद्धे मूल उत्कृष्ट स्वितिक्यप्रमाण है क्योंकि उत्कृष्ट स्वितिक्य कथ करके व्यापकसिद्धे वाह अमस्वितिक्य अपकर्ष होने पर उत्कृष्टमात्र उत्कृष्ट निश्चय पदा जाता है । इसी प्रकार प्रकृतमें अल्पित अतिस्वापना एक समय कम व्यापकसिद्धे दो बड़े वीम अगमप्रमाण है, क्योंकि व्यापकसिद्धे परित्तन प्रथम समयवर्ती स्वितिक्य अपकर्ष होने पर एक प्रमाण अतिस्वापना देखा जाती है । तथा अम्यापातविषयक उत्कृष्ट अतिस्वापना एक व्यापकसिद्धे प्रमाण है, क्योंकि व्यापकसिद्धे अमर एक समय कम व्यापकसिद्धे प्रमाणसे अल्प अगो जितनी भी स्वितियोंका अम्यापातविषयक अपकर्ष होता है वहाँ सर्वत्र एक व्यापकसिद्धे अतिस्वापना देखा जाती है । मात्र स्वितिक्यप्रकृतपातके समय अल्पित अतिस्वापना सर्वत्र एक व्यापकसिद्धे होती है क्योंकि स्वितिक्यप्रकृतपातके समय जितनी स्वितियोंका अपकर्ष

६५१३. एवमेदं परुविय गंपहि जहण्णुक्कस्सणिक्खेवाइच्छावणादिपदानमप्पा-  
वहुअणिण्णयं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ तदो सच्चत्वोवो जहएणओ णिक्खेवो ।

६५१४. आवलियतिभागपमाणत्तादो ।

❀ जहएिणया अइच्छावणा दुसमयूणा दुगुणा ।

६५१५. जहण्णाइच्छावणा णाम आवलियवे-तिभागा । तदो तत्तिभागादो  
वे-तिभागाण दुगुणत्तं होउ णाम, विरोहाभावादो । कथं पुण दुसमयूणत्तं ? उच्चदे—  
आवलिया णाम कदजुम्मसंसा । तदो तिभागं सुद्धं ण एदि त्ति रूवमवणिय तिभागो  
घेत्तवो, तत्थावणिदरूवेण सह तिभागो जहण्णणिक्खेवो वे-तिभागा अइच्छावणा ।  
एदेण कारणेण समयाहियतिभागे दुगुणिदे जहण्णाइच्छावणादो दुस्साहियमुप्पज्जइ ।  
तम्हा दुग्मयूणा दुगुणा त्ति सुत्ते वुत्तं ।

होता है, उन सम्बन्धी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण उत्कीरण कालके उपान्त्य समय तक अपकर्षित होनेवाले  
द्रव्यका निक्षेप अपने नीचेकी एक आवलिप्रमाण स्थितियोंको अतिस्थापित कर जेप सब स्थितियोंमें  
होता है । तथा उत्कृष्ट अतिस्थापना एक समय कम काण्डकप्रमाण होती है जो कि स्थितिकाण्डककी  
अप्र स्थितिकी जाननी चाहिये, क्योंकि जिस समय स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिका पतन होता  
है उस समय काण्डकके अन्तर्गत स्थित स्थितियोंमें अपवर्षित होनेवाले द्रव्यका निक्षेप होना सम्भव  
नहीं है । कारण कि उस समय उनका अभाव हो जाता है । इस प्रकार निर्व्याघात और व्याघात-  
विषयक निक्षेप और अतिस्थापना कहाँ कितनी प्राप्त होती है इसका संक्षेपमें विचार किया ।

६५१३ इस प्रकार अपकर्षणका कथन करके अब जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेप तथा जघन्य  
और उत्कृष्ट अतिस्थापना आदि पदोंके अल्पबहुत्वका निर्णय करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

\* जघन्य निक्षेप सबसे स्तोके है ।

६५१४ क्योंकि वह आवलिके तीसरे भागप्रमाण है ।

\* उससे जघन्य अतिस्थापना दो समय कम दूनी है ।

६५१५ शंका—जघन्य अतिस्थापना एक आवलिके दो बटे तीन भागप्रमाण होती है,  
इसलिये एक आवलिके तीसरे भागसे दो बटे तीन भाग दूना भले ही रहा आवे, क्योंकि इसमें  
कोई विरोध नहीं है । किन्तु वह दूनेसे दो समय कम कैसे हो सकती है ?

समाधान—आवलिकी परिगणना कृतयुग्म सख्यामें की गई है, इसलिये उसका शुद्ध  
तीसरा भाग नहीं आता है, अतः आवलिमेंसे एक क्रम करके उसका तीसरा भाग ग्रहण करना  
चाहिये । अब यहाँ आवलिमेंसे जो एक क्रम किया गया है उसको त्रिभागमें मिला देने पर जघन्य  
निक्षेप होता है और एक क्रम आवलिका दो बटे तीन भागप्रमाण अतिस्थापना होती है । इस  
कारणसे एक समय अधिक त्रिभागको दूना करने पर जघन्य अतिस्थापनासे यह संख्या दो अधिक  
पाई जाती है । इसी कारण सूत्रमें निक्षेपकी अपेक्षा अतिस्थापनाको दो समय कम दूनी कहा है ।

उदाहरण—आवलि १६,

१५ - १ = १५, १५ - ३ = ५, ५ + १ = ६ जघन्य निक्षेप ।

१६ - ६ = १० जघन्य अतिस्थापना, या ६ + २ = १२ - २ = १० जघन्य अतिस्थापना ।



⊗ विष्वापादेण उक्त्स्सिया अङ्गुष्ठावथा विसेसाहिया ।

१५१६ क्वचियमेत्तेण ? समयाहियदुभागमेत्तेण ।

⊗ वापादेश उक्त्स्सिया अङ्गुष्ठावथा असत्तेज्जगुष्ठा ।

१५१७ इदो ! अंतोकोडाकोडीपरिहीणकम्मट्टिदिपमाणत्तादो ।

⊗ उक्त्स्सय द्विवित्थयं विसेसाहिय ।

१५१८ अगाट्टिदीप वि एत्थ प्रपेसदसणादो ।

⊗ उक्त्स्सओ पिक्खेओ विसेसाहियो ।

१५१९ इदो ! उक्त्स्सट्टिदिं पथिय वपावत्थिय बोत्ताविय अगाट्टिदिमोक्कट्टिठणा

वत्थियमेत्तमङ्गुष्ठाविय उदयपञ्जत णिक्खित्तमाणत्स समयाहियदोआवत्थियूणकम्म  
ट्टिदिमेत्तुक्त्स्सणिक्खेवसमवोवलमादो ।

⊗ उक्त्स्सओ द्विवियओ विसेसाहियो ।

इस वाराहणसे स्पष्ट हो जाता है कि उचन्य निष्कणको हृत करने पर ओ १२ प्राप्त हुआ है  
इसमेंसे २ कम करने पर अवन्य अतिस्थापना होती है ।

⊗ उससे निष्पापातसे प्राप्त हुई उत्कृष्ट अतिस्थापना विशेष अधिक है ।

१५१६ कितनी अधिक है ? अवन्य अतिस्थापनाके द्वितीय भाग अर्थात् आपमें एक  
समबके बोध हेतु पर कितना प्रमाण हो जतनी अधिक है ।

वाराहण—अवन्य अतिस्थापना १, उत्कृष्ट आपा ४,

$१+१=४$ ,  $१०+६=१६$  उत्कृष्ट अतिस्थापना ।

⊗ उससे व्यापातवियपक उत्कृष्ट अतिस्थापना अस्तव्यातगुणी है ।

१५१७ क्योंकि इसका प्रमाण अस्तव्यातव्योडाकोडीकम कर्मस्वित्तिप्रमाण है ।

वाराहण—अस्तव्यात १५६,

$१६ \times १५६ = ४$  ६६ व्यापातसे प्राप्त हुई उत्कृष्ट अतिस्थापना ।

⊗ उससे उत्कृष्ट स्वित्तिव्यञ्जक विशेष अधिक है ।

१५१८ क्योंकि इसमें अमस्वित्तिव्य मी अमत्तमैव देखा जाता है ।

वाराहण—४ ६६+१ अमस्वित्ति = ४ ६७ उत्कृष्ट स्वित्तिव्यञ्जक ।

⊗ उससे उत्कृष्ट निष्प विज्ञाप अधिक है ।

१५१९ क्योंकि उत्कृष्ट स्वित्तिव्य बोधकर और वन्धावत्थिओ विताकर फिर अमस्वित्तिव्य  
अपकर्षण करके अतिस्थापनाके एक आवत्थिओ बोधकर वन्य पर्यन्त वस अपकर्षण इत्यन्तु निष्प  
करणात्त हीवके उत्कृष्ट निष्पेवका प्रमाण एक समब अधिक हो आवत्थिसे न्यून कर्मस्वित्तिप्रमाण  
अवश्य होय है ।

वाराहण—कर्मस्वित्ति ४८, एक समब अधिक हो आवत्थि ३३,

$४८ - ३३ = १५$  उत्कृष्ट निष्पेव ।

⊗ उससे उत्कृष्ट स्वित्तिवन्ध विशेष अधिक है ।

§ ५२०. समयाहियदोआवलयमेत्तद्विदीणमेत्थ पवेमदंमणादो ।

§ ५२१. एवमोक्कट्टणायंक्रमस्स अट्टपदपस्स्वणा ममत्ता । संपहि उक्कट्टणायंक्रमस्स अट्टपदपस्स्वणद्वमुत्तरमुत्तायवारी—

❁ जाओ वज्झति द्विदीओ तासिं द्विदीणं पुच्चणिवद्वद्विदिमहिकिच्च णिच्चाघादेण उक्कट्टणाए अट्टच्छावणा आवलिया ।

§ ५२२. एदम्म सुत्तम्म अत्यो पस्विज्जदं । त जहा—उक्कट्टणा णाम क्रम्मपदेमाणं पुच्चिल्लद्विदीदो अह्णिणवचंयमंघेण द्विदिवट्टावणं । सा पुण दुविहा—णिच्चाघादविमया वाघादविमया चेदि । जत्थावलयमेत्ताइच्छावणाए आवलयियमखेज्जदिभागादिणिकसेव-पडिवट्टाए पडिघादो णत्थि तम्मि णिच्चाघादभावो णाम भवदि, आवलयियमेत्ताइच्छावणाए ताग्गिणिकसेवमहगदाए पडिघादम्म वाघादत्तेणेह विवक्खिसयत्तादो । क्रम्मि विमए एवंविहो विघादो णत्थि ? उच्चदं—जत्थ संतंक्रम्मादो उवरि समउत्तरादिक्रमेण द्विदिवंधो वट्टमाणो आवलयियमखेज्जभागमहिदावलयियमेत्तो वट्टिओ होउ तत्तो पट्टुडि उवरि मच्चत्थेव णिच्चाघादविमओ जाव उक्कट्टणद्विदिवंधो ति । एवविहणिच्चाघादपस्स्वणापडिवट्टमेदं सुत्तं । तत्थ जाओ वज्झति द्विदीओ ताग्गिमुवरि पुच्चणिवद्वद्विदी उक्कट्टिज्जदि । निम्से

§ ५२० क्यों कि उक्कट्ट निक्षेपके प्रमाणमे एक समय अधिक दो आवलिप्रमाण स्थितियोंकी इममे वृद्धि देखी जाती है ।

उदाहरण—उक्कट्ट निक्षेप ४७६५, एक समय अधिक दो आयलि ३३, ४७६५ + ३३ = ४८०० उक्कट्ट स्थितिवन्ध ।

§ ५२१ इम प्रकार अर्पणके संक्रमके अर्थपट्टवा चथन समाप्त हुआ । अत्र उत्कर्षण सक्रमके अर्थपट्टका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

\* जो स्थितियां बंधती हैं उन स्थितियोंकी, पूर्वमें बंधी हुई स्थितियोंका निर्व्याघातविषयक उत्कर्षण होने पर, अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण होती है ।

§ ५२२ अत्र इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । यथा—नयीन बन्धके सम्बन्धमे पूर्वकी स्थितिमेने कर्मपरमाणुओंकी स्थितिका घटाना उत्कर्षण है । उनके दो भेद हैं—निर्व्याघातविषयक आर व्याघातविषयक । जहाँ आवलिके अमख्यातवे भाग आदि निक्षेपसे सम्बन्ध रखनेवाली एक आयलिप्रमाण अतिस्थापनाका प्रतिघात नहीं होता वहाँ निर्व्याघातविषयक अतिस्थापना होती है, क्योंकि उस प्रकारके निक्षेपके साथ प्राप्त हुई एक आयलिप्रमाण अतिस्थापनाका प्रतिघात ही यहाँ व्याघातरूपसे विवक्षित है ।

शंका—इस प्रकारका व्याघात कहाँ नहीं होता ?

समाधान—जहाँ सत्कर्मसे अत्र एक समय अधिक आदिके क्रमसे स्थितिवन्ध वृद्धिको प्राप्त होता हुआ एक आवलिके अमख्यातवे भागसे युक्त एक आयलि बढ जाता है वहाँसे लेकर उक्कट्ट स्थितिवन्धके प्राप्त होने तक सर्वत्र ही निर्व्याघातविषयक उत्कर्षण होता है । इम प्रकारकी निर्व्याघातविषयक प्ररूपणामे सम्बन्ध रखनेवाला यह सूत्र है ।

⊗ शिखाघादेण उद्धस्सिया अइच्छावथा विसेसाहिया ।

१५१६ केचित्तियमेत्तेण ! समयाहियदुमागमेत्तेण ।

⊗ भाघादेण उद्धस्सिया अइच्छावथा असंखेत्तशुया ।

१५१७ हुदो ! अंतोकोडाकोडीपरिहीणकम्महुदिपमाणघादो ।

⊗ उद्धस्सय हुदिविखय विसेसाहिय ।

१५१८ अगाहुदीए वि एत्व प्रवसदसणादो ।

⊗ उद्धस्सओ शिखेओ विसेसाहियो ।

१५१९, हुदो ! उद्धस्सहुदिं वणिय वधावणिय वात्ताविय अगाहुदिमोक्कहुत्तणा

वसियमेत्तमइच्छाविय उदयपज्जंत गिक्खिषमाणस्स समयाहियदोआवस्सियूणकम्म हुदिमपुक्कस्सणिकखेवसमवोवलमादो ।

⊗ उद्धस्सओ हुदिवधो विसेसाहियो ।

इस वृत्तारणसे स्पष्ट हो जाता है कि अथर्व निक्षेपको बूना करने पर जो १२ प्रात हुष्मा दे वसमेंसे २ कम करने पर अथर्व्य अतिस्थापना होती है ।

⊗ उससे निष्पापातसे प्राप्त हुई उत्कृष्ट अतिस्थापना विज्ञेय अधिक है ।

१५१६ किंतनी अधिक है ? अथर्व्य अतिस्थापनाके द्वितीय भाग अर्थात् आधेमें एक समयके आठ होने पर किंतना प्रमाण हो उतनी अधिक है ।

वृत्तारण—अथर्व्य अतिस्थापना १ ; अथर्व्य आधा २;

$२ + १ = ३$ ,  $१० + ६ = १६$  उत्कृष्ट अतिस्थापना ।

⊗ उससे व्यापातविषयक उत्कृष्ट अतिस्थापना असंख्यातशुभी है ।

१५१७, क्योंकि इसका प्रमाण अन्तकोडाकोडीकम कर्मस्वित्तिप्रमाण है ।

वृत्तारण—असंख्यात २३६;

$१६ \times २३६ = ४६६$  व्यापातसे प्राप्त हुई उत्कृष्ट अतिस्थापना ।

⊗ उससे उत्कृष्ट स्वित्तिअण्डक विज्ञेय अधिक है ।

१५१८, क्योंकि इसमें अपस्वित्ति भी अन्तर्गत देला जाता है ।

वृत्तारण— $४६६ + १$  अपस्विति =  $४६७$  उत्कृष्ट स्वित्तिअण्डक ।

⊗ उससे उत्कृष्ट निक्षेय विज्ञेय अधिक है ।

१५१९, क्योंकि उत्कृष्ट स्वित्तिको अथर्व्य और अथर्व्यद्विको विनाकर फिर अपस्वित्तिवा अपकर्षण करके अतिस्थापनाकी एक आवृत्तिको दोहर कर पर्वतत वस अपकर्षित इन्वय मिश्रण करनेवाले हीनके उत्कृष्ट निक्षेपका प्रमाण एक समय अधिक हो आवृत्तिसे न्यून कर्मस्वित्तिप्रमाण अथर्व्य होता है ।

वृत्तारण—कर्मस्विति ४८, एक समय अधिक हो अथर्व्य ३३;

$४८ - ३३ = १५$  उत्कृष्ट निक्षेप ।

⊗ उससे उत्कृष्ट स्वित्तिअण्डक विज्ञेय अधिक है ।

§ ५२०. समयाहियदोआवलियमेत्तद्विदीणमेत्थ पवेसदंसणादो ।

§ ५२१. एवमोकड्डणासंकमस्स अट्टपदपरूवणा समत्ता । संपहि उक्कड्डणासंकमस्स

अट्टपदपरूवणद्वमुत्तरसु चावयारो—

❀ जाओ वज्झंति द्विदीओ तासिं द्विदीणं पुव्वणिवद्धद्विदिमहिकिच्च णिव्वाघादेण उक्कड्डणाए अट्टच्छावणा आवलिया ।

§ ५२२. एदस्स सुत्तस्स अत्थो परुविज्जदे । तं जहा—उक्कड्डणा णाम कम्मपदेसाणं पुव्विल्लद्विदीदो अहिणववंधसबंधेण द्विदिवट्ठावणं । सा पुण दुविहा—णिव्वाघादविसया वाघादविसया चेदि । जत्थावलियमेत्ताइच्छावणाए आवलियअसखेज्जदिभागादिणिवखेव-पडिचद्व्वाए पडिघादो णत्थि तम्मि णिव्वाघादभावो णाम भवदि, आवलियमेत्ताइच्छावणाए तारिसणिवखेवसहगटाए पडिघादस्स वाघादत्तेणेह विवक्खियत्तादो । कम्मि विसए एवंविहो विघादो णत्थि ? उच्चदे—जत्थ सतकम्मादो उवरि समउत्तरादिकमेण द्विदिवंधो वट्ठमाणो आवलियासखेज्जभागसहिदावलियमेत्तो वट्ठिओ होइ तत्तो पहुडि उवरि सव्वत्थेव णिव्वाघादविसओ जाव उक्कस्सद्विदिवंधो त्ति । एवंविहणिव्वाघादपरूवणापडिचद्व्वमेदं सुत्तं । तत्थ जाओ वज्झंति द्विदीओ तासिमुवरि पुव्वणिवद्धद्विदी उक्कड्डिज्जदि । तिस्से

§ ५२० क्यों कि उत्कृष्ट निक्षेपके प्रमाणमे एक समय अधिक दो आवलिप्रमाण स्थितियोंकी इसमे वृद्धि देखी जाती है ।

उदाहरण—उत्कृष्ट निक्षेप ४७६७, एक समय अधिक दो आवलि ३३, ४७६७ + ३३ = ४८०० उत्कृष्ट स्थितिवन्ध ।

§ ५२१ इस प्रकार अपरूपेण संक्रमके अर्थपदका कथन समाप्त हुआ । अब उत्कर्षण सक्रमके अर्थपदका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

\* जो स्थितियां वधती हैं उन स्थितियोंकी, पूर्वमें बंधी हुई स्थितियोंका निर्व्याघातविषयक उत्कर्षण होने पर, अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण होती है ।

§ ५२२ अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । यथा—नवीन बन्धके सम्बन्धसे पूर्वकी स्थितिमेंसे कर्मपरमाणुओंकी स्थितिका घटाना उत्कर्षण है । उसके दो भेद हैं—निर्व्याघातविषयक और व्याघातविषयक । जहाँ आवलिके असख्यातवें भाग आदि निक्षेपसे सम्बन्ध रखनेवाली एक आवलिप्रमाण अतिस्थापनाका प्रतिघात नहीं होता वहाँ निर्व्याघातविषयक अतिस्थापना होती है, क्योंकि उस प्रकारके निक्षेपके साथ प्राप्त हुई एक आवलिप्रमाण अतिस्थापनाका प्रतिघात ही यहाँ व्याघातरूपसे विवक्षित है ।

शका—इस प्रकारका व्याघात कहीं नहीं होता ?

समाधान—जहाँ सत्कर्मसे ऊपर एक समय अधिक आदिके क्रमसे स्थितिवन्ध वृद्धिको प्राप्त होता हुआ एक आवलिके असख्यातवें भागसे युक्त एक आवलि बढ़ जाता है वहाँसे लेकर उत्कृष्ट स्थितिवन्धके प्राप्त होने तक सर्वत्र ही निर्व्याघातविषयक उत्कर्षण होता है । इस प्रकारकी निर्व्याघातविषयक प्ररूपणासे सम्बन्ध रखनेवाला यह सूत्र है ।

उक्तवृत्तमाणाए आवलियमेती अद्रुष्ठावणा इह । सपहि षट्सुवत्सुसि गिष्णयकरणाद्  
 मुदाहरण बध्दस्सामो । तस्य ताव पुत्रगिण्डुद्विदी नाम सचरिसागरोवमकोडाकोडीप  
 बंधपामोम्मा अतोकोडाकोडीमेघदाहद्विदी घसम्भा । तिसस उषरि समयुत्तर-दुसमयुत्तरादि  
 क्रमभ बधमाभस्स जाव आवलिया अण्णेगा थ आवलियाए अमखे मागो ण गदो ताव  
 तिससे द्विदीए अरिमभिसयस्स पपदुकडुणा ण समवद्, वापादविसए गिष्वापादपरूवणाए  
 अपनवारदो । तम्हा आवलियाद्रुष्ठावणाए सदससुअमागमचद्रहण्णभिक्षलेवे थ  
 पडिबुण्णे सति भिष्वापादेणुकडुणा पारभद् । एत्तो उषरि अबद्धिदाहद्विदीए गिष्वापाद  
 भिक्षुवहुत्ती बधम्भा जावप्पणो उक्खस्सगिण्डुवे चि । एवं कद् दाहद्विदीए गिष्वापाद  
 द्रहण्णाद्रुष्ठावणसमयुणअहण्णभिक्षलेवेहि ए उणससुअसागरोवमकोडाकोडिमचाणि  
 भिक्षुवहुत्तापाणि दाहद्विदिअरिमभिसयस्स सुत्ताणि भवति । एवमवदाहद्विदि दुषरिम-  
 गिसेयस्स वि बधम्भ । णवरि अणंतरादीभिक्षुलेवहुत्ताणेहिंतो एत्यतपणिक्षुलेवहुत्तापाणि  
 समयुत्तराणि होंति । एवं सेसाससुहेद्धिमद्विदीणं पारुक्कं पिरुमणं काठ्ठम समयाहियक्रमेण  
 गिष्वापादपाणमुप्पत्तो वधम्भा जाव सम्भमताकोडाकोडिमोपरिय आवाहात्मन्तर  
 समयाहियावलिपमचामोदरिदुर्णं द्विद्विदि चि । एदिससे द्विदीए गिष्वापादद्रहण्णा-

एक सूत्रक यह मात्र है कि ना स्थितियों में पती हैं उनमें बनी हुए स्थितियोंका अन्वय  
 होता है और अन्वयको प्राप्त हुई वत स्थितिमें एक आपत्तिप्रमाण अतिस्थापना इष्टी है । अब  
 इती अर्थका निरूप करके देखे वदाहरण बध्दमाते हैं—एकदम पूर्वमें बनी हुई स्थितिसे सचर  
 कोडाकोडी सगरके बन्ध योग्य अन्तःकोडाकोडी प्रमाण दाहस्थिति बनी चाहिये । इस स्थितिसे  
 अरु क्रम करनेवाले जीवक एक समय अधिक और दो समय अधिक आदिके क्रमसे वत एक  
 एक आपत्ति आर एक आपत्तिअ अंतसंज्ञा भाग मही बंध लेता है वत एक वत स्थितिक  
 अन्तिम निरूपक्य प्रकृत अन्वय सम्भव नहीं है क्योंकि अन्वयविषयक प्रकृतदममें निष्ठापात  
 विषयक प्रकृत्या नहीं हो सकती । इसलिये एक आपत्तिप्रमाण अतिस्थापना और वसके  
 अंतस्थापतेमें अन्वयविषय अन्वय निरूपके परिपूर्ण हो जाने पर ही निष्ठापातविषयक अन्वयविषय  
 प्रारम्भ होता है । इससे आगे अतिस्थापनाके अतिस्थित रहते हुए अपने अन्वय विरुद्धी प्रति  
 होने तक निरन्तर क्रमसे निरूपकी वृत्तक क्रम करना चाहिये । वसा करने पर दाहस्थितिक  
 अन्तिम निरूपके, दाहस्थिति, निष्ठापातविषयक अन्वय अतिस्थापना और एक समय क्रम अन्वय  
 निष्ठा इन तीन परिस्थितियोंमें सचर कोडाकोडी सगरप्रमाण निष्ठास्व न प्राप्त होत हैं । इसी  
 प्रकार दाहस्थितिके अन्तरम निरूपक्य भी क्रम करना चाहिये । किन्तु इतनी विवेकता है कि  
 समनन्तरपूर्व अर्थ गये निरूपक्यमोते इस स्थाकके निरूपक्य एक समय अधिक होते हैं । इसी  
 प्रकार अन्वयकी भीवेकी सब स्थितियोंकी प्रत्येक स्थितिके विवक्षित करके अन्वयविषयविषय  
 स्थान नीचे अन्वय अन्वयके मीतर एक समय अधिक एक आपत्तिप्रमाण स्थिति नीचे अन्वय जो  
 स्थिति स्थित है वसके प्राप्त होने तक एक समय अधिकके क्रमसे निरूपक्यमोती अन्वयि करनी

१ वा मही—येथ विष्णुसुवत्सुसि इति पाठः । २ वा—अन्वयो एवमेवेच्छाद्विदी  
 इति पाठः । ३ वा मही—येथ ( व ) मधुरिद्वय इति पाठः ।

इच्छावणा सह सञ्चुकस्सओ णिक्खेवो होइ । तस्स पमाणणिण्णयमुवरि कस्सामो । एत्तो हेट्ठिमाणं पि ट्ठिदीणमेसो चव णिक्खेवो । णवरि अइच्छावणा समयुत्तरादिकमेण वट्ठदि जाव उदयावलियवाहिरिट्ठिदि त्ति । संपहि णिन्वाघादविसयणिक्खेवट्ठाणाणं परूवणट्ठमुवरिमसुत्तमोइण्णं—

❀ एदिस्से अइच्छावणाए आवलियाए असंखेज्जदिभागमादिं कादूण जाव उक्कस्सओ णिक्खेवो त्ति णिरंतरं णिक्खेवट्ठाणाणि ।

§ ५२३. एदिस्से अइच्छावणाए इच्चेदेणाणंतरपरूविदावलियमेत्ताइच्छावणाए परामरसो कदो । तदो एदिस्से अइच्छावणाए जहण्णणिक्खेवो आवलियाए असंखे० भागो होदि त्ति संबंधो कायव्वो । पुव्वणिरुद्धंतोकोडाकोडीमेत्तट्ठिदीदो उवरि समयुत्तरादिकमेण बंधवुट्ठोए आवलियमेत्ताइच्छावणं तदसंखेज्जभागमेत्तणिक्खेवं च वट्ठाविय बंधमाणस्स णिन्वाघादेण जहण्णाइच्छावणा-णिक्खेवा भवंति, ण हेट्ठदो त्ति उत्तं होइ । एदं जहण्णयं णिक्खेवट्ठाणं । एवमादिं कारुण समयुत्तरकमेण णिरंतरं णिक्खेवट्ठाणवुट्ठी वत्तव्वा जाव उक्कस्सओ णिक्खेवो त्ति । एत्थ णिरंतरं णिक्खेवट्ठाणाणि त्ति वयणेण सांतरत्तपडिसेहो कओ, णिन्वाघादे सांतरत्तस्स कारणणुवलट्ठीदो । एवमेदं परूविय संपहि उक्कस्स-

चाहियं । इस स्थितिका निर्व्याघातविषयक जघन्य अतिस्थापनाके साथ सबसे उत्कृष्ट निक्षेप होता है । उसके प्रमाणका निर्यय आगे करेंगे । इससे नीचेकी स्थितियोंका भी यही निक्षेप होता है । किन्तु इतनी विशेषता है कि उदयावलिके बाहरकी स्थितिके प्राप्त होने तक इन स्थितियोंकी अतिस्थापना एक एक समय बढ़ती जाती है । अब निर्व्याघातविषयक निक्षेपस्थानोंका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

\* इस आवलिप्रमाण अतिस्थापनाके एक आवलिके असंख्यातवें भागसे लेकर उत्कृष्ट निक्षेपके प्राप्त होने तक निरन्तर क्रमसे निक्षेपस्थान होते हैं ।

§ ५२३ सूत्रमें जो 'एदिस्से अइच्छावणाए' पद आया है सो उससे जो पूर्वमें एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना कह आये हैं उसका परामर्श किया गया है । इसलिये इस अतिस्थापनाका जघन्य निक्षेप एक आवलिका असंख्यातवों भागप्रमाण होता है ऐसा यहाँ पदसम्बन्ध कर लेना चाहिये । पहले जो अन्तःकोडाकोडीप्रमाण स्थिति विवक्षित कर आये हैं उसके ऊपर एक समय अधिक आदिके क्रमसे बन्धकी वृद्धि होने पर एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना और उसके असंख्यातवें भागप्रमाण निक्षेपको घटाकर बन्ध करनेवाले जीवके निर्व्याघातविषयक जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेप होते हैं । इससे और कम स्थितिको बढ़ा कर बन्ध करनेवाले जीवके ये निर्व्याघातविषयक जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेप नहीं होते यह उक्त कथनका तात्पर्य है । यह जघन्य निक्षेपस्थान है । इससे लेकर उत्कृष्ट निक्षेपस्थानके प्राप्त होने तक एक एक समय बढ़ते हुए निरन्तर क्रमसे निक्षेपस्थानोंकी वृद्धि कहनी चाहिये । यहाँ सूत्रमें जो 'णिरंतरं णिक्खेवट्ठाणाणि' वचन आया है सो उससे निक्षेपस्थानोंके सान्तरपनेका निषेध किया है, क्योंकि निर्व्याघातविषयक उत्कर्षणमें सान्तरपनेका कोई कारण नहीं पाया जाता

भिकलेषपमाणविसयणिद्वारगङ्गं पुञ्जसुपमाह—

ॐ उक्तस्सधो पुषा भिक्ख्लेषो केत्तिधो ?

‡ ५२४ सुगममेदं पुञ्जावक ।

ॐ जात्तिया उक्कस्सिया कम्महिदी उक्कस्सियाए आवाहाए समयुत्तरावळियाए च ऊषा तत्तिधो उक्कस्सधो भिक्ख्लेषो ।

‡ ५२५ समयाहियर्बभावसिय गालिय उदयावसियवाहिरङ्किदङ्किदीए उक्कञ्जिज माणाए एतो उक्तस्सभिक्लेषो परुविदो परिप्फुडमेव तिस्से समयाहियावळियाए उक्तस्सावाहाए च परिहीणुक्तस्सकम्महिदिमेसुक्कस्सगिक्ख्लेषदसपादो । तं वहा— उक्तस्सङ्किदिं बंधिय बंधावसिय गालिय उदणवरसमए आवाहावाहिरङ्किदिङ्किदपदेसग्ग-मोक्कञ्जिय उदयावसियवाहिरे णिसिषदि । एत्थ विदियङ्किदीए ओक्कञ्जिय गिक्खिउत्तम्भ-मङ्किर्यं, पढमसमयणिसिचसु उदणंतरसमए उदयावसियम्मंतरपकेसदंसवाधो । तदो विदियसमए उक्तस्ससक्खिसवसेण उक्तस्सङ्किदिं वपमाणो विवक्खिसुपपदेसग्गासुक्कञ्जितो आवाहावाहिरपढमभिसेयप्पडुडि ताव भिक्खिसवदि जाव समयाहियावसियमेसेण अग्गाङ्किदिमपचो चि । कुदो एव ? तचो उवरि तस्स विवक्खिसुपकम्मपदेससु सचिङ्किदीए हे । इस मन्तर इसअ उवन करके अथ उक्कट निक्षेपके प्रमायका निवचन करनेके क्रिये आगेअ प्रश्नसूत्र कहते हैं—

ॐ उक्कट निक्षेप क्खिना हे ।

‡ ५२४ पर प्रश्नसूत्र सुगम हे ।

ॐ उक्कट आवाधा और एक समय अधिक एक आवलि इनसे न्यून भितनी उक्कट कर्मस्मिति हे उतना उक्कट निक्षेप हे ।

‡ ५२५. एक समय अधिक अभावक्रिये गच्छकर उदयावसिये बाहर स्थित स्थितिका अकार्य्य होने पर पर उक्कट निक्षेप कहा हे यह बात स्पष्ट है, क्योंकि इस स्थितिना एक समय अधिक एक आवलि और उक्कट आवाधासे न्यून उक्कट कर्मस्मितिप्रमाण उक्कट निक्षेप बला जाता हे । कुछसा इस मन्तर हे—उक्कट स्थितिके बाँधकर और अभावक्रिये गच्छकर तदनन्तर समयमें आवाधाके बाहरकी स्थितिमें स्थित कर्मपरमाप्तुर्बोध अकार्य्य करके अभावक्रियेके बाहर निक्षेप करवा हे । यहाँ पर अकार्य्य करके उदयावसिये बाहर इसी स्थितिमें निक्षिप्त हुआ इत्य विवक्षित हे क्योंकि उदयावसिये बाहर प्रथम समयमें जा इत्य विक्षिप्त होता हे तसअ तदनन्तर समयमें उदयावसियेके भीतर प्रवेश बला जाता हे । फिर दूसरे समयमें उक्कट संस्कारके कारण उक्कट स्थितिके अर्थ करवावा कोई एक जीव विवक्षित प्रवेशात्मका अकार्य्य करके उदो आवाधाके बाहर प्रथम निषेधसे केकर अमस्तिवतिसे एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थान नीचे उतर कर जा स्थान प्राप्त हो यहाँ तक निक्षिप्त करवा हे ।

उत्तर—येसा क्यों हे ?

समाधान—क्योंकि इससे ऊपर इस विवक्षित प्रदेशात्मकी शक्ति नहीं पार्व जाती हे ।

अगंभवादो । तम्हा उकस्सावाहाए समयुत्तरावलिआए च ऊणिया कम्मद्विदी कम्म-  
णिकखेवो त्ति सिद्धं । किमेदिस्से चैव एकस्से उदयावलियवाहिरद्विदीए उकस्सणिकखेवो,  
आहो अण्णासिं पि द्विदीणमत्थि त्ति एत्थ णिण्णय' कस्सामो । एत्तो उवरिमाणं पि  
आवाहाव्भंतरव्भुवगमाणं द्विदीणं सव्वासिमेव पयदुकस्सणिकखेवो होइ । णवरि  
आवाहावाहियपढमैणिसेयद्विदीए हेद्वदो आवलियमेत्ताणमावाहव्भंतरद्विदीणमुकस्सओ  
णिकखेवो ण संभवइ, तत्थ जहाकममावाहावाहिरणिसेयद्विदीणमड्छावणावलिआणुप्पवे-  
सेणुकस्सणिकखेवस्म हाणिदमणादो ।

§ ५२६. एवमेत्तिएण पवधेण णिव्वाघादविसयजहण्णुकस्सणिकखेवमड्छावणं  
च परूविय संपहि वाघादविसए तदुभयं परूवेमाणो सुत्तपवंधमुत्तरं भणइ—

❀ वाघादेण कधं ?

§ ५२७. सुगममेद पुच्छावकं ।

❀ जइ संतकम्मादो वंधो समयुत्तरो तिस्से द्विदीए एत्थि उक्कड्डणा ।

§ ५२८. संतकम्मादो जइ वंधो समयुत्तरो तिस्से द्विदीए उवरि संतकम्म-  
अगाद्विदीए एत्थि उक्कड्डणा । कुदो ? जहण्णाड्छावणा-णिकखेवाणं तत्थामंभवादो ।

इसलिये उत्कृष्ट आवावा और एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून कर्मस्थितिप्रमाण  
कर्मनिक्षेप होता है यह बात सिद्ध हुई ।

शंका—क्या उदयावलिके बाहरकी इसी एक स्थितिका उत्कृष्ट निक्षेप होता है या अन्य  
स्थितियोंका भी उत्कृष्ट निक्षेप होता है ?

समाधान—अब इस प्रश्नका निर्णय करते हैं—इस स्थितिसे ऊपर आवाधाके भीतर  
जितनी भी स्थितियाँ स्वीकार की गई हैं उन सभीका प्रकृत उत्कृष्ट निक्षेप होता है । किन्तु इतनी  
विशेषता है कि आवाधाके बाहर प्रथम निषेककी स्थितिसे नीचेकी एक आवलिप्रमाण आवाधाके  
भीतरकी स्थितियोंका उत्कृष्ट निक्षेप सम्भव नहीं है, क्यों कि वहाँ क्रमसे आवाधाके बाहरकी निषेक  
स्थितियोंका अतिस्थापनावलिमें प्रवेश हो जानेके कारण उत्कृष्ट निक्षेपकी हानि देखी जाती है ।

§ ५२६ इस प्रकार इतने कथन द्वारा निर्व्याघातविषयक जघन्य व उत्कृष्ट निक्षेप और  
अतिस्थापनावा कथन करके अब व्याघातविषयक इन दोनोंका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र  
कहते हैं—

\* व्याघातकी अपेक्षा उत्कर्षण किस प्रकार होता है ?

§ ५२७ यह पुच्छासूत्र सुगम है ।

\* यदि सत्कर्मसे बन्ध एक समय अधिक हो तो उस स्थितिमें उत्कर्षण नहीं  
होता है ।

§ ५२८ यदि सत्कर्मसे बन्ध एक समय अधिक हो तो उस बंधनेवाली स्थितिमें सत्कर्मकी  
अप्रस्थितिका उत्कर्षण नहीं होता है, क्योंकि वहाँ पर जघन्य अतिस्थापना और निक्षेप इन

१ ता०प्रतौ त्ति ( तप्पटि ) बद्धणिएणय, आ०प्रतौ त्ति बद्धणिएणय इति पाठ । २ ता०प्रतौ  
—वाहिय ( २ ) पढम इति पाठ ।



○ जइ सनकम्मादो पपो दुसमपुत्तरो तिससे पि सनकम्मअग्गट्टिदीए णत्थि उक्कडुणा ।

§ ७२७. जइ सनकम्मादो दुसमपुत्तरो बंधो होइ तिम्सु वि बंधट्टिदीए मक्खेण मंतहम्मअग्गट्टिदाए पुप्फणिक्कदाए उक्कडुणा णत्थि । कारण पुन्व व बधत्तं ।

○ एत्थ आबल्लियाण असत्तेज्जदिभागो जइपिणया अइक्कदावणा ।

§ ७३. एव निममपुत्तरादिक्रमण बंधउट्टीए सताए वि णत्थि वेत्तुक्कडुणा जाव आवत्ति • अमंग • भागमत्तो ष बट्टिदो पि कुत्तं होइ । कुट्टो एव ? एत्थ जइण्णा इण्णवणाए आवत्ति • अमंगु • भागमत्तीए तामि ट्टिदीणमत्तम्मारदमणादो ।

○ जदि जलिया जइपिणया अइक्कदावणा तसिएण अक्कमहिओ सनकम्मादो पपो तिससे पि सनकम्मअग्गट्टिदीए णत्थि उक्कडुणा ।

§ ७३१. कुट्टा ? एत्थ जइण्णाइ जावणाए मत्तीए वि मत्तुप्पिक्कदइइण्णजिसुवेवस्स अत्त वि ममवागुत्तंमाए । ण व विक्खवविमण्ण विणा उक्कडुणांमत्तो अत्थि, विप्पट्टिमदाए । मा पुण जइण्णजिसुवत्तो कलियो इदि आमक्कण उक्कमाइ—

○ अण्णो आबल्लियाण असत्तेज्जदिभागो जइण्णाओ णिकम्पेपो ।

दानोसा कम्म ह ।

○ यदि मन्कर्मस कच दा समय अपिकु हो तो उम स्थितिमें भी मन्कर्मद्ये स्थितिया उक्कण नहीं जाना है ।

§ ७३६. यदि मन्कर्मस दा समय अपिकु स्थितिया कच हाया ह ता इस कम्म स्थितिमें भी कुम्मे स्थिति मन्कर्मधी अमस्थितिया मन्कर्मस चरकण मही हत्ता । अत्तना कम्म परपेके समान कर्मा बदिह ।

○ यहाँ एव आबल्लिक अमस्थितये भागप्रमाण अपन्थ अनिस्थापना होती है ।

§ ७३७. इस प्रकार तीन समय अपिकु आदिमे होइर आबल्लिके अमस्थितये अग तक कम्मधी वृत्ति हत्त वर भी वरवत्त मही हत्त है पर इत्त क्वनच लपय ह ।

उत्तर—एसा कथो है ?

समाधान—एपेकि वरों वर आबल्लिक अमस्थितये अगप्रमाण अपन्थ अनिस्थापनाये एव कच स्थितियोस अगकच हेत्तु हत्ता है ।

○ त्रितीया अपन्थ अनिस्थापना है या मन्कर्मस उक्कना अपिकु कच हाये तो मा उम बंधो हई स्थितिमें मन्कर्मस अथ स्थितिया उक्कण नहीं होला है ।

§ ७३८. बनेदि वरों वर अपन्थ अनिस्थापना हत्त हत्ता भी एवम मन्कर्मस एवनेत्तु अपन्थ स्थितियोस भी वरों कच हाया है । और विट्ठलियेक कच म्ब तक विना हत्तवत्त हा मही मन्कर्म है कथो ह इत्तक विना उक्कण हा हाया स्थिति है । बल्लु वर अपन्थ स्थितियोस है एवो कच हाया हत्त एवम मन्कर्मस आगिहा म्ब वत्त है—

○ एव अन्व आबल्लिक अमस्थितये भागप्रमाण अपन्थ स्थितियोस हाया है ।

§ ५२२. जहण्णाइच्छावणाए उवरि पुणो वि आवलि० असंखे० भागमेत्तबंध-  
वुद्धीए जहण्णणिकखेवसंभवो होइ ति भणिदं होइ । मंपहि एत्तो प्पहुडि उक्कट्टणासंभवो  
त्ति पदुप्पाएदुमुत्तरसुत्तावयारो—

❧ जइ जहएियायाए अइच्छावणाए जहएणएण च णिकखेवेण एत्तिय-  
मेत्तेण संतकम्मादो अदिरित्तो बंधो सा संतकम्मअग्गट्ठिदी उक्कट्टिज्जदि ।

§ ५२३. कुदो ? एत्थ जहण्णाइच्छावणा-णिकखेवाणमविरुल्लसखेणोवलंभादो ।  
एत्तो उवरि समयुत्तरादिक्रमेण जा बंधवुद्धी सा किमइच्छावणाए अंतो णिवदइ आहो  
णिकखेवस्से ति पुच्छाए उत्तरमुत्तमाह—

❧ तदो समयुत्तरे बंधे णिकखेवो तत्तिओ चेव, अइच्छावणा वड्ढदि ।

§ ५२४. कुदो एवं ? सच्चत्थ णिकखेववुद्धीए अइच्छावणावट्ठिपुरस्सरत्तदंसणादो ।  
सा वुण अइच्छावणावुद्धी उक्कस्मिया केत्तिया ति आमंकाए तण्णिणयकरणदुमुत्तरसुत्तं—

❧ एवं ताव अइच्छावणा वड्ढइ जाव अइच्छावणा आवलिया जादा ति ।

§ ५२५. सा जहण्णाइच्छावणा समयुत्तरकमेण बंधवुद्धीए वड्ढमाणिया ताव  
वड्ढइ जाव उक्कस्मियाइच्छावणा आवलिया संपुण्णा जादा ति सुत्तत्थसंबंधो । एत्तो

§ ५२२ जघन्य अतिस्थापनाके ऊपर फिर भी आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण बन्धकी  
वृद्धि होने पर जघन्य निक्षेपका होना सम्भव है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अब इससे आगे  
उत्कर्षण सम्भव है ऐसा कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

\* यदि सत्कर्मसे जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेपप्रमाण स्थितिवन्ध  
अधिक हो तो सत्कर्मकी उग अग्रस्थितिका उत्कर्षण होता है ।

§ ५२३ क्योंकि यहाँ पर जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेप अविकलरूपसे पाये  
जाते हैं । अब इससे आगे जो एक एक समय अधिकके क्रमसे बन्धकी वृद्धि होती है सो उसका  
अन्तर्भाव अतिस्थापनामें होता है या निक्षेपमें ऐसी वृद्धिके होने पर उत्तरस्वरूप आगेका सूत्र  
कहते हैं—

\* तदनन्तर एक समय अधिक स्थितिवन्धके होनेपर निक्षेप उतना ही रहता है ।  
किन्तु अतिस्थापना वृद्धिको प्राप्त होती है ।

§ ५२४ शका—ऐसा क्यों है ?

समाधान—क्योंकि सर्वत्र अतिस्थापनाकी वृद्धिपूर्वक ही निक्षेपकी वृद्धि देखी जाती है ।

किन्तु वह अतिस्थापनाकी उत्कृष्ट वृद्धि कितनी होती है ऐसी आशाका होने पर उसका  
निर्णय करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

\* इस प्रकार अतिस्थापनाके एक आवलिप्रमाण होने तक उसकी वृद्धि  
होती रहती है ।

§ ५२५. स्थितिवन्धकी वृद्धिके साथ वह जघन्य अतिस्थापना एक एक समय अधिकके  
क्रमसे बढ़ती हुई पूरी एक आवलिप्रमाण उत्कृष्ट अतिस्थापनाके प्राप्त होने तक रहती है—

उपरि वि अञ्जवणा किण्ण वहुविजदे ? अ, पचपपरिसपजताए पुण बुद्धिबिरोहादो । एचो उपरि आबलियमेत्ताइञ्जवणं धुव काऊण समयुत्तरादिकमण निक्खेवो बह्वावेदमां ति परूवेदुत्तरसुत्तमाइ—

⊙ तेण परं निक्खेवो बह्वा आब उक्कस्सओ थिक्खेवो ति ।

§ ७३६ एतय ताव पुम्बभिरुत्तसतकम्मभग्गहिदीए उक्कस्सनिक्खेववुद्धी समयुत्त-  
कमण अञ्जवणावलिपाहियेहेत्तिभजंतोकोडाक्खेदीपरिहीणकम्महिदिमेचा होइ । गवरि  
पंचात्रलियाए सह अतोकोडाक्खेदी उभियन्वा । एसा च आबेसुक्कस्सिया । एसा  
हेत्तिमाणं मंतकम्मवुत्तरिमादिहिदीण समयाहियक्रमेण पच्छण्णुपुम्बीए निक्खेववुद्धी  
वत्तप्पा आब ओधुक्कस्सनिक्खेवं पचा ति । सो पुण ओधुक्कस्सओ निक्खेवो कसियमेचो  
होइ ति णिण्णयविहाणइ ताव पुच्छासुत्तमाइ—

⊙ उक्कस्सओ थिक्खेवो को होइ ?

§ ५३७ सुगममेद पुच्छासुत्त ।

⊙ जो उक्कस्सिय ठिदिं वपियूयावत्तियमविककतो तमुक्कस्सपट्टिवि  
मोक्कट्टियूय उक्कपावत्तियमाहिराए थिदिपाए ठिदीए थिक्खेववि । युय से

इस सूत्रका अर्थित्य है ।

प्रश्ना—इससे आगे भी अवस्थापना क्यों नहीं बढ़ाई जाती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि परम मर्क्यन्ते प्राप्त हो जाने पर फिर इसकी वृद्धि होनेमें विषय आता है ।

इससे आगे आवृत्तिप्रमाण अवस्थापनाको धुव करके एक एक समय अपिकके कर्मसे निरुपकी वृद्धि करनी चाहिए वसा कर्मन करनेके लिए आगेवा सूत्र बहते हैं—

⊙ उत्तस आग उत्तुट निरुपक प्राप्त होनतक निरुपकी वृद्धि होती है ।

§ ५३६ यहाँ पर पूर्वमें विरचित सत्कर्मकी अवस्थितिके बहूत्र निरुपकी वृद्धि एक एक समय अपिकके कर्मसे होती हुई अवस्थापनावस्थिते अपिक जो अवस्तन अण्ठकोडाक्खेवो इससे हीन कर्मस्थितिप्रमाण्य होती है । किन्तु इसकी विसंग्रह्य है कि बन्धावस्थिके साथ अण्ठःकोडाक्खेवो कर्म करना चाहिये । यह आदरासे उत्तुट वृद्धि है । फिर इससे नीचेकी सत्कर्मकी विवरण आवृत्ति स्थितिबोधी एक एक समय अपिकके कर्मसे वन्धावस्तुपुंकी अवस्था निरुपवृद्धि तब तक करनी चाहिए जब तक वह आवृत्त उत्तुट निरुपकी न प्राप्त हो जाय । किन्तु ओपकी अपेक्षा वह उत्तुट निरुप इतना होता है जमा निरुप करनेके लिए आगेवा पुच्छासूत्र बहते हैं—

⊙ उत्तुट निरुप कितना है ।

§ ५३७ पर पुच्छासूत्र सुगम है ।

⊙ जो उत्तुट स्थितिमें बन्ध करनरु बाद एक आवृत्तिका विताकर उम उत्तुट स्थितिमें अवस्थापन करके उदपावत्तिके बाद दुर्ग स्थितिमें निरुप करता है । फिर

काले उदयावलियवाहिरे अणंतरठिदिं पावेहिदि त्ति तं पदेसग्गमुक्कड्डियूण  
समयाहियाए आवलियाए ऊणियाए अग्गड्ढिदीए णिक्खिवदि । एस  
उक्कस्सओ णिक्खेवो ।

§ ५३८. जो सण्णपंचिदियपज्जत्तो सागार-जागारसव्वसंकिलेसेहि उक्कस्सदाहं गदो  
उक्कस्सड्ढिदिं सत्तरिसागरोवमकोडाकोडिपमाणावच्छिण्ण वंधियूण वंधावलियमदिकंतो  
तमुक्कस्सियं ड्ढिदिमोक्कड्डियूणुदयावलियवाहिरपढमड्ढिदिणिसेयादो विसेसहीणं विदियड्ढिदीए  
णिसिचिय तदणंतरसमए अणंतरवदिकंतसमयपढमड्ढिदिमुदयावलियव्भंतर पवेसिय  
विदियड्ढिदिं च पढमड्ढिदित्तेण परिट्ठविय से काले तं च णिरुद्धड्ढिदिं उदयावलियगव्भं  
पावेहिदि त्ति ड्ढिदो तम्मि चेव समए तदणंतरसमयोक्कड्ढिदपदेसग्गमुक्कड्डणावसेण त्कालिय-  
णवक्कवंधपडिबद्धुक्कस्सड्ढिदीए णिक्खिवमाणो पच्चग्गवंधपरमाणुणमभावेणुक्कस्सावाहमेत्त-  
मइच्छाविय तमावाहावाहिरपढमणिसेयड्ढिदिमादिं कादूण ताव णिक्खिवदि जाव  
समयाहियावलिया परिहीणा अग्गड्ढिदी । तस्स तहा णिक्खिवमाणस्स उक्कस्सओ णिक्खेवो  
होइ । तस्स य पमाणं समयाहियावलियव्भहियावाहापरिहीणउक्कस्सकम्मड्ढिदिमेत्तं जायदि  
त्ति एसो सुत्तथसमासो ।

तदनन्तर समयमें उदयावलिके बाहर अनन्तरवर्ती स्थितिको प्राप्त होगा कि इस  
स्थितिके कर्मद्रव्यका उत्कर्षण करके उसका एक समय अधिक एक आवलिसे कम  
अग्रस्थितिमें निक्षेप करता है । यह उत्कृष्ट निक्षेप है ।

§ ५३८ जिस सज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त जीवने साकार उपयोगसे उपयुक्त होकर जागृत अवस्थाके  
रहते हुए सर्वोत्कृष्ट सक्त्तेशके कारण उत्कृष्ट दाहको प्राप्त होकर सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण  
उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया । फिर बन्धावलिके व्यतीत हो जानेपर उस उत्कृष्ट स्थितिका अपकर्षण  
करके उसे उदयावलिके बाहरकी प्रथम स्थितिके निषेकसे विशेष हीन दूसरी स्थितिमें निक्षिप्त किया ।  
फिर तदनन्तर समयमें अनन्तर पूर्व समयवर्ती स्थितिका उदयावलिके भीतर प्रवेश कराके और उस  
दूसरी स्थितिको प्रथम स्थितिरूपसे स्थापित करके तदनन्तर समयमें विवक्षित स्थितिको उदयावलिके  
भीतर प्राप्त कराता, इस प्रकार स्थित होकर उसी समयमें इससे पूर्व समयमें अपकर्षणको प्राप्त  
हुए प्रदेशाप्रका उत्कर्षणके वशसे उसी समय हुए नवीन बन्धसे सम्बन्ध रखनेवाली उत्कृष्ट  
स्थितिमें निक्षेप किया । यहाँ इस निक्षेपको, आबाधामें नवीन बन्धके परमाणुओंका अभाव होनेसे  
उत्कृष्ट आबाधाको अतिस्थापनारूपसे स्थापित करके आबाधके बाहर प्रथम निषेककी स्थितिसे  
लेकर एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून अग्रस्थितिके प्राप्त होने तक करता है । इस तरह  
जो जीव इस प्रकारका निक्षेप करता है उसके उत्कृष्ट निक्षेप होता है । इस निक्षेपका प्रमाण  
समयाधिक आवलि और आबाधासे हीन उत्कृष्ट कर्मस्थितिप्रमाण उत्पन्न होता है । इस प्रकार  
यह सूत्रका तात्पर्य है ।

विशेषार्थ—स्थितिसक्रम तीन प्रकारसे होता है । उनमें दूसरा प्रकार स्थितिउत्कर्षण है ।

⊙ एवमोक्तद्वयपदद्वयप्राणमदपदं समस्तं ।

§ ५३०. सुगम । एत्यावाहापरिहीणुस्तमकम अद्वयपदरूपणा कृष्ण कया ?  
ण, तत्वोक्तद्वयप्राणसु व अद्वयपदरूपणा-णिक्सेवादिविसेसाणमसमवेण  
सुगमत्तपुद्गीण तदपरूपणादो । सपदि एवं परुविदमद्वयपदमबलवण कठण द्विविदमकम  
परुवेदुक्तमो सुत्तपुत्तरमाह—

एतो अद्याद्धेवो । जहा उपकस्सिपाए द्विपीए उवीरणा ताहा ठक्कस्सओ  
द्विविसकमो ।

§ ५४०. अप्पणासुत्तमेवं, उक्कस्सद्विदिउदीरणापसिद्धस्स घम्मस्स मूलुत्तरपयडि  
भयमिण्णद्विविसकमुक्कस्सदाप्पेदं समप्पणादो । संपदि उत्तरपयडिविसयमेदमप्पणासुत्त  
मेवं वेव अप्पं क्कउण ताव सुत्तेगेदण सुत्तिदं मूलपयडिद्विदिमकमविसरं किंचि परुवणं  
वक्कस्सामो । सं अहा—मूलपयडिद्विदिसकमे तत्त इमाणि तेवीसमणिपोगादाणि

अग अत्रिकमे नीतर होनेके कारण अतिस्थापना एक अत्रिकसे कम पाई जाती है वहाँ व्यापात  
विषयक उत्कर्षण होगा है और वहाँ एक अत्रिकप्रमाण अतिस्थापनाके साथ निश्चय कमसे कम  
आवृत्तिके असंख्यातवें मागके होनेमें किसी प्रकारका व्यापात नहीं पया जाता है वहाँ अत्र्यापात-  
विषयक अतिस्थापना होती है । अत्र्यापातविषयक उत्कर्षणमें अतिस्थापना कमसे कम एक  
अत्रिकप्रमाण और अधिकसे अत्रिक उत्कृष्ट आवाधायमान होती है । तथा निश्चय कमसे कम  
अत्रिकके असंख्यातवें मागप्रमाण और अधिकसे अत्रिक उत्कृष्ट आवाधा और एक समान  
अत्रिक एक अत्रिकसे न्यून उत्कृष्ट कर्मस्वितिप्रमाण हाता है । व्यापातविषयक अप्पण अति-  
स्थापना कमसे कम आवृत्तिके असंख्यातवें मागप्रमाण और अधिकसे अत्रिक एक समान कम  
एक अत्रिकप्रमाण होती है । तथा निश्चय मात्र अत्रिकके असंख्यातवें मागप्रमाण होता है ।

⊙ इस प्रकार अपकर्षण और उत्कर्षणका अर्थपद समाप्त हुआ ।

§ ५३६. यह सूत्र सुगम है ।

पुद्गल—यहाँ पर आवाधासे हीन उत्कृष्ट संक्रमके विषयमें अवैतन्य कथन क्यों नहीं किया ?

समाधान—यहाँ, क्योंकि वहाँ पर अवैतन्य और उत्कर्षणके समान अप्पण और अद्वय  
अतिस्थापना व निश्चय आदि विधियोंका पया ज्ञान सम्भव व होनेसे सुगम समझकर उत्कृष्ट  
संक्रमके विषयमें अवैतन्य कथन नहीं किया ।

अब इस प्रकार करे यने अवैतन्य अवयवमन उत्तर स्थितिसंक्रमके कथन करनेकी इच्छासे  
आलोच्य सूत्र करते हैं—

⊙ अब इससे आगे अद्याच्छदका प्रकरण है—जिस प्रकार उत्कृष्ट स्थितिकी  
उदीरणा होती है उसी प्रकार उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम आनना चाहिये ।

§ ५४. यह अवैतन्य है, क्योंकि इस हाथ उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणामें मसिद्ध रूप  
कर्मका मूल और उत्तर प्रकृतियोंके भेदसे अलग प्रकरणके स्थितिसंक्रमके उत्कृष्ट अवयवोंमें  
समर्पण किया गया है । अब उत्तरप्रकृतिविषयक इसी प्रकारके इस अवैतन्यको स्थापित करके  
सर्वे प्रथम इस सूत्रके हाथ स्थित होनेवाले मूलप्रकृतिविषयक स्थितिसंक्रमका पुद्गल कथन करते  
हैं । पद—मूलप्रकृतिस्थितिसंक्रमके विषयमें अद्वयसे लेकर अस्त्वद्वय वक्तु व तस्य अत्रुवेत्तार

अद्वाच्छेदो जाव अप्पावहुगे त्ति । तदो भुजगार-पदणिकखेव-वट्टि-ट्टाणाणि च कायच्चाणि ।

§ ५४१. तत्थ दुविहो अद्वाच्छेदो जहण्णुक्कस्सभेदेण । उक्क० पयदं । दुविहो णिहेसो ओघादेसभेदेण । तत्थोघेण मोह० उक्क० द्विदिसंक्रमद्वाच्छेदो सत्तरिसागरोवम-कोडाकोडीओ दोहि आवलियाहि ऊणियाओ । एवं चदुसु वि गदीसु । णवरि पंचिदिय-तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० उक्क० द्विदिसंक्रम० सत्तरिसा०कोडाकोडीओ अंतो-मुहुत्तूणाओ । आणदादि जाव सव्वट्टा त्ति मोह० उक्क० द्विदिसं० अंतोकोडाकोडीए । एवं जाव० ।

§ ५४२. जहण्णए पयदं । दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० जह० द्विदिसंक्रम०अद्वाच्छेदो एया ट्टिदी । सा पुण समयाहियावलियाए उवरिमा होइ । एवं मणुसतिए । आदेसेण णेरइय० मोह० जह० द्विदिसं०अद्वा० सागरोवम-

होते हैं । फिर भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान इनका कथन करना चाहिये ।

§ ५४१ प्रकृतमें जघन्य और उत्कृष्टके भेदसे अद्वाच्छेद दो प्रकारका है । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्वाच्छेद दो आवलिकम सत्तर कोडाकोडी सागरप्रमाण है । इसी प्रकार चारों ही गतियोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्वाच्छेद अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोडा-कोडी सागरप्रमाण है । तथा आनतसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मोहनीयका उत्कृष्ट स्थिति-संक्रम अद्वाच्छेद अन्तःकोडाकोडीप्रमाण है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

**विशेषार्थ**—तत्काल वेंधे हुए कर्मका बन्धावलिके बाद संक्रम होता है । उसमें भी जो कर्म उदयावलिके भीतर अवस्थित है उसका संक्रम नहीं होता, किन्तु उदयावलिके बाहर अवस्थित कर्मका ही संक्रम होता है । इसीसे प्रकृतमें मोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्वाच्छेद दो आवलि-कम सत्तर कोडाकोडी सागरप्रमाण बतलाया है । यतः मोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध चारों गतियोंमें होता है, अतः चारों गतियोंमें यह उत्कृष्ट अद्वाच्छेद प्राप्त हो जाता है । ऐसा नियम है कि अपर्याप्त अवस्थामें उत्कृष्ट स्थितिबन्ध नहीं होता । किन्तु जो जीव उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करके और अन्तर्मुहूर्तके भीतर मर कर अपर्याप्त अवस्था प्राप्त कर लेता है उसके अपर्याप्त अवस्थामें अन्तर्मुहूर्तके उत्कृष्ट स्थिति अद्वाच्छेद पाया जाता है । इसीसे प्रकृतमें पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्वाच्छेद अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोडाकोडी सागर प्रमाण बतलाया है । तथा आनतादिमें उत्कृष्ट स्थिति किसी भी हालतमें अन्तःकोडाकोडीसे अधिक नहीं होती । इसीसे वहाँ उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्वाच्छेद अन्तःकोडाकोडीप्रमाण बतलाया है । इसी प्रकार आगेकी मार्गणाओंमें उत्कृष्ट स्थितिका विचार करके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्वाच्छेद ले आना चाहिये ।

§ ५४२ अब जघन्यका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे मोहनीयका जघन्य स्थितिसंक्रम अद्वाच्छेद एक स्थितिप्रमाण है । किन्तु वह स्थिति एक समय अधिक एक आवलिसे ऊपरकी होती है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिये । आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मोहनीयका जघन्य स्थितिसंक्रम अद्वाच्छेद एक

सहस्रस्य सप्त-सप्तभागा पल्लितो० सत्त्वे० भागूणा । एवं पत्रमपुत्रवि-द्व०-भवण० वाचवेतरा  
 चि । त्रिदिपादि वाच सप्तमा चि मोह० जह० द्विदिसक० अदा० अतोकोबा० । एव  
 जोदिमियपदुदि वाच सम्बद्धा चि । सम्बतिरिक्त्-मपुसअपज० मोह० जह० द्विदि०-  
 अदा० सागरोवमं पल्लितो० असत्त्वे० भागूण्यं । एव साब० ।

§ ७४३ सम्ब-णोसम्ब-उक्तसाणुकस्त-अहण्णाजहण्णद्विदिसकमाप्मोभादेसफू  
 षणाय द्विदिविहचिर्मगो ।

§ ७४४ सादिअणादि-ध्रुवअध्रुवाधुगमेण दुबिहो जिरेसो—ओषण आदेसेण  
 य । ओषण मोह० उह०-अणुक०-जह० द्विदिसकमाय किं सादिया ४ ? सादि-अध्रुवा ।  
 अजहण्णद्विदिस० किं सादि० ४ ? सादी अणादी ध्रुवो अध्रुवो वा । आदेसेण सम्ब-  
 मगगणामु उक्त० अमुक्त०-जह०-अजहण्णसक्य० किं सादि ४ ? सादि अध्रुवा ।

इत्थर सागरके सात भागोमेंते पत्थर संख्यातवा भागकम सात भागप्रमाण है । इसी प्रकार प्रथम  
 दृष्टिमेंते सातको सामान्य रूप मदनयासी और अन्तर देवोंमें जानना चाहिये । इसी दृष्टिमेंते  
 लेकर सातवाँ दृष्टि तकके न्यरकिचोंमें मोहनीयक्य अथवा स्थितिसंक्रम अज्ञाच्छेद अन्वःकोषा  
 कहीप्रमाण है । इसी प्रकार अतीतिविहोसे लेकर सर्वांसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिये । सब  
 स्थित और मनुष्य अपय्यातकोंमें मोहनीयक्य अथवा स्थितिसंक्रम अज्ञाच्छेद पत्थरक्य अंतःक्यातवा  
 भाग कम एक सागर प्रमाण है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गेश तक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—प्रागे अथवा एतामित्थक्य निर्देश किया है । इसे ध्यानमें रखकर यह अज्ञाच्छेद  
 चर्चित कर लेना चाहिये । विशेष बलम्य न जानेसे वहाँ पर बसक्य अज्ञासे स्पष्टीकरण नहीं  
 किया है ।

§ ७४३ सह, गोसर्ष बहृष्ट, अनुरष्ट, अथन्य और अथन्य इन सब स्थितिसंक्रमोंक  
 अथ और आदेशकी अपेक्षासे कथन जैसा स्थितिविमर्शके समक कर आपे हैं इसी प्रकार यहाँ  
 भी कथना चाहिये ।

§ ७४४ सादि अन्वदि ध्रुव और अध्रुवाधुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारक्य है—ओष और  
 आदेश । ओषकी अपेक्षा मोहनीयक्य उहृष्ट अनुरष्ट और अथन्य स्थितिसंक्रम क्या सादि है,  
 क्या अनादि है क्या ध्रुव है या क्या अध्रुव है ? सादि और अध्रुव है । अथन्य स्थितिसंक्रम  
 क्या सादि है, क्या अनादि है, क्या ध्रुव है या क्या अध्रुव है ? सादि अथवा ध्रुव और अध्रुव  
 है । आदेशकी अपेक्षा सब मार्गेशाधोमें बहृष्ट, अनुरष्ट अथन्य और अथन्य स्थितिसंक्रम  
 क्या सादि है क्या अनादि है क्या ध्रुव है या क्या अध्रुव है ? सादि और अध्रुव है ।

विशेषार्थ—ओषक्य बहृष्ट, अनुरष्ट और अथन्य स्थितिसंक्रम अज्ञाच्छेद करारिन् होना  
 है यह स्पष्ट ही है इमक्षिण इन्में सादि और अध्रुव कहा है । किन्तु अथन्येक्षिमें अथन्य स्थिति-  
 संक्रम अज्ञाच्छेद होनेके पूर्व अथन्य स्थितिसंक्रम अज्ञाच्छेद अनादि वाक्यसे होना क्या था है  
 इमक्षिण वा इमे अथदि कहा है तथा अथन्येक्षिमें अथन्येक्षिमें अथन्येक्षिमें अथन्य  
 स्थितिसंक्रम अज्ञाच्छेद होनेके बाद इतरने समक अथन्य स्थितिसंक्रम अज्ञाच्छेद सादि होता है  
 इमक्षिण इमे सादि कहा है । और अथन्येक्षिमें यह अध्रुव तथा अथन्येक्षिमें ध्रुव होता है, इसक्षिण  
 इमे ध्रुव और अध्रुव कहा है । इस प्रकार अथन्य स्थितिसंक्रम अज्ञाच्छेद वहाँ परारक्य बन  
 जाता है यह स्पष्ट ही है । देव कथन सुनाम है ।

§ ५४५. सामित्तं दुविहं—जह० उक० । उकस्से पयदं । दुविहो णिदेसो—  
ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक० द्विदिमं० कस्स ? अण्णद० मिच्छा०  
उक०द्विदिं वंधिदूणावलिवादीदं संकामेमाणस्स । एवं चउगदीसु । णवरि पंचि०तिरिक्ख-  
अपज्ज०-मणुमअपज्ज०-आणदादि जाव मच्चड्ढा त्ति द्विदिविहत्तिभंगो । एवं जाव० ।

§ ५४६. जहण्णए पयद । दुविहो णिदेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह०  
जह० द्विदिमं० कस्स ? सवयम्म समयाहियावलियचरिमसमयसंकामयस्स । एवं  
मणुसतिए० । आदेसेण णेग्गय० मोह० जह० द्विदिमं० कस्स ? अण्णदरस्स असण्णि-  
पच्छायददुसमयाहियावलियतवभवत्थस्स । एवं पढमाए देव-भवण०-त्राणवैतरा त्ति ।  
विदिद्यादि जाव सत्तमा त्ति द्विदिविहत्तिभंगो । णवरि सत्तमाए समद्विदिं वंधिदूणावलि-  
यादीदस्स सामित्त वत्तव्वं । तिरिक्खेसु विहत्तिभंगो । णवरि ममद्विदिं वंधिदूणावलि-  
यादीदस्स सामित्त दादव्व । सव्वपच्चिदियतिरिक्ख-मणुमअपज्ज० मोह० जह० द्विदिमं०  
कस्स ? अण्णदरस्स हदममुप्पत्तियं कादूणागदवादरेडंदिपच्छायदस्स आवलिय-  
उववण्णल्लयस्स । जोदिमियप्पहुडि जाव सव्वद्वे त्ति द्विदिविहत्तिभंगो । एवं जाव० ।

§ ५४५ स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो  
प्रकारका है—श्रोत्रनिर्देश और आदेशनिर्देश । श्रोत्रकी अपेक्षा मोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम  
किसके होता है ? जो मिथ्यावृत्ति जीव उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके एक आवलिके वाद उसका  
संक्रम करता है उसके होता है । इसी प्रकार चारो गतियोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता  
है कि पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और आनतसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें  
उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमके स्वामित्वका कथन स्थितिभिक्तिके समान है । इसी प्रकार अनाहारक  
मार्गणा तक जानना चाहिये ।

§ ५४६ जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—श्रोत्रनिर्देश और आदेशनिर्देश ।  
श्रोत्रकी अपेक्षा मोहनीयका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जो क्षणिक एक समय अधिक एक  
आवलिके शेष रहते हुए उसके अन्तिम समयमें मोहनीयका संक्रम कर रहा है उसके जघन्य स्थिति-  
संक्रम होता है । इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मोहनीयका  
जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जिस अस्त्री पंचेन्द्रियको मर कर नारकियोंमें उत्पन्न हुए  
दो समय अधिक एक आवलि हुआ है उसके होता है । इसी प्रकार प्रथम पृथिवीके नारकी, देव,  
भवनवासी देव और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए । दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी  
तकके नारकियोंमें स्वामित्वका भंग स्थितिभिक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सातवीं  
पृथिवीमें सत्त्वके समान स्थितिवन्ध करनेके वाद जिसे एक आवलि काल व्यतीत हुआ है उसके  
मोहनीयके स्थितिसंक्रमका जघन्य स्वामित्व कहना चाहिये । तिर्यञ्चोंमें स्वामित्वका भंग स्थितिभिक्ति  
के समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि जिसे सत्त्वके समान स्थिति बंधनेके वाद एक आवलि  
काल व्यतीत हुआ है उसे मोहनीयके स्थितिसंक्रमका जघन्य स्वामित्व देना चाहिये । सब पंचेन्द्रिय  
तिर्यञ्च और मनुष्य अपर्याप्तिकोंमें मोहनीयका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जिस वाद  
एकेन्द्रियको हतसमुत्पत्ति करनेके वाद मर कर उक्त जीवोंमें उत्पन्न हुए एक आवलि काल हुआ है  
उसके होता है । ज्योतिषी देवोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जघन्य स्वामित्वका भंग स्थिति-  
विभक्तिके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।



विद्येयार्थ—उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमण हो आबन्धिकात् सत्तर कोशकोशीसत्तारूपमाय होता है जो कल्याणिके बाद अणुतर समयमें उस जीवके प्राप्त होता है जिसने मोहनीयका उत्कृष्ट स्थिति-कर्म किया है। इसीसे यहाँ पर उत्कृष्ट स्थितिक कर्म करके एक आबन्धिकात् उत्कृष्ट स्थिति संक्रमण स्वामी कल्याण है। यह जगत्वा चारों गतियोंके बीचोंमें प्राप्त होती है इन स्थिति चारों गतियोंमें उत्कृष्ट स्वामित्वके कर्मन करनेकी ओपके समान सूचना की है। किन्तु पंचेन्द्रिय तिर्यक अर्थात्, मनुष्य अर्थात् और जानतेसे लेकर सर्वांसिद्धि तकके क्षेत्र ने मार्गार्थ एक अणुत्वाकी अणुत्वा है। इन मार्गार्थोंमें आदेश उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके स्वामित्वके समान ही आदेश उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमण स्वामित्व प्राप्त होता है, अतः इन मार्गार्थोंमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमणके स्वामित्वका उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके स्वामित्वके समान जाननेकी सूचना की है। इसी प्रकार इन्द्रिय आदि शेष स्वामीयार्थोंमें भी उत्कृष्ट स्वामित्व पठित कर लेना चाहिये। यह तो उत्कृष्ट स्वामित्वके कर्मनका मुद्रासा हुआ। अब अणुत्वा स्वामित्वके कर्मनका मुद्रासा करते हैं—जिस अणुत्वाके सूत्रम लोमका सत्त एक समय अधिक एक आबन्धिकात् सेप रखा है उसके उत्कृष्टस्थिके अंतरकी एक समय प्रमाय स्थितिक अणुत्वात् हाकर एक समयकम आबन्धिकात् एक समय अधिक त्रिभागमें निक्षेप होता है। यह अणुत्वा संक्रमण है, इसलिये इसका स्वामी उस अणुत्वा सूत्रमसम्प्राय संयतको कल्याण है जिसके सबसे गुणस्वतन्त्र एक समय अधिक एक आबन्धिकात् कात्र शेष है। यह अणुत्वा प्रकृत्या सामान्य, पर्याप्त और मनुष्यनी इन तीन प्रकारके मनुष्योंमें अधिकतम पठित हो जाती है इसलिये इन स्वामीयार्थोंमें स्वामित्वका कर्मन ओपके समान किया है। जो अंतर्ही पंचेन्द्रिय जीव जो निग्रहसे नरकमें उत्पन्न होता है उसके यद्यपि शरीर मह्य करने पर संज्ञी पंचेन्द्रियके योग्य स्थितिकर्म होने काय है तथापि शरीर प्राप्त करनेके समयसे लेकर एक आबन्धिकात् एक एक महीन कर्मका संक्रमण नहीं होता इसलिये इसे नरकमें दो समय अधिक एक आबन्धिकात्के अन्तिम समयमें अणुत्वा स्थितिसंक्रमण स्वामी कल्याण है। यह अंतर्ही जीव प्रथम पृथिवीके नारकी, सामान्य क्षेत्र, मरुत्वाकी और अणुत्वा इन चार मार्गार्थोंमें उत्पन्न होता हुआ देखा जाता है इसलिये इनमें अणुत्वा स्थितिसंक्रमणके स्वामित्वका कर्मन सामान्य नारकीयोंके समान किया है। दूसरी पृथिवीसे लेकर ऊँची पृथिवी तकके नारकीयोंमें इनके अणुत्वा स्थिति प्राप्त होती है अर्थात् अणुत्वा स्थितिसंक्रमण प्राप्त होता है, इसलिये इन मार्गार्थोंमें अणुत्वा स्थितिसंक्रमणके स्वामित्वके अणुत्वा स्थितिविभक्तिके स्वामित्वके समान कल्याण है। किन्तु सातवीं पृथिवीमें कुछ विशेषता है। अतः यह है कि सातवीं पृथिवीमें अणुत्वा स्थिति उस जीवके होती है जो उत्कृष्ट आयु लेकर उत्पन्न हुआ और जिसने अणुत्वात् अणुत्वा पश्चात् अणुत्वासम्प्रायपूर्वक अणुत्वात्पत्नीकी विस्तृतज्ञान की है। फिर आयुमें अणुत्वात् शेष रखने पर मिथ्यात्वमें आकर जिसने कुछ कर्म एक स्थितिसत्तरके कम स्थितिकर्म किया है। तथापि ऐसे जीवके अणुत्वा स्थितिसंक्रमण प्राप्त करना सम्भव नहीं है इसलिये अब यह जीव स्थिति सत्तरके समान स्थितिकर्म करता है तब इसके एक आबन्धिकात् अणुत्वात् अणुत्वा स्थितिसंक्रमण होता है। यहाँ एक आबन्धिकात् अणुत्वा स्थितिसंक्रमण इसलिये मह्य किया गया है, क्योंकि इतना कर्म अणुत्वात् होने पर स्थितिसंक्रमणमें अन्ती कमी देनी जाती है। इसीप्रकार तिर्यकोंमें भी समान स्थितिकर्म कर्म करके एक आबन्धिकात् अणुत्वा स्वामित्वके प्राप्त करना चाहिये। तिर्यकोंमें यह अणुत्वा स्वामित्व अणुत्वात्पत्नी पंचेन्द्रियके प्राप्त होता है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि अणुत्वात्पत्नी चार पंचेन्द्रियका अणुत्वा स्थितिसे सब सब पंचेन्द्रिय तिर्यक और मनुष्य अर्थात् अणुत्वात्पत्नी उत्पन्न दाना शक्य है, इसलिये इन मार्गार्थोंमें एक प्रकारके अणुत्वात् जीवके एक आबन्धिकात् अणुत्वात् स्वामित्वका विभाव किया है। तथा अणुत्वात्पत्नी देवोंसे लेकर सर्वांसिद्धि तकके देवोंमें अणुत्वात्

§ ५४७. कालानुगमेण दुविहो णिद्देशो जहण्णुक्कस्समेएण । तत्थुक्कस्से ताव पयदं । दुविहो णिद्देशो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्क० द्विदिसं० केव० ? जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० । अणुक्क० द्विदिसं० जह० अंतोमु०, उक्क० अणंत-कालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्ठा ।

§ ५४८. आदेसेण णेरइय० मोह० उक्क० द्विदिसं० ओघभंगो । अणुक्क० जह० एयसमओ, उक्क० तेचीसं सागरोवमाणि । एवं सच्चणेरइय०-तिरिक्ख०-पंचिदिय-तिरिक्खतिए३ मणुसतिय३-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति । णवरि अणु० उक्क० सगाट्ठिदी । पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० मोह० उक्क० द्विदिसं० जह० उक्क० एयसमओ । अणु० जह० खुट्ठा० समयूणं, उक्क० अंतोमु० । आणदादि जाव सच्चट्ठे त्ति मोह० उक्क० द्विदिसं० जहण्णुक्क० एयस० । अणु० जह० जहण्णट्ठिदी समयूणा, उक्क० उक्क०ट्ठिदी संपुण्णा । एवं जाव० ।

स्थितिबिभक्तिरालेके ही जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामित्व प्राप्त होता है, इसलिए इन मार्गणाओंमें जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामित्व जघन्य स्थितिबिभक्तिके स्वामित्वके समान कहा है। गति मार्गणामें जिस प्रकार जघन्य स्वामित्वका निर्देश किया है उसी प्रकार वह अनाहारक मार्गणा तक यथायोग्य घटित कर प्राप्त किया जा सकता है, इसलिये उसका अलगसे यथन न करके संकेतमात्र कर दिया है।

§ ५४७ कालानुगमकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्टके भेदसे निर्देश दो प्रकारका है। उनमेंसे उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश आदेशनिर्देश। ओघकी अपेक्षा मोहनीयके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका कितना काल है? जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।

विशेषार्थ—मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका काल उक्त प्रमाण होनेसे यहाँ उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका भी काल उक्त प्रमाण बतलाया है।

§ ४४८ आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मोहनीयके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका काल ओघके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। इसी प्रकार सब नारकी, तिर्यञ्च, पचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, मनुष्यत्रिक, देव और भवनवासी देवोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। पचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अर्थात्पर्याप्तोंमें मोहनीयके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय कम लुल्लक भवप्रदणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। आनतसे लेकर सार्थसिद्धितकके देवोंमें मोहनीयके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल पूरी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये।

विशेषार्थ—जो ओघसे उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम और उसका काल बतलाया है। उसका नरकमें पाया जाना सम्भव है इसलिये नारकियोंमें भी उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका काल ओघके समान कहा



§ ५५०. आदेसेण णेरइय० मोह० जह० ड्ठिदि० जह० उक्क० एयसमञ्चो । अज० जह० समयाहियावलिया, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाण । एवं पढमाए । णवरि सगड्ठिदी । विदियादि जाव सत्तमि त्ति जह० जहण्णुक० एयसमओ । अज० जह० जहण्णड्ठिदी, उक्क० उक्कस्सड्ठिदी । णवरि सत्तमीए जह० जहण्णेणोयसमओ, उक्क० अंतोमु० । अज० जह० अंतोमु०, उक्क० सगड्ठिदी ।

यह सादि-सान्त विकल्प जघन्य और उत्कृष्टके भेदसे दो प्रकारका है । इनमेंसे जघन्य विकल्प उन जीवोंके होता है जो चायिक सम्यग्दृष्टि जीव अन्तर्मुहूर्तके भीतर दो बार श्रेणि पर चढ़े हैं । इसीसे सादि-सान्त विकल्पका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । तथा सादि-सान्त विकल्पका जो उत्कृष्ट भेद है सो उसका काल जो कुछ कम दो पूर्वकोटि अधिक तेतीस सागर कहा है सो वह चायिक सम्यग्दर्शनके उत्कृष्ट कालकी अपेक्षासे कहा है । यहाँ चायिक सम्यग्दर्शनके उत्कृष्ट कालके प्रारम्भमे उपशमश्रेणि पर चढ़ा कर व उतरते समय अजघन्य स्थितिसंक्रमका प्रारम्भ करावे तथा उसके अन्तमें क्षपकश्रेणि पर चढ़ा कर अजघन्य स्थितिसंक्रमका अन्त करावे । इस प्रकार अजघन्य स्थितिसंक्रमका उक्तप्रमाण उत्कृष्ट काल प्राप्त हो जाता है ।

§ ५५०. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मोहनीयके जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय अधिक एक आवलि-प्रमाण है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । इसी प्रकार प्रथम पृथिवीमें है । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है । दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । तथा अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है तथा अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है ।

**विशेषार्थ—**सामान्यसे नरकमें मोहनीयका जघन्य स्थितिसंक्रम एक समय तक ही होता है, क्योंकि जो असंख्य पंचेन्द्रिय जीव नरकमें उत्पन्न होता है उसके शरीर ग्रहणके बाद एक आवली कालके अन्तिम समयमें यह जघन्य संक्रम देखा जाता है । इसीसे यहाँ जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है । अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल जो एक समय अधिक एक आवलि कहा है सो यह काल भी उस नारकीके प्राप्त होता है जो असंख्य पर्यायसे आकर नरकमें उत्पन्न हुआ है । ऐसे जीवके नरकमें उत्पन्न होनेके समयसे लेकर एक समय अधिक एक आवलि काल तक अजघन्य स्थितिसंक्रम बना रहता है और इसके बाद यह नियमसे एक समयके लिये जघन्य स्थितिसंक्रमको प्राप्त हो जाता है । इसीसे यहाँ अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण कहा है । तथा अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल नरककी उत्कृष्ट आयुकी अपेक्षासे कहा है, क्योंकि इतने काल तक नारकीके अजघन्य स्थितिके प्राप्त होनेमें कोई बाधा नहीं आती है । अजघन्य स्थितिसंक्रमके उत्कृष्ट कालके सिवा शेष सब काल प्रथम नरकमें घटित होते हैं, इसलिये प्रथम नरकमें उक्त कालोंको सामान्य नारकियोंके समान कहा है । किन्तु प्रथम नरककी उत्कृष्ट स्थिति एक सागरप्रमाण होनेके कारण यहाँ अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल एक सागर ही प्राप्त होता है । दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तक जो जीव उत्कृष्ट आयुके साथ वहाँ उत्पन्न हुआ है । फिर अन्तर्मुहूर्तमें जिसने उपशमसम्यक्पूर्वक

१७५१ तिरिक्सेसु मोह० बह० अह० एयम०, उरु० अंतोमु० । अज० ज०  
 एयस०, उरु० असंखेजा खोगा । पचि० तिरि० तिरि० अह० द्विदि० सफ० अह० उरु०  
 एयस० । अज० बह० आनखिया समपूणा उरु० सगद्विदी । पधिदि० तिरि० अपज  
 मणुसप्रपञ्च० अह० द्विदिस अह० उरु० एयस० । अज० अहण्जेणावसिया समपूजा,  
 उरु० अंतोमु० ।

अनन्तानुसंधीचतुष्कम्भी चिसदोत्रना कर लो है इसके नरपद्युके अन्वित समदर्शे अपन्य स्थिति-  
 संकम प्राप्त होय है । इसीसे यहाँ अपन्य स्थितिसंकमका अपन्य और बहुरूप करत एक समय कहा  
 है । यहाँ अपन्य स्थितिसंकमका अपन्य काज बह्राधी अपन्य स्थितिप्रमाण और बहुरूप वाक्य  
 बहुरूप स्थितिप्रमाण है यह व्युत्पत्त्य ही है । सत्त्वनी प्रविर्भिम भी वा जीवन मर सम्भवत्वके साथ  
 रहा है । किन्तु अन्तमें अन्तमुहूर्त काजके रूप रहने पर जो मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है । ऐसा जीवन  
 यदि सत्कर्मस्थितिके समान एक समयके सिधे स्थितिबन्ध करता है तो इसके अपन्य स्थितिसंकम  
 एक समय तक होया है और यदि सत्कर्मस्थितिके समान अन्तमुहूर्ततक स्थितिबन्ध करता है तो  
 इसके अपन्य स्थितिसंकम अन्तमुहूर्ततक होता है । इसीसे यहाँ अपन्य स्थितिसंकमका अपन्य काज  
 एक समय और बहुरूप काज अन्तमुहूर्तप्रमाण कहा है । किन्तु इसी जीवनके चारमें अन्तमुहूर्त  
 काज एक अपन्य स्थितिसंकम होता है । इसीसे यहाँ अपन्य स्थितिसंकमका अपन्य काज  
 अन्तमुहूर्त कहा है । तथा यहाँ अपन्य स्थितिसंकमका बहुरूप काज बहुरूप स्थितिप्रमाण है  
 यह स्पष्ट ही है ।

१७५२ त्रिषंभोमो मोहनीयके अपन्य स्थितिसंकमका अपन्य काज एक समय है और  
 बहुरूप काज अन्तमुहूर्त है । अपन्य स्थितिसंकमका अपन्य काज एक समय है और बहुरूप काज  
 असंख्यात लोकप्रमाण है । पंचेन्द्रिय त्रिषंभिकमें अपन्य स्थितिसंकमका अपन्य और बहुरूप काज  
 एक समय है । अपन्य स्थितिसंकमका अपन्य काज एक समय कम एक आवृत्तिप्रमाण है  
 और बहुरूप काज अपनी-अपनी बहुरूप स्थितिप्रमाण है । पंचेन्द्रिय त्रिषंभ अपन्यात और मनुष्य  
 अपन्यात जीवोंमें अपन्य स्थितिसंकमका अपन्य और बहुरूप काज एक समय है । अपन्य स्थिति-  
 संकमका अपन्य काज एक समयकम एक आवृत्तिप्रमाण है और बहुरूप काज अन्तमुहूर्त है ।

विशेषार्थ—जो पंचेन्द्रिय जीव इससमुत्पत्तिक क्रियाको करके दिव्यिसंक्रमके समान  
 एक समयके सिधे स्थितिबन्ध करत है इसके एक समय तक अपन्य स्थितिसंकम होता है । तथा  
 जो अन्तमुहूर्त तक दिव्यिसंक्रमके समान स्थितिकम करता है उसके अन्तमुहूर्त तक अपन्य  
 स्थितिसंकम होय है । यही कारण है कि त्रिषंभोमो अपन्य स्थितिसंकमका अपन्य काज एक  
 समय और बहुरूप काज अन्तमुहूर्त कहा है । जो विषय अपन्य स्थितिसंकमको करके एक समय  
 तक अपन्य स्थितिसंकमको प्राप्त होता है और दूसरे समयमें मर कर अन्य गतिमें चला जाता है  
 इसके अपन्य स्थितिसंकम एक समय तक होता जाता है । इसीसे यहाँ अपन्य स्थितिसंकमका  
 अपन्य काज एक समय कहा है । ऐसा विषय है कि पंचेन्द्रियोंमें अपन्य स्थिति बाहर जीवोंके ही  
 प्राप्त होती है सूक्ष्म जीवोंके नहीं । सूक्ष्म जीवोंके तो निरन्तर अपन्य स्थिति ही प्राप्त होती है ।  
 और सूक्ष्म पंचेन्द्रिय पर्यवर्तमें निरन्तर रहनेका काज असंख्यात लोकप्रमाण है । इससे यहाँ  
 अपन्य स्थितिसंकमका बहुरूप काज असंख्यात लोकप्रमाण कहा है । जो पंचेन्द्रिय जीव इत-  
 समुत्पत्तिक क्रियाको करके पंचेन्द्रिय त्रिषंभिकमें ब्रह्म होय है उसके यहाँ ब्रह्म होनेके प्रथम

§ ५५२. मणुसतिए जह० ओघभगो । अज० जह० एयस०, उक्क० सगट्टिदी । कथमेयसमयोवलद्धी ? ण, असंकमादो अजहण्णमंक्रमे पडिय तत्थेयसमयमच्छिय विदिसमए कालगदस्स तदुवलंभादो । देवेसु णारयभंगो । एवं भवण०-वाण० । णवरि सगट्टिदी । जोदिसियादि जाव सव्वट्टे त्ति द्विदिविहत्तिभंगो । एवं जाव० ।

समयसे लेकर एक आवलिके अन्तमें एक समयके लिये जघन्य स्थितिसंक्रम देखा जाता है । इसीसे पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमे जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है । तथा इसी जीवके जघन्य स्थितिसंक्रमके प्राप्त होनेके पूर्व एक समय कम एक आवलि काल तक अजघन्य स्थितिसंक्रम होता रहता है । इसीसे यहाँ अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय कम एक आवलिप्रमाण कहा है । इनमें अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी कायस्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंके भी जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय और अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय कम एक आवलिप्रमाण पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके समान घटित कर लेना चाहिये । तथा यहाँ जो अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण कहा है सो यह इन जीवोंकी उत्कृष्ट कायस्थितिकी अपेक्षासे कहा है ऐसा जानना चाहिये ।

§ ५५२ मनुष्यत्रिकमें जघन्य स्थितिसंक्रमका काल ओघके समान है । अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है ।

**शंका**—यहाँ अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय कैसे उपलब्ध होता है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि जो असंक्रमसे अजघन्य स्थितिसंक्रमको प्राप्त होकर और एक समय बढ़ रह कर दूसरे समयमें मर गया है उसके अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय उपलब्ध होता है ।

देवोंमें जघन्य और अजघन्य स्थितिसंक्रमका काल नारकियोंके समान है । इसी प्रकार भवनवासी और व्यन्तरोमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए । तथा ज्योतिषियोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जघन्य और अजघन्य स्थितिसंक्रमका भंग जघन्य और अजघन्य स्थितिबिभक्तिके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

**विशेषार्थ**—ओघसे जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समयप्रमाण सूक्ष्मसम्पराय गुणस्थानमें प्राप्त होता है जिसका प्राप्त होना मनुष्यत्रिकके ही सम्भव है । इसीसे यहाँ मोहनीयके जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल ओघके समान कहा है । यहाँ अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय क्यों है इसका खुलासा मूलमें किया ही है । तथा अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है । सामान्य देव, भवनवासी और व्यन्तर इन तीन प्रकारके देवोंमें अस्त्री जीव मर कर उत्पन्न हो सकते हैं, इसलिये इनमें जघन्य और अजघन्य स्थितिसंक्रमका काल नारकियोंके समान बन जाता है । किन्तु इनकी भवस्थिति जुदी जुदी होनेसे यहाँ अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण प्राप्त होता है । अब रहे ज्योतिषी और सौधर्म कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देव सो इनमें जिस प्रकार जघन्य और अजघन्य स्थितिबिभक्तिका काल बतलाया है उसी प्रकार जघन्य और अजघन्य स्थितिसंक्रमका भी काल घटित कर लेना चाहिये । उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है । यही कारण है कि यहाँ जघन्य और अजघन्य स्थितिसंक्रमका काल जघन्य और अजघन्य स्थितिबिभक्तिके कालके समान कहा है ।

१८५३ अतरं इविह जहण्णुअस्समेणण । उक्क० पयद । इविहो णिदेसो—  
ओषण आदेसण य । ओषण मोह० उक्क० द्विदिसं० अतरं जहण्णेण अतोमुहुत्तं, उक्क०  
अणवकात्तमत्तंवेत्ता पोम्माअपरिवइत्ता । अणु० अ० एयस , उक्क० अतोमु० ।

१८५४ आदेसेण नेरय० मोह उक्क० अह अतोमु०, उक्क० तेघीसं सागरो०  
देसणाणि । अणु० ओषं । एवं सुव्वयेरय० । अवरि सगद्धिदो देसणा ।

१८५० तिरिकसेसु ओषमंगो । पंथि० तिरिकसतियश् उक्क० अ० अतोमु०, उक्क०  
पुम्बकोद्धिपुषण । अणु० ओषो । एवं मणुम०श् । पंथि० तिरि० अयज०—मणुसअयज०  
उक्क० अणु० णरिय अतर । एवमाणदादि आव सम्बद्धे चि ।

१८५३ अन्तर दो प्रकारका है—अथर्व और बह्वृत्त । बह्वृत्तका प्रकार यह है । निर्दिष्टा वा  
प्रकारका है—ओष और आदेश । ओषधी अपेक्षा मोहनोपके बह्वृत्त स्थितिसंक्रमका अथर्व अन्तर  
अन्तमुहुत्तप्रमाण और बह्वृत्त अन्तर अन्तम अन्न है जो अतंसक्याथ पुद्गाअपरिवर्तनप्रमाण है ।  
अनुत्पद्य स्थितिसंक्रमका अथर्व अन्तर एक समय है और बह्वृत्त अन्तर अन्तमुहुत्त है ।

विशेषार्थ—अनुत्पद्य स्थितिसंक्रमका अथर्व अन्न अन्तमुहुत्त है । इसीसे बह्वृत्त स्थिति-  
संक्रमका अथर्व अन्तर अन्तमु हुत्त कहा है । एवेन्द्रियादि पर्यायों रखकर यह भी अन्तम अन्न  
उक्त अनुत्पद्य स्थितिका अर्थ करता रह्या है जिससे इसे इतने अन्न उक्त बह्वृत्त स्थितिधी प्राप्ति  
नहीं होती । इसीसे यहाँ बह्वृत्त स्थितिसंक्रमका बह्वृत्त अन्तर अन्तम अन्नप्रमाण कहा है ।  
बह्वृत्त स्थितिका अथर्व अन्न एक समय और बह्वृत्त अन्न अन्तमुहुत्त है । इसीसे यहाँ  
अनुत्पद्य स्थितिसंक्रमका अथर्व अन्तर एक समय और बह्वृत्त अन्तर अन्तमुहुत्तप्रमाण कहा है ।

१८५४ आदेशसं नारिकियेमें मोहनोपके बह्वृत्त स्थितिसंक्रमका अथर्व अन्तर अन्तमुहुत्त  
है और बह्वृत्त अन्तर अन्न कम लीस सागर है । उक्त अनुत्पद्यका अर्थ ओषके समान है । इसी  
प्रकार सब नारिकियेमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि बह्वृत्त स्थितिसंक्रमका बह्वृत्त  
अन्तर अन्न कम अपनी अपनी बह्वृत्त स्थितिप्रमाण है ।

विशेषार्थ—अनुत्पद्य स्थितिका अथर्व अन्न अन्तमुहुत्त होनेसे बह्वृत्त स्थितिसंक्रमका  
अथर्व अन्तर अन्तमुहुत्त कहा है । जिस नारिकीने आयुके मारगमें और अन्तमें बह्वृत्त स्थिति-  
संक्रम किया है और मन्थों जो अनुत्पद्य स्थितिसंक्रम करता रहा उसके बह्वृत्त स्थितिसंक्रमका बह्वृत्त  
अन्तर अन्न कम लीस सागरप्रमाण पाया गया है । इसीसे यहाँ बह्वृत्त स्थितिसंक्रमका बह्वृत्त  
अन्तर अन्नप्रमाण कहा है । बह्वृत्त स्थितिसंक्रमका अथर्व अन्न एक समय और बह्वृत्त अन्न  
अन्तमुहुत्त है । इसीसे यहाँ अनुत्पद्य स्थितिसंक्रमका अथर्व अन्तर एक समय और बह्वृत्त अन्न  
अन्तमुहुत्त ओषके समान कहा है । ओष अन्न सुगम है ।

१८५४ निर्दिष्टोमें बह्वृत्त और अनुत्पद्य स्थितिसंक्रमका अन्तर ओषके समान है ।  
एवेन्द्रिय निर्दिष्टात्रिकमें बह्वृत्त स्थितिसंक्रमका अथर्व अन्तर अन्तमुहुत्त है और बह्वृत्त अन्तर  
पूर्वोक्तेन्द्रियप्रमाण है । उक्त अनुत्पद्यका अन्तर ओषके समान है । मनुष्यत्रिकमें इसी प्रकार  
अन्तता चाहिये । तथा एवेन्द्रिय निर्दिष्ट अथर्व और मनुष्य अथर्व और जीवोंमें बह्वृत्त और  
अनुत्पद्य स्थितिसंक्रमका अन्तरकाह नहीं है । आन्तसे लेकर सर्वांसिद्धि उक्त भी इसी प्रकार  
जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—एवेन्द्रिय निर्दिष्टात्रिककी बह्वृत्त अथर्वस्थिति पूर्वोक्तेन्द्रियप्रमाण अथर्व ओष परन्त  
है । किन्तु मोगाम्निमें मोहनोपकी बह्वृत्त स्थितिका प्राप्त होना सम्भव नहीं है इसी से यहाँ बह्वृत्त

§ ५५६. देवगदीए देवेसु उक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० अट्टारससागरो० सादिरेयाणि । अणु० ओघमंगो । भवणादि जाव सहस्सारे त्ति उक्क० द्विदिसं० जह० अंतोमु०, उक्क० सगाट्टिदी देसणा । अणु० ओघो । एव जाव० ।

§ ५५७. जहण्णए पयदं । दुविहो णिदेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण जह० द्विदिसं० णत्थि अंतरं । अज० ज० एयस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं. उवसमसेटीए तदुवल्लद्धीदो । एवं मणुसतिय०३ । णवरि अज० अंतरं जहण्णु० अंतोमु० ।

§ ५५८. आदेसेण णेरइय० जह० णत्थि अंतरं । अज० जहण्णुक्क० एयसमओ ।

स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण कहा है । मनुष्यत्रिकमें भी अनुत्कृष्ट-स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिये । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तमें दो बार उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका प्राप्त होना या उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका अन्तर देकर दो बार अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका प्राप्त होना सम्भव नहीं है । इसीसे इनके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमके अन्तरका निषेध किया है । यही बात आनतसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तक जाननी चाहिये । इसीसे वहाँ भी उक्त दो प्रकारके स्थितिसंक्रमोंके अन्तरका निषेध किया है । शेष कथन सुगम है ।

§ ५५६ देवगतिमे देवोंमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका अन्तर ओघके समान है । भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका अन्तर ओघके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—देवोंमें ओघ उत्कृष्ट स्थिति सहस्रार कल्प तक पाई जाती है । इसीसे यहाँ उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर प्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ५५७ जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे जघन्य स्थितिसंक्रमका अन्तरकाल नहीं है । अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि इसकी उपलब्धि उपशमश्रेणियोंमें होती है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

विशेषार्थ—मोहनीयका जघन्य स्थितिसंक्रम क्षपकश्रेणियोंमें प्राप्त होता है । किन्तु एक जीवके क्षपकश्रेणिका दो बार प्राप्त होना सम्भव नहीं है । इसीसे यहाँ जघन्य स्थितिसंक्रमके अन्तरका निषेध किया है । जो जीव उपशमश्रेणियोंमें एक समय तक मोहनीयकी अजघन्य स्थितिका असंक्रामक होता है और दूसरे समयमें मर कर देव हो जाता है उसके मोहनीयकी अजघन्य स्थितिके संक्रमका जघन्य अन्तर एक समय पाया जाता है । तथा उपशान्तमोहका काल अन्तर्मुहूर्त होनेके कारण अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है । यह ओघप्ररूपणा मनुष्यत्रिकमें घटित हो जाती है, इसलिये मनुष्यत्रिकमें इस कथनको ओघके समान कहा है । किन्तु मनुष्यत्रिकमें अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय नहीं घटित होता, क्योंकि ओघसे एक समय अन्तर दो गतियोंकी अपेक्षासे प्राप्त होता है । इसलिये यहाँ उत्कृष्ट अन्तरके समान जघन्य अन्तर भी अन्तर्मुहूर्त जानना चाहिये ।

§ ५५८ आदेशसे नारकियोंमें जघन्य स्थितिसंक्रमका अन्तर नहीं है । अजघन्य स्थिति



एव फन्माए सध्वपरिधिदियतिरिक्त्त-मणुसजपज्ञ०-देवा मवण०-बाणवेतरे चि । विदिपादि जाव छट्ठि चि जइणणाजइ० णतिय अतर । ओदिसिमादि जाव सध्वहा चि एपं चव । सचमाए सह० णतिय अंतरं । अज० जइ० एयस०, उक्क० अंतोमु० । तिरिक्त्तगर्गए तिरिक्त्तेसु जइ० ज० अंतोमु०, उक्क० असंसेजा सोगा । अज० जइ० एयस०, उक्क० अंतोमु० । एपं जाव० ।

संक्रमक्य अथम्य और अरुह्य अन्तर एक समय है । इसी प्रकार पहली पृथिवीके मारकी, सब पबेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्वाप्त सामान्य देव भवनवासी और अमर देवोंमें जानना चाहिये । दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके मारकीमें अथम्य और अत्रयन्व स्थितिसंक्रमक्य अन्तर नहीं है । अतोपिचोसे लेकर सर्वावसिद्धि तकके देवोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये । सातवीं पृथिवीमें अथम्य स्थितिसंक्रमक्य अन्तर नहीं है । अत्रयन्व स्थितिसंक्रमक्य अथम्य अन्तर एक समय है और अरुह्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । तिर्यञ्जातिमें तिर्यञ्जोमें अथम्य स्थितिसंक्रमक्य अथम्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और अरुह्य अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है । अत्रयन्व स्थितिसंक्रमक्य अथम्य अन्तर एक समय है और अरुह्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार अनाहारक मार्ग्या तक जानना चाहिये ।

विश्लेषार्थ—जो असंखी मारकीमें उत्पन्न होता है वहीके एक समयके सिद्धे अथम्य स्थितिसंक्रमक्य प्राप्त होता सम्भव है । इसीसे यहाँ अथम्य स्थितिसंक्रमके अन्तरक्य निषेध करके अत्रयन्व स्थितिसंक्रमक्य अथम्य और अरुह्य अन्तर एक समय कथ्यता है । प्रथम मारकीके मारकी, सब पबेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्वाप्त सामान्य देव भवनवासी देव और अमर देव इन्में भी बवासम्भव जो असंखी या परेन्द्रिय जीव मर कर उत्पन्न होय हैं उन्हेंके एक समयके सिद्धे अथम्य स्थिति संक्रमक्य पाया जाता सम्भव है । इससे यहाँ भी सामान्य मारकीमेंके समान अथम्य स्थितिसंक्रमके अन्तरक्य निषेध करके अत्रयन्व स्थितिसंक्रमक्य अथम्य और अरुह्य अन्तर एक समय कथ्यता है । दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके द्वित मारकीमें अथम्य स्थितिसंक्रम पाया जाता है वह उनके अन्तिम समयमें ही पाया जाता है, इस सिद्धे यहाँ अथम्य और अत्रयन्व दोषों प्रकारके स्थितिसंक्रमोंके अन्तरक्य विषय किता है । अतोपिचोसे लेकर सर्वावसिद्धि तकके देवोंमें भी द्विजके अथम्य स्थितिसंक्रम पाया जाता है वह उनके अन्तिम समयमें ही पाया जाता है इस सिद्धे इन मार्ग्याओंमें भी अथम्य और अत्रयन्व स्थितिसंक्रमके अन्तरक्य निषेध किता है । सातवीं पृथिवीमें द्विजके अथम्य स्थितिसंक्रम होता है वह आहुमें अन्तर्मुहूर्त कथ्य होय रखने पर कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अन्तर्मुहूर्त तक होता है । इससिद्धे इनके अथम्य स्थितिसंक्रमके अन्तरक्य निषेध करके अत्रयन्व स्थितिसंक्रमक्य अथम्य अन्तरक्य एक समय और अरुह्य अन्तर कात्र अन्तर्मुहूर्त कथा है । तिर्यञ्जातिमें अत्रयन्व स्थितिसंक्रमक्य अथम्य कात्र अन्तर्मुहूर्तप्रमाण और अरुह्य कात्र असंख्यात लोक प्रमाण कथ्यता है । इसीसे इनके अथम्य स्थितिसंक्रमक्य अथम्य अन्तरक्य अन्तर्मुहूर्तप्रमाण और अरुह्य अन्तरक्य असंख्यात लोकप्रमाण कथा है । तथा तिर्यञ्जातिमें अथम्य स्थितिसंक्रमक्य अथम्य कात्र एक समय और अरुह्य कात्र अन्तर्मुहूर्त कथ्यता है । इसीसे यहाँ अत्रयन्व स्थितिसंक्रमक्य अथम्य अन्तरक्य एक समय और अरुह्य अन्तरक्य अन्तर्मुहूर्त कथा है । इसी प्रकार अनाहारक मार्ग्या तक बचाचारक अन्तरक्य अत्र जना चाहिये ।

§ ५५९. शाणाजीवेहि भंगविचओ दुविहो जहण्णु०द्विदिसं०विसयभेदेण । एत्थुक्खस्से पयदं । तत्थद्वपदं—जे उक्खस्सियाए द्विदीए संकामगा ते अणुक्खस्सियाए द्विदीए असंकामगा इच्चादि । एदेणद्वपदेण दुविहो णिद्देशो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्ख०द्विदीए सिया सव्वे असंकामगा । सिया एदे च संकामओ च १ । सिया एदे च संकामया च २ । धुवसहिदा ३ भंगा । अणुक्ख० संकामयाणं पि एवं चेव । णवरि विवरीयं कायञ्चं । एवं चदुसु गदीसु । णवरि मणुसअपज्ज० उक्ख० अणुक्ख० अद्व भंगा । एवं जाव०

§ ५५६. नाता जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयके दो भेद हैं—जघन्य स्थितिसंक्रमविषयक और उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमविषयक । यहाँ उत्कृष्टका प्रकरण है । इस विषयमें यह अर्थपद है—जो उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक होते हैं वे अनुत्कृष्ट स्थितिके असंक्रामक होते हैं आदि । इस अर्थपदके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघकी अपेक्षा मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके कदाचित् सब जीव असंक्रामक होते हैं । कदाचित् मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बहुत जीव असंक्रामक होते हैं और एक जीव संक्रामक होता है १ । कदाचित् मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बहुत जीव असंक्रामक होते हैं और बहुत जीव संक्रामक होते हैं २ । इस प्रकार ध्रुवसहित तीन भंग होते हैं ३ । अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंके भी इसी प्रकार तीन भंग होते हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ विपरीतरूपसे कथन करना चाहिये । इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमवालोंकी अपेक्षा आठ भंग होते हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—नियम यह है कि जो उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक होते हैं वे अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक नहीं होते और जो अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक होते हैं वे उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक नहीं होते । इस हिसाबसे यद्यपि उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंसे अनुत्कृष्ट स्थितिके असंक्रामक और अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंसे उत्कृष्ट स्थितिके असंक्रामक जीव जुड़े नहीं ठहरते । तथापि एक बार उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंको और दूसरी बार अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंको मुख्य करके भंगोंका संग्रह करने पर तीन-तीन भंग प्राप्त होते हैं । जो मूलमें गिनाये ही हैं । बात यह है कि उत्कृष्ट स्थितिका संक्रामक जीव कदाचित् एक भी नहीं रहता, कदाचित् एक होता है और कदाचित् अनेक होते हैं । इन तीन विकल्पोंको मुख्य करके भंग कहने पर वे इस प्रकारसे प्राप्त होते हैं—(१) कदाचित् सब जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके असंक्रामक होते हैं । (२) कदाचित् बहुत जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके असंक्रामक और एक जीव संक्रामक होता है । (३) कदाचित् बहुत जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके असंक्रामक और बहुत जीव संक्रामक होते हैं । ये तो उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकों और असंक्रामकोंकी अपेक्षासे भंग हुए । और जब अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकों और असंक्रामकोंको प्रमुख कर दिया जाता है तब इनकी अपेक्षासे ये तीन भंग प्राप्त होते हैं—(१) कदाचित् सब जीव मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक होते हैं । (२) कदाचित् बहुत जीव मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक होते हैं और एक जीव असंक्रामक होता है । (३) कदाचित् बहुत जीव मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक होते हैं और बहुत जीव असंक्रामक होते हैं । इसी प्रकार चारों गतियोंमें ये तीन भंग होते हैं । किन्तु लब्धपर्याप्त मनुष्य यह सान्तर मार्गणा है, इसलिए इसमें प्रत्येककी अपेक्षा आठ आठ भंग होते हैं । यथा—(१) कदाचित् एक जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रामक होता है । (२) कदाचित् नाना बजी

१५६० अहण्यप्य पयद । सहा येव अहृपद । दुबिहो पिरैसी—ओषध  
आदेसेज य । ओषेण मोह० अह० द्विदिस० मयणित्वा । पुणो अज० पुत्र काऊच  
तिण्णि मंगा । एव चदुगदीसु । पत्तरि तिरिक्सेसु अह० अज गियमा अत्थि ।  
मणुसअपन्न० अह० अज० संक० मयणित्वा । पुणो मगा अहृ ८ । एव जाव० ।

मोहनीयधी इच्छ स्वितिके संक्रमक होते हैं । (३) कदाचित् एक जीव मोहनीयधी  
इच्छ स्वितिकर असंक्रमक होता है । (४) कदाचित् नाना जीव मोहनीयधी इच्छ स्वितिके  
असंक्रमक होते हैं । (५) कदाचित् एक जीव मोहनीयधी इच्छ स्वितिकर संक्रमक और एक  
जीव असंक्रमक होता है । (६) कदाचित् एक जीव मोहनीयधी इच्छ स्वितिकर संक्रमक और  
नाना जीव असंक्रमक होते हैं । (७) कदाचित् नाना जीव मोहनीयधी इच्छ स्वितिके संक्रमक  
और एक जीव असंक्रमक होता है । (८) कदाचित् नाना जीव मोहनीयधी इच्छ स्वितिके  
संक्रमक और नाना जीव असंक्रमक होते हैं । ये इच्छ स्वितिके संक्रमकों और असंक्रमकों  
अपेक्षासे आठ मंग कहे हैं । इसी प्रकार अनुलुष्ट स्वितिके संक्रमकों और असंक्रमकों  
अपेक्षासे भी आठ मंग कहने चाहिये । इसी प्रकार अन्वहारक मार्गोंका एक यथायोग्य मंग से अन्ना  
चाहिये ।

१५६१ अथ अपन्यत्र प्रकरय है । अर्कस्य पूर्वोक्त प्रकर है । निर्वैरा हो प्रकरका है—  
ओषनिर्वैरा और अवेरानिर्वैरा । ओषसे मोहनीयधी अपन्य स्वितिके संक्रमक जीव प्रक्रीय हैं ।  
छिद्र अत्रापन्य स्वितिके संक्रमकोंका भ्रम करके तीन मंग होत हैं । इसी प्रकार चारों गतियोंमें अन्न  
रचना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि तिर्यक्छेति अपन्य स्वितिके संक्रमकासे और अत्रापन्य  
स्वितिके संक्रमकासे जीव नियमसे हैं । मनुष्य अपवर्तकमें अपन्य और अत्रापन्य स्वितिके संक्रम  
कासे मन्वरीय हैं । आठ मंग होते हैं । इसी प्रकार अन्वहारक मार्गोंका एक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—ओषसे मोहनीयधी अपन्य स्वितिकर संक्रम अत्रापन्यमें होत है । किन्तु  
अत्रापन्यमें एक तो सहा जीवोंका पाया जाय सम्भव नहीं है । परि पये भी जाते हैं ता कदाचित्  
एक जीव पाया जाता है और कदाचित् नाना जीव पाये जाते हैं । इसीसे मोहनीयधी अपन्य  
स्वितिके संक्रमकोंमें मन्वरीय कहा है । यहाँ एक जीव और मन्ना जीवोंकी अपेक्षा तीन मंग  
होते । मंगोंका क्रम यही है जिसका इच्छेक इच्छेकी अपेक्षा तीन मंग बलवासे समय कर प्ये  
हैं । किन्तु अत्रापन्य स्वितिके संक्रमक जीव नियमसे पाये जाते हैं, अत्र उस अपेक्षासे तीन मंग  
होत हैं—(१) कदाचित् अत्रापन्य स्वितिके संक्रमक सहा जीव होते हैं । (२) कदाचित् बहुत जीव  
अत्रापन्य स्वितिके संक्रमक और एक जीव असंक्रमक होता है । (३) कदाचित् बहुत जीव  
अत्रापन्य स्वितिके संक्रमक और बहुत जीव असंक्रमक होते हैं । पर ओष प्रकन्य चारों  
गतियोंमें बन जाती है इसलिये चारों गतियोंके क्रमको ओषके समान कहा है । किन्तु तिर्यक्छाति  
इसका अपवाद है । बात यह है कि तिर्यक्छातिमें अपन्य स्विति और अत्रापन्य स्वितिके संक्रमक  
मन्ना जीव सहा पाये जाते हैं । इसलिये यहाँ अन्न मिस प्रकरका है । मनुष्य अपवर्तक उत्तर  
मार्गोंका होनेसे यहाँ जिस प्रकार इच्छ और अनुलुष्ट स्वितिके संक्रमकोंकी अपेक्षा आठ-आठ मंग  
कहे हैं वही प्रकार यहाँ भी जानना चाहिये । इसी प्रकार अन्वहारक मार्गोंका एक अपनी-अपनी  
विशेषताको जानकर मंगोंका क्रम करना चाहिये ।

इस प्रकार मंगविषयानुक्रम सम्पन्न हुआ ।

§ ५६१. भागाभा० दुविहो जह०-उक्० द्विदिसंका० विसयभेदेण । उक्कसे ताव पयदं । दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्० द्विदिसंक्रामया सच्चजीवाणं केव० भागो ? अणंतिमभागो । अणु० द्विदिसंका० सच्चजी० केव० भागो ? अणंता भागा । एवं तिरिक्खोघं आदेसेण णेरइय० उक्० द्विदिसं० सगसच्चजी० केव० ? असंखे० भागो । अणु० असंखेज्जा भागा । एवमसंखेज्जरासीणं । संखेज्जरासीणं पि एवं चेव । णवरि सगपडिभागिओ भागो कायव्वो । एवं जाव० ।

§ ५६२. जह० पयदं । दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० जह० द्विदिसं० सच्चजीवाणं केव० भागो ? उक्कस्सभंगो । अज० अणुक्कस्सभंगो । एवं सच्चत्थ गदिमग्गणाए । णवरि तिरिक्खेसु णारयभंगो । एवं जा० ।

§ ५६३. परिमाणं दुविहं—जह० उक्० । तत्थुक्कस्सए पयदं । दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्० द्विदिसं० केत्तिया ? असंखेज्जा । अणु० अणंता । एवं तिरिक्खोघो । आदेसेण णेरइय० मोह० उक्० अणुक्क० असंखेज्जा । एवं सच्चणेरइय०-सच्चपंचिदियतिरिक्ख०-मणुस० अपज्ज०-भवणादि जाव सहस्सार त्ति ।

§ ५६१ भागाभाग दो प्रकारका है—जघन्य स्थितिसंक्रमविषयक और उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमविषयक । सर्वप्रथम उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघकी अपेक्षा मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्त बहुभागप्रमाण हैं । इसीप्रकार सामान्य तिर्यंचोंमें भागाभाग जानना चाहिये । आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीव सब जीवोंके असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । जिन राशियोंकी संख्या असंख्यात है उनका इसी प्रकार भागाभाग जानना चाहिये । तथा जिन राशियोंकी संख्या संख्यात है उनका भी इसी प्रकार भागाभाग जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ अपने प्रतिभागके अनुसार भागाभाग प्राप्त करना चाहिये । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

§ ५६२ जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघकी अपेक्षा मोहनीयकी जघन्य स्थितिके संक्रामक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? इनका भागाभाग उत्कृष्टके समान है । अजघन्य स्थितिके संक्रमकोंका भागाभाग अनुत्कृष्टके समान है । इसी प्रकार सर्वत्र गतिमार्गणामें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि तिर्यंचोंमें भागाभाग नारकियोंके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

§ ५६३ परिमाण दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीव अनन्त हैं । इसी प्रकार सामान्य तिर्यंचोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका परिमाण जानना चाहिये । आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीव असंख्यात हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य अपर्याप्त और भवतवासी देवोंसे लेकर सहस्वार कल्प तकके देवोंमें

मनुसेसु उक्तं सखेज्जा । अणुं असंखेजा । एवमाणद्वादि जाव अवरत्तादि चि । मणुसपञ्चममणुसिणीसु सम्बद्धे च उक्तसाणुक्तं संकां सखेज्जा । एव जाव ।

१५६४ अहं पयवं । दुविहो भिरेतो—ओपेण आदेसेण य । ओपेण मोह अहं द्विदिसं केत्तिपा ? सखेज्जा । अज्जं अणता । आदसेण गेरत्तयं अहं अज्जं असखेज्जा । एवं पटमाए । सचमाए च एव थेव । सन्वर्पचिं विरिं—मणुसपञ्चमज्जं—देवगर्हए देवा मवणं बाणवतरे चि विदिपादि जाव छट्ठि चि अहं संखेज्जा, अज्जं असंखेज्जा । एव मणुस—ओहसिपादि जाव अवरत्तादि चि । विरिक्खेसु अहं अज्जं अणता । मणुसपञ्चममणुसिणीसु सम्बद्धे च अहं अज्जं सखेज्जा । एव जाव ।

१५६५ खेवं दुविह—अहं विसयमुक्कं विसयं च । उक्कस्तए पपद । दुविहो भिरेतो—ओपेण आदेसेण य । ओपेण मोहं उक्कं द्विदिस केव ? सोगस्त असखे माग । अणुं सम्बल्लेग । एव विरिक्खोपो । ससगइममाणामेदेसु उक्कं अणुक्कं सोगं असखेमागे । एवं जाव ।

अणुत्त और अनुत्त स्थितिके संश्रमकोष परिमाण जानना चाहिये । मनुष्योंमें अणुत्त स्थितिके संश्रमक बीज संख्यात हैं । अनुत्त स्थितिके संश्रमक बीज असंख्यात हैं । इसी प्रकार अणुत्त कल्पसे लेकर अणुत्त तकके क्षेत्रोंमें जानना चाहिये । मनुष्य पर्याप्त मनुष्यनी और सर्वाहसिद्धिके क्षेत्रोंमें अणुत्त और अनुत्त स्थितिके संश्रमकोष परिमाण संख्यात है । इसी प्रकार अणुत्तकारक मार्गया तक जानना चाहिये ।

१५६६ अणुत्त प्रकरण है । निर्रेरा दो प्रकारका है—ओपनिर्रेरा और आदेरानिर्रेरा । ओपसे मोहनीयकी अणुत्त स्थितिके संश्रमक बीज कितने हैं ? संख्यात हैं । अणुत्त स्थितिके संश्रमक बीज अणुत्त हैं । आदेरानी अपेक्षा नारकियोंमें अणुत्त और अणुत्त स्थितिके संश्रमक बीज असंख्यात हैं । पक्षी और सखी वृक्षोंमें इसी प्रकार जानना चाहिये । तथा सब पक्षिभ्रम विर्रेरा मणुत्त अणुत्त, देवगर्हमें सामान्य देव, मवतवासी देव और अणुत्त क्षेत्रोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये । वृत्त से लेकर कृती वृक्षों तकके नारकियोंमें अणुत्त स्थितिके संश्रमक बीज संख्यात हैं और अणुत्त स्थितिके संश्रमक बीज असंख्यात हैं । इसी प्रकार सामान्य मणुत्त और अणुत्त क्षेत्रोंसे लेकर अणुत्त तकके क्षेत्रोंमें जानना चाहिये । विर्रेरोंमें अणुत्त और अणुत्त स्थितिके संश्रमक बीज अणुत्त हैं । मणुत्त पर्याप्त, मणुत्तनी और सर्वाहसिद्धिके क्षेत्रोंमें अणुत्त और अणुत्त स्थितिके संश्रमक बीज संख्यात हैं । इसी प्रकार अणुत्तकारक मार्गया तक जानना चाहिये ।

१५६७ क्षेत्र दो प्रकारका है—अणुत्त स्थितिके संश्रमकोषसे सम्बन्ध रखनेवाला और अणुत्त स्थितिके संश्रमकोषसे सम्बन्ध रखनेवाला । अणुत्त प्रकरण है । निर्रेरा दो प्रकारका है—ओपनिर्रेरा और आदेरानिर्रेरा । ओपसे मोहनीयकी अणुत्त स्थितिके संश्रमक बीज कितने क्षेत्रों रखते हैं ? क्षेत्रोंके असंख्यातसे भाग क्षेत्रोंमें रखते हैं । अनुत्त स्थितिके संश्रमक बीज सब क्षेत्रोंमें रखते हैं । इसी प्रकार सामान्य विर्रेरोंमें जानना चाहिये । तथा गति मार्गको क्षेत्र कितने क्षेत्र हैं उनमें अणुत्त और अनुत्त स्थितिके संश्रमक बीज क्षेत्रोंके असंख्यातसे भागसमाय क्षेत्रोंमें रखते हैं । इसी प्रकार अणुत्तकारक मार्गया तक जानना चाहिये ।

§ ५६६. जह० पयदं । दुविहो णिद्दो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण उक्कस्स-भगो । एवं सञ्वासु गईसु । णवरि तिरिक्खोघे जह० लोग० संखे०भागो । एवं जाव० ।

§ ५६७. पोसणं दुविहं—जहण्णविसयमुक्कस्सविसयं च । उक्कस्से ताव पयदं । दुविहो णिद्दो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्क०द्विदिसं कामएहि केव० पोसिदं ? लोग० असंखे०भागो अट्ट-तेरहचोद्दस० देख्णा । अणु० सञ्चलोगो ।

§ ५६६ जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेश-निर्देश । ओघसे जघन्यका भंग उत्कृष्टके समान है । इसी प्रकार सब गतियोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि सामान्य तिर्यञ्चोंमें जघन्य स्थितिके संक्रामक जीव लोकके संख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रमें रहते हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गीणा तक जानना चाहिये ।

**विशेषार्थ**—यहाँ उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीव संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें कुछ ही होते हैं । इसलिए उनका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है । तथा शेष सब ससारी जीव अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक होते हैं, अतः उनका क्षेत्र सब लोकप्रमाण बतलाया है । तिर्यञ्चोंमें यह प्ररूपणा ओघके समान बन जाती है, अतः उनके कथनको ओघके समान कहा है । तिर्यञ्चोंके सिवा गति मार्गीणाके और जितने भेद हैं, सामान्यतः उनका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे उनमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका क्षेत्र उक्त प्रमाण कहा है । इसी प्रकार जघन्य और अजघन्य स्थितिसंक्रमकी अपेक्षासे चारों गतियोंमें क्षेत्र घटित कर लेना चाहिये । किन्तु तिर्यञ्चोंमें जघन्य स्थितिके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है इतना यहाँ विशेष जानना चाहिये जो बादर पर्याप्त वायुकायिक जीवोंकी अपेक्षा प्राप्त होता है ।

§ ५६७. स्पर्शन दो प्रकारका है—जघन्यस्थितिके संक्रामकोंसे सम्बन्ध रखनेवाला और उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंसे सम्बन्ध रखनेवाला । यहाँ सर्व प्रथम उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और कुछ कम तेरह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंने सब लोकका स्पर्शन किया है ।

**विशेषार्थ**—यहाँ मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका जो लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण स्पर्शन बतलाया है वह वर्तमान कालकी मुख्यतासे बतलाया है, क्योंकि मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम सातों नरकोंके नारकी, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यञ्च, पर्याप्त मनुष्य व बारहवें स्वर्गतकके देवोंके ही सम्भव है पर इन सबका वर्तमान क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण ही है । तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे जो कुछ कम आठ और कुछ कम तेरह भाग-प्रमाण स्पर्शन बतलाया है वह अतीत कालकी अपेक्षासे बतलाया है, क्योंकि विहारवस्त्वस्थान, वेदना, कपाय और वैक्रियिक पदसे परिणत हुये मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीवोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है और मारणान्तिक समुद्रघातसे परिणत हुए मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीवोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम तेरह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । यहाँ तैजस, आहारक और उपपाद ये तीन पद सम्भव नहीं । यद्यपि स्वस्थानस्वस्थान पद होता है । पर इसकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके

§ ५६८ आदेशेण गेरुय० उक्क० अणुक्क० लोगस्य असल्ले० मागो छचोरस०  
देवणा । पइमाए सेव । विदिपादि जाव सत्तमि चि उक्क० अणुक्क० सगपोसण ।

§ ५६९. तिरिक्खेसु उक्क० लोग० असल्ले० मागो छचोरस० देवणा । अणु०  
सम्भल्लोगो । पचिदिपतिरिक्खतिए ३ मणुसतिए च एव सेव । णवरि अणु० लोग०  
असल्ले० मागो सम्भल्लोगो वा । पचि०तिरि०अपत्त०-अणु०अपत्त० उक्क० सेत्त० ।  
अणुक्क० लोग० असल्ले० मागो सम्भल्लोगो वा ।

असंख्यातर्षे मागप्रमात्र ही प्राप्त होया है । ओपसे अनुकृत स्थितिके संक्षमकोष्य स्पर्शन सब  
होकर है यह स्पष्ट ही है ।

§ ५६८= आदेशसे मारकियोमें उत्कृष्ट और अनुकृत स्थितिके संक्षमकोष्ये होकर  
असंख्यातर्षे मागप्रमात्र क्षेत्रका और असनाहीके बौरह मागोंसे कुछ कम बड़ मागप्रमात्र क्षेत्रका  
स्पर्शन किया है । पृथ्वी पृथिवीमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है । दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी  
तकके मारकियोमें उत्कृष्ट और अनुकृत स्थितिके संक्षमकोष्य स्पर्शन करने-करने मारकके स्पर्शनके  
समान जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—सामान्यसे मारकियोका और प्रत्येक मारकके मारकियोका जो स्पर्शन कठनाय  
है वही यहाँ सामान्य मारकियोमें और प्रत्येक मारकके मारकियोमें उत्कृष्ट और अनुकृत स्थितिके  
संक्षमक हीकोष्ये अपेक्षासे प्राप्त होता है, इसलिये सामान्य मारकियोका और प्रत्येक मारकके  
मारकियोका जिस प्रकारसे स्पर्शन पटित करके बतहाया है वही प्रकार यहाँ भी पटित कर  
लेना चाहिये ।

§ ५६९ तिरिक्खेमें उत्कृष्ट स्थितिके संक्षमकोष्ये होकर असंख्यातर्षे मागप्रमात्र क्षेत्रका  
और असनाहीके बौरह मागोंसे कुछ कम बड़ मागप्रमात्र क्षेत्रका स्पर्शन किया है । उक्त  
अनुकृत स्थितिके संक्षमकोष्ये सब होकर स्पर्शन किया है । पंचेन्द्रिय तिर्यङ्गिकोंमें और मनुष्य-  
त्रिकोंमें इसी प्रकार स्पर्शन जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि अनुकृत स्थितिके  
संक्षमकोष्ये होकर असंख्यातर्षे मागप्रमात्र क्षेत्रका और सब होकर स्पर्शन किया है । पंचेन्द्रिय  
तिर्यङ्ग अपर्णात और मनुष्य अपर्णातमें उत्कृष्ट स्थितिके संक्षमकोष्ये स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।  
अनुकृत स्थितिके संक्षमकोष्ये होकर असंख्यातर्षे मागप्रमात्र क्षेत्रका और सब होकर क्षेत्रका  
स्पर्शन किया है ।

विशेषार्थ—तिर्यङ्गोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्षम हीकी पंचेन्द्रिय पर्णात तिर्यङ्ग ही  
करते हैं और इनका वर्तमान स्पर्शन होकर असंख्यातर्षे मागप्रमात्र है अतः तिर्यङ्गोंमें मोहनीयकी  
उत्कृष्ट स्थितिके संक्षमकोष्ये वर्तमान स्पर्शन होकर असंख्यातर्षे मागप्रमात्र बतहाया है । तथा  
इनका वर्णात कहीं स्पर्शन जो बस मारकके बौरह मागोंसे कुछ कम बड़ मागप्रमात्र बतहाया है  
तो इसका कारण यह है कि ऐसे तिर्यङ्गोंमें मारकान्तिक समुद्रातकाव नीचे कुछ कम बड़ समुद्रमात्र  
क्षेत्रका स्पर्शन किया है, क्योंकि जो तिर्यङ्ग मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्षम कर रहे हैं उनका  
सही पंचेन्द्रिय पर्णात तिर्यङ्ग मनुष्य और मारकियोमें ही मारकान्तिक समुद्रात करना सम्भव  
है । मोहनीयकी अनुकृत स्थितिके संक्षम सब तिर्यङ्गोंके सम्भव है और वे सब क्षेत्रमें पाये जाते  
हैं, अतः मोहनीयकी अनुकृत स्थितिके संक्षमक तिर्यङ्गोंका स्पर्शन सब क्षेत्रमात्र बतहाया है ।  
सामान्य तिर्यङ्गोंमें जो उत्कृष्ट स्थितिके संक्षमकोष्ये स्पर्शन करा है वह पंचेन्द्रिय तिर्यङ्गिकोंकी  
सुतकतसे ही करा है । तथा मनुष्यत्रिकोंमें भी यह स्पर्शन इसी प्रकारसे प्राप्त होया है, अतः इन तीन

§ ५७०. देवगदीए देवेसु उक्क० अणुक० लोग० असंखे० भागो० अट्ट-णव-चोइसभागा वा देखणा । एवं सोहम्मीसाणे । भवण०-त्राण०-जोदिसि० उक्क० अणुक० लोग० असंखे० भागो अद्धुद्धु-अट्ट-णवचोइस० देखणा । सणक्कुमारादि जाव सहस्सार ति उक्क० अणुक० लोग० असंखे० भागो अट्टचोइस० देखणा । आणदादि जाव अच्चुदा ति उक्क० खेतं । अणुक० लोग० असंखे० भागो छचोइस० देखणा । उवरि खेतभंगो । एवं जाव० ।

प्रकारके तिर्यचोमें और तीन प्रकारके मनुष्योंमें उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका स्पर्शन सामान्य तिर्यच्चोंके समान बतलाया है । किन्तु उक्त तीन प्रकारके तिर्यच्चोंमें और तीन प्रकारके मनुष्योंमें अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंके स्पर्शनमें कुछ विशेषता है । बात यह है कि इन तीन प्रकारके तिर्यचों और तीन प्रकारके मनुष्योंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीतकालीन स्पर्शन सब लोक है, अत इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका स्पर्शन उक्त प्रमाण बतलाया है । जो तिर्यच्च या मनुष्य मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके पंचेन्द्रिय तिर्यच्च लब्ध्यपर्याप्तकोंमें या लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं उन्हींके प्रथम समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम पाया जाता है । अब जब इनके वर्तमानकालीन और अतीतकालीन स्पर्शनका विचार करते हैं तो वह लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है । इसीसे यहाँ इन दोनों मार्गणाओंमें उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है । वैसे पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त तिर्यच्चोंका और लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योंका वर्तमानकालीन स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीतकालीन स्पर्शन सब लोक बतलाया है जो इनके अनुत्कृष्ट स्थितिका संक्रम होते हुए सम्भव है । इसीसे यहाँ इन दोनों मार्गणाओंमें अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका वर्तमान कालीन स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीतकालीन स्पर्शन सब लोकप्रमाण बतलाया है ।

§ ५७० देवगतिमें देवोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार सौधर्म और ऐशान कल्पमें जानना चाहिये । भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम साढ़े तीन, कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सनत्कुमारसे लेकर सहस्त्रार कल्प तकके देवोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । आनत कल्पसे लेकर अच्युत कल्प तकके देवोंमें उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । तथा इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इससे आगेके देवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

**विशेषार्थ**—सामान्य देवोंका व भवनवासी आदि देवोंका जो वर्तमानकालीन व अतीतकालीन स्पर्शन बतलाया है वही यहाँ उत्कृष्ट व अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक उक्त देवोंका स्पर्शन जानना चाहिये जो मूलमें बतलाया ही है । अन्तर केवल आनतादिक चार कल्पोंके देवोंमें उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंके स्पर्शनमें है । बात यह है कि आनतादिक चार कल्पोंमें जो स्वयोन्य उत्कृष्ट



१५७१ ब्रह्मण्य पयसः । दुविहो विदेसो—ओषेण आदेसेण य । ओषेण मोह०  
 जह० ब्रज० सेचमंगो । आदेसेण गेह्यय० जह० सेच । अज० छत्रोदस । पदमाय  
 सेचं । विदियादि जाब सचमा चि जह० सेचं । अज० सगपोसण । तिरि० जह०  
 अज० सेच । सम्यर्षिदियतिरिक्ल-सम्यमणुस० जह० लो० अंसंखे० मागो । ब्रज०  
 लो० बसं० मागो सम्यलो० गो वा । देवेसु जह० सेच । अज० लो० अंसंखे० मागो  
 अह-अबचोद देवणा । एवं सोहम्मीसाणे । मन्व-वाच-ओदिसि जह० सेच । अज०  
 अणु० भगो । सणक्कमारादि जाब अणुदा चि एव वेच । उवरि सेचं । एव जाब० ।

स्वित्तिवाचे इत्यस्मिन्नि गृहिण्ये इत्यस्य बोधे ईं कर्त्वा देवोके प्रथम समपनें उत्कृष्ट स्वित्तिश्च संक्षम पाया  
 बाध्य है । पर येसे देव संख्यात ही होते हैं, अतः इनका वर्तमानकालीन व अतीतकालीन स्पर्शन  
 शोके असंख्यातर्षे मागप्रमाय प्राप्त होता है । इसीसे यहाँ इन चार कस्मेंमें उत्कृष्ट स्वित्तिके  
 संक्षमकोष्य स्पर्शन शोके असंख्यातर्षे मागप्रमाय बतहाया है । इसी प्रकार अनाहारक स्पर्शा  
 तक यथायोग्य स्पर्शन जानना चाहिये ।

१५७१ अथयज्ञसहिते कृत्वापण्यद्वये । निर्वेरा दो प्रश्नश्च ई—ओषनिर्वेरा और आदेरानिर्वेरा ।  
 ओषसे मोहनीयकी अथयज्ञ और अथयज्ञ स्वित्तिके संक्षमकोष्य स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।  
 आदेरसे नारिकेलीमें अथयज्ञ स्वित्तिके संक्षमकोष्य स्पर्शन क्षेत्रके समान है । तथा अथयज्ञ  
 स्वित्तिके संक्षमकोष्ये असमाधीके चौदह मार्गमेंसे कुछ कम जह मागप्रमाय क्षेत्रश्च स्पर्शन किया  
 है । परही दुविहीमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है । वृसपिसे केकर साठवाँ दुविही तकके नारिकेलीमें  
 अथयज्ञ स्वित्तिके संक्षमकोष्य स्पर्शन क्षेत्र समान है । तथा अथयज्ञ स्वित्तिके संक्षमकोष्य  
 स्पर्शन अपने अपने नरकके स्पर्शनके समान है । तिरिद्वोमें अथयज्ञ और अथयज्ञ स्वित्तिके  
 संक्षमकोष्य स्पर्शन क्षेत्रके समान है । सब पक्षेन्द्रिय तिर्येच और सब मनुष्योंमें अथयज्ञ स्वित्तिके  
 संक्षमकोष्ये शोके असंख्यातर्षे मागप्रमाय क्षेत्रश्च स्पर्शन किया है । अथयज्ञ स्वित्तिके संक्षमकोष्ये  
 शोके असंख्यातर्षे मागप्रमाय क्षेत्रश्च और सब शोक्षप्रमाय क्षेत्रश्च स्पर्शन किया है । देवोंमें  
 अथयज्ञ स्वित्तिके संक्षमकोष्य स्पर्शन क्षेत्रके समान है । अथयज्ञ स्वित्तिके संक्षमकोष्ये शोके  
 असंख्यातर्षे मागप्रमाय क्षेत्रश्च और असमाधीके चौदह मार्गमेंसे कुछ कम आठ व कुछ कम नौ  
 मागप्रमाय क्षेत्रश्च स्पर्शन किया है । इसी प्रकार सौभर्म और पराज कस्में जानना चाहिये ।  
 मन्ववासी इत्यन्तर और व्योतिपी देवोंमें अथयज्ञ स्वित्तिके संक्षमकोष्य स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।  
 अथयज्ञ स्वित्तिके संक्षमकोष्य स्पर्शन अणुत्कृष्ट स्वित्तिके संक्षमकोष्ये स्पर्शनके समान है । सतकमारसे  
 केकर अणुत्कृष्ट वरुन तकके देवोंमें इसी प्रकार स्पर्शन जानना चाहिये । इससे आगेके देवोंमें स्पर्शन  
 क्षेत्रके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गवा तक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—मोहनीयकी अथयज्ञ स्वित्तिके संक्षमकोष्य क्षेत्र शोके असंख्यातर्षे मागप्रमाय  
 और अथयज्ञ स्वित्तिके संक्षमकोष्य क्षेत्र सब जाँक कर्त्वाया है । इनका स्पर्शन भी इतना ही है ।  
 अतः इनके स्पर्शनके क्षेत्रके समान कहा है । सामान्यसे नारिकेलीमें मोहनीयकी अथयज्ञ स्वित्तिके  
 संक्षमकोष्य क्षेत्र शोके असंख्यातर्षे मागप्रमाय बतहाया है, स्पर्शन भी इतना ही प्राप्त होता है,  
 क्योंकि जो अपने बोधय अथयज्ञ स्वित्तिकाके असंखी जीव नरकमें उत्पन्न होते हैं कर्त्वा नारिकेली  
 अथयज्ञ स्वित्तिसंक्षम पाया जाता है । किन्तु अतीती जीव प्रथम मरकमें ही उत्पन्न होते हैं और प्रथम  
 मरकका स्पर्शन शोके असंख्यातर्षे मागसे अधिक नहीं है, अतः सामान्यसे नारिकेलीमें अथयज्ञ  
 स्वित्तिके संक्षमकोष्य स्पर्शन क्षेत्रके समान बतहाया है । अथयज्ञ स्वित्तिके संक्षमकोष्य नारिकेलीमें

जघन्य स्थितिके संक्रामक नारकियोंके सिवा शेष सब नारकियोंका समावेश हो जाता है। और इनका वर्तमानकालीन स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा अतीतकालीन स्पर्शन त्रस नाज़ीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण है। इसीसे अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंका स्पर्शन उक्तप्रमाण बतलाया है। प्रथम पृथिवीके नारकियोंका स्पर्शन उनके क्षेत्रके समान ही है। अतः यहाँ प्रथम पृथिवीमें जघन्य और अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान बतलाया है। दूसरेसे लेकर छठे नरक तक जघन्य स्थितिसंक्रम उन सम्यग्दृष्टि नारकियोंके अन्तिम समयमें होता है जिन्होंने वहाँ उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद सम्यक्त्वको प्राप्त कर लिया है और अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर ली है। तथा सातवें नरकमें जघन्य स्थितिसंक्रम उन मिथ्यादृष्टि नारकियोंके सम्भव है जो जीवन भर सम्यग्दृष्टि रहे हैं पर अन्तमें मिथ्यादृष्टि हो गये हैं। अब यदि इन जीवोंके स्पर्शनका विचार किया जाता है तो वह लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। और इनका क्षेत्र भी इतना ही है, अतः उक्त नरकोंमें जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान बतलाया है। अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंमें जघन्य स्थितिके संक्रामकोंके सिवा शेष सब नारकियोंका समावेश हो जाता है। अतः इनका स्पर्शन अपने-अपने नरकके स्पर्शनके समान बतलाया है। तिर्यचोंमें जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका स्पर्शन लोकके संख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है, क्योंकि जघन्य स्थितिका संक्रम बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें ही सम्भव है। तथा अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंमें एकेन्द्रिय मुख्य हैं और उनका स्पर्शन सब लोकप्रमाण है। इन दोनोंका क्षेत्र भी इतना ही है। अतः इनका स्पर्शन क्षेत्रके समान बतलाया है। पंचेन्द्रिय आदि तिर्यच्छोंमें और लब्धपर्याप्तक मनुष्योंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिका संक्रम उन्हींके सम्भव है जो एकेन्द्रिय पर्याप्तसे आकर यहाँ उत्पन्न हुए हैं। अब यदि इनके क्षेत्रका विचार किया जाता है तो वह लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है, स्पर्शनमें भी इससे विशेष अन्तर नहीं पड़ता, अतः इनका जघन्य स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है। मनुष्यत्रिकमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके संक्रामक क्षणक सूक्ष्मसंपराय जीव होते हैं और उनका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। इसीसे यहाँ तीन प्रकारके मनुष्योंमें भी जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह बतलाया है। तथा इन सबमें अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक है यह स्पष्ट ही है। जो असंख्य जीव मर कर देवोंमें उत्पन्न होते हैं उन्हीं देवोंके जघन्य स्थितिका संक्रम सम्भव है। अब यदि इनके स्पर्शनका विचार किया जाता है तो वह लोकके असंख्यातवें भागसे अधिक नहीं प्राप्त होता। क्षेत्र भी इतना ही है। अतः देवोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान बतलाया है। अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंमें जघन्य स्थितिके संक्रामकोंके सिवा शेष सब देवोंका ग्रहण हो जाता है। और सामान्यसे देवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भागप्रमाण है। इसीसे यहाँ अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंका स्पर्शन उक्तप्रमाण बतलाया है। सौधर्म और ऐशान कल्पमें यह स्पर्शन उक्त प्रकारसे बन जाता है अतः यहाँ इस स्पर्शनको उक्त प्रकारसे जाननेकी सूचना की है। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषियोंमें जो जघन्य स्थितिके संक्रामक जीव होते हैं उनका यदि स्पर्शन देखा जाता है तो वह लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है। क्षेत्र भी इतना ही है, अतः इनके स्पर्शनको क्षेत्रके समान कहा है। तथा इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंके समान बहुभाग राशि अजघन्य स्थितिकी संक्रामक है। इसलिये इनके स्पर्शनको एक समान कहा है। इसी प्रकार सन्तरङ्गमारसे लेकर अच्युत कल्प तक जानना चाहिये। तथा इससे आगेके जघन्य और अजघन्य स्थितिके संक्रामक देवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है यह स्पष्ट ही है। इसी प्रकार विचार करके

१ ५७२ णाणासीवेहि कालो दुविहो जइण्णुक्खसिद्धिसकमविसयमेदेव ।  
 त्त्युद्धस्से ताव पयदं । दुविहो णिदेत्तो—ओपेण अत्थेसेण य । ओपेण मोह उक्कं  
 द्विवसंकां केवपिरं ? जइ एयसं, उक्कं पल्लियों असखें भागो । अणुं सम्बद्धा ।  
 एवं सम्बणिरय-सम्बतिरिक्ख-देवा मवपादि जाव सइस्तार पि । जवरि पधिंतिरिं  
 अपज्जं उक्कं द्विविस जइ एयसं, उक्कं आबलिं असखें भागो । अणु ओपो ।  
 १ ५७३ मणुसत्थि उक्कं जइ एयसं, उक्कं अतोसुद्धं । अणुं ओपमंगो ।  
 मणुसअपज्ज उक्कं जइ एयसमओ, उक्कं आबलिं असखें भागो । अणुं जइ

अनाहारक मार्गेशा तक यथायोग्य स्पर्शनका विचार कर कल्प चाहिये ।

१ ५७२ नाश जीवोंकी अपेक्षा काल वो प्रकारका है—अपन्य स्थितिसे संश्रमकोंके विषय  
 करनेवाला और उत्कृष्ट स्थितिसे संश्रमकोंको विषय करनेवाला । सर्व प्रथम उत्कृष्टका प्रकरण है ।  
 इसकी अपेक्षा तिरोश वो प्रकारका है—ओपनिर्वेश और आदेशनिर्वेश । आषधी अपेक्षा मोहनीयकी  
 उत्कृष्ट स्थितिसे संश्रमकोंका कितना कास है ? अथवा काल एक समय है और उत्कृष्ट कास पत्थके  
 अस्तंभ्यातर्षे मागप्रमाय है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिसे संश्रमकोंका काल सर्वथा है । इसी प्रकार  
 सब नारकी सब तिरोश, सामान्य वेध और भवनवासो देवोंसे लेकर सइस्तार कस्य तकके देवोंमें  
 जानन्य चाहिये । किन्तु श्रुती विसेषता है कि पंचेन्द्रिय तिरोश अपर्वातकोंमें उत्कृष्ट स्थितिसे  
 संश्रमकोंका अथवा काल एक समय है और उत्कृष्ट कास आबलिसे अस्तंभ्यातर्षे मागप्रमाय है ।  
 तथा अनुत्कृष्ट स्थितिसे संश्रमकोंका काल ओपके समान है ।

विशेषार्थ—नाश जीवोंकी अपेक्षा मोहनीयकी स्थितिका कल्प कससे कम एक समय तक  
 और अधिकसे अधिक पत्थके अस्तंभ्यातर्षे मागप्रमाय काल तक होता है । इसके बाद एक भी  
 जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका कल्प नहीं पाता । इसीसे यहाँ मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिसे  
 संश्रमकोंका अथवा काल एक समय और उत्कृष्ट कास पत्थके अस्तंभ्यातर्षे मागप्रमाय का है,  
 क्योंकि उत्कृष्ट स्थितिका संश्रम उत्कृष्ट स्थितिअथवा अविनाशकी है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिसे  
 जीव सर्वथा पावे जाते हैं इससे अनुत्कृष्ट स्थितिसे संश्रमकोंका काल सबथा कल्पया है । सब  
 नारकी सब तिरोश, सामान्य वेध और भवनवासियोंसे लेकर सइस्तार कस्य तकके देव व मार्ग्यार्थ  
 पेटी हैं जिनमें वह ओपप्रकरणका अधिकतम पठित हो जाती है, अत इनके कवनको ओपके समान  
 कल्पया है । किन्तु पंचेन्द्रिय तिरोश अपर्वातकोंमें उत्कृष्ट स्थितिसे संश्रमकोंके उत्कृष्ट कासमें कुछ  
 विसेषता है । यह यह है कि जो पंजी पंचेन्द्रिय पर्वत जीव उत्कृष्ट स्थितिका कल्प करके इनमें  
 कल्प होत हैं इन्हींके यह उत्कृष्ट स्थितिका संश्रम पाया जाता है । पर ऐसे जीव पंचेन्द्रिय तिरोश  
 अपर्वातकोंमें आबलिसे अस्तंभ्यातर्षे मागप्रमाय काकतक ही कल्प हो सकते हैं । इसके बाद तिरोशसे  
 अन्तर पद जाता है । इसका पंचेन्द्रिय तिरोश अपर्वातकोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिसे संश्रमकों-  
 का उत्कृष्ट कास आबलिसे अस्तंभ्यातर्षे मागप्रमाय कल्पया है । इनमें अथवा कल्प कल्प  
 सुगम है ।

१ ५७३ मणुपत्रिकमें उत्कृष्ट स्थितिसे संश्रमकोंका अपन्य काल एक समय है और  
 उत्कृष्ट कास अनुत्कृष्ट है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिसे संश्रमकोंका काल ओपके समान है । मणुप्य  
 अपर्वातकोंमें उत्कृष्ट स्थितिसे संश्रमकोंका अपन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट कास आबलिसे  
 अस्तंभ्यातर्षे मागप्रमाय है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिसे संश्रमकोंका अथवा काल एक समय कम कल्पम-

खुदा० समयगुणं, उक्त० पल्लितो० असंखे० भागो । आणदादि जाव सव्वट्टे त्ति उक्त० जह० एयसमओ, उक्त० संखेजा समया । अणु० सव्वद्धा । एवं जाव० ।

§ ५७४. जहण्णए पयदं । दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० जह० द्विदिसंका० केव० ? जह० एयसमओ, उक्त० संखेजा समया । अज० सव्वद्धा । एवं मणुसतिय० । विदियादि जाव छट्ठि त्ति जोदिसियादि जाव सव्वद्धा त्ति च ।

ग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थ-सिद्धि तकके देवोंमें उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका काल सर्वदा है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिये ।

**विशेषार्थ**—एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिबन्धका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है । यतः उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले मनुष्य संख्यात होते हैं, अतः इनमें उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्तसे अधिक नहीं प्राप्त होता । यत उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अविनाभावी है अत मनुष्यत्रिकमें उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है । तथा मनुष्यत्रिकमें अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामक जीव सदा पाये जाते हैं, अत इनका काल सर्वदा बतलाया है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल तो पचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान घटित कर लेना चाहिये । हा इनके अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंके कालमें कुछ विशेषता है । वात यह है कि यह सान्तर मार्गणा है और इसका जघन्य काल खुदाभवग्रहणप्रमाण और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीसे यहाँ अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल उत्कृष्टप्रमाण प्राप्त होता है । यहाँ जघन्य कालमें जो एक समय कम किया है सो वह उत्कृष्ट स्थितिके संक्रमकी अपेक्षासे किया है । आनतादिकमें उत्कृष्ट स्थिति उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें सम्भव है । किन्तु यहाँ उत्कृष्ट स्थितिवाले मनुष्य ही उत्पन्न होते हैं और वे संख्यात होते हैं, अतः यहाँ उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय बतलाया है । यहाँ अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है । इसी प्रकार अपनी-अपनी विशेषताको जानकर अनाहारक मार्गणा तक यथायोग्य उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टस्थितिके संक्रामकोंका काल जान लेना चाहिये ।

§ ५७४ जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंका काल सर्वदा है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें, दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें और ज्योतिषी देवोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें जानना चाहिये ?

**विशेषार्थ**—ओघसे मोहनीयका जघन्य स्थितिसंक्रम क्षपक जीवके सूक्ष्मसम्पराय गुणस्थानमें एक समय अधिक एक आवलि कालके शेष रहने पर होता है । यतः क्षपकश्रेणि पर चढ़नेका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है अतः ओघसे जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है । ओघसे अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है । मूलमें जो मनुष्यत्रिक, दूसरी पृथिवीसे

१ ५७५. आदेशेण जेख्य० बह० द्विदिस० बह० प्यसमजो, उफ० आबलि० असले० भागो । अज० ओपो । एवं फडमाए सम्पपंचिदियतिरिक्ख-देव०-मवण वापवेतर ति । सचमाए बह० बह० प्यस०, उफ० पल्लियो० असले० भागो । अज० ओपो ।

लेखर इटी पूजिती तकके नारकी और ज्योतिपी देवोंसे लेखर सर्वावसिद्धि तकके इच जो य मार्गसाए गिनारै हैं सो इनमें जपम्य और अजबन्ध स्थितिके संकामकोष अज ओपके समान बन जाता है । इसके अरथ मित्त मित्त हैं । मनुष्यत्रिकय अरथ तो ओपके समान ही है, क्योंकि एककप्रेयिणी प्रति मनुष्यत्रिकके ही होती है । इसी पूजितीसे लेखर इटी पूजिती तकके मारकियोमें और ज्योतिपी देवोंमें यह अरथ है कि जो बहूअ धामुके साथ अरथ हो और अरथ होनेके परबान् अन्तमुहुत अरथके भीतर सम्पगदछि होकर अनन्तानुबन्धीचतुष्कधी विसंयोगना कर के वतके अन्तित्त समयमें जपम्य स्थितिसंक्रम होता है । ऐसे जीव मर कर मनुष्यमें ही अरथ हाये हैं अतः अन्त प्रमाद्य संख्यात ही होगा । यही अरथ है कि इन मार्गसाओंमें अरथ स्थितिसंक्रमक जपम्य अज एक समय और बहूअ अज संख्यात समय अज्ञाया है । चौधमें अरथसे अरथ सर्वावसिद्धि तकके देवोंमें जन्मके अन्तित्त समयमें जपम्य स्थितिसंक्रम होता है जो पहले मनुष्य पत्नीयमें हो बार अरथमज्जेय पर अरथे हों और फिर अरथमज्जेनीयकी जपम्य करके बहूअ धामुके साथ बहू देवोंमें अरथ हुए हो । अतः ये भी मर कर परांत मनुष्योंमें ही अरथ होत हैं अतः इनका प्रमाद्य संख्यात ही मात जाता है । यही अरथ है कि इनमें भी जपम्य स्थितिके संकामकोष जपम्य अज एक समय और बहूअ अज संख्यात समय अज्ञाया है । इन सब मार्गसाओंमें अजपम्य स्थितिके संकामकोष अज सर्वा है यह स्पष्ट ही है ।

१ ५७६ आदेशेण मारकियोमें अरथ स्थितिके संकामकोष जपम्य अज एक समय है और बहूअ अज आबलिके अरथकालमें मगप्रमाद्य है । तथा अजपम्य स्थितिके संकामकोष अज सर्वा है । इसी प्रकार पक्षी पूजितीके नारकियोमें तथा सब पक्षेत्रिय तिरिअ सामान्य देव, मवनवासी देव और अन्तर देवोंमें अरथ आशिवे । सातही पूजितीमें अरथ स्थितिके संकामकोष जपम्य अज एक समय है और बहूअ अज पत्यके अरथकालमें मगप्रमाद्य है । तथा अजपम्य स्थितिके संकामकोष अज ओपके समान है ।

विशेषार्थ—नरकों जो अरथकी पक्षेत्रिय अपने जोम्य अरथ स्थितिके साथ अरथ होये हैं जन्मके अरथ स्थितिके संक्रम पाया जाता है । इनके यहाँ अरन्तर अरथ होनेका अरथ अज एक समय और बहूअ अज अरथके अरथकालमें मगप्रमाद्य है । इसीसे यहाँ सामान्य नारकियोमें अरथ स्थितिके संकामकोष अरथ अज एक समय और बहूअ अज आबलिके अरथकालमें मगप्रमाद्य अज्ञा है । प्रथम नरकके नारकी पक्षेत्रिय तिरिअ, सामान्य देव मवनवासी देव और अरन्तर देव इन मार्गसाओंमें यह अरथ इसी प्रकार मात होगा है । इसलिये इनमें अरथ और अजपम्य स्थितिके संकामकोष अज सामान्य नारकियोके समान अज्ञा है । एतनी विशेषतः है कि पक्षेत्रिय तिरिअमें पक्षेत्रियोंके अरथ अरथ यह अरथ प्राप्त करना आशिवे । अज्ञा ऐसे अरथ हैं जो नाता जीवोंकी अपेक्ष अरथकालसे पत्यके अरथकालमें मगप्रमाद्य अज्ञाये हैं । अज्ञाअरथों साक्षात्तअरथके अरथ सम्पमिच्छादछि अरथ, अरथानुबन्धीय विसंयोगनाअरथ मिच्छालको प्राप्त होनेका अरथ आदि । सातमें नरकों अरथ स्थिति जन्मों कीरके होती है जो जीव मर सम्पदछि अरथ अरथमें अरथमुहुत अरथ सेप रहने पर मिच्छालको प्राप्त हुए हैं । इसके इस प्रकार मिच्छालको प्राप्त होनेका अरथ अज एक समय और बहूअ अज पत्यके अरथकालमें मगप्रमाद्य है, अतः

§ ५७६. तिरिक्खेसु जह० अज० सन्वद्धा । मणुसअपज्ज० जह० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अज० जह० आवलिया समयुणा, उक्क० पल्लिदो० असंखे०भागो । एवं जाव ।

§ ५७७. अंतरं दुविह—जह० उक्क० । उक्कस्सए ताव पयदं । दुविहो णिदेसो ओघादेसमेदेण । तत्थोघेण मोह० उक्क० द्विदिसक० अंतरं केव० ? जह० एयस०, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो असंखेज्जाओ ओसप्पिणि-उस्सप्पिणीओ । अणु० णत्थि अंतरं । एवं चटुसु वि गदीसु । णवरि मणुसअपज्ज० अणु० जह० एयस०, उक्क० पल्लिदो० असंखे०भागो । एवं जाव० ।

यहाँ जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल क्रमसे उक्तप्रमाण कहा है । इन सब मार्गणाओंमें अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंका काल ओघके समान सर्वदा है यह स्पष्ट ही है ।

§ ५७६ तिर्यञ्चोंमें जघन्य और अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंका काल सर्वदा है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । तथा अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय कम एक आवलिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

**विशेषार्थ**—तिर्यञ्चोंमें एकेन्द्रियोंकी प्रधानता है और इनमें जघन्य तथा अजघन्य स्थितिके संक्रामक जीव सदा पाये जाते हैं । इसीसे इनमें जघन्य तथा अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंका काल सर्वदा कहा है । पहले मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल घटित करके बतला आये हैं । उसी प्रकार यहाँ जघन्य और अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल घटित कर लेना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

§ ५७७ अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । सर्वे प्रथम उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका कितना अन्तरकाल है । जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है जो असंख्यातासंख्यात अपसर्पिणी-उत्सर्पिणी कालप्रमाण है । तथा ओघसे अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका अन्तर काल नहीं है । इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

**विशेषार्थ**—महाबन्धमें उत्कृष्ट स्थितिवन्धका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है । यत उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम उत्कृष्ट स्थितिवन्धका अविनाभावी है, अतः यहाँ मोहनीयके उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण बतलाया है । तथा यहाँ अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका अन्तरकाल नहीं है यह स्पष्ट ही है । यह ओघप्ररूपणा चारों गतियोंमें बन जाती है, अतः वहाँ इस प्ररूपणाको ओघके समान कहा है । किन्तु मनुष्य अपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है और इसका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग-



केत्तियमेत्तेण ? आवलियमेत्तेण । एवं चदुसु गदीसु । एवं जाव० ।

§ ५८१. जहण्णए पयदं । दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । तत्थोघेण जहण्णओ द्विदिसंकमो थोवो, एयणिसेयपमाणत्तादो । जट्टिदी असंखे०गुणा, समय-हियावलियपमाणत्तादो । एवं मणुसतिए । आदेसेण णेरइय० सञ्चत्थोवो जह०द्विदि-संकमो । जट्टिदिसंकमो विसेसाहिओ । एवं सञ्चासु गईसु । एवं जाव० ।

§ ५८२. जीवष्पावहुअं दुविहं जहण्णुक०द्विदिसंकामयविसयभेदेण । उक्कस्सए ताव पयदं । दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण उक्क० द्विदिसंका० थोवा । अणु० अणंतगुणा । एवं तिरिक्खोघे । आदेसेण णेरइय० मोह० उक्क०

कितना विशेष अधिक है ? एक आवलिप्रमाण अधिक है । इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिये । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

**विशेषार्थ—**मोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध होनेपर वन्धावलिके वाद उदयावलिप्रमाण निपेकोंको छोडकर शेषका सक्रम होता है । इसलिये उत्कृष्ट स्थितिसक्रमसे यत्स्थिति एक आवलि-प्रमाण अधिक प्राप्त होती है । यहाँ सक्रम दो आवलि कम उत्कृष्ट स्थितिका हुआ है किन्तु यत्स्थिति एक आवलि कम उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण पाई जाती है । इसीसे प्रकृतमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमसे यत्स्थितिको एक आवलि अधिक बतलाया है । इसी प्रकार चारों गतियोंमें यह अल्पबहुत्व जानना चाहिये । आगे अनाहारक मार्गणा तक भी इसका इसी प्रकार यथायोग्य विचार करके कथन करना चाहिये ।

§ ५८१ जघन्यका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा जघन्य स्थितिसक्रम स्तोक है, क्योंकि उसका प्रमाण एक निपेक है । उससे यत्स्थिति असख्यातगुणी है, क्यों कि उसका प्रमाण एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमे जानना चाहिये । आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें जघन्य स्थितिसक्रम सबसे स्तोक है । उससे यत्स्थिति विशेष अधिक है । इसी प्रकार सब गतियोंमें जानना चाहिये । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

**विशेषार्थ—**क्षपक जीवके सूक्ष्मसम्परायका एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण काल शेष रह जाने पर जघन्य स्थितिसक्रम प्राप्त होता है । यहाँ जघन्य स्थितिसंक्रमका प्रमाण एक निपेक है और यत्स्थितिका प्रमाण एक समय अधिक एक आवलि है । इसीसे प्रकृतमें जघन्य स्थिति-सक्रमसे यत्स्थिति असख्यातगुणी बतलाई है । यह अल्पबहुत्व मनुष्यत्रिकमें घटित हो जाता है, इसलिये उनमें इस अल्पबहुत्वको ओघके समान बतलाया है । तथा नारकी आदि शेष मार्गणाओंमें जघन्य स्थितिसक्रमसे यत्स्थिति एक आवलि अधिक होती है यह स्पष्ट ही है । इसीसे वहाँ जघन्य स्थितिसक्रमसे यत्स्थितिको विशेष अधिक बतलाया है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक यथा-योग्य अल्पबहुत्वको जान लेना चाहिये ।

§ ५८२. जीवअल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य स्थितिके संक्रामकोंसे सम्बन्ध रखनेवाला और उत्कृष्ट स्थितिके सक्रामकोंसे सम्बन्ध रखनेवाला । सर्वप्रथम उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिके सक्रामक जीव थोडे हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके सक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं । इसी प्रकार सामान्य



द्विदिसं० बोधा । अणु० द्विदिसं० असत्वे० गुणा । एव सम्बन्धेरह्य-सम्बन्धेपिदिप्य  
तिरिक्त्वा-मनुस-मनुसजपञ्जे०-देवा जाव भवराद्दा । चि । मनुसपत्त०-मनुसिणीसु  
सबहु० देवेसु एव वेव । जवरि सखेत्तुण कायम्ब । एव जाव० ।

§ ५८१ बह० पयद् । दुविहो जिहोसो—ओपेज आदेसेज य । ओषादेस  
सम्बन्धस्तमगो । जवरि तिरिक्त्वा जारयममो ।

एव मूलपयद्विदिसंक्रमे तेवीसमभिजोगराराणि समचाणि ।

§ ५८४ सुन्नगारसंक्रमे चि तत्प इमाणि तेरस अणियोगराराणि—समुच्चिचणा  
जाव अप्यावहुए चि । समुच्चिचणाणु० दुविहो जिहोसो ओषादेसमेदेण । ओपेज अत्वि  
मोह० सुन्नयास-जप्पदर-अवद्विद-अवचम्बद्विदिसंक्रामया । एव मनुसतिप । आदेसेज  
सम्बन्धमगणाविसेसेसु द्विदिविहचिमगो । एवं जाव० ।

तिरिक्त्वांमं जानना चादिबे । अपेराकी अपेरा नारकिपेमिं मोहनीबकी वल्लुह स्थितिके संक्रमक  
बीज बोधे हैं । अनुसपत्तु स्थितिके संक्रमक बीज असंख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब  
पंचेन्द्रिय तिर्यञ्ज सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्वाप्त, सामान्य वेव और अपरात्रित तकके क्षेत्रोंमें जानना  
चादिबे । मनुष्यपर्वाप्त, मनुष्यनी और सर्वाभिसिद्धिके क्षेत्रोंमें इसी प्रकार जानना चादिबे । किन्तु  
यहाँ संख्यातगुणा करना चादिबे । इसी प्रकार अनाहारक मरगैसातक जानना चादिबे ।

§ ५८३ अपचयस्य प्रकार्य है । निर्वेरा हो प्रकार्य है—ओषनिर्वेरा और आदेरानिर्वेरा ।  
यहाँ ओष और आदेरा दोनोंका कवन बरहृष्टके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्जोका  
रंग मरकियोके समान है । अर्थात् अचय्य स्थितिके संक्रमक तिर्यञ्जोसे अचय्य स्थितिके संक्रमक  
तिर्यञ्ज असंख्यातगुणे हैं ।

इसी प्रकार नूत्प्रकृति स्थितिसंक्रममें तेरस अनुबोनाहार समाप्त हुए ।

§ ५८४ सुन्नगारसंक्रमक प्रकार्य है । इसमें समुत्कीर्तनासे लेकर अस्पष्टतक तक ये  
तेरस अनुयोगाहार जानने चादिबे । समुत्कीर्तनागुमकी अपचा निर्वेरा हो प्रकार्य है—ओषनिर्वेरा  
और आदेरानिर्वेरा । ओषकी अपेरा मोहनीबकी सुन्नगार, अस्पष्ट, अवस्थित और अचय्य  
स्थितिके संक्रमक बीज हैं । इसी प्रकार मनुष्यजिकमें जानना चादिबे । अपेराकी अपेरा गति-  
मार्गकाके सब क्षेत्रोंमें स्थितिनिमित्तके समाप्त कर्म जानना चादिबे । इसी प्रकार अनाहारक  
मार्गका तक जानना चादिबे ।

विशेषार्थ—सुन्नगार अनुयोगाहारमें सुन्नगार, अस्पष्ट, अवस्थित और अचय्य इन  
चारोंका विचार किया जाण है । इसके अन्तर अचिकर तेरस हैं । व ये हैं—समुत्कीर्तना  
स्वामित्व, एक बीजकी अपेरा कास, अन्तर, मान्य बीजोकी अपेरा रंगविषय, पागामाग  
परिमाण, वेव, स्पर्श कर्म अन्तर, मध्य और अस्पष्टतक । सब प्रथम यहाँ समुत्कीर्तनाका विचार  
करते हैं । ओषसे सुन्नगारस्थितिके संक्रमक अस्पष्टस्थितिके संक्रमक, अवस्थितस्थितिके संक्रमक  
और अचय्यस्थितिके संक्रमक बीज हैं । जो कर्म स्थितिका संक्रम करके अन्तर समझमें अचिक  
स्थितिक संक्रम करे उसे सुन्नगारस्थितिक संक्रमक करते हैं । जो अचिक स्थितिक संक्रम करके

§ ५८५. सामित्ताणु० दुविहो णिद्दो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० भुज०-अवट्टि०-संकमो कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्टिस्स । अप्प०-संकमो कस्स ? अण्णद० सम्माइट्टिस्स वा मिच्छाइट्टिस्स वा । अवत्तव्वसंकमो कस्स ? अण्णद० उवसामणादो परिवदमाणयस्स पढमसमयदेवस्स वा । एवं मणुसतिए । णवरि पढमसमयदेवालाघो ण कायव्वो । आदेसेण सव्वगइमग्गणावयवेसु ओघभंगो । णवरि अवत्तव्वपदसामित्तं णत्थि । अण्णं च पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० भुज०-अप्प०-अवट्टि० कस्स ? अण्णदरस्स । आणदादि जाव उवरिमगेवज्जे त्ति अप्पदरपदमोघभंगो । अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठे त्ति अप्पद० कस्स ? अण्णद० । एवं जाव० ।

§ ५८६. कालाणु० दुविहो णिद्दो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह०

अनन्तर समयमें कम स्थितिका संक्रम करे उसे अल्पतरस्थितिका संक्रामक कहते हैं । जिसके पहले समयके समान ही दूसरे समयमें स्थितिका सक्रम हो उसे अवस्थितसक्रामक कहते हैं और जो असंक्रामक होनेके बाद पुनः संक्रामक होता है उसे अवक्तव्यस्थितिका सक्रामक कहते हैं । ओघसे इन चारों प्रकारके जीवोंका पाया जाना सम्भव है, इसलिये ओघसे भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिके सक्रामक जीव हैं यह कहा है । मनुष्यत्रिकमें यह व्यवस्था घटित हो जाती है, अतः इनके कथनको ओघके समान कहा है । इनके सिवा गतिमार्गणाके और जितने भेद हैं उनमें स्थितिबिभक्तिके समान भुजगार, अल्पतर और अवस्थित ये तीन भेद ही सम्भव हैं तथा आनतसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तक एक अल्पतर पद ही सम्भव है । इस लिये इनके कथनको स्थितिबिभक्तिके समान कहा है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक ययायोग्य जानना चाहिये ।

§ ५८५ स्वामित्त्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेश-निर्देश । ओघकी अपेक्षा मोहनीयकी भुजगार और अवस्थितस्थितिका सक्रम किसके होता है ? किसी एक मिथ्यादृष्टिके होता है । अल्पतरस्थितिका संक्रम किसके होता है ? किसी एक सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होता है । अवक्तव्यस्थितिका सक्रम किसके होता है ? जो उपशामक उपशामनासे च्युत हो रहा है उसके होता है । या जो उपशामक मर कर देव हुआ है उसके प्रथम समयमें होता है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि 'जो उपशामक मर कर प्रथम समयवर्ती देव है उसके होता है' यह आलाप यहाँ नहीं कहना चाहिये । आदेशकी अपेक्षा गतिमार्गणाके सब भेदोंमें ओघके समान जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ अवक्तव्यपदका स्वामित्व नहीं है । इसके सिवा इतनी विशेषता और है कि पचेन्द्रिय तिर्यच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिका सक्रम किसके होता है । किसी एकके होता है । आशय यह है कि इन दो मार्गणाधर्मों में एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान ही होता है, अतः यहाँ मिथ्यादृष्टिके ही तीनों पद घटित करने चाहिए । आनतसे लेकर उपरिम प्रैवयक तकके देवोंमें अल्पतरपदका कथन ओघके समान है । आशय यह है कि इनमें मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि दोनों प्रकारके जीव होते हुए भी यहाँ मात्र एक अल्पतर पद ही पाया जाता है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अल्पतरस्थितिका सक्रम किसके होता है । किसीके भी होता है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिये ।

§ ५८६ कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश ।

सुख० सुखमयो केव० ? जह० एयसमओ, उक्क० अचारि समया । अप्पु० अह०  
 एयस०, उक्क० वेवड्ढिसागरोबमसदं सादिरेयतिवलिदोबमेहि सादिरेय । अजड्ढि० अह०  
 एयस०, उक्क० अंतोसु० । अचत्तव्व० अहण्णुक्क० एयसमओ ।

§ ५८७ आवेसेण पेरय्य० सुख० ज० एयसमओ, उक्क० तिण्णि समया ।

अथपञ्चमसहिरे असाय्याहुवे मुञ्जगारस्वित्तिके संक्रमकथा कितना काम है ? अथपञ्चमसहिरे एक समय है और अहण्णुक्क० काम बार समय है । अस्वत्तरस्वित्तिके संक्रमकथा अथपञ्चमसहिरे एक समय है और अहण्णुक्क० काम अन्तमुहुत्तं और तीन पत्त अथपञ्चमसहिरे एक सौ ब्रेसठ सागर है । अथस्वित्तिके संक्रमकथा अथपञ्चमसहिरे एक समय है और अहण्णुक्क० काम अन्तमुहुत्तं है । तथा अथपञ्चमसहिरे अथपञ्चमसहिरे और अहण्णुक्क० काम एक समय है ।

विशेषार्थ—किसी एक जीवने एक समय एक मुञ्जगारस्वित्तिके संक्रम कथा और दूसरे समयमें वह अस्वत्तर वा अथस्वित्तिके संक्रम करने लगा तो मुञ्जगार स्वित्तिसंक्रमकथा अथपञ्चमसहिरे एक समय प्राप्त होता है । तथा जब कोई एक एकेश्वर्य जीव पहले समयमें असाय्याहुवे स्वित्तिके बड़ा कर बाँधता है, दूसरे समयमें संसाराद्यपये स्वित्तिके बड़ा कर बाँधता है, तीसरे समयमें मरकर और एक विपश्यते संक्रियोमें उत्पन्न होकर अस्वित्तिके बंधने योग्य स्वित्तिके बड़ाकर बाँधता है और चौथे समयमें शरीरको मज्ज करके संक्रियोमें योग्य स्वित्तिके बड़ाकर बाँधता है तब अस्वित्तिके मुञ्जगार स्वित्तिके बार समय पाये जानेके कारण प्रथम समयमें एक अथपञ्चमसहिरे बार मुञ्जगार स्वित्तिसंक्रमके भी बार समय पाये जाते हैं, इसलिये मुञ्जगार स्वित्तिसंक्रमकथा अथपञ्चमसहिरे एक समय और अहण्णुक्क० काम बार समय बतलाया है । जो जीव एक समय एक अस्वत्तरस्वित्तिके संक्रम करके दूसरे समयमें मुञ्जगार वा अथस्वित्तिके संक्रम करने लगता है उसके अस्वत्तरस्वित्तिके संक्रमकथा अथपञ्चमसहिरे एक समय पाया जाता है । तथा जिस जीवने अन्तमुहुत्तं एक अस्वत्तर स्वित्तिके संक्रम किया । फिर वह तीन पत्तकी आयु लेकर योगमिमिमें उत्पन्न हुआ और वहाँ आयुमें अन्तमुहुत्तं करके छेप रखने पर उसने सम्यक्त्वको पहचान किया । फिर वह अथासठ सागर तक सम्यक्त्वको सब परिभ्रमण करवा रहा । परमात् अन्तमुहुत्तं काम तक सम्यग्मिप्यात्वमें रहा और अन्तमुहुत्तंके बाद पुनः सम्यक्त्वको प्राप्त करके दूसरी बार अथासठ सागर काम तक सम्यक्त्वको सब परिभ्रमण करवा रहा । परमात् मिप्यात्वम गवा और इकतीस सागरकी आयुवासे वैश्वेमें उत्पन्न हो गया । फिर वहाँसे अन्त होकर और मज्जुपेमिमें उत्पन्न होकर अन्तमुहुत्तं काम तक अस्वत्तर स्वित्तिके संक्रम किया । फिर वह मुञ्जगारस्वित्तिके संक्रम करने लगा । इस प्रकार इस अथपञ्चमसहिरे बांग अन्तमुहुत्तं और तीन पत्त अथपञ्चमसहिरे एक सौ ब्रेसठ सागर होता है अथपञ्चमसहिरे अस्वत्तर स्वित्तिसंक्रमकथा अथपञ्चमसहिरे एक समय और अहण्णुक्क० काम अन्तमुहुत्तं और तीन पत्त अथपञ्चमसहिरे एक सौ ब्रेसठ सागरमात्र काम है । एक स्वित्तिके संक्रमकथा अथपञ्चमसहिरे एक समय और अहण्णुक्क० काम अन्तमुहुत्तं बतलाया है । स्वित्तिसंक्रम स्वित्तिके अविनाशयोग्य होनेसे अस्वत्तर भी इतना ही काम प्राप्त होता है । इसीसे वहाँ अथस्वित्तिके स्वित्तिसंक्रमकथा अथपञ्चमसहिरे एक समय और अहण्णुक्क० काम अन्तमुहुत्तं बतलाया है । अथपञ्चमसहिरे स्वित्तिसंक्रमकथा अथपञ्चमसहिरे और अहण्णुक्क० काम एक समय है वह स्पष्ट ही है ।

§ ५८८ आवेराथी अपेसा नारकियोमें मुञ्जगार स्वित्तिसंक्रमकथा अथपञ्चमसहिरे एक समय

। वा -वा प्रत्याः अथपञ्चमसहिरे स्वित्तिके अथपञ्चमसहिरे इति पाठा ।

अप्पद० ज० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । अवड्ढिकालो ओघभंगो । एवं पढमाए । विदियादि जाव सत्तमा त्ति विहत्तिभंगो ।

§ ५८८. तिरिक्खेसु भुज० जह० एयसमओ, उक्क० चत्तारि समयया । अवड्ढि० ओघं । अप० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पल्लिदोवमाणि अंतोमुहुत्ताहियाणि । एवं पंचिदियतिरिक्खतिए । पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० भुज० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समयया । अप्पद०-अवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

है और उत्कृष्ट काल तीन समय है । अल्पतर स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है । तथा अवस्थितका काल ओघके समान है । इसी प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिये । दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें भुजगार आदिका काल स्थितिबिभक्तिके भुजगार आदिके समान है ।

**विशेषार्थ**—जो असंज्ञी जीव दो विग्रहसे नरकमें उत्पन्न होता है उसके यदि दूसरे समयमें अद्वाक्षयसे, तीसरे समयमें शरीरको ग्रहण करनेसे और चौथे समयमें संक्लेशक्षयसे भुजगार स्थितिबन्ध होता है तो उसके भुजगारस्थितिके तीन समय पाये जानेके कारण भुजगारस्थिति-संक्रमके भी तीन समय पाये जाते हैं । इसीसे नरकमें भुजगार स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल तीन समय बतलाया है । अथवा अद्वाक्षय और संक्लेशक्षयसे स्थिति बढ़ाकर बाँधनेवाले नारकीके दो भुजगार समय होते हैं ऐसा भी उच्चारणाका पाठ है । पर उसकी यहाँ विवक्षा नहीं की है । जिस जीवने नरकमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्तके भीतर सम्यक्त्वको प्राप्त कर लिया है और अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर जो मिध्यात्वको प्राप्त हो गया है उसके नरकमें अल्पतरस्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर पाया जाता है । पहले नरकमें यह ओघ व्यवस्था बन जाती है, अतः वहाँके कथनको ओघके समान कहा है । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ अल्पतरस्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागरप्रमाण ही कहना चाहिये । दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं तक भुजगार स्थितिबिभक्ति आदिके कथनसे भुजगारस्थितिसंक्रम आदिके कथनमें कोई अन्तर नहीं है, इसलिये भुजगारस्थितिसंक्रम आदिका काल भुजगारस्थितिबिभक्ति आदिके कालके समान बतलाया है । शेष कथन सुगम है ।

§ ५८९ तिर्यञ्चोमें भुजगारस्थितिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है । अवस्थितस्थितिसंक्रमका काल ओघके समान है । अल्पतरस्थितिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त अधिक तीन पत्य है । इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिये । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकमें भुजगारस्थितिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है । अल्पतर और अवस्थितस्थितिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

**विशेषार्थ**—तिर्यञ्चोमें भुजगारस्थितिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल चार समय जिस प्रकार ओघप्ररूपणामें घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी घटित कर लेना चाहिये । उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है । अवस्थितस्थितिके संक्रामकका

१५८९. मनुस्मृतिय ३ सूत्र० ब्रह्० एयस०, उक्तं चत्वारि समयानि । अप्यद० ब्रह्० एयस , उक्तं तिग्ण्य पल्लिवोवमाभि पुम्बकोट्टिमागम्महिपाभि । मनुस्मिणीसु अंतोमुहुत्ताहियाणि । अत्रद्विदमोषमंगो । अत्रचम्ब अहण्णु० एयसमजो ।

१५९०. देवेसु सुत्र ब्रह्० एयस०, उक्तं तिग्ण्य समयानि । अप्यद०-अत्रद्वि० विहचिमंगो । एवं मयम०-भाणत्तेचर० । अत्ररि सगच्छिदी । अत्रदिसियादि चात्र सम्बद्धा चि विहचिमंगो । एवं ज्ञाप० ।

अप्यस्य अत्र एक समय और उक्त अत्र अन्तर्मुहुर्त अथपमं त्रिस प्रकृतसे कदावा है वही प्रकृत यहाँ भी प्राप्त होया है । इसीसे इस कथनको जोमके समान कहा है । अब रहा अस्तस्वितिके संक्रमकथ अप्यस्य और उक्त अत्र सो इसके अप्यस्य अत्र एक समयका ज्ञान करना तो उक्त है । किन्तु उक्त अत्र उस तिर्यञ्जके प्राप्त होता है जो पूर्व पर्वार्थमें अन्तर्मुहुर्तकथ उक्त अस्तस्वितिके संक्रम करके तीन पश्यथी आयुके साथ उत्तम भोगमूमिमें अत्यन्त हो जाता है । इसीसे यहाँ अस्तस्वितिके संक्रमकथ उक्त अत्र अन्तर्मुहुर्त अधिक तीन पश्य कदाया है । यह पूर्वोक्त अत्र पंचेन्द्र तिर्यञ्जत्रिकमें अत्यन्त उरइसे पर जाता है, इसलिये इनमें मुद्गगार स्थिति आदिके संक्रमकथेअ अत्र सामान्य तिर्यञ्जके समान कथयया है । पंचेन्द्र तिर्यञ्ज अत्यन्त और मनुष्य अपर्वात् इनमें मुद्गगार स्थितिके संक्रमकथेअ अप्यस्य अत्र एक समय और उक्त अत्र चार समय तथा अस्तस्वितिके संक्रमकथेअ अत्यन्त अत्र एक समय और उक्त अत्र अन्तर्मुहुर्त पूर्ववत् ही है । अब रहा अस्तस्वितिके संक्रमकथेअ अप्यस्य और उक्त अत्र सो इनके अप्यस्य अत्रमें कोई विशेषता नहीं है । इसे भी पहलेके समान जानना चाहिये । हाँ उक्त अत्र जो अन्तर्मुहुर्त कहा है सो यह इनकी आयुके उक्त अत्रकी अपेक्षासे कहा है ।

१५९१ मनुष्यत्रिकमें मुद्गगारस्थितिके संक्रमकथेअ अप्यस्य अत्र एक समय है और उक्त अत्र चार समय है । अस्तस्वितिके संक्रमकथेअ अप्यस्य अत्र एक समय है और उक्त अत्र पूर्वोक्तिके त्रिमासे अधिक तीन पश्य है । किन्तु मनुष्यनियोगमें यह उक्त अत्र अन्तर्मुहुर्त अधिक तीन पश्य है । अस्तस्वितिके अत्र आपके समान है । तथा अत्यन्त अप्यस्य और उक्त अत्र एक समय है ।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकमें त्रिस त्रिमासमें मनुष्यायुष्य कथ करके चाविकसम्बन्धन उपार्थित किया है वही अस्तस्वितिके संक्रमकथेअ उक्त अत्र पूर्वोक्तिके त्रिमासे अधिक तीन पश्य काया जाता है । इसीसे मनुष्यमें इस अत्रको उक्त प्रमाण कथयया है । किन्तु मनुष्यनियोगमें यह अत्र अन्तर्मुहुर्त अधिक तीन पश्य ही पाया जाता है, क्योंकि सम्यग्दक्षि जीव मर कर मनुष्यनियोगमें नहीं अत्यन्त होया है । सोप कथन सुगम है, क्योंकि सोप अत्यन्त सुखाया अनेक बार किवा प्रा पुत्र है । वही प्रकृत यहाँ भी कर ज्ञाना चाहिये ।

१५९२. देवोंमें मुद्गगारस्थितिके संक्रमकथेअ अप्यस्य अत्र एक समय है और उक्त अत्र तीन समय है । तथा अस्तस्वितिके संक्रमकथेअ अत्र अस्तस्वितिके संक्रमकथेअ अत्र अस्तस्वितिके समान है । इसी प्रकार मयमयासी औ अत्यन्त देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अस्तस्वितिके संक्रमकथेअ उक्त अत्र अपनी स्थितियमात्र कथना चाहिये । अतोपि देवोंमें अत्र उक्त अत्र उक्त अत्र देवोंमें मुद्गगारस्थिति आदिके संक्रमकथेअ अत्र अस्तस्वितिके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गक उक्त ज्ञाना चाहिये ।

१. आ०मठे अत्र इति पाठः ।

§ ५९१. अतराणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण भ्रज०-अप्य०-  
अवट्टि० विहत्तिभंगो । अवत्तव्व० जह० अंतोमु०, उक्क० तेतीसं सागरो० किंचूण-  
दोपुव्वकोडीहि सादिरयाणि । सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो । णवरि मणुसतिय० अवत्त०  
जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडी देसणा ।

§ ५९२. णाणाजीव० भंगविचयाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य ।

**विशेषार्थ—**सामान्यसे देवों, व्यन्तरों और भवनवासियोंमें असंज्ञी जीव मर कर उत्पन्न होते हैं, इसलिये इनमें भुजगारस्थितिके संक्रामकोंका उत्कृष्ट काल तीन समय बन जाता है । तथा भवनवासी और व्यन्तरोंमें अल्पतरस्थितिके संक्रामकोंका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति-प्रमाण कहते समय उसे अन्तर्मुहूर्त कम कहना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

§ ५९१ अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघकी अपेक्षा भुजगार, अल्पतर और अवस्थितस्थितिके संक्रामकोंका अन्तर स्थिति-विभक्तिके समान है । अवक्तव्यस्थितिके संक्रामकोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो पूर्वकोटि अधिक तेतीस सागर है । शेष मार्गणाओंमें भुजगारस्थिति आदिके संक्रामकोंका अन्तर स्थिति-विभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें अवक्तव्यस्थितिके संक्रामकोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटि-प्रमाण है ।

**विशेषार्थ—**स्थिति-विभक्तिमें भुजगार और अवस्थितस्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर तीन पल्य और अन्तर्मुहूर्त अधिक एक सौ त्रेसठ सागर बतलाया है । तथा अल्पतरस्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त बतलाया है । यहाँ भी यह इसी प्रकारसे प्राप्त होता है, इसलिये इस कथनको स्थिति-विभक्तिके समान कहा है । जो चायिक सम्यग्दृष्टि जीव अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर दो बार उपशमश्रेणि पर चढ़ता है उसके अवक्तव्य स्थितिके संक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त पाया जाता है । तथा एक पूर्वकोटिकी आयुवाले जिस मनुष्यने आठ वर्षका होनेपर क्षायिक सम्यक्त्व पूर्वक उपशमश्रेणिको प्राप्त किया है । फिर जो मर कर तेतीस सागरकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ है । फिर वहाँसे आकर जो एक पूर्वकोटिकी आयुके साथ मनुष्य हुआ है और आयुमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर जो पुन उपशमश्रेणि पर चढ़ा है उसके अवक्तव्य स्थितिके संक्रामकका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो पूर्वकोटि अधिक तेतीस सागर पाया जाता है । इसीसे प्रकृतमें अवक्तव्यस्थितिके संक्रामकका जघन्यअन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो पूर्वकोटि अधिक तेतीस सागर कहा है । अब यहाँ नरकगति आदि चार गतिमार्गणाएँ सो इनमें सब अन्तरकाल स्थिति-विभक्तिके अन्तर कालके समान बन जाता है, अत इस अन्तरको स्थिति-विभक्तिके समान कहा है । किन्तु यहाँ मनुष्यत्रिकमें अवक्तव्य-स्थितिसंक्रम भी सम्भव है इतना विशेष जानना चाहिये । अब यदि मनुष्यत्रिकमेंसे किसी एक चायिकसम्यग्दृष्टि जीवको अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर दो बार उपशमश्रेणि पर चढ़ाया जाता है तो यह अन्तर प्राप्त होता है और यदि भवके प्रारम्भमें आठ वर्षका होने पर और भवके अन्तमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर उपशमश्रेणि पर चढ़ाया जाता है तो यह अन्तर कुछ कम पूर्वकोटि-प्रमाण प्राप्त होता है । इसीसे यहाँ अवक्तव्यस्थितिके संक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटि-प्रमाण बतलाया है ।

§ ५९२. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश

ओषेण सुब्र-अप्य-अवद्वि-सकामया गियमा अतिय । सिवा एदे च अवचम्यभो  
च १ । सिवा एदे च अवचम्यया च २ । पुवसहिदा तिणि मंगा ३ । मणुसतिप  
अप्य-अवद्वि- गियमा अतिय, सेसपदा मयणिजा । मगा चन ० ।

१५९३ आदेसेण गेरद्वय- अप्य-अवद्वि-सकाम- गियमा अतिय । सुब्र-संक्र-  
मजियम्या । मंगा ३ । एवं सम्बणेख्य-सम्बपंचिदियतिरिक्त-देवा जाव सहस्वार चि ।  
तिरिक्त्सेसु सुब्र-अप्य-अवद्विदसकामया गियमा अतिय । मणुसअपद- सम्बपदा  
मयणिजा । मगा छवीस २६ । आषदादि जाव सम्बहु चि अप्यद-संक्र- गियमा  
अतिय । एवं जाव ० ।

और आदेरानिर्वेरा । ओषधी अपेसा मुङ्गार, अस्तर और अस्तितस्वितिके संक्रमक बीज  
नियमसे हैं । कदाचित् वे बहुत बीज हैं और एक बीज अस्तितस्वितिके संक्रमक है १ ।  
कदाचित् वे बहुत बीज हैं और बहुत बीज अस्तितस्वितिके संक्रमक हैं २ । इन दो मंगोंमें मुङ्गार  
के बिना देने पर तीन मंग होते हैं । मनुष्यत्रिकमें अस्तर और अस्तितस्वितिके संक्रमक बीज  
नियमसे हैं । सेप पद मङ्गीय है । मंग ६ होत है ।

विशेषार्थ—मुङ्गार आदि कुञ्ज चार पद हैं । जिनमेंसे आमकी अपेसा तीन पदवाले  
बीज तो नियमसे पाये जाते हैं किन्तु अस्तितस्वितिके बीज मङ्गीय हैं । इस पदकी अपेसा  
कदाचित् एक और कदाचित् नान्य बीज होत हैं, इसलिये दो मंग ता वे हुए और इनमें एक भुव  
मंगके सिद्धाने पर तीन मंग होते हैं । किन्तु मनुष्यत्रिकमें अस्तर और अस्तितस्वितिके सेसे दो पदवाले  
बीज तो सदा पाये जाते हैं किन्तु सेप दो पदवाले बीज मङ्गीय हैं । अतः यहाँ एक बीज और  
माना बीजोंकी अपेसा एकसंयोगी और त्रिसंयोगी कुञ्ज मंगोंका विचार करने पर भुव पदके  
साथ कुञ्ज भी मंग होते हैं ।

१६१ आदेरकी अपेसा मारुत्रिकोंमें अस्तर और अस्तितस्वितिके संक्रमक बीज  
नियमसे हैं । मुङ्गारस्वितिके संक्रमक बीज मङ्गीय हैं । मंग तीन होत हैं । इसी प्रकार सब  
मारुकी सब पंचिन्द्रिय तिर्यक सामान्य देव और सहस्वार चम्य तकके देवोंमें जातना चाहिये ।  
तिर्यकोंमें मुङ्गार, अस्तर और अस्तितस्वितिके संक्रमक बीज नियमसे हैं । मनुष्य  
अपवादोंमें सब पद मङ्गीय हैं । मंग १६ होते हैं । अतः अस्तर सेकर सर्वांसिद्धि तकके  
देवोंमें अस्तितस्वितिके संक्रमक बीज नियमसे हैं । इसी प्रकार अनाहारक मारुत्रिक तक  
जातना चाहिये ।

विशेषार्थ—मारुत्रिकोंमें कुञ्ज तीन पद हैं जिनमेंसे दो भुव हैं और एक मङ्गीय है अतः  
वहाँ तीन मंग जाते हैं । सब मारुकी आदि और किन्ती मारुत्रिकोंमें कुञ्जमें अस्तितस्वितिके बीजों में भी यही  
अतः जातनी चाहिये । सामान्य तिर्यकोंमें तीनों पद भुव हैं, अतः वहाँ एक ही मंग है । मनुष्य  
अपवादोंमें तीन पद होते हैं पर वे तीनों ही मङ्गीय हैं अतः यहाँ एक बीज और माना बीजोंकी  
अपेसा एकसंयोगी त्रिसंयोगी और त्रिसंयोगी मंग प्राप्त करने पर वे २६ होते हैं । अतः अस्तर सेकर  
सेकर सर्वांसिद्धि तक एक अस्तितस्वितिके ही पावा जाता है, अतः वहाँ इसकी अपेसा एक भुव  
मंग ही है ।

§ ५९४. भागाभागो विहत्तिभंगो । णवरि ओघपरूवणाए अवत्तव्वसंका० सव्वजी० केव० भागो ? अणंतिमभागो । मणुस० अवत्त० केव० ? असंखे० भागो । मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु संखे० भागो ।

§ ५९५. परिमाणं विहत्तिभंगो । णवरि अवत्तव्वसंका मया केत्तिया ? संखेज्जा ।

§ ५९६. खेत्तं पोसणं च विहत्तिभंगो । णवरि अवत्तव्वसंका मया० लोगस्स असंखे०-भागो ।

§ ५९७. कालो विहत्तिभंगो । णवरि अवत्त० जह० एयंसमओ, उक्क० संखेज्जा समया ।

§ ५९८. अंतरं विहत्तिभंगो । णवरि अवत्त० जह० एयस०, उक्क० वासपुघत्तं ।

§ ५९९. भावो सव्वत्थ ओदइयो भावो ।

§ ६००. अप्पावहुआणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण । ओघेण सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंका० । भुज०संका० अणंतगुणा । अवद्विदसंका० असंखे०गुणा । अप्पद०-

§ ५६४ भागाभागका कथन स्थितिविभक्तिके समान करना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि ओघकी अपेक्षा परूवणा करते समय अवक्तव्यस्थितिके संक्रामक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अन्तर्वे भूभागप्रमाण हैं । मनुष्योंमें अवक्तव्यस्थितिके संक्रामक जीव कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोंमें अवक्तव्यस्थितिके संक्रामक जीव सख्यातवें भागप्रमाण हैं ।

विशेषार्थ—भुजगार अनुयोगद्वारसम्बन्धी स्थितिविभक्तिमें भुजगार अल्पतर, और अवस्थित कुल तीन पद सम्भव है । किन्तु यहाँ एक अवक्तव्य पद बढ़ जाता है । इसलिये इसकी अपेक्षा जहाँ विशेषता सम्भव थी वहाँ बतला दी है । शेष कथन स्थितिविभक्तिके समान है ।

§ ५६५. परिमाणका कथन स्थितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यस्थितिके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं ।

§ ५६६ क्षेत्र और स्पर्शनका कथन स्थितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यस्थितिके संक्रामकोंका क्षेत्र और स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ५६७ कालका कथन स्थितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । उपशमश्रेणि पर निरन्तर चढ़नेका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय होनेसे उत्तरते समय यह काल प्राप्त होता है ।

§ ५६८. अन्तरका कथन स्थितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है । उपशमश्रेणिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व होनेसे जघन्य और उत्कृष्ट उक्त अन्तर प्राप्त होता है ।

§ ५६९. भाव सर्वत्र औदयिक है ।

§ ६०० अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेश-निर्देश । ओघकी अपेक्षा अवक्तव्यस्थितिके संक्रामक जीव सबसे थोड़े हैं । उनसे भुजगारस्थितिके



संक्र० संखे०गुणा । मणुस्सेसु सम्भरयोवा भवत्सम्भसका० । इज०संका० असंखे०-  
गुणा । अश्विदिसंका० असंखे०गुणा । अप्य०संक्र० सखे०गुणा । एवं मणुसपञ्च-  
मणुसिपीसु । अश्वरि सख्यत्वं संखेजगुणालावो कायम्बो । सेस विहचिमगो ।

१ एवं भुवमारो समचो ।

१ ६०१ परम्पिक्लेषे तस्य इमापि तिष्ठिन् अणियोगात्तणि—समुच्चित्वा  
सामिचमप्यावहुत्वं च । तत्त्वोपादससमुच्चित्वाए विहचिमगो ।

१ ६०२ सामिचं दुबिह—बहण्णमुक्त्सं च । उक्त्वं ताव पमद । बुविहो  
पिरेसो—ओपेण आदेसेच । ओपेण उक्त्सिया बहू विहचिमगो । अश्वरि उक्त्ससिद्धिदि  
बधियूणाबलियादीदस्त । तस्सेव से काले उक्त्समवह्वाण । उक्त्सिया हाणी विहचिमगो ।  
एव सम्भयेद्रय०-तिरिक्त०-पंचि०तिरिक्तविय३-मणुसपिप३-देवा आब सहस्सार  
पि । पंचि०तिरि०अपञ्च०-मणुसअपञ्च० उक्त्वं बहू कस्त ! अण्णदरस्त तप्याओम-  
बहण्णद्विदिसका० तप्याओमुक्त्ससिद्धिदि बधियूणाबलियादीदस्त । तस्सेव से काले उक्त्स  
मवह्वाणं । हाणी विहचिमगो । आपदादि सख्यद्वा पि विहचिमगो । एवं आब ।

संश्रमक बीज अन्वयगुणे है । इनसे अश्विभारस्वितिके संश्रमक बीज अश्वरिभारगुणे है । इनसे  
अश्वरिभारस्वितिके संश्रमक बीज संख्यागुणे है । मणुप्योमि अश्वरिभारस्वितिके संश्रमक बीज सखे  
भावे है । इनसे मुञ्जगारस्वितिके संश्रमक बीज अश्वरिभारगुणे है । इनसे अश्विभारस्वितिके  
संश्रमक बीज अश्वरिभारगुणे है । इनसे अश्वरिभारस्वितिके संश्रमक बीज संख्यागुणे है । इसी  
प्रकार मणुप्यपर्याप्त और मणुप्यमियोमि जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इन दो  
मार्गाद्याभिमि सर्वत्र संख्यागुणा करमा चाहिये । ओप अश्वरिभारस्वितिके समान है ।

इस प्रकार मुञ्जगार अनुयोगद्वारा समाप्त हुआ ।

१ ६१ परम्पिक्लेषे विपममं ये टीम अनुयोगद्वार इमे है—समुत्कीर्तना स्वामित्व  
और अश्वरिभारगुण । इनसेसे ओप और अश्वरिभार अश्वरिभार समुत्कीर्तनाअ अश्वरिभारस्वितिके  
समान है ।

१ ६२ स्वामित्व दो प्रकारका है—प्रथम और अश्वरिभार । सर्वप्रथम अश्वरिभार प्रकार है ।  
इसकी अश्वरिभार विपममं दो प्रकारका है—ओपनिर्वेरा और आश्वरिभारनिर्वेरा । ओपकी अश्वरिभार अश्वरिभार  
इतिहास मंग स्वितिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अश्वरिभारस्वितिके अश्वरिभार  
जिससे एक आश्वरिभार हो गया है उसके यह अश्वरिभार वृद्धि होती है । तथा इसीके तदनन्तर समयमें  
अश्वरिभार अश्वरिभार होता है । अश्वरिभार इतिहास मंग स्वितिके समान है । इसी प्रकार सब  
प्रकारों सामान्य विपममं, अश्वरिभार विपममं, मणुप्यत्रिक सामान्य देव और अश्वरिभार अश्वरिभार  
उक्त्वं हैमि जानना चाहिये । अश्वरिभार विपममं अश्वरिभार और मणुप्य अश्वरिभारमि अश्वरिभार इति  
किससे होती है । जो तत्त्वयोग्य अश्वरिभारस्वितिके अश्वरिभार पर रहा है । फिर जिसने तत्त्वयोग्य  
अश्वरिभारस्वितिके अश्वरिभार करके एक आश्वरिभार बना दिया है उसके अश्वरिभार वृद्धि होती है । फिर  
तदनन्तर समयमें इसीके अश्वरिभार अश्वरिभार होता है । तथा अश्वरिभार इतिहास मंग स्वितिके  
समान है । आमतौर पर अश्वरिभारस्वितिके अश्वरिभारस्वितिके समान मंग है । इसी प्रकार  
अश्वरिभारस्वितिके अश्वरिभार अश्वरिभार है ।

§ ६०३. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० जह० वड्डी कस्स ? अण्णदरस्स जो समयूणद्विदिसंक्रमादो उक्क० द्विदि संक्रामेदि तस्स जह० वड्डी । जह० हाणी कस्स ? अण्णद० जो उक्क० द्विदि संक्रामेमाणो समयूण्णकस्सद्विदि संक्रा० जादो तस्स जहण्णिया हाणी । एयदरत्थ अवट्ठाणं । एव चदुगदीसु । णवरि आणदादि सव्वट्ठा त्ति जह० हाणी कस्स ? अण्णद० अघद्विदि गालेमाणयस्स । एवं जाव० ।

§ ६०४. अप्पावहुअं विहत्तिभंगो ।

एवं पदणिक्खेवो त्ति समत्तमणियोगहारं ।

§ ६०५. वड्ढिसकामगे त्ति तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्वाराणि १३—समुक्कित्तणा जाव अप्पावहुए त्ति । समुक्कित्तणदाए दुविहो णिद्वेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० अत्थ तिण्णिवड्ढि-चत्तारिहाणि-अवट्ठि०-अवत्तव्वसंक्रामया । एवं मणुस०३ । सेसं विहत्तिभंगो ।

§ ६०६. सामित्तं विहत्तिभंगो । णवरि अवत्त० अण्ण० उवसामगस्स' परिवद-

विशेषार्थ—जिसका बन्ध होता है उसका एक आवलि काल जानेके बाद ही संक्रम होता है और यह सक्रमका प्रकरण है । इसीसे ओघकी अपेक्षा धर्मेण करते समय उत्कृष्ट वृद्धि उत्कृष्ट स्थितिवन्धके होनेके बाद एक आवलि कालके बाद बतलाई है । अन्यत्र जहाँ बन्धके बाद एक आवलि काल बाद उत्कृष्ट वृद्धि बतलाई है वहाँ यही कारण जानना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

§ ६०३. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघकी अपेक्षा मोहनीयकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ? जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम करनेके बाद उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम करता है उसके जघन्य वृद्धि होती है । जघन्य हानि किसके होती है ? उत्कृष्ट स्थितिका सक्रम करनेवाला जो जीव तदनन्तर एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम करता है उसके जघन्य हानि होती है । तथा किसी एक जगह जघन्य अवस्थान होता है । इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि आनत कलसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जघन्य हानि किसके होती है ? अधःस्थितिको गलानेवाले किसी भी जीवके होती है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

§ ६०४. अल्पबहुत्वका भंग स्थितिविभक्तिसे सम्बन्ध रखनेवाले पदनिक्षेपके अल्पबहुत्वके समान है ।

इस प्रकार पदनिक्षेप अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

§ ६०५ वृद्धिसंक्रामक नामक अनुयोगद्वारमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्वतक तेरह अनुयोगद्वार होते हैं । समुत्कीर्तनाकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघकी अपेक्षा मोहनीयकी तीन वृद्धि, चार हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके संक्रामक जीव हैं । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिये । शेष भंग स्थितिविभक्तिके समान है ।

§ ६०६ स्वामित्वका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि जो

१. ता०प्रतौ उपसामगो [ गस्स ], आ०प्रतौ उवसामगो इति पाठः ।

माणयस्त पन्मसमयदेवस्त वा । एवं मणुसतिप । णवरि पन्मसमयदेवालावो ण कायम्भो ।

§ ६०७ क्खलाणु दुबिहो णिरेसो—ओषेण आवेसेण य । ओषेण तिण्णिवट्ठि-  
पचारिहाणि-अवट्ठि०संक्ख० क्खलो विहचिमगो । णवरि सखे०मागहाणि—अवच०  
अहण्णु० एयसमओ ।

§ ६०८. सम्बणेर०—सम्बद्धेषु विहचिमगो । तिरिक्खत्तापं थ विहचिमगो । पचि०  
तिरिक्खत्त०३ असखे मागवट्ठि-सखेज्जगुणवट्ठि० सइ० एयसमओ, उक्क वे समया ।  
सखेज्जमागवट्ठि-हाणि-सखेज्जगुणहाणिसक्का अहण्णु० एयसमओ । असखे मागहाणि-  
अवट्ठि० तिरिक्खोच । एवं पचिदियतिरिक्खत्तपज्ज० । णवरि असखे मागहाणी० अइ०  
एयसमओ, उक्क० अंतोसु० । एवं मणुसअपज्ज० । मणुस पचि तिरिक्खत्तमगो । णवरि

अथर्वमन्त्र कीर्तन कथामन्त्रेणिसि श्रुत हो रहा है या जो अथर्वमन्त्र मर कर प्रथम समयवर्ती देव है  
उसके अन्वय पद होता है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिष्टुप् अन्नना चाहिये । किन्तु इतनी विशेष्य है  
कि यहाँ प्रथम समयवर्ती देवके अन्वय पद होता है यह भाव्य नहीं करना चाहिये ।

§ ६०९. क्खज्जगुणवट्ठि अपेसा निर्देस हो प्रकरक है—ओषनिर्देसा और आवेसनिर्देसा ।  
आपन्नि अपेसा वीन इत्ति, चार हाणि और अरिक्खत्तके संख्यामन्त्रों का स्विचिभिर्मन्त्रके समान  
है । किन्तु इतनी विशेष्य है कि संख्यातभागहानि और अन्वयक अथर्व और अहत्त कथ  
एक समय है ।

विशुद्धार्थ—इन सब इन्द्रियों और हानियोंके काश्च स्विचिभिर्मन्त्रमें पठित करके बतथा  
आये हैं वही मन्त्र पठ्यमें पठित कर लेना चाहिये । किन्तु स्विचिभिर्मन्त्रमें स्विचिसत्त्वकी  
अपवासे वह कथ कथनाया है । यहाँ वसक्य अन्न स्विचिसत्त्वकी अपेक्षसे करना चाहिये । तथापि  
यहाँ संख्यातभागहानिक अहत्त कथ जो हो समय कम अहत्त संख्यातप्रमाण बतथाया है वह  
यहाँ नहीं प्राप्त होना क्योंकि जिस स्विचिसत्त्वके सम्प्रदायमें संख्यातभागहानिक यह अहत्त कथ  
पठित किया गया है वहाँ संकथ नहीं होया । इसलिये स्विचिसत्त्वकी अपेसा संख्यातभागहानिक  
अथर्व और अहत्त कथ एक समय प्रमाण ही प्राप्त होया है ऐसा जानना चाहिये । स्विचिसत्त्वके सिवा  
यहाँ स्विचिसत्त्वमें एक वद और हात्ता है जिसे अन्वय पद कहत हैं । वह वा वो अथर्वमन्त्रिये  
श्रुत होनेवाले अथर्व सम्बद्धि कीर्तने एक समयके श्रिय होया है या जो अथर्वमन्त्रोद अथर्व  
सम्बद्धि कीर्तन मर कर देव हाता है उसके प्रथम समयमें होया है, अथर्व इसका अथर्व और  
अहत्त कथ एक समय कथनाया है ।

§ ६१० सब मन्त्रकी और सब देवोंमें स्विचिभिर्मन्त्रके समान कथ है । तिर्बद्धोंमें भी  
काश्च स्विचिभिर्मन्त्र के समान है । वैश्विण्य तिर्बद्धत्रिष्टुप् अन्वयकात् मागवट्ठि और संख्यात  
गुणवट्ठिके संख्यामन्त्र अथर्व कथ एक समय है और अहत्त कथ वा समय है । संख्यातभाग  
इत्ति, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिके संख्यामन्त्र अथर्व और अहत्त कथ एक समय  
है । अन्वयकात् मागहानि और अरिक्खत्त संख्यामन्त्र कथ सामान्य त्रिष्टुप्के समान है । इसी  
प्रकार वैश्विण्य त्रिष्टुप् अथर्वमन्त्रमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेष्य है कि इनमें अन्वयकात्  
मागहानिक अथर्व कथ एक समय है और अहत्त कथ अन्वयकात् है । इसी प्रकार मनुष्य  
अथर्वमन्त्रमें जानना चाहिये । मनुष्य त्रिष्टुप् वैश्विण्य त्रिष्टुप्के समान कथ है । किन्तु इतनी

असंखे०भागहाणि० जह० एयसमओ, उक्क० तिण्णि पल्लिदोवमाणि पुव्वकोडितिभागेण सादिरेयाणि । अवत्त० जहण्णु० एयसमओ । एवं जाव० ।

विशेषता है कि इनमें अस्ख्यातभागहानिके सक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पल्य है। अवक्तव्यस्थितिके संक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिये।

**विशेषार्थ**—स्थितिबिभक्तिमे सव नारकियोंके असख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय, दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय, असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण तथा अवस्थितका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त वतलाया है। सव देवों और सामान्य तिर्यञ्चोमें भी इसी प्रकार जहा जितने पद सम्भव हैं उनका यथायोग्य काल वतलाया है। प्रकृतमे इन मार्गणाओंमे अपने-अपने पदोंका उक्त काल इसी प्रकार वन जाता है। इसीसे यहा इस सव कथनको स्थितिबिभक्तिके समान कहा है। इस कालका विशेष खुलासा स्थितिबिभक्तिमें किया ही है, अतः वहासे जान लेना चाहिये। पचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें अद्वाक्ष्य और संक्लेशक्षय दोनों प्रकारसे असख्यातभागवृद्धिरूप सक्रम सम्भव है, इसीसे इनमें इसका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय वतलाया है। जो एकेन्द्रिय जीव एक विग्रहसे सञ्जी तिर्यञ्चोमें उत्पन्न होता है उसके प्रथम समयमें असंखीके योग्य और शरीरग्रहणके समयमे सञ्जीके योग्य स्थितिवन्ध होता है। अतः पचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें सख्यातगुणवृद्धिरूप संक्रमका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय वतलाया है। पचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें संख्यात-भागवृद्धि संक्लेशक्षयसे ही होती है, अतः इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय वतलाया है। सख्यातभागहानि और सख्यातगुणहानि स्थितिकण्डकघातकी अन्तिम फालिके पतनके समय होता है, अतः इनका भी जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय वतलाया है। सामान्य तिर्यञ्चोमें असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त अधिक तीन पल्य तथा अवस्थितका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त वतलाया है। यह पचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें भी वन जाता है, अतः पचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें इन दो पदोंके कालको सामान्य तिर्यञ्चोके समान कहा है। पचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें अपने सम्भव पदोंका जो काल वतलाया है वह पचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें भी वन जाता है, अतः इनमें सव पदोंका काल पचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके सव पदोंके समान वतलाया है। केवल असंख्यातभागहानिके उत्कृष्ट कालमें कुछ विशेषता है। वात यह है कि पचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्तसे अधिक नहीं होता है, इसलिये यहा इस पदका अन्तर्मुहूर्त ही काल प्राप्त होता है। कालकी यह व्यवस्था मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भी जाननी चाहिये, क्योंकि पचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके कालसे इनके कालमें कोई विशेषता नहीं है। मनुष्यत्रिकमें और सव पदोंके काल तो पचेन्द्रिय तिर्यञ्चके समान वन जाते हैं। किन्तु असंख्यातभागहानिके उत्कृष्ट कालमें कुछ विशेषता है। वात यह है कि जिस मनुष्यने आगामी भवकी मनुष्यायुका वन्ध करनेके वाद क्षायिकसम्यग्दर्शनको उत्पन्न कर लिया है उसके पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पल्यप्रमाण कालतक असख्यातभागहानि पाई जाती है। इसीसे यहा मनुष्यत्रिकमें यह काल उक्तप्रमाण वतलाया है। किन्तु मनुष्यनियोंमें यह काल अन्तर्मुहूर्त अधिक तीन पल्य ही पाया जाता है, क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीव मर कर मनुष्यनियोंमें उत्पन्न नहीं होते हैं। यह वात भुजगारस्थितिसंक्रममे अत्यतर पदके वतलाये गये कालसे जानी जाती है। मनुष्यत्रिकमे अवक्तव्यपद भी सम्भव है सो उसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय ओषके समान यहा भी घटित कर लेना चाहिये।

। ६०९ अठराणु दुबिहो गिरेसो—ओषेण आदसेण य । ओषेण सम्बविहचिमगो ।  
 णवरि अवच० जह अतोसु०, उच्च० सुत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि । सम्बवेरह्य०—  
 सम्बदेवा ति विहचिमगो । तिरिन्त्ताण पि विहचिमगो । पंचिदियतिरिक्ख ३  
 विहचिमगो । णवरि सत्ते० गुणवट्टि० जह एयसमओ, उच्च० पुम्बकोट्टिपुपच । पंचिदिय  
 तिरिक्खअपज्ज०—मणुसअपज्ज असत्ते० भागवट्टि—हाणि—सत्ते० गुणवट्टि—अवट्टि० जह०  
 एयसमओ उच्च० अतोसु० । संखे० भागवट्टि—हाणि—सत्ते० गुणहाणि जहण्णुक्क०  
 अतोसु० । मणुसइ विहचिमगो । णवरि सत्ते० गुणवट्टि० जह० एयसमओ, उच्च०  
 पुम्बकोट्टी दसणा । अवच० जह० अतोसु , उच्च० पुम्बकोट्टी देसणा । एव थाव० ।

। ६०६. अन्तरात्मनस्य अपेक्षा निर्देशा वा प्रकथयत इ—आध्यात्मिके और आध्यात्मिके ।  
 आध्यात्मिके अपेक्षा सब पदोंका अन्तर स्थितिविमलिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि  
 आध्यात्मिके अपेक्षा अन्तर अन्तमु हुत है और उच्च अन्तर सामिक लेखीस समार है । सब  
 आध्यात्मिके और सब देवोंमें सब पदोंका अन्तर स्थितिविमलिके समान है । तिर्यगोंमें भी सब पदोंका  
 अन्तर स्थितिविमलिके समान है । पंचेन्द्रिय तिर्यगत्रिकमें सब पदोंका अन्तर स्थितिविमलिके  
 समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें संस्कारात्मकवृत्तिके संस्कारमकका अपेक्षा अन्तर एक  
 समय है और उच्च अन्तर पूर्वकालीयकत्वप्रमाण है । पंचेन्द्रिय तिर्यगत्रिके अपेक्षा और मनुष्य  
 अपेक्षाओंमें असंस्कारात्मकवृत्तिके असंस्कारात्मकवृत्तिके, संस्कारात्मकवृत्तिके और आध्यात्मिके  
 संस्कारमकका अपेक्षा अन्तर एक समय है और उच्च अन्तर अन्तमु हुत है । संस्कारात्मकवृत्तिके,  
 संस्कारात्मकवृत्तिके और संस्कारात्मकवृत्तिके अपेक्षा और उच्च अन्तर अन्तमु हुत है । मनुष्य  
 त्रिकमें सब पदोंका अन्तर स्थितिविमलिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि संस्कारात्मक  
 वृत्तिके संस्कारमकका अपेक्षा अन्तर एक समय है और उच्च अन्तर उच्च कम एक पूर्वकाली है ।  
 तथा आध्यात्मिके अपेक्षा अन्तर अन्तमु हुत है और उच्च अन्तर उच्च कम एक पूर्वकाली है ।  
 इसी प्रकार अनाहारक मार्गवृत्तिके आत्मन्ये वादिय ।

विशेषार्थ—पंचेन्द्रिय तिर्यगत्रिकमें संस्कारात्मकवृत्तिके अपेक्षा अन्तर एक समय बतलाय  
 है । इसका कारण यह है कि जो पंचेन्द्रिय हो विग्रह द्वारा अत्यन्त योग्य स्थितिके साथ सब जीवोंमें  
 उत्पन्न होता है वह प्रथम समयमें असंस्कारिके योग्य संस्कारात्मकवृत्तिके बड़ाकर बांधता है, दूसरे  
 समयमें अन्त पदके साथ स्थितिके अन्तर है और तीसरे समयमें शरीरमध्यके साथ सब जीवोंके  
 योग्य संस्कारात्मकवृत्तिके स्थिति बड़ाकर बांधता है । इस प्रकार इसके संस्कारात्मकवृत्तिके संस्कारमकका  
 अपेक्षा अन्तर एक समय पाया जाता है । पंचेन्द्रिय तिर्यगत्रिके अपेक्षा और मनुष्य अपेक्षाओंमें  
 भी इसी प्रकारके संस्कारात्मकवृत्तिके अपेक्षा अन्तर एक समय प्राप्त होता है । तथा मनुष्यात्मिके  
 भी संस्कारात्मकवृत्तिके अपेक्षा अन्तर एक समय सब प्रकारके ही प्राप्त होता है । मनुष्यात्मिके जो  
 मनुष्य अन्तमु हुतके भीतर दो बार उत्पन्नमें वर बढ़ता है इसके आध्यात्मिके अपेक्षा अन्तर  
 अन्तमु हुत पाया जाता है । तथा जो पूर्वकालिके प्रारम्भमें अन्त बढ़ना होकर उत्पन्नमें वर बढ़ता  
 है और फिर जो अन्तके अन्तमें उत्पन्नमें वर बढ़ता है इसके आध्यात्मिके अपेक्षा अन्तर  
 उच्च कम एक पूर्वकाली वर्षमाना पाया जाता है । इस प्रकार अन्तर आत्मिके विशेषताओंका  
 निर्देश यहां वर कर दिया है । इन सब स्थानोंमें सब पदोंका अपेक्षा और उच्च अन्तर स्थिति  
 विमलिके बतलाय सब वृत्तिके अनुपेक्षाकारके प्रतिपादित अन्तरके समान है, अन्त यहां हमने इसका  
 अन्तके निर्देश नहीं किया है ।

§ ६१०. पाणाजीवभंगविचओ भागाभागं परिमाणं खेत्तं पोसणं कालो अंतरं भावो च विहत्तिभंगो । णवरि सव्वत्थ अवत्त० परूवणा जाणिऊण कायच्चा ।

§ ६११. अप्पावहुगाणु० दुविहो णिदेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण सव्वत्थोवा अवत्त० संका० । असंखे० गुणहाणिसंका० संखे० गुणा । सेसं विहत्तिभंगो । एवं मणुसतिए ३ । सेसं० विहत्तिभंगो ।

एवं बद्धिपरूवणा गया ।

§ ६१२. एत्थ द्वाणपरूवणाए सत्तरिसागरो० कोडाकोडिं बंधियूण बंधावलियादीद-मोकहुणाए संक्रममाणयस्स तमेगं द्विदिसंक्रमद्वाणं । एत्तो समयूण-दुसमयूणादिकमेण अणुक्कस्ससंक्रमद्वाणवियप्पा ओयारेयच्चा जाव णिव्वियप्पंतोकोडाकोडि ति । तदो धुवद्धिदीदो हेट्ठा हदसमुप्पत्तियकम्मालंबणेणोदारेयच्च्वं जाव वादरेइंदियपञ्जत्तधुवद्धिदि ति । पुणो खवयपाओग्गाणि वि ठाणाणि सागरोवमद्धिदिसंतकम्मपढमद्धिदिखंडयप्पहुडि जहासंभवमोयारेयच्चाणि जाव सुहुमसांपराइयखवगसमयाहियावलिया ति । एदाणि च संक्रमद्वाणाणि किंचूणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्ताणि, उक्कस्सद्धिदिसंक्रमादो जाव एइंदियधुवद्धिदि ति णिरंतरसरूवेण तदुप्पत्तिदंसणादो । तत्तो हेट्ठा खवगपाओग्ग-द्वाणाणं सांतर-णिरंतरकमेण अंतोमुहुत्तमेत्ताणमुप्पत्तिउवलंभादो ।

एवं मूलपयडिद्विदिसंक्रमो समत्तो ।

§ ६१०. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर और भाव इनका भंग स्थितिविभक्तिके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि यदा अवक्तव्यपद भी होता है, इसलिये इसका कथन सर्वत्र जान कर करना चाहिये।

§ ६११. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेश-निर्देश। ओघकी अपेक्षा अवक्तव्यस्थितिके संक्रामक जीव सबसे थोड़े हैं। उनसे असंख्यात गुणहानिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष पदोंका अल्पबहुत्व स्थितिविभक्तिके समान है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। शेष भंग स्थितिविभक्तिके समान है।

इह प्रकार वृद्धि प्ररूपणाका कथन समाप्त हुआ।

§ ६१२. यहाँ स्थान प्ररूपणाका कथन करनेपर जो जीव सत्तर कोडाकोडी सागरप्रमाण स्थितिकी बंधावलिसे बंधावलिसे बाद अपकर्षण करके उसका सक्रमण करता है उसके एक स्थिति-संक्रमस्थान होता है। इसके बाद एक समय कम, दो समय कम आदिके क्रमसे अनुत्कृष्ट संक्रमस्थानोंके विकल्प निर्विकल्प अन्तःकोडाकोडीप्रमाण स्थितिके प्राप्त होनेतक अवतरित करने चाहिए। फिर ध्रुवस्थितिसे नीचे बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तकी ध्रुवस्थितिके प्राप्त होनेतक हतसमुत्पत्तिक कर्मके सहारेसे संक्रमस्थानोंको प्राप्त कर ले आना चाहिये। फिर एक सागरप्रमाण स्थितिसत्कर्मके प्रथम स्थितिकाण्डकसे लेकर सूक्ष्मसाम्पराय क्षपकके एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थितिके शेष रहने तक यथासम्भव क्षपकके योग्य संक्रमस्थान ले आने चाहिये। ये संक्रमस्थान कुछ कम सत्तर कोडाकोडी सागरप्रमाण होते हैं, क्योंकि उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमस्थानसे लेकर एकेन्द्रियके योग्य ध्रुवस्थिति तक निरन्तर क्रमसे इन स्थानोंकी उत्पत्ति देखी जाती है। और उससे नीचे क्षपक योग्य अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थानोंकी सान्तर-निरन्तर क्रमसे उत्पत्ति देखी जाती है।

इस प्रकार मूलप्रकृति स्थितिसंक्रम समाप्त हुआ।

१६१३ संप्रतिचरपयद्विदिसकमो पचावसरो । तस्य इमाणि षट्प्रीसमणियोग-  
 दाराणि—अद्याच्छेदो सम्बर्तकमो णोसम्बर्तकमो उक्त्स्सर्तकमो अणुक्त्स्सर्तकमो ब्रह्मण-  
 सकमो अब्रह्मणसकमो सादियसकमो अभादियसकमो ध्रुवसकमो अद्भुतसकमो एयजीवेण  
 सामिच कालो अंतरं षाणजीवमगविचओ मागामागो परिमाण खेच पोसण कालो  
 अतरं सण्णियासो भावाणुगमो अप्पाबहुगाणुगमो चेदि । भुजगारादीणि च ४ । तस्य  
 इविहो अद्याच्छेदो ब्रह्मणुक्त्स्सद्विदिसकमविसयमेदेण । एतस्य ताव पुण्ड्रमप्यणासुचम-  
 सवर्णं काठणुक्त्स्सद्विदिसकमद्याच्छेदो उक्त्स्सद्विविदरिभामगमणुवच्छस्तामो । तं बहा—  
 इविहो तस्स निदेसो ओपादेसमेदेण । ओपेण मिच्छत्त-सोत्तसकसायाणमुक्त्स्सओ  
 द्विदिसकमद्याच्छेदो सचरि-चचालीससागरोवमकोडाकोडीओ दोहि आवलियाहि उणाओ ।  
 णवणोक० उक्त्स्सद्विदिसकम अद्याच्छेदो चचालीस सागरोवमकोडाकोडीओ तीहि  
 आवलियाहि परिहीणाओ । सम्मत्त-सम्माभिच्छाणाणुक्त्स्सद्विदिस० अद्या० सचरि  
 सागरोवमकोडा० अंतोमुहुत्तुणाओ । एवं चहुसु गदीसु । णवरि पंथि० तिरि० अपत्त०  
 मणुस० अपत्त० अद्भावीस पपटीणमुक्त्स्सद्विदिस० अद्या० सचरि-चचालीस सागरो कोडा०  
 अंतोमुहुत्तुणाओ । आणदादि जाव सम्बहा चि सम्भासि पपटीणमुक्त्स्सद्विदिस० अद्या०  
 अनोच्छेदा । एव जाव० ।

१६१३ अथ चर प्रकृति स्थितिसंक्रमक काल अवसर प्राप्त है । इसमें ये चौबीस  
 अनुयोगकार हात हैं—अद्याच्छेद सर्वसंक्रम मोसर्तसंक्रम इत्तुत्तसंक्रम अनुत्तुत्तसंक्रम,  
 ब्रह्मणसंक्रम अब्रह्मणसंक्रम सादिसंक्रम अभादिसंक्रम, ध्रुवसंक्रम अणुवसंक्रम एक बीसवीं  
 ओपेका स्वरमित्त काल, अंतर, नन्द्यजीवोंकी अपवा मंगविचच, मागामाग परिमाण केन्द्र,  
 हस्तान काळ, अन्तर, समिकरै अभाणुगम और अस्सद्वुत्तानुगम । तस्य भुजगार आवि चार ।  
 इनमेंसे अद्याच्छेद हो प्रथम है—ब्रह्मण्य स्थितिसंक्रमको विषय करनेवाला और इत्तुत्त स्थिति-  
 संक्रमका विषय करनेवाला । अब यहां पूर्वके अर्पणानुसंध अथवा अन्तर इत्तुत्त स्थितिसंक्रम  
 विषयक अद्याच्छेद इत्तुत्त स्थिति अर्पणविषयक अद्याच्छेदके समान है यह वतप्रते है । यथा—  
 इत्तुत्त स्थितिसंक्रमविषयक अद्याच्छेदक्य निर्देह हो प्रथम है—ओपनिर्देह और आवेदनिर्देह ।  
 ओपकी अपवा मिप्यात्वम् इत्तुत्त स्थितिसंक्रम अद्याच्छेद हो आवन्नि क्रम सत्तर कोस्रओपी  
 सागरत्वमाय है । सोत्रम् अगायोय इत्तुत्त स्थितिसंक्रम अद्याच्छेद हो आवन्नि क्रम चाबीस  
 कोस्रओपी सागर प्रमाय है । तस्य सौ नोकायोका इत्तुत्त स्थितिसंक्रम अद्याच्छेद तीन आवन्नि  
 क्रम चाबीस कोस्रओपी सागर है । सम्पत्त और सम्पमित्तप्यात्वम् इत्तुत्त स्थितिसंक्रम  
 अद्याच्छेद अन्तर्मुत्तं क्रम सत्तर कोस्रओपी सागरत्वमाय है । इसी प्रकार चारों गतिबोधें जानन्य  
 चादिये । किन्तु इन्हीं विस्तार है कि पंथेगिस्व तिर्यग अथवाप्य और मनुष्य अथवाप्यकेमें अद्भावीस  
 इत्तुत्तियेय इत्तुत्त स्थितिसंक्रम अद्याच्छेद अन्तर्मुत्तम् सत्तर और चाबीस कोस्रओपी सागर  
 है । आनन्दसे अन्तर सर्वार्थसिद्धिकके देवोंमें सभी प्रकृतियोंके इत्तुत्त स्थितिसंक्रम अद्याच्छेद  
 अन्तर् कोस्रओपी सागर प्रमाय है । इसी प्रकार अवाहारक मार्गहालक जानना चादिये ।

§ ६१४. संपहि जहण्णडिदिसंक्रमद्वाच्छेदपरूवणड्डुमुवरिमसुत्तसंवंधमवल्लेवो<sup>१</sup>—

❀ एत्तो जहण्णयं वत्तइस्सामो ।

§ ६१५. पड्जासुत्तमेदं जहण्णडिदिसंक्रमद्वाच्छेदपरूवणाविसयं सुगमं ।

**विशेषार्थ**—मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सत्तर कोडीकोडी सागरप्रमाण होता है, किन्तु इसका संक्रम बन्धावलिके बाद उदयावलिके उपरके निपेकोंका ही होता है, अतः इसका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद दो आवलिकम सत्तर कोडाकोडी सागरप्रमाण बतलाया है। सोलह कषायोंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध चालीस कोडाकोडी सागरप्रमाण होता है, अतः इसका भी उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम पूर्वोक्त कारणसे दो आवलिकम चालीस कोडाकोडी सागरप्रमाण ही कहा है। अब रहे नौ नोकपाय सो इनकी बन्धकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थिति विविध प्रकारकी बतलाई है। हा संक्रमकी अपेक्षा इनकी उत्कृष्ट स्थिति एक आवलिकम चालीस कोडाकोडी सागर प्राप्त होती है, अतः इनका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद तीन आवलिकम चालीस कोडाकोडी सागरप्रमाण जानना चाहिये, क्योंकि जो उत्कृष्ट स्थिति संक्रमसे प्राप्त होती है उसका संक्रमावलिके बाद ही संक्रम होता है। उसमें भी उदयावलिप्रमाण निपेकोंका संक्रम नहीं होता, अतः नौ नोकषायोंका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद तीन आवलिकम चालीस कोडाकोडी सागरप्रमाण होता है यह बात सिद्ध हुई। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोडाकोडी सागरप्रमाण उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्वाच्छेद होता है, क्योंकि मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके जिस जीवने अन्तर्मुहूर्तमें वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त कर लिया है उसके सम्यक्त्वको प्राप्त करनेके समयमें ही मिथ्यात्वकी अन्तर्मुहूर्तकम उक्त स्थिति सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमित हो जाती है और फिर इस स्थितिका संक्रम होने लगता है। तथापि यह संक्रम उदयावलिके उपरके निपेकोंका ही होता है। अतः सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम-अद्वाच्छेद अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोडाकोडी सागरप्रमाण है यह सिद्ध होता है। यतः यह स्थिति-संक्रमअद्वाच्छेद चारों गतियोंमें घटित हो जाता है अतः उसके कथनको ओघके समान जानना चाहिये। किन्तु कुछ मार्गणाएं इसकी अपवाद हैं। बात यह है कि पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकी उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त कम प्राप्त होती है, क्योंकि इन मार्गणाओंमें उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सम्भव नहीं है। अतः जो जीव उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके अन्तर्मुहूर्तके भीतर इन दो मार्गणाओंमें उत्पन्न होते हैं उन्हींके यह उत्कृष्ट स्थिति पाई जाती है। तथापि ऐसे जीव इनमें अन्तर्मुहूर्त बाद ही उत्पन्न होते हैं, अतः यहा ओघ उत्कृष्ट स्थितिको अन्तर्मुहूर्त कम कर देना चाहिये। यही कारण है कि इन दो मार्गणाओंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम-अद्वाच्छेद अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोडाकोडी [सागरप्रमाण और शेष पक्षीस प्रकृतियोंका अन्तर्मुहूर्त कम चालीस कोडाकोडी सागरप्रमाण बतलाया है। तथा अनन्तादिकमें अन्तः कोडाकोडी सागरप्रमाण ही उत्कृष्ट स्थिति होती है, अतः यहाँ सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद उक्तप्रमाण बतलाया है।

§ ६१४ अथ जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेदका कथन करनेके लिये आगेके सूत्रोंके सम्बन्धका अवलम्ब लेते हैं—

\* इससे आगे जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेदको बतलाते हैं।

§ ६१५ यह प्रतिज्ञा सूत्र है। इसमें जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेदके कथन करनेकी सूचना की गई है। यह सुगम है।

१. आ०प्रतौ -मवल्लेवो इति पाठ ।

३६



ॐ मिच्छत्त-सम्पामिच्छत्त-वारसकसाय-इत्थि-ण्यु सयवेवाथ जहयण  
ठिविसकमो पक्षिवोबमस्स असलेज्जविमागो ।

§ ६१६ इदो ! मिच्छत्त-सम्पामिच्छत्तान् दंसजमोहकत्तवणापरिमफ्फरीए  
अप्यताणुवंपीणं विसंजोयथापरिमफ्फालिसफमे अट्टकसायाण थ खयस्स तेसिं येव  
पच्छिमिद्धिदिसंजयपरिमफ्फालिसफमअठे इत्थि-अनुसयवेदाण पि परिमिद्धिदिसंजयमि  
सुत्तुत्तपमाणमहण्णमिद्धिसकमसमवोवसदीदो । एवमेदेसिं फम्माणं जहयणमिद्धिसकमदा-  
अंत्तं फक्खिय संपहि सम्मत्त-ओहसज्जणानं तण्णिण्णयविहाणमसुत्तसुत्तमाह—

ॐ सम्मत्त-ओहसज्जणायं जहयणमिद्धिसकमो एया ठिवी ।

§ ६१७ सम्मत्तस्स दंसजमोहकत्तवणाए समयाहियावसियमेत्तसेसे सोह  
सज्जणस्स वि सुत्तुत्तसंभ्राएयकत्तवणदाए समयाहियावसियासेसाए ओक्खुत्तसकम-  
वसेण पपददाअंत्तसंभो वत्तन्तो । सेसकम्माणं जहण्णमिद्धिदिसंजयमिद्धिसकमदा-  
सुत्तपर्वपो—

ॐ ओहसज्जणस्स जहयणमिद्धिसकमो वे मासा अंतोमसुत्तया ।

ॐ मिथ्यात्व, सम्पत्तिमिथ्यात्व, वारह कृपाय, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका अपन्य  
स्वितिसंक्रमणमद्वाराच्छेद पश्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ६१९ क्योंकि वरुणमोहकी अपन्यके कारणसे मिथ्यात्व और सम्पत्तिमिथ्यात्वकी  
अन्तिम पक्षिका पतन होते समय अनन्तलुबन्धियोंकी विसंपादनाकी अन्तिम पक्षिका संक्रम  
होत समय अपक बीतके आठ कृपावैकी अन्तिम स्वितिक्रमणकी अन्तिम पक्षिका संक्रम होते  
समय और स्त्रीवेद व नपुंसकवेदके अन्तिम स्वितिक्रमणके पतनके समय सूत्रमें कहे अनुसार  
अपन्य स्वितिसंक्रम पाया जाता है । कारण यह है कि अपनी अपनी अपन्यके समय जब इन  
कर्मोंके अन्तिम स्वितिक्रमणकी अन्तिम पक्षिका पतन होता है तब यह अपन्य स्वितिसंक्रम-  
मद्वाराच्छेद होता है । इस प्रकार इन कर्मोंके अपन्य स्वितिसंक्रममद्वाराच्छेदका कर्मन करके अब  
सम्पत्त्व और शोभ संज्ञानके इस अपन्य स्वितिसंक्रममद्वाराच्छेदका निर्णय करनेके लिये आनेका  
सूत्र करते हैं—

ॐ सम्पत्त्व और शोभ संज्ञानका अपन्य स्वितिसंक्रममद्वाराच्छेद एक स्विति-  
प्रमाण है ।

§ ६२०. क्योंकि वरुणमोहकी अपन्यमें एक समय अधिक एक आशक्तिप्रमाण काष्ठ शेष  
रहने पर सम्पत्त्वका और सूत्रसात्त्वय कर्मके अन्तमें एक समय अधिक एक आशक्तिप्रमाण  
काष्ठ शेष रहने पर शोभ संज्ञानका अपन्यकर्मसंक्रमके कारण प्रकृत मदाच्छेद सम्भव है यह  
करना चाहिये । अब शेष क्योंकि अपन्य स्वितिसंक्रममद्वाराच्छेदका निश्चय करनेके लिये आनेके  
सूत्रोंमें निर्देश करते हैं—

ॐ शोभसंज्ञानका अपन्य स्वितिसंक्रममद्वाराच्छेद अन्तर्गृह्य कर्म दो  
महीना है ।



१ ६२३ पदीए दिसाप णिरयादिगदीसु वि बहण्णद्धिदिअद्दापेदो अनुमग्गणिओ चि पुत्त होइ । एदेण सुधिइमादेसपरूवणमुधारणाणुसारेण वत्तस्सामो । त जहा— आदसेण णेरुत्तय० मिच्छ वारसक०-णवणोक द्विदिदिहचिभंगो । सम्म०-सम्मामि० अणताणु०४ ओभो । एवं पटमाए । विदियादि आव सचमा चि मिच्छच-वारसक णवणोकसायाणि द्विदिदिहसिमगो । सम्म०-सम्मामि०-अणताणु०४ बहण्णद्धिदिसक० अद्दा० पल्लिदो० असत्ते०भागो ।

१ ६२४ तिरिक्ख-पंथि तिरिक्खतिय०१ मिच्छच-वारसक वणणोक० अइ० द्विदिस अद्दा० सागरो सच-सच वचारि-सच० पल्लिदो असत्ते०भागपूणया । सम्म०-सम्मामि०-अणताणु ४ ओभमगो । पवरि ओणिणीसु सम्मच० सम्मामिच्छच

१ ६२३ इसी पद्धतिसे नरक आदि गरुडिमें सी अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा अथर्व विचार कर लय आदि यह इस सूत्र अ वात्सर्व है । अब इस सूत्र अथर्व सूत्र हुई आदेश प्रत्ययान्त के वचनारणके अनुसार बतलाव है । यह—आदेशकी अपेक्ष नरुडिमें मिथ्यात्व वाच्य कथाय और नौ नाकपायोद्य अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा स्थितिविभक्तिसे समान है । सम्यक्त्व सम्मामिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीवस्तुत्व अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा ओपके समान है । इसी प्रकार पक्षी पृथिवीमें जानना आदिसे । दूसरी पृथिवीसे लेकर सत्त्वों पृथिवी तकसे नरुडिमें मिथ्यात्व वाच्य कथाय और नौ नाकपायोद्य अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा स्थितिविभक्तिसे समान है । तथा सम्यक्त्व सम्मामिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीवस्तुत्व अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा पक्षके अर्थक्यातवें भागप्रमाण है ।

विशेषार्थ—सामान्यतः नरुडिमें और प्रथम नरुडके नरुडिमें सम्यक्त्वके रूपका सम्मामिथ्यात्वकी वृद्धिना और अनन्तानुबन्धीवस्तुत्वकी विसंबोधना सम्भव होनेके कारण वहाँ इन दोनों अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा ओपके समान बतलाया है । इसी प्रकार द्वितीयविशेष नरुडिमें सम्यक्त्व और सम्मामिथ्यात्वकी वृद्धिना होनेके कारण तथा अनन्तानुबन्धीवस्तुत्वकी विसंबोधना सम्भव होनेके कारण वहाँ इन अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा पक्षके अर्थक्यातवें भागप्रमाण बतलाया है । इसके सिवा सब नरुडिमें सेव कर्मोंका जहाँ जितना अथर्व स्थितिसंक्रमण सम्भव है वहाँ जितना संक्रम पाया जाता है, वतः सर्वत्र सेव प्रकृतिबोध अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा स्थितिविभक्तिसे समान बतलाया है । किन्तु वहाँ इतना विशेष जानना आदिसे कि जहाँ जितना अथर्व स्थितिसंक्रमण होगा वतसे यह अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा एक आश्चर्यमय कम ही होगा क्योंकि वा नित्येक वद्वयविकिसे भीतर प्रविष्ट हो जात है वन अ संक्रम नहीं होय है ।

१ ६२४ तिर्यक सामान्य और पंचमिथर्व तिर्यकत्रिचमें मिथ्यात्वका अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा एक सागरके सप्त भागोंमें से पक्ष अर्थक्यातवें भाग कम सप्त भागप्रमाण है । तथा वाच्य कथाय और नौ नाकपायोद्य अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा सागरके सप्त भागोंमें से पक्ष अर्थक्यातवें भाग कम वर भागप्रमाण है । सम्यक्त्व सम्मामिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीवस्तुत्व अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा आपके समान है । किन्तु इतनी विसयना है कि यानिती तिर्यकमें सम्यक्त्वका अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा सम्मामिथ्यात्वके अथर्व स्थितिसंक्रमणद्वारा

भंगो । पंचिदियतिरिक्खअपज्ज०—मणुसअपज्जत्तएसु जोणिणीभंगो । णवरि अणंताणु०—चउकं सह कसाएहि भाणियव्वं ।

§ ६२६. मणुसतिए ओघं । णवरि मणुसिणीसु पुरिसवेदस्स छण्णोकसाय-भंगो । देवेषु णारयभंगो । एवं भवण०—वाणवेंत० । णवरि सम्मत्त० जह० पलिदो० असंखे०भागो । जोदिसियाणं विदियपुढविभंगो । सोहम्मादि जाव णवगेवज्जा त्ति सो चेव भंगो । णवरि सम्मत्तस्स ओघं । अणुदिसादि जाव सव्वहे त्ति २३ पयडीणं जहण्णद्विदिसं०अद्वा० अंतोकोडाकोडी । सम्मत्ताणताणुवंधीणमोघभंगो । एवं जाव० ।

समान है । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोमें सब प्रकृतियोंका जघन्य स्थिति-सकमअद्वाच्छेद योनिनी तिर्यञ्चोंके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग कपायोंके साथ कहना चाहिये ।

**विशेषार्थ—**सामान्य तिर्यञ्चोंमें और पचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमे मिथ्यात्व, वारह कपाय और नौ नोकपायोंका जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद कहते समय एकेन्द्रियोंकी व जो एकेन्द्रिय पचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें उत्पन्न हुए हैं उनकी प्रधानता है । इस अपेक्षासे मूलमे उक्त प्रकृतियोंका जो जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद वतलाया है वह वन जाता है । अब रहीं सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्क ये छह प्रकृतिया सो इन मार्गणाओंमें सम्यक्त्वकी क्षपणा करनेवाला जीव भी उत्पन्न होता है और यहा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना व अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना भी सम्भव है, अतः इन छह प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद श्लोघके समान वतलाया है । किन्तु योनिनी तिर्यञ्चोंमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव मरकर नहीं उत्पन्न होते, अतः वहा सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद श्लोघके समान नहीं प्राप्त होता । किन्तु उद्वेलनाकी अपेक्षा जो जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद सम्भव है वह यहा प्राप्त होता है, अतः इस मार्गणामें सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य स्थिति-संक्रमअद्वाच्छेदके समान वतलाया है । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोमें सब व्यवस्था योनिनी तिर्यञ्चोंके समान वन जाती है, इसलिये इनके कथनको उनके समान कहा है । किन्तु इन दो मार्गणाओंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना नहीं होती, अतः यहा अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद श्लोघ कपायोंके समान प्राप्त होनेके कारण वैसा वतलाया है ।

§ ६२५ मनुष्यत्रिकमें सब प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद श्लोघके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें पुरुषवेदका जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद छह नोकपायोंके समान है । देवोंमें जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेदका भंग नारिकियोंके समान है । इसी प्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्व का जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । ज्योतिषी देवोंमें जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेदका भंग दूसरी पृथिवीके समान है । सौधर्म कल्पसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवोंमें वही भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहा सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेदका भंग श्लोघके समान है । अनुदिशासे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें तेईस प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेद अनन्तःकोडाकोडी सागरप्रमाण है । तथा सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धियोंके जघन्य स्थितिसंक्रमअद्वाच्छेदका भंग श्लोघके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिये ।

१ ६२६ सव्य जोसव्य-उकस्तापुदस्त-अहण्णाअहण्णद्धिसक० द्विदिविद्वि-  
मगो ।

१ ६२७ सादि-अणादि-भुव-अनुवापु० दुविहो गिरेसो—ओषेण आदेसेण य ।  
ओषेण मिच्छत्तस्त एक०-अणुद०-अहण्णद्धिसकमो किं सादिया ४ ? सादी अनुवो ।  
अद० अनादी ध्रुवो अदुभो वा । सोलसक-अणुदकसायाणसुद०-अणुद-अहण्णार्ण  
मिच्छत्तमंगो । अण० चत्तारि मंगा । सम्मत्त०-सम्मामि० उकस्तापुद०-अहण्णाअह०  
सकमा सादि-अनुवावा । आदेसेण सव्य सव्यत्य सादि-अनुवमेव ।

विश्वपार्य—ओषसे ओ सव प्रकृतियोंअ अण्य स्थितिसंक्रमभद्राच्छेद क्या है वह  
मनुष्यत्रिकर्म अविच्छद पर जाता है, इसकिये इनके कवनको ओषके समान क्या है । किन्तु  
मनुष्यनिर्बोमिं अह नोक्यायेके साथ ही पुसनेदकी कण्य होती है, अतः इनके पुसनेदका अण्य  
स्थितिसंक्रमभद्राच्छेद अह नोक्यायेके समान कठग्या है । नारिकेमेमिं सव प्रकृतियोंअ जो  
अण्य स्थितिसंक्रमभद्राच्छेद कठग्या है वह सामान्य वेधेमें तथा मन्ववासी और अन्तर वेधेमें  
अविच्छद पर जाता है, इसकिये इनके कवनको सामान्य नारिकेके समान कठग्या है । किन्तु  
मन्ववासी और अन्तर वेधेमें कृत्स्नवेदक सम्यगदधि बीच मर कर नहीं कत्यन होते, अतः वहाँ  
सम्यक्त्व प्रकृतिअ अण्य स्थितिसंक्रमभद्राच्छेद पदके अदकत्वात्वे मागप्रमाण कठग्या है ।  
सव प्रकृतियोंके अण्य स्थितिसंक्रमभद्राच्छेदकी अपवा वृत्ती प्रविधी और ओषेतिविधीके स्थिति  
एक सी है, अतः एतद्विपरक वेधेतिविधीके कवन वृत्ती प्रविधीके नारिकेके समान कठग्या  
है । यह अत्रत्या औषधे कस्यसे अेडर नो अवेयक एक बन जाती है, अतः वहाँ अण्य स्थिति-  
संक्रमका मंग मौ इसी प्रकार कठग्या है । किन्तु इतनी विशेष्य है कि इसमें कृत्स्न वेदक  
सम्यगदधि बीच भी मरकर कत्यन होते हैं, अतः वहाँ सम्यक्त्वअ अण्य स्थितिसंक्रमभद्राच्छेद  
ओषके समान कठग्या है । अनुविरप्रविधीमे अन्तःपुवन्धी और सम्यक्त्वके सिवा शेष सव  
कर्मोंकी अण्य स्थिति अन्तःपुवन्धी सागरप्रमाण पर्यं जाती है अतः वहाँ सम्यक्त्व और  
अन्तःपुवन्धीके सिवा शेष सव प्रकृतियोंके अण्य स्थितिसंक्रमभद्राच्छेद अन्तःपुवन्धीके सागर  
प्रमाण कठग्या है । तथा वहाँ कृत्स्नवेदक सम्यगदधि बीच मौ कत्यन होते हैं और अन्तःपु-  
वन्धीके विसयोक्त्य भी पर्यं जाती है अतः इनका अण्य स्थितिसंक्रम ओषके समान कठग्या  
है । इसी प्रकार अनाहरक मार्गाय एक यनायोग्य सव प्रकृतियोंके अण्य स्थितिसंक्रमभद्राच्छेद  
कटित कर कवन लेना चाहिये ।

१ ६२१ सर्वस्थितिसंक्रमभद्राच्छेद नोसर्वस्थितिसंक्रमभद्राच्छेद, कृत्स्न स्थितिसंक्रम  
भद्राच्छेद अनुकृष्ट स्थितिसंक्रमभद्राच्छेद अण्य स्थितिसंक्रमभद्राच्छेद और अण्य  
स्थितिसंक्रमभद्राच्छेद इत्यत्र कवन जैसा स्थितिविधिये किंवा है वैसा यहाँ करना चाहिये ।

१ ६२७ सादि, अनादि भुव अण्यनुगमकी अपेक्षा निर्देरा वा अण्यअ है—ओषनिर्देरा  
और आदेरानिर्देरा । ओषकी अपेक्षा मिच्छात्वका कृत्स्न, अनुकृष्ट और अण्य स्थितिसंक्रम  
का सादि है, क्या अनादि है, क्या भुव है वा क्या अण्य है ? सादि और अण्य है । अण्य  
स्थितिसंक्रम अनादि, भुव और अण्य है । सोदक कथाय और नो नोक्यायेके कृत्स्न, अनुकृष्ट  
और अण्यका मंग मिच्छात्वक समान है । अण्यके चार मंग हैं । सम्यक्त्व और सम्य-  
मिच्छात्वक कृत्स्न, अनुकृष्ट अण्य और अण्य स्थितिसंक्रम सादि और अण्य है । तथा  
आदेराकी अपेक्षा सव वह समी गति मार्गायोमिं सादि और अण्य है ।

❀ सामित्तं ।

§ ६२८. एतो सामित्ताणुगम कस्सामो ति पइज्जासुत्तमेदं सुगमं ।

❀ उक्कस्सट्टिदिसंक्रामयस्स सामित्तं जहा उक्कस्सिसयाए ढिदीए उदीरणा तथा ऐदब्बं ।

§ ६२९. संपहि एत्थुक्कस्सट्टिदिसंक्रमसामित्तं सुत्तसमप्पिदमुच्चारणावलेण वत्त-इस्सामो । तं जहा—सामित्तं दुविहं—जह० उक्क० च । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छत्त-सोलसक० उक्क०ट्टिदिसं० कस्स ? अण्णदर० मिच्छाइद्विस्स उक्कस्सट्टिदिं बंधिदूणावलिआदीदस्स । एवं णवणोकसाय० । णवरि कसा-युक्कस्सट्टिदिं पडिच्छियूणावलिआदीदस्स । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क०ट्टिदिसं० कस्स ?

विशेषार्थ—मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति-संक्रम कदाचित्क है । तथा जघन्य स्थितिसंक्रम क्षपणाके समय ही होता है, अतः इन प्रकृतियोंके ये तीनों स्थितिसंक्रम सादि और अध्रुव कहे हैं । किन्तु अजघन्य स्थितिसंक्रममें कुछ विशेषता है । वात यह है कि मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम प्राप्त होनेके पूर्वतक अजघन्य स्थितिसंक्रम रहता है, इसलिये तो वह अनादि है । तथा भज्यकी अपेक्षा अध्रुव और अभज्यकी अपेक्षा ध्रुव है । अब रहे सोलह कषाय और नौ नोकषाय सो इनमें से अनन्तानुबन्धी विसंयोजना प्रकृति होनेके कारण इसके अजघन्य स्थितिसंक्रमके सादि आदि चारों विकल्प बन जाते हैं । इसी प्रकार शेष इक्कीस प्रकृतियोंका उपशमश्रेणिमें संक्रमका अभाव हो कर अजघन्य स्थितिसंक्रम पुनः चालू होता है, अतः इनके अजघन्य स्थितिसंक्रमके भी सादि आदि चारों विकल्प बन जाते हैं । इस प्रकार मिथ्यात्व आदि २६ प्रकृतियोंका विचार हुआ । अब रही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये दो प्रकृतियाँ सो ये प्रकृतियाँ ही जब कि सादि और सान्त हैं तब इनके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम आदि चारों संक्रम सादि और सान्त हैं ऐसा होनेमें कोई आपत्ति नहीं है । नरक गति आदि चारों गतियों प्रत्येक जीवकी अपेक्षा सादि और अध्रुव हैं, इसलिए इनमें सब प्रकृतियोंके सादि और अध्रुव ये दो भंग ही बनते हैं यह स्पष्ट ही है ।

❀ अब स्वामित्वका अधिकार है ।

§ ६२८. इससे आगे स्वामित्वानुगमका विचार करते हैं । इस प्रकार यह प्रतिज्ञा सूत्र है जो सुगम है ।

❀ उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका स्वामित्व उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाके स्वामित्वके समान जानना चाहिए ।

§ ६२९ अब यहाँ जो सूत्रमें उत्कृष्ट स्थितिके संक्रमके स्वामित्वका संकेत किया है सो उसे उच्चारणाके बलसे बतलाते हैं । यथा—स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे मिथ्यात्व और सोलह कषायोंका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जिस मिथ्यादृष्टिको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किए एक आवलि हुआ है उसके होता है । इसी प्रकार नौ नोकषायोंका जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम किये जिसे एक आवलिकाल हो

अण्णद० सो पुम्बकेदगो सम्मच-सम्माभि०सतकम्मिओ मिच्छत्तुक्कसाद्धिदिं वचिपूणतो-  
मुदुचपडिममो द्विदिवादमक्कळण सम्मच पडिबण्णो तस्स विदियसमयसम्माइत्तिस्स ।  
एव चहुसु गदीमु । णवरि पंचिदियतिरि०अपज्ज०-मजुसअपज्ज० आअदात्ति जाव सम्भु  
पि द्विदिबिहचिमंगो । एवं जाव० ।

⊗ अहणायमेयजीवेण सामित्ता कायण्व ।

§ ६३० सुगम ।

⊗ मिच्छत्तस्स अहणायओ द्विदिसकमो कस्स ?

§ ६३१ सुगम ।

⊗ मिच्छत्त खवेमाण्यस्स अपच्चिमद्विदिसद्वपपरिमसमयसंक्रामयस्स  
तस्स अहणायपं ।

§ ६३२ मिच्छत्त खवेमाण्यस्से प्ति विसेसणेण तदुपसामणादिवाचारंतरेसु  
पयइस्स सामित्तामाओ पदुप्याइदो । अपच्चिमद्विदिसद्वपवयणेण तदण्णद्विदिसद्वपडिसओ  
कओ । चरिमसमयसंक्रामयविसेसणेण बुचरिमादिसमयसंक्रामयस्स सामित्तसर्पओ  
पडिसिद्धो । सेस सुगमं ।

गया है उसके यह नौ नौकरायोंका बट्टस स्थितिसंक्रम होता है । सम्पत्त्व और सम्पत्तिप्यत्त्वका  
बट्टस स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जो जीव पूर्वमें बेवक होकर सम्पत्त्व और सम्पत्तिप्यत्त्वका  
संक्रमणवाला है और इसके बाद जिसे मिच्छत्त्वकी बट्टस स्थितिका बन्ध करके बड़ासे निवृत्त रूप  
अनुसृष्ट करके गया है वह जीव स्थितिपात किन्ने विना बहि सम्पत्त्वको प्राप्त होता है तो उस  
सम्पत्तिके दूसरे समयमें वह बट्टस स्थितिसंक्रम होता है । इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना  
चाहिये । निम्न इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यक अथवात्त, मनुष्य अथवात्त और आनत अथवात्त  
केकर सर्वांसिद्धिरुके वेदोंमें सब प्रकृतियोंकी बट्टस स्थितिके संक्रमका स्वामित्व स्थिति-  
विमर्शके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गव्य एक ज्ञानता चाहिये ।

⊗ अथ एक जीवकी अपेक्षा अपन्य स्वामित्वका कथन करना चाहिये ।

§ ६३ पर सूत्र सुगम है ।

⊗ मिच्छत्त्वका अपन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ।

§ ६३१ पर सूत्र सुगम है ।

⊗ जो मिच्छत्त्वकी अण्णा करनेवाला जीव अन्तिम स्थितिकण्डके अन्तिम  
समयमें उसके संक्रम कर रहा है उसके मिच्छत्त्वका अपन्य स्थितिसंक्रम होता है ।

§ ६३२ जो जीव मिच्छत्त्वके उपरममा आदि दूसरे व्यापारोंमें लगा है उसके मरत  
स्वामित्व नहीं होता है वह कठकातेके लिए सूत्रमें 'मिच्छत्तं खवेमाण्यस्स पर चिया है । अपच्चिम  
द्विदिवादय' बचन द्वारा इसके सिवा शेष स्थितिकण्डकोकर प्रतिषेध किया है । तथा 'चरिमसमय-  
संक्रमसव' इत विशेषण द्वारा भी जीव अन्तिम स्थितिकण्डके संक्रमके विचरम आदि समर्थोंमें  
नियमन है इसके स्वामित्वका निषेध किया है । शेष कथन सुगम है ।

❀ सम्मत्तस्स जहणणट्टिदिसंकमो कस्स ?

§ ६३३. सुगमं ।

❀ समयाहियावलियअक्खीणदंसणमोहणीयस्स ।

§ ६३४. समयाहियावलियाए अक्खीणदंसणमोहणीयं जस्स सो समयाहियावलिय-  
अक्खीणदंसणमोहणीओ । तस्स पयदजहणणसामित्तं होइ त्ति सुत्तत्थसंबंधो । सेसं सुगमं ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स जहणणट्टिदिसंकमो कस्स ?

§ ६३५. पुच्छासुत्तमेदं सुगमं ।

❀ अपच्छिमट्टिदिव्खंडयं चरिमसमयसंबुहमाणयस्स तस्स जहणणयं ।

§ ६३६. एदस्स सुत्तस्स वक्खाणे कीरमाणे जहा मिच्छत्तजहणणट्टिदिसं-  
सामित्तसुत्तस्स वक्खाणं कय तथा कायव्वं, दंसणमोहक्खवणाचरिमफालीए सामित्त-  
विहाणं पडि तत्तो एदस्स विसेसाणुवलंभादो ।

❀ अणंताणुबंधीणं जहणणट्टिदिसंकमो कस्स ?

§ ६३७. सुगमं ।

❀ विसंजोएंतस्स तेसिं चव अपच्छिमट्टिदिव्खंडयं चरिमसमय-  
संकामयस्स ।

\* सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ?

§ ६३३. यह सूत्र सुगम है ।

\* जिसके दर्शनमोहनीयका क्षय होनेमें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष है उसके सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रम होता है ।

§ ६३४ जिसके दर्शनमोहनीयका क्षय होनेमें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष है वह समयाधिकआवलिअक्षीणदर्शनमोहनीय है । उसके प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है यह इस सूत्रका तात्पर्य है । शेष कथन सुगम है ।

\* सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ?

§ ६३५ यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

\* जो अन्तिम स्थितिकाण्डकका उसके अन्तिम समयमें संक्रम कर रहा है उसके सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम होता है ।

§ ६३६. इस सूत्रका व्याख्यान करनेपर जिस प्रकार मिथ्यात्वके जघन्य स्थितिसंक्रमके स्वामित्वविषयक सूत्रका व्याख्यान किया है उसी प्रकार करना चाहिये, क्योंकि वहाँ जो दर्शन-  
मोहनीयकी क्षणकी अपेक्षा अन्तिम फालिका पतन होते समय जघन्य स्वामित्वका विधान किया है इसकी अपेक्षा उससे इसमें कोई विशेषता नहीं पाई जाती ।

§ \* अनन्तानुबन्धियोंका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ।

§ ६३७ यह सूत्र सुगम है ।

\* जो विसंयोजना करनेवाला जीव अनन्तानुबन्धियोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकका अन्तिम समयमें संक्रम कर रहा है उसके अनन्तानुबन्धियोंका जघन्य स्थितिसंक्रम होता है ।



§ ६३८ अण्ठाणुब्रह्मविसर्जोपपाप पयद्दस्त चरिमद्विदित्त्वयचरिमद्विदित्त्वयसकमयस्त पयद्वद्वहण्यसामिच होइ चि सुचत्यो । सेसं सुगमं ।

⊗ अहण्यं कृतायार्णं अहण्यद्विदित्संक्रमो कस्त ?

§ ६३९. सुगमं ।

⊗ अथयस्त तेसिं येव अपच्छिमद्विदित्संक्रमं चरिमसमयसंभुह माययस्त अहण्यं ।

§ ६४० अथयस्त येव तेसिं अहण्यसामिच होइ चि सुचत्यसकमो । सो च

कदमाय अथस्याय सामिचो होइ चि पुच्छिद् तदुरेसबाणावप्यद्विमं उच—तेसिं येव' इवादि । तेसिं येव अहकृतायानमपच्छिमे चरिमे द्विदित्त्वय बहूमापो विदित्त्वय-अहण्यद्विदित्संक्रमसामिचो होइ । तस्य वि चरिमसमयसपुहमाणो येव, हेहा पयोग-मितेगेण सह दुपरिमादिस्त्रीणमुबलमेण अहण्यमावाणुप्यतीदो । तदो अतोसुदुप-मेचतदुकीरणगागतणेण सामिचविहाण सुसबद्विमिदि ।

⊗ कोहसंजलायस्त अहण्यद्विदित्संक्रमो कस्त ?

§ ६४१ सुगमं ।

⊗ अथयस्त कोहसजलायस्त अपच्छिमद्विदित्संक्रमं चरिमसमयसंभुह माययस्त तस्त अहण्यं ।

§ ६३८. अन्तःसुब्रह्मविसर्जोपपाप पयद्दस्त चरिमद्विदित्त्वयचरिमद्विदित्त्वयसकमयस्त पयद्वद्वहण्यसामिच होइ चि सुचत्यो । सेसं सुगमं ।

⊗ आठ कपायोका अपन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ?

§ ६३९. यह सूत्र सुगम है ।

⊗ जो अपक बीज सन्धिके अन्तिम स्थितिकण्डकका अन्तिम समयमें संक्रम कर रहा है उसके आठ कपायोका अपन्य स्थितिसंक्रम होता है ।

§ ६४०. अपक बीजके ही वन प्रद्विदित्संक्रम अपन्य स्थामित होइ चि सुचत्यसकमो । सो च कदमाय अथस्याय सामिचो होइ चि पुच्छिद् तदुरेसबाणावप्यद्विमं उच—तेसिं येव' इवादि । तेसिं येव अहकृतायानमपच्छिमे चरिमे द्विदित्त्वय बहूमापो विदित्त्वय-अहण्यद्विदित्संक्रमसामिचो होइ । तस्य वि चरिमसमयसपुहमाणो येव, हेहा पयोग-मितेगेण सह दुपरिमादिस्त्रीणमुबलमेण अहण्यमावाणुप्यतीदो । तदो अतोसुदुप-मेचतदुकीरणगागतणेण सामिचविहाण सुसबद्विमिदि ।

⊗ कोषसंन्यसनका अपन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ?

§ ६४१. यह सूत्र सुगम है ।

⊗ जो अपक बीज कोषसंन्यसनके अन्तिम स्थितिकण्डकका अन्तिम समयमें संक्रम कर रहा है उसके कोषसंन्यसनका अपन्य स्थितिसंक्रम होता है ।

§ ६४२. खवयस्से त्ति वयणेणोवसामयादीणं पडिसेहो कओ । तत्थ वि अणियट्टिखवयस्सेव, अण्णत्थ तज्जहण्णभावाणुववत्तीदो । होंतो वि सोदएणेव सेट्ठि-मारूढस्स होइ । माणादीणमुदएण चट्ठिदस्स कोहसंजलणचरिमफालीए अंतोमुहुत्तूणवेमास-सरूवेणाणुवलंभादो । कुदो एवं ? तत्थ तदो हेट्ठिमसंखेज्जगुणट्टिदिवंधविसए चेव तण्णिण्लेवणुवलंभादो । सोदएण वि चट्ठिदस्स अपच्छिमट्टिदिवंधसंक्रामणदाए चेव सामित्तसंभवो, दुचरिमादिट्टिदिवंधाणमेत्तो विसेसाहियाणं संक्रामणावत्थाए जहण्ण-सामित्तविरोहादो । तत्थ वि चरिमसमयसंखुहमाणयस्सेव पयदजहण्णसामित्त णेदरत्थ । कि कारणं हेट्ठिमहेट्ठिमफालीणमणंतराणंतरोवरिमफालीहितो एगेणणिसेगवुट्ठिदसणेण तत्थ जहण्णसामित्तविहाणाणुववत्तीदो । कुदो वुण समाणट्टिदिवंधविसयाणमेदासिं फालीणमेवं विसरिसभावो चे ? ण, दुचरिमादिसमयपवद्धचरिमफालीणं हेट्ठिमहेट्ठिम-समएसु चेव परिच्छिण्णावाहाणं संवंधेण तहाभावसिद्धीदो । तदो चरिमसमयणवक-बंधचरिमफालिविसए चेव जहण्णसामित्तमिदि णिरवज्जं । एवं ताव सोदएणेव चट्ठिदस्स खवयस्स कोधवेदगद्धाचरिमसमयणवकबंधमावलि्यादीदं संक्रामेमाणयस्स समयूणा-

§ ६४२. 'खवयस्स' इस वचन द्वारा उपशामक आदिका निषेध किया है । उसमें भा अनिष्टचित्तपकके ही यह जघन्य स्वामित्व होता है, क्योंकि अन्यत्र प्रकृत जघन्य स्वामित्व नहीं प्राप्त हो सकता । अनिष्टचित्तपकके प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता हुआ भी स्वोदयसे जो क्षपकश्रेणि पर चढ़ता है उसीके होता है, क्योंकि मान आदिके उदयसे जो क्षपकश्रेणि पर चढ़ता है उसके क्रोधसंज्वलनकी अन्तिम फालि अन्तर्मुहूर्त कम दो महीनाप्रमाण नहीं पाई जाती है ।

शंका—ऐसा क्यों है ?

समाधान—क्योंकि वहा पर उससे नीचे संख्यातगुरो स्थितिवन्धके रहते हुए ही संज्वलन क्रोधका अभाव उपलब्ध होता है ।

स्वोदयसे चढ़े हुए जीवके भी अन्तिम स्थितिवन्धका सक्रम होते समय ही प्रकृत स्वामित्व सम्भव है, क्योंकि द्विचरम आदि स्थितिवन्ध इससे विशेष अधिक होते हैं, अतः उनका संक्रम होते समय जघन्य स्वामित्व होनेमें विरोध आता है । उसमें भी जो अन्तिम समयमें संक्रम कर रहा है उसीके प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है अन्यके नहीं, क्योंकि इससे नीचे नीचेकी जितनी भी फालिया हैं उनमें आगे आगेकी फालियोंसे एक एक निषेधकी वृद्धि देखी जानेके कारण वहा जघन्य स्वामित्वका विधान नहीं बन सकता है ।

शंका—जबकि इन फालियोंका स्थितिवन्ध समान होता है तब इनमें इस प्रकारकी चिह्नतशता कैसे होती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि नीचे नीचेके समयोंमें ही जिनकी आवाधा समाप्त होती है ऐसी द्विचरम आदि समयप्रवद्ध सम्बन्धी अन्तिम फालियोंके सम्बन्धसे इस प्रकारकी विसहशता सिद्ध हो जाती है ।

इसलिये अन्तिम समयके नवकवन्धकी अन्तिम फालिके आश्रयसे ही जघन्य स्वामित्व होता है यह युक्तियुक्त है । इस प्रकार जो क्षपक स्वोदय से ही क्षपकश्रेणि पर चढ़कर क्रोधवेदकके कालके अन्तिम समयमें नवकवन्ध करके एक आवलिके वाद उसका सक्रम करने लगा है और

बलिभ्यमेवप्रक्षीयो गालिय चरमफालिं सकामये वाचदस्त कीहसजलपस्त अहण्णजं  
द्विदिसकमो होइ ति । एवं पिद्धारिय संपदि सेसदोसजलणायं पुरिसवेदस्त च एसे  
चेव मंगो ति समप्यणं हणमाणो सुत्तसुत्तरं मण्ण—

⊙ एवं माय-मायासजलण-पुरिसवेवायं ।

§ ६४३ एवेसिं च कम्माममेवं चेव अहण्णसामिचं दायव्व, सोत्तपण च्चिदिसस  
खयसस अणियद्विहण्णे सगसगवेदगदाचरिमसमयअवकवचचरिमफालिसकमावरबाण  
अहण्णद्विदिसकमसमभं पदि विसेसामावादो । अवरि माणसंजलणस्त अंतोसुहृत्तण  
मासपरिमाणाय अवरकवचचरिमफालीय मायासंजलणस्त वि अतोसुहृत्तपरिणीणइमास  
मेचीय अवरकवचचरिमफालीय पुरिसवेदस्त य तद्दणहृत्तमेवअवरकवचचरिमफालिसिचिसप  
अहण्णसामिचमिदि एतो विसेसलेसो आणियव्वो ।

⊙ सोहसंजलणस्त अहण्णद्विदिसकमो कस्त ?

§ ६४४ सुगममेद पुण्णसुत्तरं ।

⊙ आपत्तियसमयाहियसकसापस्त जपयस्त ।

किर जो एक समय कम एक आपत्तिप्रमाण च्चिदियोको गल्लअर अन्तिम च्चिदिस संकम कर  
रहा है उसक कोइसंतंजलण अथव्य स्थितिसंक्रम होला है । इस प्रकार कोपसंजलणके  
अथव्यस्थितिसंक्रमक निर्वय करके अथ होय दो संजलण और पुरुषवेदअ अथव्य  
स्थितिसंक्रमविषयक स्वामित्व इसी प्रकार होय है इस बातअ समर्थन करनेके लिये आगेअ  
सुच करते हैं—

⊙ इसी प्रकार मानसंजलण, मायासंजलण और पुरुषवेदके अथव्य स्थितिसंक्रमक  
स्वामित्व जानना चाहिये ।

§ ६४३. इन कर्मोंअ भी इसी प्रकार अथव्य स्थितिव्य हेतु चाहिये, क्योंकि सोइरवसे  
अपकमेसिपर चड़े हुए अपक बीअके अमिहृत्तियकरय गुणस्थानमें अपने अपने वेदककामके अन्तिम  
समयमें प्राप्त हुए अवरकअथवी अन्तिम च्चिदिस संकमालस्वाके प्राप्त होने पर इन कर्मोंअ अथव्य  
स्थितिसंक्रम होय है, इसलिये संजलणकोअके अथव्य स्थितिसंक्रमके स्वामित्वके अथवसे इअके  
स्वामित्वके अथवमें कोई विशेषण नहीं है । किन्तु इतनी विशेषण है कि मानसंजलणअ  
अन्तर्मुहूर्त कम एक महीनाप्रमाण अवरकअथवी अन्तिम च्चिदिसके प्राप्त होने पर मायासंजलणअ भी  
अन्तर्मुहूर्त कम आठ महीनाप्रमाण अवरकअथवी अन्तिम च्चिदिसके प्राप्त होने पर और पुरुषवेदअ  
अन्तर्मुहूर्त कम आठ वर्षप्रमाण अवरकअथवी अन्तिम च्चिदिसके प्राप्त होने पर अथव्य स्वामित्व प्राप्त  
होय है एसा अर्थ विशेष अन्विष्टाव जानना चाहिये ।

⊙ सोमसंजलणका अथव्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ?

§ ६४४ अह पण्णसुत्तरं सुगम है ।

⊙ जिस अपक बीअके सकसापमाअमें एक समय अधिक एक आपत्ति कस्त होय  
है उसके सोमसंजलणका अथव्य स्थितिसंक्रम होता है ।

§ ६४५. आवलिया समयाहिया जस्स सकसायस्स सो आवलियसमयाहियसकसाओ । तस्स पयदजहण्णसामित्तं दडुच्चं । सकसायवयणेणेत्य सुहुमसांपराइओ विचविखओ; सेसाणं समयाहियावलियविसेसणाणुववत्तीए । सो चेव खवयत्तेण विसेसिज्जे, अखवयस्स पयदजहण्णसामित्तविरोहादो ।

✽ इत्थिवेदस्स जहण्णद्विदिसंकमो कस्स ?

§ ६४६. सुगमं ।

✽ इत्थिवेदोदयक्खवयस्स तस्स अपच्छिमद्विदिव्खंडयं संखुहमाणयस्स तस्स जहण्णयं ।

§ ६४७. एत्थित्थिवेदोदयक्खवयस्से त्ति वयणं सेसवेदोदयक्खवयपडिसेहफलं । णिरत्थयमिदं विसेसणं, अण्णवेदोदएण वि चट्ठिदस्स खवयस्स जहण्णद्विदिसंकमाविरोहादो । ण च सोदय-परोदएहि चट्ठिदाणं खवयाणमित्थिवेदचरिमद्विदिव्खंडयम्मि विसरिसभावो अत्थि, णवुंसयवेदस्सेव तदणुवलंभादो । तम्हा अण्णदरवेदोदइल्लस्स खवयस्से त्ति सामित्तणिहेसो कायव्वो त्ति । एत्थ परिहारो—सच्चमेदमुदाहरणमेत्तं तु इत्थिवेदोदय-क्खवयावलंघणं णेदं तंतमिदि घेत्तव्वं । परोदएणेव सामित्तं कायव्वं, सोदएण पढमद्विदीए

§ ६४५ जिस सकपाय जीवके एक समय अधिक एक आवालि काल शेष है वह आवलि-समयाधिकसकपाय जीव है । उसके प्रकृत जघन्य स्वामित्व जानना चाहिये । इस सूत्रमें 'सकसाय' इस वचन द्वारा सूक्ष्मसाम्परायिक जीव लिया गया है, क्योंकि शेष जीवोंके 'जिनके एक समय अधिक एक आवालि काल शेष है' यह विशेषण नहीं बन सकता । उसमें भी वह जीव क्षपक ही होता है यह बतलानेके लिये क्षपक यह विशेषण दिया है, क्योंकि अक्षपक जीवके प्रकृत जघन्य स्वामित्वके होनेमें विरोध आता है ।

✽ स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ।

§ ६४६ यह सूत्र सुगम है ।

✽ जो स्त्रीवेदके उदयवाला क्षपक जीव स्त्रीवेदके अन्तिम स्थितिकाण्डकका संक्रम कर रहा है उसके स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम होता है ।

§ ६४७ शेष वेदके उदयवाले क्षपक जीवका निषेध करनेके लिये यहा सूत्रमें 'इत्थिवेदोदय-क्खवयस्स' वचन दिया है ।

शंका—'इत्थिवेदोदयरवयस्स' विशेषण निरर्थक है, क्योंकि अन्य वेदके उदयसे चढ़े हुए क्षपक जीवके भी जघन्य स्थितिसंक्रमके होनेमें कोई विरोध नहीं आता है । स्वोदय या परोदय किसी भी प्रकारसे चढ़े हुए क्षपक जीवोंके स्त्रीवेदके अन्तिम स्थितिखण्डमें किसी प्रकारकी विसदृशता नहीं होती, क्योंकि जिस प्रकार स्वोदय और परोदयसे चढ़े हुए जीवके नपुंसकवेदके अन्तिम स्थितिकाण्डकमें विसदृशता होती है उस प्रकार यहाँ विसदृशता नहीं पाई जाती, इसलिये प्रकृतमें स्त्रीवेदके उदयवाले क्षपक जीवके ऐसा निर्देश न करके 'किसी भी वेदके उदयवाले क्षपक जीवके' इसप्रकार स्वामित्वका निर्देश करना चाहिये ?

समाधान—यहाँ स्त्रीवेदके उदयवाले क्षपकका अवलम्ब लिया गया है सो यह उदाहरण-मात्र है, सिद्धान्त नहीं है यह बात सत्य है ऐसा यहा ग्रहण करना चाहिये ।

भोऋष्यासकममवाशो अहृण्यमावाणुवचोदो चि ये ? ण, सकमपाओमापहमद्विदि  
 गालिय आबलियपविद्वपन्मद्विदियस्स अहृण्यसामिचिहाणेण तहोसपरिहसो । पदमद्विदीप  
 सकमामावे वि अद्विदियहुगो होइ चि पार्सकणिजं, एर्य अद्विदिविबन्हाए अमावाशो,  
 गिसयद्विदीए षव पाहणियादो । तन्हा सोदएण वा परोदएण वा पयदसामिचमबिऊरं  
 सिद्ध ।

○ णसु सयवेदस्स जहृण्यद्विदिसकमो कस्स ?

§ ६४८ सुगमं ।

○ णसु सयवेदोपयक्खवपस्स तस्स अपञ्चिमद्विदिसकयं सलुह  
 माणपस्स तस्स जहृण्यपं ।

§ ६४९ एत्थ णसुसयवेदोदपखवपस्सेव पयदअहृण्यसामिचं होइ ति अण्ण-  
 ओगवण्णदएण ससवेदादयक्खवपाण सामिचसर्बपदिसेहो कायन्वो । किमद्व तप्पदिसेहो  
 क्खेरेद ? ण, एत्थ णसुसयवेदस्स पुण्णमेव अठासुहुचमरिप चि धीयमाणस्स परिमद्विदि

संज्ञा—यहाँ परादयसे ही स्वामित्व प्राप्त करना चाहिय क्योंकि स्वोदयसे प्रथम स्थितिअ  
 अपरार्पणसंक्रम सम्पन्न हानसे यहाँ अपन्यपना नहीं बन सकता है ।

समाधान—मही, क्योंकि संक्रमके अन्त्य प्रथम स्थितिअे गला कर जिसके प्रथम स्थिति  
 आचलिके भीतर प्रविष्ट हो गई है उसके अपन्य स्वामित्ववा विधान करनेसे कुछ दोषअ परिहार  
 हो जाता है ।

शब्दा—प्रथम स्थितिअे संक्रमका अन्त्य हो जाने पर भी अस्तित्वअि बहुत होती है, इसलिये  
 स्वादयसे पहले हुए जीवके अपन्य स्वामित्व मही बन सकता है ।

समाधान—यही आशीर्ष करता ठीक मही है, क्योंकि यहाँ पर अस्तित्वअि निवृत्त  
 नहीं थी गई है । किन्तु निवेदमितिअि ही प्रधानता है इसलिये स्वोदय या परोदय किसी प्रकार भी  
 पहले हुए जीवके प्रकृत स्वामित्वके प्राप्त होनेमें बाध नही आता है यह कथ सिद्ध है ।

○ नपुमकपेदक अपन्य स्थितिअंक्रम किसके होता है ।

§ ६४८ पर सूत्र सुगम है ।

○ दो नपुमकपेदके उदयवात्ता अपक जीव अन्तिम स्थितिअण्णककक सम्क्रम  
 कर रहा है उसक नपुमकपेदका अपन्य स्थितिअंक्रम हाता है ?

एत- यहाँ नपुमकपेदक उदयवाते करक जीवक ही प्रकृत अपन्य स्वामित्व हाता है  
 इस प्रकार अन्त्यभागअ्यवपदेदहाय अत्र क्योंकि उदयवाते अपक जीवके प्रकृत स्वामित्वअ विपन्न  
 करना चाहिये ।

संज्ञा—किम जिये यहाँ अन्त्य करक उदयवाते अपक जीवके प्रकृत अपन्य स्वामित्वअ  
 निवृत्त करना है ।

समाधान—मही, क्योंकि अन्त्य करक उदयसे अन्त्यअति पर पहले हुए जीवक नपुमकपेद

खंडयस्स सोदयक्खवयस्स चरिमद्विदिसंखंडयामादो असंखेज्जगुणत्तदंसणादो । तदो सोदएणेव णवुंसयवेदस्स जहण्णसामित्तमिदि सिद्धं ।

❀ छरणोकसायाणं जहण्णद्विदिसंक्रमो कस्स ?

§ ६५०. सुगमं ।

❀ खवयस्स तेसिमपच्छिमद्विदिसंखंडयं संछुहमाणयस्स तस्स जहण्णयं ।

§ ६५१. एत्थ खवयस्से त्ति वयणमक्खवयवुदासदुवारेणाणियद्विखवयस्स जहण्ण-सामित्तपदुप्पायणफलं, अण्णत्थ तज्जहण्णभावाणुवलद्धीदो । तेसिं छण्णोकसायाणमपच्छिमं सञ्चपच्छिमं द्विदिसंखंडयं संछुहमाणयस्स संकामेमाणयस्स पयदजहण्णसामित्तं होइ । एत्थ चरिमफालिविसेसणं ण कयं, चरिमद्विदिसंखंडयचरिमफालीसु चैव सामित्तविहाणे विप्पडिसेहाभावादो ।

§ ६५२. एवमोघेण जहण्णसामित्तं सञ्वासिं मोहपयडीणं परूविदं । एत्तो ओघादेसपरूवणदुमुच्चारणावलंबणं कस्सामो । तं जहा—जह० पयदं । दुविहो णिहेसो—ओघेण आदसेण य । ओघेण मिच्छ० जह० द्विदिसं० कस्स ? अण्णद० दसणमोहक्खवयस्स चरिमद्विदिसंखंडयचरिमसमयसंक्रामयस्स । एवं सम्मामि० । सम्म० जह० द्विदिसं०

का अन्तिम स्थितिकाण्डक अन्तर्मुहूर्त पहले ही क्षय हो जाता है, इसलिये वह स्वोदयसे चढ़े हुए क्षपक जीवके अन्तिम स्थितिकाण्डकके आयामसे असंख्यातगुणा देखा जाता है । अतः स्वोदयसे ही नपु सक्वेदका जघन्य स्वामित्त प्राप्त होता है यद्दुवात् सिद्ध हुई ।

\* छह नोकपायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ?

§ ६५०. यह सूत्र सुगम है ।

\* जो क्षपक उनके अन्तिम स्थितिकाण्डकका संक्रम कर रहा है उसके छह नोकपायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम होता है ।

§ ६५१. यहाँ सूत्रमें 'खवयस्स' वचन अक्षपकके निराकरण द्वारा अनिवृत्तिक्षपकके जघन्य स्वामित्तका कथन करनेके लिये दिया है, क्योंकि अन्यत्र उसका जघन्य स्वामित्त नहीं उपलब्ध होता । इन छह नोकपायोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकका 'संछुहमाणयस्स' अर्थात् संक्रम करनेवाले जीवके प्रकृत जघन्य स्वामित्त होता है । यद्वा सूत्रमें 'चरिमफालि' विशेषण नहीं दिया है तो भी अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालियोंके प्राप्त होने पर ही जघन्य स्वामित्तका विधान करनेमें कोई विरोध नहीं है ।

§ ६५२ इस प्रकार ओघसे सब मोहप्रकृतियोंके जघन्य स्वामित्तका कथन किया । अब आगे ओघ और आदेशका कथन करनेके लिये उच्चारणाका अवलम्ब लेते हैं । यथा—जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे मिध्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जो दर्शनमोहका क्षपक जीव अन्तिम स्थितिकाण्डकका अन्तिम समयमें संक्रम कर रहा है उसके होता है । इसी प्रकार सम्यग्मिध्यात्वके जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामित्त जानना चाहिये । सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जिसे दर्शनमोहकी क्षपणा

कस्त ? अण्णद समयाहियावस्त्रियअसत्तोपदसपमोहणीयस्त । अण्णताणु०४ सह०  
 द्विदिस० कस्त ? अण्णद० अण्णताणु०४ विसंजोपमाणस्त चरिमद्विदिसद्वय चरिमसमय  
 सक्कमेतस्त । अण्णक० सह० कस्त ? अण्णद० खवयस्त चरिमे द्विदिसद्वय चरिमसमय-  
 संक्कमेतस्त । इत्थि०-अणुसु०-अण्णोक्क० जह० द्विदिसंक्का० कस्त ? अण्णद० खवयस्त  
 चरिमे द्विदिसद्वय बहुमानयस्त । पवरि अणुसु० सह० ण्तुंसयकेदीदयकखवयस्त ।  
 एवेण०ण्णदं अहा इरियवेदस्त परोदण वि सामिचमपिक्खमिदि । कोष-माण-माया-  
 संक्कल०-पुरिसवेद० जह० द्विदिसं० कस्त ? अण्णद० खवयस्त चरिमद्विदिसंवे चरिम  
 समयसक्कमेतस्त । पवरि अण्णपणो वेद-कसायस्त सेदिमास्सस्त । सोहसंन० सह०  
 द्विदिसं कस्त ? अण्णद० खवयस्त समयाहियावस्त्रियचरिमसमयसक्कसायस्त ।

१६५३ आदेशेण पेरुय० मिच्छ०-वारसक०-भय-दुगुठ० जह० द्विदिसं०  
 कस्त ? अण्णदरस्त असण्णपण्ययवस्त इवसमुप्पचियदुसमयाहियावस्त्रियसत्तववण्णयस्त ।  
 सत्तणोक्क० द्विदिमिहचिमगो, पडिवकखवघग्गागाल्लेण अंतोदुदुचुपुववण्णयस्त  
 सामिचविहारणं पडि मेदाभावाद्दो । पवरि सयर्षघपरंभाद्दो आबस्त्रियचरिमसमय सामिच-

करनेमें एक समय अधिक एक आवृत्ति करके लेते हैं ऐसे अन्वयतर जीवके होता है । अतस्तुत्यान्वी  
 चतुष्कला अण्णय स्थितिसंक्रम किरके होता है ? अन्वयताणुवन्वीचतुष्कली विसंजोपमा करनेवाला  
 जो जीव अन्वय स्थितिसंक्रमके अन्वय समयमें संक्रम कर रहा है उसके होता है । आठ  
 कलाओंका अण्णय स्थितिसंक्रम किरके होता है ? जो करके जीव इनके अन्वय स्थितिसंक्रमका  
 अन्वय समयमें संक्रम कर रहा है उसके होता है । अन्वय नपु सकवेद और अह मोक्षयोंका  
 अण्णय स्थितिसंक्रम किरके होता है । जो अण्णतर अण्ण जीव अन्वय स्थितिसंक्रममें निरुमाव  
 है उसके होता है । किन्तु इतनी विवेचना है कि नपु सकवेदका अण्णय स्थितिसंक्रम नपु सकवेदके  
 अण्णयसे अण्ण जीवके ही होता है । इससे ज्ञात होता है कि अन्वयका अण्णय स्वामित्व पदेवचसे  
 प्राप्त होनेमें भी कोई विरोध नहीं आता है । अन्वयसंक्रमण, मानसंक्रमण मायासंक्रमण और पुष्प-  
 वेदका अण्णय स्थितिसंक्रम किरके होता है ! जो अण्णतर अण्ण जीव अन्वय स्थितिसंक्रमका  
 अन्वय समयमें संक्रम कर रहा है उसके होता है । किन्तु इतनी विवेचना है कि वेद और अण्णयोंमें  
 से स्वोत्पत्तसे अण्णयपर चड़े हुए जीवके यह अण्णय स्वामित्व होता है । अन्वय संक्रमणका अण्णय  
 स्थितिसंक्रम किरके होता है ? जो अण्णतर अण्ण जीव एक समय अधिक एक आवृत्ति करके  
 अन्वय समयमें सकसायणवसे स्थित है उसके होता है ।

१६५३ आदेशसे भारकिर्योमें मिच्छास्व, वाय कपाय, भय और तुणुन्ताका अण्णय  
 स्थितिसंक्रम किरके होता है ? इतसमुत्पत्तिक मिच्छाको करके जो अण्णतर जीव अंतर्जी पर्वयसे  
 काकर मरकमें उत्पन्न हुआ है उसके ही समय अधिक एक आवृत्ति करके होने पर अह प्रवृत्तिवोंका  
 अण्णय स्थितिसंक्रम होता है । अह मोक्षयोंके अण्णय स्थितिसंक्रमका स्वामित्व स्थितिरिमिकके  
 समान है क्योंकि मरकमें उत्पन्न होनेके बाद प्रवृत्त प्रवृत्तिवोंके अण्णयकाके गल्लनेमें जो अण्णतुदुर्त  
 काक स्यादा है अन्वी स्थिति विवचित मोक्षवावोंकी और व.म हो जाती है और तब काकर जनक  
 अण्णय स्थितिसंक्रम प्राप्त होता है । इनका अण्णय स्थितिसंक्रम भी अण्णतुदुर्त काह ही प्राप्त होता है  
 इस अण्णयसे इन दोनोंके अण्णय स्वामित्वके अण्णयमें कोई भेद नहीं है । किन्तु इतनी विवेचना है  
 कि तिस प्रवृत्तिक अण्णय स्वामित्व प्राप्त करना हो अण्णय का मारण्य हो अण्णके अण्ण एक

मेत्थ दद्व्वं । समत्त-अणंताणु०४ ओघभंगो । सम्मामि० उव्वेन्नलमाणस्स चरिम-  
 द्विदिखंडए चरिमसमयसंक्रमे० । एवं पढमाए । विदियादि जाव छट्टि त्ति मिच्छ०-  
 वारसक०-णवणोक० द्विदिविहत्तिभंगो । सम्मत्त०-सम्मामि०-अणंताणु०४ जह० द्विदिसं०  
 क्रस्स ? अण्णद० उव्वेन्नलमाणस्स विसंजोएंतस्स च चरिमे द्विदिखंडए चरिमसमयसंक्रा० ।  
 सत्तमाए मिच्छत्त०-वारसक०-भय-दुगुंछ० जह० द्विदिविहत्तिभंगो । णवरि संतकम्मं  
 वोलेऊणावलियादीदस्स भय-दुगुंछाणं दोआवलियादीदस्स । सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०४  
 विदियपुढविभंगो । सत्तणोकसायाणं द्विदिविहत्तिभंगो, संतसमाणवंधादो अंतोमुहुत्तादीदस्स  
 पडिवक्खवंघराद्वागालणेण सामिचं पडि तत्तो भेदाभावादो । णवरि सगवंधावलियचरिम-  
 समए सामिचं गहेयव्वं ।

§ ६५४. तिरिक्खेसु मिच्छ०-वारसक०-भय-दुगुंछ० ठिदिविहत्तिभंगो । णवरि  
 संतकम्मं वोलेऊणावलियादीदस्स भय-दुगुंछाणं दोआवलियादीदस्स । सम्मत्त०-सम्मामि०-  
 अणताणु०४ णारयभंगो । सत्तणोक० द्विदिविहत्तिभंगो । णवरि सण्णिपचिंदियतिरिक्ख-  
 आवलिके अन्तिम समयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व जानना चाहिये । सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धी-  
 चतुष्कके जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामी ओघके समान है । जो सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेजना करने-  
 वाला जीव अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें संक्रम कर रहा है उसके सम्यग्मिथ्यात्वका  
 जघन्य स्थितिसंक्रम होता है । इसी प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिये । दूसरीसे लेकर छठी  
 पृथिवीतकके नारकियोंमें मिथ्यात्व, वारह कषाय और नौ नोकषायोंके जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामी  
 स्थितिभिक्तिके समान है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य  
 स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करनेवाला और  
 अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करनेवाला जीव अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें  
 संक्रम कर रहा है उसके होता है । सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्व, वारह कषाय, भय और जुगुप्साके  
 जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामी स्थितिभिक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि जिसे  
 सत्कर्मके समान स्थितिवन्ध होनेके बाद एक आवलि काल हुआ है उसके मिथ्यात्व और  
 वारह कषायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम होता है तथा भय और जुगुप्साका सत्कर्मके समान स्थितिवन्ध  
 होनेके बाद दो आवलि काल व्यतीत हुआ है उसके भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिसंक्रम  
 होता है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामी  
 दूसरी पृथिवीके समान है । तथा सात नोकषायोंके जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामी स्थितिभिक्तिके  
 समान है, क्योंकि सत्कर्मके समान बन्धके द्वारा जिसने अन्तर्मुहूर्त काल विता दिया है उसके  
 प्रतिपत्त प्रकृतियोंके बन्धक कालको गलानेकी अपेक्षा स्वामित्वके प्रति उससे इसमें कोई भेद नहीं  
 है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी वन्धावलिके अन्तिम समयमें यह जघन्य स्वामित्व ग्रहण  
 करना चाहिये ।

§ ६५४. तिर्यञ्चोमें मिथ्यात्व, वारह कषाय, भय और जुगुप्साके स्थितिसंक्रमका जघन्य  
 स्वामी स्थितिभिक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सत्कर्मके समान स्थितिवन्ध होनेके  
 बाद एक आवलि होने पर मिथ्यात्व और वारह कषायोंका तथा सत्कर्मके समान स्थितिवन्ध होनेके  
 बाद दो आवलि काल जाने पर भय और जुगुप्साका प्रकृत जघन्य स्वामित्व कहना चाहिये । सम्यक्त्व,  
 सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामी नारकीके समान है ।  
 सात नोकषायोंके जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामी स्थितिभिक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता



पञ्चतन्त्रस्यैव सम्बन्धस्तद्विषयस्यैव गालिय सगणधपागमादो आवलियपरिम-  
समए सामितं वचनम् ।

१६५६. पंचिदियतिरिक्त ३ मिच्छ०-वारसक -मय-दुगु० सह० द्विदिस०  
कस्त ! अण्द मादरेइदियपञ्चायदस्त इदसमुपचितयआवस्त्रियठवण्णन्त्तपस्त ।  
सम्मच०-सम्मामि०-अण्ताणु०४ पारयमंगो । सचभो० सह० द्विदिस० कस्त !  
अण्द० इदसमुपचितयमादरेइदियपञ्चायदस्त अंतोमुदुत्तवण्णन्त्तपस्त अण्पणो  
कसायं बंधिपूजाबलियादीदस्त । जोगिणीसु सम्म० सम्मामि०-मंगो । पचि०तिरिक्त-  
अपञ्च-मणुसअपञ्च जोगिणीमंगो । पचरि अण्ताणु०४ मिच्छ०-मंगो ।

१६५६ मणुस३ ओषं । अचरि मणुसिणीसु पुरिसधेद० अण्णोकसायमंगो ।

१६५७ देवार्ण पारयमंगो । एव मवज०-वाय । पचरि सम्म० सम्मामि०-  
मंगो । जोदिसि० विदियपुदविमंगो । सोइम्मादि आव पवगेवला चि द्विदिभिइपिमंगो ।  
अचरि सम्म -सम्मामि -अण्ताणु०४ पारयमंगो । अणुदिसादि जाव सव्वहा चि

हे कि इन्ही पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तधर्मों इत्यत्र कथके और प्रतिपन्न प्रकृतियोंके सर्वोत्कृष्ट अणुकाज-  
को गण्य कर विवक्षित नोक्यायको अण्वत्त्व प्राप्त कराने । फिर जब एक व्यावृत्ति अण्व हो जाय तब  
इसके अन्तिम समयमें प्रकृत स्वामित्व अन्तर्गत्त जायिये ।

१६५८. पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकर्मों मिच्छात्त्व, वाह्य कथाय, मय और कुमुप्ताय अण्व-  
स्वित्तिरिक्तम कितने होता है ? जो इहसमुत्पत्तिक्रियाको करनेके साथ बादर पंचेन्द्रिय पर्याप्तसे  
आकर पर्याप्त इत्यादि इसके बाह्य अण्वत्त्व होय पर एक व्यावृत्ति अण्वके अन्तमें अणु प्रकृतियोंका  
अण्व स्वित्तिरिक्तम होय है । सम्यक्त्व सम्बन्धिप्यात्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्पके अण्व  
स्वित्तिरिक्तम स्वामी नारकियोंके समान है । साथ नोक्यायको अण्व स्वित्तिरिक्तम कितने  
होय है ? इहसमुत्पत्तिक्रियाको करनेके साथ बादर पंचेन्द्रिय पर्याप्तसे आकर पर्याप्त इत्यादि  
हय जिस अण्वत्त्व अण्वको एक अण्वत्त्वत्तु होय हो गय है इसके अन्तर्गत विवक्षित  
नोक्यायको अण्व होनेके बाद एक व्यावृत्ति अण्वके अन्तमें साथ नोक्यायको अण्व स्वित्तिरिक्तम  
होय है । योनिनी तिर्यञ्चोंमें सम्यक्त्व अण्व सम्बन्धिप्यात्त्वके समान है । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च  
अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तधर्मों साथ प्रकृतियोंके अण्व स्वित्तिरिक्तम स्वामी योनिनी तिर्यञ्चोंके  
समान है । किन्तु इहानी विशेष्य है कि इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्पके अण्व मिच्छात्त्वके समान है ।

१६५९. मनुष्यत्रिकर्मों साथ प्रकृतियोंके अण्व स्वित्तिरिक्तम स्वामी अण्वके समान है ।  
किन्तु इहानी विशेष्य है कि मनुष्यत्रिकर्मों प्रकृतिके अण्व अण्व नोक्यायकोके समान है ।

१६६०. देवोंमें साथ प्रकृतियोंके अण्व स्वित्तिरिक्तम स्वामी नारकियोंके समान है ।  
इसी प्रकार मयनवादी और अन्तर देवोंके जानना चाहिये । किन्तु इहानी विशेष्य है कि बाह्य  
सम्यक्त्व अण्व सम्बन्धिप्यात्त्वके समान है । अन्तिपिधर्मों साथ प्रकृतियोंके अण्व स्वित्तिरिक्तम  
स्वामी इहानी इन्द्रियोंके समान है । अण्वत्त्व अण्वके अण्व नोक्यायकोके देवोंमें साथ प्रकृतियोंका  
अण्व स्वित्तिरिक्तमके समान है । किन्तु इहानी विशेष्य है कि सम्यक्त्व, सम्बन्धिप्यात्त्व और  
अनन्तानुबन्धीचतुष्पके अण्व व्यावृत्तियोंके समान है । अण्वत्त्व अण्वके अण्व सर्वोत्कृष्ट अण्वके देवोंमें  
साथ प्रकृतियोंका अण्व स्वित्तिरिक्तमके समान है । किन्तु इहानी विशेष्य है कि इनमें सम्यक्त्व

द्विदिविहत्तिभंगो । णवरि सम्म०-अणंताणु०४ णारयभंगो । एवं जाव० ।

एवं जहण्णयं सामित्तं समत्तं ।

❀ एयजीवेण कालो ।

§ ६५८. एत्तो एयजीवविसेसिदो कालो परुवणिज्जो । सो वुण दुविहो—  
जहण्णओ उक्कस्सओ च । तत्थुक्कस्सओ ताव उक्कस्सद्विदिउदीरणाकालादो ण भिज्जदि त्ति  
तदप्पणाकरणद्वमुवरिमसुत्तविण्णासो—

❀ जहा उक्कस्सिया द्विदिउदीरणा तथा उक्कस्सओ द्विदिसंकमो ।

§ ६५९. सुगममेदमप्पणासुत्तं । संपहि एदिस्से अप्पणाए फुडीकरणद्वमुच्चारणं  
वत्तइस्सामो । तं जहा—तत्थ दुविहो णिहेसो—ओघेणादेसेण य । ओघेण मिच्छ०-  
सोलसक०-णवणोक० उक्क० द्विदिसंका० केव० ? जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं ।  
चदुणोक० आवलिया । अणुक० जह० अंतोमु०, णवणोक० एयसमओ, उक्क० अणंत-  
कालमसंखेज्जोग्गलपरियट्ठं । सम्म०-सम्मामि० उक्क० द्विदिसंका० जहण्णु० एयसमओ ।  
अणु० जह० अंतोमु०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि ।

और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग नारकियोंके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक  
जानना चाहिये ।

इस प्रकार जघन्य स्वामित्व समाप्त हुआ ।

\* अब एक जीवकी अपेक्षा कालका अधिकार है ।

§ ६५८ अब इससे आगे एक जीवकी अपेक्षा कालका कथन करना चाहिये । वह दो  
प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उनमें उत्कृष्ट कालका उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाके कालसे कोई  
भेद नहीं है, इसलिये उसकी प्रमुखतासे कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

\* जिस प्रकार उत्कृष्ट स्थिति उदीरणा होती है उसी प्रकार उत्कृष्ट स्थिति-  
संक्रम है ।

§ ६५९ यह अर्पणासूत्र सुगम है । अब इस अर्पणाका स्पष्टीकरण करनेके लिये उच्चारणाको  
बतलाते हैं । यथा—निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे मिथ्यात्व,  
सोलह कपाय और नौ नोकपायोंके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रामकका कितना काल है ? जघन्य काल एक  
समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । किन्तु चार नोकपायोंका उत्कृष्ट काल एक भावलि है ।  
मिथ्यात्व और सोलह कपायोंके अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और नौ  
नोकपायोंका जघन्य काल एक समय है । तथा सभीका उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात  
पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रामकका जघन्य और  
उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल  
साधिक दो छयासठ सागर है ।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व और सोलह कपायोंकी बन्धसे और नौ नोकपायोंकी संक्रमसे उत्कृष्ट  
स्थिति प्राप्त होती है । यतः उत्कृष्ट स्थितिके बन्धका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल  
अन्तर्मुहूर्त है अतः इन सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट

१६६० आवेसेन जेरुयं सोलसक०-पचणोक्त०-चतुषोक्त० उक्त० द्विदिस  
 नह एयसमभो, उक्त० अतेस्तु० आबलिया। अमु० जह० एयस०, उक्त० तेतीस  
 सागरोबमाभि। सम्म०-सम्माभि० उक्त० द्विदिसका० चहृणु० एयसमभो। अणुक्त०

काञ्च अन्तमुहूर्तं कथय्या है। किन्तु क्षीणैः, पुत्रयुवैः हास्य और रतिभ्य इत्युक्त स्थितिके कथ्ये  
 समय कथ्य न होकर इत्युक्त स्थितिकथ्यके एक जानके बाद ही इनका कथ्य होय है इसलिये इनमें  
 एक आबलियमाय इत्युक्त स्थितिक ही संक्रम देखा जाता है अतः इनके इत्युक्त स्थितिसंक्रमकथ्य  
 इत्युक्त काञ्च अन्तमुहूर्तं न प्राप्त होकर एक आबलियमाय प्राप्त होय है। इसीसे इनकी इत्युक्त स्थितिके  
 संक्रमकथ्य इत्युक्त काञ्च एक आबलियमाय कथय्या है। मिथ्यात्व और सोम्य कथायोंके अनुत्कृत  
 स्थितिकथ्यका अर्थ अन्तमुहूर्तं है। इसीसे यहाँ इनकी अनुत्कृत स्थितिके संक्रमकथ्य अर्थ  
 काञ्च अन्तमुहूर्तं कथय्या है। कौन्धावि कथायोंका एक एक समयके अन्तरसे इत्युक्त स्थितिकथ्यका  
 होना सम्भव है और जब कौन्धादि कथयोंका इस अन्तरसे कथ्य होता है तब तो नोकथायोंका  
 अनुत्कृत स्थितिसंक्रम एक समयके लिये बन जाता है। इसीसे इनकी अनुत्कृत स्थितिके  
 संक्रमकथ्य अर्थ काञ्च एक समय कथय्या है। तथा इन सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृत स्थितिके  
 संक्रमकथ्य को इत्युक्त काञ्च अर्थात्प्राप्त पुत्रगणपरिवर्तनप्रमाय कथय्या है सो वह एकेन्द्रियोंकी  
 अन्तसे जान लेना चाहिये क्योंकि जब कौन्धा हीन इत्थे काञ्च एक एकेन्द्रिय पर्वानर्धे रहता है तब  
 वसके इत्थे काञ्च एक न तो इत्युक्त स्थितिकथ्य पाया जाता है और न ही इत्युक्त स्थितिसंक्रमा ही  
 सम्भव है। अतः इन सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृत स्थितिके संक्रमकथ्य इत्युक्त काञ्च अर्थात्प्राप्त  
 पुत्रगणपरिवर्तनप्रमाय काञ्च है। जो बीच मिथ्यात्वकी इत्युक्त स्थितिकथ्य करके अन्तमुहूर्तमें  
 वेदकथ्यकाञ्चको प्राप्त होय है वसके सम्बन्धको ग्रहण करनेके प्रथम समयमें सम्बन्ध और  
 सम्बन्धिमिथ्यात्वकी इत्युक्त स्थिति होकर दूसरे समयमें एक समय एक इस इत्युक्त स्थितिक संक्रम  
 होय है। इसीसे यहाँ सम्बन्ध और सम्बन्धिमिथ्यात्वकी इत्युक्त स्थितिके संक्रमकथ्य अर्थ और  
 इत्युक्त काञ्च एक समय कथय्या है। जो बीच सम्बन्ध और सम्बन्धिमिथ्यात्वकी सथाको प्राप्त करके  
 अन्तमुहूर्तमें इनकी कथा कर देय है वसके इनकी अनुत्कृत स्थितिके संक्रमकथ्य अर्थ काञ्च  
 अन्तमुहूर्तं पाया जाता है। तथा जो बीच सम्बन्ध और सम्बन्धिमिथ्यात्वके इत्युक्तकाञ्चके अन्तिय  
 समयमें सम्बन्धको प्राप्त होता है और अर्थात्प्राप्त सागर काञ्च एक सम्बन्धके साथ रह कर पुनः  
 मिथ्यात्वमें आकर वस दोनों प्रकृतियोंकी श्रेष्ठय्य करने लगय है। तथा अपनी अपनी इत्युक्तकाञ्चके  
 अन्तिय समयमें सम्बन्धको प्राप्त करके पुनः अर्थात्प्राप्त सागर काञ्च एक सम्बन्धके साथ रहय है।  
 फिर अन्तमें मिथ्यात्वमें आकर वस दोनों प्रकृतियोंकी वस कथा है वसके इनकी अनुत्कृत  
 स्थितिके संक्रमकथ्य इत्युक्त काञ्च साधिक दो अर्थात्प्राप्त सागर पाय्य जाता है। इसीसे यहाँ इनकी  
 इत्युक्त स्थितिके संक्रमकथ्य अर्थ और इत्युक्त काञ्च एक समय तथा अनुत्कृत स्थितिके संक्रमकथ्य  
 अर्थ काञ्च एक अन्तमुहूर्त और इत्युक्त काञ्च साधिक दो अर्थात्प्राप्त सागर कथय्या है।

१६६० आवेसेने नारकियोमें मिथ्यात्व सोम्य कथाम, पाँच पोकथय और चार  
 नोरकायोकी इत्युक्त स्थितिके संक्रमकथ्य अर्थ काञ्च एक समय तथा चार नोकथायोंके सिद्ध सेयम  
 इत्युक्त काञ्च अन्तमुहूर्तं और चार नोकथायोंका इत्युक्त काञ्च एक आबलि है। तथा इन सबकी अनुत्कृत  
 स्थितिके संक्रमकथ्य अर्थ काञ्च एक समय है और इत्युक्त काञ्च तेतीस सागर है। सम्बन्ध  
 और सम्बन्धिमिथ्यात्वकी इत्युक्त स्थितिके संक्रमकथ्य अर्थ और इत्युक्त काञ्च एक समय है, तथा  
 अनुत्कृत स्थितिके संक्रमकथ्य अर्थ काञ्च एक समय है और इत्युक्त काञ्च तेतीस सागर है। इसी

जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० । एवं सच्चणेरह्य०-पंचि०तिरिक्खे३-  
मणुस०३-देवा जाव सहस्सार त्ति । णवरि सच्चेसिमणुक० जह० एयसमओ,  
उक्क० सगाड्ढिदी ।

§ ६६१. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० उक्क० द्विदिसंका० जह०  
एयस०, उक्क० अंतोमु० आवलिया । अणु० जह० एयस०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्ज-  
पोगलपरियट्टं । सम्म०-सम्मामि० उक्क० द्विदिसंका० जहण्णु० एयस० । अणुक०  
जह० एयसमओ, उक्क० तिण्णि० पल्लिदो० सादिरेयाणि । पंचि०तिरि०अपज्ज० मिच्छ०-  
सोलसक०-णवणोक० उक्क० द्विदिसं० जहण्णु० एयसमओ । अणु० जह० खुदाभव०

प्रकार सब नारकी, पचेन्द्रिय तिर्यचत्रिक, मनुष्यत्रिक, सामान्य देव और सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इन सभीमें अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है ।

विशेषार्थ—यहाँ और सब काल तो जिस प्रकार ओषरूपणामें घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार जान लेना चाहिये । किन्तु सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकके उत्कृष्ट कालमें और कुछ प्रकृतियोंके जघन्य कालमें कुछ विशेषता है । वात यह है कि जिस मार्गणाकी जितनी कायस्थिति सम्भव है वहाँ उतने काल तक सभी प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थिति और उसके संक्रामकका पाया जाना सम्भव है, अतः सर्वत्र अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण कहा है । जिस मार्गणामें भवस्थिति और कायस्थितिमें अन्तर नहीं है वहाँ भवस्थितिको ही कायस्थिति जानना चाहिये । और जिस मार्गणामें इनमें अन्तर है वहाँ कायस्थिति लेनी चाहिये । अब जघन्य कालका खुलासा करते हैं । वात यह है कि जिस जीवने भवके उगन्त्य समयमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम करके अन्तिम समयमें एक समयके लिये मिथ्यात्व और सोलह कपायोंका अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रम किया और दूसरे समयमें मरकर अन्य गतिको प्राप्त हो गया उसके उक्त प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय पाया जाता है । इसी प्रकार जिसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रममें एक समय शेष रहने पर जो विवक्षित गतिको प्राप्त हुआ है उसके उस गतिमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है । इसीसे इन मार्गणाओंमें उक्त प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय बतलाया है ।

§ ६६१ तिर्यचोमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय और नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार नोकपायोंके सिवा शेष सबका अन्तर्मुहूर्त है तथा चार नोकपायोंका एक आवलिप्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्यप्रमाण है । पचेन्द्रियतिर्यच अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय और नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका जघन्य

समयपूर्व, तत्र अंतोष्ठं । सम्मत्-सम्मामि० तत्र० द्विदिसं० अहण्णु० एयसमओ ।  
अणु० अह० एयसमओ, तत्र० अंतोष्ठु० । एवं मणुसअपत्तपसु ।

§ ६६२ आपदादि जाव उवरिमगेवत्ता चि मिच्छ०-भारसक०-गवभोक० तत्र०  
द्विदिसं अहण्णु० एयसमओ । अणु० अह० अहण्णद्विदी समयूणा, तत्र० सगद्विदी ।  
स०-सम्मामि०-अणताणु०४ तत्र० द्विदिसं० अहण्णुत्त० एयस० । अणुक० अ०  
एयस०, तत्र० सगद्विदी । अणुदिसादि सम्बद्धा चि एवं चैव । अवरि सम्मामि०  
मिच्छत्तमगो । अणताणु०४ तत्र० द्विदिसं० अहण्णु एयसमओ । अणुक० अह०  
अंतोष्ठु०, तत्र० सगद्विदी । एव जाव० ।

एवमुक्त्वास्तस्मात्सायुगमो समयो ।

⊗ पचो जाहण्णद्विदिसकम्मकाळो ।

§ ६६३ एचो तस्सद्विदिसकम्मकाळविहासणादो अणतरमवसरपचो अहण्णद्विदि  
संक्रमकालो विहासियन्वो चि प्पजावयणमेद ।

काळ एक समय कम कुत्तामवप्रवपमाया हे और वत्तुत्त काळ अन्तर्मुहूर्त हे । सम्मत्त्व और  
सम्भगिमिप्यात्वकी वत्तुत्त स्थितिके संक्रमकाल अणन्व और वत्तुत्त काळ एक समय हे । तथा  
अनुत्तुत्त स्थितिके संक्रमकाल अणन्व काळ एक समय हे और वत्तुत्त काळ अन्तर्मुहूर्त हे । इसी  
प्रकार मनुष्य अवर्षासत्रोंमें जावन्य चाहिये ।

§ ६६४ अन्तःस्थितिके संक्रमकाले अणन्व वेदोमि मिप्यात्व अहण्ण कयाव और  
ओ मोङ्गायोकी वत्तुत्त स्थितिके संक्रमकाल अणन्व और वत्तुत्त काळ एक समय हे । अनुत्तुत्त  
स्थितिके संक्रमकाल अणन्व काळ एक समय कम अणन्व स्थितिप्रमाया हे और वत्तुत्त काळ अपनी  
वत्तुत्त स्थितिप्रमाया हे । सम्मत्त्व सम्भगिमिप्यात्व और अन्तःस्थितिके संक्रमकाल अणन्व और  
संक्रमकाल अणन्व और वत्तुत्त काळ एक समय हे । तथा अनुत्तुत्त स्थितिके संक्रमकाल अणन्व  
काळ एक समय हे और वत्तुत्त काळ अपनी अपनी वत्तुत्त स्थितिप्रमाया हे । अनुत्तराव संक्रम  
सर्वावसिद्धि तत्रक वेदोमि इसी प्रकार हे । किन्तु इसनी विवेचय हे कि वहाँ सम्भगिमिप्यात्वका  
भाग मिप्यात्वके समान हे । अन्तःस्थितिके संक्रमकाल अणन्व और वत्तुत्त काळ एक समय हे । तथा अनुत्तुत्त  
स्थितिके संक्रमकाल अणन्व काळ अन्तर्मुहूर्त हे और  
वत्तुत्त काळ अपनी वत्तुत्त स्थितिप्रमाया हे । इसी प्रकार अनाहारक मार्गण्य तत्र अन्तःस्थितिके  
विशेषार्थ—पूर्वमें अणन्व और अणन्व गतिमें अणन्व स्थितिप्रमाया कर अणन्व हैं । वसे अणन्वमें  
रत्तुत्त और अणन्व अणन्व स्वामिरावो जावत्तुत्त तियअणन्व गति चाहिये अणन्व स्थितिप्रमाया कर अणन्व  
चाहिये । तास विवेचय न होनसे यहाँ अणन्वसे स्थितिप्रमाया नहीं किया है ।

इस प्रकार वत्तुत्त काळमुगम समाप्त हुआ ।

⊙ अब आग अणन्व स्थितिसंक्रमके काळका अणन्व है ।

§ ६६५ अब इस वत्तुत्त स्थितिसंक्रमके काळका अणन्व अणन्व करनके बाद अणन्व अणन्व  
अणन्व स्थितिसंक्रमके काळका अणन्व अणन्व करन चाहिये इस प्रकार यह प्रतिशारणन हे ।

१ या प्रती लभइया तत्र द्विदिसंओ [ अणन्व ] [ अणन्व ] [ अणन्व ] इति वाच ।

❀ अट्टावीसाए पयडीणं जहणणद्विदिसंकमकालो केवचिरं कालादो होदि ? जहणणुक्कस्सेण एयसमओ ।

§ ६६४. अट्टावीससंखाए परिच्छिण्णाणं मोहपयडीणं जहणणद्विदिसंकमकालो एयजीवविसओ कियचिरं होइ त्ति आसंकिय तण्णिदेसो कओ—जहण्णु० एयसमओ त्ति । होउ णाम जेसिं कम्माण जहणणद्विदिसंकमस्स चरिमफालिविसए समयाहियावलियाए च सामित्तं तेसिं जहण्णुक्कस्सेणेयसमयकालणियमो, णं सेसाणमिच्चासंकाए तत्थतणविसेस-संभवपदुप्पायणद्वमिदमाह—

❀ एवरि इत्थि-एणु सयवेद-छरणोकसायाणं जहणणद्विदिसंकमकालो केवचिरं कालादो होदि ? जहणणुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ६६५. एदेसिमद्वुहं णोकसायाणं चरिमद्विदिसंकमकालो लद्धजहणणसामित्ताणं जहणणद्विदिसंकमजहणणुक्कस्सकालो अंतोमुहुत्तपमाणो होइ त्ति सुत्तत्थसंगहो । छण्णोक्कसायाणं ताव जहणणुक्कस्सकालो एयवियप्पो<sup>१</sup> चैव, चरिमद्विदिसंकमद्वयुक्कीरणद्वापडिचद्वणिच्चियप्पतोमुहुत्तपमाणत्तादो । णवुंसयवेदस्स पढमद्विदिविचक्खाए आवलियमेत्तो । तदाविवक्खराए चरिमद्विदिसंकमद्वयुक्कीरणद्वामेत्तो जहणणुक्कस्सकालो<sup>२</sup> होइ ।

\* अट्टाईस प्रकृतियोंके जघन्य स्थितिसंक्रमका काल कितना है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ ६६७ यहाँ मोहनीयकी अट्टाईस प्रकृतियोंके जघन्य स्थितिसंक्रमका एक जीवकी अपेक्षा कितना काल है ऐसी आशका करके उसका निर्देश जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है इस रूपसे किया है । जिन कर्मोंके जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामित्व अन्तिम फालिके पतनके समय या एक समय अधिक एक आवलि कालके शेष रहने पर प्राप्त होता है उनके जघन्य और उत्कृष्ट कालका नियम एक समयप्रमाण भले ही रहा आओ किन्तु शेष कर्मोंकी जघन्य स्थितिके संक्रमके कालका यह नियम नहीं प्राप्त होता इस प्रकार इस आशकाके होने पर यहाँ जो विशेष काल सम्भव है उसका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

\* किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और छह नोकषायोंके जघन्य स्थितिसंक्रमका काल कितना है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ६६४. अन्तिम स्थितिकाण्डकके समय जघन्य स्वामित्वको प्राप्त होनेवाली इन आठ नोकषायोंके जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है यह इस सूत्रका तात्पर्य है । उनमेंसे छह नोकषायोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक ही प्रकारका है, क्योंकि इनके अन्तिम स्थितिकाण्डकके उत्कीरणाकालसे सम्बन्ध रखनेवाला अन्तर्मुहूर्त एक ही प्रकारका है । नपुंसकवेदका जघन्य और उत्कृष्ट काल प्रथम स्थितिकी अपेक्षा एक आवलिप्रमाण है और उसकी विवक्षा नहीं करनेपर अन्तिम स्थितिकाण्डकके उत्कीरणाकालप्रमाण है । स्त्रीवेदका

१ अ०प्रतौ एयवियप्पा इति पाठ ।

२ आ०प्रतौ -युक्कीरणद्वापडिचद्वणिच्चियप्पतो जहणणुक्कस्सकालो इति पाठ ।

इत्थिषेदस्स सोदएण चदिदस्स णसो येव भगो । परोदएण वि चदिदस्स छण्णोकत्ताप-  
मगो वि । एवमोषेण सत्त्वकम्माण अहण्णद्धिदिसंक्रमकम्मलो सुचाणुसारण परूविदो ।  
एदण सच्चिदमअहण्णद्धिदिसंक्रमकम्मलमणुवण्णइस्सामो—मिच्छ० अत्र० द्विदिसं० अणादिओ  
अपञ्चवसिदो अणादिओ सपञ्चवसिदो वा । सम्म०-सम्माणि० अत्र० अह० अतोसु०,  
उच्च० वेडावद्धिसागरो० वीहि पलिदो० असखे०मागेहि सादिरेयापि । सोलसक०-  
पवणोक्क० अत्र० तिण्णि मगा । तत्प ओ सो सादिओ सपञ्चवसिदो अह० अतोसुइत्त,  
उच्च० अद्दपोगालपरिमहं देवणं ।

एवमोपपरूवणा समया ।

स्वोदयसे चहे हुए जीवकी अपेक्षा यही मज्ज है । तथा परोदयसे चहे हुए जीवकी अपेक्षा भी वह  
नोकयापेकि समान मज्ज है । इस प्रकार ओपसे सब कर्मोंके अन्वय स्थितिसंक्रामकका काळ सूत्रके  
अनुसार क्या । अब इससे सूचित होनेवाले अत्रपण्य स्थितिसंक्रामकका काळ बतलाने हैं—  
मिच्छात्वके अत्रपण्य स्थितिसंक्रामकका अन्वय अनादि-अनन्त या अनादि-साम्त है । सम्यक्त्व  
और सम्यग्मिच्छात्वके अत्रपण्य स्थितिसंक्रामकका अन्वय अन्न अन्तमुहूर्त है और अल्लस काळ  
पस्यके तीन अंतप्यात्वके भागोंसे अधिक हो क्षयासठ सागरपमाय है । सोलस कपाय और नौ  
नाकयापेकि अत्रपण्य स्थितिसंक्रामके तीन मज्ज हैं । उनमेंसे जो सादि-साम्त मज्ज है वसकी अपेक्षा  
अत्रपण्य काळ अन्तमुहूर्त है और अल्लस काळ कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाय है ।

विशेषार्थ—यहाँ माहनीयकी अहर्हरस प्रकृतियोंके अत्रपण्य और अत्रपण्य स्थितिसंक्रामक  
अत्रपण्य और अल्लस काळ बतलाया गया है । इन अहर्हरस प्रकृतियोंमेंसे मिच्छात्व, सम्यग्मिच्छात्व  
अनन्तानुबन्धे अनुष्ण और मय्यकी आठ कपाय व चौदह प्रकृतियाँ ऐसी हैं जिनका अत्रपण्य स्थिति-  
संक्रम अन्तिम स्थितिकाण्डरूपकी अन्तिम पक्षिके पतनके समय प्राप्त होता है । ओषसंत्वान्न  
मामसंत्वान्न मावाऽन्नान्न और पुण्यवद् ये चार प्रकृतियाँ ऐसी हैं जिनका अत्रपण्य स्थितिसंक्रम  
अन्तिम स्थितिकाण्डरूपके संक्रमक अन्तिम समयमें प्राप्त होता है और सम्यक्त्व तथा संमत्त्वान्न ओम वे  
वा प्रकृतियाँ ऐसी हैं जिनका अत्रपण्य स्थितिसंक्रम इनकी अत्रपण्यमें एक समय अपि एक आत्मि  
काळ संव २५ने पर प्राप्त होता है । यह सब प्रकारसे विचार करने पर इन प्रकृतियोंके अत्रपण्य स्थिति-  
संक्रमका काल एक समय काळ प्राप्त होगा व, अतः इनके अत्रपण्य स्थितिसंक्रमका अत्रपण्य और  
अल्लस काळ एक समय बतलाया है । अब यही दोष ऊपर नोकयाप अथवा और नपु सकवेह के  
आठ प्रकृतियाँ हैं इनका अत्रपण्य स्थितिसंक्रम अन्तिम स्थिति काण्डरूपके पतनके समय प्राप्त होनेसे  
वृत्तिधारने इनके अत्रपण्य स्थितिसंक्रमका अत्रपण्य और अल्लस काळ अन्तमुहूर्त बनजाया है । यहाँ  
इतनी विरामना है कि हर नोकयापोंकी अपनी अत्रपण्यके समय प्रथम स्थिति सम्भव न होनेसे  
इनके अत्रपण्य स्थितिसंक्रमका अत्रपण्य और अल्लस काळ एक प्रकारका ही प्राप्त होता है । किन्तु  
अथवा और नपु सकवेहका यह काळ वा प्रथमसे प्राप्त किया जा सकता है । प्रथम प्रकारमें प्रथम  
स्थितिके प्रपानत्र है और दूसरे प्रकारमें प्रथम स्थितिकी विरामना न रहकर केवल अन्तिम स्थिति-  
काण्डरूप अथवा अत्रपण्यके विरामना होती है । जिसका निरेश स्वयं ही अत्रपण्यके विरामना है । इन  
प्रकार आपने अत्रपण्य स्थितिसंक्रमक अत्रपण्य विचार करके अब अत्रपण्य स्थितिसंक्रमके अत्रपण्य  
और अल्लस काळका विचार करत हैं—मिच्छात्वकी अत्रपण्य स्थितिके दो प्रकार ही सम्भव हैं—  
अनादि-अनन्त और अनादि-साम्त । अन्वय जीवोंके और अन्वयोंके समान मय्य जीवोंके अनादि

§ ६६६. संपहि आदेसपरूवणहुमुच्चारणं वत्तइस्सामो । तं जहा—आदेसेणु  
 णेरइय० मिच्छ०-वारसक०-भय-दुगुंछ० जह० द्विदिसं० जहण्णु० एयसमओ । अज०  
 जह० समयाहियावलिाया, उक्क० तेत्तीसं सागरो० । एवं सत्तणोक्क०। णवरि अज० जह०  
 अंतोमु० । सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४ जह० जहण्णु० एयस० । अज० जह०  
 एयसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । एवं पढमाए । णवरि सगद्धिदी । विदियादि  
 जाव सत्तमा त्ति द्विदिविहत्तिभंगो ।

अनन्त विकल्प होता है और शेष सभी भव्योंके अनादि-सान्त विकल्प होता है । यत् स्थितिके  
 ये दो विकल्प प्राप्त होते हैं अत इनका संक्रमकाल भी दो ही प्रकारका जानना चाहिये । इसीसे  
 यहाँ मिथ्यात्वके अजघन्य स्थितिसंक्रमका काल पूर्वोक्त विधिसे दो प्रकारका बतलाया है । सम्यक्त्व  
 और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता प्राप्त होनेके बाद उनकी क्षणमात्र द्वारा कमसे कम अन्तर्मुहूर्तकालके  
 भीतर जघन्य स्थिति प्राप्त हो जाती है, अतः इन दो प्रकृतियोंके अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य  
 काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है । तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट सत्त्वकाल पल्यके  
 तीन असंख्यातवें भाग अधिक दो छयासठ सागर होता है । इसीसे यहाँ इन दो प्रकृतियोंके  
 अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल उक्तप्रमाण बतलाया है । अब रहीं सोलह कषाय और नौ  
 नोकषाय ये पञ्चसि प्रकृतियाँ सो इनके अजघन्य स्थितिसंक्रमके तीन भङ्ग प्राप्त होते हैं—  
 अनादि-अनन्त, अनादि-सान्त और सादि-सान्त । अनादि-अनन्त विकल्प अभव्योंके या अभव्योंके  
 समान भव्योंके होता है । अनादि-सान्त विकल्प उन भव्योंके होता है जिन्होंने अभीतक उपशमश्रेणिको  
 नहीं प्राप्त किया है और सादि-सान्त विकल्प उन भव्योंके होता है जो उपशमश्रेणिपर चढ़कर पुनः  
 उससे च्युत हुए हैं । प्रकृतमें इसी तीसरे विकल्पकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट काल बतलाया है ।  
 जो जीव अन्तर्मुहूर्तके भीतर दो बार उपशमश्रेणिपर चढ़ता है उसके अजघन्य स्थितिसंक्रमका  
 जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है । तथा जो जीव अर्धपुद्गलपरिवर्तन कालके आदि और  
 अन्तमें श्रेणीपर चढ़ता है उसके अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल कुछकम अर्धपुद्गलपरिवर्तन-  
 प्रमाण प्राप्त होता है ।

इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ ६६६. अब आदेशका कथन करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं । यथा—आदेशकी  
 अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साके जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य  
 और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय अधिक एक  
 आवलि है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । इसी प्रकार सात नोकषायोंके विषयमें जानना  
 चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है ।  
 सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और  
 उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल  
 तेतीस सागर है । इसी प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ  
 अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण कइना चाहिये । दूसरी पृथिवीसे लेकर  
 सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें स्थितिभिक्तिके समान भङ्ग है ।

विशेषार्थ—नरकमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिसंक्रम  
 एक समय अधिक एक आवलिके बाद एक समयके लिए प्राप्त होता है, अतः इनके जघन्य स्थिति-  
 संक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है । तथा इस जघन्य स्थितिसंक्रमके पूर्व एक



१६६७ तिरिकसेसु द्विदिवि०मंगो । पर्वि०तिरिक्खु३ मिच्छ०-भारसक०  
 मय-दुगुळ० जह० द्विदिसक० जहणु० एयस० । अज० जह० आवसिया समयूणा,  
 उळ० सगद्धिदी । सम्म०-सम्मामि०-अर्णताणु०-सत्तणोफ० द्विदिविहविमंगो । पर्वि०-  
 तिरि०अपत्त०-मनुसअपत्त० मिच्छ०-सोत्तसक०-भय-दुगुळ० जह० जहणुळ० एग-

समय अधिक एक आवसि कालक एक प्रकृतियोंका अत्रपम्य स्थितिसंक्रम होता है, अतः पर्व  
 कालके अत्रपम्य स्थितिसंक्रमका अत्रपम्य काल एक समय अधिक एक आवसिप्रमाण कहा है ।  
 अत्रपम्य काल वेदीस सागर है यह स्पष्ट ही है । यद्यपि अत्र प्रोक्तयामोंकी अपेक्षा यह काल इसी  
 प्रकार बन जाता है । पर इनके अत्रपम्य स्थितिसंक्रमके अत्रपम्य कालमें कुछ विशेषता है । बात यह  
 है कि वहाँ सात प्रोक्तयामोंके अत्रपम्य स्थितिसंक्रमका काल नरकमें उत्पन्न होनेके अन्तर्गुह्यत वा  
 प्राप्त होता है अतः इनके अत्रपम्य स्थितिसंक्रमका अत्रपम्य काल अन्तर्गुह्यतप्रमाण कहा है । नरकमें  
 सम्प्रकृतका अत्रपम्य स्थितिसंक्रम वसुकी कल्पमें एक समय अधिक एक आवसि कालके सेप  
 रहनेपर एक समयके द्विप प्राप्त होता है । सम्प्रमिप्यात्तका अत्रपम्य स्थितिसंक्रम अज्ञेयके समय  
 अन्तिम स्थितिकालका अन्तिम पक्षिके पत्रके समय प्राप्त होता है । तथा अन्त्यानुबन्धीचतुष्प  
 का अत्रपम्य स्थितिसंक्रम विसंयोजनाके समय अन्तिम स्थितिकालका अन्तिम पक्षिके  
 पत्रके समय प्राप्त होता है । अतः वहाँ इनके अत्रपम्य स्थितिसंक्रमका अत्रपम्य और उत्पन्न काल  
 एक समय बनताया है । जो सम्प्रकृत और सम्प्रमिप्यात्तकी अज्ञेयता करनेवाला अन्य गतिअ  
 बीच इनके अत्रपम्य स्थितिसंक्रममें एक समय सेप रहनेपर नरकमें उत्पन्न होता है वसुके इनका  
 एक समयके द्विप अत्रपम्य स्थितिसंक्रम होता है । तथा जिस नगरकीने अन्त्यानुबन्धीचतुष्पकी  
 विसंयोजना थी है वह यदि सासात्तमें आकर और एक आवसि कालके अत्र एक समयके द्विपे  
 इसकी अत्रपम्य स्थितिक संक्रमक होकर पर आता है तो वसुके अन्त्यानुबन्धीचतुष्पके  
 अत्रपम्य स्थितिसंक्रमका अत्रपम्य काल एक समय बेला जाता है । इसीसे यहाँ इन सम्प्रकृत आवि  
 अत्र प्रकृतियोंके अत्रपम्य स्थितिसंक्रमका अत्रपम्य काल एक समय बनताया है । तथा इनके अत्रपम्य  
 स्थितिसंक्रमका उत्पन्न काल वेदीस सागर स्पष्ट ही है । यह सब काल प्रकृतियोंमें ही बन जाता  
 है अतः प्रकृतियोंके अत्रपम्य स्थितिसंक्रमका अत्रपम्य काल समान बनताया है । किन्तु यहाँ उत्पन्न  
 काल एक सागर ही प्राप्त जाती है, अतः यहाँ सब प्रकृतियोंके अत्रपम्य स्थितिसंक्रमका उत्पन्न काल  
 अपनी उत्पन्न स्थितिप्रमाण बनताया है । स्थितिविमर्षिमें सब प्रकृतियोंकी अत्रपम्य और अत्रपम्य  
 स्थितिक द्विदीयादि नरकमें जो काल बनताया है वह यहाँ स्थितिसंक्रमकी अपेक्षासे अधिक  
 बटित हो जाता है अतः वसुकी प्रकृतियोंसे जो नरक सातवीं प्रकृति तकके नरकियोंमें सब प्रकृतियों  
 विमर्षिके समान कहा है ।

१६६८ शिर्यवोमि स्थितिविमर्षिके समान मज्ज है । पञ्च शिर्यवोमिस्थितिके मिप्यात्त, बाय  
 कयाय मय और कुगुप्ताके अत्रपम्य स्थितिसंक्रमका अत्रपम्य और उत्पन्न काल एक समय है ।  
 अत्रपम्य स्थितिसंक्रमका अत्रपम्य काल एक समय काल एक आवसिप्रमाण है और उत्पन्न काल  
 उत्पन्न स्थितिप्रमाण है । सम्प्रकृत सम्प्रमिप्यात्त, अन्त्यानुबन्धीचतुष्प और सात प्रोक्तयामों-  
 का मज्ज स्थितिविमर्षिके समान है । पञ्च शिर्यवोमिस्थितिके अत्रपम्य और अत्रपम्य  
 मिप्यात्त सोत्त कयाय, मय और कुगुप्ताके अत्रपम्य स्थितिसंक्रमका अत्रपम्य और उत्पन्न

१ वा -आश्रयके उत्पत्ति समयुष्वा इति पठः ।

समञ्चो । अज० जह० आवलि० समयूणा, उक्क० अंतोमु० । सम्म०-सम्मामि०-सत्तणोक्क०  
द्विदिविहत्तिभंगो ।

§ ६६८. मणु०३ मिच्छ० जह० द्विदिसं० जहण्णु० एयस० । अज० जह०  
खुदाभव० अंतोमु०, उक्क० सगट्टिदी । सम्म०-सम्मामि०-सोलसक्क०-पुरिसवेद० जह०  
द्विदिसं० जहण्णु० एयस० । अज० जह० एयस०, उक्क० सगट्टिदी । एवमट्टणोक्क० ।  
णवरि जह० जहण्णु० अंतोमु० । मणुसिणीसु पुरिसवेद० छण्णोक्क०भंगो । देवाणं  
णारयभंगो । एवं भवण०-वाणवेंत० । णवरि सगट्टिदी । जोदिसियादि० सव्वट्टा त्ति  
द्विदिविहत्तिभंगो । एवं जाव० ।

काल एक समय है । अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समयकम एक आवलिप्रमाण है  
और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

**विशेषार्थ**—जो बादर एकेन्द्रिय जीव मरकर पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें उत्पन्न होते हैं उनके वहाँ  
उत्पन्न होनेके एक आवलि कालके अन्तिम समयमें मिथ्यात्व आदि पन्द्रह प्रकृतियोंका जघन्य स्थिति-  
संक्रम होता है, इसलिए इन तीन प्रकारके तिर्यञ्चोंमें उक्त प्रकृतियोंके जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और  
उत्कृष्ट काल एक समय कहा है । तथा इस एक समय कालको एक आवलिमेंसे कम करने पर इनमें  
इन्हीं प्रकृतियोंके अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय कम एक आवलिप्रमाण होनेसे  
यह तत्प्रमाण कहा है । इनमें उक्त प्रकृतियोंके अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी  
उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है । शेष कथन सुगम है । तात्पर्य यह है कि यहाँ जो भी काल  
कहा है उसे स्वामित्वको देखकर घटित कर लेना चाहिए ।

§ ६६८ मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्वके जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल  
एक समय है । अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल खुदाभवग्रहणप्रमाण और अन्तर्मुहूर्त-  
प्रमाण है तथा उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व,  
सोलह कषाय और पुरुषवेदके जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।  
अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है ।  
इसी प्रकार आठ नोकषायोंके विषयमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके  
जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । मनुष्यनियोंमें पुरुषवेदका भंग  
छह नोकषायोंके समान है । देवोंमें नारिक्योंके समान भंग है । इसी प्रकार भवनवासी और  
व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट  
काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण कहना चाहिये । ज्योतिषियोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें  
स्थितिबिभक्तिके समान भंग है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

**विशेषार्थ**—ओषसे जो प्रत्येक प्रकृतिके स्थितिसंक्रमका स्वामित्व बतलाया है उसी प्रकार  
मनुष्यत्रिकमें सम्भव होनेसे यहाँ कालका विचार उसीके अनुसार कर लेना चाहिए । मात्र सव  
प्रकृतियोंके अजघन्य स्थितिसंक्रमका काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है ।  
तथा मनुष्यनियोंमें पुरुषवेदका भंग छह नोकषायोंके समान है इतनी विशेषता यहाँ अलगसे जान  
लेनी चाहिए । इसका कारण यह है कि इनमें छह नोकषायोंके स्थितिसंक्रमके स्वामित्वसे पुरुषवेदके  
स्थितिसंक्रमके स्वामित्वमें कोई भेद नहीं है । शेष कथन सुगम है ।

ॐ एतो अंतर ।

१६६९ एषो उवति अंतरं वचस्सामो चि पइत्तामुपमेदं । तं पुण इविहं  
जहण्णुक्कस्सट्ठिविसकमविसयमेदेण । उरुपुक्कस्सट्ठिविसकमयंतर उक्कस्सट्ठिविउदीरणतरेण  
समाणपरूवणमिदि तेण तदप्पणं क्खणमाणो सुचमुत्तर मण्णइ—

ॐ उक्कस्सपट्ठिविसकामयंतर जहा उक्कस्सट्ठिविउदीरणप अंतरं तहा  
कापय्थं ।

१६७० सुगममेदमप्यत्थुच । संपहि एदेण समप्पिवत्थविबरणमुत्तरणानुसारेण  
वत्थस्सामो । तं अहा—उक्क पयद । इविहो णिरेसो—ओपेण आदेसेण य । ओपेण  
मिच्छं० वारसकं० उक्कं० ट्ठिविसकं० अंतर के० ? जहं० अतोसु , णवणोकं० पयसं०,  
उक्कं० सप्पेसिमपंतकमसंखेजा पोम्हात्तपरियहा । अणुं० अहं० पयसं०, उक्कं०  
अतोसु । सम्मं०-सम्मामिं० उक्कं० अणुक्कं० ट्ठिविसकं० जहं० अतोसु० पयसं०, उक्कं०  
उक्कपोग्गलपरियहा । अणताणुं० उक्कं० ट्ठिविस जहं० अतोसुं० उक्कं० अपंत  
कामसंखेजपोम्हात्तपरियहा । अणुं० जहं० पयसमओ, उक्कं० केजावट्ठिसागरो० देवणाणि ।  
आदेसेण सप्पामु गदीसु ट्ठिविद्विहत्तमगो । अवरि मणुससिप चटुणोकसायाणमणुक्कसु

ॐ अब इससे आगे अन्तरका मपिअर है ।

१६९६ अब इस काअमकमप्यके बाह अन्तर प्रकमप्यके वठकात है । इस प्रकार यह  
प्रतिज्ञासूत्र है । यह दो प्रकारका है—अपन्व स्थितिकेअप्यके विषय करणवावा और वत्थस स्थिति-  
संक्रमके विषय करणवावा । इनमेंसे वत्थस स्थितिके संक्रमकके अन्तरका कवन वत्थस स्थितिके  
उदीरकाके अन्तरके समान है, इसलिये इसकी प्रथमवासे आगेका सूत्र करते हैं—

ॐ विस प्रकार उत्कट स्थितिके उदीरणाका अन्तर है उसी प्रकार उत्कट  
स्थितिक संक्रमकका अन्तर प्राप्त करना चाहिये ।

१६७० यह अर्पसासूत्र सुगम है । अब इसके टाप को अर्पेअ विवरण प्राप्त होना है  
जसे वत्थारवाके अनुसार कहते हैं । पया—वत्थसका प्रकार है । निर्देशा को मअरअ है—  
ओपनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओपकी अपेक्ष सिध्वात्त और वारद कयावोकी वत्थस स्थितिके  
संक्रमकका अन्तर चितना है ? अपन्व अन्तर अन्तमुहूर्त है, जो नोकयावोकी वत्थस स्थितिके  
संक्रमकका अपन्व अन्तर एक समय है तथा इस सब प्रकृतियोंकी वत्थस स्थितिके संक्रमकका  
वत्थस अन्तर अन्त वत्थस है जो अर्पेअवात्त पुद्गलपरिवर्तनप्रमास है । अन्तुत्थ स्थितिके संक्रमक  
का अपन्व अन्तर एक समय है और वत्थस अन्तर अन्तमुहूर्त है । सन्वत्थ और सन्वमित्थवात्त-  
की वत्थस और अन्तुत्थ स्थितिके संक्रमकका अपन्व अन्तर क्वसे अन्तमुहूर्त और एक समय है ।  
तथा वत्थस अन्तर अर्पेअपुद्गलपरिवर्तनप्रमास है । अनन्तात्तवत्थीवत्थकी वत्थस स्थितिके  
संक्रमकका अपन्व अन्तर अन्तमुहूर्त है और वत्थस अन्तर अन्त वत्थस है जो अर्पेअवात्त पुद्गल-  
परिवर्तनप्रमास है । अन्तुत्थ स्थितिके संक्रमकका अपन्व अन्तर एक समय है और वत्थस अन्तर  
एक कम को व्वासत्त सागर है । आदेशकी अपेक्ष सब गतिवैधे स्थितिविमलिके समान मंग है ।  
किन्तु इतनी विरोधा है कि मनुअत्रिकमें चार मोकयवोकी अन्तुत्थ स्थितिक संक्रमकका वत्थस

कस्संतरंमंतोमुहुत्तं । एवं जाव० ।

❀ एत्तो जहणयमंतरं ।

§ ६७१. एत्तो उक्कस्सद्विदिसंक्रामयंतरविहासणादो उवरि जहणद्विदिसंक्रामयंतरं कस्सामो चि पइज्जासुत्तमेदं ।

अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—ओघसे मिथ्यात्व और वारह कषायोंका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम होनेके बाद पुनः

वह अन्तमुहूर्तके अन्तरसे ही प्राप्त हो सकता है, क्योंकि एक बार इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होकर पुनः यह अन्तमुहूर्तके बाद ही होता है और संक्रम बन्धके अनुसार होता है, अत यहाँ उक्त प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तरकाल अन्तमुहूर्त कहा है । मात्र नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय वन जाता है । कारण कि क्रोधादि कषायोंमेंसे एकके बाद दूसरेका एक एक समयके अन्तरसे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होकर तथा एक एक समयके अन्तरसे उनका नौ नोकषायोंमें संक्रम होकर नौ नोकषायोंका भी एक एक समयके अन्तरसे उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम सम्भव है । इन सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है यह स्पष्ट ही है । इन सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त होनेसे इनके अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुहूर्त कहा है । जो जीव अन्तमुहूर्तके अन्तरसे दो बार वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होता है और मिथ्यात्वमें दोनों बार वेदकसम्यक्त्व होनेके पूर्व मिथ्यात्व प्रकृतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करके उसका काण्डकघात नहीं करता उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त देखा जाता है तथा जो उपशमसम्यग्दृष्टि जीव एक समयके लिए सासादन सम्यग्दृष्टि होकर दूसरे समयमें मिथ्यादृष्टि हो जाता है उसके उक्त दोनों प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय देखा जाता है, इसलिए तो इन दोनों प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त और अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय कहा है । तथा इन दोनों प्रकृतियोंकी उपार्धपुद्गलपरिवर्तनकाल तक सत्ता न हो कर उसके प्रारम्भमें और अन्तमें इनका उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रम हो यह सम्भव है, इसलिए इनके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कका शेष सब अन्तर कथन तो वारह कषायोंके समान हानेसे उसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए । मात्र इनके अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमके उत्कृष्ट अन्तरमें कुछ फरक है । वात यह है कि जो वेदकसम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर देता है उसके कुछ कम दो छयासठ सागर काल तक उनकी सत्ता नहीं पाई जाती, इसलिए इनके अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है । यहाँ चारों गतियोंमें सब प्रकृतियोंके स्थितिसंक्रमका अन्तरकाल स्थितिबिभक्तिके समान बतलाकर मनुष्यत्रिकमे चार नोकषायोंके अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल एक आवलि या एक आवलिका असख्यातवाँ भाग न कह कर जो अन्तमुहूर्त कहा है सो उसका कारण यह है कि उपशमश्रेणियोंमें हास्य, रति, स्त्रीवेद और पुरुषवेदका अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अन्तमुहूर्त काल तक नहीं होता ।

\* इससे आगे जघन्य अन्तरकालका अधिकार है ।

§ ६७१ इससे अर्थात् उत्कृष्ट स्थितिसंक्रामकके अन्तरका कथन करनेके बाद जघन्य स्थितिसंक्रामकका अन्तर कहेंगे इस प्रकार यह प्रतिज्ञासूत्र है ।

⊙ सम्प्रार्सि पयद्वीय पस्थि अतरं ।

‡ ६७२ सम्प्रार्सि मोहपयद्वीय जहृण्णद्विदिसंक्रामयस्त णरिय अतरं, सुवय परिमकालीय परिमद्विदिसंक्रामय ममयादियावकियाण च लहृण्णसायिवाणमतरसंपंभस्त अचंतामावेण गिसिद्धाचो । एदेण सामण्णवयणेणाणंताणुबंधीणं पि अतरामावे पसत्ते तण्णिवारणमुहेमतरसमवपनुप्यायणदुमुत्तरसुधं—

⊙ शोवरि अणंताणुबंधीयं जहृण्णद्विदिसंक्रामयतरं जहृण्णेष अतोमुत्त, उहृस्तेय उवहृण्णोग्गखपरिपट्ट ।

‡ ६७३ विसंभोयणापरिमकालीय लहृण्णमावस्ताणताणु०पउक्कस्त द्विदि सकमस्त सम्बजहृण्णविसंभुत्त-संभुत्तकालेहि अतरिय पुणो वि विसंभोयणाए कानुमात्ताए परिमकालीविसए लहृमतोमुत्तुं होए । उक्कस्तेण उवहृण्णोग्गपरियदुपकूवणा सुगमा ।

एवमोपथ जहृण्णतर गर्भ ।

⊙ सब प्रकृतियोंका अन्तरकास नहीं है ।

‡ ६७२. सब मोहप्रकृतियोंके अल्प स्विकृतिकामकम अन्तरकास नहीं है, क्योंकि इनका अपने अपने अन्तःस्थितिकामकके अन्तःस्थितिके पतन होत समय और एक समय अधिक एक आशक्ति का उदयेर अल्प स्थानित प्राप्त होता है, इसलिय इनके अन्तरकासका अल्प अन्तःस्थितिके अल्प नियम किया है । इस सामान्य बधनसे अन्तःस्थितिके अल्पमोह मी अन्तःस्थितिके अल्प इच्छिय वसुके नियम द्वारा इनका अन्तरकास समान है इसका बधन करनेके लिय आगेका सूत्र करते हैं—

⊙ किन्तु इतनी विशेषता है कि अन्तःस्थितिके अल्प स्विकृतिके संक्रामकका अल्प अन्तर अन्तःस्थितिके है और अन्तःस्थितिके अन्तर उपार्थपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

‡ ६७३ क्योंकि विसंभोजनकी अन्तःस्थितिके पतनके समय विसने अपने स्विकृतिकामकका अल्पप्राप्त प्राप्त किया है ऐसे अन्तःस्थितिके अल्पप्राप्तका सबसे अल्प विसंभोजन और संयोजनके अल्प द्वारा अन्तर करके पुनः वसे विसंभोजन करनेके लिय मद्रस करनेका अल्प अन्तःस्थितिके पतनके समय एक अन्तःस्थितिके अल्प होता है । इसके उपार्थपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अल्प अन्तरकासकी प्रकल्प सुगम है ।

विशेषार्थ—सम्प्रार्सिपयद्वीय और लहृण्णमावस्ताणताणु०पउक्कस्त अल्पनी अल्पनी रूपयामे एक समय अधिक एक आशक्ति का उदये पर होता है और उदये प्रकृतियोंका अल्प स्विकृतिकाम अल्पनी अल्पनी रूपयामे समय अन्तःस्थितिके अल्प स्विकृतिकामककी अन्तःस्थितिके पतनके समय होता है, इसलिय जोवसे इनके अल्प स्विकृतिकामकके अन्तरकासका नियम किया है । किन्तु अन्तःस्थितिके अल्पप्राप्त इस विविध अल्पार्थ है । अल्प कि वसुकी विसंभोजन होनेके बाद अन्तःस्थितिके अल्पके अन्तर ही पुनः संयोजनपूर्वक विसंभोजन का सफली है । तथा जो बाद विसंभोजनकाल किवा अन्तःस्थितिके उपार्थपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण का अल्प अल्पवधन मी हो सफली है, इसलिय इतनी अल्प स्विकृतिके अल्पका अल्प और अल्प अन्तरकास अल्पप्रमाण वन जानेके बाद अल्प अल्पप्रमाण का है ।

इस प्रकार जोवसे अल्प अन्तरकास समान हुआ ।

§ ६७४. एत्तो अजहण्णट्टिदिसंक्रमंतरं देसामासयसुत्तेणेदेणेव सूचिदमिदाणिमणु-  
मगइस्सामो—मिच्छ० अज० णत्थि अंतरं । सम्म०-सम्मामि० अज० जह० एगसमओ,  
उक्क० उवहूपोग्गलपरियडुं । अणंताणु० ४ अज० जह० अंतोसु०, उक्क० वेखावड्डिसागरो०  
देसूणाणि । वारसक०-णवणोक० अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोसु० ।

एवमोघो समत्तो ।

§ ६७५. आदेशेण सव्वणेइय०-सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-सव्वदेवा त्ति ट्टिदि-  
विहत्तिभंगो । मणुस३ मिच्छ० जह० अज० णत्थि अंतरं । सम्मा०-सम्मामि० जह०  
णत्थि अंतरं । अजह० ज० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेण-

§ ६७४. अब इसी देशामर्षक सूत्रसे सूचित होनेवाले अजघन्य स्थितिसंक्रमके अन्तरकालका  
इस समय विचार करते हैं—मिथ्यात्वके अजघन्य स्थितिसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व  
और सम्यग्मिथ्यात्वके अजघन्य स्थितिसंक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट  
अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अजघन्य स्थितिसंक्रामकका  
जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। बारह  
कषाय और नोकषायोंके अजघन्य स्थितिसंक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट  
अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

**विशेषार्थ**—मिथ्यात्वकी क्षणता होनेके पूर्व तक उसका सर्वदा अजघन्य स्थितिसंक्रम होता  
रहता है, इसलिए उसका निषेव किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका यथाविधि कमसे कम  
एक समयके लिए और अधिकसे अधिक उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कालके लिए अन्तर होकर  
अजघन्य स्थितिसंक्रम सम्भव है, इसलिए इनके अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर एक  
समय और उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका कमसे  
कम अन्तर्मुहूर्त काल तक और अधिकसे अधिक कुछ कम दो छयासठ सागर कालतक विसंयोजना  
होकर अभाव रहता है। तथा विसंयोजनाके पूर्वमें तथा संयोजना होनेके बादमें इनका अजघन्य  
स्थितिसंक्रम होता रहता है, इसलिए इनके अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और  
उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर कहा है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी उपशमना  
होनेके बाद जो एक समय वहीं रुककर दूसरे समयमें मरकर देव हो जाते हैं उनके इन  
प्रकृतियोंके अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है और जो इनकी  
उपशमना करके तथा उपशमश्रेणिसे उतरते समय यथास्थान पुनः इनका अजघन्य स्थितिसंक्रम  
करने लगते हैं उनके इनके अजघन्य स्थितिसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है, इसलिए  
इनके अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है।

इस प्रकार शोधप्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ ६७५ आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अथर्थात् और सब देवोंमें स्थिति-  
विभक्तिके समान भंग है। मनुष्यत्रिकर्मे मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य स्थितिसंक्रामकका  
अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य स्थितिसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं  
है। अजघन्य स्थितिसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व  
अधिक तीन पल्यप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके जघन्य स्थितिसंक्रामकका जघन्य अन्तर

अधियाणि । अण्ताणु० ४ सं० अह० अतोसु०<sup>१</sup> उक्त० मगद्विदी । अत्र० अ० अंतोमु०,  
उक्त० तिग्णि पस्त्रि० दक्षणाणि । अतसक०-णवणोक० अह० अतिय अतर । अत्र०  
अहण्यु० अतोसु० । एवं चाव० ।

ॐ पाष्वाजीवेहि भगविचभो सुपिहो उक्तसपदभगविचभो च जहपथ  
पदभगविचभो च ।

१ ६३६ उत्पुङ्गसपदभगविचभो णाम उक्तसद्विदिसपदमयाणं पवाहबोष्पेद  
समवांसमवपरिक्रता । तथा जहणो वि चत्तन्वो । एदेसिं च दोणमद्वपदं—जे उक्तसद्विदीए  
संक्रामया ते अणुक्तसद्विदीए असक्रामया । जे अणुक्तसद्विदीए संक्रामया त उक्तसियाए  
द्विदीए असक्रामया । एवं जहणायं पि चत्तन्वं । पदमद्वपदं काठण सेपपरूचना अयप्या  
सि आणावणद्वमुचरसुत्तमाह—

ॐ तेसिमद्वपदं काठण उक्तससभो जहा उक्तसद्विदिविउदीरणा तथा  
कायप्या ।

अन्तर्मुहूर्त हे और उत्पुङ्ग अन्तर अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है । अत्रपन्थ स्थितिसंक्रामक  
अपन्थ अन्तर अन्तर्मुहूर्त हे और उत्पुङ्ग अन्तर कुत्र कम तीन पत्थप्रमाण है । बाह्य कपाय और  
नी नोक्रयकोके अन्तर् स्थितिसंक्रामक अन्तरकाल नहीं हे तथा अत्रबन्ध स्थितिसंक्रामक  
अपन्थ और उत्पुङ्ग अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार अनन्तरक मार्गोया उक्त अन्तर्वा चारिए ।

विशेषार्थ—मनुष्यविक्रमी उत्पुङ्ग अयस्थिति पूर्वस्थितप्रपत्त अधिक तीन पत्थ हे और  
इसके प्रारम्भमें तथा अन्तमें सम्पत्त और सम्पत्तिरूपालकी सजा हो और मन्थमें न हो यह  
सम्भव है, इसलिये इन प्रकृतियोंके अत्रपन्थ स्थितिसंक्रामक उत्पुङ्ग अन्तरकाल उक्त कालप्रमाण  
कहा हे । और मनुष्य कृतकृत्यवेदक या चायिके सिवा अन्य सम्पत्तरत्ने साव मरकर मनुष्यमें नहीं  
परतत होता । वेदकृतसम्पत्ति या अन्तमसम्पत्ति तिर्यञ्च भी मरकर मनुष्यमें नहीं परतत होता,  
अतः मनुष्यविक्रममें अनन्तनुष्यविकृत्यके अत्रपन्थ स्थितिसंक्रामक उत्पुङ्ग अन्तर कुत्र कम तीन  
पत्थ ही प्राप्त होता है, इसलिये इनमें यह उक्त कालप्रमाण कहा हे । शेष कवन सुगम हे ।

० नाना बीजोंके अपसा मङ्गविषय दो प्रकारका है—उत्पुङ्ग पदभगविषय और  
अपन्थ पदभगविषय ।

१ ६३६- यहाँ पर उत्पुङ्ग स्थितिके संक्रामकोके प्रत्यक्ष अनुष्णेर सम्भव हे या असम्भव  
हे इसकी परीक्षा करना उत्पुङ्ग पदभगविषय कहलया है । इसी प्रकार अपन्थकी भी कवन करवा  
चारिए । इन दोनोंका अर्थपद—जो उत्पुङ्ग स्थितिके संक्रामक हैं वे अन्तुत्पुङ्ग स्थितिके असंक्रामक  
होते हैं और जो अन्तुत्पुङ्ग स्थितिके संक्रामक हैं वे उत्पुङ्ग स्थितिके असंक्रामक होते हैं । इसी  
प्रकार अपन्थके आसक्तसे भी कवन [करना चारिए ] । इसप्रकार अर्थपद करके शेष मरुत्तक करनी  
चारिए इस बातका काल करनेके किर आगेका सूत्र करते हैं—

० उनका अर्थपद करके निस प्रकार उत्पुङ्ग उदीरणाकी प्ररूपणा की गई है उस  
प्रकार उत्पुङ्गपदभगविषय करना चारिए ।

§ ६७७. तेसिं दोण्हमणंतरपरुविदमट्टपदं काळण तदो उक्कस्सओ भंगविचओ पुव्वं कायव्वो, जहा उद्देशो तथा णिद्देशो चि णायादो । सो च कथं कायव्वो ? जहा उक्कस्सिया द्विदिउदीरणा भंगविचयविसयां तथा कायव्वो, ततो एदस्स भेदानुवलंभादो । संपहि एदेण समप्पिदत्थविवरणट्टमुच्चारणं वत्तइस्सामो । तत्थ दुविहो णिद्देशो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण सव्वपयडीणं उक्कस्सट्टिदीए सिया सव्वे असंक्रामया । सिया एदे च संक्रामओ च । सिया एदे च संक्रामया च । एवं तिण्णि भंगा । अणुक्कस्ससंक्रामयाणं पि विवज्जासेण तिण्णि भंगा कायव्वो । एवं सव्व्वासु गईसु । णवरिं मणुसअपज्ज० सव्वपयडीणमुक्क०—अणु०संक्रा० अट्ट भंगा० । एवं जाव० ।

❀ एत्तो जहणपदभंगविचओ ।

§ ६७८. उक्कस्सपदभंगविचयादो अणंतरं जहणपदभंगविचयो परुवणाजोगो चि अहियारसंभालणसुत्तमेदं । तण्णिद्देशकरणट्टमुत्तरसुत्तावयारो—

❀ सव्व्वासिं पयडीणं जहणणट्टिदिसंक्रामयस्स सिया सव्वे जीवा असंक्रामया, सिया असंक्रामया च संक्रामओ च, सिया असंक्रामया च संक्रामया च ।

§ ६७७. उन दोनोंका अनन्तर पूर्वकथित अर्थपद करके अनन्तर उत्कृष्ट भङ्गविचय पहिले करना चाहिए, क्योंकि उद्देशके अनुसार निर्देश किया जाता है ऐसा न्याय है ।

शंका—वह किसप्रकार करना चाहिए ?

समाधान—जिस प्रकार भंगविचयविषयक उत्कृष्ट उदीरणा की गई है उस प्रकार करना चाहिए, क्योंकि उससे इसमें भेद नहीं उपलब्ध होता ।

अब इससे प्राप्त हुए अर्थका विवरण करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं । प्रकृतमें निर्देश दो प्रकारका है—शोधनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके सब जीव कदाचित् असंक्रामक हैं । कदाचित् बहुत जीव असंक्रामक हैं और एक जीव संक्रामक है । कदाचित् बहुत जीव असंक्रामक है और बहुत जीव संक्रामक हैं । इस प्रकार तीन भंग होते हैं । अनुत्कृष्ट संक्रामकोंके भी उलटकर तीन भंग करने चाहिए । इसी प्रकार सब गतियोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट संक्रामकोंके आठ भंग होते हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

\* इससे आगे जघन्यपदभंगविचयका प्रकरण है ।

§ ६७८ उत्कृष्ट पदभंगविचयके बाद जघन्य पदभंगविचय परुपणायोग्य है इस प्रकार अधिकारकी संहाल करनेवाला यह सूत्र है । अब इसका निर्देश करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

\* सब प्रकृतियोंके जघन्य स्थितिसंक्रमके कदाचित् सब जीव असंक्रामक हैं । कदाचित् बहुत जीव असंक्रामक हैं और एक जीव संक्रामक है । कदाचित् बहुत जीव असंक्रामक हैं और बहुत जीव संक्रामक हैं ।

१ ता० प्रतौ -विचयुविचया इति पाठः ।



१ ६७९. गयत्यमेदं सुचं ।

⊗ सेसं विहृत्तिमगो ।

१ ६८० एत्य सुगमचाणो सुतेनापस्विदानं भागामाग-परिमाण-खेच-पोसणार्णं  
हेदिविहृत्तिमगो । जवरि अहृण्णए परिमाणानुगमे औषण मनुसगर्णए च सम्मामि०  
प्र० हृदिसक० केचित्पया ? ससेत्ता । खेचपरुवणाए पत्वि प्पाणच । पोसणानुगमे  
प्रोषेण मनुसगर्णए च सम्मामि अहृण्णहृदिसंक्रमयार्णं खेचमगा क्यप्यो ।

⊗ पाप्पाजीवेहि काळो ।

१ ६८१ अहियारसमालपसुचमेद सुगम ।

⊗ सप्पासिं पयडीणमुक्त्सहृदिसकमो केचपिर काळापो होइ ?  
अहृण्येष पयसमद्यो ।

१ ६८२. पयसमयमुक्त्सहृदिं सक्रमेदुप विदियसमए अणुक्त्सहृदिं संक्रमे-  
माणएसु नाणाजीवेसु तदुचलंमादो ।

⊗ सक्रस्तेण पत्विदोबमस्त असंखेजविभागो ।

१ ६८३ एत्य मिच्छ०-सोलसक०-मय-दुगुछ०-णठसयवेद-अर-सोगाण्णु क्त्स-  
हृदिसंक्रमदं ठविय आवलि० असंखेजमागमेचतदुचलमणवारसलप्रगाहि गुणिदे उक्त्स-  
काळो होइ । इस्व-र-इरि-पुरिसवेदापमावलिप ठविय तदसंखेजमागेण गुणिदे

१ ६८४ एह सूत्र गतार्थे हे ।

⊗ खेप मग स्थितिविमक्तिक समान है ।

१ ६८५ बर्होपर सुगम होनेसे सुत्रद्वारा नहीं कहे गये भागामाग परिमात्र, खेच और  
स्पर्शनका मंग स्थितिविमक्तिके समान है । इतनी विशेष्य है कि अपन्य परिमात्रानुगममें जोबसे  
तथा मनुष्मगतिकी अपेक्षा सग्यमिप्यात्वकी अबन्य स्थितिके संक्रमक बीच कितने हैं ? संख्यात  
है । खेचप्रकृत्यामें कोई विशेष्य नहीं है । स्पर्शानुगममें जोबसे और मनुष्मगतिकी अपेक्षा  
सग्यमिप्यात्वकी अबन्य स्थितिके संक्रामकोंके स्पर्शनका मंग खेचके समान करण चाहिए ।

⊗ अब नाना बीजोंकी अपेक्षा कालका अधिकार है ।

१ ६८६ अधिचरकी संख्या करनेवाला यह सूत्र सुगम है ।

⊗ सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमक कितना काल है ? अपन्य काल  
एक समय है ।

१ ६८७. क्योंकि एक समय तक उत्कृष्ट स्थितिक संक्रम करने दूसरे समयमें अत्युत्कृष्ट  
स्थितिक संक्रम करनेवाले नाना बीजोंके वच कदा क्यकल्प होय है ।

⊗ उत्कृष्ट काल फलके असंख्यातमें मागप्रमाण है ।

१ ६८८. बर्हो पर मिप्यात्व, सोलस कथय, मय दुगुप्पा नुसुक्त्मेद, अरति और शोककी  
उत्कृष्ट स्थितिके कल्पक कालमें स्थापित कर इसको आवधिके असंख्यातमें मागप्रमाण कालमात्र  
धारणकावर्धोंसे गुणित करनेपर उत्कृष्ट काल प्राप्त होय है । इस्व, उरि, जीवेद और पुल्लवेदके  
उत्कृष्ट संक्रमकाल एक आवधिके स्थापित कर इसके असंख्यातमें मागसे गुणित करने पर महत् उत्कृष्ट

पयदुक्कस्सकालसमुप्पत्ती वत्तन्वा । सन्वासिं पयडीणमिदि वयणेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं  
पि पलिदोवमासंखभागपमाणुक्कस्सट्टिदिसंकमुक्कस्सकालाइप्पसंगे तप्पडिसेहमुहेण तत्थ विसेसं  
पदुप्पायणट्टमिदमाह—

❀ एवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सट्टिदिसंकमो केवचिरं  
कालादो होदि ? जहणणेण एयसमत्थो, उक्करसेण आवलियाए असंखेज्जदि-  
भागो ।

§ ६८४. कथमेदस्सुप्पत्ती ? वुच्चदे—एयवारमुवकंताणमेयसमओ चेव लब्भइ त्ति  
तमेयसमयं ठविय आवलि० असंखे०भागमेत्तुवकमणवारेहि णिरंतरमुवलब्भमाणसरुवेहि  
गुणिदे तदुवलंभो होइ । एवमोघेणुक्कस्सट्टिदिसंकमकालो णाणाजीवविसेसिदो सन्वपयडीणं  
परुविदो । अणुक्कस्सट्टिदिसंकमकालो पुण सव्वेसिं कम्माणं सव्वद्धा । आदेसपरुवणाए  
ट्टिदिविहत्तिभंगो अणुणाहियो कायव्वो ।

❀ एत्तो जहणणयं ।

§ ६८५. सुगम ।

❀ सन्वासिं पयडीणं जहणणट्टिदिसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?  
जहणणेणेयसमत्थो, उक्कस्सेण सखेज्जा समया ।

कालकी उत्पत्ति कहनी चाहिए । सूत्रमें 'सन्वासिं पयडीणं' यह वचन आया है सो इससे सम्यक्त्व  
और सम्यग्मिध्यात्वके भी उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमके उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त  
होने पर उसके प्रतिषेध द्वारा वहाँ विशेषका कथन करनेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

\* किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वके उत्कृष्ट  
स्थितिसंक्रमका काल कितना है ? जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके  
असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ६८४ इसकी उत्पत्ति कैसे होती है ? कहते हैं—एकवार उपक्रम करनेवाले जीवोंके  
एक समयप्रमाणही काल उपलब्ध होता है, इसलिए उस एक समयको स्थापितकर निरन्तर उपलब्ध  
होनेवाले आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण उपक्रमणवारोंसे गुणित करने पर उस कालकी प्राप्ति  
होती है । इस प्रकार औघसे सब प्रकृतियोंका नाना जीवविषयक उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमकाल कहा ।  
किन्तु सब कर्मोंका अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमकाल सर्वदा है । तथा आदेशसे कथन करने पर  
न्यूनाधिकतासे रहित स्थितिबिभक्तिके समान भंग करना चाहिये ।

\* अब आगे जघन्यका प्रकरण है ।

§ ६८५ यह सूत्र सुगम है ।

\* सब प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिसंक्रमकाल कितना है ? जघन्य काल एक  
समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है ।

§ ६८६ सुवभाए सद्ब्रह्मणमावाणं तदुच्यतेमादौ । संपदि एदेण सामण्णाययणेण  
विश्वोयणपरिमफ्फलीए सद्ब्रह्मणमावाणमजंताणुयधीण परिमङ्गिदिसइए सद्ब्रह्मण-  
सामिषाणमङ्गुणोक्कसायाण च अहाणिदिह्मब्रह्मणुस्सकालाप्यसंगे उप्पडिसइदुवारण  
वत्त्वणविसंसपदुप्पायणङ्गुसुवरिम सुचदयमाह—

ॐ एवरि अणत्ताणुयधीयां जह्मणद्विदिसकमो केवधिर काखावो होदि ?  
जह्मणेष्य एयसमभो, उफकस्सेय आबलिपाए असस्सेयविभागो ।

§ ६८७ सुगमं ।

ॐ इत्थिण्णु सपवेव-छयणोकसायाण जह्मणद्विदिसकमो केवधिर  
काखावो होदि ? जह्मणुयकस्सेयतोमुदुत्त ।

§ ६८८. चरिमङ्गिदिसइयमि सद्ब्रह्मणमावाणं तदुच्यतेमादौ । एवरि ब्रह्मण-  
कालो उक्कस्सकालस्स संखेअणुयत्तमेव दुक्कम्, सखेअवार तदणुसघाणाकलभणे,  
तद्विरोहादो । एवमोपेण ब्रह्मणद्विदिसकमकालो पत्त्विदो ।

§ ६८९ सम्भासिमब्रह्मणद्विदिसकमकालो सम्बद्धा । एवं मणुसतिए । एवरि  
अणत्ताणु०४ ब्रह्मणं बह० एयस०, उक्क संखेअा समया । मणुसिणीमु पुगिसभेद

§ ६८९ क्योंकि अनन्तमं अपन्यपनेको प्राप्त हुई एत प्रकृतियोंका उक्त काल प्राप्त होता है ।  
अब इस सामान्य बचनके अनुसार विश्वोक्तमाथी अन्तिम पङ्क्तिके पठनके समय अपन्यपनेको  
प्राप्त हुई अनन्तानुबन्धियोंके तथा अन्तिम स्थितिसंक्रमणके पठनके समय अपन्य एवमित्यको प्राप्त  
हुए अथ नोक्तयोंके पद्यनिर्दिष्ट अपन्य और उक्त कालका प्रयोग प्राप्त होने पर उक्तके प्रतिके  
कार्य वही पर विशेषकर अपन्य करनेके क्रिय आगेके दो सूत्र करते हैं—

० किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धियोंके अपन्य स्थितिसंक्रमणका  
किटना काल है । अपन्य काल एक समय है और उक्त काल आबलिक अपन्यमात्रके  
मागप्रमाण है ।

§ ६९० यह सूत्र सुगम है ।

० अथिद, नपुंसकवेद अथ एव नोक्तयोंके अपन्य स्थितिसंक्रमणका किटना काल  
है ? अपन्य और उक्त काल अन्तर्गुह्य है

§ ६९० अन्तिम स्थितिसंक्रमणके पठनके समय अपन्यपनेको प्राप्त हुए उक्त अथ नोक्तयों-  
का उक्त काल प्राप्त होता है । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ पर अपन्य कालसे उक्त काल  
संख्यागुणा जानना चाहिए, क्योंकि संख्यागुणा करनेके कारण अन्तिमसंक्रमणसे अपन्यपन  
होने पर अपन्य कालसे उक्त कालके संख्यागुणा होनेमें विरोध नहीं आता । इस प्रकार आपसे  
अपन्यस्थितिसंक्रमणका काल अथ ।

§ ६९१ अथिद सब प्रकृतियोंके अपन्य स्थितिसंक्रमणका काल सर्वथा है । इसी प्रकार  
मनुष्यविक्रमं जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धियोंके अपन्य  
स्थितिसंक्रमणका अपन्य काल एक समय है और उक्त काल संख्यात समय है । मनुष्यविक्रमं

१ आ मतो—अथमन्त्रा इति पाठ ।

छण्णोक०भंगो । आदेसेण सव्वणोरइय-सव्वतिरिक्ख०-सव्वदेवा द्विदिविहत्तिभंगो । मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० जह० द्विदिसं० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अज० जह० आवलिया समयूणा, उक्क० पलिदो० असंखे०-भागो । सम्म०-सम्मासि०-सत्तणोक० द्विदिविहत्तिभंगो । एवं जाव० ।

§ ६९०. अंतरं दुविहं—जह० उक्क० । उक्क० द्विदिविहत्तिभंगो । जहण्णए पयदं । दुविहो णिद्देशो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण दंसणतिय-णवकसाय-इत्थिवेद०-छण्णोक० जह० द्विदिसका० जह० एयसमओ, उक्क० छम्मासं । अणंताणु०४ जह० द्विदिसंका० जह० एयसमओ, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेये । पुरिसवेद-तिण्णिसंजल० जह० द्विदिसं० जह० एयसमओ, उक्क० वासं सादिरेयं । णवुंस० जह० द्विदिसं० जह० एयसमओ, उक्क० वासपुघत्तं । सव्वासिमजह०, द्विदिसंका० णत्थि अतरं । एवं मणुसतिए । णवरि मणुसिणीसु खवयपयडीण वासपुघत्तं । सेससव्वमग्गणासु विहत्तिभंगो ।

पुरुषवेदका भंग छह नोकपायोंके समान है । आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च और सब देवोंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है । मनुष्य अपर्याप्तकमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय और जुगुप्सा के जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अजघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य काल एक समय कम एक आवलिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सात नोकपायोंका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ६९०. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे तीन दर्शनमोहनीय, नौ कपाय, स्त्रीवेद और छह नोकपायोंके जघन्य स्थितिसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । अनन्तानुवन्धीचतुष्कके जघन्य स्थितिसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है । पुरुषवेद और तीन सज्जलनके जघन्य स्थितिसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष है । नपुंसकवेदके जघन्य स्थितिसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है । सब प्रकृतियोंके अजघन्य स्थितिसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें क्षपक प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है । शेष सब मार्गणाओंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है ।

विशेषार्थ—क्षपकश्रेणिका और क्षात्रिक सम्यग्दर्शनकी प्राप्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । इसलिए यहाँ पर तीन दर्शनमोहनीय आदि १६ प्रकृतियोंके जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना कहा है । इन प्रकृतियोंमें स्त्रीवेदकी गिनानेका कारण यह है कि इस प्रकृतिकी परोदय और स्वोदय दोनों प्रकारसे क्षपणा होने पर अन्तमें जघन्य स्थितिसंक्रम होता है । सम्यक्त्वकी प्राप्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है । तदनुसार यह अन्तर अनन्तानुवन्धी चतुष्ककी विसंयोजनाका भी जानना चाहिए । इसलिए यहाँ पर अनन्तानुवन्धीचतुष्कके जघन्य स्थितिसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात कहा है । क्रोधादि तीन संज्वलन और पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणिएपर चढ़नेका जघन्य अन्तर एक समय

⊙ एत्थ सपिणयासो कायम्भो ।

१ ६९१ एत्थुदेसे सपिणयासो कायम्भो पि सुणिगुत्तयारस्त अत्तसमप्पणा-  
 वयणमेदं । संपहि एदेण समप्पित्तयस्स फुडीकरअणुसुचारणं वत्थस्सामो । तं जहा—  
 सपिणयासो दुबिहो—जह० उज्ज० । उज्जस्सं उज्जस्सत्तिविहचिमगो । णवरि भाणदादि  
 सम्बहुसिद्धिं मोघूणं बन्दि बन्दि सम्म -सम्मामि० सपिणयासित्तिवत्ति तन्दि तन्दि सिया  
 अत्थि, सिया णत्थि । जदि अत्थि, सिया संकममो सिया असंकममो । जदि संकममो,  
 किमुक्क० अणुक्क० ? पिपमा अणुक्क० अंतोवुत्तुणमार्दिं कादूणं जाव चरिमेणुब्बेत्तण-  
 कंडएणूणं ति । भाणदादि अणवेजजा पि त्तिविहचिमगो । णवरि अन्दि सम्म०-सम्मामि०  
 तन्दि सिया अत्थि सिया णत्थि । जह अत्थि, सिया संक० सिया असका० । जदि  
 संका० किमुक्क अणुक्क० ? उज्जस्सा वा अणुज्जस्सा वा । उज्जस्सादो अणुज्जस्स पत्थिदो०  
 अत्तसे माणुणमार्दिं कादूणं जाव चरिमेणुब्बेत्तणकंडएणूणं ति । अणुरिसादि सम्बहु पि  
 त्तिविहचिमगो ।

और बहुत अन्तर साधिक एक वर्ष होनेसे यहाँपर इन प्रकृतिबोके बचन्य स्थितिकमकथ बचन्य  
 अन्तर एक समय और बहुत अन्तर साधिक एक वर्ष कहा है । इस सम्बन्धमें कुछ विशेष  
 बचन्य है जो इसे स्थितिविमलिके भाग सेना चाहिए । नरुसकवेरके साथ अणुज्जस्सियार बहमेअ  
 बचन्य अन्तर एक समय और बहुत अन्तर वर्षद्वयत्व होनेसे यहाँ इसके बचन्य स्थितिकमकथ  
 बचन्य अन्तर एक समय और बहुत अन्तर वर्षद्वयत्व कहा है । शेष बचन सुगम है ।

⊙ यहाँपर सन्निकर्ष करना चाहिए ।

१ ६९१ इस स्थानपर सन्निकर्ष करना चाहिए इस प्रकार अस्मिन्प्रकारके बर्षके प्रतिपादन  
 करनेका यह बचन है । अब इस द्वारा कहे गये बर्षका स्पष्टीकरण करनेके लिए उदाहरणको  
 बतलाते हैं । कहा—सन्निकर्ष दो प्रकारका है—बचन्य और बहुत । उज्जस्स अंग बहुत स्थिति-  
 विमलिके समान है । इसी विशेषता है कि आमतसे लेकर सर्वाभिहितिकके दोनोंको जोकर  
 त्रिज-त्रिज प्रकृतिबोके साथ सम्बन्ध और सम्पत्तिप्यात्वका सन्निकर्ष करते हैं यहाँ-यहाँ  
 क्यप्रित्ति ये दोनों प्रकृतिबोके और कथाचित् नहीं हैं । यदि हैं तो कथाचित् संकमक होता है  
 और कथाचित् असंकमक होता है । यदि संकमक होता है तो क्या बहुत स्थितिक संकमक  
 है वा अनुकृत स्थितिक संकमक है ? नियमसे अन्तर्गृहीत कम बहुत स्थितिके लेकर अन्तिय  
 बहमेअणुज्जस्से स्थूल स्थितिक अनुकृत स्थितिक संकमक होता है । आमतसे लेकर जो मैनेयक  
 एक स्थितिविमलिके समान अंग है । इसी विशेषता है कि त्रिसके साथ सम्बन्ध और  
 सम्पत्तिप्यात्वका सन्निकर्ष करते हैं यहाँ ये दोनों प्रकृतिबोके कथाचित् हैं और कथाचित् नहीं हैं ।  
 यदि हैं तो वह इनका कथाचित् संकमक है और कथाचित् असंकमक है । यदि संकमक है तो  
 क्या बहुत स्थितिक संकमक है वा अनुकृत स्थितिक संकमक है ? अपनी बहुत स्थितिक मी  
 संकमक है और अनुकृत स्थितिक मी संकमक है । यदि अनुकृत स्थितिक संकमक है तो वह  
 बहुत स्थितिकी अणुजा पत्थके अत्तकथात्तसे माणसे स्थूल अनुकृत स्थितिके लेकर अन्तिय बहमेअ  
 कथात्तसे स्थूल एककी स्थितिक संकमक है । अनुदिरात्ते लेकर सर्वाभिहितिक एक स्थितिविमलिके  
 समान अंग है ।

§ ६९२, जहणणए पयदं । दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० जह० द्विदिसंक्रमेत्तो सम्म०-सम्मामि०-वारसक०-णवणोक० किं जह० अजह० ? णियमा अज० असंखे०गुणब्भहियं । सम्म० जह० द्विदिसंका० २१पयडीणं णियमा अज० असंखे०गुणब्भहियं । सम्मामि० जह० द्विदिसंका० सम्म०-वारसक०-णवणोक० णियमा अज० असंखे०गुणब्भहियं । अणंताणु०कोह० जह० द्विदिसंका० २४पयडीणं णियमा अज० असंखे०गुणब्भहियं । तिण्हं कसायाण णियमा जहण्णं । एवं तिण्हमणंताणु०कसायाणं । अपच्चक्खाणकोह० जह० द्विदिसंका० ४ चदुसंज०-णवणोक० णियमा अज० असंखे०गुणब्भहियं । सत्तकसायाणं णियमा जहण्णं । एव सत्तकसायाणं । णउंसयवे० जह० द्विदिसंका० इत्थिवेद० णियमा जहण्णं । छण्णोक०-पुरिसवेद०-चदुसंज० णियमा अज० असंखे०गुणब्भ० । इत्थिवेद० जह० द्विदिसंकामयस्स णवुंस० सिया अत्थि सिया णत्थि । जेइ अत्थि णियमा जह० । सत्तणोक०-चदुसंज० णियमा अज० असंखे०गुणब्भहियं । हस्सस्स जह० द्विदिसंका० पुरिसवे० तिण्हं संजलणाणं णिय० अज० संखे०गुणब्भहियं । लोहसंज० णिय० अज० असंखे० गुणब्भहियं । पंचणोक० णियमा जह० । एवं पंचणोक० । पुरिसवेद० जह० द्विदिसंका०

§ ६९२ जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका संक्रम करनेवाला जीव सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी क्या जघन्य स्थितिका संक्रामक होता है या अजघन्य स्थितिका संक्रामक होता है ? नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका संक्रामक जीव २१ प्रकृतियोंकी नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका संक्रामक जीव सम्यक्त्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका संक्रामक जीव २४ प्रकृतियोंकी नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कषायोंकी नियमसे जघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । इसी प्रकार मान आदि तीन अनन्तानुबन्धी कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष होता है । अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिका संक्रामक जीव चार संज्वलन और नौ नोकषायोंकी नियमसे असंख्यातगुणी अजघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । सात कषायोंकी नियमसे जघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । इसी प्रकार सात कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष होता है । नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिका संक्रामक जीव स्त्रीवेदकी नियमसे जघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । छह नोकषाय, पुरुषवेद और चार संज्वलनकी नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिके संक्रामक जीवके नपुंसकवेद कदाचित् है और कदाचित् नहीं है । यदि है तो वह नपुंसकवेदकी नियमसे जघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । सात नोकषाय और चार संज्वलनकी नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । हास्यकी जघन्य स्थितिका संक्रामक जीव पुरुषवेद और तीन संज्वलनकी नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । लोभसंज्वलनकी नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । तथा पाँच नोकषायोंकी नियमसे जघन्य स्थितिका संक्रामक होता है । इसी प्रकार पाँच नोकषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिका संक्रामक जीव

ठिणह सञ्चल० गियमा अञ्च० संखे गुणम्महियं । सोमसञ्चल० गिय० अञ्च०  
 असखे गुणम्म० । कोहसञ्चल० जह० द्विदिसञ्च० दोण्हं सञ्चल० गियमा अञ्च०  
 संखे० गुणम्म० । सोमसञ्च० पि० अञ्च० असंखे० गुणम्म० । माणसञ्च० जह०  
 द्विदिसञ्च० मायासञ्च० गिय० अञ्च० सखे० गुणम्म० । सोमसञ्च० गियमा अञ्च०  
 असंखे० गुणम्महियं । मायासञ्च० जह० द्विदिसञ्च० सोमसञ्च० पि० अञ्च० असंखे०  
 गुणम्म० । सोहसञ्च० जह० द्विदिसञ्च० सम्बपयडीणमसंक्रामओ ।

१६०३ आदेसेण जेत्थय मिच्छ० जह० द्विदिसञ्च० सम्मत्तस्स सिपा कम्मसिओ  
 सिपा ण । जह० कम्मसिओ संक्रामओ । अह० संक्रामओ, किं जह० अञ्च० ? गियमा अञ्च०  
 असखे० गुणम्म० । सम्मामि० सिपा कम्मसिओ सिपा ण । जह० कम्मसिओ सिपा  
 संक्रामओ । जह० संख०, किं जह० अञ्च० ? त तु षट्ठ्ठाणपदिद् । सेत द्विदिविहचि-  
 मंगो । सम्मत्त-सम्मामि०-अर्थतापु०४ सण्णियासो वि द्विदिविहचिमंगेष जेयम्मो ।  
 अपञ्चकलाणकोह० जह० द्विदिसञ्च० सम्मत्त-सम्मामि० मिच्छत्तमंगो । सेतं द्विदि-  
 विहचिमंगो । एवमेकारसञ्च० । णवणो कृत्वापाण द्विदिविहचिमंगो । षडरि सम्मत्त

तीन संस्कारनोंकी नियमसे संस्काराणुषी अधिक अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक होता है । तथा  
 सोमसंस्कारनोंकी नियमसे असंस्काराणुषी अधिक अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक होता है । लोक-  
 संस्कारनोंकी अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक नीचे दो संस्कारनोंकी नियमसे संस्काराणुषी अधिक अत्राप्य  
 स्थितिक्र संश्रमक होता है । तथा सोमसंस्कारनोंकी नियमसे असंस्काराणुषी अधिक अत्राप्य  
 स्थितिक्र संश्रमक होता है । मानसंस्कारनोंकी अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक नीचे मानासंस्कारनोंकी  
 नियमसे संस्काराणुषी अधिक अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक होता है । तथा सोमसंस्कारनोंकी नियमसे  
 असंस्काराणुषी अधिक अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक होता है । मायासंस्कारनोंकी अत्राप्य स्थितिक्र  
 संश्रमक नीचे सोमसंस्कारनोंकी नियमसे असंस्काराणुषी अधिक अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक  
 होता है । सोमसंस्कारनोंकी अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक नीचे सब प्रकृतियोंका असंश्रमक होता है ।

१६६१ आदेससे मात्थिअमिं मिच्छात्तकी अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक नीचे सम्बत्तका  
 कदाचित् कर्माधिक है और कदाचित् अकर्माधिक है । यदि कर्माधिक है तो कदाचित् संश्रमक है ।  
 यदि संश्रमक है तो क्या अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक है या अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक है ? नियमसे  
 असंस्काराणुषी अधिक अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक है । सम्बत्तमिच्छात्तका कदाचित् कर्माधिक है  
 और कदाचित् नहीं है । यदि कर्माधिक है तो कदाचित् संश्रमक है । यदि संश्रमक है तो क्या  
 अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक है या अत्राप्य स्थितिक्र संश्रमक है ? वह अनुस्मानपठित है । जेय मङ्ग  
 स्थितिविमत्तिके समान है । सम्बत्त, सम्बत्तमिच्छात्त और अतन्नाणुषीचतुहइय सन्निकर्त की  
 स्थितिविमत्तिके मंगके समान ले जाना चाहिए । अत्राप्यकामात्तकमंगकी अत्राप्य स्थितिके  
 संश्रमकके सम्बत्त और सम्बत्तमिच्छात्तक मंग मिच्छात्तके समान है । जेय मंग स्थितिविमत्तिके  
 समान है । इसी प्रकार म्यात्त कथाओंकी सुकपत्तासे सन्निकर्त जानना चाहिए । जो जो कथाओंका  
 मंग स्थितिविमत्तिके समान है । किन्तु इतनी विवेचना है कि सम्बत्त और सम्बत्तमिच्छात्तके

सम्मामिच्छत्तेण सह जहा णोदाणि तथा णेदब्बाणि । एवं पढमाए पुढवीए । तिरिक्खेसु एवं चेव । णवरि वारसक० जह० द्विदिसंका० भय-दुगुंछ० णियमा संका० । तं तु समयत्तरमादिं कादूण जाव आवलियव्भहियं ति । भय-दुगुंछ० जह० द्विदिसंका० मिच्छ०-वारसक० । तं तु अज० असंखे०भागव्भहियं । णत्थि अण्णो वियप्पो ।

§ ६९४. विद्यादि जाव सत्तमा त्ति द्विदिविहत्तिभंगो । णवरि अणंताणु०४ जह० द्विदिसंका० मिच्छ०-वारसक०णवणोक० णियमा अज० संखेज्ज०भागव्भहियं । पंचि०तिरिक्ख०तिय० पढमपुढविभंगो । णवरि भय-दुगुंछा० जह० द्विदिसं० मिच्छ०-वारसक० तं तु अज० असंखे०भागव्भ० संखे०भागव्भ० णत्थि । जोणिणीसु सम्मत्त० सम्मामिच्छत्तभंगो । पंचि०तिरिक्ख०अपज्ज० जोणिणीभंगो । णवरि अणंताणु०४ सह कसाएहि भणियव्वं । एवं मणुसअपज्ज० ।

§ ६९५. मणुसतिए ओघं । णवरि मणुसिणीसु इत्थिवेद० जहण्णद्विदिसंका० णउंसय० णत्थि । णउंस० जह० द्विदिसंका इत्थिवेद० णियमा अज० असंखे०गुणव्भ० । पुरिसवेदस्स छण्णोक०भंगो । देवाणं णारयभंगो । एवं भवण०-वाणवें० । णवरि

साथ जिस प्रकार ले गये हैं उस प्रकार ले जाना चाहिए । इसी प्रकार पहिली पृथिवीमें जानना चाहिए । तिर्यञ्चोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि बारह कषायोंकी जघन्य स्थितिका संक्रामक जीव भय और जुगुप्साका नियमसे संक्रामक है । किन्तु वह एक समय अधिकसे लेकर एक आवलि अधिक तक स्थितिका संक्रामक है । भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिका संक्रामक जीव मिथ्यात्व और बारह कषायोंका नियमसे संक्रामक है । किन्तु वह असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक है । यहाँ अन्य विकल्प नहीं है ।

§ ६९४. दूसरीसे सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें स्थितिविभक्तिके समान भङ्ग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिका संक्रामक जीव मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक है । पञ्चन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें प्रथम पृथिवीके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिका संक्रामक जीव मिथ्यात्व और बारह कषायोंकी जघन्य स्थितिका भी संक्रामक है और अजघन्य स्थितिका भी संक्रामक है । यदि अजघन्य स्थितिका संक्रामक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक है । संख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक नहीं है । योनिनी तिर्यञ्चोंमें सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कके साथ कषायोंको कहना चाहिए । इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें कहना चाहिए ।

§ ६९५ मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यनियोंमें स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिके संक्रामक जीवके नपुसकवेद नहीं है । नपुसकवेदकी जघन्य स्थितिका संक्रामक जीव स्त्रीवेदकी नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका संक्रामक है । पुरुषवेदका भंग छह नोकषायोंके समान है । देवोंमें नारकियोंके सम्पन्न भंग है । इसी प्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वका भंग



सम्म० सम्मामि० मंगो । जोदिसि० विदियपुढविमंगो । सोहम्मादि आव सम्बद्धा चि  
 द्विदिविहचिमंगो । एव चात्र ।

‡ ६९६ भावो सम्बत्थ ओद्धयो भावो ।

⊗ अप्पायहुत्थं ।

‡ ६९७ द्विदिसकमस्त अहण्णुकस्तमेयमिण्णस्त अप्पायहुत्थमिदाणि वत्थस्सामो

चि पत्तजावक्खमेदमहिपारसमालपवयणं वा । त पुण दुविहमप्पायहुत्थं अहण्णुकस्तद्विदि  
 संकमयञ्जीविसयं अहण्णुकस्तसंकमद्विदिसय चेदि । एत्थ जीवप्पायहुत्थपत्तजा  
 सुगमा चि तमपरुविय द्विदिअप्पायहुत्थमेव परुवेमाणो सुत्तपुत्तमाह—

⊗ सम्बत्थोवो प्पववोक्कसापाय्पमुत्थस्तद्विदिसकमा ।

‡ ६९८. द्विदिअप्पायहुत्थ दुविह अहण्णुकस्तद्विदिसयभेदेण । तत्पुत्तसे ताव  
 पयदं । तस्स दुविहोणिहेसो—ओपेणादेसेण य । तत्त्वोपेण णववोक्कसापाय्प-  
 मुत्थस्तद्विदिसकमो एवमि मण्णमाथासेसुकस्तद्विदिसकमपद्विदपदेहेतो घोवयो  
 चि उत्तं हेत्तं । एदस्स पमाय पवसकमभोदयावलिपादि परिहीणवास्सीससागरोवम  
 कोडाकोट्टियेत्तं ।

⊗ सोत्तसकसापाय्पमुत्थस्तद्विदिसकमो चिसेसाहिओ ।

‡ ६९९. इदो ! दोआवलिउभवास्सीससागरोवमकोडाकोट्टियमाणत्तो ।

सम्पत्तिपुस्तके समान है । अतोपि वेदोंमें दूसरी धूमिलीके समान अंग है । सौवर्ग स्वर्गसे लेकर  
 सर्वावसिद्धिउत्तके वेदोंमें स्थितिनिमित्तके समान अंग है ।

‡ ६६९ याव सर्वत्र ओदविक याव है ।

⊗ अल्पबहुत्वका प्रकरण है ।

‡ ६६७. अल्प और बहुत्व भेदरूप प्रकृत स्थितिसंक्रमके अल्पबहुत्वको इस समक वतछाते  
 हैं इस प्रकार वह प्रथिदा वाच्य है वा अविचारपी सम्हाल करमेवात्थ वचन है । वह अल्पबहुत्व  
 दो प्रकारका है—प्रथम्य और बहुत्व स्थितिके संक्रमक जीवोंके विषय करमेवात्थ और अल्प  
 और बहुत्व स्थितिसंक्रमके विषय करमेवात्थ । इनमेंसे जीव अल्पबहुत्वका कथन सुगम है इसलिये  
 वसथ कथन न करके स्थिति अल्पबहुत्वका ही कथन करते हुए आगेके सूत्रको करते हैं—

⊗ नो नोक्कपायोक्क उत्तुट्ठ स्थितिसंक्रम एवसे स्तोक है ।

‡ ६६८. अल्प और बहुत्व स्थितिके विषय करमेवात्थ होअसे स्थिति अल्पबहुत्व दो  
 प्रकारका है । इनमेंसे सर्वप्रथम बहुत्व ही प्रकरण है । वसथ निरंतर दो प्रकारका है—ओप और  
 प्यहेरा । इनमेंसे ओपसे भी वाक्कपायोक्क बहुत्व स्थितिसंक्रम आगे वह आनवासे बहुत्व स्थिति-  
 संक्रमके सम्पन्न रत्तमवासे वहाँपी अत्रथा स्तोत्तर है यह वत्थ कथनका वात्सर्व है । इसका प्रमाण  
 वन्थावत्ति, संकमावत्ति और वदवारत्तिसे मूल वास्सीस कोडाकोट्टी सागरपत्तज है ।

⊗ उमस सोत्तइ कपायोक्क उत्तुट्ठ स्थितिसंक्रम विन्नेप अधिक है ।

‡ ६६९. क्योंकि वह दो व्यावधिकम वास्सीस कोडाकोट्टी सागरपत्तज है ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छुत्ताणमक्कस्सट्टिदिसंकमो तुल्लो विसेसाहिओ ।

§ ७००. एदेसिमुक्कस्सट्टिदिसंकमो अंतोमुहुत्तूणसत्तरिसागरो०कोडाकोडीमेत्तो । एसो वुण कसायाणमुक्कस्सट्टिदिसंकमादो विसेसाहिओ । केत्तियमेत्तेण ? अंतोमुहुत्तूण-तीसंसागरो०कोडाकोडीमेत्तेण ।

❀ मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्टिदिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ७०१. कुदो ? बंधोदयावलिऊणसत्तरिकोडाकोडीसागरोवमपमाणत्तादो । एत्थ विसेसपमाणमंतोमुहुत्तं ।

एवमोघाणुगमो समत्तो ।

❀ एवं सव्वासु गर्हसु ।

§ ७०२. सव्वासु णिरयादिगदीसु एवं चेव उक्कस्सट्टिदिसंकमप्पावहुअपरूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो त्ति उत्तं होइ । णवरि पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० सोलसक०-णवणोक० उक्कस्सट्टिदिसंकमो सरिसो थोवो । सम्म०-सम्मामि० उक्कस्स-ट्टिदिसं० सरिसो विसे० । मिच्छ० उक्क०ट्टिदिसं० विसेसाहिओ । आणदादि जाव सव्वहु त्ति सोलसक०-णवणोक० उक्कस्सट्टिदिसं० तुल्लो थोवो । मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० उक्क०

\* उससे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम परस्पर तुल्य होकर विशेष अधिक है ।

§ ७०० क्योंकि इनका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अन्तर्मुहूर्त कम सत्तर कोडाकोडीसागरप्रमाण है । यह कषायोंके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमसे विशेष अधिक है । कितना अधिक है ? अन्तर्मुहूर्त कम तीस कोडाकोडी सागर अधिक है ।

\* उससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७०१ क्योंकि यह बन्धावलि और उदयावलिसे न्यून सत्तर कोडाकोडीसागरप्रमाण है । यहाँपर विशेषका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त है ।

इस प्रकार ओघानुगम समाप्त हुआ ।

\* इसी प्रकार सब गतियोंमें अल्पबहुत्व है ।

§ ७०२. नरकादि-सब गतियोंमें इसी प्रकार उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करनी चाहिए, क्योंकि ओघसे इस प्ररूपणामें विशेषता नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । किन्तु इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम परस्पर सदृश होकर सबसे स्तोत्र है । उससे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम परस्पर सदृश होकर विशेष अधिक है । उससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । आनतसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम परस्पर तुल्य होकर सबसे स्तोत्र है । उससे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम परस्पर तुल्य होकर विशेष अधिक है । यह

सम्म० सम्मामि० मंगो । जोदिसि० विदियपुढविमंगो । सोहम्मादि जाव सव्यहा चि  
द्विदिविहचिमंगो । एव जाव ।

§ ६९६ मावो सव्यत्व जोद्वयो मावो ।

⊗ अप्यावहुअ ।

§ ६९७ द्विदिसंक्रमस्त जहण्णुक्कस्तमेयमिणस्त अप्यावहुअमिदाणि बच्चस्सामो  
चि पत्थावकमेदमाहियारसंमालजवयज वा । तं पुण दुविहमप्यावहुअं जहण्णुक्कस्तद्विदि  
संक्रमयवीवविसयं जहण्णुक्कस्तसकमद्विदिविसयं वेदि । तस्य जीवप्यावहुअपरुज्जा  
सुगमा चि तमपरुविय द्विदिवप्यावहुअमेव परुवेमाणो सुत्तुत्तरमाह—

⊗ सव्यत्योवो अजपोकसायावमुक्कस्तद्विदिसकमा ।

§ ६९८ द्विदिवप्यावहुअ दुविह जहण्णुक्कस्तद्विदिविसयमेदेष । तस्युक्कस्से ताव  
पयदं । तस्य दुविहोणिदेसो—जोवेणादेसेव य । तस्योमेव णवपोकसायाण-  
मुक्कस्तद्विदिसंक्रमो तवरि मण्णमाणासेमुक्कस्तद्विदिसंक्रमपडिपडपदेहिंते जोवपरो  
चि तव होइ । एदस्य पमासं पघसंक्रमणोदयावलिपारि परिहीणवाठीससागरोबम  
कोटाकोडिमेव ।

⊗ सोकसकसापावमुक्कस्तद्विदिसकमो विसेसाहिओ ।

§ ६९९ हुदो ! दोजावलिऊणवाठीससागरोबमकोटाकोडिपमाणत्तो ।

सम्बन्धित्वत्वे सम्बन्ध है । अस्तित्वादि शेषोंमें इतरी प्रकृतिके सम्बन्ध मंग है । सीबर्म स्वर्गसे लेकर  
सर्वावैसिद्धिकरने शेषोंमें स्थितिनिमित्तके सम्बन्ध मंग है ।

§ ६९९ मात्र सर्वत्र औपनिषद् मन्त्र है ।

⊗ अप्यवहुत्वका प्रकारण है ।

§ ६९९. अत्यन्त और उत्कृष्ट मेरुका प्रकृत स्थितिसंक्रमके अस्पष्टतुल्यको इस सम्बन्ध कहना  
है इस प्रकार यह प्रकृति काव्य है या अधिकारकी सहाय्य करनेवाला बन है । यह अस्पष्टतुल्य  
श्री प्रकारका है—अत्यन्त और उत्कृष्ट स्थितिके संशयका जीवोंके नियम करनेवाला और अत्यन्त  
और उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमके विषय करनेवाला । इनमेंसे जीव अस्पष्टतुल्यका कवन सुगम है इसलिये  
वसका कवन न करके स्थिति अस्पष्टतुल्यका ही कवन करते हुए आगेके सूत्रको करते हैं—

⊗ नौ नोकपायोंका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम सबसे स्तोत्र है ।

§ ६९८. अत्यन्त और उत्कृष्ट स्थितिके विषय करनेवाला होनेसे स्थिति अस्पष्टतुल्य हो  
प्रकारका है । इनमेंसे सर्वप्रथम उत्कृष्टता प्रकारण है । वसका निर्देश हो प्रकारका है—अत्यन्त और  
अपेक्षा । इनमेंसे जोसे ही नोकपायोंका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम आगे बढ़े करनेवाले उत्कृष्ट स्थिति-  
संक्रमसे सम्बन्ध रखनेवाले वहीही अत्यन्त स्तोत्रकार है यह वस कवनका तात्पर्य है । इसका प्रमाण  
अन्वयान्ति, संक्रामान्ति और अन्वयान्तिसे न्यून आन्वयान्ति कोकाकोही सागरप्रमाण है ।

⊗ उससे सोझ कपायोंका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ६९८. क्योंकि यह ही आधिक्य वाणीस कोकाकोही सागरप्रमाण है ।

§ ७०९. समयूणदोआवलिपरिहीणावाहापवेसादो ।

❀ कोहसंजलणस्स जहएणद्विदिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ७१०. कुदो ? आवाहूणवे०मासपमाणत्तादो ।

❀ जद्विदिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ७११. एत्थ विसेसपमाणं समयूणदोआवलियपरिहीणावाहामेत्तं ।

❀ पुरिसवेदस्स जहएणद्विदिसंकमो संखेज्जगुसो ।

§ ७१२. किंचूणवेमासेहितो अतोमुहुत्तूणद्ववस्साणं तहाभावस्स णायोववण्णत्तादो ।

❀ जद्विदिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ७१३. सुगमं ।

❀ छण्णोकसायाणं जहएणद्विदिसंकमो संखेज्जगुणो ।

§ ७१४. समयूणदोआवलियपरिहीणद्ववस्सेहितो छण्णोकसायचरिमद्विदिसडयस्स संखेज्जवस्ससहस्सपमाणस्स संखेज्जगुणत्ताविरोहादो ।

❀ इत्थि-एवुंसयवेदाणं जहएणद्विदिसंकमो तुल्लो असंखेज्जगुणो ।

§ ७१५. कुदो ? पलिदोवमासंखभागपमाणत्तादो ।

❀ अद्वण्हं कसायाणं जहएणद्विदिसंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ ७०६ क्योकि इसमें एक समय कम दो आवलिसे हीन आवाधाकालका प्रवेश हो गया है ।

\* उससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७१० क्योकि यह आवाधासे हीन दो मासप्रमाण है ।

\* उससे यत्स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७११ यहाँ पर विशेषका प्रमाण एक समय कम दो आवलिसे हीन आवाधामात्र है ।

\* उससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम संख्यातगुणा है ।

§ ७१२ क्योकि कुछ कम दो माहसे अन्तर्मुहूर्तकम आठ वर्षका उस प्रकारका होना न्यायसंगत है ।

\* उससे यत्स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७१३ यह सूत्र सुगम है ।

\* उससे छह नोकषायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम संख्यातगुणा है ।

§ ७१४ क्योकि एक समय कम दो आवलियोंसे हीन आठ वर्षोंसे संख्यात हजार वर्ष-प्रमाण छह नोकषायोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकके संख्यातगुणे होनेमें कोई विरोध नहीं है ।

\* उससे स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम परस्पर तुल्य होकर भी असंख्यातगुणा है ।

§ ७१५. क्योकि यह पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

\* उससे आठ कषायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

द्विविधं तु त्तो विसेसाहिभ्यो । एतो च विसेसो मुगमो चि सुचयारेण ण परुविदो ।  
एवं चाब० ।

⊗ एतो अहण्य ।

§ ७३ मुगमं ।

⊗ सम्पत्पोषा सम्मत्-लोहसंअल्लणाय अहण्यद्विविधकमो ।

§ ७०४ एयद्विदिपमाणत्वात् ।

⊗ अद्विविधकमो असंख्येऽगुणो ।

§ ७०५ समयाहियावस्त्रियपमाणत्वात् ।

⊗ मायाय अहण्यद्विविधकमो सख्येऽगुणो ।

§ ७०६ आवाहापरिहीण्यमासपमाणत्वात् ।

⊗ अद्विविधकमो विसेसाहिभ्यो ।

§ ७०७ क्षेत्रियमेतेण ? समपूण्यदोआवस्त्रियपरिहीण्यमाहामेतेण ।

⊗ मायसजलपयस्त अहण्यद्विविधकमो विसेसाहिभ्यो ।

§ ७०८ समपूण्यदोआवस्त्रियपूण्यमासादो अतोऽहण्यमासस्तेदस्त तदविरोहादो ।

⊗ अद्विविधकमो विसेसाहिभ्यो ।

विशेष सुगम है, इति स्वि सूत्रफाले इसका कन्त नहीं किया । इसी प्रकार अनाहारक मार्गका एक बानना अधिर ।

⊗ आगे अपन्यका प्रकरण है ।

§ ७०१ यह सूत्र सुगम है ।

⊗ सम्पत्त्व और लोमसन्वत्कनका अपन्य स्थितिसंक्रम सप्तसे स्तोत्र है ।

§ ७०२ क्योंकि यह एक स्थितिप्रमाण है ।

⊗ उससे यत्स्थितिसंक्रम असंख्यात्गुणा है ।

§ ७०३ क्योंकि यह एक समय अधिक एक आशक्तिप्रमाण है ।

⊗ उससे मायाका अपन्य स्थितिसंक्रम असंख्यात्गुणा है ।

§ ७०४ क्योंकि यह आवाहासे हीन अर्धमास प्रमाण है ।

⊗ उससे यत्स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७०५ किटना अधिक है ? एक समक कम दो आशक्तिसे हीन आवाहाकास प्रमाण अधिक है ।

⊗ उससे मानसन्वत्कनका अपन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७०६ क्योंकि एक समय कम दो आशक्तिसे हीन अर्धमाससे अन्तर्मुहूर्तक्रम एक मन्त्रक विशेष अधिक हानमें विशेष नहीं आता ।

⊗ उससे यत्स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

संकमप्पावहुअ परूवेदुमुवरिमसुत्तपवंधमाह—

❁ णिरयगईए सव्वत्थोवो सम्मत्तस्स जहणणद्विदिसंकमो ।

§ ७२०. कदकरणिज्जोववादं पडुच्च एयद्विदिमेत्तो लब्भइ त्ति सव्वत्थोवत्तमेदस्स भाणिदं ।

❁ जद्विदिसंकमो असंखेज्जगुणो ।

. ७२१. सुगमं ।

❁ अणंताणुवंधीणं जहणणद्विदिसंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ ७२२. कुदो ? पल्लिदोवमामंखभागपमाणत्तादो ।

❁ सम्मामिच्छत्तस्स जहणणद्विदिसंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ ७२३. कुदो ? उव्वेल्लणाचरिमफालीए जहणणभावोवल्लद्वीदो । एत्थतणी पल्लिदोवमासंखभागायामा चरिमफाली अणंताणुवंधिविसंजोयणाचरिमफालिआयामादो असंखेज्जगुणा, तत्थ करणपरिणामेहि घादिदावसेसस्स एत्तो थोवत्तसिद्धीए णाहत्तादो ।

❁ पुरिसवेदस्स जहणणद्विदिसंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ ७२४. कुदो ? हदसमुत्पत्तिकम्मियासण्णिपच्छायदणेइयम्मि अंतोमुहुत्त-  
तवभवत्थम्मि पल्लिदोवमस्स संखेज्जदिभागेणूणसागरोवमसहस्सचदुसत्तभाममेत्तपुरिसवेद-  
जहणणद्विदिसंकमावलंवाणदो ।

नरकगतिसे प्रतिवद्द जघन्य स्थितिसंक्रम अल्पवहुत्वका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

\* नरकगतिमें सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रम सबसे स्तोक है ।

§ ७२०. कृतकृत्यके उपपादकी अपेक्षा एक स्थितिप्रमाण उपलब्ध होता है, इसलिए इसे सबसे स्तोक कहा है ।

\* उससे यत्स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ ७२१ यह सूत्र सुगम है ।

\* उससे अनन्तानुबन्धियोंका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ ७२२ क्योंकि यह पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

\* उससे सम्यग्भिध्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ ७२३ क्योंकि यहाँपर उद्वेल्लनाकी अन्तिम फालि जघन्यरूपसे उपलब्ध होती है । पल्यके असंख्यातवें भागरूप आयामवाली यह फालि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी अन्तिम फालिके आयामसे असंख्यातगुणी है, क्योंकि वहाँ पर करणपरिणामोंसे घात करनेसे शेष बचा जघन्य स्थितिसंक्रमका इससे स्तोक सिद्ध होना न्यायप्राप्त है ।

\* पुरुषवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ ७२४. क्योंकि जो हतसमुत्पत्तिक कर्मवाला असंज्ञी जीव मरकर नारकी हुआ है उसके तद्भवस्थ होनेके अन्तर्मुहूर्त होने पर पल्यके संख्यातवें भागसे न्यून एक हजार सागरके सात भागोंमेंसे चार भागप्रमाण पुरुषवेदके जघन्य स्थितिसंक्रमका अवजम्बन लिया है ।

१७१६ तं क्व ? इत्य-गुस्यवेदानं चरिमद्विदित्वायामादो बुचरिम-  
द्विदित्वायामो असखेऽगुणो । एव बुचरिमादो विचरिमद्विदित्वायामसखेऽगुणं ।  
विचरिमादो चबुचरिममिदि एदण कमेण सखेऽद्विदित्वायामसखेऽगुणो हेद्वा ओसरिय  
अतरकअप्पारमादो पुम्भमेव अद्द कसाया खविदा । तेण अरणेणेदेसि चरिमद्विदित्वाय-  
चरिमअत्ती त्तो असखेऽगुणा आदा ।

⊙ सम्मामिच्छत्तस्स जहपणद्विदिसकमो असखेऽगुणो ।

१७१७ चारिचमोहकखयपरिणामेहि पादिदावसेसो अद्दकसायाणं अहण्णद्विदि  
सकमो । एसो गुण त्तो अणतगुणहीणविसोहिदंअणमोहकखयपरिणामेहि पादिदावसेसो  
त्ति । त्तो एदस्सासंखेऽगुणमभ्यामोहेण पडिअत्तेपय्यं ।

⊙ मिच्छत्तस्स जहपणद्विदिसकमो असखेऽगुणो ।

१७१८ इदो ! मिच्छत्तस्सवणादो अंतोसुहृत्तुवरि गत्तूण सम्मामिच्छत्तस्स  
अहण्णद्विदिसकमपत्तिदंसादा ।

⊙ अयंताणुषंपीयं जहपणद्विदिसकमो असखेऽगुणो ।

१७१९ इदो ! विसजोयणापरिणमेहिदो दत्तणमोहकखयपरिणामाणमणंत  
गुणत्तेण मिच्छत्तचरिमअत्तीदो अणंताणुषविचरिमअत्तीए असखेऽगुणविरोहामावादो ।  
एवं ताव ओषण अहण्णद्विदिसकमपत्तिदंसादा पक्खिय एत्तो भिरयगइपत्तिदंअहण्णद्विदि

१७१९ सो कैसे ? कीरेव ओर मयुसकअइके अन्तिम स्थितिसकम असायातगुणा है ।  
स्वित्तिसकम असाया असखेऽगुणा है । इसी प्रकार विचरमसे विचरम स्थितिसकम असाया  
असखेऽगुणा है । विचरमसे चतुसखम इस प्रकार इस कमेसे संख्यत इबार स्वित्तिसकम नीचे  
जाकर अन्तरकमेसे प्रारम्भसे पूर्व ही आठ कल्प कपको प्राप्त हुए हैं । इस कारणसे इनके अन्तिम  
अन्तरकमे अन्तिम फलके कीरेव ओर नपु सकअइके अपत्य स्थितिसकमसे विद्यप अधिक  
हो जाती है ।

⊙ सम्मामिच्छत्तस्स अपन्य स्थितिसकम असस्पातगुणा है ।

१७२० क्योंकि चरिमोहकअइके परिणामोंसे आठ कल्पसे अप तथा बुध्य आठ कथाओंअ  
अपत्य स्थितिसकम है और यह तो इनसे अनन्तगुणे हीन दारुणोहकअइके परिणामोंसे आठ  
कल्पसे अप तथा बुध्य अपन्य स्थितिसकम है । इसलिये वृत्तसे इसे असखेऽगुणा अयमोहके  
बिना आनन्द अधिय ।

⊙ अससे सिध्पात्तस्स अपन्य स्थितिसकम असस्पातगुणा है ।

१७२१ क्योंकि सिध्पात्तस्स अपन्यसे अन्तर्मुहूर्त अन्तर जाकर सम्मामिच्छत्तस्सके अपन्य  
स्थितिसकमको वरपि देखी जाती है ।

⊙ अससे अनन्तानुबन्धियोक्क अपन्य स्थितिसकम असस्पातगुणा है ।

१७२२ क्योंकि विसंयोक्तव्यपरिणामोंसे दारुणोहकअइके परिणाम अनन्तगुण होनेसे  
सिध्पात्तस्सके अन्तिम फलसे अनन्तानुबन्धीकी अन्तिम फलके असखेऽगुणसे होनेमें कोई विरोध  
यहाँ है । इस प्रकार सर्वे प्रथम जोवसे अपन्य स्थितिसकम असखेऽगुणा कवन करके आगे

संकमप्पावहुअ परूवेदुमुवरिमसुत्तपबंधमाह—

❀ पिरयगईए सव्वत्थोवो सम्मत्तस्स जहएणडिदिसंकमो ।

§ ७२०. कदकरणिज्जोववादं पडुच्च एयडिदिमेत्तो लब्भइ त्ति सव्वत्थोवत्तमेदस्स भणिदं ।

❀ जडिदिसंकमो असंखेज्जगुणो ।

। ७२१. सुगमं ।

❀ अणंताणुबंधीणं जहएणडिदिसंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ ७२२. कुदो ? पलिदोवमासंखभागपमाणत्तादो ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स जहएणडिदिसंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ ७२३. कुदो ? उव्वेण्णणाचरिमफालीए जहण्णभावोवलद्वीदो । एत्थतणी पलिदोवमासंखभागायामा चरिमफाली अणंताणुबंधिविसंजोयणाचरिमफालिआयामादो असंखेज्जगुणा, तत्थ करणपरिणामेहि घादिदावसेसस्स एत्तो थोवत्तसिद्धीए णाइत्तादो ।

❀ पुरिसवेदस्स जहएणडिदिसंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ ७२४. कुदो ? हदसमुत्पत्तिकम्मियासणिपच्छायदणेरइयम्मि अंतोमुहुत्त- तव्ववत्थम्मि पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागेणूणसागरोवमसहस्सचदुसत्तभाममेत्तपुरिसवेद- जहण्णडिदिसंकमावलंणणादो ।

नरकगतिसे प्रतिवद्ध जघन्य स्थितिसंक्रम अल्पवहुत्तका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

\* नरकगतिमें सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रम सबसे स्तोक है ।

§ ७२०. कृतकृत्यके उपपादकी अपेक्षा एक स्थितिप्रमाण उपलब्ध होता है, इसलिए इसे सबसे स्तोक कहा है ।

\* उससे यत्स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ ७२१ यह सूत्र सुगम है ।

\* उससे अनन्तानुबन्धियोंका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ ७२२ क्योंकि यह पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

\* उससे सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ ७२३ क्योंकि यहाँपर उद्वेजनाकी अन्तिम फालि जघन्यरूपसे उपलब्ध होती है । पत्यके असंख्यातवें भागरूप आयामवाली यह फालि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी अन्तिम फालिके आयामसे असंख्यातगुणी है, क्योंकि वहाँ पर करणपरिणामोंसे घात करनेसे शेष बचा जघन्य स्थितिसंक्रमका इससे स्तोक सिद्ध होना न्यायप्राप्त है ।

\* पुरुषवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ ७२४. क्योंकि जो हतसमुत्पत्तिक कर्मवाला असंखी जीव मरकर नारकी हुआ है उसके तद्भवस्थ होनेके अन्तर्मुहूर्त होने पर पत्यके संख्यातवें भागसे न्यून एक हजार सागरके सात भागोंमेंसे चार भागप्रमाण पुरुषवेदके जघन्य स्थितिसंक्रमका अवलम्बन लिया है ।



१७१६ त कथ ? इति-गुरुसयवेदाण परिमङ्गित्खडपापामादो दुचरिम-  
ङ्गित्खडपापामो असत्संज्ञगुणो । एव दुचरिमादो तिचरिमङ्गित्खडपमसंज्ञगुण ।  
तिचरिमादो चदुचरिममिदि एदेण कमेच संज्ञेङ्गित्खडपसहस्राणि हेद्वा ओसरिप  
अतरकरमपातमादो पुम्भमेव अहु कसाया खविदा । तेण करणेणेदेसि परिमङ्गित्खडप  
चरिमफाली ठचो असत्संज्ञगुणा आदा ।

ॐ सम्मामिच्छत्तस्स जहण्यङ्गित्खडपसंज्ञमो असत्संज्ञगुणो ।

१७१७ चारिमोहकखवयपरिणामेहि पादिदावसेतो अहुकसायाज जहण्यङ्गित्खड  
संज्ञमो । एसो गुण ठचो अणतगुणहीचविसोहिदंसणमोहकखवयपरिणामेहि पादिदावसेतो  
चि । ठचो एदस्सासंज्ञगुणमन्वामोहेण पडिवज्जेपम् ।

ॐ मिच्छत्तस्स जहण्यङ्गित्खडपसंज्ञमो असत्संज्ञगुणो ।

१७१८ ह्यदो ? मिच्छत्तस्सवणादो अंतोद्गुहचमुवरि गत्तूण सम्मामिच्छत्तस्स  
जहण्यङ्गित्खडपसंज्ञगुणो ।

ॐ अर्थात्तुषुधधीर्यं जहण्यङ्गित्खडपसंज्ञमो असत्संज्ञगुणो ।

१७१९ ह्यदो ? विसत्तोपणापरिणामेहितो दंसणमोहकखवयपरिणामाणमणत  
गुणवेण मिच्छत्तचरिमफालीदो अर्थात्तुषुधधीर्यं अमसंज्ञगुणविरोहामादादो ।  
एव ताव ओपण जहण्यङ्गित्खडपसंज्ञमपावहुअ फरुविय एचो पिरयगत्तपडिवद्वजहण्यङ्गित्खड

१७१६ सो कैसे ? कीबेद और मयुसकबदके अन्तिम स्थितिक्रमके अन्वयसे त्रिचरम  
स्वित्खडपक आवाय असत्स्यातगुणा है । इसी प्रकार त्रिचरमसे त्रिचरम स्वित्खडपक आप्यम  
असत्स्यातगुणा है । त्रिचरमसे चतुस्रचरम इस प्रकार इस क्रमसे संकल्पत हवार स्वित्खडपक बीच  
आकर अन्तरकरके मारमसे पूर्व ही आठ कथ्य कथको प्राप्त हुए है । इस प्रकारसे इनके अन्तिम  
अवस्थाके अन्तिम अक्षि कीबेद और मयुसकबदके अपन्य स्वित्खडपकसे विशेष अधिक  
हो जाती है ।

ॐ सम्यग्मिध्यात्वका अपन्य स्वित्खडपक असत्स्यातगुणा है ।

१७१७ क्योंकि चरिमोहकखवयके परिणामोंसे पात करमसे कथ वचा हुआ आठ कथायोंके  
अपन्य स्वित्खडपक है और यह तो इनसे अनन्तगुणे हीन दर्शनमोहकखवयके परिणामोंसे पात  
करनेसे कथ वचा हुआ अपन्य स्वित्खडपक है । इसलिये इससे इसे असत्स्यातगुणा कहामाहके  
बिना जानन्य चाहिए ।

ॐ इससे सिध्यात्वका अपन्य स्वित्खडपक असत्स्यातगुणा है ।

१७१८ क्योंकि मिच्छत्तस्स वज्यासे अणुमुहूर्त इतर आकर सम्यग्मिध्यात्वके अपन्य  
स्वित्खडपककी वरुचि देवी जाती है ।

ॐ इससे अनन्तानुबन्धियोंके अपन्य स्वित्खडपक असत्स्यातगुणा है ।

१७१९ क्योंकि विसत्तोपणापरिणामोंसे दर्शनमोहकखवयके परिणाम अनन्तगुणे होनेसे  
मिध्यात्वकी अन्तिम अक्षिसे अनन्तानुबन्धीकी अन्तिम अक्षिके असत्स्यातगुणे होनेसे कर्षे विरोध  
वही है । इस प्रकार सर्वे कथमे अर्थात्तुषुधधीर्यं अमसंज्ञगुणविरोहामादादो

❀ एवुंसयवेदजहणणट्टिदिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ७२७. किं कारणं ? हस्स-रईणमरइ-सोगबंधगद्दा गालिदा । णवुंसयवेदस्स पुण एत्तो संखेज्जगुणहीणो पुरिसित्थिवेदबंधगद्दासमासो गालिदो । तम्हा अरदि-सोगबंधगद्दाए संखेजेहि भागेहि णवुंसयवेदजहणणट्टिदिसंकमो तत्तो विसेसाहिओ जादो । संदिट्ठीए तस्स पमाणमेदं ८४ ।

❀ अरइ-सोगाणं जहणणट्टिदिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ७२८. कारणमरइ-सोगाणं हस्स-रदिवंधगद्दामेत्तं गालिदं । णवुंसयवेदस्स पुण एत्तो विसेसाहियं इत्थि-पुरिसवेदबंधगद्दासमासमेत्तं गालिदं । तदो इत्थि-पुरिसवेदबंधगद्दा-समासे हस्स-रइबंधगद्दं सोहिय सुद्धसेसमेत्तेण विसेसाहियत्तमेत्थ दट्ठुव्वं । पयद-जहणणट्टिदिसंकमसंदिट्ठी एसा ८५ ।

❀ भय-जुगुंझाण जहणणट्टिदिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ७२९. केत्तियमेत्तो एत्थतणो विसेसो ? हस्स-रइबंधगद्दामेत्तो । कुदो एवं ? धुवबंधित्तेण पडिवक्खबंधगद्दागालणेण विणा लद्धजहणणभावत्तादो ।

❀ बारसकसायाणं जहणणट्टिदिसंकमो विसेसाहिओ ।

\* उससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७२७. कारण क्या है ? क्योंकि हास्य-रतिका जघन्य स्थितिसंक्रम लानेके लिए अरति-शोकका बन्धककाल गलाया गया है । परन्तु नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम लानेके लिए इससे सख्यातगुणां हीन पुरुषवेद-स्त्रीवेदके बन्धककालके जोड़ रूप कालको गलाया गया है, इसलिए नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम हास्य-रतिके जघन्य स्थितिसंक्रमसे विशेष अधिक हो गया है जो विशेष अधिकका प्रमाण अरति-शोकके सख्यात बहुभागरूप होता है । संदृष्टिसे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम ८४ है ।

\* उससे अरति-शोकका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७२८ क्योंकि अरति-शोकका जघन्य स्थितिसंक्रम लानेके लिए हास्य-रतिबन्धककालमात्र गला है । परन्तु नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम लानेके लिए इससे विशेष अधिक गला है, क्योंकि वह स्त्री-पुरुषवेदके बन्धककालका जो जोड़ हो तत्प्रमाण गला है, इसलिए स्त्री-पुरुषवेदके बन्धककालके जोड़मेंसे हास्य-रतिबन्धककालको घटाकर जो शेष रहे उतना विशेष अधिक यहाँ पर जानना चाहिए । इस प्रकार प्रकृत जघन्य स्थितिसंक्रमकी संदृष्टि यह ८५ है ।

\* उससे भय-जुगुप्साका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७२९ ९६ । यहाँ पर विशेषका प्रमाण कितना है ? यहाँ पर विशेषका प्रमाण हास्य-रतिके बन्धककालप्रमाण है ।

शंका—ऐसा क्यों है ?

समाधान—क्योंकि भय जुगुप्सा ध्रुवबन्धिनी प्रकृतियों हैं, इसलिए प्रतिपक्ष बन्धककालको गलाये बिना यहाँ जघन्य स्थितिसंक्रमपना प्राप्त हो जाता है ।

\* उससे बारह कपायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

⊗ इत्थिवेदे अहण्यद्विविसकमो विसेसाहिभ्यो ।

। ७२५ एत्वं कर्त्तव्यपञ्चममिमा ताव बभ्रगद्वागमप्याबहुज्विहासणा कीरदे ।

तं वाहा—सम्बन्धोवा पुरिसवेदबभ्रगद्वा ३ । इत्थिवेदबभ्रगद्वा सखेजगुणा ९ । इस्स-रदि बभ्रमद्वा विसेसाहिया ११ । अमुंसयवेदबभ्रगद्वा संखेजगुणा २२ । अरदि-सोर्गबभ्रगद्वा विसेसाहिया २३ । एदमप्याबहुं साहणं कर्त्तव्य पुरिसवेदअहण्यद्विविसकमादो इत्थिवेद अहण्यद्विविसकमस्स विसेसाहियचमेवमणुगतम्ब । तं क्व ? पुरिसवेदस्स, इत्थिव-गउसय-वेदबभ्रगद्वासमासो सदिद्वीप ३१, एधियमेचो गासिदो । एचो पुत्र विसेसहीणो पुरिस-णउसयवेदबभ्रगद्वासमासो संदिद्वी० एसो २५ । इत्थिवेदस्स गासिदो एवंपिहो पि पुरिसवेदबभ्रगद्वामित्थिवेदबभ्रगद्वाए सोहिय सुदसेसमेचेण विसेसाहियचमित्थिवेदअहण्य-द्विविसकमस्स बह्वुर्भ । सदिद्वीप सुदसेसपमानमेद ६ । एत्यागासिपपडिबकत्तवभ्रगद्वा नोकसायअहण्यद्विविसकमसंदिद्वी एसा ९६ । एचो पडिबकत्तवभ्रमद्वागाल्लणेण पुरिसवेद अहण्यद्विविसकमो एसो ६५ । एचो विसेसाहिओ इत्थिवेदस्स गाल्लिदावसेसो एसो ७१ ।

⊗ इस्स-रईष्य अहण्यद्विविसकमो विसेसाहिभ्यो ।

। ७२६ केधियमेचेण ? इत्थिवेदबभ्रमद्वासंखेजदिमागं पुरिसवेदबभ्रगद्वाए सोहिय सुदसेसमेचेण । सदिद्वीप तमेद २ । तेजाहिओ इस्स-रअहण्यद्विविसकमो एसो ७३ ।

⊗ उतसे कीवेदमे अथन्य स्थितिसंक्रम विधेय अधिक है ।

। ७२५ एहंर कर्त्तव्य क्वन कर्त्तव्ये द्विप क्वनकत्तव्ये इत्त अस्याबुत्तव्य सुत्तवा कर्त्तव्ये । ववा—पुरुषवेदक क्वनकत्तव्य सक्से स्तोत्र है । उतसे स्त्रीवेदक क्वनकत्तव्य संख्याठगुणा है ६ । उतसे इस्स-रद्विप क्वनकत्तव्य विधेय अधिक है ११ । उतसे नपु स्त्रीवेदक क्वनकत्तव्य संख्याठगुणा है २१ । उतसे अरदि-राकत्तव्य क्वनकत्तव्य विरोध अधिक है ९३ । इत्त अस्याबुत्तव्यो सावन कर्त्तव्य पुरुषवेदके अथन्य स्थितिसंक्रमसे कीवेदक अथन्य स्थितिसंक्रम विरोध अधिक ही जानना चाहिए ।

संज्ञ—यह कैसे ?

सुभाषान—कीवेद और नपुंसकवेदके क्वनकत्तव्य बोध संदृष्टिसे ३१ है । पुरुषवेदक अथन्य स्थितिसंक्रम करनेके द्विप इतना गणना है । परन्तु इससे विरोधीन पुरुषवेद और नपुंसक-वेदके क्वनकत्तव्य बोध है जो संदृष्टिसे यह ११ है । कीवेदक अथन्य स्थितिसंक्रम करनेके द्विप जो गणना गया यह इस प्रकार है, इसद्विप पुरुषवेदके क्वनकत्तव्यको कीवेदके क्वनकत्तव्यमेंसे षट्कार जो छेप बने कत्तवा विधेय अधिक कीवेदक अथन्य स्थितिसंक्रम जानना चाहिए । संदृष्टिसे षट्कार जो छेप बना इसका प्रमाण यह ६ है । एहंर नहीं गणने गने प्रतिपक्ष क्वनक कत्तव्ये साव नोकत्तव्ये अथन्य स्थितिसंक्रमकी संदृष्टि यह ९६ है । इसमेंसे प्रतिपक्ष क्वनकत्तव्यके गणनेसे पुरुषवेदक अथन्य स्थितिसंक्रम यह १५ प्राप्त होता है । इससे विरोध अधिक गणना कर सेन बना कीवेदक अथन्य स्थितिसंक्रम यह ७१ है ।

⊗ उतसे इस्स-रद्विप अथन्य स्थितिसंक्रम विधेय अधिक है ।

। ७२६ द्विप अधिक है ? कीवेदके क्वनकत्तव्यके संख्याठगुणां गणाको पुरुषवेदके क्वनकत्तव्यमेंसे षट्कार जो छेप बने कत्तवा अधिक है । संदृष्टिसे यह यह ९ है । कत्तवा विधेय अधिक इस्स-रद्विप अथन्य स्थितिसंक्रम यह ७३ है ।

❀ णवुंसयवेदजहणणद्विदिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ७२७. किं कारणं ? हस्स-रईणमरइ-सोगवंधगद्धा गालिदा । णवुंसयवेदस्स पुण एत्तो संखेज्जगुणहीणो पुरिसित्थिवेदवंधगद्धासमासो गालिदो । तम्हा अरदि-सोगवंधगद्धाए संखेजेहि भागेहि णवुंसयवेदजहणणद्विदिगंकमो तत्तो विसेसाहिओ जादो । संदिट्ठीए तस्स पमाणमेदं ८४ ।

❀ अरइ-सोगाणं जहणणद्विदिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ७२८. कारणमरइ-सोगाणं हस्स-रदिवंधगद्धामेत्तं गलिदं । णवुंसयवेदस्स पुण एत्तो विसेसाहियं इत्थि-पुरिसवेदवंधगद्धासमासमेत्तं गलिदं । तदो इत्थि-पुरिसवेदवंधगद्धा-समासे हस्स-रइवंधगद्धं सोहिय सुद्धसेसमेत्तेण विसेसाहियत्तमेत्थ दट्टुच्चं । पयद-जहणणद्विदिसंकमसंदिट्ठी एसा ८५ ।

❀ भय-जुगुंझाण जहणणद्विदिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ७२९. केत्तियमेत्तो एत्थतणो विसेसो ? हस्स-रइवंधगद्धामेत्तो । कुदो एवं ? ध्रुवंधित्तेण पडिवक्खवंधगद्धागालणेण विणा लद्धजहणणभावत्तादो ।

❀ धारसकसायाणं जहणणद्विदिसंकमो विसेसाहिओ ।

\* उससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७२७ कारण क्या है ? क्योंकि हास्य-रतिका जघन्य स्थितिसंक्रम लानेके लिए अरति-शोकका बन्धककाल गलाया गया है । परन्तु नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम लानेके लिए इससे सख्यातगुणा हीन पुरुषवेद-स्त्रीवेदके बन्धककालके जोड़ रूप कालको गलाया गया है, इसलिए नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम हास्य-रतिके जघन्य स्थितिसंक्रमसे विशेष अधिक हो गया है जो विशेष अधिकका प्रमाण अरति-शोकके सख्यात बहुभागरूप होता है । संदृष्टिसे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम ८४ है ।

\* उससे अरति-शोकका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७२८ क्योंकि अरति-शोकका जघन्य स्थितिसंक्रम लानेके लिए हास्य-रतिबन्धककालमात्र गला है । परन्तु नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम लानेके लिए इससे विशेष अधिक गला है, क्योंकि वह स्त्री-पुरुषवेदके बन्धककालका जो जोड़ हो तत्प्रमाण गला है, इसलिए स्त्री-पुरुषवेदके बन्धककालके जोड़मेसे हास्य-रतिबन्धककालको घटाकर जो शेष रहे उतना विशेष अधिक यहाँ पर जानना चाहिए । इस प्रकार प्रकृत जघन्य स्थितिसंक्रमकी सदृष्टि यह ८५ है ।

\* उससे भय-जुगुप्साका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७२९ ६६ । यहाँ पर विशेषका प्रमाण कितना है ? यहाँ पर विशेषका प्रमाण हास्य-रतिके बन्धककालप्रमाण है ।

शंका—ऐसा क्यों है ?

समाधान—क्योंकि भय जुगुप्सा ध्रुवबन्धिनी प्रकृतियाँ हैं, इसलिए प्रतिपक्ष बन्धककालको गलाये बिना यहाँ जघन्य स्थितिसंक्रमपना प्राप्त हो जाता है ।

\* उससे बारह कषार्योंका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।



कसाय-भय-दुगुंछाणं जहण्णद्विदिसंकमो णेरइएसु सरिसो चेव होइ, विदियविग्गहे गलिद-  
सेसजहण्णद्विदिसंतकम्मं कसाय-णोऋसायाणं समाणभावेणावद्विदं घेत्तूण पुणो वि  
आवलियमेत्तकालं गालिय दुसमयाहियावलियणेरइयम्मि जहण्णसामित्तविहाणादो ।

❀ मिच्छत्तस्स जहण्णद्विदिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ७३१. कुदो ? पलिदोवमसखेज्जभागूणसागरोवमसहस्सचदुसत्तभागमेत्तकसाय-  
जहण्णद्विदिसंकमादो किंचूणसागरोवमसहस्समेत्तमिच्छत्तजहण्णद्विदिसंकमस्स विसेसा-  
हियत्तदंसणादो । एवमेसो सुत्ताणुसारेण णिरओवो परूविदो । एत्तो उच्चारणाहिप्पाय-  
मस्सिऊण वत्तडस्सामो । तं जहा—

§ ७३२. णेरइएसु सन्वत्थोवो सम्मत्तं जहं द्विसंकं । जद्विदिसं० असं० गुणो ।  
अणंताणु० ४ जहं द्विदिमंकं० असंखे० गुणो । सम्मामि० जहं असंखे० गुणो ।  
पुरिसवेदं० जहं द्विदिसं० असंखे० गुणो । इत्थिवेदं० जहं द्विदिसं० विसेसाहिओ ।  
हस्स-रइं० जहं द्विदिसं० विसे० । अरदि-सोगं० जहं विसेसा० । णवुसं० जहं विसे० ।  
वारसकं०-भय-दुगुंछाणं जहं द्विदिसंकं० विसे० । मिच्छं० जहं द्विदिसं० विसेसाहिओ त्ति ।

§ ७३३. एत्थुवउजंतयमद्वप्पावहुअं । त जहा—सन्वत्थोवा पुरिसवेदवंधगद्दार् ।  
इत्थिवेदवंधगद्दार् संखेज्जगुणा ४ । हस्स-रइवंधगद्दार् सखेज्जगुणा १६ । अरदि-सोगवंधगद्दार्

समान ही होता है, क्योंकि कपायो और नोकपायोंके गल कर शेष रहे जघन्य स्थितिसत्कर्मको  
समानरूपसे अवस्थित ग्रहण कर तथा फिर एक आवलि कालको गलाकर नारकीके दो समय  
अधिक एक आवलि कालके अन्तमें जघन्य स्वामित्वाका विधान किया है ।

❀ उससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७३१ क्योंकि एक हजार सागरके पर्यके संख्यातवें भाग कम चार भागप्रमाण  
कपायोंके जघन्य स्थितिसंक्रमसे मिथ्यात्वका कुछ कम एक हजार सागरप्रमाण जघन्य स्थितिसंक्रम  
विशेष अधिक देखा जाता है । इस प्रकार यह सूत्रके अनुसार सामान्यसे नारकियोंमें जघन्य स्थिति-  
संक्रमके अलवहुत्वका कथन किया । अब उच्चारणके अभिप्रायानुसार इसे बतलाते हैं । यथा—

§ ७३२. नारकियोंमें सन्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रम सबसे स्तोक है । उससे यत्स्थिति-  
संक्रम असंख्यातगुणा है । उससे अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा  
है । उससे सन्यग्मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे पुरुषवेदका जघन्य  
स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उससे  
हास्य-रतिका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उससे अरति-शोकका जघन्य स्थितिसंक्रम  
विशेष अधिक है । उससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उससे बारह  
कपाय, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उससे मिथ्यात्वका जघन्य  
स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७३३ अब यहाँ उपयुक्त काल अल्पवहुत्वको बतलाते हैं । यथा—पुरुषवेदका बन्धककाल  
सबसे स्तोक है २ । उससे स्त्रीवेदका बन्धककाल संख्यातगुणा है ४ । उससे हास्य-रतिका बन्धककाल  
संख्यातगुणा है १६ । उससे अरति-शोकका बन्धककाल संख्यातगुणा है ४८ । उससे नपुंसकवेदका

संखेजगुणा ४८ । णवुंसयवेदबंधगद्वा विसेसाहिया ५८ । एदमप्यावहुज माहर्ण क्ठाऊणा-  
 षंतरस्फुवित्तुबारणप्यावहुजं सफ्तरणमगुगतत्वं । एवं गितजोषो समतो । एव येव  
 पदमाए पुडवीए । एषो विदियपुडवीए सेसपुडवीण देसासासयभावेणप्यावहुजपस्वणहु  
 सुचरसुचकक्षावमाह—

⊗ विविषाए सम्बत्पोषो अषताणुषधीयं जह्यण्टिविसंकमो ।

§ ७३४ तत्त्व विसजोयणाचरिमफ्तास्त्रीए करणपरिणामहि छद्वादावसेसिदाए  
 सम्बत्पोवचाविरोहादो ।

⊗ सम्मत्तस्स जह्यण्टिविसंकमो असलेज गुणो ।

§ ७३५ इदो ? उष्वेत्तणचरिमफ्तास्त्रीए छद्वाइण्णमावत्तादो ।

⊗ सम्मामिच्छत्तस्स जह्यण्टिविसंकमो विसेसाहियो ।

§ ७३६ दोण्ह पि उष्वेत्तणाचरिमफ्तास्त्रीए उइण्णसामित्तं चादं । किंतु सम-  
 चरिमुष्वेत्तणफ्तास्त्री पेक्खिऊण सम्मामिच्छत्तुष्वेत्तणचरिमफ्तास्त्री विसेसाहिया । चरण  
 पदमदाए उष्वेत्तमाणो मिच्छाइही सम्बत्त्व सम्मामिच्छत्तुष्वेत्तणचरिदयादो सम्मत्तस्स  
 विसेसाहियमेव द्विविदिसंख्यपाद करेइ जाव सम्मत्तमुष्वेत्तित्तदं ति । पुषो सम्मामिच्छत्त-  
 उष्वेत्तमाणो सम्मत्तचरिमफ्तास्त्रीदो विसेसाहियकमेण द्विविदिसंख्यमामाएदि जाव  
 सगचरिमिद्विविदिसंख्यदो ति । तदो एदमेत्त्व विसेसाहियत्ते चरणं ।

कल्पकक्षस विरोए अधिक हे ३५। इस अस्वच्छुत्वच्य साधय करके अनन्तर करे गये कक्षारण  
 अल्पकक्षरको सफ्तरण अनन्त चाहिए । इस प्रकार सामान्य नारकिमेमें अल्पकक्षुत्व समाप्त हुआ ।  
 इषी प्रकार पक्षिणी प्रविषीमें जानना चाहिए । आग हुसरी प्रविषीमें रोए प्रविषिबोके वेत्तमर्पकक्षसे  
 अल्पकक्षुत्वच्य कल्प करनेके लिए आगेके सूत्रकक्षपक्षे करते हैं—

⊗ हुसरी प्रविषीमें अनन्तानुबन्धियोक्का अबन्ध स्थितिसकम सबस स्तोक हे ।

§ ७३७. क्योंकि करणपरिणामोके हाय चात होनेसे शय बर्षा हुई विसंयोइनासकक्षी  
 अन्तम अधिक सवसे स्तोक होनेमें कोई विरोध नहीं हे ।

⊗ उससे सम्पत्त्वकक्ष अबन्ध स्थितिसकम असंभ्यातगुणा हे ।

§ ७३८. क्योंकि उडेकनाधी अन्तम अधिकमें इसअव अवन्धपना प्राप्त होत्त हे ।

⊗ उससे सम्पत्तिप्यात्वकक्ष अबन्ध स्थितिसकम विशेष अधिक हे ।

§ ७३९. क्योंकि वचसि दोमोका ही उडेकनाधी अन्तम अधिकमें अबन्ध स्वामित्त प्राप्त  
 हुआ हे फिर भी सम्पत्त्वकक्षी अन्तम उडेकनाधिकिको वेत्तत हुए सम्पत्तिप्यात्वकक्षी अन्तम  
 उडेकनाधिकि विसेप अधिक हे । कारण कि प्रथम अवस्थामें उडेकना करनेवाला मिच्छाटहि धीव  
 सम्पत्त्वकक्षी उडेकना होने तक सर्वत्र सम्पत्तिप्यात्वके उडेकनाधिकिकसे सम्पत्त्वकक्ष स्थिति-  
 प्यात्वकक्षात विशेष अधिक ही करत्त हे । फिर सम्पत्तिप्यात्वकक्षी उडेकना करत्त हुआ अफले अन्तम  
 स्थितिकाधिकिकके मात हमने तक सम्पत्त्वकक्षी अन्तम अकिसे विशेष अधिकिके अन्तसे स्थिति-  
 प्यात्वकक्षो प्रथय करत्त हे । इसलिये वह वहाँ पर विशेष अधिक इनेत्त कारण हे ।

❀ वारसकसाय-णवसोकसायाणं जहएणडिदिसंकमो तुल्लो असंखेज्जगुणो ।

§ ७३७. कुदो ? अंतोकोडाकोडीपमाणत्तादो ।

❀ मिच्छत्तस्स जहएणडिदिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ७३८. जइ वि सामिच्चभेदो णत्थि तो वि मिच्छत्तजहएणडिदिसंकमस्स कसाय-जहएणडिदिसंकमादो विसेसाहियत्तमेत्थ ण विरुद्धं, चालीस०पडिभागीयंतोकोडाकोडीदो सत्तरि०पडिभागीयंतोकोडाकोडीए तीहि सत्तभागेहिं अहियत्तदंसणादो । एवं सेसपुढवीसु । णवरि सत्तमाए सन्वत्थोवो अणंताणु०४ जहएणडिदिसंकमो । सम्म०. जह०डिदिसंक० असंखे०गुणो । सम्मामि० जह०डिदिसं० विसे० । पुरिसवेद० जह०डिदिसं० असंखेज्ज-गुणो । इत्थिवेद० जह०डिदिसं० विसे० । हस्स-रइ० जह०डिदिसं० विसे० । णवुंसय-वेद० जह०डिदिसं० विसे० । अरदि-सोग० जह०डिदिसं० विसे० । उच्चारणाहिप्पाएण अरइ-सोगाणमुवरि णवुंसं० जह०डिदिसं० विसेसाहिओ वत्तन्वं । तदो भय-दुगुंछं० जह०-डिदिसंक० विसे० । वारसकं० जह०डिदिसं० विसे० । मिच्छं० जह०डिदिसं० विसे० ।

§ ७३९. एत्तो सेसगईणमप्पावहुअमुच्चारणाणुसारेण वत्तइस्सामो । तं जहा—तिरिक्खा० णारयभंगो । णवरि णवुंसयवेदस्सुवरि भय-दुगुंछं० विसे० । वारसकं० विसे० ।

\* उससे वारह कपाय और नौ नोकपायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम परस्पर तुल्य होकर भी असंख्यातगुणा है ।

§ ७३७ क्योंकि यह अन्त कोटाकोटिप्रमाण है ।

\* उससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७३८ यद्यपि स्वामित्वभेद नहीं है तो भी कपायोंके जघन्य स्थितिसंक्रमसे मिथ्यात्वके जघन्य स्थितिसंक्रमके यहाँपर विशेष अधिक होनेमें विरोध नहीं आता, क्योंकि चालीस कोडाकोडीके प्रतिभागरूपसे प्राप्त हुए अन्तःकोडाकोडीसे सत्तरकोडाकोडीके प्रतिभागरूपसे प्राप्त हुआ अन्तःकोडाकोडी तीन-सातभाग अधिक देखा जाता है । इसी प्रकार शेष पृथिवियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य स्थितिसंक्रम सबसे स्तोक है । उससे सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उससे द्वास्थ्य-रतिका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उससे नपु सकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उससे अति-शोकका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उच्चारणके अभिप्रायसे अरति-शोकके ऊपर नपु सकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । ऐसा कहना चाहिए । उससे भय-जुगुप्साका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उससे वारह कपायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ७३९. आगे शेष गतियोंके अल्पबहुत्वको उच्चारणके अनुसार बतलाते हैं । यथा—तिर्यञ्चोंका भङ्ग नारकियोंके समान है । इतनी विशेषता है कि नपु सकवेदके ऊपर भय-जुगुप्साका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उससे वारह कपायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक



मिच्छ० विसे० । पंचिदियतिरिक्त-पवि०तिरि०पञ्च० पारयमंगो । पंचिदियतिरिक्त-  
 जोषिणीसु सम्बन्धोवो अणत्तायु ४ अह०द्विदिस० । सम्म० अह० द्विदिसं० असंखे०-  
 गुणो । सम्मामि० अह०द्विदिसक० विसेसा० । पुरिसवेद० अह० असंखे०गुणो । सेसं  
 पारयमंगो । पवि०तिरि०अपञ्च०-मणुसअपञ्च० सव्यत्थोवो सम्मच० अह०द्विदिसक०  
 सम्मामि० अह०द्विदिस० विसे । पुरिसवेद० अह०द्विदिसं० असंखे०गुणो । इत्थि-  
 वेद० अह०द्विदिस० विसेसा । इत्थि-अ० विसे० । अरइ-सोग० विसे० । अणुसप  
 वेद० अह०द्विदिसं० विसे० । सोत्सक०-मय-दुगुं० अह० विसे० । मिच्छ० अह०-  
 द्विदिस० विसे० ।

१७४० मणुस-मणुसपञ्च० ओष । मणुसिणीसु सम्बन्धोवो सम्म०-सोह  
 संज० अह०द्विदिस । अद्विदिसक० असंखे०गुणो । मायासव० अह०द्विदिस०  
 सखेजगुणो । अद्विदिस० विसे । माणसंजस० अह०द्विदिसक० विसे० । अद्विदिसक०  
 विसे० । कोहसज० अह०द्विदिसक० विसे० । अद्विदि० विसे० । पुरिसवेद-अणुसकसा  
 अह०द्विदिसक० हुन्को सखेजगुणो । इत्थिवेद० अह०द्विदिसं० असंखे०गुणो । णटसपवेद०  
 अह०द्विदिस० असंखे गुणो । अद्विदिसाथ० अह०द्विदिसक० असंखे०गुणो । सम्मामि०

हे । इससे मिथ्यात्वका अणु स्विचितिकम विरोध अधिक है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और पञ्च त्रिय  
 तिर्यञ्च परात्मके समान भाग है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च यानिनिर्दोषे धमन्तानुबन्धीचतुष्टयका  
 अणु स्विचितिकम सबसे स्लोक है । इससे सव्यत्त्वका अणु स्विचितिकम असंख्यागुणा है ।  
 इससे सव्यमिथ्यात्वका अणु स्विचितिकम विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेदका अणु स्विचितिकम  
 असंख्यागुण्य है । शेष मंग माणिक्ये समान है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य  
 अपर्याप्तके सव्यत्त्वका अणु स्विचितिकम सबसे स्लोक है । इससे सव्यमिथ्यात्वका अणु  
 स्विचितिकम विरोध अधिक है । इससे पुरुषवेदका अणु स्विचितिकम असंख्यागुण्य है । इससे  
 कीदृशका अणु स्विचितिकम विरोध अधिक है । इससे इन्द्र-रथिका अणु स्विचितिकम विरोध  
 अधिक है । इससे अति-शोकका अणु स्विचितिकम विरोध अधिक है । इससे नपुंसकवेदका  
 अणु स्विचितिकम विशेष अधिक है । इससे सोमदा कथाय भव और जुगुप्साका अणु स्विचि  
 तिकम विरोध अधिक है । इससे मिथ्यात्वका अणु स्विचितिकम विरोध अधिक है ।

१७४ मनुष्य और मनुष्य वर्जातके भोपके समान भाग है । मनुष्यनिर्दोषे सव्यत्त्व  
 और काशसंज्ञकका अणु स्विचितिकम सबसे स्लोक है । इससे अस्वितिकम असंख्यागुणा  
 है । इससे मायाका अणु स्विचितिकम संख्यागुणा है । इससे अस्वितिकम विशेष अधिक है ।  
 इससे मानका अणु स्विचितिकम विरोध अधिक है । इससे अस्वितिकम विरोध अधिक है ।  
 इससे भोपका अणु स्विचितिकमविरोध अधिक है । इससे अस्वितिकम विरोध अधिक है ।  
 इससे पुरुषवेद और अह जाकपालोम अणु स्विचितिकम परस्पर एक ही होकर संख्यागुण्य है ।  
 इससे कीदृशका अणु स्विचितिकम असंख्यागुण्य है । इससे मनुष्यकवेदका अणु स्विचितिकम  
 असंख्यागुणा है । इससे आठ कथापौत्र अणु स्विचितिकम असंख्यागुणा है । इससे

जह०द्विदिसं० असंखे०गुणो । मिच्छ० जह० असंखे०गुणो । अणंताणु०४ जह०द्विदिसं० असंखे०गुणो ।

§ ७४१. देवाण पारयभंगो । भवण०-त्राण०-सञ्चत्थोवो अणंताणु०४ जह०-द्विदिसं० । सम्म० जह०द्विदिसं० असंखे०गुणो । सम्मामि० जह०द्विदिसं० विसे० । पुरिसवेद० जह०द्विदिसं० असंखे०गुणो । सेसं देवोधं । जोदिसि० विदियपुढवि-भंगो । सोहम्मादि जाव णवगेवञ्जा त्ति सञ्चत्थोवो सम्म० जह०द्विदिसं० । जद्विदिसं० असंखे०गुणो । अणंताणु०४ जह०द्विदि०सं० असंखे०गुणो । सम्मामि० जह०द्विदिसं० असंखे०गुणो । वारसक०-णवणोक्क० जह०द्विदिसं० असंखे०गुणो । मिच्छ० जह०द्विदिसं० संखे०गुणो । अणुदिसादि सञ्चद्वे त्ति सञ्चत्थोवो सम्म० जह०-द्विदिसं० । जद्विदिसं० असंखे०गुणो । अणंताणु०४ जह०द्विदिसं० असंखे०गुणो । वारसक०-णवणोक्क० जह०द्विदिसं० असंखे०गुणो । मिच्छ०-सम्मामि० जह०द्विदिसं० सरिसो संखे०गुणो । एवं जाव० ।

एवं चउवीसमणिओगद्वाराणि समत्ताणि ।

❁ भुजगारसंक्रमस्स अट्टपदं काज्जण सामित्तं कायव्वं ।

सम्यग्मिध्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे मिध्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ ७४१ देवोंमें नारकियोंके समान भग है । भवनवासी और ध्यन्तर देवोंमें अनन्तानुबन्धी-चतुष्कका जघन्य स्थितिसंक्रम सबसे स्तोक है । उससे सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यात-गुणा है । उससे सम्यग्मिध्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम विशेष अधिक है । उससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । शेष भग सामान्य देवोंके समान है । ज्योतिषियोंमें दूसरी पृथिवीके समान भग है । सौधर्म कल्पसे लेकर नौ त्रैवेयकतकके देवोंमें सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रम सबसे स्तोक है । उससे यत्स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे अनन्तानुबन्धी-चतुष्कका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे सम्यग्मिध्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे वारह कषायों और नौ नोकषायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे मिध्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम सख्यातगुणा है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रम सबसे स्तोक है । उससे यत्स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे वारह कषायों और नौ नोकषायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे मिध्यात्व और सम्यग्मिध्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम परस्पर सदृश होकर सख्यातगुणा है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

इस प्रकार चौबीस अनुयोगद्वार समाप्त हुए ।

\* भुजगारसंक्रमका अर्थपद करके स्वामित्व करना चाहिए ।

१ ७४२ एषो भुजगारपरूषणा पचावसरो । तस्य ताव अट्टपदं कायम्बं, अण्णहा  
 त्सस्ररूषविसयणिण्णयाणुप्यत्तीरो । किं तमट्टपदं ? बुच्चदे—अर्णतरोसकाविद्विदिकंत-  
 समए अप्पदरसकमादो एण्हि बहुवर संकामेइ चि एसो सुजगारसंकमो । अणव  
 क्ससकाविद्विदिकंतसमए बहुवरसंकमादो एण्हि वोवरसो ठिदीसो सक्कमेइ चि एस  
 अप्पयरसकमो । तच्चिय सच्चिय च्च सक्कमेइ चि एसो अवट्टिदसकमो । अणतरवदिकंतसमए  
 असकमादो संकामेदि चि एसो अवचच्चसकमो । एदेणट्टपदेण सुजगारअप्पदर-अवट्टिदा-  
 वचच्चसकमयाणं परूषणा भुजगारसकमो चि मुचइ । सपहि भुजगारपरूषणाए इमाणि  
 तेरस अणियोगइराणि समुक्खिचचादीणि अप्पावहुअपमंताणि । तस्य समुक्खिचचं फाऊण  
 पञ्च सामिचं कायम्बमिदि सुचाइप्याओ, असमुक्खिचचाणं सुजगारादीण सामिच्चादि  
 विहाणे असंकट्ठप्यसमादो । सा च समुक्खिचचा ओपादेसमेदेण इविहा । ओपेण ताव  
 मिच्छत्तस्स अत्थि सुजगार-अप्प-अवट्टिदसंकामया । सम्म-सम्मामि-सोलसक-  
 पवणोक- अत्थि सुज-अप्प-अवट्टि-अवच-संक- । एवं मणुसत्थिए । भादेसेण  
 सम्ममग्गाणसु द्विदिविदित्तमगो । एव समुक्खिचचाणं सुजगारादिपत्राण सामिचपरूषणहु-  
 वृत्तसुचावयारो—

⊙ मिच्छत्तस्स सुजगार-अप्पदर-अवट्टिसकामओ को होवि !  
 अथपवरो ।

१ ७४२. आगे भुजगारका कवन अवसर प्राप्त है । हममें सर्वप्रथम अर्षपद करना चाहिये,  
 अथवा उसका स्वरूपनिर्दिष्ट करने में ही वन सफाया । वह अर्षपद क्या है ? कहते हैं—अनन्तर  
 पूर्व अतीत समयमें हुए अस्तर संक्रमणसे वर्तमान समयमें बहुतरफ संक्रमण करता है यह  
 भुजगारसंक्रमण है । अनन्तर पूर्व अतीत समयमें हुए बहुतर संक्रमणसे वर्तमान समयमें स्तोत्र  
 स्थितियोंका संक्रमण करता है यह अस्तर संक्रमण है । अतीत ही अतीत ही स्थितियोंका संक्रमण करता  
 है यह अवस्थितसंक्रमण है तथा अनन्तर अतीत समयमें हुए असंक्रमणसे वर्तमान समयमें संक्रमण  
 करता है यह अवच्छेदसंक्रमण है । इस अर्षपदके अनुसार भुजगार, अस्तर, अवस्थित और  
 अवच्छेदसंक्रमणको ही प्रकृत्या भुजगारसंक्रमण कही जाती है । अब भुजगारसंक्रमणमें समुत्थीर्तनासे  
 लेकर अस्तरहुत तक यह वेद अनुयोगाद्वार होते हैं । हममेंसे समुत्थीर्तनाको करके बाह्यमें स्वामित्व  
 करना चाहिये यह इस सूत्रका अभिप्राय है, क्योंकि समुत्थीर्तना किसे बिना भुजगार आदिपदके  
 स्वामित्वका विधान करने पर असम्भवपनका प्रसंग आया है । वह समुत्थीर्तना ओप और आदेशके  
 भेदसे ही प्रकारकी है । ओपके मिच्छत्तके भुजगार, अस्तर और अवस्थितपदके संक्रामक हीन  
 हैं । सम्यक्त्व सम्यग्मिच्छत्त, सोलह क्ताय और नौ लोकद्वयके भुजगार, अस्तर, अवस्थित  
 और अवच्छेदपदके संक्रामक हीन हैं । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें आनना चाहिये । आदेशसे सब  
 मार्गकाभेदे स्थितिक्रमिकके समान भेग है । इस प्रकार जिनकी समुत्थीर्तना की है ऐसे भुजगार  
 आदि पदोंके स्वामित्वका कवन करनेके लिए आगेके सूत्रका अवसर करते हैं—

⊙ मिच्छत्तके भुजगार, अन्पतर और अवस्थितपदका संक्रामक हीन कीज  
 है ? अन्पतर कीज है ।

§ ७४३. एत्थण्णदरणिद्देसेण णेरइओ तिरिक्खो मणुस्सो देवो वा त्ति गहियव्वं, सव्वत्थ सामिचस्साविरोहादो । ओगाहणादिविसेसपडिसेहट्ठं च अण्णदरणिद्देसो । एत्थ भुजगारावड्ढिदसंकांमगो मिच्छाइट्ठी चेव अप्पदरसंकांमगो पुण अण्णदरो मिच्छाइट्ठी सम्माइट्ठी वा होइ त्ति घेत्तव्वं ।

❀ अवत्तव्वसंकांमओ एत्थि ।

§ ७४४. असंकांमदो संकमो अवत्तव्वसंकांमो णाम । ण च मिच्छत्तस्स तारिस-संकांमसंभवो, उवसंतकसायस्स वि तस्सोकड्डुणापरपयडिसंकांमाणमत्थित्तदंसणादो ।

❀ एवं सेसाणं पयडीणं णवरि अवत्तव्वया अत्थि ।

§ ७४५. एवं सेसाणं पि सम्मत्तादिपयडीणं भुजगारादिविसयं सामित्तमणुगंतव्वं, अण्णदरसामिसंबंधं पडि मिच्छत्तपरूवणादो विसेसाभावादो । णवरि सम्मत्त-सम्मा-मिच्छत्ताणं भुजगारस्स अण्णदरो सम्माइट्ठी, अप्पदरस्स मिच्छाइट्ठी सम्माइट्ठी वा, अवड्ढिदस्स पुच्चुप्पणादो सम्मत्तादो समयुत्तरमिच्छत्तसंतकम्मियविदियसमयसम्माइट्ठी सामी होइ त्ति विसेसो जाणियव्वो । अण्णं च अवत्तव्वया अत्थि, सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण-मणादियमिच्छाइट्ठिणा उव्वेल्लिदत्तदुभयसंतकम्मिएण वा सम्मत्ते पडिवण्णे

§ ७४३. यहाँ सूत्रमें 'अन्यतर' पदके निर्देश द्वारा नारकी, तिर्यञ्च, मनुष्य अथवा देव मिथ्यात्वके उक्त पदोंका संक्रामक है ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि सर्वत्र स्वामित्वके प्राप्त होनेमें विरोधका अभाव है। अवगाहना आदि विशेषका निषेध करनेके लिए 'अन्यतर' पदका निर्देश किया है। यहाँ पर भुजगार और अवस्थितपदका संक्रामक मिथ्यादृष्टि ही होता है। परन्तु अल्पतरपदका संक्रामक मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि दोनों होते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

❀ मिथ्यात्वके अवक्तव्यपदका संक्रामक नहीं है ।

§ ७४४ असंक्रमसे संक्रम होना अवक्तव्यसंक्रम है। परन्तु मिथ्यात्वका इस प्रकारका संक्रम सम्भव नहीं है, क्योंकि उपरान्तकषाय जीवके भी मिथ्यात्वके अपकर्षण और परप्रकृति संक्रमका अस्तित्व देखा जाता है।

❀ इसी प्रकार शेष प्रकृतियोंका स्वामित्व है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके अवक्तव्यसंक्रमवाले जीव हैं ।

§ ७४५ इसी प्रकार शेष सम्यक्त्व आदि प्रकृतियोंका भी भुजगार आदि पदविषयक स्वामित्व जानना चाहिए, क्योंकि अन्यतर जीव स्वामी है इस अर्थसे मिथ्यात्वकी परूपणासे इस परूपणामें कोई भेद नहीं है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार-पदका अन्यतर सम्यग्दृष्टि जीव स्वामी है। अल्पतरपदका मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि जीव स्वामी है। तथा अवस्थितपदका पूर्वमें उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे एक समय अधिक मिथ्यात्वका सत्कर्मवाला द्वितीय समयमें स्थित सम्यग्दृष्टि जीव स्वामी है इतना विशेष यहाँ जानना चाहिए। इतना और है कि इनके अवक्तव्य पदवाले जीव हैं, क्योंकि अनादि मिथ्यादृष्टि जीवोंके अथवा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन दोनों प्रकृतियोंके सत्कर्मकी उद्वेलना कर चुके जीवोंके सम्यक्त्वको प्राप्त होनेपर

विदियसमयमि तदुबलमादो । अथतापुर्वपीण पि विसंबोयणापुत्रसजोग अबसेवाणं  
 च सम्बोवसामणादो परिवदमाणगस्त दवस्त वा पदमसमपसंक्रामगस्त अबचन्वसक्रम  
 समबादो । एवमोपेन सामितपरुवणा कया ।

§ ७४६ आदेसेन मणुसतिप ओषर्मगो । णवरि मारसक०-णवजोकराय-  
 अबचन्वपदमसमयदेवाअत्रो ण कायज्जो । सेससव्वमग्गणासु द्विदिविदचित्तमंगो ।

⊗ काहो ।

§ ७४७ अहियारसंमासजसुचमेदं ।

⊗ मिच्छत्तस्स मुज्जगारसकामगो केवधिरं काहावो होदि ?

§ ७४८ सुगमं ।

⊗ जह्वयेण पयसमओ, उहस्सेण चत्तारि समया ।

§ ७४९ एत एव ब्रह्मण्यस्यपुरुषणा कीरदे—एगो द्विदिसंतकम्मस्सुवारी  
 पयसमयं बंधवुद्धीए परिणवो विदियादिसमएसु अबद्धिदमप्परं वा बपिय बषाबलियादोद  
 सकामिय उदणंतरसमए अबद्धिदमप्परं वा पडिबणो सद्धो मिच्छत्तद्विदीप मुज्जगार  
 संक्रामयस्स ब्रह्मणेयसमओ, उह पदुसमयपरुवणा । तं यदा—एद्विदो  
 अदाह्य सकिस्सेसकथएहिं दोसु समएसु मुज्जगारबधं कएण तदो से काले सण्णि-

दूसरे समयमें सम्बन्ध और सम्मिमिध्यात्वअबचन्वसंक्रम देखा जाय है । अनन्त्यानुबन्धियेक  
 नौ विसंवावनापूर्वक संयोग होने पर तथा अचरोय प्रकृतिबोध सर्वसंक्रामन्यसे गिरनेवाले बीजके  
 या प्रथम समयमें संक्रम करनेवाले देवके अरुह्यसंक्रम सम्भव है । इस प्रकार आपसे स्वामित्वकी  
 प्रकृत्या की ।

§ ७४६ आदेरसे मणुत्रिकमें ओपके समान मंग है । किन्तु इतनी विरोध है कि  
 इनमें बाह्य कथाय और नौ नौकथायोंअबचन्वपर प्रथम समयवर्ती देवके होय है यह आह्वय  
 नहीं करता जादिये । सेय सब भाग्याओमें स्थितिविमिके समान मंग है ।

⊗ कलकअ अधिकार है ।

§ ७४७ अधिकारकी सम्हाक करनेवाका यह सूत्र है ।

⊗ मिध्यात्वके मुज्जगारसंक्रामकका किटना कस है ।

§ ७४८ यह सूत्र सुगम है ।

⊗ अपन्य कस एक समय है और उरुहट कस चार समय है ।

§ ७४९ यहाँ सर्वप्रथम अपन्य कसकी प्रकृत्या करते हैं—डोई एक बीज स्थितिसकर्मके  
 ऊपर एक समय तक बन्धकी बुद्धिसे परिणत हुआ तथा द्वितीयादि समयमें अचरितक या अस्तर  
 कथ करके बन्धविके वात् मुज्जगारसंक्रम करके उगन्तर समयमें अचरितक वा अस्तरसंक्रमकी  
 प्राप्त हुआ । इस प्रकार मिध्यात्वकी स्थितिके मुज्जगारसंक्रामकअबचन्व कस एक समय प्राप्त  
 हुआ । अब उरुहट कस चार समयकी प्रकृत्या करते हैं । पद्य—किंसी एकेत्रिय बीजने अदाह्य  
 और संक्रामकसे दो समय तक मुज्जगारबन्ध किया । उरुहट अगले समयमें सोही पद्य गिर्योमें

पंचिदिएसुप्पज्जमाणो विग्गहगदीए एगसमयअसण्णिट्ठिदिं वंधिऊण तदणतरसमए सरीरं घेत्तूण सण्णिट्ठिदिं पवद्धो । एव चदुसु समएसु णिरंतरं भुजगारबंधं कादूण पुणो तेणेव कमेण वंधावलियादिकंतं संकामेमाणस्स लद्धा मिच्छत्तभुजगारसंकमस्स उक्कस्सेण चत्तारि समया ।

❀ अप्पदरसकामगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ७५२. सुगमं ।

❀ जहणणेणयसमओ, उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसवं सादिरेयं ।

§ ७५१. एत्थ ताव एयसमओ उच्चदे । तं कथं ? भुजगारमवट्ठिदं वा वंधमाणस्स एयसमयमप्पदरं वंधिय विदियसमए भुजगारावट्ठिदाणमण्णदरबंधेण परिणमिय वंधावलिय-वदिकमे वंधाणुसारणेव संक्रममाणयस्स अप्पदरकालो जहणणेणयसमयमेत्तो होइ । सादिरेयतेवट्ठिसागरोवमसदमेत्तुक्कस्सकालाणुगमभिदाणि कस्सामो । तं जहा—एको तिरिक्खो मणुस्सो वा मिच्छाइट्ठी संतकम्मस्स हेट्ठदो वंधमाणो सच्चुक्कसंतोमुहुत्तमेत्त-कालमप्पदरसंकमं काऊण पुणो तिपल्लिदोवमिएसुववण्णो । तत्थ वि अप्पदरमेव मिच्छत्त-संकममणुपालिय अंतोमुहुत्तावसेसे सगाउए पढमसम्मत्तं पडिवण्णो अंतोमुहुत्तमप्पदरमेव संकामेदि । कधमुवसमसम्मत्तं पडिवण्णस्स अप्पदरसंक्रमो, त्कालब्भंतरे सच्चत्थेवावट्ठिद-सरूवेण मिच्छत्तणसेयट्ठिदीणं संकमोवलंभादो त्ति ? सच्चमेदं, णिसेयपहाणत्ते समवलंविए

उत्पन्न होकर विग्रहगतिमें एक समय तक असंज्ञीकी स्थितिका बन्ध किया । पुनः तदनन्तर समयमें शरीरको ग्रहणकर सज्ञीकी स्थितिका बन्ध किया । इस प्रकार चार समय तक निरन्तर भुजगार बन्ध करके पुनः उसी क्रमसे बन्धावलिके वाद संक्रम करनेवाले उसी जीवके मिथ्यात्वके भुजगार-संक्रमके उत्कृष्ट चार समय प्राप्त हुए ।

\* अल्पतरसंक्रामकका कितना काल है ?

§ ७५०. यह सूत्र सुगम है ।

\* जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक एक सौ त्रेसठ सागर है ।

§ ७५१. यहाँ सर्वप्रथम एक समयका कथन करते हैं । वह कैसे ? भुजगार या अवस्थित पदका बन्ध करनेके बाद एक समय तक अल्पतरपदका बन्ध करके तथा दूसरे समयमें भुजगार या अवस्थितपदके बन्धरूपसे परिणामन करके बन्धावलिके व्यतीत होने पर बन्धके अनुसार ही संक्रम करनेवाले जीवके अल्पतरपदका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है । अब साधिक एक सौ त्रेसठ सागरप्रमाण उत्कृष्ट कालका अनुगम करते हैं । यथा—सत्कर्मसे कम स्थितिका बन्ध करनेवाला कोई एक तिर्यञ्च या मनुष्य मिथ्यादृष्टि जीव सर्वोत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त कालतक अल्पतर संक्रम करके पुन तीन पल्यकी आयुवाले जीवोंमें उत्पन्न हुआ । वहाँ पर भी मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्रमका ही पालन करके अपनी आयुमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर प्रथम सम्यक्त्वको प्राप्त होकर अन्तर्मुहूर्त काल तक अल्पतरपदका ही संक्रम करता है ।

शंका—उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त हुए जीवके अल्पतरसंक्रम कैसे हो सकता है, क्योंकि उस काजके भीतर सर्वत्र ही मिथ्यात्वकी निषेकस्थितियोंका अवस्थितरूपसे ही संक्रम उपलब्ध होता है ?

एतमेवं होत्रं त्रिं षण्ण एवमेत्य विवक्षता कथा । किंतु काष्ठपहाणत्वं विवक्षित्यं । त  
 क्व णम्बदे ? सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमवद्विदसंक्रमस्स जहण्णुक्खसेणेयसमयोवणसत्तो ।  
 पुणो वेदयसम्मत्तं पट्टिवण्णो पट्टमठावद्विं सम्ममप्यदरसकमेणाणुपालिय ततो अंतो-  
 मुहुत्तावसेसे पट्टमठावद्विक्खाले अप्यदरकात्ताविरोहेणतोमुहुत्त मिच्छत्तेणतरिय सम्मत्तं  
 पट्टिवण्णो विदियत्तावद्विं परिममिय तदवसाणे परिणामपचएण पुणो वि मिच्छत्तमुनगाओ  
 दम्बलिगमाहप्येणेकधीससागरोवमिएसु देवेसुववण्णो । तत्थ वि सुवत्तेस्सापाहम्मोण  
 सत्तकम्मात्तो हेहा येव बंधमाणस्स अप्ययरसंक्रमो येय । तथो पुदो वि सतो मणुसेसुव  
 वजिय अंतोमुहुत्तमप्यपर येव सक्कामिय ततो सुसगारमवद्विदं वा पट्टिवण्णो तस्स उदो  
 पयदुक्खस्सकस्सो दोअंतोमुहुत्तमहियतिपत्तिदोवमेहि सादिरेयदेवद्विसागरोरनममेत्तो ।  
 एत्थ पट्टमठावद्विं ममाविय अंतोमुहुत्तावसेसे सम्मामिच्छत्तेण किण्णावरावित्ते ? अ,  
 तहा सम्मत्त पट्टिवत्तमाणस्स मुअमारप्पसगात्तो । त क्व ? सम्मामिच्छत्त पट्टिवण्णस्स

**समाधान—**यह सत्य है, क्योंकि नियंत्रण प्रदान का स्वीकार करन पर यह इसी प्रकार  
 होता है । परन्तु यहाँ पर इस प्रकार की विवक्षा नहीं की है, किन्तु काष्ठ की प्रदान का विवक्षित है ।

**संक्षेप—**यह किस प्रमाण से जाना जाता है ?

**समाधान—**क्योंकि सम्पत्त और सम्पत्तिप्रदान के अवस्थितसंक्रमण अथवा और  
 कृत्य का एक समय है वेदा अथवा पाया जाता है । इससे ज्ञात होता है कि यहाँ पर नियंत्रण की  
 प्रदान का न होकर काष्ठ की प्रदान है ।

पुनः वह अथवा सम्पत्ति की वद्विदसंक्रमण को प्राप्त हुआ । तथा पूरे प्रथम अथवा सत्त  
 सागर काष्ठ एक अवस्थितसंक्रमण प्राप्त कर इस प्रथम अथवा सत्त सागर में अन्तर्मुहूर्त काष्ठ को  
 एते पर अवस्थितपदके अन्तर् में विरोध न पकते हुए अन्तर्मुहूर्तकाष्ठक मिध्यत्वके द्वारा वद्वि-  
 सम्पत्तको अन्तर् में करके सम्पत्तको प्राप्त हुआ । तथा द्वितीय अथवा सत्त सागर काष्ठक  
 परिश्रमण करके इसके अन्तर् में परिवामपरा फिर भी मिध्यत्वके प्राप्त हुआ और अथवा सत्त  
 माह्यत्वसे इच्छीस सागर की अथवा सत्त देवों में अथवा प्राप्त हुआ । तथा यहाँ भी अथवा सत्त  
 सत्तर् में कम विवक्षित ही कम करनेवाले इसके अवस्थितसंक्रमण ही होता रहा । फिर यहाँसे अथवा  
 होकर भी मनुष्यों में अथवा होकर अन्तर्मुहूर्त काष्ठक अवस्थितपदक ही संक्रमण करके अथवा  
 मुअमार या अवस्थितसंक्रमण को प्राप्त हुआ । इस प्रकार अवस्थित संक्रमण को अन्तर्मुहूर्त और तीन  
 पन्थ अथवा एक ही अथवा सत्त सागरमध्यक अथवा कृत्य का प्राप्त हुआ ।

**संक्षेप—**यहाँ पर प्रथम अथवा सत्त सागर काष्ठक प्रथम करके अन्तर् अन्तर्मुहूर्त काष्ठ को  
 एते पर सम्पत्तिप्रदान द्वारा अथवा कर्णों यहाँ करवा ?

**समाधान—**हाँ, क्योंकि तब प्रथम सम्पत्तको प्राप्त करनेवाले की वद्विदसंक्रमण को  
 प्राप्त होनेका अर्थ है ।

**संक्षेप—**यह कैसे ?

**समाधान—**सम्पत्तिप्रदान को प्राप्त होनेवाले की वद्विदसंक्रमण को प्राप्त होनेका अर्थ है ।

ताव मिच्छत्तस्स परपयडिसंकमो णत्थि, किंतु ओकड्डणासंकमो चेय । सो च उदयप्पहुडि आवलियासंखेज्जभागब्भहियदोआवलयमेत्तमिच्छत्तद्विदीणं णत्थि । किं कारणं ? जासिं पयडीणमुदयसंभवो अत्थि तासिं चेव उदयावलयवाहिरद्विदीओ सच्चाओ ओकड्डिजंति, उदयावलयव्भंतरे णिक्खेवसंभवादो । जासिं पुण उदयो णत्थि तासिमुदयावलयवाहिरे आवलियासंखेज्जभागब्भहियआवलयमेत्तीणं द्विदीणमोकड्डणा ण संभवइ, उदयावलयव्भंतरे णिक्खेवसंभवाणुवलंभादो । तदो तत्थ वाहिरआवलियासंखेज्जभागब्भहियदोआवलयवज्जाणमुवरिमासेसद्विदीणमोकड्डणासंकमो त्ति धेत्तव्वं, आवलयमेत्तमइच्छाविय तदसंखेज्जदिभागे तत्थ णिक्खेवणियमदंसणादो । एवं च संते सम्मामिच्छत्तद्धं सच्चमघद्विधिगलणेणप्पयरसंकमं काळण जाधे सम्मत्तं पडिचण्णो ताधे सम्मामिच्छाइड्डी चरिमसमयओकड्डणासंकमादो सम्माइड्डिपढमसमयपरपयडिसंकमो आवलि० असंखे०-भागब्भहियआवलयमेत्तणिसेगेहि समहिओ होइ, परपयडिसंकमस्सुदयावलयवहिब्भूद-सच्चणिसेएसु णिसेयाभावादो । तहा च सो भुजगारसंकमो पढमसमयसम्माइड्डिपडिचद्वो अप्पदरविरोहिओ जायदि त्ति सम्मामिच्छत्तमेसो णेदुं ण सक्को त्ति ।

§ ७५२. अथवा णिसेयपरिहाणीए अप्पदरसंकमो एत्थ ण विवक्खिओ, किंतु कालपरिहाणीए । अत्थि च कालपरिहाणी, सम्मामिच्छाइड्डिचरिमसमयमिच्छत्तद्विदि-

होता । किन्तु अपकर्षणसंक्रम ही होता है । वह भी उदय समयसे लेकर आवलिका असंख्यातवों भाग अधिक दो आवलिप्रमाण मिथ्यात्वकी स्थितियोंका नहीं होता, क्योंकि जिन प्रकृतियोंका उदय सम्भव है उन्हीं प्रकृतियोंकी उदयवलिके बाहरकी सभी स्थितियों संक्रमित होती हैं, क्योंकि उनका उदयावलिके भीतर निक्षेप सम्भव है । परन्तु जिन प्रकृतियोंका उदय नहीं है उनकी उदयावलिके बाहर आवलिके असंख्यातवें भाग अधिक एक आवलिप्रमाण स्थितियोंका अपकर्षण सम्भव नहीं है, क्योंकि उनकी उदयावलिके भीतर निक्षेपकी सम्भावना उपलब्ध नहीं होती । इसलिए वहाँपर आवलिके असंख्यातवें भाग अधिक दो आवलिप्रमाण स्थितियोंके सिवा ऊपरकी सब स्थितियोंका अपकर्षणसंक्रम ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि वहाँ पर एक आवलिप्रमाण स्थितियोंको अतिस्थापनारूपसे स्थापित करके उसके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियोंमें निक्षेपका नियम देखा जाता है । और ऐसा होने पर सम्यग्मिथ्यात्वके सब कालतक अध स्थितिगलानाके साथ अल्पतरसंक्रम करके जब सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ तब सम्यग्मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समयमें होनेवाला परप्रकृतिसंक्रम एक आवलिके असंख्यातवें भागसे अधिक एक आवलिमें प्राप्त हुए निषेकोंसे अधिक होता है, क्योंकि परप्रकृतिसंक्रमका उदयावलिके बाहर स्थित सब निषेकोंमें होनेका निषेध नहीं है । और सम्यग्मिथ्यात्वमें ले जाने पर सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयसे सम्बन्ध रखनेवाला वह भुजगारसंक्रम अल्पतरसंक्रमका विरोधी हो जाता है, इसलिए ऐसे जीवको सम्यग्मिथ्यात्वमें ले जाना शक्य नहीं है ।

§ ७५२. अथवा यहाँ पर निषेकोंका परिहानिरूप अल्पतरसंक्रम विवक्षित नहीं है । किन्तु कालपरिहानिरूप अल्पतरसंक्रम यहाँपर विवक्षित है और यहाँ कालकी परिहानि है ही, क्योंकि सम्यग्मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समयमें प्राप्त हुई मिथ्यात्वकी स्थितिके प्रमाणसे प्रथम समयवर्ती



पमानादो षमसमयसम्माहृष्टिम्भि तद्धिदीणमधहृदिगलणेण समयूणचर्दसभादो । तदो  
 तस्य णितेयसकमबुद्धीए वि कालपरिहाणिलकतणो सकमस्त अण्यपरमावो चवे चि । न  
 न एवविहा विवक्खा सुचे ण दोसए चि सकणिअज; उअसमसम्माहृष्टिम्भि णितेयावेक्खाए  
 अणवहृदिसकममपरुविय कालपरिहाणिवसेणण्यपरसकमपरुवयम्मि सुचम्मि तदुपलभादो ।  
 तदो सम्मामिअचे पठिवज्जाविदे वि न दोसो चि सिद्धं ।

ॐ अथहृदिसकामधो केवचिरं काळावो होवि ?

§ ७५३ सुगम ।

ॐ जहृत्प्येपोयसमधो, उअस्सेप्यंतोमुहुत्त ।

§ ७५४ इदो ? एयहृदिदिवधावहाणकालस्त जहृत्प्युक्त्सेणेपसमयमतोमुहुत्त-  
 मेत्तपमापोबलमादो ।

ॐ सम्मत्त-सम्मामिअहृत्ताए सुजगार-अथहृदिव-अथत्तअथसकामया  
 केवचिरं काळावो होति ?

§ ७५५. सुगममेदं पुअसुत्तं ।

ॐ अहृत्प्युक्त्सेणेपसमधो ।

§ ७५६ मुजगारसंक्रमस्त एव उअवद्—तप्याभोगसम्मत्त-सम्मामिअहृत्तद्धिदि  
 सतकम्मियमिअहृत्तद्धिणा ततो दुसमतचरादिमिअहृत्तद्धिदिसतकम्मिएण सम्मत्ते पठिवणो

सम्बन्धित्थे वसकी स्थितियोंमें अकस्मिन्निगच्छन्तक आत्मन्वनसे एक समय कमवना देखा जाता  
 है, इसलिये वहाँ निपेक्षसंक्रममें हृदि होने पर भी संक्रमक कालपरिहाणितक्य अस्तरपना ही है ।  
 सूत्रमें इसप्रकारकी विवक्षा नहीं बिसर्खाई गेली ऐसी अर्थात् करण भी ठीक नहीं है, क्योंकि अराम  
 सम्बन्धित्थे निपेक्षकी अनेक अथस्थितसंक्रमक काल न करके अकस्मिन्निगच्छित्थे आत्मन्वन हाए  
 अस्तरसंक्रमक काल करनेवाले सूत्रमें उक्त विवक्षा बराबर होती है, इसलिये सम्बन्धिमध्यात्तको  
 प्राप्त करने पर भी शोप नहीं है यह सिद्ध हुआ ।

ॐ अथस्थितसकामकथं कितना काल है ?

§ ७५७. वह सूत्र सुगम है ।

ॐ अपन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्गृहृत है ।

§ ७५८. क्योंकि एक समयान् स्थितिक बन्धका अस्तित्व काल अपन्यसे एक समय और  
 उत्कृष्टसे अन्तर्गृहृतमारा उपलब्ध होता है ।

ॐ सम्पत्त्व और सम्पग्मिध्यात्वके मुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यपदके  
 संकामकोक्य कितना काल है ?

§ ७५९. पर पुअसुत्त सुगम है ।

ॐ अपन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ ७६० मुजगारसंक्रमक्य परिके ब्रह्मे है—वा उरवाधोम्य सम्पत्त्व और सम्पग्मिध्यात्वके  
 स्थितिसकमसे पुक्त ह और जो वसकी स्थितिसे मिध्यात्वकी हो समय अथिक आदि स्थितिसे  
 पुक्त है वेसे मिध्यात्तद्धि कीके सम्पत्त्वको प्राप्त होने पर दूसरे समयमें मुजगारसंक्रम होकर

विदियसमयम्मि भुजगारसंकमो होदूण तदणंतरसमए अप्पदरसंकमो जादो । लद्धो जहणणुक्स्सेणेगसमयमेत्तो भुजगारसंकामयकालो । एवमवड्ठिदसंकमस्स वि । णवरि समयुत्तरमिच्छत्तद्विदिसंतकम्मिणएण वेदगसम्मत्ते पडिवण्णे विदियसमयम्मि तदुवलंभो वत्त्वो । एवमवत्तव्वसंकमस्स वि वत्तव्वं । णवरि णिस्संतकम्मियमिच्छाइड्ठिणा उवसमसम्मत्ते गहिदे विदियसमयम्मि तदुवलद्धी होदि ।

❀ अप्पदरसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ ७५७. सुगमं ।

❀ जहणणेणंतोमुहुत्तं, उक्कस्सेण वेद्धावड्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

§ ७५८. एत्थ ताव जहणणकालपरूवणा कीरदे—एगो मिच्छाइट्ठी पुव्वुत्तेहिं तीहिं पयारेहिं सम्मत्तं घेत्तूण विदियसमए भुजगारावड्ठिदावत्तव्वाणमण्णदरसंकमपज्जाएण परिणमिय तदियसमए अप्पयरसंकामयत्तमुवगओ, सव्वजहण्णेण कालेण मिच्छत्तं गओ, जहणणकालाविरोहेण संकिलिद्धो सम्मत्तद्विदीए उवरि मिच्छत्तद्विदिं तप्पाओगवड्ठीए वड्ढाविय सव्वलहुं सम्मत्तं पडिवण्णो, भुजगारसंकमेण अवड्ठिदसंकमेण वा परिणदो त्ति तस्स अंतोमुहुत्तमेत्तो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमप्पदरसं० जहणणकालो होइ । अहवा सम्मत्तं पडिवज्जिय अंतोमुहुत्तमप्पदरसरूवेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं द्विदिसंकममणु-

तदनन्तर समयमें अल्पतरसंक्रम होता है । इसी प्रकार इनके भुजगारसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय प्राप्त हुआ । इसी प्रकार एक समय अवस्थितसंक्रमका भी प्राप्त होता है । किन्तु इतनी विशेषता है कि एक समय अधिक मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मवाले जीवके द्वारा वेदकसम्यक्त्वके प्राप्त करने पर दूसरे समयमें उसकी प्राप्ति कहनी चाहिए । इसीप्रकार अवक्तव्य-संक्रमका भी कहना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि उक्त दोनों प्रकृतियोंके सत्कर्मसे रहित मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा उपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करने पर दूसरे समयमें उसकी उपलब्धि होती है ।

❀ अल्पतरसंक्रामकका कितना काल है ?

§ ७५७ यह सूत्र सुगम है ।

❀ जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है ।

§ ७५८ यहाँ पर सर्वप्रथम जघन्य कालका कथन करते हैं—कोई एक मिथ्यादृष्टि जीव पूर्वोक्त तीन प्रकारसे सम्यक्त्वको ग्रहण कर दूसरे समयमें भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य इनमेंसे किसी एक पर्यायरूपसे परिणत होकर तीसरे समयमें अल्पतरसंक्रमपनेको प्राप्त हुआ । पुनः सबसे जघन्य काल द्वारा मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । फिर जघन्य कालमें विरोध न पड़े इस विधिसे सक्लिष्ट होकर सम्यक्त्वकी स्थितिके ऊपर मिथ्यात्वकी स्थितिको बढ़ाकर अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । फिर भुजगारसंक्रमरूपसे या अवस्थितसंक्रमरूपसे परिणत हुआ । इस प्रकार उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्राप्त हुआ । अथवा सम्यक्त्वको प्राप्त करके अन्तर्मुहूर्त काल तक सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पतररूपसे स्थितिसंक्रमका पालन करके अतिशीघ्र दर्शनमोहनीयकी क्षणार्णमें व्यापृत हुए

पानिय मज्जन्तुं दमनमोहस्युवणाण वासदम्म पपदब्रह्मण्यलो परुबेप्यो । उहस्सेण  
 मादिरयवेगावट्टिमागरोवमकालपरुबणा णं कपय्या । त जहा—एसो मिच्छारट्टी  
 मम्मत्तं पत्तुण सम्ममहत सुवमममम्मत्तदमप्यदरमंक्रममणुपानिय वेदयसम्मत्तेण पण-  
 चावट्टिमनुपानिय अतासुदुत्तावसेस तम्मि अप्यपरसकमारोहण मिच्छत्त सम्मामिच्छत्त  
 वा पट्टिबणो ततो अतासुदुत्तेण वेदयसम्मत्तं पट्टिबज्जिय विदियठावट्टिमप्यपरसंक्रमेणाणु-  
 पाडिय तदवमाने अतोसुदुत्तावससे मिच्छत्तं गतो पत्तिदोवमानखेज्जमागमत्तकालमुत्तेज्जणा-  
 वावारेगच्छिय मम्मत्तयगिमुत्तेज्जणकालीए तदप्यपरमक्रम सम्मानिय पुणो वि  
 त्थानाप्रोगेण कालेण सम्मामिच्छत्तयगिमत्तलिमुत्तेज्जिय तदप्यपरकालं समाणेदि ।  
 एव पानियेवमामंगज्जमागम्मदियवेदावट्टिसागोवमाणि दोण्हमदसिं कम्माणमुहस्स  
 पपदद्विदिमंक्रमकान्ते होए ।

○ सेसाणं कम्मार्णं सुजगारसकामओ केवपिरं कालावो होदि ?

। ७ १. गुणम ।

○ जहणणेणेपसमओ, उहस्सेण एग्यपीससमया ।

। ७१०. एय ताव मिच्छत्तम्भुव सुजगारफालो जहणणेपममयमपो वस्यो ।

उहम्मणेगूणवाममयाणमुप्पत्ति वत्तम्मामो—अथनाणु सोहम्म ताव णो णंदिओ

जी। ८ प्र. १ अथय कात्र करमा वादिए । अहस्सत्ते माथिक हो एवामठ सागरपमाण कात्तरी  
 एवामा एग प्रधार करनी वादिए । एव—वेदे एक मिच्छारट्टि जोव प्रथम सपदत्त्वका मयस  
 कर गवम कथिह इताममयावराह कात्त उह अन्वतरमंक्रमका कात्रन कर तथा बहसममयकत्तक  
 माव प्रथम कालमठ सागर कायरा वात्रन कर एगमे कम्ममु हुत्तं कात्त सेव एतन पर कस्सत्तसंक्रमके  
 कथितोप वृत्तेह मिच्छत्तय या मययगिमप्यात्तके मात्र हुथा । एरि अन्वत्तुं हुत्तं वेदकमम्यत्तको  
 कात्र कर ित्तिय एवामठ सागर कात्त उह अन्वतरमंक्रमका माव एता । एरि इतके कात्तमे  
 कम्मत्तुं कात्र सेव एतन पर मिच्छत्तय एव प्रत हुथा । एरि एय ८ अमक्यालपे अगपमाय कात्तक  
 वृत्तनके एवामठके माव एव कर मययत्तकी अन्वित्त एतेनाकात्तिये हाए एगके कस्सत्त  
 गंतवका मात्रन कर तथा एरि भी कथायाम्य कात्तके हाए मययगिमप्यात्तकी अन्वित्त कात्तकी  
 १ तथा कर एग ८ कस्सत्तकत्तको मयम करमा दे । इम प्रकार इन दामो कथेके कस्सत्त  
 सिद्धिभेदकका वत्तु कात्र एययका कात्तक्याता भग अथिक वा एवामठ सागरपमाव एता दे ।

या कर्मोके सुजगागमकामकय छिना पाउ ई ?

। ७११. पर गूव गुणम दे ।

○ अथय कात्त एव गमय ई आउ उहए कात्त उहाम मयय ई ।

। ७११. एही का मिच्छत्तके गवान सुजगाग एयका अथय कात्त एव गमय करवा  
 वादिए । एतन ए. ८ कात्तिय गवपीठी कथितयो वग्याता ई । एगमे मरे वचम अजगानुसपी  
 कथरा वाचना दे—एही एव कथितिय ही एतन उतरकात्तकी कथिय कात्तक्ये इत

सगजीविदद्वाचरिमावलियाए उवरि सत्तारस समया अहिया अत्थि त्ति अद्वाक्खएण माणादीणं परिवाडीए पण्णारससु समएसु भुजगारेण बंधवुद्धि काऊण जहाकममेव बंधावलियादीदं कोहे पडिच्छिय पुणो चरिम-दुचरिमसमएसु विवक्खियकोहस्स अद्वा-संकिलेसक्खएहि भुजगारबंधमणुपालिय -तदो भवक्खएण सण्णिपंचिदिएसु विग्गहं काऊण्येयसमयमसण्णिसमाणड्ढिदिं बंधिऊण सरीरं गहिऊण सण्णिद्विदिबंधेण परिणदो । तदो आवलियादीदं जहाकमं संकामेमाणस्स एगूणवीसभुजगारसमया लद्धा होंति । एवं सेसकसाय-णोकसायाणं । णवरि णोकसायाणं भण्णमाणे पुव्वुत्तसत्तारससमयाहियचरिमा-वलियाए आदीदो पड्ढि सौलससमएसु कसायाणमद्वाक्खएण परिवाडीए द्विदिबंधमण्णो-ण्णादिरित्तं बड्ढाविय पुणो सत्तारससमए संकिलेसक्खएण सव्वेसिमेव समगं भुजगारबंधं कादूण तेणेव कमेण बंधावलियादीदं णोकसाएसु पडिच्छिय तदो काल कादूण पुव्वं व असण्णि-सण्णिद्विदिं बंधिय बंधसंकमणावलियवदिकमे ताए चैव परिवाडीए संकामेमाणस्स तेसिं पयदुक्कस्सकालसमुप्पत्ती वत्तच्चा ।

### ❀ सेसपदाणि मिच्छुत्तभंगो ।

§ ७६१. अप्पयरसंकामयस्स जहण्णेण्येयसमओ, उक्क० तेवड्ढिसागरोवमसदं सादिरेयं । अवड्ढिदपदस्स वि जहण्णकालो एगसमयमेत्तो, उक्कस्सो अंतोमुहुत्तपमाणो ति एवमेदेण भेदाभावादो ।

सत्रह समय अधिक रहने पर अद्वाक्षयसे मानादिककी परिपाटीक्रमसे पन्द्रह समय तक भुजगार-रूपसे बन्धवृद्धि करके यथाक्रमसे ही बन्धावलिके बाद क्रोधमें संक्रमित करके पुनः अन्तिम समयमें और उपान्त्य समयमें विवक्षित क्रोधका अद्वाक्षय और संक्लेशक्षयसे भुजगारबन्धका पालन कर अनन्तर भवक्षयसे संह्री पव्वेचिन्द्रियोंमें विग्रह करके एक समय तक असंझीके समान स्थितिका बन्ध करके तथा शरीरको ग्रहण कर संह्रीके योग्य स्थितिबन्धरूपसे परिणत हुआ । फिर एक आवलिके बाद क्रमसे सक्रम करनेवाले जीवके भुजगारसक्रमके उन्नीस समय प्राप्त होते हैं । इमी प्रकार शेष कषायों और नोकषायोंके भुजगारसक्रमके उन्नीस समय होते हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि नोकषायोंका उक्त काल कहने पर पूर्वोक्त सत्रह समय अधिक अन्तिम आवलिके प्रारम्भसे लेकर सोलह समयोंमें कषायोंके अद्वाक्षयसे क्रमसे स्थितिबन्धको परस्पर अधिक अधिक बढ़ाकर पुन सत्रहवें समयमें संक्लेशक्षयसे सभीका समान भुजगारबन्ध करके उसी क्रमसे बन्धावलिके बाद नोकषायोंमें संक्रमित करके अनन्तर मरकर पहिलेके समान असंझी और संह्रीके योग्य स्थितिको बाँधकर बन्धावलि और संक्रमावलिके व्यतीत होने पर उसी क्रमसे संक्रम करनेवाले जीवके नौ नोकषायोंकी प्रकृत उत्कृष्ट कालकी उत्पत्ति कहनी चाहिए ।

❀ शेष पदोंका भंग मिथ्यात्वके समान है ।

§ ७६१ क्योंकि अल्पतरसंकामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक एक सौ त्रेसठ सागर है । अवस्थितपदका भी जघन्य काल एक समयमात्र है और उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्तप्रमाण है, इसप्रकार इस कालसे प्रकृतमें कोई भेद नहीं है ।

ॐ अथर्वि अथर्वसंस्कृतमया जह्वर्यास्तसेष्य एयसमभ्यो ।

§ ७६२ मिच्छत्सु अवचत्संस्कृतं जरिव चि एत् । एदेसिं पुण विसंजोयनादो सध्वोवसामगादो च परिवदंतं पद्भुच अत्वि अवचत्संस्कृतो । सो च अहण्नुक्तसेजेय-समयमेवकस्तुमात्रिओ चि एधिओ चो विसेसो, गाण्जो चि पुर्त् होइ । एवमेयवीवेच कस्तो ओषेच फरुविदो ।

§ ७६३ एचो आदेसपरुवणहु सुचद्विदमुच्चारणं वचदस्तामो । त अह—आदेसेज भेर्य० मिच्छ-वारसक०-नवजोक्० मुञ्ज०सक० केवधिरं० ? अह० एयसमजो, उक्० मिच्छत्सु तिग्नि समया, सेसाणमह्वारस समया । नवरी इरिक्-पुरिस०-इस्त-रार्णं मुञ्ज० अह० एयसमजो, उक्० सत्तारस समया । अप्यदर० अह० एयसमजो उक्० तेचीस सागरो० देवपाणि । अवह्विद० ओषमंगो । एवमर्णताणु०४ । नवरी अवच० अहण्णु एयसमजो । सम्मत्-सम्मामि० मुञ्ज०-अवह्वि०-अवच० ओषं । अप्यदर० मिच्छत्समंगो । एव पदमाए । नवरी सध्वेसिमप्यदर० सगह्विदी देवजा । विद्यादि जाव सत्तमि चि एव चोव । नवरी मिच्छ मुञ्ज० उक्० वेसमया, क्ताय शोक सत्तारस समया ।

० किन्तु इतनी विशेषता है कि अवचत्संस्कृतमकोच्य अथर्व्य और उत्कृष्ट कस्त एक समय है ।

§ ७६२ मिच्छात्सुके अवचत्सु संस्कृतमक बीज नहीं है यह कह आये हैं । किन्तु इन कर्मोंके विसंवाङ्मसे और सर्वोपरहमत्पसे गिण्टे हुए बीजकी अपेक्षा अवचत्संस्कृतम है और वह अप्यद तथा उत्कृष्टकरसे एक समयभावी है । इसमकार इतना ही विशेष है, अन्य विशेष नहीं है यह एक कल्पना व्यत्यय है । इस प्रकार ओषसे एक बीजकी अपेक्षा अवचत्सु कल्पन किया ।

§ ७६३ आने आदेशरत्न कल्पन करनेके सिध सुत्रसे सूचित हुए उच्चारणात्मे वचदस्तामो हैं । यद्य—आदेशसे न्यरकिओमें मिच्छात्सु, वाद्य क्ताय और नो मोक्षयपेके मुञ्जगारसंस्कृतमक्य किण्ठन कस्त है ? अवचत्सु कस्त एक समय है और उत्कृष्ट कस्त मिच्छात्सुके बीज समक है तथा ओषकम अह्वरस समक है । किन्तु इतनी विशेषता है कि बीजैव पुण्यवेव हास्व और रजिक्के मुञ्जगारसंस्कृतमक्य अप्यद कस्त एक समय है और उत्कृष्ट कस्त सत्रस समक है । अत्यन्त संस्कृतमक्य अवचत्सु कस्त एक समय है और उत्कृष्ट कस्त कुञ्ज कम तेचीस सागर है । अवचत्सु संस्कृतमक्य मंग ओषके समाग है । इसीप्रकार अनन्त्यानुवन्वीचतुष्पञ्च जानन्य चाहिय । किन्तु इतनी विशेषता है कि अवचत्सुसंस्कृतमक्य अथर्व्य और उत्कृष्ट कस्त एक समय है । सम्भवत् और सम्भवत्मिच्छात्सुके मुञ्जगार, अवसिप्त और अवचत्सुसंस्कृतमक्य मंग ओषके समाग है । अत्यन्त संस्कृतमक्य मंग मिच्छात्सुके सम्भव है । इसीप्रकार पहिली पृथिवीमें जानन्य चाहिय । किन्तु इतनी विशेषता है कि सत्र महुतिबेके अत्यन्तसंस्कृतमक्य उत्कृष्ट कस्त कुञ्ज कम अपनी स्वितिप्रमात्य है । इसी पृथिवीसे ओषर सत्तवी पृथिवीक्य इसीप्रकार मंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि मिच्छात्सुके मुञ्जगारसंस्कृतमक्य उत्कृष्ट कस्त हो समय है । तथा क्तायें और मोक्षयपेक्य सत्रस समक है ।

§ ७६४. तिरिक्ख-पंचि० तिरिक्खत्तिय० ३ मिच्छ० वारसक०--णवणोक० भुज० जह० एयसमओ, उक्क० चत्तारि समया एगूणवीससमया । अप्प०-अवड्ढि० विहत्तिभंगो । एवमणंताणु० ४ । णवरि अवत्त० जहण्णु० एयसमओ । सम्म०-सम्मामि० विहत्तिभंगो । णवरि पंचि० तिरि० पज्ज० इत्थिवेद० भुज० जह० एयसमओ, उक्क० सत्तारस समया । जोणिणीसु पुरिस-णवुंसयवेद० भुज० जह० एगसमओ, उक्क० सत्तारस समया । पंचि०-तिरि० अपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० भुज० जह० एगसमओ, उक्क० चत्तारि समया एगूणवीसं समया । अप्पदर०-अवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० अंतो० । सम्म०-सम्मामि० अप्प० जह० एयस०, उक्क० अंतो० । णवरि इत्थिवे०-पुरिसवे० भुज०

**विशेषार्थ—**जो असंज्ञी जीव दो विग्रहसे नरकमें उत्पन्न होता है उसके दूसरे समयमें अद्धाक्षयसे एक भुजगार समय सम्भव है तीसरे समयमें संज्ञी होनेसे भुजगार समय प्राप्त होता है और चौथे समयमें संक्लेशक्षयसे भुजगारसमय सम्भव है। इस प्रकार नरकमें लगातार तीन समय तक भुजगारबन्ध होनेसे एक आवलिके बाद लगातार वहाँ पर तीन समय तक भुजगार संक्रम भी सम्भव है, इसलिए सामान्यसे नरकमें मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रमका उत्कृष्ट काल तीन समय कहा है। यतः असंज्ञी जीव प्रथम नरकमें ही उत्पन्न होता है, अतः वहाँ भी यह काल इसीप्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र द्वितीयादि पृथिवियोंमें असंज्ञी जीव मरकर नहीं उत्पन्न होता अतः वहाँ यह काल अद्धाक्षय और संक्लेशक्षयसे दो समय ही जानना चाहिए। स्थितिविभक्तिके भुजगार अनुयोगद्वारमें नरकमें बारह कषायों और नौ नोकषायोंके भुजगारका उत्कृष्ट काल सत्रह समय ही बतलाया है। वहाँ अठारह समयका निषेध किया है। किन्तु वहाँ पर भुजगारसंक्रमका उत्कृष्ट काल अठारह समय कहा है सो इसे प्राप्त करते समय नरकमें शरीर ग्रहणके पूर्वतक सोलह भुजगार समय प्राप्त करनेसे, सत्रहवें समयमें संज्ञीके योग्य स्थितिबन्ध करानेसे और अठारहवें समयमें संक्लेशक्षयसे भुजगारबन्ध करानेसे प्राप्त करना चाहिए। यहाँ ये १८ समय जो भुजगारके प्राप्त हुए उनका उती क्रमसे एक आवलिके बाद संक्रम करानेसे उक्त बारह कषायोंमेंसे प्रत्येक कषायके तथा पाँच नोकषायोंके भुजगार संक्रमका उत्कृष्ट काल अठारह समय आ जाता है। मात्र खीवेद, पुरुषवेद, हास्य और रतिके इस कालमें कुल विशेषता है सो उसे जानकर घटित कर लेना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

§ ७६५. तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके भुजगारसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल मिथ्यात्वका चार समय तथा शेषका उन्नीस समय है। अल्पतर और अवस्थितपदका भंग स्थितिविभक्तिके समान है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उक्त पदोका काल जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके अवत्तव्यपदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग स्थितिविभक्तिके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें खीवेदके भुजगारसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सत्रह समय है। तिर्यञ्च योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदके भुजगारसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सत्रह समय है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषायों और नौ नोकषायोंके भुजगारसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल मिथ्यात्वका चार समय तथा शेषका उन्नीस समय है। अल्पतर और अवस्थितपदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतरपदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। किन्तु इतनी विशेषता है कि खीवेद

वह० एयस०, उह० सचारस समया । मणुस०३ पंधिदियतिरिस्तुतियमगो । णवरि  
पपहीभमवच० अरिय तासिमेयसमजो ।

‡ ७६५. देवेसु मिच्छ०-भारसक-णवमोक्रसाय० ब्रुव अह० एयसमजो, उह०  
तिण्णि समया अहुरस समया । अप्प६०-अवह्ति० विहचिमगो । णवरि णवुंसयवेद०  
सुव० अह० एयसमजो, उह० सचारस समया । अणंताणु०४ अपवक्तानणमगो ।  
णवरि अवच० अहण्यु० एयसमजो । सम्म०-सम्माभि० विहचिमगो । एवं भवच०  
वाणवेतर० । णवरि सगह्दिदी । जोदिसियादि जाव सहस्मार चि बिदियपुढविमगो ।  
णवरि सगह्दिदी । आणदादि सम्बहुा चि विहचिमगो । एव जाव० ।

⊙ एतो अतर ।

‡ ७६६ एतो उवरि अंतर वचइस्तामो चि प्पञ्जासुचमेद । तस्स दुविहो  
णिदेसो—मोषण आवसेज य । तत्थोचपक्कणह्णुसुचरसुचणिदेसो ।

और पुरुषवेदके मुद्रगारसंक्रमक अवश्य काल एक समय है और ब्रह्म काल सत्रह समय है ।  
मनुष्यत्रिकर्म पञ्च गिर्य तिर्यञ्चत्रिकर्मे समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें  
बिम्ब प्रकृतियों। अचलभ्यपद है इनका अवश्य और ब्रह्म काल एक समय है ।

विशेषार्थ—ऐसा नियम है कि मिथ्यादृष्टि जीव मरकर जिन वेदशास्त्रोंमें उत्पन्न होय  
है वसके वही वेदशा कथ होता है । इसलिये यहाँ पर पञ्चगिर्य तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें क्लेशके  
मुद्रगारके सत्रह समय तथा तिर्यञ्च बोधिनियोंमें पुरुषवेद और नपु सम्बन्धके मुद्रगारके सत्रह  
समय बंधे हैं । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोंमें भी इसीप्रकार ज्ञान सेना चाहिए । शेष  
कथन सुगम है ।

‡ ७६७. वेदोर्नि मिथ्यात्व अयत्त कपाय और नो नोभ्ययोर्के मुद्रगारसंक्रमक अवश्य  
काल एक समय है और ब्रह्म काल मिथ्यात्वक हीन समय तथा शेषक अठारह समय है ।  
अस्तार और अचम्बिनवपद मद्र स्थितिबिम्बिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि  
नपुंसकवदके मुद्रगारपदका अवश्य काल एक समय है और ब्रह्म काल सत्रह समय है ।  
अनन्तनुपगभीषतुपुञ्जक भंग अग्रवाक्यानावरकके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि  
इनके अचलभ्यपदक अवश्य और ब्रह्म काल एक समय है । सम्बन्ध और सम्बन्धिध्यातरक  
भंग स्थितिबिम्बिके समान है । इसी प्रकार मदनवासी और अन्तर वेदोर्नि जानना चाहिए ।  
किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति ब्रह्मी चाहिए । व्यातिपियोंसे लेकर सहकार  
बन्धनके वेदोर्नि दूसरी पृथिवीके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी  
स्थिति ब्रह्मी चाहिए । अनन्त कल्पस अन्तर सचार्थसिद्धितक वेदोर्नि स्थितिबिम्बिके समान  
भंग है । इनी प्रकार अनाहारक माग्यावरक जानना चाहिए ।

⊙ आग अन्तरफालक अपिकार है ।

‡ ७६८. इनमे आगे अन्तरका वतभाव है इस प्रकार यह प्रतिज्ञासूत्र है । वसक्य मिदो  
तो प्रसारक है—आप और आदेश । इनमेंसे ओपका कथ्य करनेके लिय आगेके सूत्रका  
निर्देश करते हैं—

❀ मिच्छत्तस्स भुजगार-अवट्टिदसंक्रामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहणणेण एयसमओ । उक्खस्सेण तेवट्टिसागरोवमसदं सादिरेयं ।

§ ७६७. एत्थ जहणंतं भुजगारावट्टिदसंक्रमेहिंतो एयसमयमप्पयरे पडिय विदियसमए पुणो वि अप्पिदपदं गयस्स वत्तव्वं । उक्खसंतरं पि अप्पयरुक्खस्सकालो वत्तव्वो । णवरि भुजगारंतरे विवक्खिए अवट्टिदकालेण सह वत्तव्वं । अवट्टिदंतरं च भुजगारकालेण सह वत्तव्वं ।

❀ अप्पयरसंक्रामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहणणेण एयसमओ, उक्खस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ७६८. अप्पदरादो भुजगारावट्टिदाणमण्णदरत्थ एयसमयमंतरिय पडिणियत्तस्स जहणमतरं, तदुभयकालकलावे अतोमुहुत्तमेत्तावट्टिदकालपहाणे उक्खसंतरमिह गहेयव्वं ।

❀ एवं सेसाणं कम्माणं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवज्जाण ।

§ ७६९. जहा मिच्छत्तस्स भुजगारादिपदाणमंतरपरूवणं कय तहा सेसाणं पि कम्माण सम्मत्त-सम्मामि०वज्जाण कायव्वं, विसेसाभावादो । एत्थतणविसेसपदुप्पायणट्ठ-मुत्तरसुत्तमाह—

\* मिथ्यात्वके भुजगार और अवस्थितसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ? जघन्य एक समय है और उत्कृष्ट साधिक एक सौ त्रेसठ सागर है ।

§ ७६७ यहाँपर भुजगार और अवस्थितसंक्रमसे एक समयके लिए अल्पसंक्रममें जाकर दूसरे समयमें पुनः विवक्षितपदको प्राप्त हुए जीवके जघन्य अन्तर कहना चाहिए। उत्कृष्ट अन्तर भी अल्पतरके उत्कृष्ट कालप्रमाण कहना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि भुजगारपदका अन्तर विवक्षित होने पर अवस्थितके कालको अल्पतरके कालमें मिलाकर कहना चाहिए। तथा अवस्थितकालका अन्तर भुजगारकालको अल्पतरके कालमें मिलाकर कहना चाहिए।

\* अल्पतरसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ? जघन्य एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ७६८. अल्पतरसे भुजगार और अवस्थित इनमेंसे किसी एकमें ले जाकर एक समयके लिए अन्तरित कर पुन लौटे हुए जीवके जघन्य अन्तर होता है। तथा अन्तर्मुहूर्तमात्र अवस्थितकालप्रधान उन दोनोंके कालकलापप्रमाण यहाँ उत्कृष्ट अन्तर ग्रहण करना चाहिए।

\* इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सिवा शेष कर्मोंका अन्तरकाल जानना चाहिए ।

§ ७६९ जिसप्रकार मिथ्यात्वके भुजगार आदि पदोंके अन्तरकालका कथन किया उसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको छोड़कर शेष कर्मोंके भी अन्तरकालका कथन करना चाहिए, क्योंकि मिथ्यात्वके कथनसे इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है। अब यहाँपर विशेषताका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—



⊗ यच्चि अर्षंताणुर्षधीषमप्यपरसंक्रामयतरं जह्ययेषोयसमन्नो उक्तस्तेषु वेद्यावद्विसागरोवमाधि साविरेपाधि ।

§ ७७० मिच्छत्तस अप्यपरसंक्रामयतरं उक्तस्तेर्णतोमुहुचमेव, इह पुण साविरेय वेद्यावद्विसागरोवममेचमुवलम्बदि चि एसो विसेसो । सम्बेसिमवत्तम्यपदगमो अणो वि विसेसो संभवइ चि पशुप्यापण्डमिदमाह ।

⊗ सम्बेसिमवत्तम्यसंक्रामयतरं केवचिर काखावो होवि ? जह्ययेषो यतोमुहुत्तं, उक्तस्तेषु अत्रपोग्गणपरियट्टं देसूणं ।

§ ७७१ अण्ताणुर्षधीणं विसंक्षेपणापुव्वसंक्षेगे सेसकसाय-योक्त्वायाणं च सम्बोवसामणापडिवादे अथत्तम्यसंक्रामस्सादिं करिय अतरिदस्स पुनो अइण्णुअस्तेर्णतो मुहुत्तमुपोमालपरियट्टमेत्तमतरिय पडिबण्णत्तन्मावम्मि तट्टुमयसमवदंसजादो । एवमेदेसि-मंतरमयं विसेस जाणाविय संपहि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तमुजगारादिपसाजमंतरपमाण-परिण्णैदकरण्डुमिदं सुत्तमाह—

⊗ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तायं मुजगार-अवद्वियसंक्रामयतर केवचिरं काखावो होवि ? जह्ययेषतोमुहुत्तं ।

§ ७७२ पुष्पुप्पणसम्मत्तादो परिवदिय मिच्छत्तद्विदित्तुहुट्टोए सह पुनो वि सम्मत्त पडिबत्तिय समयाविरोहेण मुजगारमवद्विद च एयसमय क्वत्तुप्पदरेर्णतरिय

⊗ किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्के अप्यपरसंक्रामकका अपन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो ज्पासठ सागर है ।

§ ७७० मिप्यात्वके अहरतरसंक्रामकका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त ही है । किन्तु यहाँ पर साधिक दो ज्पासठ सागरप्रमाण अत्रलप्य होय है इसप्रकार इतनी विशेषता है । इसी प्रकार सब प्रकृतियोंकी अवच्छेदपदावत कस्य विशेषता भी सम्भव है, इसलिय कसे कसनेके लिय इस सूत्रको कहे है—

⊗ सब प्रकृतियोंके अवच्छेदसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ? अपन्य अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट कृ० कम अर्षपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

§ ७७१ अतन्त्यानुबन्धिकोक्तं विसंक्षेपणापूर्वक संयोगके समब तथा सेप क्पायो और नेवत्तपणेके सर्वोपरामनासे गित्ते समब अवच्छेदसंक्रामक आदि क्पा कर तथा दूसरे समयमें अन्तरको प्राप्त हुए जीवके पुनः अपन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट कृ० कम अर्षपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अन्तर केकर अवच्छेदपदाके प्राप्त होनेपर क्पा दोनों अन्तरकाल समब विकल्पार्थं वेध है । इसप्रकार इन बर्णोंकी अन्तरगत विशेषताको क्पाकर अथ सम्बन्ध और सम्बन्धिप्यात्वके मुजगार आदि पूर्वके अन्तरके प्रमाणका ज्ञान करणके लिय इस सूत्रको कहे है—

⊗ सम्यक्त्व और सम्यग्निप्यात्वके मुजगार और अवस्थितसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ? अपन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ७७२, पूर्वमें अथच हुए सम्बन्धसे गिरकर विच्छेदके स्थितिसत्कर्मकी वृद्धिके समब फिर भी सम्यक्त्वके प्राप्त होकर यथाविधि मुजगार और अवस्थितसंक्रामकके एक समय करके

सव्वलहुं मिच्छत्तं गंतूण तेणेव क्रमेण पडिणियत्तिय भुजगारावड्ढिदसंकामयपजाएग परिणदम्मि तदुवलंभादो । एदेसिमुक्कस्संतरं उवरि भणामि त्ति थप्पं काऊणप्पयरजहण्णंतरं ताव परूवेदुकामो सुत्तमुत्तरमाह—

❀ अप्पयरसंकामयंतरं जहएणेणोयसमयो ।

§ ७७३. भुजगारावड्ढिदाणमण्णदरेणंतरिदस्स तदुवलद्वीदो । एदस्सं वि उक्कस्सं-तमेरवं चैव ठविय अवत्तव्वसंकामयजहण्णंतरपरूवड्ढिमिदमाह—

❀ अवत्तव्वसंकामयंतरं जहएणेण फलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो ।

§ ७७४. पढमसम्मत्तुप्पत्तिविदियसमए अवत्तव्वसंकमस्सादिं कादूणंतरिदस्स सव्वलहुं मिच्छत्तं गंतूण जहण्णुव्वेल्लणकालव्वमंतरे तदुभयमुव्वेल्लिय चरिमफालिपद-णाणंतरसमए सम्मत्तं पडिवण्णस्स विदियसमयम्मि तदंतरपरिसमत्तिदंसणादो । एवं जहण्णंतराणि परूविय सव्वेसिमुक्कस्संतरमिदाणि परूवेमाणो सुत्तमुत्तरमाह—

❀ उक्कस्सेण सव्वेसिमद्धपोग्गलपरियइं देसूणां ।

§ ७७५. अद्वपोग्गलपरियइादिसमए पढमसम्मत्तमुप्पाइय विदियसमए अवत्तव्वस्स संकमस्सादिं करिय तदणंतरसमए तदणंतरमुप्पादिय अंतोमुहुत्तेण भुजगारावड्ढिदाणं पि समयाविरोहेणंतरस्सादिं काऊण सव्वलहुअकालपडिवदधुव्वेल्लणावावारेण चरिम-

फिर अल्पतरपदसे अन्तरित करके अतिशीघ्र मिथ्यात्वमें जाकर उसी क्रमसे निवृत्त होकर भुजगार और अवस्थितसंक्रमपर्यायसे परिणत होनेपर उक्त अन्तरकाल उपलब्ध होता है । इनका उत्कृष्ट अन्तर आगे कहेंगे इसलिए स्थगित करके सर्वप्रथम अल्पतरपदके जघन्य अन्तरको कहनेकी इच्छासे आगेका सूत्र कहते हैं—

\* अल्पतरसंक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

§ ७७३ भुजगार और अवस्थित इनमेंसे किसी एकके द्वारा अन्तरको प्राप्त हुए उसका उक्त अन्तरकाल प्राप्त होता है । इसके भी उत्कृष्ट अन्तरकालको उसीप्रकार स्थगित करके अवक्तव्य-संक्रामकके जघन्य अन्तरका कथन करनेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

\* अवक्तव्यसंक्रामकका जघन्य अन्तर पल्पके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ७७४. प्रथम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिके दूसरे समयमें अवक्तव्यसंक्रमका प्रारम्भ करनेके बाद अन्तरको प्राप्त हुए जीवके अतिशीघ्र मिथ्यात्वमें जाकर जघन्य उद्वेलनाकालके भीतर उक्त दोनों प्रकृतियोंकी उद्वेलना करके अन्तिम फालिके पतनके अनन्तर समयमें सम्यक्त्वको प्राप्त होनेके द्वितीय समयमें उसके अन्तरकी समाप्ति देखी जाती है । इसप्रकार जघन्य अन्तरको कथन करके इस समय सब पदोंके उत्कृष्ट अन्तरका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

\* सब पदोंका उत्कृष्ट अन्तर अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है ।

§ ७७५. अर्धपुद्गलपरिवर्तनके प्रथम समयमें प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न करके दूसरे समयमें अवक्तव्यसंक्रमका प्रारम्भ करके तथा उसके अगले समयमें उसका अन्तर उत्पन्न करके, अन्तर्मुहूर्त वाद भुजगार और अवस्थितपदोंके अन्तरका भी यथाविधि प्रारम्भ करके अतिलघुकालसे प्रतिबद्ध उद्वेलनाके व्यापार द्वारा अन्तिम फालिके पतनके बाद अल्पतरसंक्रमका भी अन्तर कराकर

⊗ यच्चि अर्थात्तुर्धनीयमाप्पपरसकामपतरं जह्पयेयेयसमभो  
उच्छस्तेण वेद्धान्हिसागरोवमाणि सादिरेपाणि ।

§ ७७० मिच्छत्तस्स अप्पपरसंक्षमयतरं उच्छस्तेणंतोसुद्धुत्तमेव, इह बुण सादिरेप-  
वेणान्हिसागरोवमेचसुद्धुत्तमदि चि एसो विसेसो । सम्भेसिमवत्तम्पदगजो अण्णो वि  
विसेसो संमव्दि चि पदुप्पायणहुमिदमाह ।

⊗ सम्भेसिमवत्तम्पसकामपतरं केचच्चि कालावो होदि ! जह्पये  
पतोसुद्धुत्तं, उच्छस्तेण अद्दपोग्गलपरियट्ट वेसुणं ।

§ ७७१ अण्णानुबंधीणं विसंबोयणपुम्भसंजोगे सेसकसाय-प्पोकसायाणं च  
सम्भोवसामणापडिवादे अत्तत्तम्पसंक्षमस्सादिं करिय अतरिदम्प पुणो अहण्णुच्छस्तेणतो-  
सुद्धुत्तपोग्गलपरियट्टमेचमतरिय पडिबण्णत्तम्मावम्मि तदुमपसमवदसणादो । एवमेवेसि-  
मतरगयं विसेस ज्ञाणाविय संपदि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसुजगारादिपदाणमंतरपमाण-  
परिच्छेदकरणाहुमिदं सुचमाह—

⊗ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तायं सुजगार-अवह्वित्संक्षमपतर केचच्चिं  
कालावो होदि ! जह्पयेयेयंतोसुद्धुत्तं ।

§ ७७२ पुम्भुप्पण्णसम्मचादो परिबदिय मिच्छत्तदिदिसंतबुद्धोए सह पुणो वि  
सम्मत्तं पडिबत्तिय समपाविरोहेण सुजगारमवह्विद च एयसमयं क्खद्दण्णत्तरेणवरिय

⊗ किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अन्तपरसंक्षामकका  
अपन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छपासठ सागर है ।

§ ७७० मिथ्यात्वके अन्तरसंक्षामकका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्हूर्त ही है । किन्तु यहाँ पर  
साधिक दो छपासठ सागरवमाय अत्यन्त होता है इसप्रकार इतनी विशेषता है । इसी प्रकार सब  
प्रकृतियोंकी अवच्छेदवद्गत अन्त विशेषता भी सम्भव है, इसलिये उसे करनेके लिये इस  
सूत्रको धरते हैं—

⊗ सब प्रकृतियोंके अवच्छेदसंक्षामकका अन्तरकाष्ठ कितना है ? अपन्य  
अन्तर्हूर्त है और उत्कृष्ट काष्ठ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

§ ७७१ अवच्छेदवद्गतियोंके विद्वेषीयपूर्वक संयमके समय तथा अन्य कथकों और  
नोकपाकेके सर्वोत्पन्नभावे गिरते समय अवच्छेदसंक्षामका अर्थि कर कर तथा दूसरे समयमें  
अन्तरको प्राप्त हुए बीचके पुनः अपन्य अन्तर्हूर्त और उत्कृष्ट काष्ठ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाणका  
अन्तर देख अवच्छेदपदके प्राप्त होनेपर एक हीनो अन्तरकाष्ठ सम्भव दिखलाई देते हैं । इसप्रकार  
इन कर्मोंकी अन्तरगत विशेषताको अथाक अथ अत्यन्त और सम्बन्धित्वके मुजगार भावि  
पक्षके अन्तके प्रमाणात्त ज्ञान करानेके लिये इस सूत्रका धरते हैं—

⊗ सम्पत्त्व और सम्पत्तिमिथ्यात्वके मुजगार और अवस्थितसंक्षामकका अन्तरकाष्ठ  
कितना है ? अपन्य अन्तरकाष्ठ अन्तर्हूर्त है ।

§ ७७२ पूर्वमें कथ्यत हुए सम्पत्त्वके गिरकर मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मको बुद्धिके समय  
धर भी सम्पत्त्वको प्राप्त होकर पचासिचि मुजगार और अवस्थितपदको एक समय करके

संकामयाणमणंतजीवाणं सव्वद्वमविच्छिण्णपवाहसरूवेणावड्डाणदंसणादो ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणां सत्तावीस भंगा ।

§ ७७९. कुदो, भुजगारावट्टिदाव व्वसंकामयाणं भयणिज्जत्तेणाप्पयरसंकामयाणं युवत्तदंसणादो । तदो भयणिज्जपदाणि विरलिय तिगुणिय अण्णोण्णव्भासे ऋए ध्रुवसहिया सत्तावीस भंगा उप्पजंति ।

❀ सेसाणं मिच्छत्तभंगो ।

§ ७८०. सोलसकसाय-णवणोकसायाणमिह सेसत्तेण गहणं, तेसिं च पयद-रूवणाए मिच्छत्तभंगो कायव्वो, भुजगारादिपदसंकामयाणं णियमा अत्थित्तेण तत्तो वेसेसाभावादो । अवत्तव्वपयगदो दु थोवयरो विसेसो एत्थत्थि त्ति तण्णिद्वारणड्डमुत्तर-उत्तमाह—

❀ णवरि अवत्तव्वसंकामया भजियव्वा ।

§ ७८१. मिच्छत्तस्सावत्तव्वसंकामया णत्थि । एदेसिं पुण अवत्तव्वसंकामया अत्थि ते च भजियव्वा त्ति उत्तं होइ । संपहि एदस्सेव भंगविचयस्स सुत्तणिद्विद्वस्स फुडीकरणड्डमुच्चारणं वत्तइस्सामो । तं जहा—णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुविहो णिदेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण सम्य०-सम्मामि०-मिच्छ० विहत्तिभंगो । सोलसक०-णवणोक० भुज०-अप्पद०-अवट्टि० णियमा अत्थि । सिया एदे च अवत्तव्व-

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्वके भुजगारादिपदोंके संक्रामक अनन्त जीवोंका सर्वदा प्रवाहका विच्छेद हुए बिना अवस्थान देखा जाता है ।

\* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सत्ताईस भंग होते हैं ।

§ ७७९ क्योंकि भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यसक्रामकोंके भजनीयपनेके साथ अल्पतरसंकामक ध्रुवरूप देखे जाते हैं, इसलिए भजनीय पदोंका विरलन कर तथा उन्हें तिगुणाकर परस्पर गुणा करने पर ध्रुव भंगके साथ सत्ताईस भंग उत्पन्न होते हैं ।

उदाहरण— $\frac{1}{3} \times \frac{2}{3} \times \frac{3}{3} = 20$  भंग । इन सत्ताइस भंगोंमें ध्रुव भंग सम्मिलित है ।

\* शेष प्रकृतियोंका भंग मिथ्यात्वके समान है ।

§ ७८०. सोलह कषायों और नौ नोकषायोंका यहाँ पर शेष पदद्वारा प्रहण किया है । उनका प्रकृत प्ररूपणामें मिथ्यात्वके समान भंग करना चाहिए. क्योंकि इनके भुजगार आदि पदोंका नियमसे अस्तित्व है, अत उसके कथनसे इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है । मात्र अवक्तव्य-पदगत यहाँपर थोड़ीसी विशेषता है, इसलिए उसका निर्धारण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

\* किन्तु उनके अवक्तव्यसंकामक जीव भजनीय हैं ।

७८१ मिथ्यात्वके अवक्तव्यसक्रामक जीव नहीं हैं । परन्तु इनके अवक्तव्यसंकामक जीव हैं और वे भजनीय हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अव सूत्रनिर्दिष्ट इसी भंगविचयका स्पष्टीकरण करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं । यथा—नानाजीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और मिथ्यात्वका भंग स्थितिबिभक्तिके समान है । सोलह कषायों और नोकषायोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित-

धालिपादपार्श्वतरमप्यपरसकममंतराविष देहणमद्वपोग्गलपरियद् परिममिष बोवात्सेसए  
सिन्धिद्रव्यए सम्मर्त्तं पठिबण्णस्स तदतरसमाप्ताभुवर्त्तमादो । णवरि पुणो सम्मर्त्तं  
पठिबचिचिदिपसमए अणत्तव्वसंक्रमयतर परिसमाभेयव्व । तदपंतरसमए च अप्यपर-  
सकमतरववच्छेत्तो कायव्वो अतोमुहुत्तपठिबादपठिबचीहि सुजगारावद्धिदाणमंतरपरिसमपे  
कयव्व्या । एवमोभणतरपरूवणा गया ।

‡ ७७६ संपदि एदेण दसामासयसुत्तेण सचिवमादेसपरूवर्त्तं वत्तइस्सामो । त  
अहा—आदेसेण सन्नपेरय्य-सुव्वतिरिक्ख-सम्भमणुस्स-सम्भदेवा चि द्विदिबिहचिमंगो ।  
णवरि मभुसविय ३ बारउक०-णवणोक० अवत्त० अह० अतोमु० । उक० पुम्भकोदि  
पुपत्तं । एव साव० ।

⊗ चाप्पाजीवेहि भगविच्चओ ।

‡ ७७७ सुगममेव सुत्त, अहियारसंमालभमेत्तफलत्तादो ।

⊗ मिच्छत्तस्स सम्भजीवा सुजगारसकामगा च अप्यपरसकामया च  
अवत्तियसकामया च ।

‡ ७७८ मिच्छत्तस्स सुजगारादिसकामया णाणादीवा गियमा अरिय चि  
एत्थाहियारसंभओ कयव्वो । इदो एदेसि गियमा अरियत्तं ? ण, मिच्छत्तसुजगारादि

कुछ कम अर्थपुद्गल परिवर्तन कबल तक परिश्रमय करके सिद्ध होनेके लिए बोद्धा कबल सेव  
रहने पर सम्पत्त्वको प्राप्त हुए जीवके लक्षके अन्तर्गामी समाप्ति वरुण्य होती है । किन्तु इतनी  
विशेषण है कि पुनः सम्पत्त्वको प्राप्त होनेके लक्षके समयमें अवच्छिन्नसंक्रमक अन्तर समाप्त  
करना चाहिए । और तदनन्तर समयमें अन्तरसंक्रमके अन्तरात्त विच्छेद करना चाहिए तथा  
अन्तर्मुहूर्त्तके भीतर सम्पत्त्वसे म्युक्त होकर पुनः प्राप्त करनेके लिये इष्ट सुजगार और  
अवस्थितपक्षके अन्तरात्त समाप्ति करनी चाहिए । इस प्रकार ओपसे अन्तरात्तकी प्रत्यया  
समाप्त हुए ।

‡ ७७९ अब इस देशामर्त्तक सूत्रसे सूचित हुए आदेशका कवन करते हैं । यथा—आदेशसे  
सब मारकी, सब तिर्यक, सब मनुष्य और सब वैश्वीं स्थितिनिर्मलके समान भंग है । किन्तु  
इतनी विशेषण है कि मनुष्यत्रिकमें बारह कणाय और नौ मोक्षयोंके अवच्छिन्नसंक्रमकका अर्थव्य  
अन्तर अन्तर्मुहूर्त्त है और बल्लह अन्तर पूर्वकालिपुनकत्वप्रमथय है । इसी प्रकार अन्तहारक मार्गीया  
तक शानना चाहिए ।

⊗ अब नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयकका अधिकार है ।

‡ ७८० यह सूत्र सुगम है, क्योंकि इसका प्रयोजन अधिकारकी सम्प्राप्त्यन्त करण है ।

⊗ मिथ्यात्वके सब ( नाना ) जीव सुजगारसंक्रामक हैं, अप्यपरसकामक हैं  
और अवस्थितसंक्रामक हैं ।

‡ ७८० मिथ्यात्वके सुजगार आदि पर्यन्ति संक्रमक माना जीव निबन्धसे हैं इसप्रकार  
वहाँ पर अधिकारका सम्प्राप्य करना चाहिए ।

सक्य—एवम् निबन्धसे अस्तित्व क्यों है ?

संकामयाणमणंतजीवाणं सव्वद्धमविच्छिण्णपवाहसरूवेणावट्टाणदंसणादो ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तापां सत्तावीस भंगा ।

§ ७७९. कुदो, भुजगारावट्टिदाव व्वसंकामयाणं भयणिज्जत्तेणाप्पयरसंकामयाणं धुवत्तदंसणादो । तदो भयणिज्जपदाणि विरलिय तिगुणिय अण्णोण्णव्भासे कए धुवसहिया सत्तावीस भंगा उप्पजंति ।

❀ सेसाणं मिच्छत्तभंगो ।

§ ७८०. सोलसकसाय-णवणोकसायाणमिह सेसत्तेण गहणं, तेसिं च पयद-परूवणाए मिच्छत्तभंगो कायव्वो, भुजगारादिपदसंकामयाणं णियमा अत्थित्तेण तत्तो विसेसाभावादो । अवत्तव्वपयगदो दु थोवयरो विसेसो एत्थत्थि त्ति तण्णिण्णद्वारणद्दुत्तर-सुत्तमाह—

❀ एवरि अवत्तव्वसंकामया भजियव्वा ।

§ ७८१. मिच्छत्तस्सावत्तव्वसंकामया णत्थि । एदेसिं पुण अवत्तव्वसंकामया अत्थि ते च भजियव्वा त्ति उत्तं होइ । संपहि एदस्सेव भंगविचयस्स सुत्तणिदिट्ठस्स फुडीकरणद्दुमुच्चारणं वत्तइस्सामो । तं जहा—णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुविहो णिदेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण सम्म०-सम्मामि०-मिच्छ० विहत्तिभंगो । सोलसक०-णवणोक० भुज०-अप्पद०-अवट्टि० णियमा अत्थि । सिया एदे च अवत्तव्व-

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्वके भुजगारादिपदोंके संक्रामक अनन्त जीवोंका सर्वदा प्रवाहका विच्छेद हुए बिना अवस्थान देखा जाता है ।

❀ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सत्ताईस भंग होते हैं ।

§ ७७६. क्योंकि भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यसंक्रामकोंके भजनीयपनेके साथ अल्पतरसंक्रामक ध्रुवरूप देखे जाते हैं, इसलिए भजनीय पदोंका विरलन कर तथा उन्हें तिगुणाकर परस्पर गुणा करने पर ध्रुव भंगके साथ सत्ताईस भंग उत्पन्न होते हैं ।

उदाहरण— $\frac{3}{4} \times \frac{3}{4} \times \frac{3}{4} = 27$  भंग । इन सत्ताईस भंगोंमें ध्रुव भंग सम्मिलित है ।

❀ शेष प्रकृतियोंका भंग मिथ्यात्वके समान है ।

§ ७८०. सोलह कषायों और नौ नोकषायोंका यहाँ पर शेष पदद्वारा ग्रहण किया है । उनका प्रकृत प्ररूपणामें मिथ्यात्वके समान भंग करना चाहिए क्योंकि इनके भुजगार आदि पदोंका नियमसे अस्तित्व है, अतः उसके कथनसे इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है । मात्र अवक्तव्य-पदगत यहाँपर थोड़ीसी विशेषता है, इसलिए उसका निर्धारण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ किन्तु उनके अवक्तव्यसंक्रामक जीव भजनीय हैं ।

७८१ मिथ्यात्वके अवक्तव्यसंक्रामक जीव नहीं हैं । परन्तु इनके अवक्तव्यसंक्रामक जीव हैं और वे भजनीय हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अत्र सूत्रनिर्दिष्ट इसी भंगविचयका स्पष्टीकरण करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं । यथा—नानाजीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और मिथ्यात्वका भंग स्थितिबिभक्तिके समान है । सोलह कषायों और नोकषायोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित-

संक्रमणो च । सिया एदे च अचत्त्वसंक्रामया च । आदेसेण सम्भजेरूप०-सम्भ  
 तिरिक्ख-मणुणत्रपत्त०-सम्भदेवा विहत्तिमगो । मणुसतिय०३ मिच्छ -सम्म०-सम्मामि०  
 विहत्तिमगो । सोलसक०-जवणोक० अप्पद०-अवट्ठि० गियमा भत्वि । सेसप्राणि  
 मयणिजापि । मगा जव ० । एव जाव अभाहारि सि ।

१७८२ एत्थ सुगमचादो सुत्तेणापरुविदारणं मागामाम-परिमाण-खेच-फोसपानं  
 किं चि समासपरुषणमुत्तारणावसवर्णं कस्सामो । त जहा—मागामागायु दुविहो  
 गिदेसो—ओषेण आदेसेण य । ओषेण विहत्तिमगो । जवरि बारसक -जवणोक० अवत्त  
 अणत्तिममागो । आदेसेण सम्भजेरूप-सम्भतिरिक्ख-मणुसत्रपत्त०-सम्भदेवा चि विहत्तिमगो ।  
 मणुसा० विहत्तिमगो । जवरि बारसक -जवणोक० अवत्त० अंसंखे०मागो । मणुसपत्त०-  
 मणुसिणो० विहत्तिमगो । जवरि.बारसक०-जवणोक अवत्त० सखे०मामो । एवं चाव ।

१७८३ परिमाणानु० दुविहो गिदेसो—ओषण आदेसेण य । ओषेण विहत्ति-  
 मगो । जवरि बारसक०-जवणोक० अवत्त०संक्र केत्तिया ? सखेत्ता । एवं मणुस०३ ।  
 सेसमगणानु विहत्तिमगो ।

१७८४ खेच पोसणं च विहत्तिमगो । जवरि ओष मणुसतिए च बारसक०

संक्रामक जीव जन्मसे हैं । कथाचित् वे जीव हैं और अवच्छेदसंक्रमक एक जीव है । कथाचित्  
 वे जीव हैं और अवच्छेदसंक्रमक नान्य जीव हैं । आदेशसे सब मारकी सब किर्यञ्ज मणुष्य  
 अचर्यात् और सब देवोमि स्थितिविमलिके समान भंग है । मणुष्यत्रिकर्म सिध्दात्त सम्भत्य और  
 सगमिप्यात्तत्र भंग स्थितिविमलिके समान है । सोच्छ कथायो और नो लोकायोके अत्यन्त  
 और अचर्यात् पदक संक्रमक जीव नियमसे हैं । सेप पद मञ्जीय हैं । भंग ६ हैं । इसीप्रकार  
 अन्यद्वारक मार्ग्यात् एक बातना बाहिए ।

१७८५ यहाँ पर सुगम सेनेसे सूत्र द्वाप नहीं करे गये मागामाग, परिमाण क्षेत्र और  
 स्पर्शनका हृत्त संक्षेपमें कथक-करनेसे जिए कथापपाका अवलम्बन करत हैं । यथा—मागामागा  
 तुगमकी अपेक्षा निर्रेरा हो प्रथमका है—ओष और आदेश । ओषसे स्थितिविमलिके समान  
 भंग है । किन्तु इतनी विरोधता है कि बारह कथायो और नो लोकयायोके अवच्छेदसंक्रमक जीव  
 अत्यन्तमें मागप्रमाण हैं । आदेशसे सब मारकी सब किर्यञ्ज मणुष्य अचर्यात् और सब देवोमि  
 स्थितिविमलिके समान भंग है । मणुष्योमि स्थितिविमलिके समान भंग है । इतनी विरोधता है  
 कि बारह कथायो और नो लोकयायोके अवच्छेदसंक्रमक जीव अत्यन्तमें मागप्रमाण हैं ।  
 मणुष्यपर्यात् और मणुष्यत्रिकर्म स्थितिविमलिके समान भंग है । किन्तु इतनी विरोधता है कि  
 बारह कथायो और नो लोकयायोके अवच्छेदसंक्रमक जीव संख्यात्तमें मागप्रमाण हैं । इसीप्रकार  
 अन्यद्वारक मार्ग्यात् एक बातना बाहिए ।

१७८६ परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्रेरा हो प्रथमका है—ओष और आदेश । ओषसे  
 स्थितिविमलिके समान भंग है । किन्तु इतनी विरोधता है कि बारह कथायो और नो लोकयायोके  
 अवच्छेदसंक्रमक जीव कितन हैं ? संख्यात्त हैं । इसी प्रकार मणुष्यत्रिकर्म बातना बाहिए । सेप  
 मार्ग्यात्तमि स्थितिविमलिके समान भंग है ।

१७८७ क्षेत्र और स्पर्शनका मणु स्थितिविमलिके समान है । किन्तु इतनी विरोधता है  
 कि ओषमें और मणुष्यत्रिकर्म बारह कथायो और नो लोकयायोके अवच्छेदसंक्रामकोच अत्र और

णवणोक० अवत्त० लोगस्स असंखे०भागे खेत्तं पोसणं च कायव्वं । एवमेदेसिमप्य-  
वण्णणिज्जाणं थोवयरविसेससंभवपदुप्पायणट्टमणुवादं काऊण संपहि णाणाजीवसंवंधि-  
कालपरूवणट्टमुवरिमं सुत्तपवंधमणुसरामो—

❀ णाणाजीवेहि कालो ।

§ ७८५. सुगममेदं सुत्तं, अहियारसंभालणमेत्तवावदत्तादो ।

❀ मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदसकामया केवचिरं कालादो  
होति ? सव्वद्धा ।

§ ७८६. कुदो ? तिसु वि कालेसु एदेसिं विरहाणुवलंभादो ।

❀ सम्मत्त-सम्माभिच्छत्ताण भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वसंकामया  
केवचिरं कालादो होति ?

§ ७८७. सुवोहमेदं पुच्छासुत्तं ।

❀ जहणणेणेषसमओ ।

§ ७८८. दोण्हमेदेसिं कम्माणमेयसमयं भुजगारादिसंकामयत्तेण परिणदणाणा-  
जीवाणं विदियसमए सव्वेसिमेव अप्पदरसंकामयपजायपरिणामे तदुवलद्धीदो ।

❀ उक्कस्सेण आवलियाए असंज्जदिभागो ।

§ ७८९. कुदो ? णाणाजीवाणुसंधाणेण तेसिमेत्तियमेत्तकालावट्टाणोवलंभादो ।

स्पर्शन लोकके असख्यातवें भागप्रमाण करना चाहिए । इस प्रकार अल्पवर्णनीय इन अनुयोगद्वारोंकी थोड़ीसी सम्भव विशेषताका कथन करनेके लिए उल्लेख करके अब नाना जीवसम्बन्धी कालका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धका अनुसरण करते हैं—

\* नाना जीवोंकी अपेक्षा कालका अधिकार है ।

§ ५८५ यह सूत्र सुगम है, क्योंकि अधिकारकी सम्हाल करनेमात्रमें इसका व्यापार है ।

\* मिथ्यात्वके भुजगार, अल्पतर और अवस्थितसंक्रामकोंका कितना काल है ? सर्वदा है ।

§ ७८६ क्योंकि तीनों ही कालोंमें इन पदोंका विरह नहीं उपलब्ध होता ।

\* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यसंक्रामकोंका कितना काल है ?

§ ७८७ यह पृच्छासूत्र सुबोध है ।

\* जघन्य काल एक समय है ।

§ ७८८ इन दोनों कर्मोंके एक समय तक भुजगारादिसंक्रमरूपसे परिणत हुए नाना जीवोंके दूसरे समयमें सभीके अल्पतरसंक्रमरूप पर्यायसे परिणत होने पर उक्त काल उपलब्ध होता है ।

\* उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ।

§ ७८९ क्योंकि नाना जीवोंका सन्ततिका विच्छेद न होकर निरन्तररूपसे उन पदोंका इतने कालतक ही अवस्थान उपलब्ध होता है ।



संज्ञामगो च । सिया एदे च अथचम्बसंज्ञामया च । आदेसेण सम्बणेख्य०-सम्ब-  
तिरिक्त-मणुष्यप्रपञ्च०-सम्बदेवा विहचिमगो । मणुसतिय० ३ मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०  
विहचिमगो । सोलसक०-अवणोक० अप्पद०-अवहि० गियमा अतिथ । सेसफदाणि  
मयणिआणि । मंगा अथ ९ । एवं चाव अजाहारि चि ।

१७८२ एत्थ सुगमचादो मुत्तेजापरूविदाण भागाभाग-परिमाण-खेत्त-स्योसणानं  
किं चि समासपरूवणहुमुत्तारणावत्तवणं कस्तामो । त अहा—मागाभागाणु दुविहो  
विदेसो—ओपेण आदेसेण य । ओपेण विहचिमगो । अवरि बारसक०-अवणोक० अथच  
अर्णत्तिममागो । आदेसेण सम्बणेख्य०-सम्बतिरिक्त-मणुसप्रपञ्च०-सम्बदेवा चि विहचिमगो ।  
मणुसा० विहचिमगो । अवरि बारसक०-अवणोक० अथच० असखे०-मागो । मणुसपञ्च  
मणुसिणो० विहचिमगो । अवरि बारसक०-अवणोक० अथच० सखे मागो । एवं चाव० ।

१७८३ परिमाणाणु दुविहो विदेसो—ओपेण आदेसेण य । ओपेण विहचि-  
मगो । अवरि बारसक०-अवणोक० अथच०-सक्य० केत्तिया । संखेत्ता । एवं मणुस० ३ ।  
सेसममाणाणु विहचिमगो ।

१७८४ खेत्तं पोसण च विहचिमगो । अवरि ओपे मणुसतिए च बारसक०-  
संज्ञामक बीव नियमसे हैं । क्वाचित् वे बीव हैं और अथचम्बसंज्ञामक एक बीव है । क्वाचित्  
वे बीव हैं और अथचम्बसंज्ञामक नान्य बीव हैं । आदेससे सब नारकी सब दिर्यञ्च मनुष्य  
अपवात्त और सब देवोमि स्थितिविमत्तिके समान मंग है । मनुष्यत्रिकर्म मिच्छ्यात्त सम्बन्ध और  
सम्बन्धिमिच्छ्यात्त अंग स्थितिविमत्तिके समान है । सोच्छ क्ययो और नौ नोक्क्यायेकि अन्तर  
और अथसित्त पक्के संज्ञामक बीव नियमसे हैं । ओपे पक्क मङ्गीव हैं । मंग ६ हैं । इसीप्रकार  
अन्तहारक मार्ग्या तक जानना चाहिए ।

१७८५ यहाँ पर सुगम सेमसे सूत्र छाप नहीं कदे गये भागाभाग, परिमाण क्षेत्र और  
स्वर्णमन्त्र कुछ संक्षरमें कवन-अन्ते त्रिए अहारप्यवा अथचम्बन करत हैं । यथा—भागाभागा-  
नुगमकी अपेक्षा निर्देरा हो प्रकारका है—ओपे और आदेस । आपसे स्थितिविमत्तिके समान  
मंग है । किन्तु इतनी विसेपता है कि बारह क्यारो और नौ नोक्क्यायेकि अथचम्बसंज्ञामक बीव  
अन्तरमें भागप्रमाण हैं । आदेससे सब नारकी, सब दिर्यञ्च मनुष्य अपवात्त और सब देवोमि  
स्थितिविमत्तिके समान मंग है । मणुष्योमि स्थितिविमत्तिके समान मंग है । इतनी विसेपता है  
कि बारह क्यारो और नौ नोक्क्यायेकि अथचम्बसंज्ञामक बीव अंतर्क्यातमें भागप्रमाण हैं ।  
मनुष्यपवात्त और मनुष्यत्रिकर्म स्थितिविमत्तिके समान मंग है । किन्तु इतनी विसेपता है कि  
बारह क्यारो और नौ नोक्क्यायेकि अथचम्बसंज्ञामक बीव संख्यातमें भागप्रमाण हैं । इसीप्रकार  
अन्तहारक मार्ग्या तक जानना चाहिए ।

१७८६ परिमाणाणुगमकी अपेक्षा निर्देरा हो प्रकारका है—ओपे और आदेस । ओपेसे  
स्थितिविमत्तिके समान मंग है । किन्तु इतनी विसेपता है कि बारह क्यारो और नौ नोक्क्यायेकि  
अथचम्बसंज्ञामक बीव अन्ते हैं । संख्यात हैं । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकर्म जानना चाहिए । ओपे  
मार्ग्यायोमि स्थितिविमत्तिके समान मंग है ।

१७८७ क्षेत्र और स्वर्णमन्त्र मञ्ज स्थितिविमत्तिके समान है । किन्तु इतनी विसेपता है  
कि ओपेमि और मनुष्यत्रिकर्म बारह क्यारो और नौ नोक्क्यायेकि अथचम्बसंज्ञामकोक्ष क्षेत्र और

णवणोक० अवत्त० लोगस्स असंखे० भागे खेतं पोसणं च कायव्वं । एवमेदेसिमप्य-  
वणणज्जाणं थोवयरविसेससंभवपदुप्पायणड्डमणुवादं काऊण संपहि णाणाजीवसंवंधि-  
कालपरूवणड्डमुवरिमं सुत्तपवंधमणुसरामो—

❀ णाणाजीवेहि कालो ।

§ ७८५. सुगममेदं सुत्तं, अहियारसंभालणमेत्तवावदत्तादो ।

❀ मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पदर-अवड्ढिदसकामया केवचिरं कालादो  
होति ? सव्वद्धा ।

§ ७८६. कुदो ? तिसु वि कालेसु एदेसिं विरहाणुवलंभादो ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवड्ढिद-अवत्तव्वसंकामया  
केवचिरं कालादो होति ?

§ ७८७. सुवोहमेदं पुच्छसुत्तं ।

❀ जहएणेणेषसमञ्चो ।

§ ७८८. दोण्हमेदेसिं कम्माणमेयसमयं भुजगारादिसंकामयत्तेण परिणदणाणा-  
जीवाणं विदियसमए सव्वेसिमेव अप्पदरसंकामयपज्जायपरिणामे तदुवलद्धीदो ।

❀ उक्कस्सेण आवलियाए असंज्जदिभागो ।

§ ७८९. कुदो ? णाणाजीवाणुसंधाणेण तेसिमेत्तियमेत्तकालावट्टाणोवलंभादो ।

स्पर्शन लोकके असख्यातवें भागप्रमाण करना चाहिए । इस प्रकार अल्पवर्णनीय इन अनुयोगद्वारोंकी  
योड़ीसी सम्भव विशेषताका कथन करनेके लिए उल्लेख करके अब नाना जीवसम्बन्धी कालका  
कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धका अनुसरण करते हैं—

\* नाना जीवोंकी अपेक्षा कालका अधिकार है ।

§ ७८५. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि अधिकारकी सम्हाल करनेमात्रमें इसका व्यापार है ।

\* मिथ्यात्वके भुजगार, अल्पतर और अवस्थितसंक्रामकोंका कितना काल  
है ? सर्वदा है ।

§ ७८६ क्योंकि तीनों ही कालोंमें इन पदोंका विरह नहीं उपलब्ध होता ।

\* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यसंक्रामकोंका  
कितना काल है ?

§ ७८७ यह पृच्छासूत्र सुबोध है ।

\* जघन्य काल एक समय है ।

§ ७८८ इन दोनों कर्मोंके एक समय तक भुजगारादिसंक्रमरूपसे परिणत हुए नाना जीवोंके  
दूसरे समयमें सभीके अल्पतरसंक्रमरूप पर्यायसे परिणत होने पर उक्त काल उपलब्ध होता है ।

\* उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ।

§ ७८९. क्योंकि नाना जीवोंका सन्ततिका विच्छेद न होकर निरन्तररूपसे उन पदोंका इतने  
कालतक ही अवस्थान उपलब्ध होता है ।



§ ७९५. जहण्णेयेयसमओ, उक्कस्सेणाश्लियाए असंखे०भागो इच्चेदेण मेदाभावादो । एवमोघपरूवणा सुत्तणिवद्धा गया ।

§ ७९६. एत्तो देसामासयभावेणेदेण सुत्तपबंधेण सूचिदादेसपरूवणाए विहित्तिभंगो । णवरि मणुसतिए वारसक०-णवणोक० अवत्त० जह० एयस०, उक० संखेज्जा समया ।

❀ णाणाजीवेहि अंतरं ।

§ ७९७. णाणाजीवसंबंधिकालणिदेसाणंतरं तदंतरमणुवण्णइस्सामो त्ति पइज्जा-णिदेसमेदेण सुत्तेण काऊण तच्चिहासणद्धमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पदर-अवद्विदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ७९८. सुगमं ।

❀ एत्थि अंतरं ।

§ ७९९. सुगमं ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ८००. सुगमं ।

❀ जहण्णेयेयसमओ ।

§ ७९५ क्योंकि जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आयुक्तिके असंख्यातवै भागप्रमाण है इससे यहाँ कोई भेद नहीं है । इस प्रकार सूत्रमें निबद्ध ओघप्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ ७९६ आगे देशामर्षकरूपसे इस सूत्रप्रबन्ध द्वारा सूचित आदेशकी प्ररूपणा करने पर स्थितिबिभक्तिके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें बारह कथायों और नौ नौकथायोंके अवक्तव्यसंकामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सख्यात समय है ।

\* अब नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरका अधिकार है ।

§ ७९७. नाना जीवसम्बन्धी कालका निर्देश करनेके बाद उसके अन्तरको बतलाते हैं इस प्रकार इस सूत्र द्वारा प्रतिज्ञाका निर्देश करके उस अन्तरका व्याख्यान करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

\* मिथ्यात्वके भुजगार, अल्पतर और अवस्थितसंक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?

§ ७९८ यह सूत्र सुगम है ।

\* अन्तरकाल नहीं है ।

§ ७९९. यह सूत्र सुगम है ।

\* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अवक्तव्य संक्रामकोंका अन्तर-काल कितना है ?

§ ८०० यह सूत्र सुगम है ।

\* जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

ॐ अन्पवरसकामया सम्बद्धा ।

§ ७९० कुदो ? मिष्मरद्वि-सम्माद्विर्णं पवाहस्त तदप्यवरसकामयस्त किं  
वि क्तासु निरतरमवद्वाणोवलमादो ।

ॐ सेसार्थं कम्मार्थं मुजगार-अन्पवर-अवस्थितसकामया केवचिरं  
क्तादो होति ?

§ ७९१ सुगमं ।

ॐ सम्बद्धा ।

§ ७९२ सम्बद्धसमविच्छिन्नसकामयेवेवेसिं सतापस्त समवद्वाणो ।

ॐ अवस्थितसकामया केवचिरं क्तादो होति ।

§ ७९३ सुगमं ।

ॐ जहण्येयेयसमभो, उक्कस्सेथ सखेत्ता समया ।

§ ७९४ उवसामणादो परिवदिदानमणुसचिदसताभाणमत्तव जहण्यकससमभा,  
तेसिं येव संखेत्तवारमणुसचिदसताभाणमवद्वाणकसलो उक्क० सखेत्तसमयमचो येत्तवो ।  
एदेण सुत्तेणानांताणुवधीण पि अवत्तवसकामयाजहण्यसकाले संखेत्तसमयमेत्ते जहण्यत्ते  
तरव विसससमवमाह—

ॐ एवचिरं अयांताणुसंभीयमवत्तव्यसकामयायां सम्मत्तमंगो ।

० अन्पवरसकामकोक्ता काल सर्वदा है ।

§ ७९१ क्योंकि मिष्मरद्वि और सम्मत्तद्विर्णों इन क्रमोंके अन्पवरसकामकोक्ता अन्प-  
वर्तको ही अर्थमें निरन्तर पाया जाता है ।

० येय क्रमोंके मुजगार, अन्पवर और अवस्थितसकामकोक्ता कितना काल है ?

§ ७९२ यह सूत्र सुगम है ।

० सर्वदा है ।

§ ७९३ क्योंकि सर्वदा अविच्छिन्नक्रमसे इसकी सम्पन्न अवस्था होती है ।

० अवस्थितसकामकोक्ता कितना काल है ?

§ ७९४ यह सूत्र सुगम है ।

० जहण्य काल एक समय है और उक्कट काल संख्यात समय है ।

§ ७९४ क्योंकि त्रिनयी उन्नाज विच्छिन्न हो गई है ऐसे अन्पवर्तकेचिंत गिरे हुए बीबीज  
वर्षों पर जहण्य काल सम्भव है । तथा संख्यात बार मिली हुई संख्यातकाल की बीबीज संख्यात  
समयमात्र उक्कट अवस्थापक्षक पर्वों पर महज कृत्य आदिप । इस सूत्रसे अन्पवर्तवर्तियोंके भी  
अवस्थितसकामकोक्ता उक्कट काल संख्यात समयमात्र प्राप्त होने पर वर्षों पर जो विद्येयता सम्भव है  
उसका निरर्था कथन है—

० किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धियोंके अवस्थितसकामकोक्ता मंग  
सम्यक्त्वके समान है ।

§ ७९५. जहणणेणयसमओ, उक्कस्सेणावलियाए असंखे० भागो इच्चेदेण मेदाभावादो । एवमोघपरूवणा सुत्तणिवद्धा गया ।

§ ७९६. एत्तो देसामासयभावेणेदेण सुत्तपवंधेण सूचिदादेसपरूवणाए विहित्तिभंगो । णवरि मणुसत्तिए वारसक०-णवणोक० अवत्त० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया ।

❀ णाणाजीवेहि अंतरं ।

§ ७९७. णाणाजीवसंबंधिकालणिद्देशाणंतरं तदंतरमणुवण्णइस्सामो त्ति पइज्जा-णिद्देशमेदेण सुत्तेण काऊण तन्विहासणट्टमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ७९८. सुगमं ।

❀ एत्थि अंतरं ।

§ ७९९. सुगमं ।

❀ सम्मत्त-सम्मा मिच्छत्ताणं भुजगार-अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ८००. सुगमं ।

❀ जहणणेणयसमओ ।

§ ७९५. क्योंकि जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आयलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है इससे यहाँ कोई भेद नहीं है । इस प्रकार सूत्रमें निबद्ध श्लोघपरूपणा समाप्त हुई ।

§ ७९६ आगे देशामर्पकरूपसे इस सूत्रप्रबन्ध द्वारा सूचित आदेशकी प्ररूपणा करने पर स्थितिविभक्तिके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें वारह कथायों और नौ नौकपायोंके अवक्तव्यसंक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सख्यात समय है ।

\* अब नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरका अधिकार है ।

§ ७९७. नाना जीवसम्बन्धी कालका निर्देश करनेके बाद उसके अन्तरको बतलाते हैं इस प्रकार इस सूत्र द्वारा प्रतिज्ञाका निर्देश करके उस अन्तरका व्याख्यान करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

\* मिथ्यात्वके भुजगार, अल्पतर और अवस्थितसंक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?

§ ७९८ यह सूत्र सुगम है ।

\* अन्तरकाल नहीं है ।

§ ७९९. यह सूत्र सुगम है ।

\* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अवक्तव्य संक्रामकोंका अन्तर-काल कितना है ?

§ ८००. यह सूत्र सुगम है ।

\* जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

१८०१ सम्पत्-सम्पामिच्छताश्च भुजगारमवत्तन्वय वा काळम द्विदनाभात्रीवाच-  
मेयसमयमतरिय तदनंतरसमय पुनो वि केचित्पार्श्वं पि सम्भावेण पातुम्मात्रविरोहामावाहो ।

⊗ उक्तस्तेषु चतुर्षीसमहोरेषु साविरेये ।

१८०२ कुदो ? एचिपणुक्तस्तरेषु विना पयदभुजगारावत्तन्वयसकामयार्णं  
पुनरुम्भवामावाहो ।

⊗ अप्यपरसंकामपतरं केचनिरं कावाहो होवि ? अस्थि अंतर ।

१८०३ अप्यपरसंकामपतरं केचनिर होइ पि आसंकिय न्तिय अंतरमिदि  
तप्यदिसेहो कीरदे । कुदो पुन उरमावो ? तिसु वि कालेषु बोच्छेण विष्वा निरंतरमेदेसिं  
पवाइस्स पवुत्तिंसवाहो ।

⊗ अवाहिवसकामयंतरं केचनिरं कावाहो होवि ? अहृष्योबोयसमयो ।

१८०४ सम्पत्-सम्पामिच्छताश्चिद्विदिसंतकम्माहो समयुपरमिच्छताश्चिद्विदिसंत  
कम्मियाण केचित्पार्श्वं पि त्रीवाणं वेदयसम्मत्तुप्यतिविदियसमय विवक्षित्यसंकामपञ्चापण  
परिणामिप तदनंतरसमय अंतरिदार्णं पुनो अण्णदीवेहि तदनंतरोवरिसमय अवाहिव  
पञ्चापपरिणवेहि अंतरबोच्छे क्खे उदुवत्तमाहो ।

⊗ उक्तस्तेषु अगुहस्स असत्तेजविभागो ।

१८१ कर्वाक सम्पत्त्व और सम्पामिच्छात्वके भुजगार वा अवाकम्पयरको करके स्थित  
हुए वाच्य बीजके एक समयका अन्तर हैकर तदनन्तर समयमें फिरसे कितने ही बीजके बन दोनों  
पक्षों कसे परिणत होनेमें कोई निरोध नहीं आता ।

⊗ उत्कृष्ट अन्तर काळ साधिक धौबीस दिन-रात है ।

१८२ कर्वाक इतना उत्कृष्ट अन्तर हुए बिना प्रकृत भुजगार और अवाकम्पयसंकामकोभी  
फिरसे उत्पत्ति नहीं होती ।

⊗ अन्तरसंकामकोका अन्तरकाल कितना है ? अन्तरकाल नहीं है ।

१८३ अन्तरसंकामकोका अन्तरकाल कितना है ऐसी आर्वाक करके अन्तरकाल नहीं  
है इस प्रकार अत्रक निषेध किया ।

शंका—इतने अन्तरकालका अन्तर क्यों है ?

समाधान—क्योंकि तीनों ही अर्वाकमें विच्छेदके बिना निरन्तर इसके प्रवाहकी प्रवृत्ति  
बैली जाती है ।

⊗ अवास्थितसंकामकोका अन्तरकाल कितना है ? अवन्य अन्तर एक समय है ।

१८४ कर्वाक सम्पत्त्व और सम्पामिच्छात्वके स्थितिसत्कामसे एक समय अथिक  
मिच्छात्वके स्थितिसत्कामके कितने ही बीजके वेदकम्पयत्त्वकी उत्पत्तिके दूसरे समयमें विवक्षित  
संकामपक्षावसे परिणत कर तदनन्तर समयमें अन्तरको प्राप्त होने पर पुन वाच्य बीजके  
तदनन्तर अवरिस समयमें अवास्थितसंकाम पक्षावसे परिणत होकर अन्तरकाल विच्छेद करने पर एक  
अन्तरकाल प्रकृत होता है ।

⊗ उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें मासप्रमाण है ।

§ ८०५. एत्तिएणुक्कस्संतरेण विणा समयुत्तरमिच्छत्तद्विदिसंतकम्मेण सम्मत्तपडि-  
लंभस्स दुल्लहत्तादो । कुदो एवं ? दुसमयुत्तरादिमिच्छत्तद्विदिवियप्पाणं संखेज्जासागरोवम-  
कोडाकोडिपमाणणं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तभुजगारसंकमहेऊणं बहुलं संभवेण तत्थेव  
णाणाजीवाणं पाएण संचरणोवलंभादो । तदो तेहिं द्विदिवियप्पेहि भूयो भूयो सम्मत्तं  
पडिवज्जामाणणाणाजीवाणमेसो उक्कस्संतरसंभवो दट्टव्वो ।

❀ अणंताणुधंधीणमवत्तव्वसंकामयंतरं जहणणेणेषसमओ, उक्कस्सेण  
चउवीसमहोरत्ते सादिरेये ।

§ ८०६. एदाणि दो वि अणंताणुधंधीणमवत्तव्वसंकामयजहण्णुक्कस्संतरपडिवद्वाणि  
सुत्ताणि सुगमाणि ।

❀ सेसाणं कम्माणमवत्तव्वसंकामयंतरं जहणणेणेषसमओ, उक्कस्सेण  
संखेज्जाणि वस्सत्तहस्साणि ।

§ ८०७. एदाणि वि वारसक०—णवणोकसायाणमवत्तव्वसंकामयजहण्णुक्कस्संतर-  
णिवद्वाणि सुत्ताणि सुवोहाणि । एवमेदेसिमवत्तव्वसंकामयाणमंतरं पदुप्पाइय सेसपद-  
संकामयाणमंतरसंभवासंकामयाणमंतरसंभवासकाणिरायरणडुमुत्तरसुत्तमाह—

§ ८०५ क्योंकि इतने उत्कृष्ट अन्तरके बिना मिथ्यात्वसम्बन्धी एक समय अधिक  
स्थितिसत्कर्मके साथ सम्यक्त्वकी प्राप्ति दुर्लभ है ।

शंका—ऐसा क्यों है ?

समाधान—क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार सक्रमके हेतुभूत  
मिथ्यात्वके दो समय अधिकसे लेकर संख्यात कोडाकोडी सागरप्रमाण स्थितिविकल्पोंके  
बहुलतासे सम्भव होनेके कारण उन्हींमें प्रायः नाना जीवोंका संचार उपलब्ध होता है, इसलिए  
इन स्थितिविकल्पोंके साथ पुनः पुनः सम्यक्त्वकी प्राप्ति होनेवाले नाना जीवोंके यह उत्कृष्ट अन्तर  
सम्भव दिखलाई देता है ।

\* अनन्तानुबन्धियोंके अवक्तव्यसंक्रामकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और  
उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है ।

§ ८०६. अनन्तानुबन्धियोंके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरसे प्रतिबद्ध ये दोनों ही सूत्र  
सुगम हैं ।

\* शेष कर्मोंके अवक्तव्यसंक्रामकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट  
अन्तर संख्यात हजार वर्षप्रमाण है ।

§ ८०७. वारह कषायों और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रामकोंके जघन्य और उत्कृष्ट  
अन्तरसे प्रतिबद्ध ये भी दोनों सूत्र सुबोध हैं । इसप्रकार इनके अवक्तव्यसंक्रामकोंके अन्तरका  
कथन करके शेष पदोंके संक्रामकोंके अन्तरमें सम्भव और असक्रामकोंके अन्तरमें सम्भव शंकाके  
निराकरण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—



ॐ सोलसकृत्सायणशणोक्तसायाण्य सुजगार-अप्यपर-अवष्टिवसकामयाव  
यस्य अंतरं ।

§ ८०८. इदो ? सम्बद्धमेदेषु अणतस्त जीवरासिस्त जहापविमागमवद्वाण  
दसणादो । एवमोशेण णाणाजीवसवभिणी अंतरपरूषणा गया ।

§ ८०९ एतो आदेसपरूषणाय विहृषिमंगो ।-अपरि मणुसतिप बारसक०  
अवणोक्त० अवचव्यसकामयंतरं जह० एयस०, उक्त० वास्तुपुषं ।

§ ८१० मावो सम्बत्त्व ओद्गजो मावो ।

ॐ अप्यायहुअं ।

§ ८११ मिच्छत्तादिपयडिपडिबद्धसुजगारादिसंक्रमयाणमप्यायहुअं वण्णस्तामो  
पि पद्मायपणमेदमहिपारसमालअवचं वा ।

ॐ सम्बत्त्वोवा मिच्छत्तसुजगारसकामया ।

§ ८१२ इसमपसंविदत्तादो ।

ॐ अवष्टिवसकामया अससेखगुणा ।

§ ८१३ इदो ? अंतोसुहुषसपियत्तादो ।

ॐ अप्यपरसकामया संसेखगुणा ।

ॐ सोलस कृपायो और नी नोकृपायोके सुजगार, अप्यपर और अवस्थित-  
सकामकोअ अन्तरकाल नहीं है ।

§ ८०८ क्योंकि इन पदोंमें अनन्त जीवपरिष्ठा अपने-अपने प्रतिमागके अनुसार सर्वदा  
अवस्थान देखा जाय है । इस प्रकार ओषसे नाश जीवोंसे सम्बन्ध रखनेवाली अन्तरपरूषणा  
सम्पात हुई ।

§ ८०९ आगे आदेसकी प्रवृत्ति करने पर अन्तर् मंग स्थितिविचित्रिसे समान है ।  
किन्तु इतनी विज्ञेया है कि मनुष्यत्रिकर्म बाह्य कृपायों और नी नोकृपायोके अवच्छेदसंक्रमकोअ  
अपन्य अन्तर एक समय है और उक्त अन्तर वर्षद्वयत्वप्रमाय है ।

§ ८१० यह सर्वत्र ओद्गजिक है ।

ॐ अप्यवहुत्वका अधिकार है ।

§ ८११ मिच्छात्व आदि प्रकृतियोंसे सम्बन्ध रखनेवाले सुजगार आदि पदोंके संक्षमकोके  
अन्तरवहुत्वको बतलाय है इस प्रकार यह प्रतिष्ठावाच्य है एव अधिकारकी सम्प्राप्त करनेवाला  
कारण है

ॐ मिच्छात्वके सुजगारसकामक जीव सबसे स्तोक है ।

§ ८१२ क्योंकि इनका अन्तर् दो समयमें हुआ है

ॐ उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव अर्गसमाप्तगुणे है ।

§ ८१३ क्योंकि इनका अन्तर् अन्तर्मुहूर्तमें हुआ है ।

ॐ उनसे अप्यपरसकामक जीव संख्यातगुणे है ।

§ ८१४. जइ वि अप्परसंक्रमकालो वि अंतोमुहुत्तमेत्तो चैव तो वि तत्कालसंचिद-  
जीवरासिस्स पुव्विल्लसचयादो संखेज्जगुणत्तं ण विरुज्जदे, संतस्स हेट्ठा संखेज्जवार-  
मवड्ढिद्विदिवंधेसु पादेकमतोमुहुत्तकालपडिवद्धेसु परिणमिय सइं संतसमाणबंधेण सव्वेसिं  
जीवाणं परिणमणदंसणादो ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अवड्ढिसंक्रामया ।

§ ८१५. कुदो ? समयुत्तरमिच्छत्तद्विदिसंतक्रमेण वेदयसम्मत्तं पाडिवज्जमाण-  
जीवाणमइदुल्लहत्तादो ।

❀ भुजगारसंक्रामया असंखेज्जगुणा ।

§ ८१६. को गुणगारो ? आवलि० असंखे०भागो । दोण्हमेदेसिमेयसमय-  
संचिदत्तेण संते कुदो एस विसरिसभावो त्ति णासंकणिज्जं, तत्तो एदस्स विसयवहुत्तोव-  
लंभादो । तं कथं ? अवड्ढिसंक्रमविसओ णिरुद्धेयद्विदिमेत्तो, समयुत्तरमिच्छत्तद्विदिसत-  
कम्मादो अणत्थ तदभावणिणयादो । भुजगारसंक्रमो पुण दुसमयुत्तरादिद्विदिवियप्पेसु  
संखेज्जसागरोवमपमाणावच्छिण्णेसु अप्पडिहयपसरो । तदो तेसु ठाइदूण वेदयसम्मत्त-  
मुवसमसम्मत्तं च पडिवज्जमाणो जीवरासी असंखेज्जगुणो त्ति णिप्पडिवधमेदं ।

§ ८१४ यद्यपि अत्यतरसंक्रमकाल काल भी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है तो भी उतने कालमें  
सञ्चित हुई जीवराशि पूर्वोक्त सञ्चयसे संख्यातगुणी है इसमें कोई विरोध नहीं आता, क्योंकि  
प्रत्येक वार अन्तर्मुहूर्त काल तक सत्कर्मसे कम अवस्थित स्थितिवन्धरूपसे परिणमन कर एक  
वार सब जीवोका सत्कर्मके समान बन्धरूप परिणाम देखा जाता है ।

\* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थितसंक्रामक जीव सबसे स्तोके हैं ।

§ ८१५ क्योंकि मिथ्यात्वके एक समय अधिक स्थितिसत्कर्मके साथ वेदकसम्यक्त्वको  
प्राप्त होनेवाले जीव अतिदुर्लभ हैं ।

\* उनसे भुजगारसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ८१६ गुणकार क्या है ? आवलिका असंख्यातत्रो भाग गुणकार है ।

शंका—उक्त प्रकृतियोंके अवस्थित और भुजगार इन दोनों पदोंका सञ्चय एक समयमें  
होने पर यह विशदशता क्यों प्राप्त होती है ?

समाधान—ऐसी आर्शका करना ठीक नहीं है, क्योंकि अवस्थितपदसे भुजगारपदका  
विषयवहुत्व उपलब्ध होता है ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि अवस्थितसंक्रमका विषय विवक्षित एक स्थितिमात्र है, क्योंकि  
मिथ्यात्वके एक समय अधिक स्थितिसत्कर्मसे अन्यत्र उसके अभावका निर्णय है । परन्तु  
भुजगारसंक्रम दो समय अधिक स्थितिविकल्पसे लेकर संख्यात सागर प्रमाण अधिक स्थिति-  
विकल्पोंके प्राप्त होने तक अप्रतिहत प्रसारवाला है, इसलिए उन स्थितिविकल्पोंमें स्थापित कर  
वेदकसम्यक्त्व और उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाली जीवराशि असंख्यातगुणी है यह  
निर्विवाद है ।

⊗ अथत्त्वसंक्रामया असत्संक्रामया ।

१८१७ एष वि गुणगारो आवलि० असत्सं० मागमेचो । कुदो ? पल्लिदोवमा-  
सत्संक्रामयागमेचकेदग-उवसमपाओमुभ्येत्सुणकालम्भतरसंभयपिपंभभादो  
सुजमार  
संक्रामयरासीदो अद्दपोगत्तपरियद्दकालम्भतरसंभिविद्विस्ततकम्मियरासिगिस्तदस्तावत्त्व  
संक्रामयरासिस्त असत्संक्रामयागमेचकेदग-उवसमपाओमुभ्येत्सुणकालम्भतरसंभयपिपंभभादो ।

⊗ अप्पपरसंक्रामया असत्संक्रामया ।

१८१८ अथत्त्वसंक्रामयरासी उवसमसम्माद्दोणमसत्सं मानो । एतो पुण  
उवसम-वेदगसम्माद्दिरासी सम्भो उभ्येत्सुमाणनिम्माद्दिरासी ष उदो असत्संक्राम-  
गुणो जादो ।

⊗ अथत्ताणुयंभीथ सम्भत्थोमा अथत्त्वसंक्रामया ।

१८१९ कुदो ? पल्लिदोवमासंक्रामयागमेचकेदो ।

⊗ सुजगारसंक्रामया अर्पितगुणा ।

१८२० कुदो ? मभ्यजीवरासिस्त असत्संक्रामयागमेचकेदो ।

⊗ अथद्विसंक्रामया असत्संक्रामया ।

१८२१ कुदो ? सम्भजीवरासिस्त संक्रामयागमेचकेदो ।

⊗ अप्पपरसंक्रामया संक्रामया ।

⊗ उनसे अवक्तव्यसंक्रामक जीव असंस्पातगुणे हैं ।

१८१७. यहाँ पर श्री गुणगार आवलि के अर्थक्यातवें मागप्रमाण है, क्योंकि वेदक और  
अपरमसम्भयके दोनों क्तवके अर्थक्यातवें मगप्रमाण वह जनककके भीतर सञ्चित हुई  
सुजगारसंक्रामक जीवपरिणते अर्पणुद्गवपरिवर्तन क्तवके भीतर सञ्चित हुई वक्त प्रद्विबोके  
संक्रमसे उचित जीवपरिणते प्राप्त हुई अथत्त्वसंक्रामक जीवपरिणते अर्थक्यातगुणे हाममें कर्षे  
वित्त्वाव नहीं है ।

⊗ उनसे अप्पपरसंक्रामक जीव असंस्पातगुणे हैं ।

१८१८. क्योंकि अथत्त्वसंक्रामक जीवपरिणते अपरमसम्भयद्विबोके अर्थक्यातवें  
मागप्रमाण है । परन्तु यह जीवपरिणते अपरम और वेदकसम्भयद्वि तथा वह बना करनेवाली समस्त  
मिथ्यावृत्ति राशिप्रमाण है, वक्त पूर्वोक्त परिणत यह राशि अर्थक्यातगुणी हो गई है ।

⊗ अनन्तावन्धियोरिके अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोत्र हैं ।

१८१९. क्योंकि व क्तवके अर्थक्यातवें मागप्रमाण हैं ।

⊗ उनसे सुजगारसंक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं ।

१८२०. क्योंकि वे सब जीवपरिणते संस्पातवें मागप्रमाण हैं ।

⊗ उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव असंस्पातगुणे हैं ।

१८२१. क्योंकि व सब जीवपरिणते संस्पातवें मगप्रमाण हैं ।

⊗ उनसे अप्पपरसंक्रामक जीव संस्पातगुणे हैं ।

§ ८२२. अवट्टिदसंकमावट्टाणकालादो अप्परसंकमपरिणामकालस्स संखेज्ज-  
गुणत्तादो ।

❀ एवं सेसाणं कम्माणं ।

§ ८२३. जहाणंताणुवंधीणं पयदप्पावहुअपरूवणा कया एवं चेव सेसकसाय-  
णोकसायाणं पि कायच्चं, विसेसाभावादो । एवमोघपरूवणा सुत्तणिवद्धा कया ।

§ ८२४. एत्तो एदस्स फुडीकरणट्टमादेसपरूवणट्ठं त तदुच्चारणाणुगमं  
कस्सामो । तं जहा—अप्पावहुआणु० दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण  
मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० विहत्तिभंगो । सोलसक०-णवणोक० सव्वत्थोवा अवत्त०-  
संका० । भुज०संका० अणतगुणा । अवट्टि०संका० असंखे०गुणा० । अप्पद०संका०  
संखे०गुणा । मणुसेसु सम्म०—सम्मामि०-मिच्छ० विहत्तिभंगो । सोलसक०—णवणोक०  
सव्वत्थोवा अवत्त०संका० । भुज०संका० असखेज्जगुणा । अवट्टि०संका० असंखे०गुणा ।  
अप्पर०संका० संखे०गुणा । एवं मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु । णवरि सव्वत्थ संखेज्जगुणं  
कायच्च । सेसगइमग्गणाभेदेसु विहत्तिभंगो । एवं जाव० ।

एवमुत्तरपयडिडिदिसंकमस्स भुजगारो समतो ।

§ ८२२ क्योंकि अवस्थितसंक्रामकोंके अवस्थानकालसे अल्पतरसंक्रामकोंका परिणामकाल  
संख्यातगुणा है ।

❀ इसीप्रकार शेष कर्मोंका प्रकृत अल्पवहुत्व है ।

§ ८२३ जिस प्रकार अनन्तानुबन्धियोंके प्रकृत अल्पवहुत्वका कथन किया है इसीप्रकार  
शेष कषायों और नोकषायोंके अल्पवहुत्वका भी कथन करना चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई  
विशेषता नहीं है । इसप्रकार सूत्रोंमें निबद्ध ओघप्ररूपणा की ।

§ ८२४. आगे इसे स्पष्ट करनेके लिए और आदेशप्ररूपणा करनेके लिए उसकी उच्चारणाका  
अनुगम करते हैं । यथा—अल्पवहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और  
आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भग स्थितिविभक्तिके समान है ।  
सोलह कषायों और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे भुजगार-  
संक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं । उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे  
अल्पतरसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । मनुष्योंमें सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और मिथ्यात्वका  
भंग स्थितिविभक्तिके समान है । सोलह कषायों और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रामक जीव  
सबसे स्तोक हैं । उनसे भुजगारसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव  
असंख्यातगुणे हैं । उनसे अल्पतरसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्त और  
मनुष्यनियोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणा करना चाहिए ।  
गतिमार्गणाके शेष भेदोंमें स्थितिविभक्तिके समान भग है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक  
जानना चाहिए ।

इसप्रकार उत्तरप्रकृतिस्थितिसंक्रमका भुजगार समाप्त हुआ ।

ॐ पदपिक्खेवे तत्प इमाणि तिपिण्य अपियोगदाराणि—समुद्धितया सामित्तमप्यापहुर्बं च ।

§ ८२५ एदेण सुचेण पदपिक्खेवे तिपिण्यमपियोगदाराण समबो वण्णामणिरेसो च कम्मो । एवमेदेहि तीहि अणियोगदारेहि पदपिक्खेव परूवेमाणो जहा उरेसो तथा निरेसो चि जायमवसंबिय समुक्खिचममेव ताव परूवेदुमुच्चसुचमाइ—

ॐ तत्प समुद्धितया सम्भासिं पपडीणमुक्खस्सिया बड्डी हाणी अबहाणं च अत्थि ।

§ ८२६ तत्प तेसु विसु अपियोगदारेसु समुद्धितया ताव उचदे—तत्प दुविहो णिरेसो ओपादेसमेदेण । ओपेण ताव सम्भासिं मोइपयडीणमरिच उक्खस्सिया बड्डी हाणी अबहाण च । वुद्धिसंक्रमस्से चि एत्थारियारसंबंवी कयय्वो ।

ॐ एव अहवणपस्स चि णेव्वं ।

§ ८२७ जहा सम्भासिं पपडीणमुक्खस्सवड्डी-हाणि-अवहाणसकम्मो समुक्खिचो एव अहवणपस्स चि वड्डी-हाणि-अवहाणसंक्रमस्स समुक्खिचणं वेव्वं । उ कर्षं ? सम्भासिं पपडीणमत्थि अवण्णिया बड्डी हाणी अबहाणं च ।

एवमोपसमुक्खिचणा मया ।

आदेसेण सुव्वमग्गप्पासु विहचिमग्गो ।

ॐ पदनिषेक्ख अपिक्खार है । उतमें ये तीन अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्त और मन्ववहुत्त्व ।

§ ८२५. इस सूत्र द्वारा पदनिषेचमें तीन अनुयोगद्वारोंकी सम्भावनाके साथ उनके नामोंका निर्देश किया है । इसप्रकार इन तीन अनुयोगद्वारोंके द्वारा पदनिषेचका कथन करके हुए बरेराने अनुसार निर्देश किया जाता है । इस अर्थपर अरकमन सेकर सर्वप्रथम समुत्कीर्तनाकी कथन करनेके लिए आगेका सूत्र करते हैं—

ॐ प्रकृतमें समुत्कीर्तना इसप्रकार है—एव प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट बुद्धि, हानि और अवस्थान है ।

§ ८२६ इन तीन अनुयोगद्वारोंमें सर्वप्रथम समुत्कीर्तना कथन करते हैं । इसकी अपेक्षा निर्देश का प्रकरण है—ओप और आदेरा । ओपसे माहनीककी सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट बुद्धि, हानि और अवस्थान है । 'स्वित्तिरुक्खमत्थ' इसप्रकार यहाँ पर अपिक्खारका संकथन कर देना चाहिए ।

ॐ इसीप्रकार अपन्य बुद्धि, हानि और अवस्थान भी जानना चाहिए ।

§ ८२७ जिस प्रकार सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट बुद्धि, हानि और अवस्थानसंक्रमकी समुत्कीर्तना की वही प्रकार अपन्य बुद्धि, हानि और अवस्थानसंक्रमकी भी समुत्कीर्तना जाननी चाहिए ।

संक्षेप—एव कैसे ?

समाधान—एव प्रकृतियोंकी अपन्य बुद्धि, हानि और अवस्थान है ।

इस प्रकार आषसमुत्कीर्तना समाप्त हुई ।

### ❀ सामित्तं ।

§ ८२८. समुक्त्तणाणंतरं सामित्तमवसरपत्तं कायव्वमिदि अहियारसंभालण-  
वयणमेदं ।

### ❀ मिच्छत्त-सोलसकसायाणमुक्त्तस्सिया वड्डी कस्स ?

§ ८२९. मिच्छत्तादीणमुक्त्तस्सट्ठिदिमंकमवुड्डीए को सामिओ त्ति पुच्छिदं होइ ।

❀ जो चउट्टाणियजवमज्झस्स उवरि अंतोकोडाकोडिद्विदिमंतोमुहुत्त-  
संक्रामेमाणो सो सब्बमहंतं दाहंगदो तदो उक्त्तस्सट्ठिदि पवद्धो तस्सा-  
वलियादीदस्स तस्स उक्त्तस्सिया वड्डी ।

§ ८३०. जा अंतोकोडाकोडिद्विदिमंतोमुहुत्तं संक्रामेमाणो अच्छिदो उक्त्तस्स-  
दाहवसेणुक्त्तस्सट्ठिदि पवद्धो तस्सावलियादीदस्स विवविखयकम्माणमुक्त्तस्सियद्विदिसंकम-  
वुड्डी होइ त्ति सुत्तत्थमंबंधो । सा पुण अंतोकोडाकोडी अपोयवियप्पा, धुवट्ठिदीदो प्पहुडि  
समयुत्तरादिकमेण तत्तो संखेज्जगुणाओ ठिदीओ उल्लंघिय तदुक्त्तस्सवियप्पावट्टाणादो ।  
तत्थ किमुक्त्तस्संतोकोडाकोडीए समयूणसागरोवमकोडाकोडिपमाणए इह ग्गहणं, आहो  
जहण्णाए धुवट्ठिदिपमाणावच्छिण्णाए, उदाहो तप्पाओग्गाए अजहण्णाणुक्त्तस्सवियप्प-  
पडिवट्टाए त्ति एत्थ णिण्णयकरणट्ठमिदं विसेसणं चउट्टाणियजवमज्झस्स उवरि त्ति । तं च

### \* स्वामित्वका अधिकार है ।

§ ८२८ समुक्तीर्तनाके बाद अवसर प्राप्त स्वामित्व करना चाहिए इसप्रकार अधिकारकी  
सम्हाल करनेवाला यह वचन है ।

### \* मिथ्यात्व और सोलह कथायोकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ।

§ ८२९. मिथ्यात्व आदिकी उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमवृद्धिका स्वामी कौन है यह पृच्छा  
की गई है ।

\* जो चतुःस्थानिक यवमध्यके ऊपर अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थितिका  
अन्तर्मुहूर्तकाल तक संक्रमण कर रहा है उसने अत्यन्त उत्कृष्ट दाहको प्राप्त होकर  
उससे उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया उसके एक आवलिके बाद उत्कृष्ट वृद्धि होती है ।

§ ८३० जो अन्त कोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थितिका अन्तर्मुहूर्त काल तक संक्रमण करता हुआ  
स्थित है, उसने उत्कृष्ट दाहवशा उत्कृष्ट स्थितिबन्ध किया उसके एक आवलिके बाद विवाचित्त  
कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमवृद्धि होती है ऐसा इस सूत्रका अर्थसम्बन्ध है । परन्तु वह अन्तःकोड़ा-  
कोड़ी ध्रुवस्थितिसे लेकर एक समय अधिक आदिके क्रमसे अनेक प्रकारकी है, क्योंकि ध्रुवस्थितिसे  
संख्यातगुणी स्थितिको उल्लघन कर उसके उत्कृष्ट विकल्पका अवस्थान है । उसमेंसे एक समय  
कम कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण उत्कृष्ट अन्त कोड़ाकोड़ीका यहाँ पर ग्रहण किया है या ध्रुवस्थिति-  
प्रमाण जघन्य अन्त.कोड़ाकोड़ीका ग्रहण किया है या अजघन्योत्कृष्ट विकल्पवाली अन्तःकोड़ा-  
कोड़ीका ग्रहण किया है इसप्रकार यहाँ पर निर्णय करनेके लिए 'चतुःस्थानिक यवमध्यके ऊपर'  
यह विशेषण दिया है । वह चतुःस्थानिक यवमध्य दो प्रकारका है—सातप्रायोग्य और असात-

अतुष्टानियत्रवमज्जं हुविहं—सात्पाओभामसात्पाओनां च । तस्य पयरज्वसेषासात्  
 पाओगस्त गह्वमिह विष्णोयं, अण्णहा सम्भुक्कस्सद्धिदिबधहेदुविष्णयरदाहपरिणामानुव  
 वचीदो । सम्भुक्कस्सविसोद्धिनिबंजणस्स सात्तयउठ्ठाअज्वमज्जस्स सम्भमइत्तदाहहेउष-  
 विरोहादो च । तदो अमात्तयउठ्ठाजियाणुमागचपपाओमाज्वमज्जस्स उवरि आ अंतोकोडा-  
 कोडी णिअियप्यंतोकोडाओडीओ ससेअगुणहीमा दाहद्धिदिसण्णदा सेह गहेयव्वा,  
 हेद्धिमासेसद्धिदिसकमवियप्पाणमुक्कस्सदाहविठ्ठसहावचादो । य य सम्भमइतेज दाहेज  
 विना उक्कस्सओ द्धिदिबंओ होइ, विष्णुदिसेहादो । तम्हा अतुष्टानियत्रवमज्जस्सुवरि ओ  
 एवविहमतोकोडाओद्धिदिसकममाओ समवद्धिदो सम्भमइतेज दाहेज पण्णदो सतो  
 उक्कस्सद्धिदि पवचदि तस्स आबलिपादीदं संकमेमाणयस्स पयदकम्माअमुक्कस्सिया वृद्धी  
 द्धिदिसकमविसया होदि चि सिद्धं । एत्थ वद्धिपमाण दाहद्धिदिपरिणीणत्तचरि-आलीस  
 सागरोवमकोडाओद्धिमेत्तज्जतरइद्धिमसमयसंक्रमादो सामित्तसमए द्धिदिसंक्रमस्स तेपिय  
 मेत्थेण वुद्धिसंज्ञादो । एवमेदेसिं क्रम्माणमुक्कस्सवृद्धीए सामिच परूबिय तस्सवावहाण-  
 सामिचं पि उक्कस्सयं विदियसमए होइ चि जाणावचणुं मुत्तमुत्तर मभइ—

ॐ तस्सेव से काले उक्कस्सयमवहाण ।

१८११ तस्सेव उक्कस्सवुद्धिसकमसामिचमुपगयस्स से काले तपियमव सक्रमे-  
 माजयस्स उक्कस्समवहाण होदि । इदो ? उक्कस्सवुद्धीए अविण्णुसरूवेज तत्यावहाणत्तंज्ञादो ।

प्राप्तोय । इनमेंसे प्रकरवाक्या असात्पाओन्म वममप्यका यहाँ पर प्रत्यक्ष ज्ञानना आश्रिय, अन्यथा  
 सर्वोत्कृष्ट स्थितिकल्पका हेतुमूत तीव्रतर दाहपरिणामकी कल्पति नहीं बन सकती तथा सबसे उत्कृष्ट  
 निष्ठुदिकारणक सात्तयउठ्ठाएतान परमम्यके सर्वोत्कृष्ट दाहेतुके होनेमें विरोध आता है । इसलिये  
 असात्तयउठ्ठाएतानीय अस्तुमागवचके बोधय वममप्यके ऊपर निर्बिकल्प अण्णओडाओडीओ संकल्प-  
 गुणी हीन ओ दाहसंज्ञावाकी अण्णओडाओडीओ स्थिति है उसे यहाँ प्रत्यक्ष करना आश्रिय, क्योंकि  
 अचस्तन समस्त संक्रमविकल्प उत्कृष्ट दाहके विरुद्ध स्वभाववाले हैं । और सर्वोत्कृष्ट दाहके विना  
 उत्कृष्ट स्थितिकल्प नहीं होगा, क्योंकि वेसा होनेका नियम है । इसलिये अतु-स्थानिक वममप्यके  
 ऊपर जो इस प्रकारकी अण्णओडाओडीओमसात् स्थितिक संक्रम करता हुआ स्थित है वह सर्वोत्कृष्ट  
 दाहसे परिणत होकर उत्कृष्ट स्थितिको धीकसा है वस्तुके एक आबलिके वायु संक्रमण करत हुए  
 प्रकृत कर्मोंकी स्थितिसंक्रमविययक उत्कृष्ट बुद्धि होती है यह सिद्ध हुआ । यहाँ पर बुद्धिक प्रमाण  
 दाहनिवातसे हीन सत्तर और अलीस कोडाओडीओ सागरप्रमाण स्थिति है क्योंकि अनन्तर पूर्व  
 समयमें हुए संक्रमसे स्वामित्त्वे समयमें स्थितिसंक्रमसे तत्प्रमाण बुद्धि होती जाती है । इसप्रकार  
 इन कर्मोंकी उत्कृष्ट बुद्धिके स्वामित्त्वाक कथन करके वहीके उत्कृष्ट अचस्तन स्थमित्त वृत्ते  
 समयमें होता है वह वतानके लिये आगेका सूत्र करते हैं—

ॐ उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है ।

१८१२ उत्कृष्ट बुद्धिसंक्रमक स्वामित्त्वाक प्रमात हुए वही जीवके अनन्तर समयमें कतना ही  
 संक्रम करते हुए उत्कृष्ट अवस्थान होता है, क्योंकि उत्कृष्ट बुद्धिक विनाया हुए विना यहाँ पर

एवमुक्त्स्ववद्विपुव्वमवट्टाणसामित्तं परूविय संपहि पयदकम्माणमुक्त्स्सहाणीए सामित्त-  
विहाणट्टमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ उक्कस्सिया हाणी कस्स ?

§ ८३२. सुगमं ।

❀ जेण उक्कस्सद्विदिखंडय घादिदं तस्स उक्कस्सिया हाणी ।

§ ८३३. जेसुक्कस्सद्विदिसंकमादो अंतोमुहुत्तपडिभागेणुक्कस्सयं द्विदिखंडयं घादिदं  
तस्सुक्कस्सिया हाणी होइ, तत्थुक्कस्सद्विदिखंडयमेत्तस्स द्विदिसंकमस्स एकसराहेण  
परिहाणिदंसणादो । केत्तियमेत्ते च तमुक्कस्सद्विदिखंडयं ? अंतोकोडाकोडिपरिहीण  
कम्मद्विदिमेत्तं, उक्कस्सवुड्डीदो किंचूणपमाणत्तादो । एदस्सेव पमाणपरिच्छेदस्स साहणट्ट-  
मिदमाह—

❀ जं उक्कस्सद्विदिखंडयं तं थोवं । जं सव्वमहंतं दाह गदो त्ति  
भणिदं तं विसेसाहियं ।

§ ८३४. जमुक्कस्सद्विदिखंडयमुक्कस्सहाणीए विसईकयं तं थोवं । जं पुण उक्कस्स-  
वद्विपरूवणाए सव्वमहंतं दाहं गदो त्ति भणिदं तं विसेसाहियं । एत्थ कज्जे कारणोव  
यारेण सव्वमहंतदाहजणिदा बुड्डी चैव सव्वमहंतदाहसहेण णिदिट्ठा । तदो उक्कस्स-  
हाणीदो उक्कस्सद्विदिखंडयसरूवादो उक्कस्सिया वड्डी विसेसाहिया त्ति वुत्तं होइ ।

अवस्थान देखा जाता है । इस प्रकार उत्कृष्ट वृद्धिपूर्वक अवस्थानके स्वामित्वका कथन करके अब  
प्रकृत कर्मोंकी उत्कृष्ट हानिके स्वामित्वका विधान करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

\* उत्कृष्ट हानि किसके होती है ?

§ ८३२ यह सूत्र सुगम है ।

\* जिसने उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात किया है उसके उत्कृष्ट हानि होती है ।

§ ८३३ जिसने उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमसे अन्तर्मुहूर्त कालमें प्रतिभग्न होकर उत्कृष्ट  
स्थितिकाण्डकका घात किया है उसके उत्कृष्ट हानि होती है, क्योंकि वहाँ पर उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक-  
प्रमाण स्थितिसंक्रमकी एक वारमें हानि देखी जाती है ।

शंका—वह उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक कितना है ?

समाधान—अन्तःकोडाकोड़ी कम कर्मस्थितिप्रमाण है, क्योंकि वह उत्कृष्ट वृद्धिसे कुछ  
न्यून प्रमाण है ।

इमीके प्रमाणका परिच्छेद साधनेके लिए यह आगेका सूत्र कहते हैं—

\* जो उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक है वह स्तोक है । जो सर्वोत्कृष्ट दाहको प्राप्त  
हुआ है ऐसा कहा है वह विशेष अधिक है ।

§ ८३४ उत्कृष्ट हानिका विषयीकृत जो उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक है वह स्तोक है । तथा  
उत्कृष्ट वृद्धिकी प्ररूपणामें सर्वोत्कृष्ट दाहको प्राप्त हुआ ऐसा कहा है वह विशेष अधिक है । यहाँ पर  
कार्यमें कारणका उपचार करनेसे सर्वोत्कृष्ट दाहजनित वृद्धि ही सर्वोत्कृष्ट दाह शब्द द्वारा निर्दिष्ट  
की गई है । इसलिए उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकस्वरूप उत्कृष्ट हानिसे उत्कृष्ट वृद्धि विशेष अधिक है यह



अउद्वाणियञ्जवमज्ज दुविहं—सादपाओग्गमसादपाओग्गं च । तस्य परणत्तसेणासाद  
पाओग्गस्स गहणमिह विण्णेर्यं, अण्णहा सभ्युत्तस्सत्तिदिक्कपहेदुत्तिव्ययराहापरिणामाणुव  
वचीदो । सभ्युत्तस्सविसोहिणिर्बणस्स मादचउद्वाणञ्जवमज्जस्स सच्चमइतदाहेउत्त-  
विरोहादो च । तदो असादचउद्वाणियाणुभागपपाओग्गञ्जवमज्जस्स उवरी आ अतोकोडा-  
कोडी णिव्वियण्णंतोकोडाकोडादो सउत्तगुणहीणा दाहट्टिदिसण्णिदा सइ गहेयव्वा,  
हेट्टिमासेसट्टिदिसकमवियप्पाणमुत्तस्सदाहविरुद्धहावघादा । ण च सच्चमइतेण दाहण  
विणा उक्कस्सओ द्विदिक्कपो होइ, विप्पट्टिसदादो । तन्हा अउद्वाणियञ्जवमज्जस्सुवरी ओ  
एवविहमतोकोडाकोडाद्विदिसकममाणो समवट्टिदो सच्चमइतेण दाहेण परिण्णो सतो  
उक्कस्सट्टिदि पक्कदि तस्स आवल्लिपादीदं सक्कमेमाणयस्स पपदक्कम्माणमुत्तस्सिया वट्टी  
ट्टिदिसकमविसया होदि चि सिद्धं । एत्थ वट्टिपमाण दाहट्टिदिपरिणीणसुत्तरि-आलीस  
सागरोत्तमकोडाकोडिमेषअणत्तरइट्टिमसमपसकमादो सामिचत्तमण ट्टिदिसकमस्स तेषिय  
मेत्तेण बुद्धिदसणादो । एवमदेसिं फम्माणमुत्तस्सवट्टीए सामिच परविय तस्सवावट्टाप-  
सामिचं पि उक्कस्सय विदियसमए होइ चि आणावणह सुत्तसुत्तर मण्ण—

⊗ तस्सेव से काले उक्कस्सपमवट्टाप ।

१८३१ तस्सं उक्कस्सवुट्टिसकमसामिचसुवगयस्स स कस्स तेषियमव संक्कमे-  
माणयस्स उक्कस्समवट्टाप होदि । बुद्धो उक्कस्सवुट्टीए अविप्पट्टसरुक्केण तस्यावट्टापइसणादो ।

प्रबोध्य । जनमेसं प्रकृतस्य सात्त्विकस्योपमं यममध्यमं यहाँ पर महत्त्व ज्ञानमा आरिप, अन्वया  
सर्वोत्कृष्ट स्थितिरन्वयं हेतुमूल तीव्रतर दाहपरिणाम ही उत्पत्ति नहीं वन सफली तथा सबसं उत्कृष्ट  
विशुद्धिकारणक सात्त्विकस्वान् यममध्यके सर्वोत्कृष्ट दाहवृत्त होनेमें विरोध आता है । इसलिये  
असात्त्विकस्वानीय अनुभागवचनके योग्य यममध्यके द्वार निर्बिन्द्य अन्तःकोडाकोडीसे संक्यात-  
गुत्थी हीन ओ दाहसंघातकी अन्तःकोडाकोडी स्थिति है वस यहाँ महत्त्व करना आरिप, क्योंकि  
अवस्तव समस्त संकमविकल्प उत्कृष्ट दाहके विरुद्ध स्वभाववाले हैं । और सर्वोत्कृष्ट दाहके बिना  
उत्कृष्ट स्थितिरन्वय नहीं होया क्योंकि पेसा हालका नियेध है । इसलिये अतुःस्थानिक यममध्यके  
द्वार ओ इस प्रकारकी अन्तःकोडाकोडीप्रियाय स्थितिक संकम करता हुआ स्थित है वह सर्वोत्कृष्ट  
दाहसे परियत होअ उत्कृष्ट स्थितिको बाँधता है वसक एक आरिषिके दाह संकम्यय कृतं रूप  
प्रकृत कर्मोकी स्थितिसंकमविययक उत्कृष्ट बुद्धि हाती है वह सिद्ध हुआ । यहाँ पर बुद्धिक पमान्य  
दाहस्वाभावसे हीन सुत्तर और आलीस कोडाकोडी सागरप्रमाण स्थिति है क्योंकि अन्तःकोडा पूर्व  
समयमें हुए संकमसे स्वामित्वके समयमें स्थितिसंकमसे तत्प्रमाया बुद्धि बची जाती है । इसप्रकार  
इस कर्मोकी उत्कृष्ट बुद्धिके स्वामित्वक कृत करके वहीके उत्कृष्ट अवस्थान स्वामित्व वसरे  
समयमें होता है यह बचानेके लिये आगेका सूत्र करते हैं—

⊗ तसीक अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है ।

१८३२ उत्कृष्ट बुद्धिसंकमके स्वामित्वकं मातं रूप वती कीवके अनन्तर समयमें कथया ही  
संकम करते हुए उत्कृष्ट अवस्थान होगा है, क्योंकि उत्कृष्ट बुद्धिक विद्यमा रूप चिना यहाँ पर

§ ८३७. कुदो एवं कीरदे चे ? ण, समुहेणेदेसिं चालीससागरोवमकोडाकोडीणं वंधाभावेण कसायुकस्सट्टिदिपडिग्गहमुहेण तहा सामित्तविहाणादो । तदो वंधावल्लियूणं कसायड्ढिदिमुक्कस्सियं सगपाओग्गतोकोडाकोडिद्विदिसंकमे पडिच्छियूणं संकमणावल्लियादिकंतस्स पयदसामित्तमिदि सुसंवद्धमेदं । हाणीए णत्थि विसेसो, उक्कस्सट्टिदिघादविसए तस्सामित्तपडिलंभस्स सब्वत्थ णाणत्ताभावादो । एत्थ पमाणाणुगमे कसायभंगो । णवरिणवुंसयवेदारइ-सोग-भय-दुगुंछाणमुक्कस्सट्टिदिवुद्धी अवट्ठाणं च वीससागरोवमकोडाकोडीओ पल्लिदोवमासंखेज्जभागवभहियाओ । कुदो ? कसायाणमुक्कस्सट्टिदिवंधकाले तेसिं पि रूव्णावाहाकंडएणुणवीससागरोवमकोडाकोडिमेत्तट्टिदिवंधस्स दुप्पडिसेहत्तादो । एवमेदं परूविय संपहि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पयदसामित्तविहाणट्टुवरिमो सुत्तपवट्ठो—

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिया वड्ढी कस्स ?

§ ८३८. सुगमं ।

❀ वेदगसम्मत्तपाओग्गजहरणट्टिदिसंतकम्मियो मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्टिदिं वंधियूणं ट्टिदिघादमकाऊण अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स विदियसमयसम्माइट्टिस्स उक्कस्सिया वड्ढी ।

§ ८३७. शंका—ऐसा क्यों किया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि स्वमुखसे इनका चालीस कोड़ाकोड़ीसागरप्रमाण बन्ध नहीं होनेसे कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका प्रतिग्रह होनेके बाद उसके द्वारा उस प्रकारके स्वामित्वका विधान किया है । इसलिए कपायोंकी बन्धावलिसे न्यून उत्कृष्ट स्थितिको अपने योग्य अन्तःकोड़ाकोड़िप्रमाण स्थितिमें संक्रमित करके संक्रमावलिके बाद उसका प्रकृत स्वामित्व प्राप्त होता है यह सुसम्बद्ध है ।

हानिमें कोई विशेषता नहीं है, क्योंकि उत्कृष्ट स्थितिघातको विषयकर उत्कृष्ट हानिके स्वामित्वकी प्राप्ति सर्वत्र भेदरहित है । यहाँ पर प्रमाणका अनुगम करने पर कपायोंके समान भग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट स्थितिवृद्धि और अवस्थान पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक वीस कोड़ाकोड़ी सागर है, क्योंकि कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धकालमें उनका भी एक कम आवाधाकाण्डकसे न्यून वीस कोड़ाकोड़ीसागर-प्रमाण स्थितिबन्ध प्रतिषेध करनेके लिए अशक्य है । इस प्रकार उसका यहाँ पर कथन करके अब सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके प्रकृत स्वामित्वका विधान करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध कहते हैं—

❀ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ?

§ ८३८ यह सूत्र सुगम है ।

❀ वेदकसम्यक्त्वके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मवाला जो जीव मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर स्थितिघात किये बिना अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ, द्वितीय समयवर्ती उस सम्यग्दृष्टिके उत्कृष्ट वृद्धि होती है ।

केलियमेचो विसेसो ? अंतोकोटाफोडिमेचो । किमिदमेदं चोवं बहुचमणवसरपचमेव  
सामिचपरुवणाण मुत्तमिदि सयमेवासंक्रिय तरुपुचरमाह—

⊗ एवमप्याबहुअस्स साहण ।

§ ८३५ एदमणतरपरुविदं द्विदित्तवयस्स सन्धमहंत दाहअणिदद्विदिबंभपसरस्स  
च उं चोवबहुचं तमुक्कस्सवड्ढि-हाणोणमुवरि भणिस्समाणचोववहुचस्स साहणमिदि क्कु  
सिस्सद्विदद्विमिह परुविदं, तम्हा जेदमसंबदमिदि । एव ताव मिच्छत्त-सोलसकसायाण-  
मुक्कम्भवड्ढि-हाणि-अवहुअणसामिच परुविय जोकसायाण पि सामिचाणुगमे एसो येव कमो  
चि पदुप्यापण्डुमुत्तमुत्तमाह—

⊗ एवं षण्णोक्कसायाण ।

। ८३६ अहा मिच्छत्तादोणमुक्कस्सवड्ढि-हाणि-अवहुअणसामिचपरिक्खा कया  
तहा षण्णोक्कसायाण पि कयम्हा, पाएण साहम्मदसणादो । विसेसो दु वड्ढि-अवहुअण-  
सामिचे चोवयमे अत्थि चि आणावण्डुमुत्तं सुत्तएयमाह—

⊗ षण्णरि कसायावमावसियुणमुक्कस्सद्विपिपडिच्छिदुणावसिया  
वीवस्स तस्स उक्कस्सिसपा बड्ढी । से काले उक्कस्सपमयद्वार्या ।

उक्त कथनका उत्तरयं है । विशेषतः प्रमास किन्ता है ? अन्तःकोटाकोटीप्रमाण इ । यह अनवसर  
प्राप्त अस्वबहुत्व स्वामित्व परुवणामे निरस्रिप कथा है इस प्रकार स्वर्ग ही चारुंअ कर इस  
विषयमें उत्तर देते हैं—

यह अप्यवहुत्वका साधन है ।

§ ८३१ यह परसे जो स्थितिक्रमवदकथ और उचोत्कृष्ट बाह्यनिर्गत स्थितिकथप्रसरकथ  
अस्वबहुत्व कथा है वह आगे कई कामेवले उत्कृष्ट बुद्धि-दानिसम्बन्धी अस्वबहुत्वका साधन है  
एसा समग्रकर शिष्योके हृदयमें स्थित उक्त अस्वबहुत्वका धर्त पर कथन किया है, इसलिये यह  
प्रकृतमें अर्थागत नहीं है । इसप्रकार मिच्छत्त और सोल्लह कथनोंकी उत्कृष्ट बुद्धि दानि और  
अवस्थानके एव मित्तकथ कथन करके नोकरायोके भी स्वामित्वका अनुगम करनेमें यही कथन है  
ऐसा कथन करनेसे शिष्य आगेका सूत्र करते हैं—

इसी प्रकार नौ नोकरायोको उत्कृष्ट बुद्धि, दानि और अवस्थानका स्वामी  
मानना चाहिए ।

§ ८३१ जिसप्रकार मिच्छत्त बाह्यकी उत्कृष्ट बुद्धि, दानि और अवस्थानके स्वामित्वकी  
पटोका भी वसीप्रकार नौ नोकरायोकी भी करनी चाहिए, क्योंकि इन सबके स्वामित्वमें मान्य कर  
साधर्म्य देना जाता है । परन्तु बुद्धि और अवस्थानके स्वामित्वमें जोड़ीसी विशेषता है, इसलिये  
इसे बतानके शिष्य आगेके जो सूत्र करते हैं—

⊗ किन्तु इतनी विशेषता है कि कपायोकी एक आबलिक्रम उत्कृष्ट स्थितिकथ नौ  
नोकरायोमें संक्रम करके एक आबलिके बाद उमरके उत्कृष्ट बुद्धि होती है । तथा  
उदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है ।

§ ८४२. जो पुच्चुप्पण्णादो सम्मत्तादो मिच्छत्तं गंतूण सम्मत्तद्विदिसंतादो समउत्तरं मिच्छत्तद्विदिं वंधिरुण सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स विदियसमयसम्माइडिस्स दोण्हं कम्माणमुक्कस्समवट्ठाणं होइ, तत्थ पढमसमयसंकंत्तमिच्छत्तद्विदिसंतकम्मस्स विदियसमए गलिदावसिइस्स पढमसमयसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तद्विदिसंकमपमाणेणावट्ठाणदंसणादो । एवमोघेण सन्वकम्माणमुक्कस्सवट्ठि-हाणि-अवट्ठाणसामित्तपरूवणा गया ।

❀ एत्तो जहणिएणाए ।

§ ८४३. एत्तो उवरि सन्वेसिं कम्माणं जहण्णवट्ठि-हाणि-अवट्ठाणसामित्तपरूवणा कायव्वा त्ति भणिदं होइ ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवज्जाणं जहणिएणा वट्ठी कस्स ?

§ ८४४. सुगम ।

❀ अप्पप्पणा समयूणादो उक्कस्सद्विदिसंकमादो उक्कस्सद्विदिसंकमे-माणप्रस्स तरस्स जहणिएणा वट्ठी ।

§ ८४५. तं क्खं ? समयूणुक्कस्सद्विदिं वंधियूण तदणंतरसमए उक्कस्सद्विदिं वंधिय वंधावलियवदिकंतं सकामेंतो हेट्ठिमसमए समयूणद्विदिसंकमादो समयुत्तरं संकामेदि । तदो

§ ८४२ जो पूर्वमें उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें जाकर सम्यक्त्वके स्थितिसत्त्वसे मिथ्यात्वकी एक समय अधिक स्थितिको बाँधकर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ उस द्वितीय समयवर्ती सम्यक्त्वके दोन्हों कर्मोंका उत्कृष्ट अवस्थान होता है, क्योंकि वहाँ पर प्रथम समयमें संक्रान्त हुए तथा दूसरे समयमें गलकर अवशिष्ट रहे मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मका प्रथम समयमें प्राप्त हुए सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके स्थितिसंक्रमके प्रमाणरूपसे अवस्थान देखा जाता है । इसप्रकार ओघसे सब कर्मोंकी उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थानके स्वामित्वकी स्वरूपणा की ।

\* आगे जघन्यका अधिकार है ।

§ ८४३ इससे आगे सब कर्मोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानके स्वामित्वका कथन करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

\* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सिवा शेष कर्मोंकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ?

§ ८४४ यह सूत्र सुगम है ।

\* जो अपने अपने एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मसे उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम करता है उसके जघन्य वृद्धि होती है ।

§ ८४५. शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर पुनः तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर बन्धावलिसे वाद संक्रम करता हुआ पिछले समयमें हुए एक समय कम स्थितिसंक्रमसे एक समय अधिकका संक्रम करता है, इसलिए उसके जघन्य वृद्धि होती है ।

§ ८३९. एतत् वेदयथाशोभाद्ब्रह्मण्डलद्विविधसंतकम्मिओ णाम बुविहो—किंचूच-  
सागरोवमद्विविधसंतकम्मिओ तप्युपचमेचद्विविधसंतकम्मिओ च । एतत् पुत्र सागरोवममेच-  
द्विविधसंतकम्मिओ परंदिपपञ्जयदो भेत्तवो, उक्त्स्ववह्नीप पयदत्तादो । तदो एवंबिहोप  
द्विविधसंतकम्मेषुबस्त्रिणो ओ मिच्छाद्द्वी मिच्छत्तस्स उक्त्स्वद्विदिं बधिपूर्णतोसुदुप-  
पडिमगो तप्याओगबिमुद्दीप मिच्छत्तस्स द्विदपादमकाऊण वेदयसम्मर्ष पडिवणो,  
तम्मि षेव समए मिच्छत्तद्विदिमंतोसुदुपुत्तचरिसागरोवममेच विबन्धिय कम्मेषु  
सकामिय विदियसमयसुवगओ तस्स विदियसमयसम्मद्विस्स पयदुक्त्स्वसामिच होए,  
एतत् थोचसागरोवमसंक्रमादो हेट्टिमसमयपडिवद्दादो तदुत्तचरिसागरोवममेचद्विदि  
संक्रमास्स बुद्धिदंसत्तादो ।

⊙ हाथी मिच्छत्तमंगो ।

§ ८४० बहवुपक्रमेण बुद्धिसकम काऊण तदो अंतोसुदुपेण सप्युक्त्स्वद्विदि  
खंडए पादिदे एतत् तदुक्त्स्वसामिच पडि मेदानात्तादो ।

⊙ उक्त्स्वसपमबह्नीप कस्स ?

§ ८४१ सुगमं ।

⊙ पुष्पुत्तपणो सम्मत्तावो सम्पुत्तरमिच्छत्तद्विविधसंतकम्मिओ  
सम्मर्ष पडिवणो तस्स विदियसमयसम्मद्विस्स उक्त्स्वसपमबह्नीप ।

§ ८३९ वहाँ पर वेदकर्म्यस्वके साथ अथर्व स्थितिसत्कर्मका जीव हो प्रकारका  
है—इस कर्म एक सागर स्थितिसत्कर्मका और सागरप्रकारप्रकार स्थितिसत्कर्मका । परन्तु  
वहाँ पर परेन्द्रियोंसे और अथर्व आया हुआ एक सागर स्थितिसत्कर्मका जीव केना चाहिए,  
क्योंकि बहुत बुद्धि का प्रकार है । इसलिये इस प्रकारके स्थितिसत्कर्मसे कर्मके जो मिच्छाद्वि  
जीव मिच्छात्तकी उत्पत्ति स्थितिक कर्म कर अन्तर्गुह्यमें प्रतिमान होकर तत्प्राप्त्ये विद्विसे  
मिच्छात्तका स्थितियात् किं विद्य वेदकसम्बन्धका प्राप्त हुआ और वही समय मिच्छात्तकी  
अन्तर्गुह्यकम सत्तर कोशाकोहीसागरप्रकार स्थितिको विबन्धिय कर्मसे संक्रमित कर दूसरे  
समयको प्राप्त हुआ इस द्वितीय समयवर्ती सम्पन्धिके प्रकृत उत्पत्ति स्वामित्व होता है, क्योंकि  
वहाँ पर निम्ने समयमें होनेवाले इस कर्म एक सागरप्रकार स्थितिसत्कर्मसे किञ्चित् न्यून एक  
सागर कर्म सत्तर कोशाकोही सागरप्रकार स्थितिसत्कर्मकी बुद्धि देनी जाती है ।

⊙ हानिकर मंग मिच्छात्तके समान है ।

§ ८४० पूर्वोक्त कर्मसे बुद्धिसत्कर्मको करके तदनन्तर अन्तर्गुह्यमें सबसे उत्पत्ति स्थिति  
काण्डका प्राप्त करने पर वहाँ मिच्छात्तके उत्पत्ति स्वामित्वसे इनके उत्पत्ति स्वामित्वमें कोई भेद नहीं है ।

⊙ उत्कृष्ट अवस्थान किसके होता है ।

§ ८४१ वह सूत्र सुगम है ।

⊙ जो जीव पूर्वमें उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे मिच्छात्तमें साकर एक समय अधिक  
मिच्छात्तके स्थितिसत्कर्मके साथ सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ उस द्वितीय समयवर्ती  
सम्पन्धिके उत्कृष्ट अवस्थान होता है ।

§ ८४२. जो पुव्वुप्पण्णादो सम्मत्तादो मिच्छत्तं गंतूण सम्मत्तट्ठिदिसंतादो समउत्तरं मिच्छत्तट्ठिदिं वंधिऊण सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स विदियसमयसम्माइट्ठिस्स दोण्हं कम्माणमुक्कस्समवट्ठाणं होइ, तत्थ पढमसमयसंकंतमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मस्स विदियसमए गलिदावसिट्ठस्स पढमसमयसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तट्ठिदिसंकमपमाणेणावट्ठाणदंसणादो । एवमोघेण सव्वकम्माणमुक्कस्सवट्ठि-हाणि-अवट्ठाणसामित्तपरूवणा गया ।

✽ एत्तो जहणिएयाए ।

§ ८४३. एत्तो उवरि सव्वेसिं कम्माणं जहणणवट्ठि-हाणि-अवट्ठाणसामित्तपरूवणा कायव्वा त्ति भणिदं होइ ।

✽ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवज्जाणं जहणिएया वट्ठी कस्स ?

§ ८४४. सुगम ।

✽ अप्पण्णा समयूणादो उक्कस्सट्ठिदिसंकमादो उक्कस्सट्ठिदिसंकमे-माणयस्स तस्स जहणिएया वट्ठी ।

§ ८४५. तं क्वं ? समयूणुक्कस्सट्ठिदिं वंधियूण तदगंतरसमए उक्कस्सट्ठिदिं वंधिय वंधावलियवदिकंतं सकामेतो हेट्ठिमसमए समयूणट्ठिदिसंकमादो समयुत्तरं संकामेदि । तदो

§ ८४२ जो पूर्वमें उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें जाकर सम्यक्त्वके स्थितिसत्त्वसे मिथ्यात्वकी एक समय अधिक स्थितिको बांधकर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ उस द्वितीय समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके दोन्हों कर्मोंका उत्कृष्ट अवस्थान होता है, क्योंकि वहाँ पर प्रथम समयमें संक्रान्त हुए तथा दूसरे समयमें गलकर अवशिष्ट रहे मिथ्यात्वके स्थितिसत्त्वकर्मका प्रथम समयमें प्राप्त हुए सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके स्थितिसंक्रमके प्रमाणरूपसे अवस्थान देखा जाता है । इसप्रकार ओघसे सब कर्मोंकी उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थानके स्वामित्वकी प्ररूपणा की ।

✽ आगे जघन्यका अधिकार है ।

§ ८४३ इससे आगे सब कर्मोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानके स्वामित्वका कथन करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

✽ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सिवा शेष कर्मोंकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ?

§ ८४४ यह सूत्र सुगम है ।

✽ जो अपने अपने एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसत्त्वकर्मसे उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम करता है उसके जघन्य वृद्धि होती है ।

§ ८४५. शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर पुनः तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर बन्धावलिके बाद सक्रम करता हुआ पिछले समयमें हुए एक समय कम स्थितिसत्त्वकर्मसे एक समय अधिकका संक्रम करता है, इसलिए उसके जघन्य वृद्धि होती है ।

तस्स अहणिया वृषी होदि, एयद्विदिमेचस्सव तस्य बुद्धिदंसणादो । उदाहरणपदसमभूमेदं परुवेद । तदो सम्वासु वेऽ द्विदीसु समयुत्तरवधसेण अहणिया वृषी अभिरुद्धा परुवेपव्या ।

⊗ जहणिया हाणी कस्स ?

§ ८४६ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवत्ताण सम्भक्कम्माणमिदि अशुबहुदे । सुगममन्यत् ।

⊗ तप्पाभोग्गसमयुत्तरजहणियाद्विविसकमावो तप्पाभोग्गजहणणद्विदि सकामेमाणस्स तस्स जहणिया हाणी ?

§ ८४७ समयुत्तरपुवद्विदि संकामेमाणमो अचद्विदिगलणेण पुवद्विदि संकामेदु मादघो सस्स जहणिया हाणी एयद्विदिमेचस्सव तस्य हाणिदंसणादो । एव सम्वाओ द्विदीओ णिरुमिठण जहण्यहाणी परुवेपव्या ।

⊗ एयवरत्थमवहाणं ।

§ ८४८ कथं ताव वृषीय अचद्विदिमसमवो ? शुभदे—समपुणुक्कस्सद्विदिसंकामादो उक्कस्सद्विदिसंकामेण पद्विदस्स अंतोऽपुणुत्तमपद्विदिविदिवधसेण उत्तेवावहाणे णत्थि विरोदो । एव जहण्यहाणीय वि अवहाणसंमवो दह्व्यो । एदाणि जहण्यवद्वि-हाणि-अवहाणाणि एयद्विदिमेचाणि । संपहि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्यवद्विसामिच परुणणसुत्तरसुत्त मणत्—

क्योंकि वहाँ पर एक समयमात्र स्थितिसंक्रमकी वृत्ति देखी जाती है । उदाहरण निकलानेके लिये यह कहा है इसलिये सभी स्थितियोंमें एक समय अधिक बन्य होनेसे अपन्य वृत्ति बिना विरोधके बन जाती है वसा कथन करण्य चाहिये ।

⊗ अपन्य हानि किसके होती है ?

§ ८४९ वहाँ इस सूत्रमें सम्पत्तर और सम्पम्मिच्छत्तरके जोड़कर शेष सब कर्मोंकी हानि वाक्यकी पूर्व सूत्रसे अनुवृत्ति होती है । शेष कथन सुगम है ।

⊗ तत्प्रायोण्य एक समय अधिक अपन्य स्थितिके संक्रमक बाद तत्प्रायोण्य अपन्य स्थितिके संक्रम करनेवाले जीवके अपन्य हानि होती है ।

§ ८४० एक समय अधिक शुभस्थितिके संक्रम करनेवाले जो जीव शुभस्थितिके संक्रम करता है उसके अपन्य हानि होती है, क्योंकि वहाँ पर एक स्थितिमात्रकी हानि देखी जाती है । इस प्रकार सब स्थितियोंके विवक्षित कर अपन्य हानिका कथन करना चाहिये ।

⊗ किसी एक स्थानमें अपन्य अवस्थान होता है ।

§ ८४१ शंकर—इसके बाद अवरथाव कीसे सम्यक् है ?

समाधान—करत है—एक समय कम उदाहर स्थितिके संक्रमक बाद करत स्थितिके संक्रम करनेसे वृत्ति का प्रान हूण औरक अन्तर्मुहूर्त काकतक अवस्थित स्थितिके बन्यके कारण एतीमें अवस्थान बनार वृत्तिके बाद अवरथाव हानिमें विरुध मरी है ।

इसी प्रकार अपन्य हानिके बाद भी अवस्थानका सम्यक् ज्ञान लेण्य चाहिये । ये अपन्य वृत्ति हानि और अवस्थान एक स्थितिप्रमाण है । कर सम्पत्तर और सम्पम्मिच्छत्तके अपन्य वृत्तिके स्वामित्वका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र करत है—

❀ सम्मत्त-सम्भामिच्छुत्ताणं जहणिया वड्डी कस्स ?

§ ८४९ सुगमं ।

❀ पुब्बुप्पणसम्मत्तादो दुसमयुत्तरमिच्छुत्तसंतकम्मिओ सम्मत्तं पडिवरणो तरस्स विदियसमयसम्भाइट्टिस्स जहणियाया वड्डी ।

§ ८५० कुदो ? वेदगसम्मत्तग्गहणपठमसमए दुसमयुत्तरमिच्छुत्तद्विदिं पडिच्छिय तत्थेवाघट्टिदीए णिसेयमेयं गालिय विदियसमए पठमसमयसंकमादो समयुत्तरं संकामे-माणयम्मि जहणणवुड्डीए एयसमयमेत्तीए परिप्फुडमुवलंमादो ।

❀ हाणी स्सेसकम्मभंगो ।

§ ८५१ सुगमं, अधद्विदिगलणेणेयसमयहाणीए सच्चत्थ पडिसेहाभावादो ।

❀ अचट्ठाणमक्कस्सभंगो ।

§ ८५२ एदं पि सुगमं, पयारंतासभवादो । एवमोघेण जहण्णुकस्सवट्ठि-हाणि-अचट्ठाणाणं सामित्तविणिण्णओ कओ ।

§ ८५३. एत्तो आदेसपरूवणद्वं उच्चारणं वत्तइस्सामो । तं जहा—सामित्तं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छत्त-सोलसक० उक्क० द्विसिं० वड्डी कस्स ? जो चउट्ठाणजवमज्झस्सुवरि अंतोकोडाकोडिद्विदिं

\* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ?

§ ८४६ यह सूत्र सुगम है ।

\* जो पहले उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें जाकर तथा मिथ्यात्वके दो समय अधिक सत्कर्मवाला होकर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ उस द्वितीय समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके जघन्य वृद्धि होती है ।

§ ८५० क्योंकि वेदकसम्यक्त्वको ग्रहण करनेके प्रथम समयमें मिथ्यात्वकी दो समय अधिक स्थितिको संक्रमित करके तथा वहीं अध स्थितिके एक निषेकको गलाकर दूसरे समयमें प्रथम समयमें हुए संक्रमसे एक समय अधिकका संक्रम करनेपर स्पष्टरूपसे एक समयमात्र जघन्य वृद्धि उपलब्ध होती है ।

\* हानिका भंग शेष कर्मोंके समान है ।

§ ८५१ यह सूत्र सुगम है, क्योंकि अधःस्थितिकी गलना होनेसे एक समयमात्र हानिका सर्वत्र कोई प्रतिषेध नहीं है ।

\* अवस्थानका भंग उत्कृष्टके समान है ।

§ ८५२ यह सूत्र भी सुगम है, क्योंकि प्रकारान्तरका प्राप्त होना असम्भव है । इस प्रकार ओघसे जघन्य और उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थानके स्वामित्वका निर्णय किया ।

§ ८५३ आगे आदेशका कथन करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं । यथा—स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व और सोलह कषायोंके स्थितिसंक्रमकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? घटु स्थान यवमध्यके उपर अन्त कोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थितिका संक्रम करनेवाले जिस जीवने



सद्यमेमाणो तदो उक्तसं दार्हं गत्वा उक्तसद्विधिं पश्यादो तस्य आवलियादीदस्य तस्य उक्तं वृत्ती । तस्सेव से काले उक्तं अवहृणान् । उक्तं हाणी कस्य ? अण्णदरं वो उक्तसद्विधिं सकामेमाणो उक्तसद्विधिसंबन्धं इत्थं तस्य उक्तं हाणी । एवं पण्डितो कसायणं । पवरि उक्तं वृत्ती कस्य ? सोत्सकं उक्तं द्विधिं पण्डितानुणावलिपादीदस्य तस्य उक्तं वृत्ती । तस्सेव से काले उक्तं अवहृणान् । सम्मत्त-सम्मामि उक्तं वृत्ती कस्य ? अण्णदं वो तप्पाओगाअहण्णद्विधिं संख्यं मिच्छ उक्तं द्विधिं बंधित्वा द्विधिपादमकादुणंतेदुत्तुत्तु सम्मत्त पण्डितजिय तस्य विदियसमयवेदयसम्माद्विदिस्य तस्य उक्तसिया वृत्ती । उक्तसमवहृणान् कस्य ? अण्णदं वो पुष्पुप्पणादो सम्मत्तादो मिच्छसस्य समपुत्तरद्विधिं बंधिय सम्मं पण्डितं तस्य उक्तं अवहृणान् । उक्तं हाणी कस्य ? अण्णदं वो उक्तं द्विधिं संख्यं उक्तं द्विधिसंबन्धं इत्थं तस्य उक्तं हाणी । एवं वदुत्तु गदीसु । पवरि पण्डितियतिरिक्त्वाअपत्त -मणुसअपत्तं मिच्छ-सोत्सकं-अवणोक्तं उक्तं वृत्ती कस्य ? अण्णदं वो तप्पाओगाअहण्णद्विधिं संख्यं तप्पाओमा-उक्तं द्विधिं पश्यादो तस्य आवलियादीदस्य उक्तं वृत्ती । तस्सेव से काले उक्तं अवहृणान् । उक्तं हाणी विहविमगो । सम्म-सम्मामि उक्तं हाणी विहविमगो । आण्णादि पण्डितता पि मिच्छ-सोत्सकं-अवणोक्तं उक्तं हाणी विहविमगो । सम्म

कस्य वाक्ये मात होकर उत्तर स्थितिक्रम कथ्य किया है उसी क्रमके एक भावस्थिके वाक् स्थितिसंक्रम को उत्तर वृत्ति होती है । उसी क्रमके अनन्तर समयमें उत्तर अवस्थान होता है । उत्तर हानि किसके होती है ? उत्तर स्थितिक्रम संक्रम करनेवाला जो जीव उत्तर स्थितिक्रमवहृणान् प्राप्त करता है उसके उत्तर हानि होती है । इसी प्रकार नौ नोकयायोंमें एकामित्र है । किन्तु इतनी विशेषण है कि उत्तर वृत्ति किसके होती है ? सोत्सक कयायोंमें उत्तर स्थितिक्रम संक्रम करने वाला एक भावस्थि कथ्य गया है उसके उत्तर वृत्ति होती है । तथा वसीक अनन्तर समयमें उत्तर अवस्थान होता है । समयकथ्य और सम्मत्तमिच्छात्वकी उत्तर वृत्ति किसके होती है ? तस्यायम्य कथम्य स्थितिक्रम संक्रम करनेवाला जिस जीवने मिच्छात्वकी उत्तर स्थितिक्रम पण्डित स्थितिप्राप्त किये किये अथवा भूद्वैतमें सम्मत्तत्वको प्राप्त किया है द्वितीय समवर्ती उस वेदकसम्पत्तयि जीवके उत्तर वृत्ति होती है । उत्तर अवस्थान किसके होता है ? जो वृत्त कथम्य रूप सम्मत्तसे मिच्छात्वमें आकर मिच्छात्वकी एक समय भविक स्थितिक्रम कथ्यकर समयकथ्यको प्राप्त हुआ है उसके उत्तर अवस्थान होता है । उत्तर हानि किसके होती है ? उत्तर स्थितिक्रम संक्रम करनेवाला जो जीव उत्तर स्थितिक्रमवहृणान् प्राप्त करता है उसके उत्तर हानि होती है । इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषण है कि कथमिच्छात्व विशेषण अपवासा और मनुष्य अवस्थाओंमें मिच्छात्व सोत्सक कयायों और नौ नोकयायोंकी उत्तर वृत्ति किसके होती है ? तस्यायं म्य कथम्य स्थितिक्रम संक्रम करनेवाला जिस जीवने तस्यायम्य उत्तर स्थितिक्रम कथ्य किया है उसके एक भावस्थिके वाक् उत्तर वृत्ति होती है । वसीके तदनन्तर समयमें उत्तर अवस्थान होता है । उत्तर हानिक्रम मंग स्थितिविमक्तिके समान है । समयकथ्य और सम्मत्तमिच्छात्वकी उत्तर हानिक्रम मंग स्थितिविमक्तिके समान है । समयकथ्य और सम्मत्तमिच्छात्वकी उत्तर वृत्ति

सम्मामि० उक्क० वड्डी कस्स ? जो वेदगपाओग्गसम्मत्तजहण्णद्विदिसंकामओ मिच्छाड्ढी  
सम्मत्तं पडि० तस्स विदियसमयवेदयसम्माड्ढिस्स उक्क० वड्डी । हाणी विहत्तिभंगो ।  
अणुदिसादि सव्वड्ढा त्ति २८ पयडीणं हाणी विहत्तिभंगो । एवं जाव० ।

§ ८५४. जहण्णए पयदं । दुविहो णिदेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण  
मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० जह० वड्डी कस्स ? अण्णद० जो समयूणुक०द्विदि-  
संकमादो तदो उक्क० द्विदि पवड्ढो तस्स आवलियादीदस्स तस्स जह० वड्डी । जह०  
हाणी कस्स० ? अण्णद० उक्क०द्विदिसंकमादो समयूण०द्विदि संकामयस्स तस्म जहण्णया  
हाणी ? एयदरत्थमवट्ठाणं । सम्म०-सम्मामि० जह० वड्डी कस्स ? अण्णद० जो  
पुव्वुप्पण्णादो सम्मत्तादो मिच्छत्तस्स विदियसमयुत्तरं द्विदि बंधियुण सम्मत्तं पडिवण्णो  
तस्स विदियसमयसम्माड्ढि० तस्स जह० वड्डी । जह०मवट्ठाणमुक्कस्सभंगो । हाणी  
अधद्विदिं गाल्लमाणस्स । एवं चदुगदीसु । णवरिं पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०  
सम्म०-सम्मामिच्छत्त० अवट्ठाणं वड्डी च णत्थि । आणदादि णवगेवज्जा त्ति २६  
पयडीणं जह० हाणी अधद्विदिं गाल्लमाणयस्स । सम्म०-सम्मामि० जह० वड्डी कस्स ?  
अण्णद० जो सम्माड्ढी मिच्छत्तं गंतूण एयं द्विदिखंडयमुक्खेयूण सम्मत्तं पडिवण्णो

किसके होती है ? वेदकसम्यक्त्वके योग्य जघन्य स्थितिका संक्रम करनेवाला जो मिथ्यादृष्टि जीव  
सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ द्वितीय समयवर्ती उस वेदकसम्यग्दृष्टि जीवके उत्कृष्ट वृद्धि होती है । उत्कृष्ट  
हानिका भंग स्थिति विभक्तिके समान है । अनुदिशासे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें २५  
प्रकृतियोंकी हानिका भंग स्थिति विभक्तिके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक  
जानना चाहिए ।

§ ८५४ जघन्यका प्रकरण है । दो प्रकारका निर्देश है—ओघ और आदेश । ओघसे  
मिथ्यात्व, सोलह कपाय और नौ नोरुपायोंकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ? एक समय कम  
उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम करनेवाले अन्यतर जिस जीवने उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया, एक आवलिके  
बाद उस जीवके उत्कृष्ट वृद्धि होती है । जघन्य हानि किसके होती है ? जिस अन्यतर जीवने  
उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम करके एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम किया उसके जघन्य हानि  
होती है । तथा इनमेंसे किसी एक जगह जघन्य अवस्थान होता है । सम्यक्त्व और  
सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ? जो अन्यतर जीव पहले उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे  
मिथ्यात्वमें जाकर मिथ्यात्वकी दो समय अधिक स्थितिका बन्ध कर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ उस  
द्वितीय समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके जघन्य वृद्धि होती है । जघन्य अवस्थानका भंग उत्कृष्टके समान  
है । हानि अध स्थितिके गलानेवालेके होती है । इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए ।  
किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें सम्यक्त्व  
और सम्यग्मिथ्यात्वका अवस्थान और वृद्धि नहीं है । आनत कल्पसे लेकर नौ प्रवेयक तकके  
देशोंमें २६ प्रकृतियों जघन्य हानि अधःस्थितिके गलानेवालेके होती है । सम्यक्त्व और  
सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ? जो अन्यतर सम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्वमें जाकर  
एक स्थितिकाण्हकरी उद्वेलना करके सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ, द्वितीय समयवर्ती उस जीवके जघन्य

१. ता०प्रतौ उक्क० हाणी ( वड्डी ) वड्डी ( हाणी ) विहत्तिभंगो इति पाठः ।

तस्य विदियसमयसम्माहृतिस्त बह० वृष्टी । हाणी अथहृदि गालयमाथयस्त । अपुरितसदि  
सम्नहा पि २८ पय० बह० हाणी अपहृदि गालयमाण० । एषं जाव० ।

⊗ अथ्यायहुषं ।

§ ८५५ बहृणुक्त्सवहृि-हाणि-अथहाणाण पमाणविसुपणिण्णयकरणहुमप्या-  
बहुअमिदाणि कायभमिदि मनिद होइ ।

⊗ मिच्छुत-सोखसकसाय-इत्थि पुरिसवेद-इस्स-रदीणं सम्बत्पोवा  
उक्त्सस्सिया हाणी ।

§ ८५६ हुदो ? अंतोकोडाकोडिपरिहोणसचरि चत्तास्सेससागरोषमकोडाकोडि  
पमाणवादो ।

⊗ बहूी अथहाणं च दो वि तुह्वाथि विसेसाहियाथि ।

§ ८५७ केचियमेचो विसेसो ? अतोकोडाकोडिमेचो । एत्थ कारण पुअमेप  
परुविद ।

⊗ सम्मत्त-सम्मानिच्छुत्ताण सम्बत्पोवो अथहाणसकमो ।

§ ७५८ एयथिसेयपमाणवादो ।

⊗ हाथिसकमो असंसेखगुणो ।

§ ८५९ उक्त्सहृदिदिलबयपमाणवादो ।

हृदि होती है । हाणि अथर्वस्वितिको गच्छनेवालेके हाठी है । अतुनिश्चसे लेकर सर्वाथसिद्धि तकसे  
वेचोमें २८ प्रकृतिबोधी अथर्व्य हाणि अथर्वस्वितिको गच्छनेवालेके होती है । इसीप्रकार अथर्व्यरक  
मार्गका एक ज्ञानना चाहिए ।

⊗ अथर्व्यहुत्वका अर्थिकार है ।

§ ८५५. अथर्व्य और अथर्व्य हृदि हाणि और अथर्वस्वानथ पमाणविययक निरर्थक करके  
क्षिप इस समय अथर्व्यहुत्व करना चाहिए यह एक ज्ञानका तात्पर्य है ।

⊗ मिथ्यात्व, सोलह कथाय, बीवेद, पुरुषवेद, हास्य और रतिकी उत्कृष्ट हाणि  
सबसे स्तोक है ।

§ ८५६. क्योंकि यह अन्तःकोडाकोडी हीन सचर और चत्तास्से कोडाकोडी समारपमाण है ।

⊗ उससे हृदि और अथर्वस्वान दोनों ही तुह्य होकर विशेष अधिक हैं ।

§ ८५७. विज्ञेयका प्रमाण किउना है ? अन्तःकोडाकोडीमात्र है । यहाँ पर अथर्व्यक कल्प  
परसे ही कर भाषे हैं ।

⊗ सम्पत्त्व और सम्पत्तिमिथ्यात्वका अथर्वस्वानसंक्रम सबसे स्तोक है ।

§ ८५८. क्योंकि यह एक निवेकप्रमाण है ।

⊗ उससे हाणिसकम असंस्मात्गुणा है ।

§ ८५९. क्योंकि यह अथर्व्य स्वितिकप्रमाण है । ।

❀ वड्डिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ८६०. केत्तियमेत्तेण ? अंतोकोडाकोडिमेत्तेण ।

❀ एवुंसयवेद-अरइ-सोग-भय-दुगुंछाणं सव्वत्थोवा उक्कस्सिया वड्डी अवट्ठाणं च ।

§ ८६१. कुदो ? एदेसिमुक्कस्सवड्डीए अवट्ठाणस्स च पल्लिदोवमासंखेज्जभाग-व्भहियवीससागरोवमकोडाकोडिपमाणत्तदंसणादो ।

❀ हाणिसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ८६२. केत्तियमेत्तेण ? अंतोकोडाकोडिपरिहीणवीमसागरो०कोडाकोडिमेत्तेण ।

❀ एत्तो जहएण्यं ।

§ ८६३ सुगमं ।

❀ सव्वारिंसि पयडीणं जहएणिया वड्डी हाणी अवट्ठाणं द्विदिसकमो तुल्लो ।

§ ८६४ कुदो ? सव्वपयडीणं जहण्णवड्डी-हाणि-अवट्ठाणाणमेयद्विदिपमाणत्तादो । आदेसेण सव्वमग्गणासु जहण्णुक्कस्सप्पावहुअं द्विदिविहत्तिभंगो ।

एवं पदणिक्खेवो समत्तो ।

❀ वड्डीए तिण्णि अणिओगद्वाराणि ।

\* उससे वृद्धिसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ८६० कितना अधिक है ? अन्तःकोडाकोडीप्रमाण अधिक है ।

\* नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान सबसे स्तोक है ।

§ ८६१. क्योंकि इनकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान पत्यका असंख्यातवर्षों भाग अधिक वीस कोडाकोडी सागरप्रमाण देखा जाता है ।

\* उनसे हानिसंक्रम विशेष अधिक है ?

८६२ कितना अधिक है ? अन्तःकोडाकोडी हीन वीस कोडाकोडी सागरप्रमाण अधिक है ।

\* आगे जघन्यका प्रकरण है ।

§ ८६३ यह सूत्र सुगम है ।

\* सब प्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान स्थितिसंक्रम तुल्य है ।

§ ८६४. क्योंकि सब प्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान एक स्थितिप्रमाण है आदेशसे सब मार्गणाओंमें जघन्य और उत्कृष्ट अल्पबहुत्वका भंग स्थितिभिक्तिके समान है ।

\* वृद्धिका अधिकार है । उसमें तीन अनुयोगद्वार हैं ।

§ ८६० का बट्टी नाम ? पदनिक्षेपविसेसो बट्टी । तस्य त्रिणि अणियोय-  
हाराणि मन्ति चि पण्यं काठण तण्णामणिदेसकरणहुमुवरिमसुत्तमाह—

☉ समुत्थितत्वा परुवणा अप्पापहुपु सि ।

§ ८६६ तस्य समुत्थितत्वा नाम सम्बन्धमात्रेण पत्तियाओ बट्टीओ पत्तियाओ च  
हाणीओ अवहुत्तमवचत्तव्यं च अस्मि पत्तिय चि संमवासमवमेत्तपरुवणा । एवं च  
सामन्नेण समुत्थितत्वात् बट्टि-हाणिविसेसणं विसयविमामपरिक्खा परुवणा चि मण्यह ।  
बट्टि-हाणिविसेसावहुत्तावावचत्तव्यमयान नीवाणमोपादसेहिं योववहुत्तपरुवणा अप्पा-  
बहुत्तं नाम । एदाणि त्रिणि येव अणियोगहाराणि सामिचात्तीणमेत्थेव अत्तम्मावदसप्पादो ।  
तदो समुत्थितत्वादीणि तेस अणियोगहाराणि उच्चारणासिद्धाणि च सुत्तपरिष्मद्दाणि  
चि वेत्तव्यं ।

☉ तस्य समुत्थितत्वा ।

§ ८६७ तसु अन्तराणिरिद्धाणियोगहारेसु समुत्थितत्वा ताव विहासियव्या चि  
मण्णि होह ।

☉ तं जहा—

§ ८६८ सुगममेद पुण्णवक्क ।

§ ८६९ शंभ—इदि किसे करते हैं ?

समाधान—पदनिक्षेपविसेसो इदि करते हैं ।

असमें तीन अनुबोधहार हैं इस प्रकार प्रतिज्ञा करके अस्व न्याससिद्धि कराने के लिए  
आगेच सूत्र करते हैं—

☉ समुत्थीर्तना, प्ररूपणा और अस्वबहुत्त ।

§ ८६९. सब क्रमोंकी इत्थी इदि, इत्थी हानि, अस्वस्वान और अस्वच्छय है या नहीं है  
इसप्रकार इनमेंसे कौन सम्भव है और कौन सम्भव नहीं है "सकी प्ररूपणा करनेको समुत्थीर्तना  
करत हैं । इस प्रकार जिनकी सामान्यसे समुत्थीर्तना की है वनकी इदिविसेस और हातिविसेसकी  
वियवविभागसे परीक्षा करना प्ररूपणा कहलाती है । तथा बट्टिविसेस, हातिविसेस, अस्वस्वान और  
अस्वच्छयवक्के संक्रामक बीबेके योग और आदेशसे अस्वबहुत्तकी प्ररूपणा करना अस्वबहुत्त  
है । इसप्रकार ये तीन ही अधिकार हैं, क्योंकि स्वामित्व आधिक्य इत्थि अस्वस्वान देखा  
जाता है । इसलिये अस्वस्वानमें प्रसिद्ध समुत्थीर्तना आधिक्य तरेह अनुबोधहार सूत्रसे बहिर्भूत नहीं  
हैं ऐसा यहाँ स्पष्ट करना चाहिये ।

☉ प्ररूपणमें समुत्थीर्तनाका अधिकार है ।

§ ८७० इन अन्तर विरिद्ध अनुबोधहारोंमें सर्वप्रथम समुत्थीर्तनाका अस्वस्वान करना  
चाहिये यह एक अन्तका उत्तर्य है ।

☉ यथा—

§ ८७० बह पुण्णवक्क सुगम है ।

❀ मिच्छत्तस्स असंखेज्जभागवड्ढिहाणी संखेज्जभागवड्ढिहाणी संखेज्जगुणवड्ढिहाणी असंखेज्जगुणहाणी अवट्ठाणं च ।

§ ८६९. कथमेदेसिं तिण्हं वड्ढीणं चउण्हं हाणीणं च मिच्छत्तद्विदिसंक्रमविसए संभवो ? उच्चदे—मिच्छत्तधुवड्ढिदिसंक्रमादो अतोकोडाकोडिपमाणादो समयुत्तरादिकमेण वड्ढमाणस्स असंखेज्जभागवड्ढी चेव होऊण गच्छइ जाव धुवड्ढिदीए उवरि धुवड्ढिदि जहण्णपरित्तासंखेजेण खंडिय तत्थेयखंडमेत्तेण धुवड्ढिदिसकमो अहिओ जादो त्ति । एत्तो उवरि वि असंखे०भागवड्ढिविसयो चेव जाव हेड्ढिमवियप्पाणमुक्कस्ससंखेज्जपडि-भागियमेगभागं रूवूणमेत्तं वड्ढिदं ति । तदो सखेज्जभागवड्ढी पारभदि, तत्थ धुवड्ढिदीए उवरि धुवड्ढिदिमुक्कस्ससंखेजेण खंडिय तत्थेयखंडयमेत्तद्विदिसकमवुड्ढीए दंसणादो । एत्तो संखेज्जभागवड्ढिविसओ ताव गच्छइ जाव धुवड्ढिदीए उवरि रूवूणधुवड्ढिदिमेत्तं वड्ढिदं ति । पुणो धुवड्ढिदीए उवरि धुवड्ढिदिमेत्तं चेव वड्ढियूण संक्रामेमाणस्स सखेज्ज-गुणवड्ढिपारंभो होऊण ताव गच्छइ जाव धुवड्ढिदिपाओग्गउक्कस्सद्विदिसकमो जादो त्ति । एवं धुवड्ढिदिसंक्रमं णिरुद्धं कादूण तिण्हं वड्ढीणं संभवो परूविदो । समयुत्तरादिधुवड्ढिदीणं पि पुध पुध णिरुभणं काऊण जहासंभवमेवं चेव तिविहवड्ढिसंभवगवेसणा कायव्वा । एवं सण्णिपंचिदियपज्जत्तस्स सत्थाणेण तिविहवड्ढिसंभवो परूविदो । तदपज्जत्तस्स वि

\* मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि-हानि, संख्याभागवृद्धि-हानि, संख्यातगुण-वृद्धि-हानि, असंख्यातगुणहानि और अवस्थान है ।

§ ८६९. शंका—मिथ्यात्वके स्थितिसंक्रमके विषयमें इन तीन वृद्धियों और चार हानियों-की कैसे सम्भावना है ?

समाधान—कहते हैं—मिथ्यात्वके अन्तःकोडाकोडीप्रमाण ध्रुवस्थितिसंक्रमसे एक समय अधिक आदिके क्रमसे वृद्धिको प्राप्त होनेवाले जीवके ध्रुवस्थितिमें जघन्य परीतासख्यातका भाग देकर वहाँपर लब्ध आये एक भागसे ध्रुवस्थितिमें ध्रुवस्थितिसंक्रमके अधिक होने तक असंख्यात-भागवृद्धिका प्रवाह ही चालू रहता है । तथा आगे भी, नीचेके विवर्त्तनोंमें उत्कृष्ट असंख्यातका भाग देकर जो एक भाग लब्ध आवे उसमेंसे एक कम विवर्त्तनोंकी वृद्धि होने तक असंख्यातभागवृद्धिका ही विषय है । इसके आगे संख्यातभागवृद्धि प्रारम्भ होती है, क्योंकि वहाँ पर ध्रुवस्थितिके ऊपर ध्रुवस्थितिको उत्कृष्ट संख्यातसे भाजित कर वहाँ जो एक भाग लब्ध आवे तत्प्रमाण स्थितिसंक्रमकी वृद्धि देखी जाती है । इससे आगे संख्यातभागवृद्धिका विषय तब तक बना रहता है जब तक एक कम ध्रुवस्थितिमात्र वृद्धि ध्रुवस्थितिमें होती है । पुनः ध्रुवस्थितिमें ध्रुवस्थितिमात्र बढ़ाकर संक्रम करनेवाले जीवके संख्यातगुणवृद्धिका प्रारम्भ होकर तब तक जाता है जब तक ध्रुवस्थितिके योग्य उत्कृष्ट संक्रम होता है । इस प्रकार ध्रुवस्थितिसंक्रमको विवर्त्तित कर तीन वृद्धियोंकी सम्भावना कही । एक समय अधिक आदि ध्रुवस्थितियोंकी भी पृथक् पृथक् विवर्त्तित कर इसीप्रकार तीन वृद्धियाँ सम्भव हैं इसका विचार कर लेना चाहिए । इस प्रकार सही पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवके स्वस्थानकी अपेक्षा तीन प्रकारकी वृद्धि सम्भव है इसकी प्ररूपणा की । सही पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंके भी

एव चैव तिष्ठन् वहीण सत्वाणेण समबो वचम्बो, तस्य वि तप्याभोगावुवद्विदीरो  
 संखेजगुणं अंतोकोडाकोडिमेतद्विदिसकमबुद्धीए विरोहामावादो । एव सेसजीवसमासे  
 वि सत्पाणबुद्धी अनुमनायम्बो । अवरि बीहृदिय-सीर्षदिय-अठरिदियासण्णिपिचदिय-  
 पञ्चापञ्चापसु सगसगवुवद्विदिसकमादो उवरि बहूमाणेसु असखेजमागवद्वि-संखेजमाग  
 बुद्धिसण्णिदाओ दो चैव बहूओ समबंति, पल्लिदोवमस्स सखेजदिमागमेचेसु सन्धीचार  
 द्वाखेसु संखेजगुणबुद्धीए णिम्बिसयत्तादो । बादस-सुहुमेहृदियपञ्चापञ्चापसु पुण  
 असखे मागबुद्धी एका चैव, तन्धीचारद्वापार्णं पल्लिदोवमासखेजमागणियमदंसत्तादो ।  
 एत्थ परत्थाणेण वि विविहबुद्धिसंभवो विहत्तिमगेणाणुगवम्बो ।

§ ८७० सपदि अटण्ण हाणीण विसओ उचदे । तं अहा—अपद्विदिगल्लयेण  
 द्विदिसकमस्सासखेजमामहाणी चैव, पयारत्तरसंभवादो । द्विदिसंखेजपादेण अटम्बिहा  
 वि हाणी होइ, कत्थ वि द्विदिसंखेजमादो असखेजमागस्स कत्थ वि सखेज मागस्स कत्थ  
 वि सखेजानं मागाण कत्थ वि असखेजाण प मागाण पादसंभवादो । सेसपञ्चभाए  
 द्विदिविहत्तिमगे । संपदि अवाहाणविसओ उचदे—सिण्हमण्णदरबुद्धीए असखेजमाग-  
 हाणीए च अवाहाणं ददुम्ब, तप्परिणामेखेयसमयमवद्विदस्स विदियसमए तेत्थियमेचात्तद्वाणे  
 विरोहामावादो । सेसहाणीसु प समअ तत्थ विदियसमए असखेजमागहाणिजियम-

स्वस्थानकी अपेक्षा इसी प्रकार तीन बुद्धियाँ सम्मल हैं वह अज्ञाना आदिप, क्योंकि इन तीनोंमें भी  
 पुनस्त्वित्तसे संख्यातगुणी अन्तकोडाकोडिप्रमाण संख्याबुद्धिके होनेमें विरोध नहीं है । इसीप्रकार  
 अथ बीजसमस्तोंमें भी स्वस्थानबुद्धिअ विचार कर लेना आदिप । किन्तु इतनी विवेकता है कि  
 हीमित्रय भीमित्रय अतुमित्रिय और असंख्ये पञ्च मित्रय पर्याप्त तथा अपर्याप्त बीजसमास्तोंमें  
 अपने अपने पुनस्त्वित्तिसंख्यासे आगे बुद्धि होनेपर असंख्यातमागबुद्धि और संख्यातमाग  
 बुद्धि सम्मलकी ही बुद्धियाँ ही सम्मल हैं क्योंकि इनके पन्चके संख्यातमें मागम्माण बीचारस्थानोंमें  
 संख्यातगुणबुद्धिअ अर्थ विषय अस्त्वत्त्व नहीं होता । परन्तु बाहर पकेमित्रय और सूक्ष्म पकेमित्रिय  
 पर्याप्त पञ्च अपर्याप्त बीजोंमें एक असंख्यातमागबुद्धि ही पाई जाती है, क्योंकि इनके हीचारस्थानोंमें  
 पन्चके असंख्यातमें मागप्रमाण होनेका नियम देखा जाता है । यहाँ पर परस्थानकी अपेक्षा तीन  
 प्रकारकी बुद्धि सम्मल है वह बात स्वित्तिविमच्छिके समान ज्ञान क्षेती आदिप ।

§ ८७० अथ चार हानियोअ विषय अटत हैं । तथा—अथाःस्वित्तिगल्लान्ते द्वाप स्विस्ति-  
 संकमकी असंख्यातमागहानि ही जाती है, यहाँ पर अन्य अत्र प्रकार सम्मल गयी है । परन्तु  
 स्वित्तिअण्णकपत्तस आरों प्रकारकी हानि जाती है, क्योंकि यहाँ पर स्वित्तिसंख्यातसे असेके  
 असंख्यातमें मागअ अतिर संख्यातमें मागअ अती पर संख्यात बहुभागका और यहाँ पर  
 असंख्यात बहुभागअ बात सम्मल है । सेप प्रकल्प अस्त्वित्तिमच्छिके समान है । अथ अथस्थानके  
 विषयके अस्त्वत्त हैं—तीन बुद्धियोंमेंसे किसी एक बुद्धिके तथा असंख्यातमागहानिके होने पर  
 अथस्थान अज्ञाना आदिप, क्योंकि अत्र प्रकारके परिधामस एक समय तक अथस्थित हुए बीजके  
 दूसरे समयमें अज्ञान ही अथस्थान होनेमें विरोध नहीं है । परन्तु सेप हानियोंमें अथस्थान सम्मल  
 नहीं है, क्योंकि यहाँ पर दूसरे समयमें असंख्यातमागहानिअ नियम देखा जाता है । इस प्रकार

दंसणादो । एवमेदेसि वद्धि-हाणि-अवट्टाणाणं मिच्छत्तविसयाणं समुक्तिताणं काऊण तत्थावत्तव्वसंकमाभावं परूवेदुमुत्तरसुत्तमाह—

❀ अवत्तव्व एत्थि ।

§ ८७१. कुदो ? असंकमादो तरस संकमपवुत्तीए सव्वद्धमणुवलंभादो ।

❀ सम्मत्त-सम्माभिच्छत्ताणं चउव्विहा वड्डी चउव्विहा हाणी अवट्टाणमवत्तव्वयं च ।

§ ८७२. तं जहा—तत्थ ताव असंखेज्जभागवद्धिविसयपरूवणा कीरदे—एको मिच्छत्तधुवद्धिदिमेत्तसम्मत्त-सम्माभिच्छत्तद्विदीए उवारि दुसमयुत्तरमिच्छत्तद्विदिसंतकम्मिओ सम्मत्तं पडिवण्णो । तत्थासंखेज्जभागवट्टीए पढमवियप्पो होइ । संपहि पढमवारणिरुद्ध-सम्मत्तद्विदिसंकमादो तिसमयुत्तरादिकमेण मिच्छत्तधुवद्धिदिं वट्टाविय तेणेव णिरुद्धद्विदि-संतकम्मेण सम्मत्तं गेण्हमाणस्स सम्मत्त-सम्माभिच्छत्ताणं असंखेज्जभागवट्टी ताव दट्टव्वा जाव णिरुद्धसम्मत्तद्विदिमुक्कस्ससंखेजेण खंडिय तत्थ रूवूपेयखंडमेत्ते वद्धिवियप्पे लट्टणा-संखेज्जभागवट्टी पज्जवसिदा त्ति । पुणो एदरहादो पढमवारणिरुद्धसम्मत्तद्विदिसंकमादो समयुत्तर-दुसमयुत्तरादिसम्मत्तद्विदीणं पादेकं णिरुंभणं काऊण तत्तो दुसमयुत्तरादिकमेण मिच्छत्तद्विदिं वट्टाविय सम्मत्तं गेण्हमाणणमसंखेज्जभागवद्धिवियप्पा वत्तव्वा जाव तप्पाओगंतोमुहुत्तूणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्तसम्मत्तद्विदि त्ति । णवारि मिच्छत्तधुव-मिथ्यात्वविषयक इन वृद्धि, हानि और अवस्थानकी समुत्कीर्तना करके वहाँ पर अवक्तव्यसंकमका अभाव है यह कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ अवक्तव्य नहीं है ।

§ ८७१ क्योंकि उसकी असक्रमसे संक्रमकी प्रवृत्ति कहीं भी उपलब्ध नहीं होती ।

❀ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार प्रकारकी वृद्धि, चार प्रकारकी हानि, अवस्थान और अवक्तव्य है ।

§ ८७२ यथा—उसमे सर्वप्रथम असख्यातभागवृद्धिका विषय कहते हैं—जिसकी सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थिति मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिके बराबर है ऐसा कोई एक जीव मिथ्यात्वके दो समय अधिक स्थितिसत्कर्मके साथ सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ उसके असख्यातभागवृद्धिका प्रथम विकल्प होता है । अब पहली बार सम्यक्त्वके विवक्षित स्थितिसंक्रमसे मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिको तीन समय अधिक आदिके क्रमसे बढ़ाकर उसी विवक्षित स्थितिसत्कर्मके साथ सम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाले जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असख्यातभागवृद्धि तब तक जाननी चाहिए जब जाकर सम्यक्त्वकी विवक्षित स्थितिमे उत्कृष्ट संख्यातका भाग देकर जो एक भाग लब्ध आवे उससे एक कम वृद्धिविकल्पोंके आश्रयसे असख्यातभागवृद्धि अन्तको प्राप्त हो जाती है । फिर प्रथमबार विवक्षित सम्यक्त्वके इस स्थितिसंक्रमसे एक समय अधिक, दो समय अधिक आदिके क्रमसे सम्यक्त्वकी स्थितियोंको पृथक् पृथक् विवक्षित कर उनमेंसे प्रत्येक स्थितिविकल्पके साथ दो समय अधिक आदिके क्रमसे मिथ्यात्वकी स्थितिको बढ़ाकर सम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाले जीवोंके असख्यातभागवृद्धिके विकल्प तत्प्रायोग्य अन्तर्मुहूर्त कम सत्तर कोड़ाकोड़ीसागरप्रमाण सम्यक्त्वकी स्थितिके प्राप्त होने तक कहने चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी



एव चैव तिष्ठन् ब्रह्मिण सत्यापेण संभवो वचम्वो, तस्य वि तप्याद्योग्यवृद्धिदीदो संखेजगुणं अतोकोडाकोडिमचङ्कितिसकमवुङ्गाए विरोहामावादो । एव सेसजीवसमासेसु वि सत्याण्बुद्धी अणुममिायम्बो । णवरि बीद्दिय-सीद्दिय-अतरिदियासण्णिपचिदिय-पञ्चापञ्चपण्णु सगसगयुवङ्कितिसफमादो उवरि वङ्गमाणेषु असखेजमामवङ्कित-संखेजमाम-बुद्धिसण्णिपदाओ दो चैव ब्रह्मिणो समवसि, पल्लोवमस्स सखेजदिमागमेसेसु तम्बीचार-हृत्सेसु सखेजगुणब्रह्मिण पिण्विसपचादो । बादर-सुद्धमेद्दियपञ्चापञ्चपण्णु पुण्ण असखे०मागवङ्गी एका चैव, तम्बीचारङ्गाआर्ण पच्छिदोबमासखेजमागणियमदसणादो । एत्थ परत्यापेण वि तिष्ठिबुद्धिसमवो विहचिमंगेणागुगतम्बो ।

§ ८७ सपहि चसण्हं हाणीणं विसजो उचचद । तं सहा—अप्रङ्कितिमलणेण च्छित्तिसंक्रमस्सासंखेजमागहाणी चैव, पयारतरासमवादो । च्छित्तिसख्यपादेण चठम्बिहा वि हाणी होह, कत्थ वि च्छित्तिसंक्रममादो असंखेजमागस्स कत्थ वि सखेजमागस्स कत्थ वि सखेजार्ण मागाण कत्थ वि असंखेजाण च मागाण पादसंमवादो । सेसपख्खणाए च्छित्तिविहचिमंगो । संपहि अबङ्गाणविसजो उचचद—तिष्ठमण्णदरबुद्धीए असंखेजमाग-हाणीए च अबङ्गाणं दङ्खम्भं, तप्परिणामेभेयसमयमवङ्कितस्स विदियसमए तेचियमेचावङ्गाणे विरोहामावादो । सेसहाणोसु ण संमवद्द तस्य विदियसमए असंखेजमागहाणिणियम-

स्वस्वान्तरी अपेक्षा इसी प्रकार कीन बुद्धियाँ सम्भव हैं वह कहना चाहिए, क्योंकि इन बीजोंमें भी भ्रुवस्वित्तिसे संख्यात्मकी अन्तःकोशाकोदीप्रमाय संक्रमबुद्धिके हाथमें विरोध नहीं है । इसीप्रकार सेव बीजसमासोंमें भी स्वस्वान्तबुद्धिका विचार कर लेना चाहिए । किन्तु इतनी विशेष्य है कि बीजिय बीजिय, अणुत्तिय और असंख्ये एक त्रिय पर्याप्त तथा अपर्याप्त जीवसमासोंमें अपन अपने भ्रुवस्वित्तिसंक्रमसे आगे बुद्धि होनेपर असंख्यात्ममागबुद्धि और संख्यात्ममाग बुद्धि नामवाकी दो बुद्धियाँ ही सम्भव हैं क्योंकि इनके परस्परके संख्यात्मके अन्तःमाग बीजारस्वामोंमें संख्यात्मयबुद्धिका कोई नियम (अपेक्ष्य नहीं होता) । परन्तु बादर परकन्त्रिय और सुद्धमेद्दिय चर्चात तथा अपर्याप्त बीजोंमें एक असंख्यात्ममागबुद्धि ही पाई जाती है क्योंकि इनके बीजारस्वामोंके परस्परके असंख्यात्मके मागप्रमाय होनेका नियम देका जाता है । वहाँ पर परस्वान्तकी अपेक्षा हीन प्रकारकी बुद्धि सम्भव है वह बात स्वित्तिसमिकके सामान्य ज्ञान लेनी चाहिए ।

§ ८७०. अब बार हानिबोध्य नियम कहते हैं । वचा—अथास्वित्तिगण्यके द्वाप स्वित्तिसंक्रमकी असंख्यात्ममागहानि ही होती है, यहाँ पर अन्व्य क्षेत्र प्रकार सम्भव नहीं है । परन्तु स्वित्तिसंक्रमकपालसे आते प्रकारकी हानि होती है, क्योंकि वहाँ पर स्वित्तिसंक्रमसे वचके असंख्यात्मके मागका चर्चपर संख्यात्मके अन्तःमाग वहाँ पर संख्यात्म बुद्ध्यागका और वहाँ पर असंख्यात्म बुद्ध्यागका बात सम्भव है । सेव प्रकल्प्य स्वित्तिसमिकके सामान्य है । अब अबस्वान्तके नियमके बतलते हैं—हीन बुद्धिबोमिसे किसी एक बुद्धिके तथा असंख्यात्ममागहानिके होने पर अबस्वान्त ज्ञानता चाहिए, क्योंकि वच प्रकारके परिणामसे एक समय एक अवस्थित हुए बीजके दूसरे समयमें वचना ही अबस्वान्त होनेमें विरोध नहीं है । परन्तु सेव हानिबोमि अबस्वान्त सम्भव नहीं है, क्योंकि वहाँ पर दूसरे समयमें असंख्यात्ममागहानिका नियम देका जाता है । इस प्रकार

दंसणादो । एवमेदेसिं वड्ढि-हाणि-अवट्टाणाणं मिच्छत्तविसयाणं समुक्तिणं काऊण तत्थावत्तव्वसंकमाभावं परूवेदुमुत्तरसुत्तमाह—

❀ अवत्तव्व एत्थि ।

§ ८७१. कुदो ? अमंकमादो तस्स संकमपवुत्तीए सव्वद्धमणुवलंभादो ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं चउव्विहा वड्ढी चउव्विहा हाणी अवट्टाणमवत्तव्वयं च ।

§ ८७२. तं जहा—तत्थ ताव असंखेज्जभागवड्ढिविसयपरूवणा कीरदे—एक्को मिच्छत्तधुवट्टिदियेत्तसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तद्विदीए उवरि दुसमयुत्तरमिच्छत्तद्विदिसंतकम्मिओ सम्मत्तं पडिवण्णो । तत्थासंखेज्जभागवड्ढीए पढमवियप्पो होइ । संपहि पढमवारणिरुद्ध-सम्मत्तद्विदिसंकमादो तिसमयुत्तरादिकमेण मिच्छत्तधुवट्टिदि वट्टाविय तेणेव णिरुद्धद्विदि-संतकम्मेण सम्मत्तं गेण्हमाणस्स सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं असंखेज्जभागवड्ढी ताव दड्ढच्चा जाव णिरुद्धसम्मत्तद्विदिमुक्कस्ससंखेजेण खंडिय तत्थ रूवूणेयखंडमेत्ते वड्ढिवियप्पे लद्धणा-संखेज्जभागवड्ढी पज्जवसिदा त्ति । पुणो एदस्हादो पढमवारणिरुद्धसम्मत्तद्विदिसंकमादो समयुत्तर-दुसमयुत्तरादिसम्मत्तद्विदीणं पादेकं णिरुंभणं काऊण तत्तो दुसमयुत्तरादिकमेण मिच्छत्तद्विदिं वट्टाविय सम्मत्तं गेण्हमाणणमसंखेज्जभागवड्ढिवियप्पा वत्तच्चा जाव तप्पाओगंतोमुहुत्तणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्तसम्मत्तद्विदि त्ति । णवरि मिच्छत्तधुव-

मिथ्यात्वविषयक इन वृद्धि, हानि और अवस्थानकी समुत्कीर्तना करके वहाँ पर अवक्तव्यसंकमका अभाव है यह कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ अवक्तव्य नहीं है ।

§ ८७१ क्योंकि उसकी असकमसे सकमकी प्रवृत्ति कहीं भी उपलब्ध नहीं होती ।

❀ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार प्रकारकी वृद्धि, चार प्रकारकी हानि, अवस्थान और अवक्तव्य है ।

§ ८७२ यथा—उसमें सर्वप्रथम असंख्यातभागवृद्धिका विषय कहते हैं—जिसकी सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थिति मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिके बराबर है ऐसा कोई एक जीव मिथ्यात्वके दो समय अधिक स्थितिसत्कर्मके साथ सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ उसके असंख्यातभागवृद्धिका प्रथम विकल्प होता है । अब पहली बार सम्यक्त्वके विवक्षित स्थितिसंकमसे मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिको तीन समय अधिक आदिके क्रमसे बढ़ाकर उसी विवक्षित स्थितिसत्कर्मके साथ सम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाले जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि तब तक जाननी चाहिए जब जाकर सम्यक्त्वकी विवक्षित स्थितिमें उत्कृष्ट संख्यातका भाग देकर जो एक भाग लब्ध आवे उससे एक कम वृद्धिविकल्पोंके आश्रयसे असंख्यातभागवृद्धि अन्तको प्राप्त हो जाती है । फिर प्रथमबार विवक्षित सम्यक्त्वके इस स्थितिसंकमसे एक समय अधिक, दो समय अधिक आदिके क्रमसे सम्यक्त्वकी स्थितियोंको पृथक् पृथक् विवक्षित कर उनमेंसे प्रत्येक स्थितिविकल्पके साथ दो समय अधिक आदिके क्रमसे मिथ्यात्वकी स्थितिको बढ़ाकर सम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाले जीवोंके असंख्यातभागवृद्धिके विकल्प तत्प्रायोग्य अन्तर्मुहूर्त कम सत्तर कोड़ाकोड़ीसागरप्रमाण सम्यक्त्वकी स्थितिके प्राप्त होने तक कदने चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी

द्वितीयो ह्येव पतिदोवमस्त संखेजदिभागमेतसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तद्विदोवमस्तैजमाय-  
वद्विविषया उर्मन्ति । ते आणिय वतप्पा ।

१ ८७३ संपदि सखेजभागवद्विप विसयगवेसण फम्मामो । त जहा—मिच्छत्त-  
धुवद्विदिमुक्तस्तसखेजेण सठिय सत्थेयसंबमेणेण ततो अम्महियमिच्छत्तद्विदिसंतकम्मिण्य  
मिच्छत्तद्विदिणा मिच्छत्तधुवद्विदिपमाणसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तद्विदिसंतकम्मण सह केवसम्मत्ते  
पट्टिचण्णे पट्टमो सखेजभागवद्विविषयो होइ । एतो समयुत्तरादिकमेण मिच्छत्तद्विदि  
मणत्तरपरुविदपमाणादो वद्विविषयिणिरुत्तसम्मत्तद्विदिप सह सम्मत्त गण्हाविय सखेजभाग-  
वद्विदिसयो ताव परुवेयप्पो धाव रूपूणधुवद्विदिसम्मत्तद्वियमिच्छत्तद्विदिसंतकम्मिय  
पतो पि । एव थव समयुत्तरादिसम्मत्तद्विदिविससाण पि पुष पुष णिरुमण फउण  
पयद्वद्विविसयो समयारिरोहेण परुवेयप्पो जाव तप्पाभोगपतिदोवमस्तैजभागपरिहीण-  
सत्तरिसागरोवमत्तेडाकोडिमत्तसम्मत्तद्विदि पि । तापे तेचित्तेणेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त  
द्विदिसंतकम्मण मिच्छत्तुक्तस्तद्विदिप थ किंचूणाए सम्मत्त पट्टिचण्णमाणस्स तदपच्छिम-  
वियप्यसमुप्यथो होइ । मिच्छत्तधुवद्विदो होइ वि सखेजभागवद्विविसयो जहासंभव  
विहासयप्पो ।

१ ८७४ एतो सखेजगुणवद्विविसयपत्तया फारद । त जहा—पतिदोवमस्त  
सखेजभागमेतसम्मत्तद्विदिसंतकम्मियमिच्छत्तद्विदिणा मिच्छत्तसस तप्पाभोगातोडोडाकोडि

---

प्रवृत्तिविके नीचे मी सम्यक्त्व और सम्यग्निष्पात्तके परशके संख्यादर्शे मागप्रमाण स्थितियोंके  
असंख्यातमागबुद्धिसम्बन्धी विरक्त्य प्राप्त हाते हैं सो उन्हें जान कर करना चाहिए ।

१ ८७५ एव संख्यातमागबुद्धिके विषयश्च अनुसम्भान करत हैं । यथा—मिष्पात्तकी  
प्रवृत्तिविके वद्वत्त संख्यातश्च माग केनेर प्राप्त हुए एक मागस अपिच मिष्पात्तकी  
स्वितिसत्कर्मवाले बीजके दिष्पात्तकी प्रवृत्तिविके बत्तर सम्यक्त्व और सम्यग्निष्पात्तके  
स्वितिसत्कर्मके साथ वद्वत्कमत्तकके प्राप्त हान्तर संख्यातमागबुद्धिश्च प्रथम विरक्त्य  
हाता है । आगे पहल कइ हुए प्रमाणस मिष्पात्तकी स्थितिको एक समय अपिच आदिक  
कमस वद्वत्तर सम्यक्त्वकी विरक्षित स्थितिक साथ सम्यक्त्वका प्रत्यक्ष बत्तर एक  
कम प्रवृत्तिविके अपिच मिष्पात्तके स्वितिसत्कर्मके प्राप्त होने तक संख्यातमागबुद्धिश्च विषय  
करना चाहिए । उवा इसी प्रकार सम्बन्धके एक समय अपिच आदि स्थितिविशेषोंको प्रकृ-  
ष्टयक विरक्षित कर मत्त बुद्धिश्च विषय समयके अविवेक पूर्वक तत्त्वापत्तक पर्यन्त संख्यातकी  
मागकम सत्तर कोडाकोडो सागरप्रमाण सम्यक्त्वकी स्थितिक प्राप्त हान्तरक करण चाहिए ।  
एव तत्प्रमाण सम्यक्त्व और स वगिमिष्पात्तके स्वितिसत्कर्मके साथ मिष्पात्तकी वद्वत्तक वद्वत्त  
स्वितिक सङ्गमके सम्यक्त्वक प्राप्त हातकाले बीजके संख्यातमागबुद्धिके अन्तिय निरक्षयकी  
वसति होती है । इसी प्रकार मिष्पात्तकी प्रवृत्तिविके नीचे मी संख्यातमागबुद्धिके विषयक  
क्यासम्भान क्याम्भान करण चाहिए ।

१ ८७६ आगे संख्यातगुणबुद्धिके विषयश्च अनुसम्भान करत हैं । यथा—सम्यक्त्वके  
पत्तके संख्यादर्शे मागप्रमाण स्वितिसत्कर्मवाले मिष्पात्तकी बीजके अन्तिसम्बन्धके महत्त्वके  
योग्य मिष्पात्तके अन्तःकोडाकोडोवीर्यमात्र स्थितिसत्कर्मके साथ अन्तिसम्बन्धके अन्त

मेत्तउवसमसम्मत्तग्गहणपाओग्गद्विदिसंतकम्मिण उवसमसम्मत्ते समुप्पाइदे तव्विदिय-  
समए सखेज्जगुणवड्डी होइ । एत्तो समयुत्तर-दुसमयुत्तरादिद्विदिवियप्पेहिं मि उवसमसम्मत्तं  
पडिवज्जमाण्णं संखेज्जगुणवड्डी चेव होऊण गच्छइ जाव सागरोवमपुधत्तमेत्तद्विदिसंतकम्मं  
पत्तमिदि । संपहि वेदगसम्मत्तग्गहणपाओग्गसव्वजहण्णसम्मत्तद्विदिं धुवं काऊण मिच्छत्त-  
धुवद्विदिप्पहुडि समयुत्तरादिकमेण वड्ढाविय संखेज्जगुणवड्ढिविसयो परूवेयव्वो जाव  
अंतोमुहुत्तूणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमैत्तमिच्छत्तद्विदीए सह सम्मत्तं पडिवण्णस्स  
सव्वुकस्सो संखेज्जगुणवड्ढिवियप्पो जादो त्ति । एवं चेव पुव्वणिरुद्धसम्मत्तद्विदीदो  
समयुत्तरादिसम्मत्तद्विदीणं च पादेकं णिरुंभणं काऊण संखेज्जगुणवड्ढिवियप्पा परूवेयव्वो  
जाव सम्मत्तद्विदिसंतकम्मं मिच्छत्तधुवद्विदीए अद्धमेत्तं जादं ति । एत्तो उवरि णिरुद्ध-  
सम्मत्तद्विदीदो दुगुणमिच्छत्तद्विदिसंतकम्मियमादिं कादूण सम्मत्तं पडिवज्जाविय णेदव्वं  
जाव सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीणमंतोमुहुत्तूणामद्धमेत्तसम्मत्तद्विदिसंतकम्म पत्तं ति ।

§ ८७५. संपहि सम्मत्त-सम्माभिच्छत्ताणमसंखेज्जगुणवड्ढिविसओ परूविज्जदे ।  
तं जहा—सव्वजहण्णचरिमुव्वेल्लणकंडयचरिमफालिमैत्ततदुभयसंतकम्मियमिच्छाइद्विणा  
उवसमसम्मत्ते गहिदे पढमससंखेज्जगुणवड्ढिणाणमुप्पज्जइ । एवमुवरिमद्विदिवियप्पेहिं मि  
सम्मत्तं पडिवज्जाविय णिरुद्धवड्ढिविसयो परूवेयव्वो जाव चरिमवियप्पो त्ति । तत्थ  
चरिमवियप्पो वुच्चदे । तं जहा—उवसमस्यत्तपाओग्गसव्वजहण्णमिच्छत्तद्विदिं जहण्ण-

कार्नेपर उसके दूसरे समयमें संख्यातगुणवृद्धि होती है । इससे आगे एक समय अधिक और दो  
समय अधिक आदि स्थितिविकल्पोंके साथ भी उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंके  
सागरपृथक्त्वप्रमाण स्थितिसत्कर्मके प्राप्त होने तक संख्यातगुणवृद्धि ही होती रहती है । अब  
वेदकसम्यक्त्वके ग्रहणके योग्य सबसे जघन्य सम्यक्त्वकी स्थितिको ध्रुव करके मिथ्यात्वकी  
ध्रुवस्थितिसे लेकर एक समय अधिक आदिके क्रमसे उसे बताते हुए अन्तर्मुहूर्त कम सत्तर  
कोड़ाकोडी सागरप्रमाण मिथ्यात्वकी स्थितिके साथ सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवके संख्यातगुण-  
वृद्धिका सर्वोत्कृष्ट विकल्प प्राप्त होनेतक संख्यातगुणवृद्धिका विषय कहना चाहिए । तथा इसीप्रकार  
पूर्वमें विवक्षित सम्यक्त्वकी स्थितिसे एक समय अधिक आदि सम्यक्त्वकी स्थितियोंको पृथक्-पृथक्  
विवक्षित कर, सम्यक्त्वके स्थितिसत्कर्मके मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिके अर्धभागप्रमाण होनेतक,  
संख्यातगुणवृद्धिके विकल्प कहने चाहिए । इससे आगे सम्यक्त्वकी विवक्षित स्थितिसे दूने  
मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मसे लेकर सम्यक्त्वको प्राप्त कराकर सत्तर कोड़ाकोड़ीके अन्तर्मुहूर्तकम  
अर्धभागप्रमाण सम्यक्त्वके स्थितिसत्कर्मके प्राप्त होने तक संख्यातगुणवृद्धिके विकल्प  
जानने चाहिए ।

§ ८७५ अब सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणवृद्धिके विषयको कहते  
हैं । यथा—उक्त दोनों कर्मोंके सबसे जघन्य अन्तिम उद्वेजनाकाण्डकी अन्तिम फालिप्रमाण  
सत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टि जीवके उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करनेपर प्रथम असंख्यातगुणवृद्धिस्थान  
उत्पन्न होता है । इसी प्रकार उपरिम स्थिति विकल्पोंके साथ भी सम्यक्त्वको प्राप्त कराकर विवक्षित  
वृद्धिके अन्तिम विकल्पके प्राप्त होने तक उसके विषयका कथन करना चाहिए । प्रकृतमें अन्तिम  
विकल्पको कहते हैं । यथा—उपशमसम्यक्त्वके योग्य सबसे जघन्य मिथ्यात्वकी स्थितिको



भावाद्गो । संपहि एत्थतणविसेसपदुप्पायणट्ठमिदमाह—

❀ एवरि अवत्तव्वयमत्थि ।

§ ८७८. मिच्छत्तस्सावत्तव्वयं णत्थि त्ति वुत्तं । एत्थ गुण विसंजोयणापुव्वसंजोगे सव्वोवसामणापडिवादे च तस्संभवो अत्थि त्ति एसो विसेसो । अण्णं च पुरिसवेद० तिण्हं संजलणाणमसंखेज्जगुणवद्धिसंभवो वि अत्थि, उव्वसमसेटीए अप्पणो णवक्कंध-संक्रमणावत्थाए कालं काऊण देवेसुववण्णयम्मि तदुवलद्धीदो । ण चायं विसेसो सुत्ते णत्थि त्ति संकण्णिज्जं, अवत्तव्वसंक्रामयसंभववयणेणेव देसामासयभावेण संगहियत्तादो मरणसण्णिदवाघादेण त्रिणा सत्थाणे चेव समुक्तिणाए सुत्तयारेणाहिण्पेयत्तादो वा ।

एवमौघसमुक्तिणा गया ।

§ ८७९. संपहि आदेसपरूवणट्ठमुच्चारणं वत्तइस्सामो । तं जहा—समुक्तिणाणु-गमेण दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० अत्थि तिण्णि वड्डी चत्तारि हाणी अवद्धिदं च । एवं तेरसक०-अट्ठणोकसा० । णवरि अवत्त० अत्थि । सम्म०-सम्मामि०-तिण्णिज्ज०-पुरिसवे० अत्थि चत्तारि वड्डी हाणी अवद्धि० अवत्त० । आदेसेण णेरइय० छव्वीमं पयडीणं विहत्तिभंगो । सम्म०-सम्मामि० विहत्तिभंगो । णवरि

यहाँ पर भी सम्भव होनेके प्रति मिथ्यात्वसे इनमे कोई विशेषता नहीं है । अब यहाँ पर जो विशेषता है उसका कथन करनेके लिए यह आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ किन्तु इतनी विशेषता है कि इनका अवक्तव्यपद भी है ।

§ ८८० मिथ्यात्वका अवक्तव्यपद नहीं है यह कह आये हैं । परन्तु यहाँ पर विसंयोजना-पूर्वक संयोग होने पर और सर्वोपशामनासे प्रतिपात होने पर वह सम्भव है इसप्रकार यह विशेष है । साथ ही इतनी विशेषता और है कि पुरुषवेद और तीन संज्वलनोंकी असंख्यातगुणवृद्धि भी सम्भव है, क्योंकि उपशामश्रेणिमें अपने अपने नवकवन्धकी संक्रमावस्थामें मरकर देवोंमें उत्पन्न होने पर उक्त पदकी उपलब्धि होती है । यह विशेषता सूत्रमें नहीं कही ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इन प्रकृतियोंके संक्रामक जीव सम्भव हैं यह वचन देशामर्षक है, इसलिए इसी वचनसे उक्त विशेषताका संग्रह हो जाता है । अथवा मरण संज्ञावाले व्याघातके बिना स्वस्थानमें ही सूत्रकारको समुत्कीर्तना अभिप्रेत रही है । यही कारण है कि सूत्रकारने उक्त प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणवृद्धिका सूत्रमें सकेत नहीं किया है ।

इस प्रकार ओघसे समुत्कीर्तना समाप्त हुई ।

§ ८८६ अब आदेशका कथन करनेके लिए उच्चारणाको वतलाते हैं । यथा—समुत्कीर्तना की अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि, चार हानि और अवस्थित पद हैं । इसी प्रकार तेरह कषायों और आठ नोकषायोंका जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनका अवक्तव्यपद भी है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी चार वृद्धि, चार हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपद हैं । आदेशसे नारकियोंमें छव्वीस प्रकृतियोंका भङ्ग स्थितिभित्तिके समान है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग

असंख्येन्द्रगुणहाणी णत्थि । एवं सम्बणेरुत्थं-ठिरिकस्य-पचिदियठिरिकसु०-१-देवगदिदेवा  
 मन्नादि जाव सहस्सार चि पंथि०ठिरिकस्यअपन्त्र०-ममुसअपन्त्र० विहचिमगो । णवरि  
 सम्म०-सम्मामि० असंखेन्द्रगुणहाणी णत्थि । मणुसत्थि ओपं । णवरि ठिण्णिसंससु०  
 पुरिसवेद० असंखे०गुणवृत्ती णत्थि । आणदादि जाव णवगेवन्ना चि २६ पयडीण  
 विहचिमगो । सम्म०-सम्मामि० अत्थि चचारि वृत्ती दो हाणी अवच० । अमुदिसादि  
 सम्बद्धा चि मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-वारसक०-गणजोक० अत्थि असंखेन्द्रमागहाणी  
 सखेन्द्रमागहाणी । अणताणु०४ अत्थि चचारि हाणी । एवं जाव० ।

§ ८८ सपदि समुक्किचजाणतर परूवणाणियोगइरपदुप्यायणहमिदमाह—

§ परूवणा । पयासिं विधिं पुष पुष ठवसंवरिसथा परूवणा षाम ।

§ ८८१ एदासिमजतरसमुक्किचिदाणं वट्ठि-हाणीपमवहाणावत्तम्भाणुगपायं पुष  
 पुष जिठमयं काट्ठं विसयविभागपदसत्तं परूवणा षाम मवदि चि मुत्तत्तपसंबोधो । सा  
 च विसयविभागपरूवणा सामणसमुक्किचजाए वेव किं चि सुधिदा चि न पुणो  
 पंथिजइ । अथवा स्वामित्वादिमुत्तेनैव तासां विभागश्च कथन प्ररूपणेति व्याचक्षते,

स्मिदिविधिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहाणि नहीं है । इसीप्रकार  
 सब नारकी तिर्यञ्च परूवेत्थिच तिर्यञ्चत्रिक देवगतिमें सामान्य है और मन्नावासिसोसे लेकर  
 सहस्वार कस्सकके देवोंमें जानना चाहिये । परूवेत्थिय तिर्यञ्च अणमण और ममुप्य अणपसंख्येमें  
 स्मिदिविधिके समान मंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्बन्ध और  
 सम्बन्धिमध्यस्थकी असंख्यातगुणहाणि नहीं है । ममुप्यत्रिकमें ओषके समान मंग है । किन्तु  
 इतनी विशेषता है कि तीन संवन्धन और पुरुत्तवेकी असंख्यातगुणहाणि नहीं है । अन्त कस्से  
 लेकर नौ प्रवेक तकके देवोंमें २६ मरुत्तिवोच मंग स्मिदिविधिके समान है । सम्बन्ध और  
 सम्बन्धिमध्यस्थकी चार बुद्धि, दो हाणि और अणत्तव्यपत् है । अनुविष्टसे लेकर सर्वाथ सिद्धिकके  
 देवोंमें मिध्यात्व सम्पत्त्व, सम्बन्धिमध्यस्थ काट्ठ कयाव और नौ नोक्कायोकी असंख्यातमागहाणि  
 और संख्यातमागहाणि है । अणत्तसुक्कीचतुप्पकी चार हाणियाँ हैं । इसी प्रकार अणत्तक  
 मरुत्तक जानना चाहिये ।

§ ८८२ अथ समुत्तीर्तनाके चार प्ररूपणा अनुयोगाद्वारा क्वन करनेके क्रिय इत्थं सूत्रको  
 प्यते है—

§ प्ररूपणाक्य अधिच्छर है । इनकी विधिके पृषक् पृषक् दिक्कलाना  
 प्ररूपणा है ।

§ ८८३. विमकी पूर्वमें समुत्तीर्तना कर प्यते हैं तथा जो अणत्तान और अणत्तव्यपत्से  
 अनुगत हैं वेसा इन बुद्धियों और हाणियोंको पृषक् पृषक् विवक्षित कर विपयविभागश्च दिक्कलाना  
 प्ररूपणा है वेसा यहाँ सूत्रक अर्थके साथ सम्बन्ध है और वह विपयविभागकी प्ररूपणा किञ्चित्  
 सामान्यसे समुत्तीर्तनामें ही सूचित हो जाती है, इसक्रिये जङ्गलसे विस्तार नहीं करते हैं ।  
 अथवा स्वामित्व आदिके द्वारा ही अथवा विपयविभागके अनुसार क्वन करने प्ररूपणा है वेसा  
 आगे कहेगी क्योंकि स्वामित्व आदिश्च क्वन किने मिला इनके विशेषश्च नियंत्रण नहीं बन

स्वामित्वादिप्ररूपणामंतरेण तद्विशेषनिर्णयानुपपत्तेः । तद्यथा—सामित्वाणुगमेण दुविहो णिद्देशो—ओघेण आदेसेण य । तत्थोघेण मिच्छ० विहत्तिभंगो । एवं वारसक०-णवणोको । णवरि अवत्त० भुजगारभंगो । तिण्णिसंज०-पुरिसवेद० असंखे०गुणवड्डी कस्स ? अण्णदरस्स उवसामयस्स जो चरिमद्विद्विद्वं संकामेमाणो देवेषुववण्णो तस्स पढमसमय-देवस्स असंखे०गुणवड्डी । अणंताणु०४ विहत्तिभंगो । सम्म०-समामि० विहत्तिभंगो । णवरि असंखेज्जगुणहाणी कस्स ? अण्णद० सम्माहट्टिस्स दंसणमोहक्खवयस्स ।

§ ८८२. आदेसेण सञ्चणेरइय-तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खतिय०३-देवा जाव सहस्सारे ति विहत्तिभंगो । णवरि सम्म०-समामि० असंखे०गुणहाणी णत्थि । पंचि०-तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-अणुहिसादि जाव सञ्चट्ठा ति सञ्चपयडीणं सञ्चपदाणि कस्स ? अण्णद० । मणुसतिए३ ओघं । णवरि वारसक०-णवणोको० अवत्त० भुजगार-भंगो । तिण्णिसंजल०-पुरिसवेद० असंखे०गुणवड्डी णत्थि । आणदादि णवगेवजा ति छव्वीसं पयडीणं विहत्तिभंगो । सम्म०-समामि० विहत्तिभंगो । णवरि संखे०गुणहाणी असंखे०गुणहाणी णत्थि । एवं जाव० ।

§ ८८३. कालाणुगमेण दुविहो णिद्देशो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०

सकता । यथा—स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्वका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । इसीप्रकार वारह कपायों और नौ नोकपायोंका जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके अवक्तव्यपदका भंग भुजगारके समान है । तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी असंख्यातगुणवृद्धि किसके होती है ? जो अन्यतर उपशामक जीव अन्तिम स्थितिबन्धका सक्रम करता हुआ मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ है उस प्रथम समयवर्ती देवके असंख्यातगुणवृद्धि होती है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि किसके होती है ? दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होती है ।

§ ८८२ आदेशसे सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और सहस्रार कल्प तकके देवोंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानि नहीं है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पद किसके होते हैं ? अन्यतरके होते हैं । मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि वारह कपायों और नौ नोकपायोंके अवक्तव्यपदका भंग भुजगारके समान है । तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी असंख्यातगुणवृद्धि नहीं है । आनतसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें छव्वीस प्रकृतियोंका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनकी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि नहीं है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ८८३ कालाणुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे



विहृतिमंगो । णवरि सखेऽमागहाणी० जह० उह० एयसमओ । सोलसक०-णवणो०  
 विहृतिमंगो । णवरि सखे०मागहाणि-अवच० जह० उह० एयसमओ । तिण्णिसप्रस०  
 पुरिसवेद० असखे गुणवड्डी जह० उह० एयसमओ । सम्म०-सम्मामि० विहृतिमंगा ।  
 णवरि मखे मागहाणि-अवच० जह० उह० एयसमओ ।

§ ८८४ आदेसेण नेग्ग्य० मिच्छ०-वारसक०-णवणो० विहृतिमंगो । सम्म०  
 सम्मामि विहृतिमंगो । णवरि सखे०मागहाणी० जह० उह० एयसमओ । असख०  
 गुणहाणी णरिय । अणताणु०४ विहृतिमंगो । णवरि सखे०मागहा० जह० उह०  
 एयस० । एवं सम्मणेरय० । णवरि सगड्डी ।

§ ८८५. तिरिक्खेसु मिच्छ -वारसक०-णवणो० विहृतिमंगो । सम्म०-  
 सम्मामि० विहृतिमंगो । णवरि सखे०मागहाणी० जह० उह० एयसमओ । असख०-  
 गुणहाणी णरिय । अणताणु०४ विहृतिमंगो । णवरि सखे०मागहाणी० जह० उह०  
 एयसमओ । पण्णि०तिरिक्खतिए३ एवं वेव । णवरि मिच्छ०-सोलसक०-णवणो०  
 संख० मागवड्डी जह० उह० एयसमओ । पण्णि० तिरिक्खअपत्त -मणुसअपत्त० मिच्छ०  
 सोलसक०-णवणो० असखे०मागवड्डी जह० एयस०, उह० वे समया सत्तारस

मिध्यात्वका मंग स्वितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्पातभागानिश्च  
 अपन्य और उत्कृष्ट काज एक समय है । सोखइ कपाय और नो नोकपायोका मंग स्वितिविभक्तिके  
 समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्पातभागानिश्च और अपन्य और  
 उत्कृष्ट काज एक समय है । हीन सम्पन्न और पुरुषवेदकी असंत्पातगुणवड्डीका अपन्य और  
 उत्कृष्ट काज एक समय है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वका मंग स्वितिविभक्तिके समान है ।  
 किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्पातभागानिश्च अपन्य और उत्कृष्ट काज एक समय है ।

§ ८८६ आदेससे नारकिंमिं मिध्यात्व चारइ कपाय और नो नोकपायोका मंग  
 स्वितिविभक्तिके समान है । सम्यक्त्व और सायमिध्यात्वका मंग स्वितिविभक्तिके समान है ।  
 किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्पातभागानिश्च अपन्य और उत्कृष्ट काज एक समय है ।  
 असंत्पातगुणवड्डी नहीं है । अनन्तगुणवड्डीचतुष्पका मंग स्वितिविभक्तिके समान है । किन्तु  
 इतनी विशेषता है कि सम्पातभागानिश्च अपन्य और उत्कृष्ट काज एक समय है । इसी प्रकार  
 सब नारकिंमिं जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्विति इतनी चाहिये ।

§ ८८७. तिर्यक्खेमिं मिध्यात्व चारइ कपाय और नो नोकपायोका मंग स्वितिविभक्तिके  
 समान है । सम्यक्त्व और सम्मग्मिध्यात्वका मंग स्वितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी  
 विशेषता है कि सम्पातभागानिश्च अपन्य और उत्कृष्ट काज एक समय है । असंत्पातगुणवड्डी  
 नहीं है । अनन्तगुणवड्डीचतुष्पका मंग स्वितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है  
 कि सम्पातभागानिश्च अपन्य और उत्कृष्ट काज एक समय है । वज्र त्रिब त्रिब्रह्मनिश्चमे इसी  
 प्रकार मंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि मिध्यात्व सोखइ कपाय और नो नोकपायोकी  
 सम्पातभागानिश्च अपन्य और उत्कृष्ट काज एक समय है । वज्र त्रिब त्रिब्रह्म अपन्य और  
 अनुष्प अपन्यमन्त्रिणे मिध्यात्व सोखइ कपाय और नो नोकपायोकी असंत्पातभागानिश्च अपन्य  
 काज एक समय है और उत्कृष्ट काज दो समय अथवा सबइ समय है । असंत्पातभागानिश्च

समया वा । असंखे०भागहाणि-अवट्टि० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । संखेज्जभाग-  
वट्टि-दोहाणी० जह० उक्क० एयस० । संखे०गुणवट्टी० जह० एयस०, उक्क० वे समया ।  
सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क०अंतोमु० । दोहाणी० जह०  
उक्क० एयस० ।

§ ८८६. मणुस०३ मिच्छ०-वारसक०-णवणोक० पंचि०तिरिक्खभंगो । णवरि  
असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एयस० । वारसक०-णवणोक० अवत्त० जह० उक्क०  
एयस० । अणताणु०४ पंचि०तिरिक्खभंगो । सम्म०-सम्मामि० पंचि०तिरि०भंगो । णवरि  
असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एयस० ।

§ ८८७. देवाणं पारयभंगो । णवरि असखे०भागहाणी० जह० एयसमओ,  
उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । भवणादि जाव सहस्सार त्ति एवं चेव । णवरि सगट्टिदी ।  
आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-वारसक०-णवणोक० विहत्तिभंगो । सम्म०-  
सम्मामि० चत्तारिवट्टि-संखे०भागहाणि-अवत्त० जह० उक्क० एयसमओ । असंखे०भाग-  
हाणी० जह० एयसमओ, उक्क० सगट्टिदी । अणताणु०४ विहत्तिभंगो । णवरि सखे०-  
भागहाणी० जह० उक्क० एयसमओ । अणुद्दिस्सादि सव्वट्टा त्ति मिच्छ०-सम्म०-

और अवस्थितपदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । सख्यातभागवृद्धि  
और दो हानियोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल  
एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असख्यात-  
भागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । दो हानियोंका जघन्य  
और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ ८८६ मनुष्यत्रिक्रमे मिथ्यात्व, वारह कपाय और नौ नोकपायोंका भग पञ्चेन्द्रिय  
तिर्यञ्चोंके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि असख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल  
एक समय है । वारह कपाय और नौ नोकपायोंके अरक्तव्यपदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक  
समय है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है । सम्यक्त्व और  
सम्यग्मिथ्यात्वका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि असख्यात-  
गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ ८८७. देवोंमें नारकियोंके समान भग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि असख्यात-  
भागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । भवनवासियोंसे लेकर  
सहस्रार कल्प तकके देवोंमें इसी प्रकार भग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी  
स्थिति कहनी चाहिए । आनतसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, वारह कपाय और  
नौ नोकपायोंका भग स्थितिविभक्तिके समान है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार  
वृद्धि, सख्यातभागहानि और अवक्तव्यपदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।  
असख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है ।  
अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सख्यातभाग-  
हानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें

सम्मामि०-बारसक०-णवणोक असंसे०मागहाणी० अह० अतोमु०, सम्म० एयस०,  
 उह० सगट्टिदी । ससे०मागहाणी० अह० उह० एयसमओ । अणताणु०४ अससे०  
 मागहाणी० अह० अतोमुहुं, उह० सगट्टिदी । तिण्णिहाणी० अह० उह० एयस० ।  
 एवं जाप० ।

१८८८ अतगणुग० दुबिहो भिरेसो—ओषेय आदेसेय य । ओषण मिच्छ०  
 विहचिमगो । एवं बारसक०-णवणोक० । णवरि अवच० अह० अंतोमु०, उह० उवहुं-  
 पोगलपरिपहुं । तिण्णिसज्जल०-गुरिसबेद० अससे०गुणवट्टी० णत्थि अतरं । अससे०-  
 गुणहाणी० अह० अंतोमु०, उह० उवहुपो०परिपहुं । अणताणु०४ विहचिमगो ।  
 सम्म०-सम्मामि० विहचिमगो । णवरि अससे०गुणहाणी० अह० उह० अतोमु० ।

१८८९ आदेसेण सम्मणेत्थय-तिरिक्ख०-दवा जाव सहस्तर चि विहचिमगो ।  
 णवरि सम्म०-सम्मामि० अससे०गुणहाणी णरिय । पच्चिदियतिरिक्खतिप३ छन्दीमं  
 पपढोणं विहचिमगो । णवरि ससे०गुणवट्टी० अह० एयस०, उह० पुध्वस्सेडिपुपघं ।  
 सम्म०-सम्मामि० विहचिमगो । णवरि अससे०गुणहाणी णरिय । पच्चि०तिरिक्ख-  
 अपज०-मणुसअपज० छन्दीस पपढोणं विहचिमगो । णवरि संसे गुणवट्टी० अह०

मिप्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिप्यात्व, बारह कथाय और नौ मोक्षपादोंके असंख्यतन्त्रादानिद्य  
 अपत्य अपस अन्तमुहुत है, सम्मत्तरात्र एक समय है और उरहृष्ट कात्र अपनी अपनी  
 स्थितिप्रमाण है । संख्यातन्त्रादानिद्य अपत्य और उरहृष्ट कात्र एक समय है । अनन्त्यानुस्मि-  
 चणुत्तुद्धी असंख्यातन्त्रादानिद्य अपत्य अपस अन्तमुहुत है और उरहृष्ट कात्र अपनी अपनी  
 स्थितिप्रमाण है । तीन दानियोंका अपत्य और उरहृष्ट कात्र एक समय है । इसी प्रकार अनाहारक  
 मार्गका एक जानना पादिय ।

१८८८ अन्तगणुगमधी अपस निर्देस दा प्रकरका ह—आप और आदेरा । आपसे  
 मिप्यात्वका भंग स्थितिविभक्ति समान है । इसीप्रकार बारह कथाय और नौ मोक्षपादोंके विषयमें  
 जानना पादिय । किन्तु इतनी विशेषता है कि इसका अरकल्पवत्त्र अपत्य अन्त अन्तमुहुत है और  
 उरहृष्ट अन्तर कथार्थपुद्गलरचितनरमात्र है । तीन संयसन और पुत्रयवकी असंख्यतन्त्रादानिद्य  
 अन्तर मही है । असंख्यातन्त्रादानिद्य अपत्य अन्त अन्तमुहुत है और उरहृष्ट अन्तर  
 कथार्थपुद्गलरचितनरमात्र है । अनन्त्यानुस्मिचणुत्तुद्धीका भंग स्थितिविभक्तिके समान है ।  
 गणवरा और गण्यमिप्यात्वका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि  
 असंख्यातन्त्रादानिद्य अपत्य और उरहृष्ट अन्तर अन्तमुहुत है ।

१८८९ आहरम मत्र मारधी मामात्र विर्येय सम्यय है और महकार कस्यत्रक  
 हनेमें भंग स्थितिविभक्ति समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और  
 सम्यग्मिप्यात्वकी असंख्यातन्त्रादानि मही है । पत्र निर्य विर्येयविधमें दम्भीस प्रकृतियोंका  
 भंग स्थितिविभक्ति समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातन्त्रादानिद्य अपत्य अन्तर  
 एक समय है और उरहृष्ट अन्तर पूर्वप्रतिपत्तप्रमाण है । उरहृष्ट और सम्यग्मिप्यात्वका  
 भंग स्थितिविभक्ति समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातन्त्रादानि मही है ।  
 पत्र निर्य विर्येय अरवत्र और सम्यक् अरवत्रोंमें दम्भीस प्रकृतियोंका भंग स्थितिविभक्तिके

एयस०, उक्क० अंतोमु० । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणी० जह० उक्क०  
 एयसमओ । दोण्णिहाणी० णत्थि अंतरं । मणुस३ मिच्छ० पंचिदियतिरिक्खभंगो ।  
 णवरि असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० अंतोमुहुत्तं । एवं वारसक०-णवणोक० । णवरि  
 अवत्त० तिण्णिसंजल०-पुरिसवेद० असंखे०गुणहाणी० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क०  
 पुव्वकोडिपुधत्तं । अणंताणु०४ पंचिदियतिरिक्खभंगो । सम्म०-सम्मामि० पंचि-  
 तिरिक्खभंगो । णवरि असं०गुणहाणी ओघं । आणदादि णवगेवेज्जा त्ति छव्वीसं पय०  
 विहत्तिभंगो । सम्म०-सम्मामि० विहत्तिभंगो । णवरि सखे०गुणहाणी असंखे०गुणहाणी  
 णत्थि । अणुद्दिसादि सव्वट्ठे त्ति विहत्तिभंगो । णवरि सम्म० संखे०गुणहाणी णत्थि ।  
 एवं जाव० ।

§ ८९०. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुविहो णिद्देशो—ओवेण आदेसेण  
 य । ओवेण छव्वीसं पयडीणं असंखे०भागवद्धि—हाणि—अवद्धि० णियमा अत्थि ।  
 सेसपदाणि भयणिज्जाणि । सम्म०-सम्मामि० विहत्तिभंगो । सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-  
 मणुसअपज्ज०-देवा जाव सहस्सार त्ति विहत्तिभंगो । णवरि सम्म०-सम्मामि० असंखे०-  
 गुणहाणी णत्थि । मणुसतिए३ छव्वीसं पयडीणं असंखे०भागहाणि-अवद्धि० णियमा

समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और  
 उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य  
 और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है । दो हानियोंका अन्तरकाल नहीं है । मनुष्यत्रिकमें मिध्यात्वका  
 भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानिका जघन्य  
 और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार वारह कपायों और नौ नोकपायोंके विषयमें जानना  
 चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके अवक्तव्यपदका तथा तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी  
 असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है ।  
 अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोके समान है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वका  
 भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानिका भंग  
 ओघके समान है । आनत कल्पसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवोंमें छव्वीस प्रकृतियोंका भंग  
 स्थितिविभक्तिके समान है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वका भंग स्थितिविभक्तिके समान है ।  
 किन्तु इनकी विशेषता है कि संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि नहीं है । अनुदिशसे लेकर  
 सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी  
 संख्यातगुणहानि नहीं है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ८९० नाना जीवोंका अवलम्बन लेकर भंगविचयाणुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका  
 है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । ओघसे छव्वीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात-  
 भागहानि और अवस्थित पदवाले जीव नियमसे हैं । शेष पद भजनीय हैं । सम्यक्त्व और  
 सम्यग्मिध्यात्वका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्धास,  
 सामान्य देव और सहस्रार कल्प तकके देवोंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है । किन्तु इतनी  
 विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी असंख्यातगुणहानि नहीं है । मनुष्यत्रिकमें छव्वीस  
 प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थित पदवाले जीव नियमसे हैं । शेष पद भजनीय हैं ।

अतिथ । समपत्नाणि मयणिजाणि । सम्म०-सम्मामि० विहचिमगो । आणदादि  
णवगवजा चि विहचिमगो । णवरि सम्म०-सम्मामि० सत्से गुण० असत्से०गुणहाणी  
णत्ति । अणुदिसादि सवहुा चि विहचिमगो । णवरि सम्म० सत्से०गुणहाणी  
णत्ति । एव जाव० ।

१८१ मायामागानुगमेण दुविदो णिदेसो—ओपेण आदेसेण य । ओपेण  
सम्मीसं पयदीणं असत्से०मागवहुी असत्से०मागो । अवहुि० संत्से०मागो । असत्से०  
मागहाणी संत्से०मागा । सेसपदाणि अणतिममागो । सम्म०-सम्मामि० विहचिमंगो ।  
सम्भणेरह्य०-सम्भतिरिक्खु०-मणुसपपज्ज०-देवा जाव सवहस्यार चि विहचिमगो । णवरि  
सम्म०-सम्मामि० असत्से गुणहाणी णत्ति । मणुसा० विहचिमंगो । णवरि मारसक०-  
णवभोक् अवच०सुक्का० असत्से मागो । एव मणुसपपज्ज०-मणुसिणी० । णवरि संत्से०  
पडिमागो कायव्वो । आणदादि णवगवजा चि विहचिमगो । णवरि सम्म०-सम्मामि  
सत्से०गुणहाणी असत्से गुणहाणी च णत्ति । अणुदिसादि सवहुा चि विहचिमगो ।  
णवरि सम्म० सत्से०गुणहाणी णत्ति । एव जाव० ।

१८०२ परिमाणाणुगमेण दुविदो णिदेसो—ओपेण आदेसेण य । ओपो

सम्भरत्त और सम्भमिप्यारत्त मंग स्थितिविमलिके समान हे । आनतसे लेकर नो मेवक  
तकके देवोमें स्थितिविमलिके समान मंग हे । किन्तु इतनी विशेषता हे कि सम्भरत्त और सम्भ-  
मिप्यारत्तके संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि नहीं हे । अनुदिरासे लेकर सर्वाभिसिद्धि  
तकके देवोमें स्थितिविमलिके समान मंग हे । किन्तु इतनी विशेषता हे कि सम्भरत्त और  
सम्भमिप्यारत्तके संख्यातगुणहानि नहीं हे । इसी प्रकार अनाहारक मागसा तक जानना चाहिए ।

१८१ मागामागानुगमेण अपेक्षा निर्रेण दो प्रकारक हे—ओपनिर्रेण और आदेर-  
निर्रेण । ओपसे ह्यथोस मरुतिवोकी असंख्यातमागहानिसे जीव असंख्यातके मागप्रमाय हैं ।  
अवस्थितपरत्तके जीव संख्यातके मागप्रमाय हैं । असंख्यातमागहानिसे जीव संख्यात बहु  
मागप्रमाय हे । तथा ओप परत्तके जीव अवस्थके मागप्रमाय हैं । सम्भरत्त और सम्भमिप्यारत्तके  
मंग स्थितिविमलिके समान हे । सब नारकी सब तिर्यक् मनुष्य अपर्णा, सामान्य देव और  
सहस्यार कल्प तकके देवोमें स्थितिविमलिके समान मंग हे । किन्तु इतनी विशेषता हे कि सम्भरत्त  
और सम्भमिप्यारत्तके असंख्यातगुणहानि नहीं हे । मनुष्योमें स्थितिविमलिके समान मंग हे ।  
किन्तु इतनी विशेषता हे कि कल्प कणाय और नो लक्ष्यार्थके अवस्थक कल्पके संख्यातके जीव  
असंख्यातके मागप्रमाय हैं । इसी प्रकार मनुष्य पर्णा और मनुष्यनियोमें जानना चाहिए ।  
किन्तु इतनी विशेषता हे कि इनमें प्रतिभागक प्रमाय संख्यात करना चाहिए । आनतसे लेकर  
नो मेवक तकके देवोमें स्थितिविमलिके समान मंग हे । किन्तु इतनी विशेषता हे कि सम्भरत्त  
और सम्भमिप्यारत्तके संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि नहीं हे । अनुदिरासे लेकर  
सर्वाभिसिद्धि तकके देवोमें स्थितिविमलिके समान मंग हे । किन्तु इतनी विशेषता हे कि सम्भरत्तके  
संख्यातगुणहानि नहीं हे । इसी प्रकार अनाहारक मागसा तक जानना चाहिए ।

१८१२ परिमाणाणुगमेण अपेक्षा निर्रेण दो प्रकारक हे—ओपनिर्रेण और आदेर-

१ ता मते नम्म नम्मामि मंगे गुणहाणी इति वाट ।

विहत्तिभंगो । णवरि वारसक०-णवणोक० अवत्त० तिणिसंज०-पुरिसवेद० असंखे०-  
गुणवट्ठी सम्म०-सम्मामि० असंखे०गुणहाणिसंका० केत्तिया० ? संखेज्जा । सव्वणेरइय-  
सव्वतिरिक्ख०-मणुसअपज्ज०-देवा जाव सहस्सारे त्ति विहत्तिभंगो । णवरि सम्म०-  
सम्मामि० असंखे०गुणहाणी णत्थि । मणुसा० विहत्तिभंगो । णवरि वारसक०-  
णवणोक० अवत्त० सम्म०-सम्मामि० असंखे०गुणहाणिसंका० केत्तिया ? संखेज्जा ।  
मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु सव्वपदसंका० संखेज्जा । आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति  
विहत्तिभंगो । णवरि सम्म०-सम्मामि० असंखे०गुणहाणी संखे०गुणहाणी णत्थि ।  
अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति विहत्तिभंगो । णवरि सम्म० संखे०गुणहा० णत्थि ।  
एवं जाव० ।

१ ८९३ खेत्ताणुगमेण दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । ओघो विहत्तिभंगो ।  
णवरि वारसक०-णवणोक० अवत्त० तिण्हं संजल० पुरिसवेद० असंखे०गुणवट्ठी केवडि  
खेत्ते ? लोगस्स असंखे०भागे । सव्वगइमग्गणासु सव्वपदाणि लोग० असंखे०भागे ।  
तिरिक्खाणं तु विहत्तिभंगो । णवरि सम्म०-सम्मामि० असंखे०गुणहाणी णत्थि ।  
एवं जाव० ।

निर्देश । ओघका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि वारह कषाय और  
नौ नोकषायोंके अवक्तव्य पदके संक्रामक जीव, तीन संज्वलन और पुरुषवेदके असंख्यातगुणवृद्धिके  
संक्रामक जीव तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके असंख्यातगुणहानिके संक्रामक जीव कितने  
हैं ? संख्यात हैं । सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और सहस्तर कल्प  
तकके देवोंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और  
सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानि नहीं है । मनुष्योंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है । किन्तु  
इतनी विशेषता है कि वारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यपदके संक्रामक जीव तथा  
सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं ।  
मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनिर्योमें सब पदोंके संक्रामक जीव संख्यात हैं । आनत कल्पसे लेकर  
नौ प्रवैयक तकके देवोंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व  
और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानि और संख्यातगुणहानि नहीं है । अनुदिससे लेकर  
सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी  
संख्यातगुणहानि नहीं है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

१ ८९३. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश ।  
ओघका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि वारह कषाय और नौ  
नोकषायोंके अवक्तव्यपदके संक्रामकोंका तथा तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी असंख्यातगुणवृद्धिके  
संक्रामकोंका कितना क्षेत्र है ? लोकका असंख्यातवर्षा भागप्रमाण क्षेत्र है । सब गति मार्गणाओंमें  
सब पदोंके संक्रामकोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवर्षा भागप्रमाण है । मात्र तिर्यञ्चोंमें स्थितिविभक्तिके  
समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानि  
नहीं है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

१८९४ पौसभाषुगमेण दुबिहो जिहेसो—ओपेण आवेसेण य। ओपो विहचिमंयो।  
 णवरि बारसक -णवणोक० अचच तिण्हं संमल० पुरिसवेद० अससे० गुणवड्डी  
 सम्म०-सम्मामि० असंसे० गुणहाणी खेचं । सम्बणेत्तय०-सम्बतिरिक्खे -मणुसजपत्त०-  
 देवा वाव सहस्सार चि द्विदिबिहचिमयो । णवरि सम्म०-सम्मामि० अससे० गुणहाणी  
 णत्थि । अचचं च पंदिदियतिरिक्खजपत्त०-मणुसजपत्त० सम्म०-सम्मामि० संसे०-  
 मागहाणी संसे० गुणहाणी खेचमगो । मणुस०३ विहचिमगो । आचदादि अणुपुदा  
 चि विहचिमगो । णवरि सम्म०-सम्मामि० संसे० गुणहाणी अससे० गुणहाणी परिब ।  
 उवरि खेचमगो । एवं वाव० ।

१८९५. क्खड्डाणुगमेण दुबिहो जिहेसो—ओपेण आवेसेण य । ओपो विहचि-  
 मगो । णवरि बारसक -णवणोक० अचच० तिण्ह सत्तल० पुरिसवेद० अससे०-  
 गुणवड्डी० सम्म -सम्मामि असंसे० गुणहाणी जह० एयसमओ, उक्क० ससेत्ता समय ।  
 सम्बणेत्तय-सम्बतिरिक्ख-मणुसजपत्त०-देवा वाव सहस्सार चि विहचिमगो । णवरि  
 सम्म०-सम्मामि असंसे० गुणहाणी णत्थि । मणुसा० विहचिमगो । णवरि बारसक०  
 णवणोक अचच सम्म -सम्मामि० असंसे गुणहा अह० एयसमओ, उक्क० ससेत्ता

१८९४ स्पर्सनत्तुगमकी अपेक्ष निर्देश दो प्रकारका है—ओचनिर्देश और आवेशनिर्देश ।  
 ओचका मंग स्थितिविमलिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि बारह कल्प और भी  
 मोक्षप्राप्तके अवच्छम्बपदके संक्षमकोच, तीन संक्षम और पुरस्वेदकी असंख्यात्तुगुणवड्डीके  
 संक्षमकोच तथा सम्बत्त और सम्बन्धिप्यात्वकी असंख्यात्तुगुणवड्डीके संक्षमकोच  
 स्पर्सन क्षेत्रके समान है । सब बारकी सब त्रियेका मनुष्य अपर्याप्त सामान्य देव और सहस्र  
 कल्प तकके देवोंमें स्थितिविमलिके समान मंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्बत्त और  
 सम्बन्धिप्यात्वकी असंख्यात्तुगुणवड्डी नहीं है । इतनी और विशेषता है कि पञ्च त्रियेका  
 अपर्याप्तमें सम्बत्त और सम्बन्धिप्यात्वकी संख्यात्तुगुणवड्डी और संख्यात्तुगुणवड्डीका मंग  
 क्षेत्रके समान है । मनुष्यत्रिकमें स्थितिविमलिके समान मंग है । औत्तसे क्षेत्र अणुपुद कल्प  
 तकके देवोंमें स्थितिविमलिके समान मंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्बत्त और  
 सम्बन्धिप्यात्वकी संख्यात्तुगुणवड्डी और असंख्यात्तुगुणवड्डी नहीं है । ऊपर क्षेत्रके समान मंग  
 है । इसी प्रकार अन्तहारक मार्गका एक बानम्य बादिसे ।

१८९५. क्खड्डाणुगमकी अपेक्ष निर्देश दो प्रकारका है—ओचनिर्देश और आवेशनिर्देश ।  
 ओचका मंग स्थितिविमलिके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि बारह कल्प और भी  
 मोक्षप्राप्तके अवच्छम्बपदके संक्षमकोच, तीन संक्षम और पुरस्वेदकी असंख्यात्तुगुणवड्डीके  
 संक्षमकोच तथा सम्बत्त और सम्बन्धिप्यात्वकी असंख्यात्तुगुणवड्डीके संक्षमकोच अपर्याप्त  
 कल्प एक समय है और उत्तक अक्ष संख्यात्त समय है । सब बारकी सब त्रियेका मनुष्य अपर्याप्त,  
 सामान्य देव और सहस्र कल्प तकके देवोंमें स्थितिविमलिके समान मंग है । किन्तु इतनी  
 विशेषता है कि सम्बत्त और सम्बन्धिप्यात्वकी असंख्यात्तुगुणवड्डी नहीं है । मनुष्यमें स्थिति-  
 विमलिके समान मंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि बारह कल्प और भी मोक्षप्राप्तके अवच्छम्ब  
 पदके संक्षमकोच तथा सम्बत्त और सम्बन्धिप्यात्वकी असंख्यात्तुगुणवड्डीके संक्षमकोच  
 अणुपुद कल्प एक समय है और उत्तक अक्ष संख्यात्त समय है । मनुष्य वर्याप्त और मनुष्यनिर्देशोंमें

समया । मणुसपञ्ज०-मणुसिणीसु छव्वीसं पयडीणं असंखे०भागहाणि-अवड्ढि० सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणी सच्चद्धा । सेसपदसका० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया । आणदादि जाव णवगेवज्जा ति विहत्तिभंगो । णवरि सम्म०-सम्मामि० संखेज्जगुणहाणी असंखे०गुणहाणी च णत्थि । अणुदिसादि अवराजिदा ति अट्टावीस पयडीणं असंखे०भागहाणी सच्चद्धा । सेसपदाणि जह० एयस०, उक्क० आवलियाए असंखे०भागो । सच्चद्धे अट्टावीसं पयडीण असंखे०भागहाणी सच्चद्धा । सेसपदा० जह० एयसमओ, उक्क० संखेज्जा समया । एवं जाव० ।

१८९६. अंतराणुग० दुविहो णिदोसो—ओघादेस० । ओघो विहत्तिभंगो । णवरि वारसक०-णवणोक्क० अवत्तव्व० तिण्हं संजल० पुरिसवेद० असंखे०गुणवड्ढी० जह० एयस०, उक्क० वासपुघत्तं । सम्म०-सम्मामि० असंखे०गुणहाणी० जह० एयसमओ, उक्क० छम्मासा । सच्चणेरइय-सच्चतिरिक्ख-मणुसअपञ्ज०-देवा जाव सहस्सारे ति विहत्ति-भंगो । णवरि सम्म०-सम्मामि० अमंखे०गुणहाणी णत्थि । मणुस०२ विहत्तिभंगो । णवरि वारसक०-णवणोक्क० अवत्त० सम्म०-सम्मामि० असंखे०गुणहाणी ओघं । एवं मणुसिणीसु । णवरि खवयपयडीणं वासपुघत्तं । आणदादि णवगेवज्जा ति विहत्तिभंगो ।

छव्वीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितपदके संक्रामकोंका तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिके संक्रामकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। आनतसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवोंमें स्थितिबिभक्तिके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि नहीं हैं। अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवों अट्टाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिके संक्रामकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सर्वार्थसिद्धिमें अट्टाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिके संक्रामकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये।

१८९६. अन्तराणुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। ओघका भंग स्थितिबिभक्तिके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि वारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्त्यपदके संक्रामकोंका तथा तीन संव्वलन और पुरुषवेदकी असंख्यातगुणवृद्धिके संक्रामकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिके संक्रामकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और सहस्रार कल्प तकके देवोंमें स्थितिबिभक्तिके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानि नहीं हैं। मनुष्यद्विकर्मे स्थितिबिभक्तिके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि वारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्त्यपदके संक्रामकोंका तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिके संक्रामकोंका अन्तरकाल ओघके समान है। इसी प्रकार मनुष्यनियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि क्षपक प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। आनतसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवोंमें



णवरि सम्म०-सम्मामि० असखे०गुणहाणी सखे०गुणहाणी च णत्थि । अणुरिसादि  
सम्बद्धा चि विहचिमंगो । णवरि सम्म० सखेज्जगुणहाणी णत्थि । एव आव० ।

§ ८९७ भाषो सप्पत्तव बोद्धओ भावी ।

⊗ अप्पापहुअ ।

§ ८९८ सुगममेदमहियारपरामरसपक्कं ।

⊗ सम्पत्तोषा मिच्छत्तस्स असखेज्जगुणहाणिसकामया ।

§ ८९९ इदो ? दसणमोहक्खवयवीवे मोचूण एत्थ उदसमभादो ।

⊗ सखेज्जगुणहाणिसकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ९०० इदो ? सण्णपविदियरासिस्स असखे०भागपमाणचादो । तस्स पविभागो

मतोसुहुचमिदि भेत्तव्वं ।

⊗ सखेज्जभागहाणिसकामया संखेज्जगुणा ।

§ ९०१ इदो ? संखेज्जगुणहाणिपरिणमणवारेहिंसो संखेज्जभागहाणिपरिणमण-

वाराण सखेज्जगुणपुवत्तमादो । ण वेदमसिद्धं, तिस्सविसोहिंसो मविसोहीणं पाएण  
समवदसप्पादो ।

⊗ संखेज्जगुणवङ्गिसकामया असखेज्जगुणा ।

स्वित्तिविमच्छे समान मंग हे । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्बन्ध और सम्पत्तिमन्वात्तकी  
असंख्यातगुणहानि और संख्यातगुणहानि नहीं है । अणुरिसादे लेकर सर्वात्मसिद्धि ठकके हेतुमें  
स्वित्तिविमच्छे समान मंग हे । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्बन्धकी संख्यातगुणहानि नहीं  
है । इसी प्रकार अनन्तारक मार्गका एक जानना चाहिए ।

§ ८९७. मात्र सर्वत्र बोद्धाधिक हे ।

⊗ अप्पापहुत्तवअ अधिकार है ।

§ ८९८. अधिकारध परमरतं कपनेरात्ता एह वाक्य सुगम हे ।

⊗ मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिके संक्रामक जीव सबसे पाड़े हैं ।

§ ८९९. क्योंकि इतने मोहनीयके चक्र जीवोंको छोड़कर अन्यत्र असंख्यातगुणहानिध  
संक्रम सम्भव नहीं है ।

⊗ उनसे संख्यातगुणहानिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ९००. क्योंकि उक्त जीव सीधी पक्कन्निद्रम जीवराशिके असंख्यातवें भ्रमप्रमाद्य हैं ।  
असक्य प्रविभाग अन्तर्भूत हैं देसा वर्यं म्पण करण चाहिए ।

⊗ उनसे संख्यातमायहानिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ९०१. क्योंकि संख्यातगुणहानिके परिवर्तनक बाटेंसं संख्यातमायहानिके परिवर्तनकार  
संख्यातगुणे सम्बन्ध होते हैं । और एह असिद्ध भी नहीं है क्योंकि तीन विभुद्विसे सम्बन्धिविभुद्विओंकी  
मापकर सम्मानना देली जाती है ।

⊗ उनसे संख्यातगुणहानिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ९०२. एत्थ कारणं संखे०भागहाणीए सण्णिपंचिदियरासी पहाणो, सेसजीव-समासेसु संखेज्जभागहाणि कुणंताणं बहुवाणमसंभवादो । संखेज्जगुणवह्वी पुण परत्थाणादो आगंतूण सण्णिपंचिदिएसुप्पज्जमाणाणं सव्वेसिमेव लब्भदे, तथा एइदिय-वियलिंदियाण-मसण्णिपंचिदिएसुववज्जमाणाणं संखेज्जगुणवह्वी चेव होइ । एवमेइदिय-चीइंदियाणं चउरिंदियएसु वेइंदिय-तेइंदिएसु च समुप्पज्जमाणाणमेइंदियाणं संखेज्जगुणवह्विणियमो वत्तव्वो । एवमुप्पज्जमाणासेसजीवरासिपमाणं तसरासिस्स असंखे०भागो, तसरासि सग-उवक्कमणकालेण खंडिदेयखंडमेत्ताण चेव परत्थाणादो आगंतूण तत्थुप्पज्जमाणाणमुव-लंभादो । तदो परत्थाणरासिपाहम्मेण सिद्धमेदेसि असंखेज्जगुणत्तं ।

❀ संखेज्जभागवह्विसंक्रामया संखेज्जगुणा ।

§ ९०३. एत्थ वि तसरासी चेव परत्थाणादो पविसंतओ पहाणं, सत्थाणे संखे०भागवह्विसंक्रामयाणं संखेज्जभागहाणिसंक्रामएहि सरिसाणमप्पहाणत्तादो । किंतु परत्थाणादो संखे०गुणवह्विपवेसएहिंतो संखे०भागवह्विपवेसया बहुआं, संखेज्जगुणहीण-द्विदिसंतकम्मेण सह एइंदियादिहिंतो णिप्पिदमाणाणं संखे०भागहाणिद्विदिसंतकम्मेण सह तत्तो णिप्पिदमाणे पेक्खिऊण संखेज्जगुणहीणत्तादो । कथमेदं परिच्छिज्जे ? एदम्हादो चेव

§ ९०२. यहाँ कारण यह है कि संख्यातभागहानि करनेवाले जीवोंमें संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीवराशि प्रधान है, क्योंकि शेष जीवसमासोंमें संख्यातभागहानि करनेवाले बहुत जीव असंभव हैं । परन्तु संख्यातगुणवृद्धि तो परस्थानसे आकर सही पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेवाले सभी जीवोंके उपलब्ध होती है तथा जो एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीव असंज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके संख्यातगुणवृद्धि ही होती है । इसीप्रकार जो एकेन्द्रिय और द्वीन्द्रिय जीव चतुरिन्द्रिय जीवोंमें तथा जो एकेन्द्रिय जीव द्वीन्द्रिय और त्रीन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके संख्यातगुणवृद्धिका नियम कहना चाहिए । इस प्रकार उत्पन्न होनेवाली समस्त जीवराशिका प्रमाण त्रसराशिके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि त्रसराशिको अपने उपक्रमणकाजसे भाजित कर जो एक भाग प्राप्त हो तत्प्रमाण जीव ही परस्थानसे आकर वहाँ उत्पन्न होते हुए उपलब्ध होते हैं । इसलिए परस्थानराशि-ही प्रधानतासे संख्यातगुणवृद्धि करनेवाले जीव असंख्यातगुणे होते हैं यह बात सिद्ध है ।

❀ उनसे संख्यातभागवृद्धिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ९०३ यहाँ पर भी परस्थानसे प्रवेश करनेवाली त्रसराशि ही प्रधान है, क्योंकि स्वस्थानमें संख्यातभागवृद्धिके संक्रामक जीव संख्यातभागहानिके संक्रामक जीवोंके समान होते हैं, इसलिए उनकी प्रधानता नहीं है । किन्तु परस्थानके आश्रयसे संख्यातगुणवृद्धिके प्रवेश करनेवाले जीवोंसे संख्यातभागवृद्धिके प्रवेश करनेवाले जीव बहुत हैं, क्योंकि संख्यातगुणे हीन स्थितिसत्कर्मके साथ एकेन्द्रिय आदिमेंसे निकलनेवाले जीव संख्यातभागहीन स्थितिसत्कर्मके साथ एकेन्द्रिय आदिमेंसे निकलनेवाले जीवोंको देखते हुए संख्यातगुणे हीन होते हैं ।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है ।



### ❀ असंखेज्जभागवट्टिसंकाभया असंखेज्जगुणा ।

§ ९०९ तं जहा—अवट्टिदसंकमपाओग्गविसयादो असंखेज्जभागवट्टिपाओग्ग-  
विसओ असंखेज्जगुणो । अवट्टिदपाओग्गट्टिदिविसेसेसु पादेकं पलिदोवमस्स संखेज्जदि-  
भागमेत्ताणमसंखे०भागवट्टिवियप्पाणमुप्पत्तिदंसणादो । तदो विसयवहुत्तादो सिद्ध-  
मेदेसिमसंखेज्जगुणत्तं ।

### ❀ असंखेज्जगुणवट्टिसंकाभया असंखेज्जगुणा ।

§ ९१०. एत्थ संचयकालवहुत्तं कारणं । तं जहा—मिच्छत्तधुवट्टिदिं जहण्ण-  
परित्तासंखेजेण खंडिय तत्थेयखंडमेत्तट्टिदिसंतकम्मादो हेट्ठा चरिमुव्वेत्तणकंडयपज्जवसाणो  
असंखेज्जगुणवट्टिविसयो, एदेहि ट्टिदिवियप्पेहि सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणं पयारंतरा-  
संभवादो । एदस्स उव्वेत्तणकालो पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागमेत्तो । एदेण कालेण  
संचिदजीवा च पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्ता । एदे वुण अंतोमुहुत्तकालसंचिदासंखेज्जभाग-  
वट्टिपाओग्गजीवेहिंतो असंखे०गुणा, कालाणुसारेण गुणयारपवुत्तीए णिन्वाहमुवलंभादो ।  
ण च तेसिमंतोमुहुत्तसंचिदत्तमसिद्धं, मिच्छत्तं गंतूणंतोमुहुत्तादो उवरि तत्थच्छमाणाणं  
संखेज्जभागवट्टि-संखे०गुणवट्टिसंकमाणं पाओग्गभावदंसणादो । तम्हा संचयकाल-  
माहप्पेणेदेसिमसंखेज्जगुणत्तमिदि सिद्धं ।

### ❀ संखेज्जभागवट्टिसंकाभया असंखेज्जगुणा ।

\* उनसे असंख्यातभागवृद्धिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ६०६ यथा—अवस्थितपदके संक्रमके योग्य विषयसे असंख्यातभागवृद्धिप्रायोग्य विषय  
असंख्यातगुणा है, क्योंकि अवस्थितपदके योग्य स्थितिविशेषोंमें अलग अलग पत्यके संख्यातवें  
भागप्रमाण असंख्यातभागवृद्धिरूप विकल्पोंकी उत्पत्ति देखी जाती है । इसलिए विषयका बहुत्व  
होनेके कारण ये असंख्यातगुणे हैं यह सिद्ध होता है ।

\* उनसे असंख्यातगुणवृद्धिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ६१०. यहाँ पर सञ्चयकालका बहुतपना कारण है । यथा—मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिको  
जघन्य परीतासंख्यातसे भाजित कर [वहाँ प्राप्त हुए एक खण्डमात्र स्थितिसत्कर्मसे नीचे अन्तिम  
उद्वेलनकाण्डक तक असंख्यातगुणवृद्धिका विषय है, क्योंकि इन स्थितिविकल्पोंके साथ सम्यक्त्वको  
प्राप्त होनेवाले जीवोंके अन्य प्रकार सम्भव नहीं है । इसका उद्वेलनाकाल पत्यके असंख्यातवें  
भागप्रमाण है और इस कालके भीतर सञ्चित हुए जीव पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । परन्तु  
ये जीव अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर सञ्चित हुए असंख्यातभागवृद्धिके योग्य जीवोंसे असंख्यातगुणे हैं,  
क्योंकि कालके अनुसार गुणकारकी प्रवृत्ति निर्बाधरूपसे उपलब्ध होती है । ये जीव अन्तर्मुहूर्तके  
भीतर सञ्चित होते हैं यह बात असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि मिथ्यात्वमें जाकर अन्तर्मुहूर्तके ऊपर  
वहाँ रहनेवाले जीवोंके संख्यातभागवृद्धिसंक्रम और संख्यातगुणवृद्धिसंक्रमकी योग्यता देखी  
जाती है । इसलिए सञ्चयकालके माहात्म्यसे ये असंख्यातगुणे हैं यह सिद्ध होता है ।

\* उनसे संख्यातभागवृद्धिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

१०११ किं कारण ? पुंविद्भविषयादो पदसि विमयस्त असस्त्रेजगुणचोर  
 रमाने । त कश्च ? पुंविद्भिः गिरुद्वाए किंचूतददमेचो सस्त्रेजमागवद्विषिसयो होए ।  
 एव ममयुत्तरादिपुंविद्दीण पि पुंविद् पुंविद् गिरुद्मण क्वाद्गुण सस्त्रेजमागवद्विषिसयो  
 अगुणत्त्वो वाव अगोमुद्गुणमचरि सि । एवं क्वाद्गुण चोर्दे द्विदि पदि गिरुद्द्विरीए  
 किंचूतदमथा एव सस्त्रेजमागवद्विषियप्पा सदा इवति । एसो च सम्भो विमत्रो  
 सपिदिदा पुंविद्भविषयादो असस्त्रेजगुणो चि जत्यि सदेहो । तम्भा सिद्धमेदेसि-  
 मसस्त्रेजगुणत, अविष्पदिवचोर ।

○ संस्त्रेजगुणचद्विसकामया सस्त्रेजगुणा ।

१०१२ कारण टोण्डमदसि वेदगसम्मत्तं पदिवज्जमाणरासी पदागो । किं  
 सस्त्रेजमागवद्विषिसयाने वदगसम्मत्तं पदिवज्जमाणबीषद्वितो सस्त्रेजगुणचद्विषिसयादो  
 वदगसम्मत्तं पदिवज्जमाणबीषा संचयकालमाहप्यण सस्त्रेजगुणा सादा । त कश्च ?  
 मिच्छत्तं गन्तुं धापरकाल वेद अज्जमाणो सस्त्रेजमागवद्विषयाओमो होए । तथो  
 पद्वयपर कालमच्छमाणो पुंविद् मिच्छण सस्त्रेजगुणचद्विषयाओमो होदि चि प्देव  
 कारणेण मिद्धमदसि संस्त्रेजगुणत ।

○ संस्त्रेजगुणद्विषिसकामया सस्त्रेजगुणा ।

१६१६ क्योकिं पूरंके विषयसे इतम विषय असंस्त्रेजगुणा अत्रत्य होव है ।

संज्ञ—१६ वंश ?

समाधान—क्योकिं गुरस्विनि विवलिण हाने पर बुद्ध कम वससे आभा संस्त्रेजगुणचद्विषि  
 विषय है । इमी प्रश्न एक समय अचिक आदि गुरस्विनिवोत्रो भी पूवकृष्णकृ विवलिण करके  
 कालमुत्तं कम गाल केशकाहीमागसमाए स्थितिके प्राप्त होने तक संस्त्रेजगुणचद्विषि विषय स  
 जाना करिय । इग प्रश्न करके यागकत्र कान पर प्रत्येक स्थितिके प्रति विवलिण स्वितिके बुद्ध  
 कम कथ संस्त्रेजगुणचद्विषिके विवलिण प्राप्त इत है । और इत सब विषयक मिज्ञान पर पर  
 पू ६ विषयक असंस्त्रेजगुणा है इतमें सदेह नहीं । इगविर विवलिणिके दिना ये असंस्त्रेजगुणो  
 है पर मिद्ध हाग है ।

○ उनम संस्त्रेजगुणचद्विषि सस्त्रेजगुणो जीव संस्त्रेजगुणो है ।

१६१७ क्योकिं इत कालमें वेदकमप्यरररो प्राप्त इतकाली एति प्रपान है । किं  
 संस्त्रेजगुणचद्विषि साव वदकमप्यरररहा प्राप्त होनेवने जीवोव संस्त्रेजगुणचद्विषिके साव  
 वदकमप्यरररहा प्राप्त हा जान और संस्त्रेजगुणके माहात्म्यक संस्त्रेजगुण हो जाव है ।

संज्ञ—१६ वंश ?

समाधान—क्योकिं विष्णुसंज्ञे अत्रपाव अत्र तक रहनेसाव और ही संस्त्रेजगुणचद्विषिके  
 दाय होगा है । कालु इतने काल अत्र तक रहनेसाव और नियमसे संस्त्रेजगुणचद्विषिके  
 दाय होगा है इतलि इत कालम के और संस्त्रेजगुण हाग है पर मिद्ध हाग ।

○ उनम संस्त्रेजगुणचद्विषि सस्त्रेजगुणो जीव संस्त्रेजगुणो है ।

§ ९१३. कुदो ? तिण्णिवड्ढि-अवट्टाणेहि गहियसम्मत्ताणमंतोसुहुत्तसंचिदाणं संखेज्जगुणहाणीए पाओग्गत्तदंसणादो ।

❀ संखेज्जभागहाणिसंकामया संखेज्जगुणा ।

§ ९१४ कारणमेत्थ सुगमं, मिच्छत्तप्पावहुअसुत्ते परूविदत्तादो । अघवा संखे०भागहाणी संखे०गुणा । असंखे०गुणा त्ति पाढंतरं । एदस्साहिप्पायो सत्थाणे संखे०गुणहाणिसंकामएहितो संखेज्जभागहाणिसंकामया संखेज्जगुणा चेव । किंतु ण तेसि मेत्थ पहाणत्तं, अणंताणुवंधिं विसंजोएंतसम्माइड्डिरासिपहाणभावदंसणादो । सो च सम्माइड्डिरासिपाहम्मेणासंखेज्जगुणो त्ति । एदं च पाढंतरमेत्थ पहाणभावेणावलवैयव्वो ।

❀ अवत्तव्वसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ९१५. कुदो ? अद्धपोग्गलपरियट्टु संचयादो पडिणियत्तिय णिस्संतकम्मिय-भावेण सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणमिह गहणादो ।

❀ असंखेज्जभागहाणिसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ९१६ एत्थ कारणं नुच्चदे—पुव्विल्लासेससंकामया सम्मत्त-सम्माभिच्छत्त-संतकम्मियाणमसंखे०भागो चेव, सव्वेसिमेयसमयसंचिदत्तव्वुवगमादो । एदे नुण तेसिसंखेज्जभागा, वेसागरोवमकालवभंतरे वेदयसम्माइड्डिरासिसंचयस्स दीहुव्वेल्लण-

§ ६१३ क्योंकि तीन वृद्धि और अवस्थानपदके साथ सम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाले तथा अन्तर्गुहूर्त कालके भीतर सञ्चित हुए जीव संख्यातगुणहानिके योग्य देखे जाते हैं ।

❀ उनसे संख्यातभागहानिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ६१४ यहाँ कारण सुगम है, क्योंकि मिथ्यात्वसम्बन्धी अल्पबहुत्वका कथन करनेवाले सूत्रमें उसका कथन कर आये हैं । अथवा संख्यातभागहानिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं यह पाठान्तर उपलब्ध होता है । इसका अभिप्राय यह है कि स्वस्थानमें संख्यातगुणहानिके संक्रामक जीवोंसे संख्यातभागहानिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे ही हैं । किन्तु उनकी यहाँ पर प्रधानता नहीं है, क्योंकि यहाँ पर अनन्तानुबन्धीकी विसयोजना करनेवाली राशिकी प्रधानता देखी जाती है और वह सम्यग्दृष्टि राशिकी प्रधानतावश असंख्यातगुणी है । इस प्रकार पाठान्तरको यहाँ पर प्रधानरूपसे ग्रहण करना चाहिए ।

❀ उनसे अवक्तव्यपदके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ६१५. क्योंकि अर्धपुद्गल परिवर्तनकालके सञ्चयसे लौटकर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अभाव कर सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंका यहाँ ग्रहण किया है ।

❀ उनसे असंख्यातभागहानिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ६१६ यहाँ पर कारणका कथन करते हैं—पहले सब संक्रामक जीव सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मवाले जीवोंके असंख्यातवैव भागप्रमाण ही हैं, क्योंकि उनका एक समयमें होनेवाला सञ्चय स्वीकार किया गया है । परन्तु ये जीव सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मवाले जीवोंके बहुभागप्रमाण हैं, क्योंकि दो सागर कालके भीतर वेदकसम्यग्दृष्टिराशिके प्राप्त हुए

कालमंतरमिच्छाद्विसंयसहितस्त पञ्चानुवाचस्युपादौ । तदो असत्संज्ञगुणा वादा ।

⊗ सेसार्थं कस्मार्थं सव्यत्योवा अथत्सव्यसकामया ।

§ ९१७ अर्णताणुर्बन्धीणं ताव पस्त्रिदोवमस्तासत्संज्ञमागमेवा उक्तस्तेनेयसमयमि अवचत्सकर्म कृणति । बारसकसान्य-गवप्पोकसायार्णं पुण सत्संज्ञा येव उवसामया सम्बोवसामणादो परिबदिय अथत्सव्यसकर्मं कृप्पमाणा लम्भति पि सम्बत्सोवत्तमेदेसिं वाद ।

⊗ असत्संज्ञगुणहाणिसंज्ञकामया संज्ञेत्सगुणा ।

§ ९१८. अर्णताणुर्बन्धिसंज्ञोयणाए परिचमोहकसुवणाए थ द्वावकिट्टिप्पदुडि संज्ञेअसत्संज्ञदिसंज्ञयपरिमफत्सीसु वहुमाणवीवाणमेयवियप्पपत्तिवद्वावत्सव्यसंज्ञाम-एहितो तहामावसिद्धीए णाइयत्तादो ।

⊗ सेससकामया मिच्छत्तमगो ।

§ ९१९ सुगममेदमप्पणासुत्तं ।

एवमोपप्यावहुम समत्तं ।

§ ९२० एदस्सेव फुडोकरणाहुमादेसपक्कणाहु थ उचारणाणुगममेत्थ कस्तामो ।

तं सहा—अप्यावहुजाणुगमेण दुबिहो निरेसो—ओषेण आवेसेण य । ओषेण मिच्छ० अर्णताणु चउक्त० विहचिमगो । बारसक-गवप्पोक० अर्णताणु चउक्तमगो । णवरी

सञ्जयक हीरं वद क्कमककके मीतर मिप्प्याहत्ति ररिाके म्यात हुप सञ्जयके साव प्रधानरूपसे अवत्सम्भन किया गया है । इसलिये यह ररिा अर्णताणुगुणी हो जाती है ।

⊗ ओषे कमाके अवत्सव्यसकर्म संज्ञामक मीव सबसे स्तोक है ।

§ ९१९. उक्तस्तेनेयके पन्थके अर्णताणुगुणो म्भगप्रमाण मीव अनन्त्यानुबन्धियोक्थ एक समकर्म अवत्सव्यसंज्ञक करते हैं । परन्तु बारद क्क्याय ओर नो नोक्कययोक्थ संज्ञयात वपरप्रमक मीव ही सर्वोपर्यमानासे गिर कर अवत्सव्यसंज्ञक करते हुप वपत्तव्य होते हैं, इसलिये इनका सबसे स्तोक्कपना बन जाता है ।

⊗ उनसे असत्संज्ञगुणहाणिक संज्ञामक मीव सत्संज्ञगुणे है ।

§ ९१८. अनन्त्यानुबन्धियोक्थे विसंज्ञोयणामे ओर वरिणोइनीयथी वपणामे हुप्पदुडिसे लेक्क संज्ञयात इचार स्थितिअपत्तयोक्थी अस्मित पत्तिवोमिं विद्यमान मीव एक विकस्मसे सम्बन्ध रत्तमेवत्ते अवत्सव्यसंज्ञामकसे संज्ञात्तगुणे सिद्ध होते हैं यह बात म्याय प्राप्त है ।

⊗ उनसे ओषे पदोके संज्ञामक मीवोक्थ मंग मिप्प्यात्तके समान है ।

§ ९१८ यह अर्णताणु सुगम है ।

इस प्रकार ओषेवत्सवहुत्त समाप्त हुया ।

§ ९२१ अब इसीसे स्पष्ट करनेके लिये ओर आवेराअ क्कन करनेके लिये यहाँ पर उचारणाणु अणुगम करते हैं । यथा—अस्ववहुत्तानुगमथी अपेक्का गिरेरा वो प्रथमक है—ओष ओर आवेरा । ओषसे मिप्प्यात्त ओर अनन्त्यानुबन्धीवत्तुक्कक मंग स्थितिबिभक्तिके समान है । बारद क्क्याय ओर नो नोक्कययोक्थ मंग अनन्त्यानुबन्धीवत्तुक्कके समान है । किन्तु इतनी

संजलणतिय-पुरिसवेद० सन्वत्थोवा असंखेज्जगुणवद्विसंका० । अवत्त०संका० संखेज्ज-  
गुणा । सेसं तं चैव । सम्म०-सम्मामि० सन्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिसं० । अवद्वि०  
असंखे०गुणा । असंखे०भागवद्विसंका० असंखे०गुणा । असंखे०गुणवद्विसं० असंखे०-  
गुणा । संखे०भागवद्वि असंखे०गुणा । संखे०गुणव० संखे०गुणा । संखे०-  
गुणहाणि० संखे०गुणा । संखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । अवत्त० असंखे०-  
गुणा । असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा ।

§ ९२१. आदेसेण सन्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खतिय-देवा जाव सहस्सार  
त्ति छव्वीसं पय० विहत्तिभंगो । सम्म०-सम्मामि० ओघभंगो । णवरि असंखे०-  
गुणहाणिसंका० णत्थि । पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० विहत्तिभंगो । णवरि  
सम्म०-सम्मामि० असंखे०-गुणहाणी णत्थि । मणुसेसु मिच्छ०-अणंताणु०चउक्क०  
विहत्तिभंगो । वारसक०-णवणोक० अणंताणु०चउक्क०भंगो । सम्म०-सम्मामि०  
सन्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिसंका० । अवद्विदसंका० संखे०गुणा । असंखे०-  
भागवद्विसंका० संखे०गुणा । असंखे०गुणवद्विसं० संखे०गुणा । संखे०भागवद्विसं०  
संखे०गुणा । संखे०गुणवद्विसं० संखे०गुणा । अवत्तव्वसं० संखे०गुणा । संखे०

विशेषता है कि संज्वलनत्रिक और पुरुषवेदकी असंख्यातगुणवृद्धिके संक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं ।  
उनसे अवक्तव्यपदके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । शेष भंग उसी प्रकार है । सम्यक्त्व और  
सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिके संक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अवस्थितपदके  
संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यातभागवृद्धिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।  
उनसे असंख्यातगुणवृद्धिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यातभागवृद्धिके संक्रामक  
जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यातगुणवृद्धिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यातगुण-  
हानिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यातभागहानिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।  
उनसे अवक्तव्यपदके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यातभागहानिके संक्रामक जीव  
असंख्यातगुणे हैं ।

§ ९२१ आदेशसे सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और  
सहस्रार कल्प तकके देवोंमें छव्वीस प्रकृतियोंका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । सम्यक्त्व और  
सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें असंख्यातगुणहानिके  
संक्रामक जीव नहीं हैं । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें स्थितिविभक्तिके  
समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका असंख्यात-  
गुणहानिसंक्रम नहीं है । मनुष्योंमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग स्थितिविभक्तिके  
समान है । वारह कषाय और नौ नोकषायोंका भंग अनन्तानुबन्धीचतुष्कके समान है । सम्यक्त्व  
और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिके संक्रामक जीव सबसे थोड़े हैं । उनसे अवस्थितपदके  
संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यातभागवृद्धिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे  
असंख्यातगुणवृद्धिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यातभागवृद्धिके संक्रामक जीव  
संख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यातगुणवृद्धिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे अवक्तव्यपदके



गुणहाणि० असत्त्वे०गुणा । संत्वे०मागहाणि० असत्त्वे०गुणा । असत्त्वे०माग-  
हाणि० असत्त्वे०गुणा । एव मणुसपञ्च-मणुसिभीसु । णवरि जम्हि असत्त्वे०गुण  
तम्हि सखेजगुणं कायम् । आपदादि णवरगेवन्त्रा चि छम्वीस पयहीणं विहत्तिमगो ।  
सम्म०-सम्माभि० सम्बत्तोवा असत्त्वे०मागवट्टि० । असत्त्वे०गुणवट्टि० असत्त्वे  
गुणा । सत्त्वे०मागवट्टि० असत्त्वे०गुणा । सत्त्वे०गुणवट्टि० सत्त्वे०गुणा । सत्त्वे०  
मागहाणि० असत्त्वे गुणा । अबत्त० असत्त्वे०गुणा । असत्त्वे०मागहाणि० असत्त्वेज-  
गुणा । अणुदिसादि सम्बद्धे चि विहत्तिमगो । णवरि सम्म० सत्त्वेजगुणहाणी० पत्थि ।  
एवं चाव० ।

एव वट्टिसकमो समथो ।

एत्थ मवसिद्धिएदरपाओनाट्टिदिसकमहाणाणि विहत्तिमगादो षोवविसेसाणु-  
पिद्धाणि सम्बद्धमाभमणुगतत्त्वाणि ।

एव ट्टिदिसकमो समथो ।



संक्षमक बीज संख्यातगुणो है । इनसे संख्यातगुणान्तिके संक्षमक बीज असंख्यातगुणे है । इनसे  
संख्यातमागहाणिके संक्षमक बीज असंख्यातगुणे है । इनसे असंख्यातमागहाणिके संक्षमक बीज  
असंख्यातगुणे है । इधीवअर मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनिर्घोमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी  
विशेषता है कि वहाँ असंख्यातगुण है वहाँ संख्यातगुण करना चाहिए । आन्त रूपसे लेकर  
नो प्रेक्षक तकके वेधोमें दृष्टीस प्रकृतियोंका भंग स्थितिनिमित्तके समाप्त है । सम्यक्त्व और  
सम्बन्धित्यवस्था असंख्यातमागहाणिके संक्षमक बीज सफसे बोधे है । इनसे असंख्यातगुणवट्टिके  
संक्षमक बीज असंख्यातगुणे है । इनसे संख्यातमागहाणिके संक्षमक बीज असंख्यातगुणे है ।  
इनसे संख्यातगुणवट्टिके संक्षमक बीज संख्यातगुणे है । इनसे संख्यातमागहाणिके संक्षमक बीज  
असंख्यातगुणे है । इनसे अवच्छेदपरके संक्षमक बीज असंख्यातगुणे है । इनसे असंख्यातमाग-  
हाणिके संक्षमक बीज असंख्यातगुणे है । अणुदिसादे लेकर सर्वावसिद्धि तकके वेधोमें स्थिति-  
निमित्तके समाप्त भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है किन्तु इतनी सम्यक्त्वकी संख्यातगुणानि नहीं  
है । इसी प्रकार अगाधारक मार्गस तक जानना चाहिए ।

इस प्रकार वट्टिसंक्षम समाप्त हुआ ।

यहाँ पर सब कर्मोंके मवसिद्ध और इतर बीजोंके दोषस स्थितिसंक्षमस्थान स्थितिनिमित्तके  
ओहीसी विशेषताको शिष्ट रूप जानना चाहिए ।

इस प्रकार स्थितिसंक्षम समाप्त हुआ ।



